# तेतिरीय ब्राह्मणम्

#### Colophon

This document was typeset using  $X_{3}$   $M_{E}$ , and uses the Siddhanta font extensively. It also uses several  $M_{E}$  macros designed by *H. L. Prasād*. Practically all the encoding was done with the help of Ajit Krishnan's mudgala IME (http://www.aupasana.com/).

#### **Acknowledgements**

The initial ITRANS encodings of some of these texts were obtained from http://sanskritdocuments.org/ and https://sa.wikisource.org/. Thanks are also due to Ulrich Stiehl (http://sanskritweb.de/) for hosting a wonderful resource for Yajur Veda, and also generously sharing the original Kathaka texts edited by Subramania Sarma. See also http://stotrasamhita.github.io/about/

FOR PERSONAL USE ONLY
NOT FOR COMMERCIAL PRINTING/DISTRIBUTION

# अनुऋमणिका

| अष्टकम् १        |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   | 1   |
|------------------|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|-----|
| प्रथमः प्रश्नः   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   | 1   |
| द्वितीयः प्रश्नः |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   | 23  |
| तृतीयः प्रश्नः   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   | 37  |
| चतुर्थः प्रश्नः  |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   | 55  |
| पञ्चमः प्रश्नः   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   | 74  |
| षष्ठमः प्रश्नः   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   | 92  |
| सप्तमः प्रश्नः   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   | 113 |
| अष्टमः प्रश्नः   |   |   |   |   |   |   |   |   | • |   |   |   | • |   |   |   |   |   |   |   |   | 132 |
|                  |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |     |
| अष्टकम् २        |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   | 144 |
| प्रथमः प्रश्नः   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   | 144 |
| द्वितीयः प्रश्नः | • |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   | 160 |
| ਰੁਨੀਧ: प्रश्न:   |   |   |   |   |   |   | • |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   | • | 180 |
| चतुर्थः प्रश्नः  |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   | • |   |   |   |   | 195 |
| पञ्चमः प्रश्नः   | • |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   | • | 217 |
| षष्ठमः प्रश्नः   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   | • | 231 |
| सप्तमः प्रश्नः   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   | 260 |
| अष्टमः प्रश्नः   |   |   | • |   |   |   |   |   | • |   | • |   | • | • |   |   | • | • |   | • |   | 280 |
| अष्टकम् ३        |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   | 205 |
| ·                |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   | 305 |
| प्रथमः प्रश्नः   | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | 305 |
| द्वितीयः प्रश्नः | • |   | • |   |   |   | • | • | • | • | • | • | • | • |   |   | • | • |   | • | • | 325 |
| ਰੁਨੀਧ: प्रश्न:   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   | 350 |
| चतुर्थः प्रश्नः  |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   | 372 |
| पञ्चमः प्रश्नः   |   |   | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • |   |   | • | • |   | • |   | 377 |
|                  |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |     |

|     | षष्ठमः प्रश्नः    |     |      |            |     |      |      |    |      |     |     |     |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   | 387 |
|-----|-------------------|-----|------|------------|-----|------|------|----|------|-----|-----|-----|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|-----|
|     | सप्तमः प्रश्नः    | •   |      | •          | •   | •    | ٠    | •  | •    | •   | •   | •   | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | -   |
|     |                   | •   | •    | •          | •   | •    | •    | •  | •    | •   | •   | •   | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | 401 |
|     | अष्टमः प्रश्नः    | •   |      | •          | •   | •    | •    | •  | •    | •   | •   | •   | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | 437 |
|     | नवमः प्रश्नः      | •   |      | •          | •   | •    | •    | •  | •    | •   | •   | •   | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | 465 |
| तीं | त्तरीय आरण        | य   | क    | म्         |     |      |      |    |      |     |     |     |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   | 493 |
|     | प्रथमः प्रश्नः -  |     |      |            |     | ाप्र | श्रः |    |      |     |     |     |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   | 493 |
|     | द्वितीयः प्रश्नः  |     |      | •          |     | 1-1  | •••  |    | •    | •   | •   | •   | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • |     |
|     |                   | •   | •    | •          | •   | •    | •    | •  | •    | •   | •   | •   | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | 529 |
|     | तृतीयः प्रश्नः    | •   |      | •          | •   | •    | •    | •  | •    | •   | •   | •   | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | 544 |
|     | चतुर्थः प्रश्नः   |     |      | •          |     |      |      |    |      |     |     |     |   |   | • |   |   |   |   |   |   |   |   | 559 |
|     | पञ्चमः प्रश्नः    |     |      |            |     |      |      |    |      |     |     |     |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   | 586 |
|     | षष्ठः प्रश्नः .   |     | ,    |            |     |      |      |    |      |     |     |     |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   | 617 |
|     | सप्तमः प्रश्नः -  |     | . হ  | शी         | क्ष | व    | ह्री | ٠. |      |     |     |     |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   | 631 |
|     | अष्टमः प्रश्नः -  |     | - 5  | ब्रह       | ग   | नन   | द्द  | ह  | न्री |     |     |     |   |   |   |   |   |   |   |   | • |   |   | 637 |
|     | नवमः प्रश्नः -    | _   | 7    | ૃા         | व   | र्छ  | Ì    |    |      |     |     |     |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   | 642 |
|     | दशमः प्रश्नः -    |     | . Į  | <b>न</b> ह | Į   | नार  | ाय   | णि | ोप   | निष | 1त् | . • | • | • | • |   |   |   |   | • | • |   |   | 647 |
| कु  | ्र<br>गयजुर्वेदीय | तीं | त्ते | र्ग्र      | ोर  | प-   | क    | ठा | क    | म्  |     |     |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   | 685 |
| C   | प्रथमः प्रश्नः    |     |      |            |     |      |      |    |      |     | •   |     |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   | 685 |
|     | द्वितीयः प्रश्नः  | •   | •    | •          | •   | •    | •    | •  | •    | •   | •   | •   | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • |     |
|     |                   | •   | •    | •          | •   | •    | ٠    | •  | •    | •   | •   | •   | • | • | • | • | • | • | • | ٠ | • | • | • | 698 |
|     | तृतीयः प्रश्नः    |     |      |            |     |      |      |    |      |     |     |     |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |   | 714 |

### ॥ अष्टकम् १॥

#### ॥प्रथमः प्रश्नः॥

#### ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके प्रथमः प्रपाठकः॥

ब्रह्म सन्धंत्तं तन्में जिन्वतम्। क्षत्रश्र सन्धंत्तं तन्में जिन्वतम्। इष्श्र सन्धंत्तं तां में जिन्वतम्। ऊर्ज्श्र सन्धंत्तं तां में जिन्वतम्। रियश्र सन्धंत्तं तां में जिन्वतम्। पृष्टिश्र सन्धंत्तं तां में जिन्वतम्। प्रजाश्र सन्धंत्तं तां में जिन्वतम्। पृश्रून्थ्सन्धंत्तं तान्में जिन्वतम्। स्तुतोऽस् जनधाः। देवास्त्वां शुक्रपाः प्रणयन्तु॥१॥

सुवीराः प्रजाः प्रजनयन्परीहि। शुक्रः शुक्रशोचिषा। स्तुतोऽसि जनधाः। देवास्त्वां मन्थिपाः प्रणयन्तु। सुप्रजाः प्रजाः प्रजनयन्परीहि। मन्थी मन्थिशोचिषा। सञ्जग्मानौ दिव आपृंथिव्यायुः। सन्धंत्तं तन्मे जिन्वतम्। प्राण सन्धंत्तं तं मे जिन्वतम्। अपान सन्धंतं तं मे जिन्वतम्॥२॥

व्यान सन्धंतं तं में जिन्वतम्। चक्षुः सन्धंतं तन्में जिन्वतम्। श्रोत्र सन्धंतं तन्में जिन्वतम्। मनः सन्धंतं तन्में जिन्वतम्। वाच सन्धंतं तां में जिन्वतम्। आयुंः स्थ आयुंर्मे धत्तम्। आयुंर्यज्ञायं धत्तम्। आयुंर्यज्ञपंतये धत्तम्। प्राणः स्थंः प्राणं में धत्तम्। प्राणं यज्ञायं धत्तम्॥३॥

प्राणं यज्ञपंतये धत्तम्। चक्षुः स्थश्चक्षुंमें धत्तम्। चक्षुंर्यज्ञायं

प्रथमः प्रश्नः

धत्तम्। चक्षुंर्य्ज्ञपंतये धत्तम्। श्रोत्रई स्थः श्रोत्रं मे धत्तम्। श्रोत्रं यज्ञायं धत्तम्। श्रोत्रं यज्ञपंतये धत्तम्। तौ देवौ शुक्रामन्थिनौ। कुल्पयंतुं दैवीर्विशंः। कुल्पयंतुं मानुषीः॥४॥

इष्मूर्जम्मासुं धत्तम्। प्राणान्पशुषुं। प्रजां मियं च् यजंमाने च। निरंस्तः शण्डंः। निरंस्तो मर्कः। अपंनुत्तौ शण्डामर्कौ सहामुनाँ। शुक्रस्यं समिदंसि। मृन्थिनंः समिदंसि। स प्रंथमः सङ्कृतिर्विश्वकंमा। स प्रंथमो मित्रो वरुणो अग्निः। स प्रंथमो बृह्स्पतिंश्चिकित्वान्। तस्मा इन्द्रांय सुतमा जुंहोमि॥५॥

न्यन्त्वपानः सन्धेत्ं तं में जिन्वतं प्राणं यज्ञार्यं धत्तं मानुषीर्ग्निर्द्वे चं॥ (ब्रह्मं क्षत्रं तिद्वपमूर्जः रृयिं पृष्टिं प्रजां तां पृशून्तान्थ्सन्धेत्तं तत्प्राणमंपानं व्यानं तं चक्षुः श्रोत्रं मन्स्तद्वाचं ताम्। इषादिपश्चेके वाचं तां में पृशून्थसन्धेत्तं तान्में प्राणादित्रितंये तं मेऽन्यत्र तन्में)॥ [१]

कृत्तिकास्वग्निमार्दधीत। एतद्वा अग्नेर्नक्षंत्रम्। यत्कृत्तिकाः। स्वायांमैवैनं देवतायामाधाय। ब्रह्मवर्चसी भेवति। मुखं वा एतन्नक्षंत्राणाम्। यत्कृत्तिकाः। यः कृत्तिकास्वग्निमांधृत्ते। मुख्यं एव भेवति। अथो खलुं॥६॥

अग्निन्ध्रत्रमित्यपंचायन्ति। गृहान् ह् दाहुंको भवति। प्रजापंती रोहिण्यामग्निमंसृजत। तं देवा रोहिण्यामादंधत। ततो वै ते सर्वान्नोहांनरोहन्। तद्रोहिण्यै रोहिणित्वम्। यो रोहिण्यामग्निमांधत्ते। ऋभ्नोत्येव। सर्वान्नोहांन्नोहति। देवा वै भुद्राः सन्तोऽग्निमाधिथ्सन्त॥७॥

तेषामनाहितोऽग्निरासींत्। अथैंभ्यो वामं वस्वपांकामत्। ते पुनर्वस्वोरादंधता ततो वै तान् वामं वसूपावंर्तता यः पुराऽभुद्रः सन्पापीयान्थस्यात्। स पुनर्वस्वोर्ग्निमादंधीता पुनर्वेवनं वामं वसूपावंर्तते। भुद्रो भंवति। यः कामयेत् दानकांमा मे प्रजाः स्युरितिं। स पूर्वयोः फल्गुंन्योरग्निमादंधीत॥८॥

अर्यम्णो वा एतन्नक्षंत्रम्। यत्पूर्वे फल्गुंनी। अर्यमेति तमांहुर्यो ददांति। दानंकामा अस्मै प्रजा भंवन्ति। यः कामयंत भगी स्यामितिं। स उत्तंरयोः फल्गुंन्योर्ग्निमादंधीत। भगस्य वा एतन्नक्षंत्रम्। यद्त्तंरे फल्गुंनी। भग्येव भंवति। कालुकुञ्जा वै नामासुंरा आसन्॥९॥

ते सुंवर्गायं लोकायाग्निमंचिन्वत। पुरुष इष्टंकामुपांदधात्-पुरुष इष्टंकाम्। स इन्द्रौं ब्राह्मणो ब्रुवांण इष्टंकामुपांधत्त। एषा में चित्रा नामेतिं। ते सुंवर्गं लोकमा प्रारोहन्। स इन्द्र इष्टंकामावृंहत्। तेऽवांकीर्यन्त। येऽवाकींर्यन्त। त ऊर्णावभंयोऽभवन्। द्वावुदंपतताम्॥१०॥

तौ दिव्यौ श्वानांवभवताम्। यो भ्रातृंव्यवान्थ्स्यात्। स चित्रायांमुग्निमादंधीत। अवकीर्यैव भ्रातृंव्यान्। ओजो बलंमिन्द्रियं वीर्यमात्मन्धंत्ते। वसन्तौ ब्राह्मणौऽग्निमादंधीत। वसन्तो वै ब्रौह्मणस्युर्तुः। स्व एवैनंमृतावाधार्यः। ब्रह्मवर्चसी भवति। मुखं वा एतदंतूनाम्॥११॥

यद्वंसन्तः। यो वसन्ताऽग्निमांधत्ते। मुख्यं एव भंवति। अथो योनिमन्तमेवैनं प्रजातमाधित्ते। ग्रीष्मे रांजन्यं आदंधीत। ग्रीष्मो वै रांजन्यंस्युर्तुः। स्व एवैनंमृतावाधायं। इन्द्रियावी भंवति। शुरिद् वैश्य आदंधीत। शुरिद्व वैश्यंस्युर्तुः॥१२॥

स्व पृवैनंमृतावाधायं। पृशुमान्नंवति। न पूर्वयोः फल्गुंन्योर्गिमादंधीत। पृषा वै जंघन्यां रात्रिः संवथ्सरस्यं। यत्पूर्वे फल्गुंनी। पृष्टित एव संवथ्सरस्याग्निमाधायं। पापीयान्भवति। उत्तरयोरा दंधीत। एषा वै प्रथमा रात्रिः संवथ्सरस्यं। यद्त्तरे फल्गुंनी। मुख्त एव संवथ्सरस्याग्निमाधायं। वसीयान्भवति। अथो खलुं। यदैवैनं युज्ञ उपनमैत्। अथादंधीत। सैवास्यर्द्धिः॥१३॥

खल्वांधिथ्सन्त् फल्गुंन्योर्ग्निमादंधीतासन्नपततामृतूनां वैश्यंस्युर्त्कत्तरे फल्गुंनी षद्वं॥——[२]

उद्धंन्ति। यदेवास्यां अमेध्यम्। तदपंहन्ति। अपोऽवौक्षिति शान्त्यै। सिकंता निवंपति। एतद्वा अग्नेर्वैश्वान्रस्यं रूपम्। रूपेणैव वैश्वान्रमवं रुन्धे। ऊषां निवंपति। पृष्टि्वा एषा प्रजननम्। यदूषाः॥१४॥

पुष्ट्यांमेव प्रजनंनेऽग्निमाधंत्ते। अथों संज्ञानं एव। संज्ञान् रू ह्येतत्पंशूनाम्। यदूषाः। द्यावांपृथिवी सहास्तांम्। ते वियती अंब्रूताम्। अस्त्वेव नौ सह यज्ञियमितिं। यद्मुष्यां यज्ञियमासीत्। तदस्यामंदधात्। त ऊषां अभवन्॥१५॥

यदस्या यज्ञियमासीत्। तदमुष्यांमदधात्। तददश्चन्द्रमंसि कृष्णम्। ऊषांन्त्रिवपंत्रदो ध्यांयेत्। द्यावांपृथिव्योरेव यज्ञिये-ऽग्निमाधंत्ते। अग्निर्देवेभ्यो निलायत। आखू रूपं कृत्वा। स पृथिवीं प्राविंशत्। स ऊतीः कुंर्वाणः पृथिवीमन् समंचरत्। तदांखुकरीषमंभवत्॥१६॥

यदांखुकरीष सम्भारो भवंति। यदेवास्य तत्र न्यंक्तम्। तदेवावं रुन्थे। ऊर्जं वा एत रसं पृथिव्या उपदीका उद्दिहन्ति। यद्वल्मीकम्। यद्वल्मीकवपा सम्भारो भवंति। ऊर्जमेव रसं पृथिव्या अवं रुन्थे। अथो श्रोत्रमेव। श्रोत्र ह्यंतत्पृथिव्याः। यद्वल्मीकः॥१७॥

अबंधिरो भवति। य पृवं वेदं। प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। तासामत्रमुपाँक्षीयत। ताभ्यः सूदमुपुप्राभिनत्। ततो वै तासामत्रं नाक्षीयत। यस्य सूदंः सम्भारो भवंति। नास्यं गृहेऽत्रं क्षीयते। आपो वा इदमग्रं सिल्लमांसीत्। तेनं प्रजापंतिरश्राम्यत्॥१८॥

कथिमिद एयादिति। सोऽपश्यत्पुष्करपूर्णं तिष्ठंत्। सोऽमन्यत। अस्ति वै तत्। यस्मिन्निदमिध तिष्ठतीति। स वेराहो रूपं कृत्वोप न्यंमञ्जत्। स पृथिवीम्ध आँच्छत्। तस्यां उपहत्योदंमञ्जत्। तत्पुंष्करपूर्णें ऽप्रथयत्। यदप्रंथयत्॥१९॥

तत्पृंथिव्यै पृंथिवित्वम्। अभूद्वा इदिमितिं। तद्भूम्यैं भूमित्वम्। तां दिशोऽनु वातः समंवहत्। ता श्रकंराभिरदृश्हत्। शं वै नोंऽभूदितिं। तच्छकंराणाश् शर्कर्त्वम्। यद्वंराहविंहतश् सम्भारो भवंति। अस्यामेवा- छंम्बद्वारमग्रिमाधंते। शर्करा भवन्ति धृत्यैं॥२०॥

अथों श्नन्त्वायं। सरेता अग्निर्घयेय इत्यांहुः। आपो वरुंणस्य पत्नंय आसन्। ता अग्निर्भ्यंध्यायत्। ताः समंभवत्। तस्य रेतः परांऽपतत्। तद्धिरंण्यमभवत्। यद्धिरंण्यमुपास्यंति। सरेतसमेवाग्निमाधंत्ते। पुरुंष् इन्नै स्वाद्रेतंसो बीभथ्सत इत्यांहुः॥२१॥

उत्तर्त उपाँस्यत्यबींभथ्सायै। अति प्रयंच्छति। आर्तिमेवाति प्रयंच्छति। अग्निर्देवेभ्यो निलायत। अश्वो रूपं कृत्वा। सोंऽश्वत्थे संवथ्सरमंतिष्ठत्। तदंश्वत्थस्यांश्वत्थत्वम्। यदाश्वंत्थः सम्भारो भवंति। यदेवास्य तत्र न्यंक्तम्। तदेवावं रुन्थे॥२२॥

देवा वा ऊर्जं व्यंभजन्त। ततं उदुम्बर् उदंतिष्ठत्। ऊर्ग्वा उदुम्बरंः। यदौदुंम्बरः सम्भारो भवंति। ऊर्जमेवावं रुन्थे। तृतीयंस्यामितो दिवि सोमं आसीत्। तं गांयत्र्याऽहंरत्। तस्यं पूर्णमंच्छिद्यत। तत्पूर्णोऽभवत्। तत्पूर्णस्यं पर्ण्त्वम्॥२३॥ यस्यं पर्णमयंः सम्भारो भवंति। सोमपीथमेवावं रुन्थे। देवा वै ब्रह्मंत्रवदन्त। तत्पूर्ण उपांश्वणोत्। सुश्रवा वै नामं। यत्पंर्णमयंः सम्भारो भवंति। ब्रह्मवर्चसमेवावं रुन्थे। प्रजापंतिर्श्निमंसृजत। सोंऽबिभेत्र मां धक्ष्यतीतिं। त॰ शम्यांऽशमयत्॥२४॥

तच्छुम्यै शमित्वम्। यच्छुंमीमयः सम्भारो भवंति। शान्त्या अप्रंदाहाय। अग्नेः सृष्टस्यं यतः। विकंङ्कतं भा आँच्छ्रंत्। यद्वैकंङ्कतः सम्भारो भवंति। भा एवावं रुन्धे। सहृंदयो-ऽग्निराधेय इत्यांहुः। मुरुतोऽद्भिरग्निमंतमयन्। तस्यं तान्तस्य हृदंयमाच्छिंन्दन्। साऽशनिरभवत्। यद्शनिहतस्य वृक्षस्यं सम्भारो भवंति। सहृंदयमेवाग्निमा धंत्ते॥२५॥

ऊषां अभवन्नभवद्वल्मीकौंऽश्राम्युदप्रंथयुद्धृत्यैं बीभथ्सत् इत्यांहू रुन्धे पर्णृत्वमंशमयदच्छिन्दु ्स्नीणिं

च॥-----[३]

द्वादशसुं विकामेष्वग्निमा दंधीत। द्वादेश मासाः संवथ्सरः। संवथ्सरादेवैनंमव्रुद्धा धंत्ते। यद्वांदशसुं विकामेष्वा दधीत। परिमित्मवं रुन्धीत। चक्षुंर्निमित् आदंधीत। इयद्वादंश विकामा(३) इति। परिमितं चैवापंरिमितं चावं रुन्धे। अनृतं व वाचा वंदति। अनृतं मनसा ध्यायति॥२६॥

चक्षुर्वै सृत्यम्। अद्रा(३)गित्यांह। अदंर्श्वमितिं। तथ्सृत्यम्। यश्वक्षुंर्निमितेऽग्निमांधत्ते। सृत्य एवैनुमा धंत्ते। तस्मादाहिताग्निर्नानृतं वदेत्। नास्यं ब्राह्मणोऽनांश्वान्गृहे वंसेत्। सत्ये ह्यंस्याग्निराहितः। आग्नेयी वै रात्रिः॥२७॥

आग्नेयाः प्रावंः। ऐन्द्रमहंः। नक्तं गार्हंपत्यमा दंधाति। प्रशूनेवावं रुन्धे। दिवांऽऽहवनीयम्। इन्द्रियमेवावं रुन्धे। अधींदिते सूर्यं आहवनीयमा दंधाति। एतस्मिन्वे लोके प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। प्रजा एव तद्यजमानः सृजते। अथो भूतं चैव भंविष्यचावं रुन्धे॥२८॥

इडा वै मान्वी यंज्ञानूकाशिन्यांसीत्। साऽशृंणोत्। असुंरा अग्निमादंधत् इतिं। तदंगच्छत्। त आंहवनीयमग्र आदंधत। अथ् गार्हंपत्यम्। अथान्वाहार्यपचनम्। साऽब्रंवीत्। प्रतीच्येषा् श्रीरंगात्। भुद्रा भूत्वा परां भविष्युन्तीतिं॥२९॥

यस्यैवम्ग्निरांधीयतें। प्रतीच्यंस्य श्रीरंति। भुद्रो भूत्वा परांभवति। साऽश्वंणोत्। देवा अग्निमादंधत् इतिं। तदंगच्छत्। तेंंऽन्वाहार्यपचंनमग्र आदंधत। अथ् गार्हंपत्यम्। अथांऽऽहवनीयम्। साऽब्रंवीत्॥३०॥

प्राच्येषाड् श्रीरंगात्। भद्रा भूत्वा सुंवर्गं लोकमेंष्यन्ति। प्रजां तु न वेंष्म्यन्त इति। यस्यैवमुग्निराधीयतें। प्राच्यंस्य श्रीरंति। भद्रो भूत्वा सुंवर्गं लोकमेति। प्रजां तु न विन्दते। साऽब्रंवीदिडा मनुम्। तथा वा अहं तवाग्निमाधांस्यामि। यथा प्र प्रजयां पृशुभिर्मिथुनैर्जनिष्यसें॥३१॥

प्रत्यस्मिँ होके स्थास्यसिं। अभि सुंवर्गं लोकं जेष्यसीतिं।

गार्हंपत्यमग्र आदंधात्। गार्हंपत्यं वा अनुं प्रजाः पृशवः प्रजांयन्ते। गार्हंपत्येनैवास्मैं प्रजां पृशून्प्राजनयत्। अथौन्वाहार्यपर्चनम्। तिर्यिष्टिंव वा अयं लोकः। अस्मिन्नेव तेनं लोके प्रत्यंतिष्ठत्। अथोऽऽहवनीयम्। तेनैव सुंवर्गं लोकमभ्यंजयत्॥३२॥

यस्यैवम्गिरांधीयतें। प्र प्रजयां पृश्निर्मिथुनैजांयते। प्रत्यस्मिँ होके तिष्ठति। अभि सुंवर्गं लोकं जंयति। यस्य वा अयंथादेवतम्गिरांधीयतें। आ देवतांभ्यो वृश्च्यते। पापीयान्भवति। यस्यं यथादेवतम्। न देवतांभ्य आवृंश्च्यते। वसीयान्भवति॥३३॥

भृगूंणां त्वाऽङ्गिरसां व्रतपते व्रतेनादंधामीति भृग्वङ्गिरसामादंध्यात्। आदित्यानां त्वा देवानां व्रतपते व्रतेनादंधामीत्यन्यासां ब्राह्मंणीनां प्रजानांम्। वरुंणस्य त्वा राज्ञां व्रतपते व्रतेनादंधामीति राज्ञंः। इन्द्रंस्य त्वेन्द्रियेणं व्रतपते व्रतेनादंधामीति राज्ञंः। इन्द्रंस्य त्वेन्द्रियेणं व्रतपते व्रतेनादंधामीति राज्ञन्यंस्य। मनौस्त्वा ग्राम्ण्यों व्रतपते व्रतेनादंधामीति वैश्यंस्य। ऋभूणां त्वां देवानां व्रतपते व्रतेनादंधामीति रथकारस्यं। यथादेवतमग्रिराधीयते। न देवतांभ्य आवृंश्यते। वसीयान्भवति॥३४॥

ध्यायति वै रात्रिश्चावं रुन्धे भविष्युन्तीत्यंब्रवीञ्जनिष्यसंऽजयद्वसीयान्भवति नवं च॥——[४]

प्रजापंतिर्वाचः स्त्यमंपश्यत्। तेनाग्निमाधंत्त। तेन् वै स आंभ्रोत्। भूर्भुवः सुव्रित्यांह। एतद्वै वाचः स्त्यम्। य एतेनाग्निमांधत्ते। ऋभ्नोत्येव। अथों सत्यप्रांशूरेव भंवति। अथो य एवं विद्वानंभिचरंति। स्तृणुत एवैनम्॥३५॥

भूरित्यांह। प्रजा एव तद्यजंमानः सृजते। भुव इत्यांह। अस्मिन्नेव लोके प्रतिं तिष्ठति। सुव्रित्यांह। सुव्र्ग एव लोके प्रतिं तिष्ठति। त्रिभिर्क्षरैर्गार्हंपत्यमा दंधाति। त्रयं इमे लोकाः। एष्वेंवैनं लोकेषु प्रतिष्ठित्माधंत्ते। सर्वैः पश्चभिराहवनीयम्॥३६॥

सुवर्गाय वा एष लोकायाधीयते। यदांहवनीयः। सुवर्ग एवास्मैं लोके वाचः सत्य सर्वमाप्नोति। त्रिभिर्गार्हंपत्यमा दंधाति। पश्चभिराहवनीयम्। अष्टौ सम्पंद्यन्ते। अष्टाक्षरा गायत्री। गायत्रौंऽग्निः। यावांनेवाग्निः। तमाधंत्ते॥३७॥

प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। ता अंस्माथ्मृष्टाः परांचीरायन्। ताभ्यो ज्योतिरुदंगृह्णात्। तं ज्योतिः पश्यन्तीः प्रजा अभि स्मावर्तन्त। उपरीवाग्निमुद्गृह्णीयादुद्धरन्। ज्योतिरेव पश्यन्तीः प्रजा यजमानम्भि स्मावर्तन्ते। प्रजापंतेरक्ष्यंश्वयत्। तत्परां-ऽपतत्। तदश्वोऽभवत्। तदश्वंस्याश्वत्वम्॥३८॥

पुष वै प्रजापंतिः। यद्ग्निः। प्राजापत्योऽश्वः। यदश्वं पुरस्तान्नयंति। स्वमेव चक्षुः पश्यंन्य्रजापंतिरनूदेति। वृज्री वा पृषः। यदश्वः। यदश्वं पुरस्तान्नयंति। जातानेव भ्रातृंव्यान्त्रणुंदते। पुनुरा वर्तयति॥३९॥ ज्निष्यमाणानेव प्रतिनुदते। न्याहवनीयो गार्हंपत्य-मकामयत। निगार्हंपत्य आहवनीयम्। तौ विभाजं नाशंक्रोत्। सोऽश्वंः पूर्ववाङ्गृत्वा। प्राश्चं पूर्वमुदंवहत्। तत्पूर्ववाहंः पूर्ववाद्मम्। यदश्वं पुरस्तान्नयंति। विभंक्ति-रेवैनयोः सा। अथो नानांवीर्यावेवैनौ कुरुते॥४०॥

यदुपर्युपरि शिरो हरैंत्। प्राणान् विच्छिन्द्यात्। अधोऽधः शिरों हरति। प्राणानां गोपीथायं। इयत्यग्रें हरति। अथेयत्यथेयंति। त्रयं इमे लोकाः। एष्वेवैनं लोकेषु प्रतिष्ठित्माधंत्ते। प्रजापंतिर्ग्निमंसृजत। सोऽबिभेत्प्र मां धक्ष्यतीतिं॥४१॥

तस्यं त्रेधा मंहिमानं व्यौहत्। शान्त्या अप्रंदाहाय। यत्रेधाऽग्निराधीयतें। महिमानंमेवास्य तद्यूहित। शान्त्या अप्रंदाहाय। पुन्रा वंर्तयति। महिमानंमेवास्य सन्दंधाति। पशुर्वा एषः। यदर्श्वः। एष रुद्रः॥४२॥

यद्गिः। यदश्वंस्य प्रदेंऽग्निमांद्ध्यात्। रुद्रायं पृशूनिपंदध्यात्। अपृशुर्यजंमानः स्यात्। यन्नाकृमयेंत्। अनंवरुद्धा अस्य पृशवंः स्युः। पृर्श्वत आक्रंमयेत्। यथाऽऽहितस्याग्नेरङ्गांरा अभ्यव्वर्तेरन्। अवंरुद्धा अस्य पृशवो भवंन्ति। न रुद्रायापिंदधाति॥४३॥

त्रीणिं हुवी १षि निर्वपति। विराजं एव विक्रान्तं

यर्जमानोऽनु विक्रमते। अग्नये पर्वमानाय। अग्नये पावकायं। अग्नये श्चये। यद्ग्नये पर्वमानाय निर्वपति। पुनात्येवैनम्। यद्ग्नये पावकायं। पूत एवास्मिन्नन्नाद्यं दधाति। यद्ग्नये श्चये। ब्रह्मवर्च्यमेवास्मिन्नुपरिष्टाद्दधाति॥४४॥ पुनमाह्वनीयं धत्तेऽश्वत्वं वंतयित कुरुत इति रुद्रो दंधाति यद्ग्रये श्चय एकं चान[५]

देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते देवा विजयमुंपयन्तः। अग्नौ वामं वसु सं न्यंदधत। इदमुं नो भविष्यति। यदिं नो जेष्यन्तीतिं। तद्ग्निर्नोध्सहंमशक्नोत्। तत् त्रेधा विन्यंदधात्। पृशुषु तृतींयम्। अपसु तृतींयम्। आदित्ये तृतींयम्॥४५॥

तद्देवा विजित्यं। पुन्रवांरुरुथ्सन्त। तेंंऽग्नये पर्वमानाय पुरोडाशंम्ष्टाकंपालं निरंवपन्। पृशवो वा अग्निः पर्वमानः। यदेव पृशुष्वासींत्। तत्तेनावांरुन्धत। तेंंऽग्नयें पावकायं। आपो वा अग्निः पावकः। यदेवापस्वासींत्। तत्तेनावांरुन्धत॥४६॥

तें'ऽग्नये शुचंये। असौ वा आंदित्यों'ऽग्निः शुचिः। यदेवाऽऽदित्य आसींत्। तत्तेनावांरुन्धत। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। तनुवो वावैता अंग्र्याधेयंस्य। आग्नेयो वा अष्टाकंपालोऽग्र्याधेयमितिं। यत्तं निर्वपेत्। नैतानिं। यथाऽऽत्मा स्यात्॥४७॥

नाङ्गांनि। ताहगेव तत्। यदेतानि निर्वपेता न तम्। यथाऽङ्गांनि स्युः। नाऽऽत्मा। ताहगेव तत्। उभयांनि सह निरुप्यांणि। यज्ञस्यं सात्मत्वायं। उभयं वा एतस्येन्द्रियं

# वीर्यमाप्यते॥४८॥

यौंऽग्निमांधृत्ते। ऐन्द्राग्नमेकांदशकपालमनु निर्वपेत्। आदित्यं चुरुम्। इन्द्राग्नी वै देवानामयांतयामानौ। ये एव देवते अयांतयाम्नी। ताभ्यांमेवास्मां इन्द्रियं वीर्यमवं रुन्थे। आदित्यो भंवति। इयं वा अदितिः। अस्यामेव प्रतिं तिष्ठति। धेन्वै वा एतद्रेतः॥४९॥

यदाज्यम्"। अनुडुहंस्तण्डुलाः। मिथुनमेवावं रुन्धे। घृते भंवति। यज्ञस्यालूक्षान्तत्वाय। चृत्वारं आर्षेयाः प्राश्ञंन्ति। दिशामेव ज्योतिंषि जुहोति। पृशवो वा एतानिं हुवी॰षिं। एष रुद्रः। यद्ग्निः॥५०॥

यथ्सद्य एतानि ह्वी १ वि निर्वपेत्। रुद्रायं पृशूनिपं दध्यात्। अपृशुर्यजंमानः स्यात्। यन्नानुंनिर्वपेत्। अनेवरुद्धा अस्य पृशवः स्युः। द्वादृशसु रात्रीष्वनु निर्वपेत्। संवथ्सरप्रतिमा व द्वादंश रात्रयः। संवथ्सरणेवासमें रुद्र १ शमियत्वा। पृशूनवं रुन्थे। यदेकंमेकमेतानि ह्वी १ वि निर्वपेत्॥ ५१॥

यथा त्रीण्यावपंनानि पूरयेंत्। तादक्तत्। न प्रजनंन-मुच्छि १ षेत्। एकं निरुप्यं। उत्तरे समस्येत्। तृतीयंमेवास्में लोकमुच्छि १ षति प्रजनंनाय। तं प्रजयां पृशुभिरनु प्रजायते। अथों यज्ञस्यैवैषाऽभिक्रांन्तिः। रथचकं प्रवंतियति। म्नुष्युर्थेनैव देवर्थं प्रत्यवंरोहति॥५२॥

ब्रह्मवादिनों वदन्ति। होत्व्यंमग्निहोत्राँ(३) न होत्व्या(३) मितिं। यद्यजुंषा जुहुयात्। अयंथापूर्वमाहुंती जुहुयात्। यन्न जुंहुयात्। अग्निः परां भवेत्। तूष्णीमेव होत्व्यम्ं। यथापूर्वमाहुंती जुहोतिं। नाग्निः परांभवति। अग्नीधं ददाति॥५३॥

अग्निमुंखानेवर्तून्प्रींणाति। उपबर्हंणं ददाति। रूपाणामवं-रुद्धै। अश्वं ब्रह्मणें। इन्द्रियमेवावं रुन्धे। धेनु १ होत्रें। आशिषं पुवावं रुन्धे। अनुङ्गाहंमध्वर्यवें। विहुर्वा अनुङ्गान्। विह्रंरध्वर्युः॥५४॥

वहिंनेव वहिं युज्ञस्यावं रुन्धे। मिथुनौ गावौं ददाति। मिथुनस्यावंरुद्धौ। वासों ददाति। सुर्वदेवत्यं वै वासंः। सर्वा एव देवताः प्रीणाति। आ द्वांदशभ्यों ददाति। द्वादंश मासाः संवथ्सरः। संवथ्सर एव प्रतिं तिष्ठति। कामंमूर्ध्वं देयम्। अपंरिमितस्यावंरुद्धौ॥५५॥

घुर्मः शिर्स्तद्यम्गिः। सिम्प्रियः पृश्भिर्भ्वत्। छुर्दिस्तोकाय तनयाय यच्छ। वार्तः प्राणस्तद्यमृग्निः। सिम्प्रियः पृश्भिर्भ्वत्। स्वदितं तोकाय तनयाय पितुं पंच। प्राचीमन् प्रदिशं प्रेहिं विद्वान्। अग्नेरंग्ने पुरो अंग्निर्भवेह। विश्वा आशा दीद्यांनो विभांहि। ऊर्जं नो धेहि द्विपदे चतुंष्पदे॥५६॥

अर्कश्चक्षुस्तद्सौ सूर्यस्तद्यम्गिः। सिम्प्रियः पृश्विभिर्मुवत्। यत्ते शुक्र शुक्रं वर्चः शुक्रा तृनः। शुक्रं ज्योतिरजंस्रम्। तेनं मे दीदिह् तेन् त्वाऽऽदंधे। अग्निनाऽग्ने ब्रह्मणा। आन्शे व्यानशे सर्वमायुर्व्यानशे। ये ते अग्ने शिवे तृनुवौँ। विराद्वं स्वराद्वं। ते माविशतां ते मां जिन्वताम्॥५७॥

ये ते अग्ने शिवे तनुवौँ। सम्माद्वांभिभूश्चं। ते माविंशतां ते मां जिन्वताम्। ये ते अग्ने शिवे तनुवौँ। विभूश्चं पिर्भूश्चं। ते मा विंशतां ते मां जिन्वताम्। ये ते अग्ने शिवे तनुवौँ। प्रभ्वी च प्रभूतिश्च। ते मा विंशतां ते मां जिन्वताम्। यास्ते अग्ने शिवास्तनुवंः। ताभिस्त्वाऽऽदंधे। यास्ते अग्ने घोरास्तनुवंः। ताभिरमुं गंच्छ॥५८॥

चतुंष्पदे जिन्वतां तुनुवस्त्रीणिं च॥-----[७]

ड्रमे वा एते लोका अग्नयं। ते यदव्यांवृत्ता आधीयरन्। शोचयंयुर्यजंमानम्। घर्मः शिर् इति गार्हंपत्यमा देधाति। वातः प्राण इत्यंन्वाहार्यपचंनम्। अर्कश्चक्षुरित्यांहवनीयम्। तेनैवैनान्व्यावंतियति। तथा न शोचयन्ति यजंमानम्। रथन्तरम्भिगांयते गार्हंपत्य आधीयमांने। राथंन्तरो वा अयं लोकः॥५९॥

अस्मिन्नेवैनं लोके प्रतिष्ठितमा धंत्ते। वामदेव्यम्भिगांयत उद्धियमाणे। अन्तरिक्षं वै वामदेव्यम्। अन्तरिक्ष एवैन् प्रतिष्ठितमाधंत्ते। अथो शान्तिर्वे वामदेव्यम्। शान्तमेवैनं पश्व्यंमुद्धंरते। बृहद्भिगांयत आहवनीयं आधीयमाने। बार्हतो वा असौ लोकः। अमुष्मिन्नेवैनं लोके प्रति-ष्ठितमाधंत्ते। प्रजापंतिर्ग्निमंसृजत॥६०॥

सोऽश्वोऽवारों भूत्वा परांङेत्। तं वांरवन्तीयंनावारयत। तद्वांरवन्तीयंस्य वारवन्तीयृत्वम्। श्यैतेनं श्येती अंकुरुत। तच्छौतस्यं श्यैतृत्वम्। यद्वांरवन्तीयंमिभ् गायंते। वार्यित्वैवनं प्रतिष्ठितमा धंत्ते। श्यैतेनं श्येती कुंरुते। घर्मः शिर् इति गार्हंपत्यमादंधाति। सशींर्षाणमेवैनमा धत्ते॥६१॥

उपैनमुत्तरो यज्ञो नंमित। रुद्रो वा एषः। यद्ग्निः। स आधीयमान ईश्वरो यज्ञमानस्य पृशून् हिश्सितोः। सम्प्रियः पृशुभिभुविदित्याह। पृशुभिरेवैन् सम्प्रियं करोति। पृशूनामहिश्सायै। छुर्दिस्तोकाय तनयाय युच्छेत्याह। आशिषंमेवैतामा शास्ते। वातः प्राण इत्यंन्वाहार्यपचनम्॥६२॥

सप्राणमेवैन्मा धंत्ते। स्वृद्धितं तोकाय तनयाय पितुं प्चेत्याह। अन्नमेवास्मै स्वदयति। प्राचीमनुं प्रदिशं प्रेहिं विद्वानित्यांह। विभिक्तिरेवैनंयोः सा। अथो नानांवीर्यावेवैनौं कुरुते। ऊर्जं नो धेहि द्विपदे चतुंष्पद् इत्यांह। आशिषंमेवैतामा शांस्ते। अर्कश्चक्षुरित्यांहवनीयम्। अर्को वै देवानामन्नम्॥६३॥

अन्नमेवावं रुन्धे। तेनं मे दीदिहीत्यांह। सिमंन्ध एवैनम्ं। आनुशे व्यांनश् इति त्रिरुदिङ्गयित। त्रयं इमे लोकाः। एष्वेवेनं लोकेषु प्रतिष्ठितमा धंत्ते। तत्तथा न कार्यम्ं। वीङ्गित्तमप्रतिष्ठितमा दंधीत। उद्धृत्यैवाधायांभिमन्नियः। अवीङ्गितमेवेनं प्रतिष्ठितमाधंत्ते। विराद्घं स्वराद्घ् यास्ते अग्ने शिवास्तनुवस्ताभिस्त्वाऽऽदंध् इत्यांह। एता वा अग्नेः शिवास्तनुवंः। ताभिरेवैन् समंध्यति। यास्ते अग्ने घोरास्तनुवस्ताभिरमुं गुच्छेतिं ब्रूयाद्यं द्विष्यात्। ताभिरेवैनं पर्राभावयति॥६४॥

लोकोऽसुजतैनुमार्धत्तेऽन्वाहार्युपर्चनं देवानामन्नमेनुं प्रतिष्ठितुमार्धत्ते पश्चं च॥————[८]

श्मीगुर्भाद्गिं मंन्थति। एषा वा अग्नेर्यज्ञियां तृनूः। तामेवास्मै जनयति। अदितिः पुत्रकामा। साध्येभ्यों देवेभ्यौं ब्रह्मौद्नमंपचत्। तस्यां उच्छेषंणमददुः। तत्प्राश्ञौत्। सा रेतोंऽधत्त। तस्यै धाता चाँर्यमा चांजायेताम्। सा द्वितीयंमपचत्॥६५॥

तस्यां उच्छेषंणमददुः। तत्प्राश्ञांत्। सा रेतोंऽधत्त। तस्यै मित्रश्च वरुंणश्चाजायेताम्। सा तृतीयंमपचत्। तस्यां उच्छेषंणमददुः। तत्प्राश्ञांत्। सा रेतोंऽधत्त। तस्या अश्शंश्च भगंश्चाजायेताम्। सा चंतुर्थमंपचत्॥६६॥

तस्यां उच्छेषंणमददुः। तत्प्राश्नांत्। सा रेतोंऽधत्त। तस्या इन्द्रंश्च विवंस्वाङ्श्चाजायेताम्। ब्रह्मौद्नं पंचति। रेतं एव तद्दंधाति। प्राश्नंन्ति ब्राह्मणा ओद्नम्। यदाज्यंमुच्छिष्यंते। तेनं स्मिधोऽभ्यज्या दंधाति। उच्छेषंणाद्वा अदिती रेतों-ऽधत्त॥६७॥

उच्छेषंणादेव तद्रेतों धत्ते। अस्थि वा एतत्। यथ्समिधंः। एतद्रेतंः। यदाज्यम्। यदाज्यंन समिधोऽभ्यज्यादधांति। अस्थ्येव तद्रेतंसि दधाति। तिस्र आदंधाति मिथुन्त्वायं। इयंतीर्भवन्ति। प्रजापंतिना यज्ञमुखेन सम्मिताः॥६८॥

इयंतीर्भवन्ति। युज्ञपुरुषा सम्मिताः। इयंतीर्भवन्ति। एताबुद्दै पुरुषे वीर्यम्। वीर्यसम्मिताः। आर्द्रा भेवन्ति। आर्द्रमिव हि रेतः सिच्यते। चित्रियस्याश्वत्थस्यादंधाति। चित्रमेव भेवति। घृतवंतीभिरा दंधाति॥६९॥

पुतद्वा अग्नेः प्रियं धामं। यद्घृतम्। प्रियेणैवैनं धाम्ना समर्धयति। अथो तेजंसा। गायत्रीभिर्न्नाह्मणस्यादंध्यात्। गायत्रछंन्दा वे ब्राह्मणः। स्वस्य छन्दंसः प्रत्ययन्स्त्वायं। त्रिष्टुग्भी राजन्यंस्य। त्रिष्टुप्छंन्दा वे राजन्यंः। स्वस्य छन्दंसः प्रत्ययन्स्त्वायं॥७०॥

जगंतीभिवेंश्यंस्य। जगंतीछन्दा वै वैश्यंः। स्वस्य

छन्दंसः प्रत्ययन्स्त्वायं। तः संवथ्सरं गोपायेत्। संवथ्सरः हि रेतों हितं वर्धते। यद्यंनः संवथ्सरे नोपनमैत्। समिधः पुन्रादंध्यात्। रेतं पुव तिद्धतं वर्धमानमेति। न माःसमंश्जीयात्। न स्त्रियमुपंयात्॥७१॥

यन्मा १ समंश्जीयात्। यिश्वयं मुप्यात्। निर्वीर्यः स्यात्। नैनं मृग्निरुपं नमेत्। श्व आंधास्यमानो ब्रह्मौद्नं पंचति। आदित्या वा इत उत्तमाः सुंवर्गं लोकमायन्। ते वा इतो यन्तं प्रतिनुदन्ते। पृते खलु वावाऽऽदित्याः। यद्ग्रौह्मणाः। तैरेव सन्त्वं गंच्छति॥७२॥

नैनं प्रतिनुदन्ते। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। क्वां सः। अग्निः कार्यः। यौऽस्मै प्रजां पृशून्प्रंजनयतीति। शल्केस्ता १रात्रिंमग्निमिन्धीत। तस्मिन्नुपव्युषम्रणी निष्टंपेत्। यथंर्षभायं वाशिता न्यांविच्छायति। ताद्दगेव तत्। अपोद्ह्य भस्माग्निं मन्थति॥७३॥

सैव साऽग्नेः सन्तंतिः। तं मंथित्वा प्राश्चमुद्धंरित। संवथ्मरमेव तद्रेतों हितं प्रजंनयित। अनांहित्स्तस्याग्नि-रित्यांहुः। यः समिधोऽनांधायाग्निमांधृत्त इतिं। ताः संवथ्मरे पुरस्तादादंध्यात्। संवथ्मरादेवैनंमव्रुध्याधंत्ते। यदि संवथ्मरेऽनाद्ध्यात्। द्वाद्श्यां पुरस्तादादंध्यात्। संवथ्मरप्रंतिमा व द्वादंश रात्रंयः। संवथ्मरमेवास्याहिता भवन्ति। यदि द्वाद्श्यां नाद्ध्यात्। त्र्यहे पुरस्तादादध्यात्। आहिता एवास्यं भवन्ति॥७४॥

द्वितीयंमपचचतुर्थमंपचददिंती रेतोंऽधत्त् सम्मिता घृतवंतीभि्रादंधाति राजुन्यः स्वस्य छन्दंसः प्रत्ययन्स्त्वायेयाद्गच्छति मन्थित् रात्रयश्चत्वारिं च॥———[९]

प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। स रिरिचानोंऽमन्यत। स तपोंऽतप्यत। स आत्मन्वीर्यमपश्यत्। तदंवर्धत। तदंस्माथ्सहंसोर्ध्वमंसृज्यत। सा विराडंभवत्। तां देवासुरा व्यंगृह्णत। सोंऽब्रवीत्प्रजापंतिः। मम वा एषा॥७५॥

दोहां पुव युष्माक् मितिं। सा ततः प्राच्युदंक्रामत्। तत्प्रजापंतिः पर्यगृह्णात्। अर्थवं पितुं में गोपायेतिं। सा द्वितीयमुदंक्रामत्। तत्प्रजापंतिः पर्यगृह्णात्। नर्य प्रजां में गोपायेतिं। सा तृतीयमुदंक्रामत्। तत्प्रजापंतिः पर्यगृह्णात्। शङ्स्यं पश्नमें गोपायेतिं॥७६॥

सा चंतुर्थमुदंक्रामत्। तत्प्रजापंतिः पर्यगृह्णात्। सप्रंथ स्भां में गोपायेतिं। सा पंश्चममुदंक्रामत्। तत्प्रजापंतिः पर्यगृह्णात्। अहं बुध्निय मत्रं मे गोपायेतिं। अग्नीन् वाव सा तान्व्यंक्रमत। तान्प्रजापंतिः पर्यगृह्णात्। अथो पङ्किमेव। पङ्किर्वा एषा ब्राह्मणे प्रविष्टा॥७७॥

तामात्मनोऽधि निर्मिमीते। यद्ग्निराधीयतै। तस्मादितावन्तो-ऽग्नय आधीयन्ते। पाङ्कं वा इद॰ सर्वमै। पाङ्केनैव पाङ्कर् स्पृणोति। अर्थर्व पितुं में गोपायेत्यांह। अन्नमेवैतेनं स्पृणोति। नर्यं प्रजां में गोपायेत्यांह। प्रजामेवैतेनं स्पृणोति। शक्स्यं पश्नमें गोपायेत्यांह॥७८॥

पुश्नेवैतेनं स्पृणोति। सप्रंथ स्मां में गोपायेत्यांह। स्मामेवैतेनंन्द्रिय स्पृणोति। अहें बुध्रिय मर्त्रं मे गोपायेत्यांह। मत्रंमेवैतेन श्रिय स्पृणोति। यदंन्वाहार्यपचंने-ऽन्वाहार्यं पचंन्ति। तेन सौंऽस्याभीष्टंः प्रीतः। यद्गार्हंपत्य आज्यंमधिश्रयंन्ति सम्पत्नींयांज्ञयंन्ति। तेन सौंऽस्याभीष्टंः प्रीतः। यदांहवनीये जुह्नंति॥७९॥

तेन सौंऽस्याभीष्टः प्रीतः। यथ्मभायां विजयंन्ते।
तेन सौंऽस्याभीष्टः प्रीतः। यदांवस्थेऽन्न्र् हरंन्ति। तेन्
सौंऽस्याभीष्टंः प्रीतः। तथांऽस्य सर्वे प्रीता अभीष्टा
आधींयन्ते। प्रवस्थमेष्यन्नेवमुपंतिष्ठेतैकंमेकम्। यथां
ब्राह्मणायं गृहेवासिने परिदायं गृहानेतिं। तादृगेव तत्।
पुनंरागत्योपंतिष्ठते। सा भांगेयमेवेषां तत्। सा ततं
ऊर्ध्वारोहत्। सा रोहिण्यंभवत्। तद्रोहिण्ये रोहिणित्वम्।
रोहिण्यामुग्निमादंधीत। स्व पुवैनं योनौ प्रतिष्ठितमाधंत्ते।
ऋधोत्येनेन॥८०॥

एषा पुशून्में गोपायेति प्रविष्टा पुशून्में गोपायेत्यांह् जुह्वंति तिष्ठते सप्त चं॥———[१०]

ब्रह्म सन्धंत्तं कृत्तिकासूर्द्धन्ति द्वादशस्ं प्रजापंतिर्वाचो देवासुरास्तद्ग्निर्नोद्धर्मः शिरं

प्रथमः प्रश्नः

ड्मे वै शंमीगुर्भात्प्रजापंतिः स रिरिचानः स तपः स आत्मन्वीर्यं दशं॥१०॥ ब्रह्म सन्धंत्तं तौ दिव्यावथों शन्त्वाय प्राच्येषां यदुपर्युपरि यथ्सद्यः सोऽश्वोऽवारों भूत्वा जगंतीभिरशीतिः॥८०॥ ब्रह्म सन्धंत्तमृभ्रोत्येनेन॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके प्रथमः प्रपाठकः समाप्तः॥

## ॥द्वितीयः प्रश्नः॥

# ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके द्वितीयः प्रपाठकः॥

उद्धन्यमानम्स्या अमेध्यम्। अपं पाप्मानं यजंमानस्य हन्तु। शिवा नः सन्तु प्रदिश्श्वतंस्रः। शं नों माता पृथिवी तोकंसाता। शं नों देवीर्भिष्टये। आपों भवन्तु पीतयैं। शं योर्भि स्रंवन्तु नः। वैश्वान्रस्यं रूपम्। पृथिव्यां परिस्रसाँ। स्योनमा विंशन्तु नः॥१॥

यदिदं दिवो यददः पृथिव्याः। सञ्जज्ञाने रोदंसी सम्बभूवतुः। ऊषाँन्कृष्णमंवतु कृष्णमूषाँः। इहोभयौर्यज्ञिय-मार्गमिष्ठाः। ऊतीः कुंर्वाणो यत्पृथिवीमचंरः। गुहाकारंमाखुरूपं प्रतीत्यं। तत्ते न्यंक्तमिह सम्भरंन्तः। शृतं जीवेम श्ररदः सवीराः। ऊर्जं पृथिव्या रसमाभरंन्तः। शृतं जीवेम श्ररदः पुरूचीः॥२॥

वृम्रीभिरनुंवित्तं गुहांसु। श्रोत्रं त उर्व्यवंधिरा भवामः। प्रजापंतिसृष्टानां प्रजानांम्। क्षुधोऽपंहत्ये सुवितं नों अस्तु। उप प्रभिन्नमिष्मूर्जं प्रजाभ्यः। सूदं गृहेभ्यो रस्माभरामि। यस्यं रूपं विश्लेदिमामविन्दत्। गुह्य प्रविष्टा सिर्रस्य मध्ये। तस्येदं विहंतमाभरंन्तः। अर्छम्बद्धारमस्यां विधेम॥३॥

यत्पर्यपंश्यथ्सरि्रस्य मध्यै। उर्वीमपंश्युञ्जगंतः प्रतिष्ठाम्। तत्पुष्करस्यायतंनाद्धि जातम्। पुणं पृथिव्याः प्रथंन १ हरामि। याभिरद्देषुञ्जर्गतः प्रतिष्ठाम्। उर्वीमिमां विश्वज्ञनस्यं भूत्रीम्। ता नेः शिवाः शर्कराः सन्तु सर्वाः। अग्ने रेतंश्चन्द्र १ हिरंण्यम्। अन्धः सम्भूतम्मृतं प्रजासुं। तथ्सम्भरंत्रुत्तर्तो निधायं॥४॥

अतिप्रयच्छुं दुरितिं तरेयम्। अश्वीं रूपं कृत्वा यदेश्वत्थे-ऽतिष्ठः। संवथ्सरं देवेभ्यों निलायं। तत्ते न्यंक्तमिह सम्भरंन्तः। शृतं जीवेम श्ररदः सवीराः। ऊर्जः पृथिव्या अध्युत्थितोऽसि। वर्नस्पते शृतवंलशो विरोह। त्वयां व्यमिष्मूर्जं मदेन्तः। रायस्पोषेण समिषा मंदेम। गायत्रिया ह्रियमाणस्य यत्ते॥५॥

पूर्णमपंतत्तृतीयंस्यै दिवोऽिधं। सोऽयं पूर्णः सोमपूर्णाद्धि जातः। ततो हरामि सोमपीथस्यावंरुद्धौ। देवानां ब्रह्मवादं वदंतां यत्। उपार्श्वणोः सुश्रवा वै श्रुतोऽिस। ततो मामाविंशतु ब्रह्मवर्चसम्। तथ्सम्भर्ङ्स्तदवंरुन्धीय साक्षात्। ययां ते सृष्टस्याग्नेः। हेतिमशंमयत्प्रजापंतिः। तामिमामप्रदाहाय॥६॥

श्मी १ शान्त्ये हराम्यहम्। यत्ते सृष्टस्यं यतः। विकंङ्कत्ं भा आँच्छं ज्ञातवेदः। तयां भासा सम्मितः। उरं नो लोकमनु प्रभाहि। यत्ते तान्तस्य हृदंयमाच्छिंन्दञ्जातवेदः। मुरुतोऽद्भिस्तंमयित्वा। पृतत्ते तदंशनेः सम्भेरामि। सात्मां अग्ने सहृदयो भवेह। चित्रियादश्वत्थाथ्सम्भृता बृहत्यः॥७॥

शरीरम्भि सङ्स्कृंताः स्थ। प्रजापंतिना यज्ञमुखेन् सम्मिताः। तिस्रस्त्रिवृद्धिर्मिथुनाः प्रजात्यै। अश्वत्थाद्धेव्य- वाहाद्धि जाताम्। अग्नेस्तुनूं यज्ञियाः सम्भेरामि। शान्तयोनि शमीगुर्भम्। अग्नये प्रजनियतवे। यो अश्वत्थः शमीगर्भः। आरुरोह त्वे सर्चा। तं ते हरामि ब्रह्मणा॥८॥

यज्ञियैं केतुभिं सह। यं त्वां समभंरञ्जातवेदः। यथाश्रिशं भूतेषु न्यंक्तम्। स सम्भृतः सीद शिवः प्रजाभ्यः। उरुं नों लोकमनुंनेषि विद्वान्। प्रवेधसे क्वये मेध्याय। वची वन्दारं वृष्भाय वृष्णें। यतो भ्यमभयं तन्नो अस्तु। अवं देवान् यंजे हेड्यान्। समिधाऽग्निं दुंवस्यत॥९॥

घृतैर्बोधयतातिंथिम्। आऽस्मिन् ह्व्या जुंहोतन। उपं त्वाऽग्ने ह्विष्मितीः। घृताचींर्यन्तु हर्यत। जुषस्वं स्मिधो ममं। तं त्वां स्मिद्धिरङ्गिरः। घृतेनं वर्धयामिस। बृहच्छोंचा यविष्ठा। स्मिध्यमानः प्रथमो नु धर्मः। समृक्तुभिरज्यते विश्ववारः॥१०॥

शोचिष्केंशो घृतिनिर्णिक्पावकः। सुयज्ञो अग्निर्यज्ञथांय देवान्। घृतप्रंतीको घृतयोनिर्ग्निः। घृतैः सिमंद्धो घृतम्स्यान्नम्। घृतप्रुषंस्त्वा स्रितो वहन्ति। घृतं पिबंन्थ्स्यज्ञां यक्षि देवान्। आयुर्वा अंग्ने ह्विषो जुषाणः। घृतप्रंतीको घृतयोनिरेधि। घृतं पीत्वा मधु चारु गव्यम्। पितेवं पुत्रम्भिरंक्षतादिमम्॥११॥

त्वामंग्ने समिधानं यंविष्ठ। देवा दूतं चंकिरे हव्यवाहम्।

उरुज्रयंसं घृतयोनिमाहुंतम्। त्वेषं चक्षुंदिधिरे चोद्यन्वंति। त्वामंग्ने प्रदिव आहुंतं घृतेनं। सुम्नायवंः सुष्मिधा समीधिरे। स वांवृधान ओषंधीभिरुक्षितः। उरु ज्रयारंसि पार्थिवा वितिष्ठसे। घृतप्रंतीकं व ऋतस्यं धूर्षदम्। अग्निं मित्रं न संमिधान ऋंञ्जते॥१२॥

इन्धांनो अक्रो विदर्थेषु दीद्यंत्। शुक्रवंर्णामुद्धं नो यश्सते धियम्। प्रजा अंग्रे संवासय। आशांश्च पृशुभिः सह। गृष्ट्राण्यंस्मा आधेहि। यान्यासंन्थ्सिवतुः स्वे। मही विश्पत्नी सदंने ऋतस्यं। अर्वाची एतं धरुणे रयीणाम्। अन्तर्वत्नी जन्यं जातवंदसम्। अध्वराणां जनयथः पुरोगाम्॥१३॥

आरोहतं दुशत् शक्षेरीर्ममं। ऋतेनाँग्र आयुंषा वर्चसा सह। ज्योग्जीवंन्त उत्तरामुत्तरा समाँम्। दर्शमहं पूर्णमांसं यज्ञं यथा यजैं। ऋत्वियवती स्थो अग्निरेतसौ। गर्भं दधाथां ते वामहं देदे। तथ्सत्यं यद्वीरं विभृथः। वीरं जनियुष्यर्थः। ते मत्प्रातः प्रजनिष्येथे। ते मा प्रजाते प्रजनियुष्यर्थः॥१४॥

प्रजयां पृशुभिंब्रह्मवर्चसनं सुवर्गे लोके। अनृंताथ्सत्य-मुपैमि। मानुषाद्दैव्यमुपैमि। देवीं वाचं यच्छामि। शल्कैर्ग्निमिन्धानः। उभौ लोकौ संनेम्हम्। उभयौंर्लोकयोर् ऋध्वा। अति मृत्युं तराम्यहम्। जातंवेदो भुवंनस्य रेतः। इह सिश्च तपंसो यज्जनिष्यते॥१५॥ अग्निमंश्वत्थादिधं हव्यवाहम्। श्मीग्रमाञ्चनयन् यो मंयोभूः। अयं ते योनिर्ऋत्वियः। यतो जातो अरोचथाः। तं जानन्नंग्र आरोह। अथा नो वर्धया रियम्। अपेत वीत् वि चं सर्पतातः। येऽत्र स्थ पुराणा ये च नूतंनाः। अदांदिदं यमोऽवसानं पृथिव्याः। अर्नान्नेमं पितरो लोकमंस्मै॥१६॥

अग्नेर्भस्मांस्यग्नेः पुरीषमिस। संज्ञानंमिस काम्धरंणम्। मियं ते काम्धरंणं भूयात्। संवंः सृजािम् हृदंयािन। स॰सृष्टं मनों अस्तु वः। स॰सृष्टः प्राणो अस्तु वः। सं या वंः प्रियास्तुनुवंः। सं प्रिया हृदंयािन वः। आत्मा वो अस्तु सिम्प्रियः। सिम्प्रियास्तुनुवो ममं॥१७॥

कल्पंतां द्यावांपृथिवी। कल्पंन्तामाप् ओषंधीः। कल्पंन्तामग्रयः पृथंक्। मम् ज्येष्ठ्यांय सन्नताः। येंऽग्रयः समंनसः। अन्तरा द्यावांपृथिवी। वासंन्तिकावृत् अभि कल्पंमानाः। इन्द्रंमिव देवा अभि सं विंशन्तु। दिवस्त्वां वीर्येण। पृथिव्ये मंहिम्ना॥१८॥

अन्तरिक्षस्य पोषेण। सूर्वपंशुमादेधे। अजीजनत्रमृतं मर्त्यासः। अस्रेमाणं तरिणं वीडुजंम्भम्। दश् स्वसारो अग्नुवंः समीचीः। पुमार्श्सं जातम्भि सर्श्यम्ताम्। प्रजापंतेस्त्वा प्राणेनाभि प्राणिमि। पूष्णः पोषेणु मह्यम्। दीर्घायुत्वायं श्तशांरदाय। श्तर श्रद्ध आयुंषे वर्चसे॥१९॥

जीवात्वे पुण्यांय। अहं त्वदंस्मि मदंसि त्वमेतत्। ममांसि योनिस्तव योनिरस्मि। ममैव सन्वहं ह्व्यान्यंग्ने। पुत्रः पित्रे लोककुञ्जातवेदः। प्राणे त्वाऽमृतमादंधामि। अन्नादमन्नाद्यांय। गोप्तारं गुप्त्यैं। सुगार्हपत्यो विदहन्नरांतीः। उषसः श्रेयंसीः श्रेयसीर्दधंत्॥२०॥

अग्नें स्पत्ना र् अप बार्धमानः। रायस्पोष्मिष्मूर्जम्समासुं धेहि। इमा उ मामुपंतिष्ठन्तु रायः। आभिः प्रजाभिरिह संबंसेय। इहो इडां तिष्ठतु विश्वरूपी। मध्ये वसौदीदिहि जातवेदः। ओजंसे बलाय त्वोद्यंच्छे। वृषंणे शुष्मायायुंषे वर्चसे। स्पत्नतूरंसि वृत्रतूः। यस्ते देवेषुं महिमा सुंवर्गः॥२१॥

यस्तं आत्मा पृशुषु प्रविष्टः। पृष्टिर्या ते मनुष्येषु पप्रथे। तयां नो अग्ने जुषमांण एहिं। दिवः पृथिव्याः पर्यन्तिरक्षात्। वातांत्पशुभ्यो अध्योषंधीभ्यः। यत्रं यत्र जातवेदः सम्बभूथं। ततों नो अग्ने जुषमांण एहिं। प्राचीमनुं प्रदिशुं प्रेहिं विद्वान्। अग्नेरंग्ने पुरो अंग्निर्भवेह। विश्वा आशा दीद्यांनो वि भाहि॥२२॥

ऊर्जं नो धेहि द्विपदे चतुंष्पदे। अन्वग्निरुषसामग्रंमख्यत्। अन्वहांनि प्रथमो जातवेदाः। अनु सूर्यस्य पुरुत्रा चे रश्मीन्। अनु द्यावांपृथिवी आतंतान। विक्रंमस्व महा १ असि। वेदिषन्मानुंषेभ्यः। त्रिषु लोकेषुं जागृहि। यदिदं दिवो यददः पृथिव्याः। संविदाने रोदंसी सं बभूवर्तुः॥२३॥

तयौः पृष्ठे सींदतु जातवंदाः। शम्भूः प्रजाभ्यंस्तुन्वैं स्योनः। प्राणं त्वाऽमृत् आ दंधामि। अन्नादमन्नाद्याय। गोप्तारं गुप्त्यै। यत्ते शुक्र शुक्रं वर्चः शुक्रा तुन्ः। शुक्रं ज्योतिरजंस्रम्। तेनं मे दीदिह् तेन त्वाऽऽदंधे। अग्निनौऽग्ने ब्रह्मणा। आनुशे व्यानशे सर्वमायुर्व्यानशे॥२४॥

नर्यं प्रजां में गोपाय। अमृत्तत्वायं जीवसें। जातां जीन्ष्यमाणां च। अमृते स्त्ये प्रतिष्ठिताम्। अथवं पितुं में गोपाय। रसमन्नीमृहायुंषे। अदंब्यायोऽशींततनो। अविषन्नः पितुं कृणु। शङ्स्यं पृशून्में गोपाय। द्विपादो ये चतुंष्पदः॥२५॥

अष्टाशंफाश्च य इहाग्नें। ये चैकंशफा आशुगाः। सप्रंथ सभां में गोपाय। ये च सभ्याः सभासदः। तानिंन्द्रियावंतः कुरु। सर्वमायुरुपांसताम्। अहं बुध्निय मन्नं मे गोपाय। यमृषंयस्नेविदा विदुः। ऋचः सामांनि यजूर्षेष। सा हि श्रीर्मृतां सताम्॥२६॥

चतुंः शिखण्डा युवृतिः सुपेशाः। घृतप्रंतीका भुवंनस्य मध्ये। मुर्मृज्यमाना मह्ते सौभंगाय। मह्यं धुक्ष्व यजंमानाय कामान्। इहैव सन्तत्रं सुतो वो अग्नयः। प्राणेनं वाचा मनसा बिभर्मि। तिरो मा सन्तमायुर्मा प्रहांसीत्। ज्योतिषा वो वैश्वान्रेणोपंतिष्ठे। पश्चधाऽग्नीन्व्यंक्रामत्। विराद्थ्सृष्टा प्रजापतेः। ऊर्ध्वाऽऽरोहद्रोहिणी। योनिर्ग्नेः प्रतिष्ठितिः॥२७॥ विश्वन्तु नः पुरूचीर्विधेम निधाय यत्तेऽप्रंदाहाय बृहत्याँ ब्रह्मंणा दुवस्यत विश्ववार इममृंअते पुरोगां प्रजनिय्वय्यो जिन्व्यतेंऽस्मै ममं महि्म्रा वर्षम् दर्धथ्मुवर्गो भांहि सम्बभूवतुरायुर्व्यानशे चतुंष्यदः सतां प्रजापंतेर्द्वे चं॥—[१]

नवैतान्यहांनि भवन्ति। नव वै सुंवर्गा लोकाः। यदेतान्यहाँन्युप्यन्ति। नवस्वेव तथ्सुंवर्गेषुं लोकेषुं स्त्रिणः प्रतितिष्ठंन्तो यन्ति। अग्निष्टोमाः परंः सामानः कार्या इत्यांहुः। अग्निष्टोमसंम्मितः सुवर्गो लोक इतिं। द्वादंशाग्निष्टोमस्यं स्तोत्राणि। द्वादंश् मासाः संवथ्सरः। तत्तन्न सूर्क्यम्। उक्थ्यां एव संप्तद्शाः परंः सामानः कार्याः॥२८॥

प्शवो वा उक्थानिं। पृश्नामवंरुद्धौ। विश्वजिद्रभिजितां-विग्निष्टोमौ। उक्थ्याः सप्तद्शाः परंः सामानः। ते सङ्स्तुंता विराजम्भि सम्पंद्यन्ते। द्वे चर्चावितिरिच्येते। एकंया गौरितिरिक्तः। एक्याऽऽयुंरूनः। सुवर्गो वै लोको ज्योतिंः। ऊर्ग्विराट्॥२९॥

सुवर्गमेव तेनं लोकम्भि जंयन्ति। यत्पर् राथंन्तरम्। तत्प्रंथमेऽहंन्कार्यम्। बृहद्वितीये। वैरूपं तृतीये। वैराजं चंतुर्थे। शाक्करं पंश्रमे। रैवत १ षष्ठे। तद्ं पृष्ठेभ्यो नयंन्ति। सन्तनंय एते ग्रहां गृह्यन्ते॥३०॥

अतिग्राह्याः परंः सामस्। इमानेवैतैर्लोकान्थ्सन्तंन्वन्ति।

मिथुना एते ग्रहां गृह्यन्ते। अतिग्राह्याः परः सामस्। मिथुनमेव तैर्यजमाना अवंरुन्थते। बृहत्पृष्ठं भवति। बृहद्वै सुंवर्गो लोकः। बृह्तैव सुंवर्गं लोकं यंन्ति। त्रयस्त्रिष्शि नाम् सामं। मार्ध्यं दिने पर्वमाने भवति॥३१॥

त्रयंस्त्रिश्शृद्धै देवताः। देवतां एवावंरुन्धते। ये वा इतः परांश्वश् संवथ्सरमुंप्यन्ति। न हैनं ते स्वस्ति समंश्जुवते। अथ येऽमुतोऽर्वाश्चमुप्यन्ति। ते हैन इस्वस्ति समंश्जुवते। एतद्वा अमुतोऽर्वाश्चमुपंयन्ति। यदेवम्। यो ह खलु वाव प्रजापंतिः। स उवेवेन्द्रः। तदुं देवेभ्यो नयंन्ति॥३२॥ कार्या विराइंग्रन्ते पर्वमाने भवतीन्द्र एकं चा

सन्तंतिर्वा एते ग्रहाँः। यत्परंः सामानः। विष्वान्दिंवा-कीर्त्यम्। यथा शालांयै पक्षंसी। एवः संवथ्सरस्य पक्षंसी। यदेतेन गृह्येरन्। विष्ची संवथ्सरस्य पक्षंसी व्यवंस्रः सेयाताम्। आर्तिमार्च्छंयः। यदेते गृह्यन्तैं। यथा शालांयै पक्षंसी मध्यमं वःशमि संमायच्छंति॥३३॥

पुवः संवथ्सरस्य पक्षंसी दिवाकीत्यंमिभ सं तंन्वन्ति। नार्तिमार्च्छंन्ति। एकविष्शमहंभविति। शुक्राग्रा ग्रहां गृह्यन्ते। प्रत्युत्तं ब्ये सयत्वायं। सौर्यं पृतदहंः पृशुरालंभ्यते। सौर्यो-ऽतिग्राह्यों गृह्यते। अहंरेव रूपेण समर्धयन्ति। अथो अहं पृवेष बुलिरहिंयते। सुप्तैतदहंरितग्राह्यां गृह्यन्ते॥३४॥ सप्त वै शीर्षणयाः प्राणाः। असावादित्यः शिरः प्रजानाम्। शीर्षन्नेव प्रजानां प्राणान्देधाति। तस्माध्सप्त शीर्षन्प्राणाः। इन्द्रो वृत्र हत्वा। असुरान्पराभाव्यं। स इमाँ होकान्भ्यंजयत्। तस्यासौ होकोऽनंभिजित आसीत्। तं विश्वकंमा भूत्वाऽभ्यंजयत्। यद्वैश्वकर्मणो गृह्यते॥३५॥

सुवर्गस्यं लोकस्याभिजित्यै। प्रवा एतेंऽस्माल्लोकाच्यंवन्ते।
ये वैश्वकर्मणं गृह्णतें। आदित्यः श्वो गृह्यते। इयं वा अदितिः। अस्यामेव प्रति तिष्ठन्ति। अन्योंन्यो गृह्यते। विश्वांन्येवान्येन कर्माणि कुर्वाणा यंन्ति। अस्यामन्येन प्रति तिष्ठन्ति। तावाऽपंरार्धाथ्यंवथ्मरस्यान्योंन्यो गृह्यते। तावुभौ सह महाव्रते गृह्यते। यज्ञस्यैवान्तं गृत्वा। उभयोंलीकयोः प्रति तिष्ठन्ति। अर्क्यमुक्थं भवति। अन्नाद्यस्यावंरुख्यै॥३६॥ स्मायच्छंत्यितग्रह्यां गृह्यते गृह्यते संवथ्मरस्यान्योंन्यो गृह्यते पश्चे च॥———[३]

पुक्रविष्श एष भंवति। एतेन् वै देवा एंकविष्शेनं। आदित्यमित उत्तमश् सुंवर्गं लोकमारोहयन्। स वा एष इत एंकविष्शः। तस्य दशावस्तादहांनि। दशं प्रस्तात्। स वा एष विराज्युंभ्यतः प्रतिष्ठितः। विराजि हि वा एष उंभ्यतः प्रतिष्ठितः। तस्मादन्तरेमौ लोकौ यन्। सर्वेषु सुवर्गेषुं लोकेष्वंभितपंत्रेति॥३७॥

देवा वा आंदित्यस्यं सुवर्गस्यं लोकस्यं। परांचो-

ऽतिपादादंबिभयुः। तं छन्दोंभिरह १ धृत्यैं। देवा वा आंदित्यस्यं सुवर्गस्यं लोकस्यं। अवाचो ऽवपादादंबिभयुः। तं पश्चभी रिश्मिभिरुदंवयन्। तस्मादेक विश्वे १ दिवाकी त्यांनि। ये गांयुत्रे। ते गांयुत्रीषूत्तं रयोः पर्वमानयोः॥३८॥

महादिवाकीर्त्य् होतुंः पृष्ठम्। विकुणं ब्रह्मसामम्। भासौंऽग्निष्टोमः। अथैतानि पर्राणि। परै्वे देवा आंदित्यश् सुवृगं लोकमपारयन्। यदपारयन्। तत्पराणां पर्त्वम्। पारयन्त्येनं पर्राणि। य एवं वेदं। अथैतानि स्पराणि। स्परै्वे देवा आंदित्यश् सुंवृगं लोकमस्पारयन्। यदस्पारयन्। तथ्स्पराणाः स्पर्त्वम्। स्पारयन्त्येन् स्पराणि। य एवं वेदं॥३९॥

अप्रतिष्ठां वा एते गंच्छन्ति। येषा संवथ्सरेऽनाप्तेऽर्थ। एकाद्शिन्याप्यतें। वैष्णवं वांमनमालंभन्ते। युज्ञो वे विष्णुंः। यज्ञमेवालंभन्ते प्रतिष्ठित्ये। ऐन्द्राग्नमालंभन्ते। इन्द्राग्नी वे देवानामयातयामानौ। ये एव देवते अयांतयाम्नी। ते एवालंभन्ते॥४०॥

वैश्वदेवमालंभन्ते। देवतां एवावंरुन्धते। द्यावापृथिव्यां धेनुमालंभन्ते। द्यावापृथिव्योरेव प्रतिं तिष्ठन्ति। वायव्यं वथ्समालंभन्ते। वायुरेवैभ्यों यथाऽऽयत्नाद्देवता अवं रुन्धे। आदित्यामिवं वृशामालंभन्ते। इयं वा अदितिः। अस्यामेव प्रतिं तिष्ठन्ति। मैत्रावुरुणीमालंभन्ते॥४१॥

मित्रेणैव यज्ञस्य स्विष्ट शमयन्ति। वर्रणेन दुरिष्टम्। प्राजापत्यं तूंपरं महाव्रत आलंभन्ते। प्राजापत्योऽतिग्राह्यो गृह्यते। अहंरेव रूपेण समर्धयन्ति। अथो अहं एवैष बिलर्ह्हियते। आग्नेयमा लंभन्ते प्रति प्रज्ञांत्ये। अज्येत्वान् वा एते पूर्वेर्मासैरवं रुन्धते। यदेते गृव्याः पृशवं आल्भ्यन्तें। उभयेषां पश्नामवंरुद्धौ॥४२॥

यदतिरिक्तामेकाद्शिनींमालभेरन्। अप्रियं भ्रातृंव्यम्भ्यति-रिच्येत। यद्दौ द्दौ पृशू समस्येयुः। कनीय आयुः कुर्वीरन्। यदेते ब्राह्मणवन्तः पृशवं आलुभ्यन्तै। नाप्रियं भ्रातृंव्यम्भ्यंतिरिच्यंते। न कनीय आयुः कुर्वते॥४३॥

ते एवालंभन्ते मैत्रावरुणीमालंभुन्तेऽवंरुद्धै सप्त चं॥\_\_\_\_\_[५]

प्रजापंतिः प्रजाः सृष्ट्वा वृत्तोऽशयत्। तं देवा भूताना् रस्ं तेजः सम्भृत्यं। तेनैनमभिषज्यन्। महानंववृतीतिं। तन्मंहाव्रतस्यं महाव्रतत्वम्। मृहद्वृतमितिं। तन्मंहाव्रतस्यं महाव्रत्वम्। मृहद्वृतमितिं। तन्मंहाव्रतत्वम्। पृश्वविर्शः स्तोमों भवति॥४४॥

चतुंर्वि शत्यर्धमासः संवथ्सरः। यद्वा एतस्मिन्थ्संवथ्सरेऽधि प्राजायत। तदन्नं पञ्चवि श्रमंभवत्। मध्यतः ऋयते। मध्यतो ह्यन्नंमिश्तिं धिनोतिं। अथों मध्यत एव प्रजानामूर्ग्धीयते। अथ यद्वा इदमेन्त्तः ऋियतें। तस्मांदुदन्ते प्रजाः समेधन्ते। अन्ततः क्रियते प्रजननायैव। त्रिवृच्छिरों भवति॥४५॥

त्रेधाविहित १ हि शिरं। लोमं छ्वीरस्थि। परांचा स्तुवन्ति। तस्मात्तथ्मदृगेव। न मेद्यतोऽनुं मेद्यति। न कृश्यतोऽनुं कृश्यति। पृश्चदृशौंऽन्यः पृक्षो भंवति। सृप्तदृशौं-ऽन्यः। तस्माद्वया १ स्यन्यत्रमूर्धम्भि पूर्यावर्तन्ते। अन्यत्रतो हि तद्गरीयः क्रियते॥ ४६॥

पृश्चिष्ट्रश आत्मा भेवति। तस्मान्मध्यतः पृशवो वरिष्ठाः। पृक्विष्ट्रशं पुच्छम्। द्विपदांसु स्तुवन्ति प्रतिष्ठित्यै। सर्वेण स्ह स्तुवन्ति। सर्वेण ह्यात्मनाऽऽत्मन्वी। सहोत्पतंन्ति। एकैकामुच्छि पविता आत्मन्न ह्यङ्गांनि बद्धानि। न वा एतेन सर्वः पुरुषः॥४७॥

यदित इंतो लोमांनि द्तो नुखान्। पुरिमादंः क्रियन्ते। तान्येव तेन् प्रत्युप्यन्ते। औदुंम्बर्स्तल्पों भवति। ऊर्ग्वा अन्नंमुदुम्बरंः। ऊर्ज पुवान्नाद्यस्यावंरुद्धै। यस्यं तल्प्सद्यमनंभिजित् स्यात्। स देवाना सम्यक्षे। तल्प्सद्यम्भिजंयानीति तल्पंमारुह्योद्गायेत्। तल्प्सद्यम्भिजंयानीति तल्पंमारुह्योद्गायेत्। तल्प्सद्यम्वाभि जंयति॥४८॥

यस्यं तल्प्सद्यंमभिजिंतु इं स्यात्। स देवानाः स साम्यंक्षे। तुल्पुसद्यं मा पराजेषीति तल्पंमाुरुह्योद्गायेत्। न तंल्प्सद्यं परांजयते। ष्रेङ्के शर्सति। महो वै ष्रेङ्कः। महंस एवान्नाद्यस्यावंरुद्धे। देवासुराः संयंत्ता आसन्। त आंदित्ये व्यायंच्छन्त। तं देवाः समजयन्॥४९॥

ब्राह्मणश्चं शूद्रश्चं चर्मकर्ते व्यायंच्छेते। दैव्यो वै वर्णों ब्राह्मणः। असुर्यः शूद्रः। इमेंऽराथ्सुरिमे सुंभूतमंऋत्रित्यंन्यत्रो ब्रूंयात्। इम उद्वासीकारिणं इमे दुंभूतमंऋत्रित्यंन्यत्रः। यदेवैषां सुकृतं या राद्धिः। तदंन्यत्रोंऽभि श्रीणाति। यदेवैषां दुष्कृतं याऽराद्धिः। तदंन्यत्रोऽपं हन्ति। ब्राह्मणः सं जयिति। अमुमेवाऽऽदित्यं भ्रातृंव्यस्य संविन्दन्ते॥५०॥ भवित भवित क्रियते पुरुषो जयत्यजयश्चयत्येकं च॥———[६]

उद्धन्यमानं नवैतानि सन्तंतिरेकिविश्वा एषोऽप्रतिष्ठां प्रजापंतिर्वृत्तः षट्॥६॥ उद्धन्यमानश् शोचिष्केशोऽग्नें सपन्नानितग्राह्मां वैश्वदेवमालंभन्ते पश्चाशत्॥५०॥ उद्धन्यमान्श् संविन्दन्ते॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके द्वितीयः प्रपाठकः समाप्तः॥

## ॥ तृतीयः प्रश्नः॥

#### ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके तृतीयः प्रपाठकः॥

देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते देवा विजयमुंप्यन्तः। अग्नीषोमयोस्तेज्स्विनींस्तुनः सन्त्र्यंदधत। इदमुं नो भविष्यति। यदिं नो जेष्यन्तीतिं। तेनाग्नीषोमावपांकामताम्। ते देवा विजित्यं। अग्नीषोमावन्वैंच्छन्। तैंऽग्निमन्वं-विन्दत्रृतुषूथ्मंत्रम्। तस्य विभंक्तीभिस्तेज्स्विनींस्तुन्-रवांरुन्थत॥१॥

ते सोम्मन्वंविन्दन्। तमंघ्नन्। तस्यं यथाऽभिज्ञायं तनूर्व्यगृह्णत्। ते ग्रहां अभवन्। तद्ग्रहांणां ग्रह्त्वम्। यस्यैवं विदुषो ग्रहां गृह्यन्तें। तस्य त्वंव गृहीताः। नानांऽऽग्नेयं पुनर्ाधेयें कुर्यात्। यदनांग्नेयं पुनर्ाधेयें कुर्यात्। व्यृद्धमेव तत्॥२॥

अनाँग्नेयं वा पृतित्र्रियते। यथ्समिधस्तनूनपातिम्डो बर्हिर्यजिति। उभावाँग्नेयावाज्यंभागौ स्याताम्। अनाँज्यभागौ भवत् इत्यांहुः। यदुभावाँग्नेयावन्वश्चावितिं। अग्नये पवंमानायोत्तंरः स्यात्। यत्पवंमानाय। तेनाऽऽज्यंभागः। तेनं सौम्यः। बुधंन्वत्याग्नेयस्याऽऽज्यंभागस्य पुरोऽनुवाक्यां भवति॥३॥

यथां सुप्तं बोधयंति। ताहगेव तत्। अग्निन्यंक्ताः

पत्नीसंयाजानामृचंः स्युः। तेनाँग्रेय सर्वं भवति। एक्धा तेजस्विनीं देवतामुपैतीत्यांहः। सैनंमीश्वरा प्रदह् इतिं। नेतिं ब्रूयात्। प्रजनंनं वा अग्निः। प्रजनंनमेवोपैतीतिं। कृतयंजुः सम्भृतसम्भार् इत्यांहः॥४॥

न सम्भृत्याः सम्भाराः। न यजुः कार्यमिति। अथो खलुं। सम्भृत्यां एव संम्भाराः। कार्यं यजुः। पुनराधेयंस्य समृद्धै। तेनोपा १ प्रचरित। एष्यं इव वा एषः। यत्पुंनराधेयः। यथोपा १ शु नष्टमिच्छति॥ ५॥

ताहगेव तत्। उचैः स्विष्टकृतम्थ्मंजित। यथां नृष्टं वित्त्वा प्राह्मयमितिं। ताहगेव तत्। एक्धा तेजस्विनीं देवतामुपैतीत्यांहुः। सैनंमीश्वरा प्रदह् इतिं। तत्तथा नोपैति। प्रयाजानूयाजेष्वेव विभेक्तीः कुर्यात्। यथापूर्वमाज्यंभागौ स्यातांम्। एवं पेत्रीसंयाजाः॥६॥

तद्वैश्वान्रवंत्प्रजनंनवत्तर्मुपैतीतिं। तदांहुः। व्यृंद्धं वा एतत्। अनौग्नेयं वा एतिक्रियत् इतिं। नेतिं ब्रूयात्। अग्निं प्रथमं विभेक्तीनां यजति। अग्निम्तमं पंत्रीसंयाजानाम्। तेनौग्नेयम्। तेन समृद्धं क्रियत् इतिं॥७॥

अ्रु-धृतैव तद्भवित् सम्भृंतसम्भार् इत्यांहुरिच्छितिं पत्नीसंयाजा नवं च॥————[ $\S$ ]

देवा वै यथादर्शं यज्ञानाहंरन्त। यों ऽग्निष्टोमम्। य उक्थ्यम्। योऽतिरात्रम्। ते सहैव सर्वे वाजपेयंमपश्यन्। ते। अन्यों ऽन्यस्मै नातिंष्ठन्त। अहमनेनं यजा इतिं। तें ऽब्रुवन्। आजिमस्य धांवामेतिं॥८॥

तस्मिन्नाजिमधावन्। तं बृह्स्पित्रिरुदंजयत्। तेनायजत। स स्वाराज्यमगच्छत्। तिमन्द्रौऽब्रवीत्। माम्नेनं याज्येतिं। तेनेन्द्रमयाजयत्। सोऽग्रं देवतानां पर्येत्। अगच्छथ्स्वाराज्यम्। अतिष्ठन्तास्मै ज्यैष्ठ्याय॥९॥

य एवं विद्वान् वांजिपेयेन् यजिते। गच्छेति स्वारांज्यम्। अग्रर्थं समानानां पर्येति। तिष्ठंन्तेऽस्मै ज्येष्ठगांय। स वा एष ब्राह्मणस्यं चैव राजन्यंस्य च यज्ञः। तं वा एतं वांजिपेय इत्यांहुः। वाजाप्यो वा एषः। वाज् कुं ह्येतेनं देवा ऐफ्सन्। सोमो वे वांजिपेयः। यो वे सोमं वाजिपेयं वेदं॥१०॥

वाज्येवैनं पीत्वा भविति। आऽस्यं वाजी जांयते। अत्रं वै वाज्येयः। य एवं वेदं। अत्यन्नम्। आऽस्यानादो जांयते। ब्रह्म वै वाज्येयः। य एवं वेदं। अत्ति ब्रह्मणाऽन्नम्। आऽस्यं ब्रह्मा जांयते॥११॥

वाग्वै वार्जस्य प्रस्वः। य एवं वेदं। क्रोतिं वाचा वीर्यम्ं। ऐनं वाचा गंच्छति। अपिवतीं वाचं वदति। प्रजापितिर्देवेभ्यों यज्ञान्व्यादिशत्। स आत्मन्वांज्येयंमधत्त। तं देवा अंब्रुवन्। एष वाव यज्ञः। यद्वांज्येयंः॥१२॥

अप्येव नोऽत्रास्त्विति। तेभ्यं पुता उन्नितीः प्रायंच्छत्। ता

वा एता उन्नितयो व्याख्यांयन्ते। यृज्ञस्यं सर्वृत्वायं। देवतानामनिर्भागाय। देवा वै ब्रह्मण्श्वान्नस्य च् शर्मलुमपान्नन्। यद्वह्मणः शर्मलुमासीत्। सा गाथां नाराशङ्स्यंभवत्। यदन्नस्य। सा सुरा॥१३॥

तस्माद्गायंतश्च मृत्तस्यं च न प्रंतिगृह्यम्ं। यत्प्रंतिगृह्णीयात्। शमंलं प्रतिगृह्णीयात्। सर्वा वा एतस्य वाचोऽवंरुद्धाः। यो वांजपेययाजी। या पृथिव्यां याऽग्रौ या रंथन्तरे। याऽन्तरिक्षे या वायौ या वांमदेव्ये। या दिवि याऽऽदित्ये या बृंह्ति। याऽपस् यौषंधीषु या वनस्पतिषु। तस्माद्वाजपेययाज्यार्त्विजीनः। सर्वा ह्यंस्य वाचो-ऽवंरुद्धाः॥१४॥

धावामेति ज्यैष्ठ्याय वेदं ब्रह्मा जांयते वाज्येयः सुराऽऽर्त्विजीन एकं च॥———[२]

देवा वै यद्न्यैग्रहैं य्जस्य नावारंन्यत। तदंतिग्राह्यैरति-गृह्यावारुन्यत। तदंतिग्राह्याणामतिग्राह्यत्वम्। यदंतिग्राह्यां गृह्यन्तें। यदेवान्यैग्रहैं य्जस्य नावं रुन्थे। तदेव तैरंतिगृह्यावं रुन्थे। पश्चं गृह्यन्ते। पाङ्कों यज्ञः। यावांनेव यज्ञः। तमास्वाऽवं रुन्थे॥१५॥

सर्व ऐन्द्रा भेवन्ति। एक्धैव यजंमान इन्द्रियं दंधित। सप्तदंश प्राजापत्या ग्रहां गृह्यन्ते। सप्तद्शः प्रजापंतिः। प्रजापंतेरास्यैं। एकंयुर्चा गृह्णाति। एक्धैव यजंमाने वीर्यं दधाति। सोमुग्रहा इश्चं सुराग्रहा इश्चं गृह्णाति। एतद्वै देवानां

## पर्ममन्नम्। यथ्सोमः॥१६॥

पुतन्मंनुष्यांणाम्। यथ्सुराँ। पुरमेणैवास्मां अन्नाद्येनावंर-मन्नाद्यमवं रुन्धे। सोम्ग्रहान्गृंह्णाति। ब्रह्मणो वा पुतत्तेजंः। यथ्सोमः। ब्रह्मण एव तेजंसा तेजो यजंमाने दधाति। सुराग्रहान्गृंह्णाति। अन्नंस्य वा पुतच्छमंलम्। यथ्सुराँ॥१७॥

अन्नस्यैव शमेलेन शमेलं यर्जमानादपेहन्ति। सोम्ग्रहा इश्चे सुराग्रहा इश्चे गृह्णाति। पुमान् वे सोमेः। स्त्री सुराँ। तन्मिंथुनम्। मिथुनमेवास्य तद्यज्ञे कंरोति प्रजनेनाय। आत्मानेमेव सोमग्रहेः स्पृंणोति। जाया इ सुराग्रहेः। तस्माद्वाजपेययाज्यं मुष्मिं ह्योके स्त्रिय इसम्भविति। वाजपेयांभिजित इह्यंस्य॥१८॥

पूर्वे सोमग्रहा गृंह्यन्ते। अपेरे सुराग्रहाः। पुरोऽक्षरं सोमग्रहान्थ्सांदयित। पृश्चादक्षरं सुराग्रहान्। पाप्वस्यसस्य विधृंत्यै। एष वै यजंमानः। यथ्सोमः। अन्नर् सुरा। सोमग्रहाइश्चं सुराग्रहाइश्चं सुराग्रहाइश्चं व्यतिषजित। अन्नाद्येनैवैनं व्यतिषजित॥१९॥

सम्पृचेः स्थ सं मां भ्रेणं पृङ्केत्यांह। अत्रं वै भ्रम्। अन्नाद्येनैवैन् संश्मृंजिति। अन्नस्य वा पृतच्छमंलम्। यथ्सुरां। पाप्मेव खलु वै शमलम्। पाप्मना वा एनमेतच्छमंलेन व्यतिषजिति। यथ्सोमग्रहा इश्चं सुराग्रहा इश्चं व्यतिषजंति। विपृचंः स्थ् वि मां पाप्मनां पृङ्केत्यांह। पाप्मनैवैन् शर्मलेन व्यावर्तयति॥२०॥

तस्मौद्वाजपेययाजी पूतो मेध्यो दक्षिण्यः। प्राङुद्देवित सोमग्रहेः। अमुमेव तैर्लोकम्भिजंयित। प्रत्यङ्ख्सुंराग्रहेः। इममेव तैर्लोकम्भिजंयित। प्रतिष्ठन्ति सोमग्रहेः। यावदेव सत्यम्। तेनं सूयते। वाजसृद्धः सुराग्रहान् हंरन्ति। अनृतेनैव विशु स्रस्ंजिति। हिर्ण्यपात्रं मधौः पूर्णं दंदाति। मध्यो-ऽसानीति। एकधा ब्रह्मण् उपं हरित। एकधेव यर्जमान् आयुस्तेजो दधाति॥२१॥

आस्वाऽवं रुन्धे सोमः शर्मलुं यथ्सुरा ह्यंस्यैनं व्यतिंषजति व्यावंतियति सृजति चृत्वारिं च॥[३]

ब्रह्मवादिनों वदन्ति। नाग्निष्टोमो नोक्थ्यः। न षोंड्शी नातिंरात्रः। अथ कस्माद्वाज्येये सर्वे यज्ञकृतवोऽवंरुध्यन्त् इतिं। पृशुभिरितिं ब्रूयात्। आग्नेयं पृशुमालंभते। अग्निष्टोममेव तेनावं रुन्धे। ऐन्द्राग्नेनोक्थ्यम्। ऐन्द्रेणं षोड्शिनः स्तोत्रम्। सारुस्वत्याऽतिंरात्रम्॥२२॥

मारुत्या बृंहतः स्तोत्रम्। एतावंन्तो वै यंज्ञऋतवंः। तान्पशुभिरेवावं रुन्थे। आत्मानंमेव स्पृंणोत्यग्निष्टोमेनं। प्राणापानावुक्थ्यंन। वीर्यर्थं षोड्शिनंः स्तोत्रेणं। वार्चमितरात्रेणं। प्रजां बृंहतः स्तोत्रेणं। इममेव लोकम्भिजंयत्यग्निष्टोमेनं। अन्तरिक्षमुक्थ्यंन॥२३॥

सुवर्गं लोक १ षोंडशिनं स्तोत्रेणं। देवयानांनेव प्थ

आरोहत्यतिरात्रेणं। नाक रे रोहति बृह्तः स्तोत्रेणं। तेजं प्वाऽऽत्मन्धंत्त आग्नेयेनं पृश्जां। ओजो बलंमैन्द्राग्नेनं। इन्द्रियमैन्द्रेणं। वाच रे सारस्वत्या। उभावेव देवलोकं चं मनुष्यलोकं चाभिजंयति मारुत्या वशयां। सप्तदंश प्राजापत्यान्पशूनालंभते। सप्तदशः प्रजापंतिः॥२४॥

प्रजापंतेरास्यै। श्यामा एकंरूपा भवन्ति। एविमेव् हि प्रजापंतिः समृद्धे। तान्पर्यमिकृतानुथ्मृंजिति। मुरुतों यज्ञमंजिघा स्मन्प्रजापंतेः। तेभ्यं एतां मारुतीं वृशामालंभत। तयैवैनानशमयत्। मारुत्या प्रचर्य। एतान्थ्संज्ञंपयेत्। मुरुतं एव शंमियत्वा॥२५॥

पुतेः प्रचंरित। यज्ञस्याघांताय। एक्धा व्पा जुंहोति।
पुक्देवत्यां हि। पुते। अथों एक्धेव यजंमाने वीर्यं दधाति।
नैवारेणं सप्तदंशशरावेणैतर्हि प्रचंरित। पुतत्पुरोडाशा ह्यंते।
अथों पशूनामेव छिद्रमिषंदधाति। सार्स्वत्योत्तमया प्रचंरित।
वाग्वै सर्रस्वती। तस्मांत्प्राणानां वागुंत्तमा। अथौं प्रजापंतावेव
यज्ञं प्रतिष्ठापयति। प्रजापंतिर्हि वाक्। अपंत्रदती भवति।
तस्मांन्मनुष्याः सर्वां वाचं वदन्ति॥२६॥

अतिरात्रमुन्तरिक्षमुक्थ्येन प्रजापंतिः शमयित्वोत्तमया प्रचरित षद चं॥————[४]

सावित्रं जुंहोति कर्मणः कर्मणः पुरस्तौत्। कस्तद्वेदेत्यांहुः। यद्वांजपेयंस्य पूर्वं यदपंरमितिं। सवितृप्रंसूत एव यंथापूर्वं कर्माणि करोति। सर्वनेसवने जुहोति। आक्रमणमेव तथ्सेतुं यर्जमानः कुरुते। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्धि। वाचस्पतिर्वाचम्पद्य स्वंदाति न इत्याह। वाग्वे देवानां पुराऽन्नमासीत्। वाचमेवास्मा अन्नई स्वदयति॥२७॥

इन्द्रंस्य वज्रोऽसि वार्त्रघ्न इति रथंमुपावंहरति विजित्यै। वाजंस्य नु प्रंसवे मातरं महीमित्यांह। यच्चैवेयम्। यच्चास्यामिधं। तदेवावं रुन्धे। अथो तस्मिन्नेवोभयेऽभि-षिच्यते। अपस्वंन्तर्मृतंमपसु भेषजिमित्यश्वांन्यल्पूलयित। अपसु वा अश्वंस्य तृतीयं प्रविष्टम्। तदंनुवेन्न्ववंप्लवते। यद्पसु पंल्पूलयंति॥२८॥

यदेवास्यापस् प्रविष्टम्। तदेवावं रुन्धे। बहु वा अश्वोऽमेध्यमुपंगच्छति। यद्पस् पंल्पूलयंति। मेध्यांनेवैनांन्करोति। वायुर्वां त्वा मनुंर्वा त्वेत्यांह। पृता वा पृतं देवता
अग्रे अश्वंमयुञ्जन्। ताभिरेवैनान् युनिक्त। स्वस्योज्ञित्यै।
यजुंषा युनिक्त व्यावृत्त्यै॥२९॥

अपाँत्रपादाशुहेम्त्रिति सम्माँष्टिं। मेध्यांनेवैनाँन्करोति। अथो स्तौत्येवैनांनाजि संरिष्यतः। विष्णुक्रमान्क्रंमते। विष्णुरेव भूत्वेमाँ लोकान्भिजंयति। वैश्वदेवो वै रथंः। अङ्कौ न्यङ्कावभितो रथं यावित्यांह। या एव देवता रथे प्रविष्टाः। ताभ्यं एव नमंस्करोति। आत्मनोऽनाँत्ये। अशंमरथं

**-**[५]

भावुकोऽस्य रथो भवति। य एवं वेदं॥३०॥
स्वदयति पल्पूलयंति व्यावृंत्या अनाँत्ये हे चं॥

देवस्याहर संवितुः प्रंस्वे बृह्स्पतिना वाज्जिता वाजं जेषिमित्याह। स्वितृप्रंसूत एव ब्रह्मणा वाज्मुज्जंयित। देवस्याहर संवितुः प्रंस्वे बृह्स्पतिना वाज्जिता वर्षिष्ठं नाकरं रुह्यमित्याह। स्वितृप्रंसूत एव ब्रह्मणा वर्षिष्ठं नाकरं रोहति। चात्वांले रथच्कं निर्मितर रोहति। अतो वा अङ्गिरस उत्तमाः सुंवर्गं लोकमायन्। साक्षादेव यजंमानः सुवर्गं लोकमेति। आवेष्टयति। वज्रो वै रथः। वज्रेणैव दिशोऽभिजंयति॥३१॥

वाजिना समार्ग गायते। अत्रं वै वार्जः। अत्रंमेवावं रुन्थे। वाचो वर्ष्म देवेभ्योऽपाँकामत्। तद्वनस्पतीन्प्राविंशत्। सैषा वाग्वनस्पतिंषु वदति। या दुंन्दुभौ। तस्माँ दुन्दुभिः सर्वा वाचो-ऽतिंवदति। दुन्दुभीन्थ्समाघ्नंन्ति। पुरमा वा पुषा वाक्॥३२॥

या दुन्दुभौ। प्रमयेव वाचाऽवरां वाचमंव रुन्धे। अथो वाच एव वर्ष्म् यजंमानोऽवं रुन्धे। इन्द्रांय वाचं वद्तेन्द्रं वाजं जापयतेन्द्रो वाजंमजियदित्यांह। एष वा एतर्हीन्द्रंः। यो यजंते। यजंमान एव वाज्मुजंयिति। स्प्तदंश प्रव्याधानाजिं धांवन्ति। स्प्तद्श स्तोत्रं भंवति। सप्तदंशसप्तदश दीयन्ते॥३३॥

स्प्तद्शः प्रजापंतिः। प्रजापतेरास्यै। अवांऽसि सप्तिरसि वाज्यंसीत्यांह। अग्निर्वा अर्वां। वायुः सप्तिः। आदित्यो वाजी। एताभिरेवास्मै देवतांभिर्देवर्थं युनक्ति। प्रष्टिवाहिनं युनक्ति। प्रष्टिवाही वै देवर्थः। देवर्थमेवास्मै युनक्ति॥३४॥

वार्जिनो वार्जं धावत काष्ठां गच्छतेत्यांह। सुवर्गो वे लोकः काष्ठां। सुवर्गमेव लोकं यंन्ति। सुवर्गं वा एते लोकं यंन्ति। य आजिं धावंन्ति। प्राश्चो धावन्ति। प्राङिंव हि सुवर्गो लोकः। चत्सिभिरनुं मन्नयते। चत्वारि छन्दार्सि। छन्दोभिरेवैनांन्थ्सुवर्गं लोकं गंमयति॥३५॥

प्र वा एतें उस्माल्लोकाच्यंवन्ते। य आजिं धावंन्ति। उदं च आवंर्तन्ते। अस्मादेव तेनं लोकान्नयंन्ति। रथविमोचनीयं जुहोति प्रतिष्ठित्ये। आ मा वार्जस्य प्रस्वो जंगम्यादित्यांह। अन्नं वै वार्जः। अन्नमेवावं रुन्धे। यथालोकं वा एत उन्नयन्ति। य आजिं धावंन्ति॥३६॥

कृष्णलं कृष्णलं वाज्यसृद्धः प्रयंच्छति। यमेव ते वाजं लोकमुञ्जयंन्ति। तं परिक्रीयावं रुन्धे। एक्धा ब्रह्मण् उपंहरति। एक्धेव यजंमाने वीर्यं दधाति। देवा वा ओषंधीष्वाजिमंयः। ता बृह्स्पतिरुदंजयत्। स नीवारान्निरंवृणीत। तन्नीवारांणां नीवार्त्वम्। नैवारश्चरुभंवति॥३७॥

पुतद्वै देवानां पर्ममन्नम्। यन्नीवाराः। प्रमेणैवास्मां अन्नाद्येनावंरम्नाद्यमवं रुन्थे। सप्तदंशशरावो भवति। सप्तद्शः प्रजापंतिः। प्रजापंतेराप्त्ये। क्षीरे भवति। रुचमेवास्मिन्दधाति। सपिष्वान्भवति मेध्यत्वायं। बार्हस्पत्यो वा पृष देवतंया॥३८॥

यो वांज्येयेन् यजंते। बार्हस्पत्य एष च्रः। अश्वांन्थ्सरिष्यतः ससुषश्चावं घ्रापयति। यमेव ते वाजं लोकमुज्जयंन्ति। तमेवावं रुन्धे। अजींजिपत वनस्पतय इन्द्रं वाजं विमुच्यध्वमितिं दुन्दुभीन् विमुश्चति। यमेव ते वाजं लोकमिन्द्रियं दुन्दुभयं उज्जयंन्ति। तमेवावं रुन्धे॥३९॥

अभिजंयति वा एषा वाग्दीयन्तेऽस्मै युनक्ति गमयति य आजिं धावन्ति भवति देवतंयाऽष्टौ

चं॥———[६]

तार्प्यं यजंमानं परिधापयति। यज्ञो वै तार्प्यम्। यज्ञेनैवैन् समर्धयति। दुर्भमयं परिधापयति। प्वित्रं वै दुर्भाः। पुनात्येवैनम्। वाजं वा पृषोऽवंरुरुसते। यो वांजपयेन् यजंते। ओषंधयः खलु वै वाजंः। यद्देर्भमयं परिधापयति॥४०॥

वाज्स्यावंरुद्धै। जाय एहि सुवो रोहावेत्यांह। पित्रंया एवेष यज्ञस्यांन्वारम्भोऽनंवच्छित्त्यै। सप्तदंशारित्वर्यूपो भवति। सप्तद्शः प्रजापंतिः। प्रजापंतेरास्यै। तूपरश्चतुंरिश्नर्भवति। गौधूमं चुषालम्। न वा एते ब्रीहयो न यवाः। यद्गोधूमाः॥४१॥

पुविमेव हि प्रजापंतिः समृद्धौ। अथों अमुमेवास्मैं लोकमन्नवन्तं करोति। वासोभिर्वेष्टयति। एष वै यर्जमानः। यद्यूपंः। सुर्वेदेवृत्यं वासंः। सर्वाभिरेवैनं देवतांभिः समर्धयति। अथों आक्रमणमेव तथ्सेतुं यर्जमानः कुरुते। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्ष्ट्रौ। द्वादंश वाजप्रसुवीयांनि जुहोति॥४२॥

द्वादंश मासाः संवथ्यरः। संवथ्यरमेव प्रीणाति। अथो संवथ्यरमेवास्मा उपंदधाति। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्ध्रो। दशिमः कल्पं रोहति। नव वै पुरुषे प्राणाः। नाभिर्दश्मी। प्राणानेव यथास्थानं कल्पयित्वा। सुवर्गं लोकमेति। एतावृद्वे पुरुषस्य स्वम्॥४३॥

यावंत्र्राणाः। यावंदेवास्यास्ति। तेनं सह सुंवर्गं लोकमेति। सुवंदेवाः अंगन्मेत्यांह। सुवर्गमेव लोकमेति। अमृतां अभूमेत्यांह। अमृतंमिव हि सुंवर्गो लोकः। प्रजापंतेः प्रजा अंभूमेत्यांह। प्राजापत्यो वा अयं लोकः। अस्मादेव तेनं लोकान्नेतिं॥४४॥

सम्हं प्रजया सं मया प्रजेत्यांह। आशिषंमेवेतामा शास्ते। आसपुटैर्घन्ति। अत्रं वा इयम्। अन्नाद्यंनैवैन् समर्धयन्ति। ऊषैर्घन्ति। एते हि साक्षादन्नम्। यदूषाः। साक्षादेवैनंमन्नाद्यंन् समर्धयन्ति। पुरस्तात्प्रत्यश्चं घ्रन्ति॥४५॥ पुरस्ताद्धि प्रंतीचीनमन्नम् चतें। शीर्षतो घ्रंन्ति। शीर्षतो ह्यन्नम् चतें। दिग्भ्यो घ्रंन्ति। दिग्भ्य एवास्मां अन्नाद्यमवंरुन्थते। ईश्वरो वा एष पराङ्क्षद्धः। यो यूप्र् रोहंति। हिरंण्यम्ध्यवंरोहति। अमृतं वे हिरंण्यम्। अमृतर् सुवृगों लोकः॥४६॥

अमृतं एव सुंवर्गे लोके प्रतिं तिष्ठति। शतमानं भवति। शतायुः पुरुषः शतेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। पृष्ठौ वा एतद्रूपम्। यद्जा। त्रिः संवथ्सरस्यान्यान्पशून्परि प्रजायते। बस्ताजिनम्ध्यवं रोहति। पृष्ट्यांमेव प्रजनेने प्रतिं तिष्ठति॥४७॥

परिधापयंति गोधूमां जुहोति स्वं नैतिं प्रत्यश्चं घ्रन्ति लोको नवं च॥————[७]

स्प्रान्नहोमाञ्जेहोति। स्प्रत वा अन्नांनि। यावंन्त्येवान्नांनि। तान्येवावं रुन्थे। स्प्रत ग्राम्या ओषंधयः। स्प्रार्ण्याः। उभयीषामवंरुद्धे। अन्नंस्यान्नस्य जुहोति। अन्नंस्यान्नस्या-वंरुद्धे। यद्वांजपेययाज्यनंवरुद्धस्याश्जीयात्॥४८॥

अवंरुद्धेन् व्यृंद्धोत। सर्वस्य समवदायं जुहोति। अनंवरुद्धस्यावंरुद्धौ। औदुंम्बरेण स्रुवेणं जुहोति। ऊर्ग्वा अन्नमुदुम्बरंः। ऊर्ज एवान्नाद्यस्यावंरुद्धौ। देवस्यं त्वा सवितुः प्रंस्व इत्यांह। स्वितृप्रंसूत एवेनं ब्रह्मणा देवतांभिर्भिषिश्चति। अन्नंस्यान्नस्याभिषिश्चति। अन्नंस्यान्नस्यावंरुद्धौ॥४९॥

पुरस्तांत्प्रत्यश्चंमभिषिश्चति। पुरस्ताद्धि प्रंतीचीनमन्नमद्यतें। शीर्ष्तों ऽभिषिंश्वति। शीर्ष्तो ह्यन्नम् द्यतें। आ मुखांदन्ववं-स्रावयति। मुखत एवास्मां अन्नाद्यं दधाति। अग्नेस्त्वा साम्रांज्येनाभिषिंश्चामीत्यांह। एष वा अग्नेः स्वः। तेनैवैनंमभिषिंश्वति। इन्द्रंस्य त्वा साम्रांज्येनाभिषिंश्वामी-त्यांह॥५०॥

इन्द्रियमेवास्मिन्नेतेनं दधाति। बृहस्पतें स्त्वा साम्रांज्येनाभि-षिश्चामीत्याह। ब्रह्म वै देवानां बृहस्पतिः। ब्रह्मणैवैनमिभ-षिश्चति। सोमग्रहा इश्चांवदानीयानि चर्त्विग्भ्य उपहरन्ति। अमुमेव तैर्लोकमन्नवन्तं करोति। सुराग्रहा इश्चानवदानीयानि च वाज्सृद्धः। इममेव तैर्लोकमन्नवन्तं करोति। अथो उभर्यौष्वेवाभिषिंच्यते। विमाथं कुर्वते वाजसृतःं॥५१॥

इन्द्रियस्यावंरुख्ये। अनिंरुक्ताभिः प्रातः सवने स्तुंवते। अनिंरुक्तः प्रजापंतिः। प्रजापंतेरास्यै। वाजंवतीभिर्माध्यं दिने। अन्नं वै वार्जः। अन्नमेवावं रुन्धे। शिपिविष्ट-वंतीभिस्तृतीयसवने। यज्ञो वै विष्णुंः। पशवः शिपिंः। यज्ञ एव पुशुषु प्रतिं तिष्ठति। बृहदन्त्यं भवति। अन्तंमेवैनई न्नियै गंमयति॥५२॥

अुरुजीयादन्नंस्यान्नस्यावंरुद्धा इन्द्रंस्य त्वा साम्राज्येनाभिषिश्चामीत्यांह वाजसृतः शिपिस्रीणि

नृषदं त्वेत्याह। प्रजा वै नृन्। प्रजानांमेवैतेनं सूयते।

द्रुषद्मित्यांह। वनस्पतंयो वै द्रु। वनस्पतींनामेवेतेनं सूयते। भुवनसद्मित्यांह। यदा वै वसींयान्भवंति। भुवनमगुन्निति वै तमांहः। भुवनमेवेतेनं गच्छति॥५३॥

अपसुषदं त्वा घृत्सद्मित्यांह। अपामेवेतेनं घृतस्यं स्यते। व्योमसद्मित्यांह। यदा वे वसीयान्भवंति। व्योमागृन्निति वे तमांहुः। व्योमैवेतेनं गच्छति। पृथिविषदं त्वाऽन्तिरक्षसद्मित्यांह। पृषामेवेतेनं लोकानारं सूयते। तस्मांद्वाजपेययाजी न कश्चन प्रत्यवंरोहति। अपीव हि देवतांनार सूयते॥५४॥

नाक्सद्मित्यांह। यदा वै वसीयान्भवंति। नाकंमगन्नित् वै तमांहः। नाकंमेवेतेनं गच्छति। ये ग्रहाः पश्चज्ञनीना इत्यांह। पश्चज्ञनानांमेवेतेनं सूयते। अपार रस्मुद्वंयस्मि-त्यांह। अपामेवेतेन रसंस्य सूयते। सूर्यरिश्मर स्मार्भृतमित्यांह सशुक्रत्वायं॥५५॥

गुच्छुति सूयते नवं च॥=

[8]

इन्द्रो वृत्तर हत्वा। असुरान्पराभाव्यं। सोऽमावास्याँ प्रत्यागंच्छत्। ते पितरंः पूर्वेद्युरागंच्छन्। पितृन् यज्ञों-ऽगच्छत्। तं देवाः पुनरयाचन्त। तमेंभ्यो न पुनरददुः। तेंऽब्रुवन्वरं वृणामहै। अथं वः पुनर्दास्यामः। अस्मभ्यंमेव पूर्वेद्यः क्रियाता इति॥५६॥ तमेंभ्यः पुनेरददुः। तस्मौत्पितृभ्यः पूर्वेद्यः क्रियते। यत्पितृभ्यः पूर्वेद्यः क्रोति। पितृभ्यं पुव तद्यज्ञं निष्क्रीय यजमानः प्रतंनते। सोमाय पितृपीताय स्वधा नम् इत्याह। पितुरेवाधि सोमपीथमवं रुन्धे। न हि पिता प्रमीयमाण आहैष सोमपीथ इति। इन्द्रियं वै सोमपीथः। इन्द्रियमेव सोमपीथमवं रुन्धे। तेनैन्द्रियेणं द्वितीयां जायामभ्यंश्जुते॥५७॥

पृतद्वे ब्राह्मणं पुरा वांजवश्रवसा विदामंत्रन्। तस्मात्ते द्वेद्वे जाये अभ्याक्षत। य एवं वेदे। अभि द्वितीयां जायामंश्ज्ते। अग्नये कव्यवाहंनाय स्वधा नम् इत्यांह। य एव पितृणाम्गिः। तं प्रीणाति। तिस्र आहुंतीर्जुहोति। त्रिनिदंधाति। षट्थ्सम्पंद्यन्ते॥५८॥

षड्वा ऋतवंः। ऋतूनेव प्रीणाति। तूष्णीं मेक्षंणमादंधाति। अस्ति वा हि षष्ठ ऋतुर्न वाँ। देवान् वै पितृन्त्रीतान्। मनुष्याँः पितरोऽनु प्रपिंपते। तिस्र आहुंतीर्जुहोति। त्रिर्निदंधाति। षट्थ्सम्पद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः॥५९॥

ऋतवः खलु वै देवाः पितरंः। ऋतूनेव देवान्पितॄन्प्रीणाति। तान्प्रीतान्। मनुष्याः पितरोऽनु प्रपिपते। सकृदाच्छिन्नं बर्हिर्भवति। सकृदिव हि पितरंः। त्रिर्निदंधाति। तृतीये वा इतो लोके पितरंः। तानेव प्रीणाति। पराङावंति॥६०॥ ह्रीका हि पितरंः। ओष्मणौ व्यावृत् उपाँस्ते। ऊष्मभांगा हि पितरंः। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। प्राश्या (३) न्न प्राश्या (३) मिति। यत्प्राश्चीयात्। जन्यमन्नमद्यात्। प्रमायुंकः स्यात्। यन्न प्राश्चीयात्। अहंविः स्यात्॥६१॥

पितृभ्य आवृश्च्येत। अवघ्रेयमेव। तन्नेव प्राशितं नेवाप्रांशितम्। वीरं वा वै पितरंः प्रयन्तो हरन्ति। वीरं वा ददति। दशां छिनत्ति। हरणभागा हि पितरंः। पितृनेव निरवंदयते। उत्तंर आयुंषि लोमं छिन्दीत। पितृणाः ह्यंतर्हि नेदीयः॥६२॥

नमंस्करोति। नमस्कारो हि पितृणाम्। नमों वः पितरो रसाय। नमों वः पितरः शुष्माय। नमों वः पितरो जीवाय। नमों वः पितरः स्वधायै। नमों वः पितरो मन्यवै। नमों वः पितरो घोराय। पितरो नमों वः। य पुतस्मिं होके स्थ॥६३॥

युष्मा इस्ते ऽन्। यें ऽस्मिँ ह्लोके। मां ते ऽन्। य एतस्मिँ ह्लोके स्थ। यूयं तेषां विसेष्ठा भूयास्त। यें ऽस्मिँ ह्लोके। अहं तेषां विसेष्ठो भूयास्ति। विसेष्ठः समानानां भवति। य एवं विद्वान्पितृभ्यः कुरोतिं। एष वै मंनुष्यांणां युज्ञः॥६४॥

देवानां वा इतंरे युज्ञाः। तेन वा एतित्पितृलोके चेरित। यत्पितृभ्यः करोति। स ईिश्वरः प्रमेतोः। प्राजापत्ययुर्चा पुनुरैति। युज्ञो वै प्रजापितः। युज्ञेनैव सह पुनुरैति। न प्रमायंको भवति। पितृलोके वा प्रतद्यजंमानश्चरति। यित्पृतृभ्यंः क्रोति। स ईश्वर आर्तिमार्तोः। प्रजापंतिस्त्वावैनं तत् उन्नेतुमर्हृतीत्यांहुः। यत्प्रांजापृत्ययुर्चा पुन्रेति। प्रजापंतिरेवैनं तत् उन्नयित। नार्तिमार्च्छति यजंमानः॥६५॥ इत्यंश्वते पद्यने पद्यने पद्यने पद्यने वर्ततेऽहंविः स्यान्नेदीयः स्थ यज्ञो यजंमानश्चरित् यित्वतृभ्यः क्रोति पश्चं च॥———[१०]

देवासुरा अग्नीषोमंयोर्देवा वै यथादर्शं देवा वै यद्न्यैर्ग्रहें ब्रह्मवादिनो नाग्निष्टोमो न सांवित्रं देवस्याहं ताप्यं स्प्तान्नहोमात्रृषदं त्वेन्द्रों वृत्र हत्वा दर्शा॥१०॥ देवासुरा वाज्येवैनं तस्माद्वाजपेययाजी देवस्याहं वाजस्यावंरुद्धा इन्द्रियमेवास्मिन् ह्लीका हि पितरः पश्चेषष्टिः॥६५॥ देवासुरा यजंमानः॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके तृतीयः

प्रपाठकः समाप्तः॥

# ॥चतुर्थः प्रश्नः॥

#### ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके चतुर्थः प्रपाठकः॥

उभये वा एते प्रजापंतेरध्यंसृज्यन्त। देवाश्चासुंराश्च। तान्न व्यंजानात्। इमें उन्य इमें उन्य इतिं। स देवान् १ शूनंकरोत्। तान्भ्यंषुणोत्। तान्यवित्रंणापुनात्। तान्यरस्तांत्यवित्रंस्य व्यंगृह्णात्। ते ग्रहां अभवन्। तद्ग्रहांणां ग्रहत्वम्॥१॥

देवता वा एता यर्जमानस्य गृहे गृंह्यन्ते। यद्ग्रहाः। विदुरेनं देवाः। यस्यैवं विदुषं एते ग्रहां गृह्यन्तें। एषा वै सोम्स्याऽऽहुंतिः। यदुंपार्शः। सोमेन देवाङ्स्तंपयाणीति खलु वै सोमेन यजते। यदुंपार्शुं जुहोतिं। सोमेनैव तद्देवाङ्स्तंपयति। यद्गहां जुहोतिं॥२॥

देवा एव तद्देवान्गंच्छन्ति। यचंम्सां जुहोतिं। तेनैवानुंरूपेण यजंमानः सुवृगं लोकमेति। किं न्वेतदग्रं आसीदित्यांहुः। यत्पात्राणीतिं। इयं वा एतदग्रं आसीत्। मृन्मयांनि वा एतान्यांसन्। तैर्देवा न व्यावृतंमगच्छन्। त एतानिं दारुमयांणि पात्रांण्यपश्यन्। तान्यंकुर्वत॥३॥

तैर्वे ते व्यावृतंमगच्छन्। यद्दांरुमयांणि पात्रांणि भवंन्ति। व्यावृतंमेव तैर्यजंमानो गच्छति। यानि दारुमयांणि पात्रांणि भवंन्ति। अमुमेव तैर्लोकम्भिजंयति। यानि मृन्मयांनि। इममेव तैर्लोकम्भिजंयति। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। काश्चतंस्रः स्थालीर्वायुव्याः सोम्ग्रहंणीरिति। देवा वै पृश्ञिमदुह्नन्॥४॥

तस्यां एते स्तनां आसन्। इयं वै पृश्निः। तामांदित्या आंदित्यस्थाल्या चतुंष्पदः पृशूनंदुह्नन्। यदांदित्यस्थाली भवंति। चतुंष्पद एव तयां पृशून् यजंमान इमां दुहे। तामिन्द्रं उक्थ्यस्थाल्येन्द्रियमंदुह्त्। यदुंक्थ्यस्थाली भवंति। इन्द्रियमेव तया यजंमान इमां दुंहे। तां विश्वं देवा आंग्रयणस्थाल्योर्जमदुह्नन्। यदांग्रयणस्थाली भवंति॥५॥

ऊर्जमेव तया यजंमान इमां दुंहे। तां मंनुष्यौ ध्रुवस्थाल्याऽऽयुंरदुह्नन्। यद्धुंवस्थाली भवंति। आयुंरेव तया यजंमान इमां दुंहे। स्थाल्या गृह्णाति। वायव्येन जुहोति। तस्मांदन्येन पात्रेण पृशून्दुहन्ति। अन्येन प्रतिगृह्णन्ति। अथौं व्यावृतमेव तद्यजंमानो गच्छति॥६॥

<u>यृ</u>हुत्वं ग्रहाँ जुहोत्यंकुर्वतादुह्नन्नाग्रयणस्थाली भवंति नवं च॥**————[१**]

युव श्रामंमिश्वना। नर्मुचावासुरे सर्चा। विपिपाना शुंभस्पती। इन्द्रं कर्म स्वावतम्। पुत्रिमंव पितरांवश्विनोभा। इन्द्रावंतं कर्मणा दृश्सनांभिः। यथ्सुरामं व्यपिंबः शचींभिः। सरंस्वती त्वा मघवन्नभीष्णात्। अहाँव्यग्ने ह्विरास्येंते। सुचीवं घृतं चुमू इंव सोमंः॥७॥

वाज्यसिन १ रियमस्मे सुवीरम्। प्रशस्तं धेहि यशसं बृहन्तम्। यस्मिन्नश्वांस ऋषभासं उक्षणंः। वशा मेषा अंवसृष्टास् आहुंताः। कीलालपे सोमंपृष्टाय वेधसें। हृदा मृतिं जनय चारुंम्ययें। नाना हि वां देवहिंत्र सदों मितम्। मा सर्सृक्षाथां पर्मे व्योमन्। सुरा त्वमिसं शुष्मिणी सोमं एषः। मा मां हिरसीः स्वां योनिमाविशन्॥८॥

यदत्रं शिष्टः रसिनंः सुतस्यं। यदिन्द्रो अपिंबच्छचींभिः। अहं तदंस्य मनंसा शिवेनं। सोम् राजांनिम्ह भंक्षयामि। द्वे स्तुती अंश्णवं पितृणाम्। अहं देवानांमुत मर्त्यांनाम्। ताभ्यांमिदं विश्वं भुवंन् समेति। अन्तरा पूर्वमपंरं च केतुम्। यस्ते देव वरुण गायुत्रछंन्दाः पाशः। तं तं पृतेनावं यजे॥९॥

यस्ते देव वरुण त्रिष्टुप्छंन्दाः पाशः। तं तं पृतेनावं यजे। यस्ते देव वरुण जगतीछन्दाः पाशः। तं तं पृतेनावं यजे। सोमो वा पृतस्यं राज्यमादत्ते। यो राजा सत्राज्यो वा सोमेन यजेते। देवसुवामेतानिं ह्वी १ षिं भवन्ति। पृतावंन्तो वै देवाना १ स्वाः। त पृवास्में स्वान्प्रयंच्छन्ति। त एनं पुनः सुवन्ते राज्यायं। देवसू राजां भवति॥१०॥

सोमं आवि्शन् यंजे राज्यायैकं च॥———[२]

उदंस्थाद्देव्यदितिर्विश्वरूपी। आयुंर्यज्ञपंतावधात्। इन्द्रांय कृण्वती भागम्। मित्राय वर्रुणाय च। इयं वा अग्निहोत्री। इयं वा एतस्य निषीदति। यस्याग्निहोत्री निषीदंति। तामुत्थांपयेत्। उदंस्थाद्देव्यदितिरिति। इयं वै देव्यदितिः॥११॥ ड्मामेवास्मा उत्थापयित। आयुर्यज्ञपतावधादित्यांह। आयुरेवास्मिन्दधाति। इन्द्रांय कृण्वती भागं मित्राय् वर्रुणाय चेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। अवंर्तिं वा एषेतस्य पाप्मानं प्रतिख्याय निषीदित। यस्यांग्निहोत्र्युपंसृष्टा निषीदित। तां दुग्ध्वा ब्राह्मणायं दद्यात्। यस्यात्रं नाद्यात्। अवंर्तिमेवास्मिन्याप्मानं प्रतिमुश्चति॥१२॥

दुग्धा दंदाति। न ह्यदंष्टा दक्षिणा दीयतें। पृथिवीं वा एतस्य पयः प्रविंशति। यस्यौग्निहोत्रं दुह्यमांनु स्कन्दंति। यद्द्य दुग्धं पृथिवीमसंक्त। यदोषंधीरप्यसंर्द्यदापंः। पयो गृहेषु पयो अघ्नियासुं। पयो वृथ्सेषु पयो अस्तु तन्मयीत्यांह। पयं पुवाऽऽत्मन्गृहेषुं पृशुषुं धत्ते। अप उपंसृजति॥१३॥

अद्भिरेवैनंदाप्नोति। यो वै यज्ञस्यार्ते नानांति सरमुजति। उमे वे ते तर्ह्यार्च्छंतः। आर्च्छंति खलु वा एतदंग्निहोत्रम्। यद्दुह्यमान् इस्कन्दंति। यदंभिदुह्यात्। आर्ते नानांतं यज्ञस्य सरम्जेत्। तदेव यादक्षीदक्रं होत्व्यम्। अथान्यां दुग्ध्वा पुनंरहोतव्यम्। अनांतिनैवार्तं यज्ञस्य निष्कंरोति॥१४॥

यद्युद्वंतस्य स्कन्देंत्। यत्ततोऽहुंत्वा पुनंरेयात्। य्ज्ञं विच्छिंन्द्यात्। यत्र स्कन्देंत्। तन्निषद्य पुनंर्गृह्णीयात्। यत्रैव स्कन्दंति। ततं पुवेनत्पुनंर्गृह्णाति। तदेव यादक्षीदक्रं होत्व्यम्। अथान्यां दुग्ध्वा पुनंर्होत्व्यम्। अनार्तेनैवार्तं

### युज्ञस्य निष्कंरोति॥१५॥

वि वा एतस्यं यज्ञश्छिंद्यते। यस्याँग्निहोत्रेऽधिश्रिते श्वा-ऽन्तरा धावंति। रुद्रः खलु वा एषः। यद्ग्निः। यद्गमंन्वत्या वर्तयाँत्। रुद्रायं प्शूनिपं दध्यात्। अपशुर्यजंमानः स्यात्। यद्पाँऽन्वतिषिश्चेत्। अनाद्यमग्नेरापः। अनाद्यमाँभ्यामिपं दध्यात्। गार्हंपत्याद्भस्मादायं। इदं विष्णुर्विचंक्रम् इतिं वैष्णव्यर्चाऽऽहंवनीयाँद्ध्वर्सयनुद्रंवेत्। यज्ञो वे विष्णुंः। यज्ञेनैव यज्ञर सन्तंनोति। भस्मंना प्दमिपं वपति शान्त्याँ॥१६॥

वै देव्यदिंतिर्मुञ्चति सुजति करोति करोत्याभ्यामपिं दथ्यात् पश्चं च॥————[३]

नि वा एतस्यांऽऽहवनीयो गार्हंपत्यं कामयते। निगार्हंपत्य आहवनीयम्। यस्याग्निमनुंद्धृत् सूर्योऽभि निम्रोचंति। दुर्भेण हिरंण्यं प्रबद्धं पुरस्तांद्धरेत्। अथाग्निम्। अथाग्निहोत्रम्। यद्धिरंण्यं पुरस्ताद्धरंति। ज्योतिर्वे हिरंण्यम्। ज्योतिरेवेनं पश्यन्नुद्धंरति। यद्ग्निं पूर्व्ष् हरत्यथाग्निहोत्रम्॥१७॥

भागधेयेनैवैनं प्रणंयति। ब्राह्मण आर्षेय उद्धेरेत्। ब्राह्मणो वै सर्वा देवताः। सर्वाभिरेवैनं देवतांभिरुद्धंरति। अग्निहोत्रम्ंप्साद्यातिमंतोरासीत। व्रतमेव हृतमन्ं म्रियते। अन्तं वा एष आत्मनो गच्छति। यस्ताम्यंति। अन्तंमेष युज्ञस्यं गच्छति। यस्याग्निमनुंद्धृत्र् सूर्योऽभि

### निुम्रोचंति॥१८॥

पुनः समन्यं जुहोति। अन्तेनैवान्तं यज्ञस्य निष्कंरोति। वरुणो वा एतस्यं यज्ञं गृह्णाति। यस्याग्निमनुंद्धृत् सूर्योऽभि निम्रोचंति। वारुणं चरुं निर्वपेत्। तेनैव यज्ञं निष्कीणीते। नि वा एतस्यांऽऽहवनीयो गार्हंपत्यं कामयते। नि गार्हंपत्य आहवनीयम्। यस्याग्निमनुंद्धृत् सूर्योऽभ्युंदेति। चतुर्गृहीतमाज्यं पुरस्तौद्धरेत्॥१९॥

अथाग्निम्। अथाँग्निहोत्रम्। यदाज्यं पुरस्ताद्धरंति। एतद्वा अग्नेः प्रियं धामं। यदाज्यम्। प्रियेणैवैनं धाम्ना समंध्यति। यद्ग्निं पूर्वे हर्त्यथाँग्निहोत्रम्। भागधेयेनैवैनं प्रणयति। ब्राह्मण आर्षेय उद्धरेत्। ब्राह्मणो वै सर्वा देवताः॥२०॥

सर्वाभिरेवैनं देवतांभिरुद्धंरित। परांची वा एतस्मैं व्युच्छन्ती व्यंच्छित। यस्याग्निमनंद्धृत स्यूर्योऽभ्यंदेतिं। उषाः केतुनां जुषताम्। यज्ञं देवेभिरिन्वितम्। देवेभ्यो मध्मत्तम् स्वाहेतिं प्रत्यिङ्कषद्याज्यंन जुहुयात्। प्रतीचीमेवास्मै विवासयित। अग्निहोत्रम्ंप्साद्यातिमितोरासीत। व्रतमेव हतमनं म्रियते। अन्तं वा एष आत्मनां गच्छिति॥२१॥

यस्ताम्यंति। अन्तंमेष यज्ञस्यं गच्छति। यस्याग्निमनुंद्धृत्र् सूर्योऽभ्यंदेतिं। पुनेः समन्यं जुहोति। अन्तेनैवान्तं यज्ञस्य निष्कंरोति। मित्रो वा पुतस्यं यज्ञं गृह्णाति। यस्याग्निमनुंद्धृत्र् सूर्योऽभ्युंदेतिं। मैत्रं चुरुं निर्विपत्। तेनैव युज्ञं निष्क्रींणीते। यस्यांऽऽहवनीयेऽनुंद्वाते गार्हंपत्य उद्वायेंत्॥२२॥

यदांहवनीयमनुंद्वाप्य गार्हंपत्यं मन्थैत्। विच्छिंन्द्यात्। भ्रातृंव्यमस्मै जनयेत्। यद्वै यज्ञस्यं वास्त्व्यं क्रियतें। तदनुं रुद्रोऽवंचरति। यत्पूर्वमन्ववस्येत्। वास्त्व्यंमग्निमुपांसीत। रुद्रोंऽस्य पृशून्यातुंकः स्यात्। आहुवनीयंमुद्वाप्यं। गार्हंपत्यं मन्थेत्॥२३॥

इतः प्रथमं जंज्ञे अग्निः। स्वाद्योनेरिधं जातवेदाः। स गांयत्रिया त्रिष्टुभा जगत्या। देवेभ्यों हृव्यं वहतु प्रजानन्नितिं। छन्दोभिरेवैन्ड् स्वाद्योनेः प्रजनयित। गार्हंपत्यं मन्थित। गार्हंपत्यं वा अन्वाहिताग्नेः पृशव उपं तिष्ठन्ते। स यदुद्वायंति। तदनुं पृशवोऽपं कामन्ति। इषे रय्यै रमस्व॥२४॥

सहंसे द्युम्नायं। ऊर्जेऽपत्यायेत्यांह। पृशवो वै र्यिः। पृश्नेवास्मैं रमयति। सार्स्वतौ त्वोथ्सौ सिमंन्धातामित्यांह। ऋख्सामे वै सारस्वतावुथ्सौं। ऋख्सामाभ्यांमेवैन्श् सिमंन्धे। सम्राडंसि विराडसीत्यांह। रथन्त्रं वै सम्राट। बृहद्विराट्॥२५॥

ताभ्यांमेवैन् सिमंन्धे। वज्रो वै चुक्रम्। वज्रो वा एतस्यं युज्ञं विच्छिनत्ति। यस्यानों वा रथों वाऽन्तुराऽग्नी यातिं। आहुवनीयंमुद्वाप्यं। गार्हंपत्यादुद्धंरेत्। यदंग्ने पूर्वं प्रभृंतं प्दश् हि तें। सूर्यंस्य र्श्मीनन्वांतृतानं। तत्रं रियष्ठामनु सं भंरैतम्। सं नंः सृज सुमृत्या वाजंवृत्येतिं॥२६॥

पूर्वेणैवास्यं युज्ञेनं युज्ञमनु सन्तंनोति। त्वमंग्ने सप्रथां असीत्यांह। अग्निः सर्वां देवताः। देवतांभिरेव युज्ञः सन्तंनोति। अग्नयं पथिकृतं पुरोडाशंमुष्टाकंपालं निर्वपत्। अग्निमेव पंथिकृत् स्वेनं भाग्धेयेनोपंधावति। स एवैनं यज्ञियं पन्थामिपं नयति। अनुङ्वान्दक्षिणा। वृही ह्येष समृद्धौ॥२७॥

हर्त्यथाँग्निहोत्रं निम्नोचिति हरेद्देवतां गच्छत्युद्धार्यंन्मन्थेद्रमस्व बृहद्विराडिति नवं च (नि वै पूर्वं त्रीणिं निम्नोचित दुर्भेण् यद्धिरेण्यमग्निहोत्रं पुनुर्वरुणो वारुणं नि वा एतस्याभ्युदितिं चतुर्गृहीतमाज्यं यदाज्यं पराँच्युषाः पुनिर्मित्रो मैत्रं यस्याऽऽहवनीयेऽनुद्वाते गार्हंपत्यो यद्वै मन्थेदुद्धरेत्॥)॥———[४]

यस्यं प्रातः सवने सोमोंऽतिरिच्यंते। माध्यं दिन् सवंनं कामयंमानोऽभ्यतिरिच्यते। गौधंयति मुरुतामिति धयंद्वतीषु कुर्वन्ति। हिनस्ति वै सुन्ध्यधीतम्। सुन्धीव खलु वा एतत्। यथ्सवंनस्यातिरिच्यंते। यद्धयंद्वतीषु कुर्वन्ति। सुन्धेः शान्त्यै। गायुत्र सामं भवति पश्चद्शः स्तोमंः। तेनैव प्रांतः सवनान्नयंन्ति॥२८॥

मुरुत्वंतीषु कुर्वन्ति। तेनैव माध्यं दिनाथ्सवंनान्नयंन्ति।

होतुंश्चम्समनूत्रंयन्ते। होताऽनुं शश्सित। मृध्यत एव युज्ञश् समादंधाति। यस्य माध्यं दिने सर्वने सोमोंऽतिरिच्यंते। आदित्यं तृंतीयसवनं कामयंमानोऽभ्यतिरिच्यते। गौरिवीतश् सामं भवति। अतिरिक्तं वै गौरिवीतम्। अतिरिक्तं यथ्सवनस्यातिरिच्यंते॥२९॥

अतिरिक्तस्य शान्त्यै। बण्महा असि सूर्येति कुर्वन्ति। यस्यैवाऽऽदित्यस्य सर्वनस्य कामेनातिरिच्यंते। तेनैवेनं कामेन समर्धयन्ति। गौरिवीत साम भवति। तेनैव मार्ध्यं दिनाथ्सवनान्नयंन्ति। सप्तद्रशः स्तोमंः। तेनैव तृंतीयसवनान्नयंन्ति। होतुंश्चमसमनून्नयन्ते। होताऽनुं श स्मित॥३०॥

मध्यत एव यज्ञ समादंधाति। यस्यं तृतीयसवने सोमोऽितिरिच्यंत। उक्थ्यं कुर्वीत। यस्योक्थ्यंऽितिरिच्यंत। अतिरात्रं कुर्वीत। यस्यांतिरात्रंऽितिरिच्यंत। तत्त्वे दुष्प्रज्ञानम्। यजमानं वा एतत्प्रश्वं आसाह्यंयन्ति। बृहथ्सामं भवित। बृहद्वा इमाँ ह्योकान्दांधार। बार् हंताः प्रश्वंः। बृहतेवास्में प्रशून्दांधार। शिपिविष्टवंतीषु कुर्वन्ति। शिपिविष्टो वे देवानां पुष्टम्। पुष्ट्येवेन् समर्धयन्ति। होत्ंश्चमसमनून्नंयन्ते। होताऽनुंश स्सिति। मध्यत एव यज्ञ समादंधाति॥३१॥ विकृति सवंनस्याविरिच्यंते शस्सित दाधाराष्ट्रो चं॥———[५]

एकैंको वै जनतांयामिन्द्रं। एकं वा एताविन्द्रंम्भि

सश्सुंनुतः। यौ द्वौ सर्स्सुनुतः। प्रजापंतिर्वा एष वितायते। यद्यज्ञः। तस्य ग्रावाणो दन्ताः। अन्यत्रं वा एते सर्स्सुन्वतोर्निर्वपस्ति। पूर्वणोपसृत्यां देवता इत्यांहुः। पूर्वोपसृतस्य वै श्रेयांन्भवति। एतिंवन्त्याज्यांनि भवन्त्यभिजित्यै॥३२॥

म्रुत्वंतीः प्रतिपदंः। म्रुतो वै देवानामपंराजितमायतंनम्। देवानांमेवापंराजित आयतंने यतते। उभे बृहद्रथन्तरे भवतः। इयं वाव रथन्तरम्। असौ बृहत्। आभ्यामेवेनम्नतरंति। वाचश्च मनसश्च। प्राणाचांपानाचं। दिवश्चं पृथिव्याश्चं॥३३॥

सर्वस्माद्वित्ताद्वेद्यात्। अभिवर्तो ब्रह्मसामं भेवति। सुवर्गस्यं लोकस्याभिवृत्त्यै। अभिजिद्भवित। सुवर्गस्यं लोकस्याभिजित्यै। विश्वजिद्भवित। विश्वंस्य जित्यै। यस्य भूयार्स्सो यज्ञऋतव इत्यांहुः। स देवतां वृङ्क इति। यद्यंग्निष्टोमः सोमः पुरस्ताथ्स्यात्॥३४॥

उक्थ्यं कुर्वीत। यद्युक्थंः स्यात्। अतिरात्रं कुर्वीत। यज्ञुक्रतुभिरेवास्यं देवतां वृङ्के। यो वै छन्दोभिरभिभवंति। स सर्स्सुन्वतोर्भिभवति। संवेशायं त्वोपवेशाय त्वेत्यांह। छन्दार्स्सि वै संवेश उपवेशः। छन्दोभिरेवास्य छन्दार्स्स्यभिभवति। इष्टर्गो वा ऋत्विजांमध्वर्युः॥३५॥

इष्टर्गः खलु वै पूर्वोऽर्षः क्षीयते। प्राणांपानौ मृत्योर्मा

पात्मित्यांह। प्राणापानयोरेव श्रंयते। प्राणापानौ मा मां हासिष्टमित्यांह। नैनं पुराऽऽयंषः प्राणापानौ जंहितः। आर्तिं वा एते नियंन्ति। येषांं दीक्षितानां प्रमीयंते। तं यदंववर्जेयुः। ऋरकृतांमिवैषां लोकः स्यांत्। आहेर दहेतिं ब्रूयात्॥३६॥

तं देक्षिणतो वेद्यै निधाये। सूर्पराज्ञियां ऋग्भिः स्तुंयुः। इयं वे सर्पतो राज्ञीं। अस्या एवेनं परिंददित। व्यृंद्धं तिदत्यांहुः। यथ्स्तुतमनंनुशस्तमितिं। होतां प्रथमः प्रांचीनावीती मार्जालीयं परीयात्। यामीरंनुब्रुवन्। सूर्पराज्ञीनां कीर्तयेत्। उभयोर्वेनं लोकयोः परिंददित॥३७॥

अथों धुवन्त्येवैनम्ं। अथो न्येवास्मैं हुवते। त्रिः परियन्ति। त्रयं इमे लोकाः। एभ्य एवैनं लोकेभ्यों धुवते। त्रिः पुनः परियन्ति। षट्थ्सम्पद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतुभिरेवैनं धुवते। अग्र आयूर्षि पवस् इति प्रतिपदं कुर्वीरन्। रथन्त्रसांमेषार् सोमः स्यात्। आयुरेवाऽऽत्मन्दंधते। अथों पाप्मानंमेव विजहंतो यन्ति॥३८॥

अभिजित्यै पृथिव्याश्च स्यादंष्व्युर्बूयाक्ष्रोकयोः परिंददित कुर्वीर्ड्क्षीणिं च॥———— $oxed{\xi}$ 

असुर्यं वा एतस्माद्वर्णं कृत्वा। पृशवों वीर्यमपं क्रामन्ति। यस्य यूपों विरोहंति। त्वाष्ट्रं बंहुरूपमालंभेत। त्वष्टा वै रूपाणांमीशे। य एव रूपाणामीशैं। सौंऽस्मिन्पुशून् वीर्यं यच्छति। नास्मांत्पृशवों वीर्यमपं क्रामन्ति। आर्तिं वा एते नियंन्ति। येषां दीक्षितानांमुग्निरुद्वायंति॥३९॥

यदांहवनीयं उद्घायेंत्। यत्तं मन्थेंत्। विच्छिंन्द्यात्। भ्रातृंव्यमस्मे जनयेत्। यदांहवनीयं उद्घायेंत्। आग्नींद्धादुद्धं-रेत्। यदाग्नींद्ध उद्घायेंत्। गार्हंपत्यादुद्धंरेत्। यद्गार्हंपत्य उद्घायेंत्। अतं एव पुनंर्मन्थेत्॥४०॥

अत्र वाव स निर्लयते। यत्र खलु वै निर्लीनमुत्तमं पश्यंन्ति। तदेनिमच्छन्ति। यस्माद्दारों रुद्वार्यंत्। तस्यारणीं कुर्यात्। कुमुकमिपं कुर्यात्। एषा वा अग्नेः प्रिया तृन्ः। यत्क्रुं मुकः। प्रिययैवैनं तृनुवा समर्धयति। गार्हं पत्यं मन्थति॥४१॥

गार्हंपत्यो वा अग्नेर्योनिः। स्वादेवैनं योनैर्जनयति। नास्मै भ्रातृंव्यं जनयति। यस्य सोमं उपदस्यैत्। सुवर्ण् हिरंण्यं द्वेधा विच्छिद्यं। ऋजी्षेऽन्यदांधूनुयात्। जुहुयादन्यत्। सोममेवाभिषुणोतिं। सोमं जुहोति। सोमंस्य वा अभिष्यमांणस्य प्रिया तुनूरुदंक्रामत्॥४२॥

तथ्सुवर्ण् हरंण्यमभवत्। यथ्सुवर्ण् हरंण्यं कुर्वन्ति। प्रिययैवैनं तनुवा समंध्यन्ति। यस्याक्रीत् सोमंमपहरंयुः। क्रीणीयादेव। सैव ततः प्रायंश्चित्तः। यस्यं क्रीतमंपहरंयुः। आदाराङ्श्चं फाल्गुनानिं चाभिषुंणुयात्। गायत्री यश

सोमुमाहंरत्। तस्य योऽ५ंशुः पुराऽपंतत्॥४३॥

त आंदारा अंभवन्। इन्द्रों वृत्रमंहन्। तस्यं वृत्कः परां-ऽपतत्। तानि फाल्गुनान्यंभवन्। पृशवो व फाल्गुनानि। पृशवः सोमो राजां। यदांदाराङ्श्चं फाल्गुनानि चाभिषुणोति। सोममेव राजांनम्भिषुंणोति। शृतेनं प्रातः सवने श्रींणीयात्। द्र्या मध्यं दिने॥४४॥

नीतिमिश्रेणं तृतीयसवने। अग्निष्टोमः सोमंः स्याद्रथन्तर-सामा। य प्वर्त्विजों वृताः स्यः। त एनं याजयेयः। एकां गां दक्षिणां दद्यात्तेभ्यं प्व। पुनः सोमं क्रीणीयात्। यज्ञेनैव तद्यज्ञमिंच्छति। सैव ततः प्रायंश्चित्तः। सर्वाभ्यो वा पुष देवताभ्यः सर्वेभ्यः पृष्ठेभ्यं आत्मानमागुरते। यः स्त्रायांगुरते। पृतावान्खलु व पुरुषः। यावदस्य वित्तम्। सर्ववेदसेनं यजेत। सर्वपृष्ठोऽस्य सोमः स्यात्। सर्वाभ्य पुव देवताभ्यः सर्वेभ्यः पृष्ठेभ्यं आत्मानं निष्क्रीणीते॥४५॥

उद्वार्यति मन्थेन्मन्थत्यक्रामत्प्राऽपंतन्मुध्यन्दिन आगुरते पश्चं च॥————[७]

पर्वमानः सुवर्जनंः। प्वित्रेण विचंर्षणिः। यः पोता स पुनातु मा। पुनन्तुं मा देवजनाः। पुनन्तु मनेवो धिया। पुनन्तु विश्वं आयवः। जातंवेदः प्वित्रंवत्। प्वित्रेण पुनाहि मा। शुक्रेणं देव दीद्यंत्। अग्ने कत्वा कतूर् रनुं॥४६॥

यत्तं प्वित्रंमुर्चिषि। अग्ने वितंतमन्त्रा। ब्रह्म तेनं पुनीमहे।

उभाभ्यां देव सवितः। प्वित्रंण स्वेनं च। इदं ब्रह्मं पुनीमहे। वैश्वदेवी पुनती देव्यागात्। यस्यै बह्वीस्तनुवो वीतपृष्ठाः। तया मदन्तः सधमाद्येषु। वयः स्याम् पत्रयो रयीणाम्॥४७॥

वैश्वान्तरो रिष्मिर्मिर्मा पुनातु। वार्तः प्राणेनेषिरो मंयोभूः। द्यावापृथिवी पर्यसा पर्योभिः। ऋतावंरी यज्ञिये मा पुनीताम्। बृहद्भिः सवित्स्तृभिः। वर्षिष्ठैर्देव मन्मंभिः। अग्ने दक्षैः पुनाहि मा। येनं देवा अपुनत। येनाऽऽपो दिव्यं कशः। तेनं दिव्येन् ब्रह्मणा॥४८॥

ड्डदं ब्रह्मं पुनीमहे। यः पांवमानीर्ध्येतिं। ऋषिंभिः सम्भृत्रं रसम्। सर्वृदं स पूतमंश्ञाति। स्वृद्तिं मांतरिश्वना। पावमानीर्यो अध्येतिं। ऋषिंभिः सम्भृत्रं रसम्। तस्मै सरंस्वती दुहे। क्षीरं स्पर्पर्मंध्वस्। पावमानीः स्वस्त्ययंनीः॥४९॥

सुद्धा हि पर्यस्वतीः। ऋषिभिः सम्भृतो रसः। ब्राह्मणेष्वमृत १ हितम्। पावमानीर्दिशन्तु नः। इमं लोकमथीं अमुम्। कामान्थ्समध्यन्तु नः। देवीर्देवैः समाभृताः। पावमानीः स्वस्त्ययंनीः। सुद्धा हि घृतश्चर्तः। ऋषिभिः सम्भृतो रसः॥५०॥

ब्राह्मणेष्वमृत १ हितम्। येनं देवाः पवित्रेण। आत्मानं पुनते सदा। तेनं सहस्रंधारेण। पावमान्यः पुनन्तु मा। प्राजापत्यं पवित्रम्। शतोद्यांम १ हिर्ण्मयम्। तेनं ब्रह्मविदो व्यम्। पूतं ब्रह्मं पुनीमहे। इन्द्रंः सुनीती सह मां पुनातु। सोमंः स्वस्त्या वरुणः समीच्यां। यमो राजां प्रमृणाभिः पुनातु मा। जातवेदा मोर्जयंन्त्या पुनातु॥५१॥

अर्नु रयीणां ब्रह्मणा स्वस्त्ययंनीः सुदुघा हि घृंतुश्चुत ऋषिंभिः सम्भृंतो रसः पुनातु त्रीणिं

प्रजा वै स्त्रमांसत् तप्स्तप्यंमाना अर्जुह्वतीः। देवा अपश्यश्चम्सं घृतस्यं पूर्णं स्वधाम्। तमुपोदंतिष्ठन्तमं- जुहवुः। तेनाधमास अर्जुमवांरुन्थतः। तस्मांदर्धमासे देवा इंज्यन्ते। पितरोऽपश्यश्चम्सं घृतस्यं पूर्णं स्वधाम्। तमुपोदंतिष्ठन्तमंजुहवुः। तेनं मास्यूर्जुमवांरुन्थतः। तस्मांन्मासि पितृभ्यः क्रियते। मनुष्यां अपश्यश्चम्सं घृतस्यं पूर्णं स्वधाम्॥५२॥

तम्पोदंतिष्ठन्तमंजुहवुः। तेनं द्वयीमूर्ज्मवांरुन्थत। तस्माद्विरह्नां मनुष्येंभ्य उपहियते। प्रातश्चं सायं चं। पशवोऽपश्यश्चम्सं घृतस्यं पूर्णं स्वधाम्। तमुपोदंतिष्ठन्त-मंजुहवुः। तेनं त्रयीमूर्ज्मवारुन्थत। तस्मात्रिरह्नंः पृशवः प्रेरंते। प्रातः संङ्गवे सायम्। असुरा अपश्यश्चम्सं घृतस्यं पूर्णं स्वधाम्॥५३॥

तमुपोदंतिष्ठन्तमंजुहवुः। तेनं संवथ्सर ऊर्ज्मवांरुन्धत। ते देवा अमन्यन्त। अमी वा इदमंभूवन्। यद्ययः स्म इतिं। त एतानिं चातुर्मास्यान्यंपश्यन्। तानि निरंवपन्। तैरेवैषां तामूर्जमवृञ्जत। ततों देवा अभवन्। पराऽसुंराः॥५४॥

यद्यजंते। यामेव देवा ऊर्जम्वारुंन्थत। तान्तेनावं रुन्थे। यत्पितृभ्यः क्रोतिं। यामेव पितर् ऊर्जम्वारुंन्थत। तान्तेनावं रुन्थे। यदांवस्थेऽत्रुष्ट् हरंन्ति। यामेव मंनुष्यां ऊर्जम्वारुंन्थत। तान्तेनावं रुन्थे। यद्दक्षिणां ददांति॥५५॥

यामेव प्राव ऊर्जम्वारंन्थत। तान्तेनावं रुन्थे। यचांतुर्मास्यैर्यजंते। यामेवासंरा ऊर्जम्वारंन्थत। तान्तेनावं रुन्थे। भवंत्यात्मनां। परांस्य भ्रातृंव्यो भवति। विराजो वा एषा विक्रांन्तिः। यचांतुर्मास्यानिं। वैश्वदेवेनास्मिं होके प्रत्यंतिष्ठत्। वृरुणप्रघासैरन्तिरक्षे। साक्रमेथेरमुष्मिं होके। एष ह त्वावेतथ्सवं भवति। य एवं विद्वा इश्चांतुर्मास्यैर्यजंते॥ ५६॥ मृतुष्यं अपश्यश्चम्सं पृतस्यं पूर्णः स्वधामसंरा अपश्यश्चम्सं पृतस्यं पूर्णः स्वधामसंरा विद्वा इश्चांतुर्मा प्रावस्यं पूर्णः स्वधामसंरा विद्वा विद्वा

अग्निर्वाव संवथ्सरः। आदित्यः परिवथ्सरः। चन्द्रमां इदावथ्सरः। वायुरंनुवथ्सरः। यद्वैश्वदेवेन् यजंते। अग्निमेव तथ्संवथ्सरमाप्तोति। तस्माद्वश्वदेवेन् यजंमानः। संवथ्सरीणाई स्वस्तिमाशास्त् इत्याशांसीत। यद्वरुण-प्रघासैर्यजंते। आदित्यमेव तत्परिवथ्सरमाप्नोति॥५७॥

तस्मौद्धरुणप्रघासैर्यजमानः। परिवथ्सरीणाई स्वस्तिमा-

शांस्त इत्याशांसीत। यथ्सांकमेधेर्यजंते। चन्द्रमंसमेव तिदंदावथ्सरमांप्रोति। तस्मांथ्साकमेधेर्यजंमानः। इदा-वथ्सरीणाः स्वस्तिमाशांस्त इत्याशांसीत। यत्पितृयज्ञेन यजंते। देवानेव तद्न्ववंस्यति। अथवा अस्य वायुश्चांनु-वथ्सरश्चाप्रीतावुच्छिंष्येते। यच्छुंनासीरीयेण यजंते॥५८॥

वायुमेव तदंनुवथ्मरमाँप्रोति। तस्माँच्छुनासीरीयेण् यजमानः। अनुवथ्मरीणाई स्वस्तिमाशाँस्त इत्याशांसीत। संवथ्मरं वा एष ईंफ्सतीत्यांहुः। यश्चांतुर्मास्यैर्यजंत इति। एष ह् त्वै संवथ्मरमाँप्रोति। य एवं विद्वाइश्चांतुर्मास्यैर्यजंते। विश्वं देवाः समयजन्त। तैंऽग्निमेवायंजन्त। त एतं लोकमंजयन्॥५९॥

यस्मिन्नग्निः। यद्वैश्वदेवेन् यजिते। एतमेव लोकं जियति। यस्मिन्नग्निः। अग्नेरेव सायुज्यमुपैति। यदा वैश्वदेवेन् यजिते। अर्थ संवथ्सरस्यं गृहपितिमाप्नोति। यदा सेवथ्सरस्यं गृहपितिमाप्नोतिं। अर्थं सहस्रयाजिनमाप्नोति। यदा सहस्रयाजिनमाप्नोतिं॥६०॥

अर्थ गृहमेधिनंमाप्नोति। यदा गृंहमेधिनंमाप्नोति। अथाग्निर्भवति। यदाग्निर्भवंति। अथ गौर्भवति। एषा वै वैश्वदेवस्य मात्राँ। एतद्वा एतेषांमव्मम्। अतोतो वा उत्तंराणि श्रेयार्श्स भवन्ति। यद्विश्वं देवाः स्मयंजन्त। तद्वैश्वदेवस्यं वैश्वदेवत्वम्॥६१॥ अथांऽऽदित्यो वर्रण् राजानं वरुणप्रघासैरयजत। स एतं लोकमंजयत्। यस्मिन्नादित्यः। यद्वरुणप्रघासैर्यजंते। एतमेव लोकं जंयति। यस्मिन्नादित्यः। आदित्यस्यैव सायुज्यमुपैति। यदांदित्यो वर्रण् राजांनं वरुणप्रघासे-रयंजत। तद्वरुणप्रघासानां वरुणप्रघासत्वम्। अथ् सोमो राजा छन्दा रसि साकमेथेरयजत॥६२॥

स एतं लोकमंजयत्। यस्मिईश्चन्द्रमां विभाति। यथ्मांकमेधेर्यजंते। एतमेव लोकं जंयित। यस्मिईश्चन्द्रमां विभाति। चन्द्रमंस एव सायुंज्यमुपैति। सोमो वै चन्द्रमाः। एष हु त्वै साक्षाथ्योमं भक्षयित। य एवं विद्वान्थ्यांकमेधेर्यजंते। यथ्योमंश्च राजा छन्दाईसि च समैधंन्त॥६३॥

तथ्सांकम्धानार् साकमध्त्वम्। अथ्रतवंः पितरंः प्रजापंतिं पितरं पितृयज्ञेनायजन्त। त एतं लोकमंजयन्। यस्मिन्नृतवंः। यत्पितृयज्ञेन यजंते। एतमेव लोकं जंयति। यस्मिन्नृतवंः। ऋतूनामेव सायुंज्यमुपैति। यद्दतवंः पितरंः प्रजापंतिं पितरं पितृयज्ञेनायंजन्त। तत्पितृयज्ञस्यं पितृयज्ञत्वम्॥६४॥

अथौषंधय इमं देवं त्र्यंम्बकैरयजन्त प्रथेमहीतिं। ततो वै ता अप्रथन्त। य एवं विद्वा इस्त्र्यंम्बकैर्यजंते। प्रथंते प्रजयां पृश्निः। अथं वायुः पंरमेष्ठिन ई शुनासीरीयेणायजत। स पृतं लोकमंजयत्। यस्मिन्वायुः। यच्छुंनासीरीयेण यजेते। पृतमेव लोकं जेयति। यस्मिन्वायुः॥६५॥

वायोरेव सायुंज्यमुपैति। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। प्र चांतुर्मास्ययाजी मींयता (३) न प्रमींयता (३) इतिं। जीवन्वा एष ऋतूनप्येति। यदिं वसन्तां प्रमीयंते। वसन्तो भंवति। यदिं ग्रीष्मे ग्रीष्मः। यदिं वर्षासुं वर्षाः। यदिं श्रिदें श्रत्। यदि हेमंन् हेम्न्तः। ऋतुर्भूत्वा संवथ्सरमप्येति। संवथ्सरः प्रजापंतिः। प्रजापंतिर्वावैषः॥६६॥

पृरिवृथ्सुरमाँप्रोति शुनासीरीयेण यजंतेऽजयन्थ्सहस्रयाजिनंमाप्रोतिं वैश्वदेवृत्वः सांकमेधैरंयजत स्मैधंन्त पितृयज्ञृत्वं जंयति यस्मिन्वायुर्हंमृन्तस्रीणिं च॥—————[१०]

उभयें युवर सुराम्मुदंस्थान्नि वै यस्यं प्रातः सव्न एकैंकोऽसुर्यं पर्वमानः प्रजा वै सृत्रमांसताृग्निर्वाव संवथ्सरो दशं॥१०॥

उभये वा उदंस्थाथ्सर्वाभिर्मध्यतोऽत्र वाव ब्रांह्मणेष्वर्थं गृहमेधिन् षट्थ्वंष्टिः॥६६॥ उभये वा वैषः॥

## हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके चतुर्थः प्रपाठकः समाप्तः॥

#### ॥पञ्चमः प्रश्नः॥

## ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके पञ्चमः प्रपाठकः॥

अग्नेः कृत्तिकाः। शुक्रं प्रस्ताञ्च्योतिर्वस्तांत्। प्रजापंते रोहिणी। आपः प्रस्तादोषंधयोऽवस्तांत्। सोमंस्येन्वका वितंतानि। प्रस्ताद्वयंन्तोऽवस्तांत्। रुद्रस्यं बाहू। मृग्यवंः प्रस्तांद्विक्षारोऽवस्तांत्। अदित्ये पुनर्वसू। वातः परस्तांदाईमवस्तांत्॥१॥

बृह्स्पतें स्तिष्यः। जुह्वंतः प्रस्ताद्यजंमाना अवस्तांत्। सपणांमाश्रेषाः। अभ्यागच्छंन्तः प्रस्तांदभ्यानृत्यंन्तो-ऽवस्तांत्। पितृणां मघाः। रुदन्तः प्रस्तांदपश्रश्शोऽवस्तांत्। अर्यम्णः पूर्वे फल्गुंनी। जाया प्रस्तांदषभोऽवस्तांत्। भगस्योत्तरे। बृह्तवंः प्रस्ताद्वहंमाना अवस्तांत्॥२॥

देवस्यं सिवतुर्हस्तंः। प्रस्तवः प्रस्तांथ्यनिर्वस्तांत्। इन्द्रस्य चित्रा। ऋतं प्रस्तांथ्यत्यम्वस्तांत्। वायोर्निष्ठां व्रतितः। प्रस्तादिसिद्धिर्वस्तात्। इन्द्राग्नियोर्विशांखे। युगानिं प्रस्तांत्कृषमांणा अवस्तांत्। मित्रस्यांनूराधाः। अभ्यारोहंत्प्रस्तांद्भ्यारूढम्वस्तांत्॥३॥

इन्द्रंस्य रोहिणी। शृणत्परस्तांत्प्रतिशृणद्वस्तांत्। निर्ऋत्ये मूलवर्हणी। प्रतिभुञ्जन्तः पुरस्तांत्प्रतिशृणन्तो-ऽवस्तांत्। अपां पूर्वा अषाढाः। वर्चः पुरस्ताथ्सिमितिर्वस्तांत्। विश्वेषां देवानामुत्तंराः। अभिजयंत्पुरस्तांद्भिजितम्वस्तांत्। विष्णोः श्रोणा पुच्छमानाः। पुरस्तात्पन्थां अवस्तांत्॥४॥

वसूना् श्रविष्ठाः। भूतं प्रस्ताद्भृतिर्वस्तात्। इन्द्रंस्य श्रतिभेषक्। विश्वव्यंचाः प्रस्ताद्विश्वक्षितिर्वस्तात्। अजस्यैकंपदः पूर्वे प्रोष्ठपदाः। वैश्वान्तरं प्रस्ताद्वश्वावस्वम्वस्तात्। अहार्बुप्रियस्योत्तरे। अभिष्ठिश्चन्तः प्रस्तादिभिष्णवन्तोऽवस्तात्। पूष्णो रेवतीं। गावंः प्रस्ताद्वध्सा अवस्तात्। अश्विनोरश्वयुजौं। ग्रामंः प्रस्ताध्सेनाऽवस्तात्। यमस्याप्भरंणीः। अपकर्षन्तः प्रस्तादप्वहंन्तोऽवस्तात्। पूर्णा पश्चाद्यते देवा अदेधः॥५॥

आर्द्रम्वस्ताद्वहंमाना अवस्तांदुभ्यारूंढम्वस्तात्पन्थां अवस्तांद्वथ्सा अवस्तात्पश्चं च॥———[१]

यत्पुण्यं नक्षंत्रम्। तद्बद्वंवीतोपव्युषम्। यदा वै सूर्यं उदेति। अथ नक्षंत्रं नैति। यावंति तत्र सूर्यो गच्छैत्। यत्रं जघन्यं पश्यैत्। तावंति कुर्वीत यत्कारी स्यात्। पुण्याह एव कुंरुते। एव॰ ह वै यज्ञेषुं च शृतद्यंम्नं च माथ्स्यो निरवसाय्यां चंकार॥६॥

यो वै नेक्ष्रत्रियं प्रजापंतिं वेदं। उभयोरेनं लोकयोर्विदुः। हस्तं एवास्य हस्तंः। चित्रा शिरंः। निष्ठ्या हृदंयम्। ऊरू विशाखे। प्रतिष्ठाऽनूराधाः। एष वै नेक्ष्रत्रियः प्रजापंतिः। य एवं वेदं। उभयोरेनं लोकयोर्विदुः॥७॥

अस्मि इश्चामुष्मि ईश्च। यां कामयेत दुहितरं प्रिया

स्यादितिं। तां निष्ट्यांयां दद्यात्। प्रियेव भंवति। नेव तु पुन्रागंच्छति। अभिजिन्नाम् नक्षंत्रम्। उपरिष्टादषाढानांम्। अवस्तांच्छ्रोणायें। देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते देवास्तस्मिन्नक्षंत्रेऽभ्यंजयन्॥८॥

यद्भ्यजंयन्। तदंभिजितों ऽभिजित्त्वम्। यं कामयेतानप-ज्ययं जंयेदितिं। तमेतस्मिन्नक्षंत्रे यातयेत्। अनुपज्य्यमेव जयित। पापपंराजितिमव् तु। प्रजापंतिः पृशूनंसृजत। ते नक्षंत्रं नक्षत्रमुपांतिष्ठन्त। ते समावन्त पृवाभवन्। ते रेवतीमुपांतिष्ठन्त॥९॥

ते रेवत्यां प्राभवन्। तस्माँद्रेवत्यां पशूनां कुंवीत। यत्किं चाँर्वाचीन् सोमाँत्। प्रैव भवन्ति। सिल्लिं वा इदमेन्त्रासीत्। यदतंरन्। तत्तारंकाणां तारकृत्वम्। यो वा इह यजेते। अमु स लोकं नेक्षते। तन्नक्षंत्राणां नक्षत्रत्वम्॥१०॥

देवगृहा वै नक्षंत्राणि। य एवं वेदं। गृह्यंव भंवति। यानि वा इमानिं पृथिव्याश्चित्राणि। तानि नक्षंत्राणि। तस्मांदश्चीलनांमङ्श्चित्रे। नावंस्येन्न यंजेत। यथां पापाहे कुंरुते। ताद्दगेव तत्। देवनुक्षुत्राणि वा अन्यानिं॥११॥

यम्नक्षत्राण्यन्यानि। कृत्तिंकाः प्रथमम्। विशांखे उत्तमम्। तानि देवनक्षत्राणि। अनूराधाः प्रथमम्। अपुभरंणीरुत्तमम्। तानि यमनक्षत्राणि। यानि देवनक्षत्राणि। तानि दक्षिणेन्

### परियन्ति। यानि यमनक्षत्राणि॥१२॥

तान्युत्तरेण। अन्वेषामराथ्स्मेतिं। तदंनूराधाः। ज्येष्ठमेषामविध्यमेतिं। तज्ञ्येष्ठघ्नी। मूलंमेषामवृक्षामेतिं। तन्मूलवर्हणी। यन्नासंहन्त। तदंषाढाः। यदश्लोणत्॥१३॥

तच्छ्रोणा। यदर्शणोत्। तच्छ्रविष्ठाः। यच्छ्तमभिषज्यन्। तच्छ्रतभिषक्। प्रोष्ठपदेषूदंयच्छन्त। रेवत्यांमरवन्त। अश्वयुजोरयुञ्जत। अपभरणीष्वपांवहन्। तानि वा एतानि यमनक्ष्त्राणि। यान्येव देवनक्ष्त्राणि। तेषुं कुर्वीत यत्का्री स्यात्। पुण्याह एव कुंरुते॥१४॥

चुकारै्वं वेदोभयोरेनं लोकयोविद्रजयत्रेवतीमुपातिष्ठन्त नक्षत्रत्वमुन्यानि यानि यमनक्षत्राण्यश्लोणद्यम-

नक्षुत्राणि त्रीणि च॥\_\_\_\_\_

[2]

देवस्यं सिवतुः प्रातः प्रस्वः प्राणः। वरुणस्य सायमांस्वो-ऽपानः। यत्प्रंतीचीनं प्रात्स्तनात्। प्राचीनर् सङ्गवात्। ततो देवा अग्निष्टोमं निरंमिमत। तत्तदात्तंवीयं निर्मार्गः। मित्रस्यं सङ्गवः। तत्पुण्यं तेज्स्व्यहंः। तस्मात्तर्हि पृशवंः समायंन्ति। यत्प्रंतीचीनर् सङ्गवात्॥१५॥

प्राचीनं मध्यं दिनात्। ततो देवा उक्थ्यं निरंमिमत। तत्तदात्तंवीर्यं निर्मार्गः। बृह्स्पतेंर्मध्यं दिनः। तत्पुण्यं तेज्स्व्यहंः। तस्मात्तर्ह् तेक्ष्णिष्ठं तपति। यत्प्रंतीचीनं मध्यं दिनात्। प्राचीनंमपराह्णात्। ततो देवाः षोडशिनं निरंमिमत।

## तत्तदात्तंवीयं निर्मार्गः॥१६॥

भगंस्यापराह्नः। तत्पुण्यं तेज्रस्व्यहंः। तस्मांदपराह्ने कुंमार्यो भगंमिच्छमांनाश्चरन्ति। यत्प्रंतीचीनंमपराह्नात्। प्राचीन सायात्। ततो देवा अंतिरात्रं निरंमिमत। तत्तदात्तंवीर्यं निर्मार्गः। वर्रुणस्य सायम्। तत्पुण्यं तेज्रस्व्यहंः। तस्मात्तर्हि नानृतं वदेत्॥१७॥

ब्राह्मणो वा अष्टाविष्शो नक्षंत्राणाम्। समानस्याहुः पश्च पुण्यांनि नक्षंत्राणि। चत्वार्यक्षीलानि। तानि नवं। यचे प्रस्तान्नक्षंत्राणां यचावस्तांत्। तान्येकांदश। ब्राह्मणो द्वांदशः। य एवं विद्वान्थ्यंवथ्यरं व्रतं चरित। संवथ्यरेणैवास्यं व्रतं गुप्तं भवति। समानस्याहुः पश्च पुण्यांनि नक्षंत्राणि। चत्वार्यक्षीलानि। तानि नवं। आग्नेयी रात्रिः। ऐन्द्रमहंः। तान्येकांदश। आदित्यो द्वांदशः। य एवं विद्वान्थ्यंवथ्यरं व्रतं चरित। संवथ्यरेणैवास्यं व्रतं गुप्तं भवति॥१८॥

ब्रह्मवादिनों वदन्ति। कित् पात्राणि यज्ञं वंहुन्तीतिं। त्रयोद्शेतिं ब्रूयात्। स यद्भूयात्। कस्तानि निरंमिमीतेतिं। प्रजापंतिरितिं ब्रूयात्। स यद्भूयात्। कुत्स्तानि निरंमिमीतेतिं। आत्मन इतिं। प्राणापानाभ्यांमेवोपाई-

### श्वन्तर्यामौ निरंमिमीत॥१९॥

व्यानादंपा श्रासवंनम्। वाच ऐन्द्रवायवम्। दुक्षुक्रतुभ्यां मैत्रावरुणम्। श्रोत्रांदाश्विनम्। चक्षुंषः शुक्रामृन्थिनौ। आत्मनं आग्रयणम्। अङ्गेभ्य उक्थ्यम्। आयुंषो ध्रुवम्। प्रतिष्ठायां ऋतुपात्रे। यृज्ञं वाव तं प्रजापंतिर्निरंमिमीत। स निर्मितो नाद्धियत् समंह्रीयत्। स पृतान्य्रजापंतिरिपवापानंपश्यत्। तां निरंवपत्। तैर्वे स यृज्ञमप्यंवपत्। यदंपिवापा भवन्ति। यृज्ञस्य धृत्या असंंह्रयाय॥२०॥

ऋतमेव पंरमेष्ठि। ऋतं नात्येति किश्चन। ऋते संमुद्र आहितः। ऋते भूमिरियङ्श्रिता। अग्निस्तिग्मेनं शोचिषां। तप् आक्रान्तमुष्णिहां। शिर्स्तप्स्याहितम्। वैश्वान्रस्य तेजंसा। ऋतेनांस्य नि वर्तये। सत्येन परि वर्तये। तपंसाऽस्यानुं वर्तये। शिवेनास्योपं वर्तये। शुग्मेनांस्याभि वर्तये। तद्दतं तथ्सत्यम्। तद्वतं तच्छंकेयम्। तेनं शकेयं तेनं राध्यासम्॥२१॥

यद्घर्मः पूर्यवंतयत्। अन्तांन्पृथिव्या दिवः। अग्निरीशांन् ओजंसा। वरुणो धीतिभिः सह। इन्द्रों मुरुद्धिः सर्खिभिः सह। अग्निस्तिग्मेनं शोचिषां। तप् आक्रांन्तमुष्णिहां। शिर्स्तप्स्याहितम्। वैश्वान्रस्य तेजंसा। ऋतेनांस्य नि वंतये। सत्येन परिं वर्तये। तपंसाऽस्यानुं वर्तये।

शिवेनास्योपं वर्तये। शुग्मेनांस्याभि वंर्तये। तद्दतं तथ्सत्यम्। तद्वृतं तच्छंकेयम्। तेनं शकेयं तेनं राध्यासम्॥२२॥

यो अस्याः पृंथिव्यास्त्वचि। निवर्तयत्योषंधीः। अग्निरीशांन् ओजंसा। वर्रुणो धीतिभिः सह। इन्द्रों मुरुद्धिः सर्खिभिः सह। अग्निस्तिग्मेनं शोचिषां। तप आक्रांन्तमुष्णिहां। शिर्स्तप्स्याहितम्। वैश्वान्रस्य तेजंसा। ऋतेनांस्य नि वर्तये। सत्येन् पिरं वर्तये। तपंसाऽस्यानुं वर्तये। शिवेनास्योपं वर्तये। शग्मेनांस्याभि वर्तये। तद्दतं तथ्सत्यम्। तद्दतं तच्छंकेयम्। तेनं शकेयं तेनं राध्यासम्॥२३॥

एकं मास्मुदंसृजत्। प्रमेष्ठी प्रजाभ्यः। तेनाभ्यो मह् आवंहत्। अमृतं मर्त्याभ्यः। प्रजामनु प्र जांयसे। तदुं ते मर्त्यामृतम्। येन मासां अर्धमासाः। ऋतवः परिवथ्सरः। येन ते ते प्रजापते। ईजानस्य न्यवंत्यन्। तेनाहमस्य ब्रह्मणा। निवंत्यामि जीवसे अग्निस्तिग्मेनं शोचिषां। तप् आक्रान्तमृष्णिहां। शिर्स्तप्स्याहितम्। वैश्वानरस्य तेजंसा। ऋतेनांस्य नि वंत्ये। सत्येन परि वर्तये। तपंसाऽस्यानुं वर्तये। शिवनास्योपं वर्तये। शुग्मेनांस्याभि वंत्ये। तद्तं तथ्सत्यम्। तद्वतं तच्छंकेयम्। तेनं शकेयं तेनं राध्यासम्॥२४॥

परिवर्तये स्हाभिवर्तय उष्णिहां राध्यास्ं न्यवर्तयृत्रुपंवर्तये चृत्वारिं च। (ऋतमेव षोडंश। यद्धर्मो यो अस्याः सप्तदंशसप्तदश। एकं मास्ं चतुर्वि १शितः)॥—————[५]

देवा वै यद्यज्ञेऽकुंर्वत। तदसुंरा अकुर्वत। तेऽसुंरा ऊर्ध्वं पृष्ठेभ्यो नापंश्यन्। ते केशानग्रेऽवपन्त। अथ् श्मश्रूणि। अथोपपृक्षौ। तत्स्तेऽवांश्च आयन्। परांऽभवन्। यस्यैवं वपंन्ति। अवांङेति॥२५॥

अथो परैव भेवति। अथं देवा ऊर्ध्वं पृष्ठेभ्योऽपश्यन्। त उपपृक्षावग्रेऽवपन्त। अथ् श्मश्रृंणि। अथ् केशान्। तत्स्ते-ऽभवन्। सुवर्गं लोकमायन्। यस्यैवं वपन्ति। भवंत्यात्मना। अथो सुवर्गं लोकमेति॥२६॥

अथैतन्मनुंर्वित्रे मिंथुनमंपश्यत्। स श्मश्रूण्यग्रेऽवपतः। अथोपपक्षौ। अथ् केशान्। ततो वै स प्राजायत प्रजयां पृश्भिः। यस्यैवं वपंन्ति। प्र प्रजयां पृश्भिर्मिथुनैर्जायते। देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते संवथ्सरे व्यायंच्छन्त। तान्देवाश्चांतुर्मास्यैरेवाभि प्रायुंञ्जत॥२७॥

वैश्वदेवेनं चतुरों मासोंऽवृञ्जतेन्द्रंराजानः। ताञ्छीर्षं नि चावंतियन्त परि च। वृरुणप्रघासेश्चतुरों मासोंऽवृञ्जत् वर्रुणराजानः। ताञ्छीर्षं नि चावंतियन्त परि च। साकमेधेश्चतुरों मासोंऽवृञ्जत सोमंराजानः। ताञ्छीर्षं नि चावंतियन्त परि च। या संवथ्सर उंपजीवाऽऽसींत्। तामेषामवृञ्जत। ततों देवा अभंवन्। पराऽसुंराः॥२८॥

य एवं विद्वाः श्चांतुर्मास्यैर्यजंते। भ्रातृंव्यस्यैव मासो वृक्ता।

शीर्षं नि चं वर्तयंते परि च। यैषा संवथ्सर उंपजीवा। वृङ्के तां भ्रातृंव्यस्य। क्षुधाऽस्य भ्रातृंव्यः पर्गं भवति। लोहितायसेन नि वंर्तयते। यद्वा इमाम्भिर्ऋतावागंते निवर्तयति। एतदेवैना र्रं रूपं कृत्वा निवर्तयति। सा ततः श्वश्वो भूयंसी भवन्त्येति॥२९॥

प्र जांयते। य एवं विद्वाँ होहितायसेनं निवर्तयंते। एतदेव रूपं कृत्वा नि वर्तयते। स ततः श्वश्वो भूयान्भवन्नेति। प्रैव जांयते। त्रेण्या शंलुल्या नि वर्तयेत। त्रीणि त्रीणि वै देवानां मृद्धानि। त्रीणि छन्दा रेसि। त्रीणि सर्वनानि। त्रयं इमे लोकाः॥३०॥

ऋध्यामेव तद्वीर्यं पृषु लोकेषु प्रतिं तिष्ठति। यचांतुर्मास्य-याज्यांत्मनो नावद्येत्। देवेभ्य आवृंश्च्येत। चृतृषु चंतृषु मासेषु नि वर्तयेत। प्रोक्षंमेव तद्देवेभ्यं आत्मनोऽवंद्यत्यनांत्रस्काय। देवानां वा एष आनीतः। यश्चांतुर्मास्ययाजी। य एवं विद्वान्नि चं वर्तयंते परिं च। देवतां एवाप्येति। नास्यं रुद्रः प्रजां पृश्निभ मन्यते॥३१॥

पुत्येत्ययुञ्जतासुंरा एति लोका मन्यते॥————[६]

आयुंषः प्राणः सन्तंनु। प्राणादंपानः सन्तंनु। अपानाद्यानः सन्तंनु। व्यानाचक्षुः सन्तंनु। चक्षुंषः श्रोत्रः सन्तंनु। श्रोत्रान्मनः सन्तंनु। मर्नसो वाच् सन्तंनु। वाच आत्मान् सन्तंनु। आत्मनंः पृथिवीः सन्तंनु। पृथिव्या अन्तरिक्षर् सन्तंन्। अन्तरिक्षाद्दिवर् सन्तंन्। दिवः सुवः सन्तंनु॥३२॥

इन्द्रों दधीचो अस्थिभिः। वृत्राण्यप्रतिष्कुतः। ज्ञ्घानं नवतीर्नवं। इच्छन्नश्वंस्य यच्छिरंः। पर्वतेष्वपंश्रितम्। तिद्वंदच्छर्यणावंति। अत्राह् गोरमंन्वत। नाम् त्वष्टुंरपीच्यम्। इत्था चन्द्रमंसो गृहे। इन्द्रमिद्गाथिनों बृहत्॥३३॥

इन्द्रंमकेंभिर्किणः। इन्द्रं वाणीरनूषत। इन्द्रं इद्धर्योः सचाँ। सम्मिश्च आवंचो युजाँ। इन्द्रों वृज्जी हिर्ण्ययः। इन्द्रों दीर्घाय चक्षंसे। आ सूर्य रोहयद्दिवि। वि गोभिरद्रिमैरयत्। इन्द्रं वार्जेषु नो अव। सहस्रंप्रधनेषु च॥३४॥

उग्र उग्राभिंक्तिभिः। तिमन्द्रं वाजयामिस। महे वृत्राय हन्तेवे। स वृषां वृष्भो भुंवत्। इन्द्रः स दामेने कृतः। ओजिष्टः स बलें हितः। द्युम्नी श्लोकी स सौम्यः। गिरा वज्रो न सम्भृतः। सर्बलो अनंपच्युतः। वृवृक्षुरुग्रो अस्तृतः॥३५॥

बृहचास्तृंतः॥———[८]

देवासुराः संयंत्ता आसन्। स प्रजापंतिरिन्द्रं ज्येष्ठं पुत्रमप् न्यंधत्तः। नेदेनमसुरा बलीया श्सोऽहन् न्नितिं। प्रह्नादों हु वै कायाधवः। विरोचन् श्रुस्वं पुत्रमप् न्यंधत्तः। नेदेनं देवा अहन् न्नितिं। ते देवाः प्रजापंतिमुपसुमेत्यों चुः। नाराजकंस्य युद्धमंस्ति। इन्द्रमन्विंच्छामेति। तं यंज्ञऋतुभिरन्वैंच्छन्॥३६॥

तं यंज्ञकृतुभिर्नान्वंविन्दन्। तमिष्टिंभिरन्वैच्छन्। तमिष्टिंभिरन्वंविन्दन्। तदिष्टींनामिष्टित्वम्। एष्टंयो ह् वै नाम्। ता इष्टंय इत्याचंक्षते प्रोक्षेण। प्रोक्षंप्रिया इव हि देवाः। तस्मां एतमांग्रावैष्ण्वमेकांदशकपालं दीक्षणीयं निरंवपन्। तदंपद्रुत्यांतन्वत। तान्पंत्रीसंयाजान्त उपानयन्॥३७॥

ते तदंन्तम्व कृत्वोदंद्रवन्। ते प्रांयणीयंम्भि स्मारोहन्। तदंपद्रुत्यांतन्वत। ताञ्छ्य्यंन्त उपांनयन्। ते तदंन्तम्व कृत्वोदंद्रवन्। त आंतिथ्यम्भि स्मारोहन्। तदंपद्रुत्यांतन्वत। तानिडान्त उपांनयन्। ते तदंन्तम्व कृत्वोदंद्रवन्। तस्मादेता एतदंन्ता इष्टंयः सन्तिष्ठन्ते॥३८॥

पुव हि देवा अर्कुर्वत। इति देवा अंकुर्वत। इत्यु वै मंनुष्याः कुर्वते। ते देवा ऊंचुः। यद्वा इदमुचैर्यज्ञेन चराम। तन्नोऽसुराः पाप्माऽनुविन्दन्ति। उपा शूप्यसदां चराम। तथा नोऽसुराः पाप्मा नानुवेथ्स्यन्तीति। त उपा शूप्यसदंमतन्वत। तिस्र एव सांमिधेनीर्नूच्यं॥३९॥

स्रुवेणांघारमाघार्य। तिस्रः परांचीराहुंतीर्हुत्वा। स्रुवेणोंप्सदं जुह्वां चंक्रः। उग्रं वचो अपांवधीन्त्वेषं वचो अपांवधी इस्वाहेतिं। अशन्यापिपासे ह वा उग्रं वचेः। एनंश्च वैरहत्यं च त्वेषं वर्चः। एतः ह् वाव तर्चतुर्धाविहितं पाप्मानं देवा अपंजिघ्निरे। तथों एवैतदेवंविद्यजमानः। तिस्र एव सामिधेनीरनूच्यं। स्रुवेणांघारमाघार्यं॥४०॥

तिस्रः परांचीराहुंतीर्हुत्वा। स्रुवेणोप्सदं जुहोति। उग्रं वचो अपांवधीन्त्वेषं वचो अपांवधी्र् स्वाहेति। अश्नम्यापिपासे ह् वा उग्रं वचः। एनंश्च वैरहत्यं च त्वेषं वचः। एतमेव तचंतुर्धाविहितं पाप्मानं यजमानोऽपं हते। तेऽिमनीयैवाहंः पृशुमाऽलंभन्त। अहं एव तद्देवा अवंर्तिं पाप्मानं मृत्युमपंजिघ्नरे। तेनांिभनीयेव रात्रेः प्राचंरन्। रात्रिया एव तद्देवा अवंर्तिं पाप्मानं मृत्युमपंजिघ्नरे॥४१॥

तस्मांदिभ्नीयैवाहंः पृशुमा लंभेत। अहं एव तद्यजंमानो-ऽवंतिं पाप्मानं भ्रातृंव्यानपं नुदते। तेनांभिनीयेव रात्रेः प्रचंरेत्। रात्रिया एव तद्यजंमानोऽवंतिं पाप्मानं भ्रातृंव्यानपं नुदते। स एष उपवस्थीयेऽहं द्विदेवृत्यः पृशुरा लंभ्यते। द्वयं वा अस्मिँ ह्लोके यर्जमानः। अस्थि च मा १ सं चं। अस्थि चैव तेनं मा १ सं च यर्जमानः स १ स्कुंरुते। ता वा एताः पश्चं देवताः। अग्नीषोमांवृग्निर्मित्रावरुंणौ॥४२॥

पृञ्जपृञ्जी वै यर्जमानः। त्वङ्गार्सः स्नावाऽस्थिं मृज्जा। पृतमेव तत्पेश्चधाविहितमात्मानं वरुणपाशान्मुंश्चति। भेषुजतांयै निर्वरुणत्वायं। तर सप्तिभिश्छन्दोंभिः प्रातरंह्वयन्। तस्माँथ्मप्त चंतुरुत्तराणि छन्दार्श्स प्रातरनुवाकेऽनूँच्यन्ते। तमेतयोपसमेत्योपांसीदन्। उपांस्मै गायता नर् इतिं। तस्मादेतयां बहिष्पवमान उपसद्यः॥४३॥

ऐच्छुत्रन्य्र्स्तिष्ठन्तेऽनूच्यान्च्यं स्रुवेणांघारमाघार्य् रात्रिया एव तद्देवा अवंतिं पाप्मानं मृत्युमपंजिष्ठरे मित्रावर्रुणौ नवं च (देवा यजंमानो देवा देवा यजंमानो यजंमानः प्राचेर्यं प्रचेरेदालंभुनतालंभेत मृत्युमपंजिष्ठिरे भ्रातृंच्यान्॥)॥———[९]

स संमुद्र उत्तर्तः प्राज्वेलद्भूम्यन्तेनं। एष वाव स संमुद्रः। यच्चात्वांलः। एष उवेव स भूम्यन्तः। यद्वेद्यन्तः। तदेतित्रिंशलं त्रिंपूरुषम्। तस्मात्तं त्रिंवितस्तं खेनन्ति। स सुंवर्णरज्ञताभ्यां कुशीभ्यां परिगृहीत आसीत्। तं यदस्या अध्यजनंयन्। तस्मादादित्यः॥४४॥

अथ् यथ्सुंवर्णरज्ञताभ्यां कुशीभ्यां परिगृहीत् आसींत्। साऽस्यं कौशिकतां। तं त्रिवृताऽभि प्रास्तुंवत। तं त्रिवृताऽदंदत। तं त्रिवृताऽहंरन्। यावंती त्रिवृतो मात्रां। तं पंश्रद्शेनाभि प्रास्तुंवत। तं पंश्रद्शेनादंदत। तं पंश्रद्शेनाहंरन्। यावंती पश्रद्शस्य मात्रां॥४५॥

त १ संप्तद्शेनाभि प्रास्तुंवत। त १ संप्तद्शेनादंदत। त १ संप्तद्शेनाहं रन्। यावंती सप्तद्शस्य मात्रां। तस्यं सप्तद्शेनं हियमांणस्य तेजो हरों ऽपतत्। तमें कि वि १ शेनाभि प्रास्तुंवत। तमें कि वि १ शेनादंदत। तमें कि वि १ शेनाहं रन्। यावंत्येकि वि १ शस्य मात्रां। ते यित्रवृतां स्तुवतं॥ ४६॥

त्रिवृतेव तद्यजंमान्मादंदते। तं त्रिवृतेव हंरन्ति। यावंती त्रिवृतो मात्रां। अग्निर्वे त्रिवृत्। यावद्वा अग्नेदंहंतो धूम उदेत्यानु व्येतिं। तावंती त्रिवृतो मात्रां। अग्नेरेवैनं तत्। मात्रा सायंज्य सलोकतां गमयन्ति। अथ यत्पंश्रदृशेनं स्तुवतें। पृश्रदृशेनैव तद्यजंमान्मादंदते॥४७॥

तं पंश्चद्रशेनै्व हंरन्ति। यावंती पश्चद्रशस्य मात्रां। चन्द्रमा वै पंश्चद्रशः। एष हि पंश्चद्रश्यामंपक्षीयतें। पृश्चद्रश्यामांपूर्यतें। चन्द्रमंस एवेनं तत्। मात्रा सायुंज्य सलोकतांं गमयन्ति। अथ यथ्संप्तद्रशेनं स्तुवतें। स्प्तद्रशेनै्व तद्यजंमान्मादंदते। तर संप्तद्रशेनै्व हंरन्ति॥४८॥

यावंती सप्तद्शस्य मात्रां। प्रजापंतिर्वे संप्तद्शः। प्रजापंतिरेवेनं तत्। मात्राष्ट्र सायुंज्य सलोकतां गमयन्ति। अथ यदंकिविष्शेनं स्तुवतें। एकविष्शेनेव तद्यजंमान्मादंदते। तमेंकिविष्शेनेव हंरन्ति। यावंत्येक-विष्शस्य मात्रां। असो वा आंदित्य एंकिविष्शः। आदित्यस्यैवेनं तत्॥४९॥

मात्रा सायुंज्य सलोकतां गमयन्ति। ते कुश्यौं। व्यंघ्रन्। ते अंहोरात्रे अंभवताम्। अहंरेव सुवर्णांऽभवत्। रज्ञता रात्रिः। स यदांदित्य उदेतिं। एतामेव तथ्सुवर्णां कुशीमनु समेति। अथु यदस्तमेतिं। एतामेव तद्रज्ञतां कुशीमनुसंविंशति। प्रहादों हु वै कांयाधवः। विरोचंन् ड्रं स्वं पुत्रमुदौस्यत्। स प्रंदरोऽभवत्। तस्मौत्प्रद्रादुंदकं नाचांमेत्॥५०॥

आदित्यः पंश्रद्शस्य मात्रां स्तुवतं पश्रद्शेनेव तद्यजंमान्मादंदते सप्तद्शेनेव हंरन्त्यादित्यस्यैवेनं तिर्द्वेशित चृत्वारि च॥—————————————————————[१०]

ये वै चृत्वारः स्तोमाः। कृतं तत्। अथ् ये पश्चं। किलः सः। तस्माचतुंष्टोमः। तचतुंष्टोमस्य चतुष्टोमृत्वम्। तदांहुः। कृतमानि तानि ज्योती रेषि। य एतस्य स्तोमा इतिं। त्रिवृत्पंश्चद्रशः संप्तद्रश एंकविर्शः॥५१॥

पुतानि वाव तानि ज्योती १षि। य पुतस्य स्तोमाः। सौंऽब्रवीत्। सप्तद्शेनं ह्नियमांणो व्यंलेशिषि। भिषज्यंत मेतिं। तमिश्वनौ धानाभिरभिषज्यताम्। पूषा कंरम्भेणं। भारती परिवापेणं। मित्रावरुंणौ पयस्यंया। तदांहुः॥५२॥

यदिश्वभ्यां धानाः। पूष्णः कर्मभः। भारत्ये परिवापः। मित्रावरुणयोः पयस्याऽथं। कस्मादेतेषा हिवषामिन्द्रमेव यंजन्तीति। एता होनं देवता इति ब्रूयात्। एतैर्ह्विर्भि-रभिषज्य इस्तस्मादिति। तं वस्वोऽष्टाकपालेन प्रातः सवने-ऽभिषज्यन्। रुद्रा एकादशकपालेन मार्ध्यं दिने सवने। विश्वे देवा द्वादंशकपालेन तृतीयसवने॥५३॥

स यद्ष्टाकंपालान्प्रातः सव्ने कुर्यात्। एकांदश-

कपालान्माध्यं दिने सर्वने। द्वादंशकपालाङ्स्तृतीयसवने। विलोम् तद्यज्ञस्यं क्रियेत। एकांदशकपालानेव प्रांतः सवने कुर्यात्। एकांदशकपालान्माध्यं दिने सर्वने। एकांदशकपालाङ्स्तृतीयसवने। यज्ञस्यं सलोमृत्वायं। तदांहुः। यद्वसूनां प्रातः सवनम्। रुद्राणां माध्यं दिनुष् सर्वनम्। विश्वेषां देवानां तृतीयसवनम्। अथ् कस्मादितेषाष् रृतिरहिविर्भिरभिषज्यङ्स्तस्मादितिं॥५४॥

एक्वि॰्श आंहुस्तृतीयसव्ने प्रांतः सव्नं पश्चं च॥\_\_\_\_\_[११]

तस्यावांचोऽवपादादंबिभयुः। तमेतेषुं सप्तसु छन्दंः स्वश्रयन्। यदश्रंयन्। तच्छ्रांयन्तीयंस्य श्रायन्तीयृत्वम्। यदवारयन्। तद्वारवन्तीयंस्य वारवन्तीयृत्वम्। तस्यावांच पृवावंपादादंबिभयुः। तस्मां पृतानिं सप्त चंतुरुत्तराणि छन्दाङ्स्युपांदधुः। तेषामित् त्रीण्यंरिच्यन्त। न त्रीण्युदं-भवन्॥५५॥

स बृंहतीमेवास्पृंशत्। द्वाभ्यांमक्षरांभ्याम्। अहोरात्राभ्यांमेव। तदांहुः। कृतमा सा देवाक्षंरा बृहती। यस्यान्तत्प्रत्यतिष्ठत्। द्वादंश पौर्णमास्यः। द्वादृशाष्टंकाः। द्वादंशामावास्याः। एषा वाव सा देवाक्षंरा बृहती॥५६॥

यस्यान्तत्प्रत्यतिष्ठदिति। यानि च छन्दा ईस्यत्यरिच्यन्त। यानि च नोदभंवन्। तानि निर्वीर्याणि हीनान्यंमन्यन्त। साऽब्रंबीद्वृह्ती। मामेव भूत्वा। मामुप् सङ्श्रंयतेतिं। चतुर्भिरक्षरैरनुष्टुग्बृंहृतीं नोदंभवत्। चतुर्भिरक्षरैं: पुङ्किर्बृहृती-मत्यंरिच्यत। तस्यांमेतानिं चत्वार्यक्षरांण्यपच्छिद्यां-दधात्॥५७॥

ते बृंह्ती एव भूत्वा। बृह्तीमुप् समंश्रयताम्। अष्टाभि-रक्षरैरुष्णिग्बृंह्तीं नोदंभवत्। अष्टाभिरक्षरैष्ग्रिष्टुग्बृंह्तीमत्यं-रिच्यत। तस्यांमेतान्यष्टावृक्षराण्यप्च्छिद्यांदधात्। ते बृंह्ती एव भूत्वा। बृह्तीमुप् समंश्रयताम्। द्वाद्शभिरक्षरैर्गायत्री बृंह्तीं नोदंभवत्। द्वाद्शभिरक्षरैर्जगंती बृह्तीमत्यंरिच्यत। तस्यांमेतानि द्वादंशाक्षराण्यपच्छिद्यांदधात्॥५८॥

ते बृंह्ती एव भूत्वा। बृह्तीमुप् समंश्रयताम्। सौंऽब्रवीत्प्रजापंतिः। छन्दार्शस् रथों मे भवत। युष्माभिर्हमेतमध्वांनमनु सश्चराणीतिं। तस्यं गायत्री च जगंती च पृक्षावंभवताम्। उष्णिक्कं त्रिष्टुप्च प्रष्ट्यौं। अनुष्टुप्चं पृङ्किश्च ध्रयौं। बृह्त्येवोद्धिरंभवत्। स एतं छन्दोर्थमास्थायं। एतमध्वांनमनु समंचरत्। एतर ह् वे छन्दोर्थमास्थायं। एतमध्वांनमनु सश्चरित। येनैष एतथ्सश्चरित। य एवं विद्वान्थ्सोमेन यजंते। य उं चैनमेवं वेदं॥५९॥

अभ्वन्वाव सा देवाक्षंरा बृह्त्यंदधाद्वादंशाक्षरांण्यपच्छिद्यांदधादास्थाय षद्वं॥———[१२]

अग्नेः कृत्तिंका यत्पुण्यं देवस्यं सिवृतुर्ब्रह्मवादिनः कत्यृतमेव देवा वा आयुंषः प्राणिमन्द्रों दधीचो देवासुराः स प्रजापितिः स समुद्रो ये वै चत्वार्स्तस्यावांचो द्वादंश॥१२॥

अग्नेः कृत्तिका देवगृहा ऋतमेवर्ध्यामेव तिस्रः परांचीर्ये वै चत्वारो नवंपश्चाशत्॥५९॥ अग्नेः कृत्तिका य उं चैनमेवं वेदं॥

# हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके पश्चमः प्रपाठकः समाप्तः॥

#### ॥षष्ठमः प्रश्नः॥

#### ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके षष्टः प्रपाठकः॥

अनुंमत्यै पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निर्वपति। ये प्रत्यश्चः शम्याया अवशीयन्ते। तन्नैर्ऋतमेकंकपालम्। इयं वा अनुंमितः। इयं निर्ऋतिः। नैर्ऋतेन् पूर्वेण प्रचंरति। पाप्मानंमेव निर्ऋतिं पूर्वां निरवंदयते। एकंकपालो भवति। एक्थेव निर्ऋतिं निरवंदयते। यदहुंत्वा गार्हंपत्य ईयुः॥१॥

रुद्रो भूत्वाऽग्निरंनूत्थायं। अध्वर्यं च यजंमानं च हन्यात्। वीहि स्वाहाऽऽहुंतिं जुषाण इत्याह। आहुंत्यैवैन र्श्वमयति। नार्तिमार्च्छंत्यध्वर्युर्न यजंमानः। एकोल्मुकेनं यन्ति। तिद्ध निर्ऋत्यै भाग्धेयम्। इमान्दिशं यन्ति। एषा वै निर्ऋत्यै दिक्। स्वायांमेव दिशि निर्ऋतिं निरवंदयते॥२॥

स्वकृंत इरिणे जुहोति प्रद्रे वाँ। एतद्वै निर्ऋंत्या आयतंनम्। स्व एवायतंने निर्ऋंतिं निरवंदयते। एष ते निर्ऋते भाग इत्यांह। निर्दिशत्येवैनांम्। भूतें ह्विष्मंत्यसीत्यांह। भूतिंमे्वोपावंतिते। मुश्चेमम॰हंस् इत्यांह। अ॰हंस एवैनंं मुश्चति। अङ्गुष्ठाभ्यां जुहोति॥३॥

अन्तत एव निर्ऋतिं निरवंदयते। कृष्णं वासंः कृष्णतूंषं दक्षिणा। एतद्वै निर्ऋत्यै रूपम्। रूपेणैव निर्ऋतिं निरवंदयते। अप्रतिक्षमायंन्ति। निर्ऋत्या अन्तर्हित्यै। स्वाहा नमो य इदं चुकारेति पुन्रेत्य गार्हंपत्ये जुहोति। आहुंत्यैव नंमस्यन्तो गार्हंपत्यमुपावर्तन्ते। आनुमतेन प्रचरित। इयं वा अनुमितिः॥४॥

इयमेवास्मै राज्यमन् मन्यते। धेनुर्दक्षिणा। इमामेव धेनुं कुंरुते। आदित्यं चुरुं निर्वपति। उभयीष्वेव प्रजास्वभिषिंच्यते। दैवीषु च मानुषीषु च। वरो दक्षिणा। वरो हि राज्यः समृद्धौ। आग्नावैष्णवमेकादशकपालं निर्वपति। अग्निः सर्वा देवताः॥५॥

विष्णुंर्यज्ञः। देवताँश्चेव यज्ञं चार्व रुन्थे। वामनो वही दक्षिणा। यद्वही। तेनाँग्नेयः। यद्वांमुनः। तेनं वैष्णुवः समृद्धे। अग्नीषोमीयमेकांदशकपालं निर्वपति। अग्नीषोमाँभ्यां वा इन्द्रों वृत्रमंहन्नितिं। यदंग्नीषोमीयमेकांदशकपालं निर्वपति॥६॥

वार्त्रप्रमेव विजित्यै। हिरंण्यं दक्षिणा समृद्धौ। इन्द्रों वृत्र हत्वा। देवतांभिश्चेन्द्रियेणं च व्यार्ध्यत। स एतमैंन्द्राग्रमेकांदशकपालमपश्यत्। तिन्नरंवपत्। तेन् वै स देवतांश्चेन्द्रियं चावांरुन्ध। यदैंन्द्राग्रमेकांदशकपालं निर्वपंति। देवतांश्चेव तेनेंन्द्रियं च यजंमानोऽवं रुन्धे। ऋष्मो वही दक्षिणा॥७॥

यद्वही। तेनांभ्रेयः। यदंष्भः। तेनैन्द्रः समृंख्यै।

आ्रियम्ष्टाकंपालं निर्वपति। ऐन्द्रं दिथे। यदाँश्वेयो भवंति। अ्ग्निर्वे यंज्ञमुखम्। य्ज्ञमुखम्विर्द्धं पुरस्ताँद्धत्ते। यदैन्द्रं दिथे॥८॥

ड्रन्द्रियमेवावं रुन्थे। ऋष्भो वृही दक्षिणा। यद्वही। तेनांग्नेयः। यदंष्भः। तेनैन्द्रः समृद्धै। यावंतीर्वे प्रजा ओषंधीनामहुंतानामाश्जन्। ताः परांऽभवन्। आग्रयणं भंवति हुताद्यांय। यजंमानुस्यापंराभावाय॥९॥

देवा वा ओषंधीष्वाजिमंयुः। ता इंन्द्राग्नी उदंजयताम्। तावेतमैंन्द्राग्नं द्वादंशकपालं निरंवृणाताम्। यदैंन्द्राग्नो भवत्युज्जित्ये। द्वादंशकपालो भवति। द्वादंश् मासाः संवथ्मरः। संवथ्मरेणैवास्मा अन्नमवं रुन्थे। वैश्वदेव-श्वरुर्भवति। वैश्वदेवं वा अन्नम्ं। अन्नमेवास्मैं स्वदयति॥१०॥

प्रथम्जो वथ्सो दक्षिणा समृद्धे। सौम्य श्यांमाकं च्रं निर्वपति। सोमो वा अंकृष्टपच्यस्य राजां। अकृष्टपच्यमेवास्में स्वदयति। वासो दक्षिणा। सौम्य हि देवत्या वासः समृद्धे। सरंस्वत्ये च्रं निर्वपति। सरंस्वते च्रम्। मिथुनमेवावं रुन्थे। मिथुनौ गावौ दक्षिणा समृद्धे। एति वा एष यंज्ञमुखाद्दध्याः। योंऽग्नेर्देवतांया एतिं। अष्टावेतानिं ह्वी १षिं भवन्ति। अष्टाक्षंरा गायत्री। गायत्रोंऽग्निः। तेनैव यंज्ञमुखाद्दध्यां अग्नेर्देवतांयै नैतिं॥११॥

र्ड्युर्निरवंदयतेऽङ्गुष्ठाभ्यां जुहोत्यनुंमितर्देवतां निर्वपंति वही दक्षिणा यदैन्द्रं दध्यपंराभावाय स्वदयति गावौ दक्षिणा समृंद्धौ षद्वं॥————[१]

वैश्वदेवेन वै प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। ताः सृष्टा न प्राजायन्त। सौंऽग्निरंकामयत। अहमिमाः प्रजनयेयमितिं। स प्रजापंतये शुचंमदधात्। सोंऽशोचत्प्रजामिच्छमानः। तस्माद्यं चं प्रजा भुनिक्त यं च न। तावुभौ शोंचतः प्रजामिच्छमानौ। तास्वग्निमप्यंसृजत्। ता अग्निरध्यैत्॥१२॥

सोमो रेतोंऽदधात्। स्विता प्राजंनयत्। सरंस्वती वाचंमदधात्। पूषाऽपोंषयत्। ते वा एते त्रिः संवथ्सरस्य प्रयंज्यन्ते। ये देवाः पृष्टिंपतयः। स्वथ्सरो वै प्रजापंतिः। स्वथ्सरेणैवास्मैं प्रजाः प्राजंनयत्। ताः प्रजा जाता म्रुतौंऽघ्नन्। अस्मानिष् न प्रायुंक्षतितिं॥१३॥

स पृतं प्रजापंतिर्मारुतः सप्तकंपालमपश्यत्। तन्निरंवपत्। ततो वै प्रजाभ्योऽकल्पत। यन्मांरुतो निरुप्यतें। युज्ञस्य क्रुप्त्यें। प्रजानामघाताय। सप्तकंपालो भवति। सप्तगंणा वै मुरुतः। गुणुश पुवास्मै विशं कल्पयति। स प्रजापंतिरशोचत्॥१४॥

याः पूर्वाः प्रजा असृक्षि। मुरुत्स्ता अंवधिषुः। कथमपंराः सृजेयेति। तस्य शुष्मं आण्डं भूतं निरंवर्तत। तद्युदंहरत्। तदंपोषयत्। तत्प्राजांयत। आण्डस्य वा एतद्रूपम्। यदामिक्षां। यद्युद्धरंति॥१५॥ प्रजा एव तद्यजंमानः पोषयति। वैश्वदेव्यांमिक्षां भवति। वैश्वदेव्यां वै प्रजाः। प्रजा एवास्मै प्रजंनयति। वाजिन्मानयति। प्रजास्वेव प्रजांतासु रेतों दधाति। द्यावापृथिव्यं एकंकपालो भवति। प्रजा एव प्रजांता द्यावापृथिवीभ्यांमुभ्यतः परि गृह्णाति। देवासुराः संयंत्ता आसन्। सौंऽग्निरंब्रवीत्॥१६॥

मामग्रे यजत। मया मुखेनासुराञ्जेष्यथेति। मां द्वितीयमिति सोमौऽब्रवीत्। मया राज्ञां जेष्यथेति। मां तृतीयमिति सविता। मया प्रसूता जेष्यथेति। मां चंतुर्थीमिति सर्रस्वती। इन्द्रियं वोऽहं धाँस्यामीति। मां पंश्वमिति पूषा। मया प्रतिष्ठयां जेष्यथेति॥१७॥

तें ऽग्निना मुखेनासुंरानजयन्। सोमेन राज्ञां। स्वित्रा प्रसूंताः। सरंस्वतीन्द्रियमंदधात्। पूषा प्रंतिष्ठाऽऽसींत्। ततो वे देवा व्यंजयन्त। यदेतानिं ह्वी १षिं निरुप्यन्ते विजित्यै। नोत्तरवेदिमुपंवपति। पृशवो वा उंत्तरवेदिः। अजांता इव् ह्यंतर्हिं पृशवंः॥१८॥

ऐदित्यंशोचद्युद्धरंत्यब्रवीतप्रतिष्ठयां जेष्य्थेत्येतर्हिं पृशवंः॥————[२]

त्रिवृह्यर्हिर्भविति। माता पिता पुत्रः। तदेव तन्मिथुनम्। उल्बं गर्भो जरायुं। तदेव तन्मिथुनम्। त्रेधा बर्हिः सन्नेद्धं भवित। त्रयं इमे लोकाः। एष्वेव लोकेषु प्रति तिष्ठति। एकधा पुनः सन्नेद्धं भवित। एकं इवृ ह्ययं लोकः॥१९॥ अस्मिन्नेव तेनं लोके प्रतिं तिष्ठति। प्रस्वों भवन्ति। प्रथमजामेव पृष्टिमवं रुन्थे। प्रथमजो वथ्सो दक्षिणा समृद्धे। पृषदाज्यं गृह्णाति। पृशवो वै पृषदाज्यम्। पृश्नेवावं रुन्थे। पृश्चगृहीतं भविति। पाङ्का हि पृशवः। बहुरूपं भविति॥२०॥

बहुरूपा हि प्शवः समृद्धै। अग्निं मन्थन्ति। अग्निमुखा वै प्रजापंतिः प्रजा असृजत। यद्ग्निं मन्थन्ति। अग्निमुखा एव तत्प्रजा यजमानः सृजते। नवं प्रयाजा इंज्यन्ते। नवांनूयाजाः। अष्टौ ह्वी॰िषं। द्वावांघारौ। द्वावाज्यंभागौ॥२१॥

त्रिष्शथ्सम्पंद्यन्ते। त्रिष्शदंक्षरा विराट्। अत्रं विराट्। विराजैवान्नाद्यमवं रुन्धे। यजंमानो वा एकंकपालः। तेज् आज्यम्। यदेकंकपाल आज्यंमानयंति। यजंमानमेव तेजंसा समर्धयति। यजंमानो वा एकंकपालः। पृशव आज्यम्॥२२॥

यदेकंकपाल आज्यंमानयंति। यजंमानमेव पृशुभिः समर्धयति। यदल्पंमानयंत्। अल्पां एनं पृशवों भुअन्त उपंतिष्ठेरन्। यद्घह्वांनयंत्। बहवं एनं पृशवोऽभुंअन्त् उपंतिष्ठेरन्। बह्वांनीयाविः पृष्ठं कुर्यात्। बहवं एवैनं पृशवों भुअन्त उपंतिष्ठन्ते। यजंमानो वा एकंकपालः। यदेकंकपालस्यावद्येत्॥२३॥

यजंमान्स्यावंद्येत्। उद्घा माद्येद्यजंमानः। प्र वां मीयेत। स्कृदेव होत्व्यः। स्कृदिव हि सुवर्गो लोकः। हुत्वाऽभि जुंहोति। यजमानमेव सुंवर्गं लोकं गंमयित्वा। तेजसा समर्धयति। यजमानो वा एकंकपालः। सुवर्गो लोक आहवनीयः॥२४॥

यदेकंकपालमाहवनीयें जुहोतिं। यजंमानमेव सुंवर्गं लोकं गंमयति। यद्धस्तेन जुहुयात्। सुवर्गाल्लोकाद्यजंमानमवं-विध्येत्। स्रुचा जुंहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्ध्ये। यत्प्राङ्घवेत। देवलोकम्भिजंयेत्। यद्देक्षिणा पिंतृलोकम्। यत्प्रत्यक्॥२५॥

रक्षारेसि युज्ञर हेन्युः। यदुदङ्कं। मृनुष्यलोकम्भिजंयेत्। प्रतिष्ठितो होत्व्यः। एकंकपालं वे प्रतितिष्ठंन्तं द्यावापृथिवी अनु प्रतिं तिष्ठतः। द्यावापृथिवी ऋतवः। ऋतून् युज्ञः। युज्ञं यजमानः। यजमानं प्रजाः। तस्मात्प्रतिष्ठितो होत्व्यः॥२६॥

वाजिनों यजित। अग्निर्वायुः सूर्यः। ते वै वाजिनः। तानेव तद्यंजिति। अथो खल्बांहुः। छन्दा १ सि वै वाजिन इति। तान्येव तद्यंजिति। ऋख्सामे वा इन्द्रंस्य हरी सोम्पानौं। तयौं परिधयं आधानम्। वाजिनं भाग्धेयम्॥२७॥

यदप्रहत्य परिधीं जुंहुयात्। अन्तराधानाभ्यां घासं प्रयंच्छेत्। प्रहृत्यं परिधीं जुंहोति। निराधानाभ्यामेव घासं प्रयंच्छति। बर्हिषिं विषिश्चन्वाजिनमा नयिति। प्रजा वै बर्हिः। रेतो वाजिनम्। प्रजास्वेव रेतो दधाति। समुपहूर्यं भक्षयन्ति। एतथ्सोमपीथा ह्येते। अथो आत्मन्नेव रेतो दधते। यजमान उत्तमो भक्षयति। पुशवो वै वार्जिनम्। यजमान एव पुशून्प्रतिष्ठापयन्ति॥२८॥

लोको बंहरूपं भंवत्याज्यंभागौ पृशव आज्यंमवद्येदांहवनीयः प्रत्यक्तस्मात्प्रतिष्ठितो होत्व्यों भागुधेयंमेते चत्वारि च॥————[3]

प्रजापंतिः सिवता भूत्वा प्रजा अंसृजत। ता एंन्मत्यंमन्यन्त। ता अंस्मादपांक्रामन्। ता वर्रणो भूत्वा प्रजा वर्रणेनाग्राहयत्। ताः प्रजा वर्रणगृहीताः। प्रजापंतिं पुन्रपांधावन्नाथिम् च्छमांनाः। स पुतान्प्रजापंतिर्वरुण-प्रघासानंपश्यत्। तां निरंवपत्। तैर्वे स प्रजा वंरुणपाशादंमुञ्चत्। यद्वंरुणप्रघासा निरुप्यन्ते॥२९॥

प्रजानामवंरुणग्राहाय। तासां दक्षिणो बाहुर्न्यंक्र आसींत्। स्वयः प्रसृतः। स एतां द्वितीयां दक्षिणतो वेदिमुदंहन्। ततो वै स प्रजानां दक्षिणं बाहुं प्रासारयत्। यद्वितीयां दक्षिणतो वेदिमुद्धन्ति। प्रजानांमेव तद्यजंमानो दक्षिणं बाहुं प्रसारयित। तस्मांचातुर्मास्ययाज्यंमुष्मिं लोक उभ्याबांहुः। यज्ञाभिजित् क् ह्यंस्य। पृथमात्राद्वेदी असंम्भिन्ने भवतः॥३०॥

तस्मौत्पृथमात्रं व्यश्सौं। उत्तरस्यां वेद्यांमुत्तरवेदिमुपं वपति। पृशवो वा उत्तरवेदिः। पृशूनेवावं रुन्धे। अथो यज्ञपुरुषोऽनंन्तरित्यै। पृतद्भौह्मणान्येव पश्चं हवीश्षिं। अथैष ऐंन्द्राग्नो भंवति। प्राणापानौ वा एतौ देवानांम्। यदिंन्द्राग्नी। यदैंन्द्राग्नो भवंति॥३१॥

प्राणापानावेवावं रुन्धे। ओजो बलं वा पृतौ देवानांम्। यदिन्द्राग्नी। यदैन्द्राग्नो भवंति। ओजो बलमेवावं रुन्धे। मारुत्यांमिक्षां भवति। वारुण्यांमिक्षां। मेषी चं मेषश्चं भवतः। मिथुना पृव प्रजा वंरुणपाशान्मं श्चति। लोमशौ भंवतो मेध्यत्वायं॥३२॥

शुमीपूर्णान्युपं वपति। घासमेवाभ्यामिपं यच्छति। प्रजापितमृत्राद्यं नोपानमत्। स एतेनं शृतेध्मेन हृविषा-ऽत्राद्यमवारुन्थ। यत्परः शृतानिं शमीपूर्णानि भवंन्ति। अन्नाद्यस्यावंरुद्धे। सौम्यानि वे क्रीरांणि। सौम्या खलु वा आहुंतिर्दिवो वृष्टिं च्यावयित। यत्क्रीरांणि भवंन्ति। सौम्ययैवाहुंत्या दिवो वृष्टिमवं रुन्थे। काय एकंकपालो भवति। प्रजानां कन्त्वायं। प्रतिपूरुषं कंरम्भपात्राणि भवन्ति। जाता एव प्रजा वंरुणपाशान्मुंश्चति। एक्मितिरिक्तम्। जनिष्यमांणा एव प्रजा वंरुणपाशान्मुंश्चति॥३३॥

निरुप्यन्ते भवतो भवंति मेध्यत्वायं रुन्धे षद्वं॥\_\_\_\_\_\_[४]

उत्तरस्यां वेद्यांमन्यानि ह्वी १ षि सादयति। दक्षिणायां मारुतीम्। अपधुरमेवैनां युनक्ति। अथो ओजं एवासामवं हरति। तस्माद्वह्मणश्च क्षत्राच्च विशो उन्यतो ऽपक्रमिणीः। मारुत्या पूर्वया प्रचंरति। अनृतमेवावं यजते। वारुण्योत्तरया। अन्तत एव वर्रणमवं यजते। यदेवाध्वर्यः क्रोतिं॥३४॥
तत्प्रंतिप्रस्थाता कंरोति। तस्माद्यच्छ्रेयाँन्क्रोतिं।
तत्पापीयान्करोति। पत्नीं वाचयति। मेध्यांमेवैनां करोति।
अथो तपं एवैनामुपं नयति। यज्ञार सन्तन्न प्रंब्रूयात्।
प्रियं ज्ञाति रुंन्स्यात्। असौ में जार इति निर्दिशेत्।
निर्दिश्येवैनंं वरुणपाशेनं ग्राहयति॥३५॥

प्रघास्यान् हवामह् इति पत्नीमुदानंयति। अह्वंतैवैनाम्। यत्पत्नी पुरोनुवाक्यांमनुब्रूयात्। निर्वीर्यो यजंमानः स्यात्। यजंमानोऽन्वाह। आत्मन्नेव वीर्यं धत्ते। उभौ याज्यार्थं सवीर्यत्वायं। यद्गामे यदरंण्य इत्यांह। यथोदितमेव वर्रणमवं यजते। यजमानदेवत्यो वा आहवनीयः॥३६॥

भ्रातृब्यदेवत्यों दक्षिणः। यदांहवनीयें जुहुयात्। यजंमानं वरुणपाशेनं ग्राहयेत्। दक्षिणेऽग्रौ जुंहोति। भ्रातृंव्यमेव वरुणपाशेनं ग्राहयति। शूर्पेण जुहोति। अन्यंमेव वरुणमवं यजते। शीर्षत्रंधि निधायं जुहोति। शीर्षत एव वरुणमवं यजते। प्रत्यिङ्गर्षं जुहोति॥३७॥

प्रत्यङ्केव वंरुणपाशान्निर्मुच्यते। अऋन्कर्म कर्म्कृत् इत्याह। देवाऽनृणं निरवदायं। अनृणा गृहानुप प्रेतेति वावैतदाह। वरुणगृहीतं वा पृतद्यज्ञस्यं। यद्यजुंषा गृहीतस्यांतिरिच्यंते। तुषांश्च निष्कासश्चं। तुषेश्च निष्कासेनं चावभृथमवैति। वर्रणगृहीतेनैव वर्रणमवंयजते। अपों-ऽवभृथमवैति॥३८॥

अपसु वै वर्रुणः। साक्षादेव वर्रुणमवयजते। प्रति-युतो वर्रुणस्य पाश इत्यांह। वरुणपाशादेव निर्मुच्यते। अप्रतिक्षमा यन्ति। वर्रुणस्यान्तर्हित्यै। एधौं उस्येधिषीमही-त्यांह। समिधैवाग्निं नमस्यन्तं उपायन्ति। तेजोऽसि तेजो मियं धेहीत्यांह। तेजं एवाऽऽत्मन्धंत्ते॥३९॥

कुरोतिं ग्राहयत्याहवुनीयुस्तिष्ठं जुहोत्युपोऽवभृथमवैति धत्ते॥—————[५]

देवासुराः संयंत्ता आसन्। सौंऽग्निरंब्रवीत्। ममेयमनीक-वती तुन्। तां प्रीणीत। अथासुरान्भि भविष्यथेति। ते देवा अग्नयेऽनीकवते पुरोडाशम्ष्टाकपालं निरंवपन्। सौंऽग्निरनीकवान्थ्स्वेनं भाग्धेयेन प्रीतः। चतुर्धाऽनीकान्य-जनयत। ततो देवा अभवन्। पराऽसुराः॥४०॥

यद्ग्रयेऽनींकवते पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निर्वपंति। अग्निमेवानींकवन्त्र् स्वेनं भाग्धेयेन प्रीणाति। सौंऽग्निरनींकवान्थ्स्वेनं भाग्धेयेन प्रीतः। चृतुर्धाऽनींकानि जनयते। असौ वा आंदित्योंऽग्निरनींकवान्। तस्यं रृश्मयो-ऽनींकानि। साक्र सूर्यणोद्यता निर्वपति। साक्षादेवास्मा अनींकानि जनयति। तेऽसुंराः परांजिता यन्तः। द्यावापृथिवी उपांश्रयन्॥४१॥ ते देवा मुरुद्धाः सान्तप्नेभ्यंश्चरुं निरंवपन्। तान्द्यावांपृथिवीभ्यांमेवोभ्यतः समंतपन्। यन्मुरुद्धाः सान्तप्नेभ्यंश्चरुं निर्वपंति। द्यावांपृथिवीभ्यांमेव तद्भ्यतो यजंमानो भ्रातृंव्यान्थ्यन्तंपति। मुध्यन्दिने निर्वपति। तर्हि हि तेक्ष्णिष्टं तपंति। चुरुर्भवति। सूर्वतं पृवेनान्थ्यन्तंपति। ते देवाः श्वोविज्यिनः सन्तंः। सर्वासां दुग्धे गृंहमे्धीयं चुरुं निरंवपन्॥४२॥

आशिता पुवाद्योपंवसाम। कस्य वाऽहेदम्। कस्यं वा श्वो भंवितेतिं। स शृतोंऽभवत्। तस्याहुंतस्य नाश्जन्ं। न हि देवा अहुंतस्याश्जन्तिं। तेंंऽब्रुवन्। कस्मां इम॰ होंष्याम् इतिं। मुरुद्धों गृहमे्धिभ्य इत्यंब्रुवन्। तं मुरुद्धों गृहमे्धिभ्यों-ऽजुहवुः॥४३॥

ततों देवा अभवन्। पराऽसुंराः। यस्यैवं विदुषों मुरुद्धों गृहमेधिभ्यों गृहे जुह्वंति। भवंत्यात्मनां। परांऽस्य भ्रातृंव्यो भवति। यद्वै यज्ञस्यं पाकुत्रा क्रियतें। पृश्व्यं तत्। पाकुत्रा वा पृतिक्रियते। यन्नेध्माब्रहिर्भवंति। न सांमिधेनीर्न्वाहं॥४४॥

न प्रयाजा इज्यन्तैं। नानूयाजाः। य एवं वेदं। पृशुमान्भवित। आज्यंभागौ यजित। यज्ञस्यैव चक्षुंषी नान्तरेति। मुरुतों गृहमे्धिनों यजित। भागधेयेंनैवैनान्थ्समंधीयित। अग्निइस्विंष्टकृतं यजित प्रतिष्ठित्यै। इडाँन्तो भवित। प्शवो वा इडाँ। पृशुष्वेवोपरिष्टात्प्रति तिष्ठति॥४५॥
अस्रं अश्रयन्गृहमे्धीर्यं चुरुं निरंवपन्नजुहवुर्न्वाहेडाँन्तो भवति द्वे चं॥———[६]

यत्पत्नीं गृहमेधीयंस्याश्जीयात्। गृहुमेध्येव स्याँत्। वि त्वंस्य युज्ञ ऋध्येत। यन्नाश्जीयात्। अगृहमेधी स्यात्। नास्यं युज्ञो व्यृंद्धोत। प्रतिंवेशं पचेयुः। तस्याँश्जीयात्। गृहुमेध्येव भेवति। नास्यं यज्ञो व्यृंद्धते॥४६॥

ते देवा गृंहमेधीयेनेष्ट्वा। आशिता अभवन्। आञ्चेताभ्येञ्जत। अनुं वृथ्मानंवासयन्। तेभ्योऽसुंराः क्षुधं प्राहिण्वन्। सा देवेषुं लोकमवित्वा। असुंरान्पुनंरगच्छत्। गृह्मेधीयेनेष्ट्वा। आशिता भवन्ति। आञ्चेतेऽभ्यंञ्जते॥४७॥

अनुं वृथ्सान् वांसयन्ति। भ्रातृंव्यायैव तद्यजंमानः क्षुधं प्रहिंणोति। ते देवा गृंहमेधीयेंनेष्ट्वा। इन्द्रांय निष्का्सं न्यंदधुः। अस्मानेव श्व इन्द्रो निहिंतभाग उपावर्तितेति। तानिन्द्रो निहिंतभाग उपावर्तत। गृह्मेधीयेंनेष्ट्वा। इन्द्रांय निष्का्सं निदंध्यात्। इन्द्रं एवेनं निहिंतभाग उपावर्तते। गार्हंपत्ये जुहोति॥४८॥

भागधेयेनैवैन् समंध्यति। ऋषभमाह्वयति। वृषद्भार एवास्य सः। अथो इन्द्रियमेव तद्वीर्यं यजमानो भ्रातृव्यंस्य वृङ्के। इन्द्रों वृत्र हत्वा। पर्गं परावतंमगच्छत्। अपाराधमिति मन्यमानः। सौंऽब्रवीत्। क इदं वेदिष्यतीतिं। तेंं ऽब्रुवन्मरुतो वरंं वृणामहै॥४९॥

अर्थ व्यं वेदाम। अस्मभ्यंमेव प्रंथम हिविर्निरुप्याता इतिं। त एंनमध्यंक्रीडन्। तत्क्रीडिनां क्रीडित्वम्। यन्मरुद्धाः क्रीडिभ्यः प्रथम हिविर्निरुप्यते विजित्यै। साक सूर्येणोद्यता निर्वपति। एतस्मिन्वै लोक इन्द्रों वृत्रमंहन्थ्समृंद्धौ। एतद्वाह्मणान्येव पश्चं ह्वी १ षिं। एतद्वाह्मण ऐन्द्राग्नः। अथैष ऐन्द्रश्चरुभंवति॥५०॥

उद्धारं वा एतिमन्द्र उदेहरत। वृत्र॰ हृत्वा। अन्यासुं देवतास्विधे। यदेष ऐन्द्रश्चरुर्भवंति। उद्धारमेव तं यजेमान् उद्धेरते। अन्यासुं प्रजास्विधे। वैश्वकुर्मण एकंकपालो भवति। विश्वान्येव तेन कर्माणि यजेमानोऽवं रुन्धे॥५१॥

वैश्वदेवन् वै प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। ता वंरुण-प्रघासैर्वरुणपाशादंमुञ्जत्। साकुमेधेः प्रत्यंस्थापयत्। त्र्यंम्बकै रुद्रं निरवादयत। पितृयज्ञेनं सुवुर्गं लोकमंगमयत्। यद्वैश्वदेवन् यजंते। प्रजा एव तद्यजंमानः सृजते। ता वंरुणप्रघासैर्वरुणपाशान्मुंञ्चति। साकुमेधेः प्रतिष्ठापयति। त्र्यंम्बकै रुद्रं निरवदयते॥५२॥

पितृयज्ञेनं सुवर्गं लोकं गंमयति। दक्षिणतः प्रांचीनावीती निर्वपति। दक्षिणावृद्धि पितृणाम्। अनांदत्य तत्। उत्तर्त एवोप्वीय निर्वपेत्। उभये हि देवाश्चं पितरंश्चेज्यन्तैं। अथो यदेव दंक्षिणार्धेऽधि श्रयंति। तेनं दक्षिणावृंत्। सोमाय पितृमते पुरोडाशुर् षद्भंपालुं निर्वपति। सुंवथ्सरो वै सोमेः पितृमान्॥५३॥

संव्थ्यरमेव प्रीणाति। पितृभ्यों बर्हिषद्भी धानाः। मासा वै पितरों बर्हिषदंः। मासानेव प्रीणाति। यस्मिन्वा ऋतौ पुरुषः प्रमीयंते। सौंऽस्यामुष्मिं छोके भंवति। बहुरूपा धाना भंवन्ति। अहोरात्राणांम्भिजिंत्यै। पितृभ्योंऽग्निष्वात्तेभ्यों मन्थम्। अर्धमासा वै पितरोंऽग्निष्वात्ताः॥५४॥

अर्धमासानेव प्रीणाति। अभिवान्यांयै दुग्धे भंवति। सा हि पितृदेवत्यं दुहे। यत्पूर्णम्। तन्मंनुष्यांणाम्। उपर्यर्धो देवानांम्। अर्धः पितृणाम्। अर्ध उपमन्थति। अर्धो हि पितृणाम्। एकयोपंमन्थति॥५५॥

एका हि पिंतृणाम्। दक्षिणोपंमन्थति। दक्षिणावृद्धि पिंतृणाम्। अनारभ्योपंमन्थति। तद्धि पितृन्गच्छंति। इमान्दिशं वेदिमुद्धंन्ति। उभये हि देवाश्चं पितरश्चेज्यन्तै। चतुंः स्रक्तिर्भवति। सर्वा ह्यनु दिशंः पितरंः। अखांता भवति॥५६॥

खाता हि देवानांम्। मध्यतों ऽग्निराधीयते। अन्ततो हि देवानांमाधीयतें। वर्षीयानिध्म इध्माद्भवित् व्यावृंत्त्यै। परिश्रयति। अन्तर्हितो हि पिंतृलोको मनुष्यलोकात्। यत्पर्रुषि दिनम्। तद्देवानाम्। यदेन्तरा। तन्मनुष्याणाम्॥५७॥

यथ्समूलिम्। तित्पंतृणाम्। समूलं ब्रहिर्भवित् व्यावृत्त्यै। दक्षिणा स्तृंणाति। दक्षिणावृद्धि पितृणाम्। त्रिः पर्येति। तृतीये वा इतो लोके पितर्रः। तानेव प्रींणाति। त्रिः पुनः पर्येति। षट्थ्सम्पंद्यन्ते॥५८॥

षड्वा ऋतवेः। ऋतूनेव प्रीणाति। यत्प्रंस्त्रं यर्जुषा गृह्णीयात्। प्रमायुंको यर्जमानः स्यात्। यन्न गृह्णीयात्। अनायतनः स्यात्। तूष्णीमेव न्यंस्येत्। न प्रमायुंको भवंति। नानायतनः। यत्रीन्यंरिधीन्यंरिद्ध्यात्॥५९॥

मृत्युना यजंमानं परिगृह्णीयात्। यन्न परिद्ध्यात्। रक्षारंसि यज्ञर हंन्युः। द्वौ पंरिधी परिद्धाति। रक्षंसामपंहत्ये। अथों मृत्योरेव यजंमानम्थ्यंजिति। यत्रीणि त्रीणि ह्वीङ्घ्यंदाहरेयुः। त्रयंस्रय एषार साकं प्रमीयेरन्। एकंकमनूचीनांन्युदाहंरन्ति। एकंक पृवेषांमन्वश्चः प्रमीयते। कृशिपं कशिप्व्यांय। उपबर्हंणमुपबर्हृण्यांय। आञ्चनमाञ्चन्यांय। अभ्यञ्चनमभ्यञ्चन्यांय। यथाभागमे-वैनांन्प्रीणाति॥६०॥

निरवंदयते पितृमानंग्निष्वात्ता एक्योपं मन्थृत्यखांता भवति मनुष्यांणां पद्यन्ते परिद्ध्यान्मीयते

पर्श्वच∥-----[८]

अग्नये देवेभ्यः पितृभ्यः सिम्ध्यमानायान् ब्रूहीत्यांह। उभये हि देवाश्चं पितरेश्चेज्यन्तें। एकामन्वांह। एका हि पितृणाम्। त्रिरन्वांह। त्रिर्हि देवानांम्। आघारावाघांरयति। यज्ञपुरुषोरनंन्तरित्यै। नार्षेयं वृणीते। न होतांरम्॥६१॥

यदार्षेयं वृंणीत। यद्धोतारम्। प्रमायंको यजमानः स्यात्। प्रमायंको होतां। तस्मान्न वृंणीते। यजमानस्य होतुंर्गोपीथायं। अपं बर्हिषः प्रयाजान् यंजति। प्रजा वै ब्र्हिः। प्रजा एव मृत्योरुथ्मंजति। आज्यंभागौ यजति॥६२॥

यज्ञस्यैव चक्षुंषी नान्तरंति। प्राचीनावीती सोमं यजित। पितृदेवत्यां हि। एषाऽऽहुंतिः। पश्चकृत्वोऽवं द्यति। पश्च ह्यंता देवताः। द्वे पुरोऽनुवाक्ये। याज्यां देवतां वषद्भारः। ता एव प्रीणाति। सन्तंतमवं द्यति॥६३॥

ऋतूना सन्तंत्ये। प्रेवेभ्यः पूर्वया पुरोऽनुवाक्यंयाऽऽह। प्रणंयति द्वितीयंया। गुमयंति याज्यंया। तृतीये वा इतो लोके पितरंः। अहं पुवैनान्पूर्वया पुरोऽनुवाक्यंयाऽत्यानंयति। रात्रिये द्वितीयंया। ऐवैनान् याज्यंया गमयति। दक्षिणतों-ऽवदायं। उदङ्कातं कामति व्यावृत्त्ये॥६४॥

आ स्व्धेत्याश्रांवयति। अस्तुं स्व्धेतिं प्रत्याश्रांवयति। स्वधा नम् इति वषंद्वरोति। स्वधाकारो हि पिंतृणाम्। सोम्मग्नें यजित। सोमंप्रयाजा हि पितरंः। सोमंं पितृमन्तंं यजित। संवथ्सरो वै सोमंः पितृमान्। संवथ्सरमेव तद्यंजित। पितृन्बंहिंषदों यजित॥६५॥

ये वै यज्वांनः। ते पितरों बर्हिषदः। तानेव तद्यंजित। पितृनंग्निष्वात्तान् यंजिति। ये वा अयंज्वानो गृहमेधिनः। ते पितरौंऽग्निष्वात्ताः। तानेव तद्यंजिति। अग्निं कंव्यवाहंनं यजित। य एव पितृणाम्गिः। तमेव तद्यंजिति॥६६॥

अथो यथाऽग्निः स्विष्टकृतं यजिति। ताहगेव तत्। एतते तत् ये च त्वामन्वितिं तिसृषुं स्रक्तीषु निदंधाति। तस्मादा तृतीयात्पुरुषान्नाम् न गृह्णन्ति। एतावन्तो हीज्यन्तें। अत्रं पितरो यथाभागं मन्दध्वमित्यांह। ह्लीका हि पितरंः। उदंश्चो निष्क्रांमन्ति। एषा वै मनुष्यांणां दिक्। स्वामेव तिदृशमनु निष्क्रांमन्ति॥६७॥

आह्वनीयमुपंतिष्ठन्ते। न्यंवास्मै तद्भुवते। यथ्मत्याहवनीयैं। अथान्यत्र चरंन्ति। आतिमंतोरुपंतिष्ठन्ते। अग्निमेवोपंद्रष्टारं कृत्वा। पितृन्तिरवंदयन्ते। अन्तं वा एते प्राणानां गच्छन्ति। य आतिमंतोरुपं तिष्ठंन्ते। सुसन्दशं त्वा वयमित्यांह॥६८॥

प्राणो वै सुंसन्दक्। प्राणमेवाऽऽत्मन्दंधते। योजा न्विंन्द्र ते हरी इत्याह। प्राणमेव पुनरयुक्त। अक्षन्नमीमदन्त हीति गार्हंपत्यमुपंतिष्ठन्ते। अक्षन्नमीमदन्ताथ त्वोपंतिष्ठामह् इति वावैतदांह। अमीमदन्त पितरंः सोम्या इत्यमि प्रपंद्यन्ते। अमीमदन्त पितरोऽथं त्वाऽभि प्रपंद्यामह् इति वावैतदांह। अपः परिषिश्चति। मार्जयंत्येवैनान्॥६९॥

अथो तुर्पयंत्येव। तृप्यंति प्रजयां पृश्निः। य एवं वेदं। अपं बर्हिषावन्याजौ यंजित। प्रजा वै बर्हिः। प्रजा एव मृत्योरुथ्मृंजिति। चृतुरंः प्रयाजान् यंजिति। द्वावंन्याजौ। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतूनेव प्रीणाति। न पत्यन्वांस्ते। न संयांजयन्ति। यत्पत्यन्वासीत। यथ्संयाजयेयुः। प्रमायुंका स्यात्। तस्मान्नान्वांस्ते। न संयांजयन्ति। पित्रंये गोपीथायं॥७०॥

होतांरुमार्ज्यभागौ यजित सन्तंतुमवंद्यति व्यावृंत्त्यै बर्हिषदों यजित् तमेव तद्यंजुत्यनु निष्क्रांमन्त्याहैनानृतवो नवं च॥——[ $\gamma$ ]

प्रतिपूरुषमेकंकपालां निर्वपति। जाता एव प्रजा रुद्रान्निरवंदयते। एकमितंरिक्तम्। जनिष्यमाणा एव प्रजा रुद्रान्निरवंदयते। एकंकपाला भवन्ति। एक्धैव रुद्रं निरवंदयते। नाभिघांरयति। यदंभिघारयेत्। अन्तर्वचारिण र्रं रुद्रं कुंर्यात्। एकोल्मुकेनं यन्ति॥७१॥

ति रुद्रस्यं भागुधेयम्। इमान्दिशं यन्ति। एषा वै रुद्रस्य दिक्। स्वायांमेव दिशि रुद्रं निरवंदयते। रुद्रो वा अपृशुकांया आहुंत्यै नातिष्ठत। असौ ते पृशुरिति निर्दिशेद्यं द्विष्यात्। यमेव द्वेष्टिं। तमंस्मै पृशुं निर्दिशति। यदि न द्विष्यात्। आखुस्ते पृशुरितिं ब्रूयात्॥७२॥

न ग्राम्यान्पशून् हिनस्ति। नार्ण्यान्। चृतुष्पथे जुंहोति। एष वा अंग्रीनां पङ्घीशो नामं। अग्निवत्येव जुंहोति। मध्यमेनं पूर्णेनं जुहोति। सुग्घ्येषा। अथो खलुं। अन्तमेनैव होत्व्यम्। अन्तत एव रुद्रं निरवंदयते॥७३॥

पुष तें रुद्र भागः सह स्वस्नाऽम्बिक्येत्यांह। श्ररद्वा अस्याम्बिका स्वसां। तया वा पुष हिनस्ति। य हिनस्ति। तयैवैन सह शंमयति। भेषजङ्गव इत्यांह। यावेन्त पुव ग्राम्याः पृशवंः। तेभ्यों भेषुजं केरोति। अवाम्ब रुद्रमंदिमहीत्यांह। आशिषंमेवैतामा शांस्ते॥७४॥

त्र्यंम्बकं यजामह् इत्यांह। मृत्योर्मुक्षीय माऽमृतादिति वावैतदांह। उत्किरन्ति। भगंस्य लीफ्सन्ते। मूतंकृत्वा-ऽऽसंजन्ति। यथा जनं यतंऽव्सं क्रोतिं। ताहगेव तत्। एष तं रुद्र भाग इत्यांह निरवंत्त्ये। अप्रंतीक्षमा यंन्ति। अपः परिषिश्चति। रुद्रस्यान्तर्हित्ये। प्र वा पुतेंऽस्माल्लोकाच्यंवन्ते। ये त्र्यंम्बकैश्चरंन्ति। आदित्यं च्रुं पुन्रेत्य निर्वपति। इयं वा अदितिः। अस्यामेव प्रतिं तिष्ठन्ति॥७५॥

युन्ति ब्रूयान्त्रिरवंदयते शास्ते सिश्चिति पद्गं॥————[१०]

अर्नुमत्यै वैश्वदेवेन् ताः सृष्टास्त्रिवृत्प्रजापंतिः सिवतोत्तंरस्यान्देवासुराः सींऽग्निर्यत्पत्नी

112 ਬਾਲਸ: ਸ਼ੁਆ:

वैश्वदेवेन ता वंरुणप्रघासैर्ग्नये देवेभ्यः प्रतिपूरुषं दर्शा॥१०॥
अनुमत्ये प्रथम्जो वृथ्सो बंहुरूपा हि पृशवृस्तस्मांत्पृथमात्रं यद्ग्नयेऽनींकवत उद्धारं वा
अग्नये देवेभ्यः प्रतिपूरुषं पश्चंसप्ततिः॥७५॥
अनुमत्ये प्रतिं तिष्ठन्ति॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके षष्ठः प्रपाठकः समाप्तः॥

#### ॥ सप्तमः प्रश्नः॥

### ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके सप्तमः प्रपाठकः॥

पुराद्वाँह्मणान्येव पश्चं ह्वी १ षिं। अथेन्द्रांय शुनासीरांय पुरोडाशं द्वादंशकपालं निर्वपिति। संवथ्सरो वा इन्द्राशुनासीरंः। संवथ्सरेणैवास्मा अन्नमवं रुन्थे। वायव्यं पयो भवति। वायुर्वे वृष्ट्ये प्रदापियता। स पुवास्मै वृष्टिं प्रदापयति। सौर्यं एकंकपालो भवति। सूर्येण वा अमुष्मिं ल्लोके वृष्टिर्धृता। स पुवास्मै वृष्टिं निर्यच्छिति॥१॥

द्वाद्शगव श्सीरं दक्षिणा समृद्धे। देवासुराः संयंता आसन्। ते देवा अग्निमंब्रुवन्। त्वयां वीरेणासुरान्भिभंवामेतिं। सौंऽब्रवीत्। त्रेधाऽहमात्मानं विकिरिष्य इतिं। स त्रेधा-ऽऽत्मानं व्यंकुरुत। अग्निं तृतीयम्। रुद्रं तृतीयम्। वर्रणं तृतीयम्॥२॥

सों ऽब्रवीत्। क इदं तुरीयमितिं। अहमितीन्द्रों-ऽब्रवीत्। सन्तु सृंजावहा इतिं। तौ समंसृजेताम्। स इन्द्रंस्तुरीयंमभवत्। यदिन्द्रंस्तुरीयमभवत्। तदिन्द्र-तुरीयस्येंन्द्रतुरीयत्वम्। ततो वै देवा व्यंजयन्त। यदिन्द्रतुरीयं निरुप्यते विजित्ये॥३॥

वृहिनीं धेनुर्दक्षिणा। यद्घहिनीं। तेनांग्रेयी। यद्गैः। तेनं रौद्री। यद्धेनुः। तेनैन्द्री। यथ्ब्री स्ती दान्ता। तेनं वारुणी

# समृंद्धै। प्रजापंतिर्य्ज्ञमंसृजत॥४॥

त १ सृष्ट १ रक्षा ईस्यजिघा १ सन् एताः प्रजापंतिरात्मनों देवता निरंमिमीत। ताभिवें स दिग्भ्यो रक्षा ईसि प्राणुंदत। यत्पंश्चावृत्तीयं जुहोति। दिग्भ्य एव तद्यजमानो रक्षा ईसि प्रणुंदते। समूंढ १ रक्षः सन्दंग्ध १ रक्ष इत्याह। रक्षा ईस्येव सन्दंहित। अग्नये रक्षोघ्ने स्वाहेत्यांह। देवतांभ्य एव विजिग्यानाभ्यों भाग्धेयं करोति। प्रष्टिवाही रथो दक्षिणा समृंद्धे॥५॥

इन्द्रों वृत्र हत्वा। असुंरान्पराभाव्यं। नमुंचिमासुरं नार्लभत। त श्रच्यांऽगृह्णात्। तौ समेलभेताम्। सौंऽस्माद्भिशुंनतरोऽभवत्। सौंऽब्रवीत्। सन्धा श् सन्दंधावहै। अथ् त्वाऽवं स्रक्ष्यामि। न मा शुष्केण् नार्द्रेणं हनः॥६॥

न दिवा न नक्तमितिं। स एतम्पां फेर्नमिसिश्चत्। न वा एष शुष्को नार्द्रो व्युंष्टाऽऽसीत्। अनुंदितः सूर्यः। न वा एतिद्दवा न नक्तम्। तस्यैतिस्मं ल्लोके। अपां फेर्नेन् शिर् उदंवर्तयत्। तदेनमन्वंवर्तत। मित्रंद्रुगितिं॥७॥

स एतानेपामार्गानेजनयत्। तानंजुहोत्। तैर्वे स रक्षाड्स्यपाहत। यदंपामार्गहोमो भवंति। रक्षंसामपंहत्यै। एकोल्मुकेनं यन्ति। तिद्धे रक्षंसां भागुधेयम्। इमान्दिशं यन्ति। एषा वै रक्षंसां दिक्। स्वायांमेव दिशि रक्षा १सि हन्ति॥८॥

स्वकृंत इरिणे जुहोति प्रद्रे वां। एतद्वै रक्षंसामायतनंम्। स्व एवायतंने रक्षा रेसि हन्ति। पूर्णमयेन स्रुवेणं जुहोति। ब्रह्म वै पूर्णः। ब्रह्मणेव रक्षा रेसि हन्ति। देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रंस्व इत्यांह। स्वितृप्रंसूत एव रक्षा रेसि हन्ति। हृत र रक्षो-ऽवंधिष्म रक्ष इत्यांह। रक्षंसा रूप्तत्यें। यद्वस्ते तद्दक्षिणा निरवंत्ये। अप्रंतीक्षमायंन्ति। रक्षंसाम्न्तर्हित्ये॥९॥

युच्छुति वर्रुणं तृतीयं विजित्या असृजत् समृद्धौ हनो मित्रंद्रुगितिं हन्ति स्तृत्यै त्रीणिं च॥[१]

धात्रे पुरोडाश्ं द्वादंशकपालं निर्वपित। संवथ्सरो वै धाता। संवथ्सरेणैवास्मैं प्रजाः प्रजनयित। अन्वेवास्मा अनुंमितर्मन्यते। राते राका। प्र सिंनीवाली जनयित। प्रजास्वेव प्रजातासु कुह्वां वाचं दधाति। मिथुनौ गावौ दक्षिणा समृद्धौ। आग्नावैष्णवमेकांदशकपालं निर्वपित। ऐन्द्रावैष्णवमेकांदशकपालम्॥१०॥

वैष्ण्वं त्रिंकपालम्। वीर्यं वा अग्निः। वीर्यमिन्द्रः। वीर्यं विष्णुः। प्रजा एव प्रजाता वीर्यं प्रतिष्ठापयति। तस्मात्प्रजा वीर्यावतीः। वामन ऋष्मो वही दक्षिणा। यद्वही। तेनांग्नेयः। यद्वेषभः॥११॥

तेनैन्द्रः। यद्वांमुनः। तेनं वैष्णुवः समृद्धौ। अग्नीषोमीयमेकां-

दशकपालुं निर्वपति। इन्द्रासोमीयमेकांदशकपालम्। सौम्यं चरुम्। सोमो वै रेतोधाः। अग्निः प्रजानां प्रजनयिता। वृद्धानामिन्द्रः प्रदापयिता। सोमं पुवास्मै रेतो दर्धाति॥१२॥

अग्निः प्रजां प्रजांनयति। वृद्धामिन्द्रः प्रयंच्छति। ब्रुदिक्षिणा समृद्धै। सोमापौष्णं चरुं निर्वपति। ऐन्द्रापौष्णं चरुम्। सोमो वै रेतोधाः। पूषा पंशूनां प्रजनियता। वृद्धानामिन्द्रः प्रदापयिता। सोमं एवास्मै रेतो दधांति। पूषा पश्नप्रजनयति॥१३॥

वृद्धानिन्द्रः प्रयंच्छति। पौष्णश्चरुर्भवति। इयं वै पूषा। अस्यामेव प्रतिं तिष्ठति। श्यामो दक्षिणा समृद्धौ। बहु वै पुरुषो मेध्यमुपंगच्छति। वैश्वान्तरं द्वादंशकपालं निर्वपति। संवथ्सरो वा अग्निर्वैश्वान्रः। संवथ्सरेणैवैन इं स्वदयति। हिरंण्यं दक्षिणा॥१४॥

प्वित्रं वै हिरंण्यम्। पुनात्येवैनम्ं। बहु वै रांजन्योऽनृंतं करोति। उपं जाम्ये हरते। जिनातिं ब्राह्मणम्। वद्त्यनृंतम्। अनृंते खलु वै क्रियमांणे वरुणो गृह्णाति। वारुणं यंवमयं चरुं निर्वपति। वरुणपाशादेवैनं मुश्रति। अश्वो दक्षिणा। वारुणो हि देवतयाऽश्वः समृंद्धौ॥१५॥

ऐन्द्रावैष्णुवमेकादशकपालुं यदंषुभो दर्धाति पूषा पुशून्प्रजनयति हिरंण्युं दक्षिणा दक्षिणैकं

**-**[२]

र्िनामेतानि ह्वी १ षि भवन्ति। एते वै राष्ट्रस्यं प्रदातारेः। एते ऽपादातारेः। य एव राष्ट्रस्यं प्रदातारेः। येऽपादातारेः। त एवास्में राष्ट्रं प्रयंच्छन्ति। राष्ट्रमेव भवति। यथ्समाहृत्यं निर्वपेत्। अरंित्रनः स्युः। यथायथं निर्वपति रित्तत्वायं॥१६॥

यथ्सद्यो निर्वपेत्। यावंतीमेकेन ह्विषाऽऽशिषंमव रुन्थे। तावंतीमवंरुन्थीत। अन्वहन्निर्वंपति। भूयंसीमेवाशिषमवं रुन्थे। भूयंसो यज्ञऋतूनुपैति। बार्हस्पत्यं च्रं निर्वंपति ब्रह्मणो गृहे। मुख्त एवास्मै ब्रह्म सङ्श्यंति। अथो ब्रह्मंन्नेव क्षुत्रमुन्वारंम्भयति। शितिपृष्ठो दक्षिणा समृद्धौ॥१७॥

ऐन्द्रमेकांदशकपाल र राजन्यंस्य गृहे। इन्द्रियमेवावं रुन्थे। ऋषुभो दक्षिणा समृद्धै। आदित्यं चरुं महिष्ये गृहे। इयं वा अदितिः। अस्यामेव प्रतितिष्ठति। धेनुर्दक्षिणा समृद्धै। भगाय चरुं वावातांयै गृहे। भगमेवास्मिन्दधाति। विचित्तगर्भा पष्ठौही दक्षिणा समृद्धै॥१८॥

नैर्ऋतं चुरुं पेरिवृत्त्यैं गृहे कृष्णानां व्रीहीणां न्खिनिर्भित्रम्। पाप्मानेमेव निर्ऋतिं निरवंदयते। कृष्णा कूटा दक्षिणा समृद्धौ। आग्नेयमृष्टाकंपाल सेनान्यों गृहे। सेनामेवास्य सङ्श्यंति। हिर्रण्यं दक्षिणा समृद्धौ। वारुणं दश्वंकपाल स्मृद्धौ। वारुणं दश्वंकपाल स्मृद्धौ। महानिरष्टो दक्षिणा समृद्धौ। महानिरष्टो दक्षिणा समृद्धौ। मारुत स्मिकंपालं ग्रामण्यों गृहे॥१९॥

अत्रं वै मुरुतः। अत्रंमेवावं रुन्धे। पृश्चिर्दक्षिणा समृद्धे। सावित्रं द्वादंशकपालं क्षुत्तुर्गृहे प्रसूत्ये। उपध्वस्तो दक्षिणा समृद्धे। आश्विनं द्विकपालः संङ्ग्रहीतुर्गृहे। अश्विनौ वै देवानां भिषजौ। ताभ्यांमेवास्मे भेषजं करोति। स्वात्यौ दक्षिणा समृद्धे। पौष्णं चुरुं भागदुघस्यं गृहे॥२०॥

अत्रं वै पूषा। अत्रमेवावं रुन्धे। श्यामो दक्षिणा समृद्धे। रौद्रं गांवीधुकं चरुमंक्षावापस्यं गृहे। अन्तृत एव रुद्रं निरवंदयते। श्वल उद्घांरो दक्षिणा समृद्धे। द्वादंशैतानिं ह्वी १ षि भवन्ति। द्वादंश मासाः संवथ्सरः। संवथ्सरेणैवास्में राष्ट्रमवं रुन्धे। राष्ट्रमेव भवति॥२१॥

यन्न प्रति निर्वपेत्। रित्तने आशिषोऽवंरुन्धीरन्। प्रतिनिर्वपति। इन्द्रांय सुत्राम्णे पुरोडाशमेकांदशकपालम्। इन्द्रांया होमुचें। आशिषं एवावं रुन्धे। अयं नो राजां वृत्रहा राजां भूत्वा वृत्रं वंध्यादित्यांह। आशिषंमेवैतामा शास्ते। मैत्राबार्हस्पत्यं भंवति। श्वेतायैं श्वेतवंथ्सायै दुग्धे॥२२॥

बार्ह्स्पत्ये मैत्रमि दधाति। ब्रह्मं चैवास्मैं क्षत्रं चं समीचीं दधाति। अथो ब्रह्मंत्रेव क्षत्रं प्रतिष्ठापयति। बार्ह्स्पत्येन् पूर्वेण प्रचंरति। मुख्त एवास्मै ब्रह्म सङ्श्यंति। अथो ब्रह्मंत्रेव क्षत्रम्न्वारंम्भयति। स्वयं कृता वेदिर्भवति। स्वयं दिनं बर्हिः। स्वयं कृत इध्मः। अनंभिजितस्याभिजित्यै।

तस्माद्राज्ञामरंण्यम्भिजितम्। सैव श्वेता श्वेतवंथ्सा दक्षिणा समृद्धौ॥२३॥

र्िा त्वाय समृं हो पष्टौही दक्षिणा समृं हो ग्रामण्यों गृहे भागदुघस्यं गृहे भंवित दुग्धें ऽभिजिंत्यै दे चं॥————[3]

देवसुवामेतानि ह्वी १ षि भवन्ति। एतावंन्तो वै देवाना १ स्वाः। त एवास्मै स्वान्प्रयंच्छन्ति। त एंन १ स्वन्ते। अग्निरेवैनं गृहपंतीना १ स्वते। सोमो वनस्पतीनाम्। रुद्रः पंशूनाम्। बृह्स्पतिर्वाचाम्। इन्द्रौ ज्येष्ठानौम्। मित्रः स्त्यानौम्॥ २४॥

वर्रणो धर्मपतीनाम्। एतदेव सर्वं भवति। स्विता त्वाँ प्रस्वानारं स्वतामिति हस्तं गृह्णाति प्रसूँत्यै। ये देवा देवः सुवः स्थेत्याह। यथायजुरेवैतत्। महते क्षत्रायं महत आधिपत्याय महते जानराज्यायेत्यांह। आशिषंमेवैतामा शाँस्ते। एष वो भरता राजा सोमोऽस्माकं ब्राह्मणानार् राजेत्यांह। तस्माथ्सोमराजानो ब्राह्मणाः। प्रति त्यन्नामं राज्यमंधायीत्यांह॥२५॥

राज्यमेवास्मिन्प्रतिद्धाति। स्वां तनुवं वर्रणो अशिश्रेदित्याह। वरुणसवमेवावं रुन्धे। शुर्वेर्मित्रस्य व्रत्यां अभूमेत्यांह। शुर्विमेवैनं व्रत्यं करोति। अमेन्मिह महुत ऋतस्य नामेत्यांह। मनुत पुवैनम्। सर्वे व्राता

वर्रुणस्याभूविन्नित्यांह। सर्वव्रातमेवैनं करोति। वि मित्र एवैररांतिमतारीदित्यांह॥२६॥

अरांतिमैवैनं तारयति। असूंषुदन्त युज्ञियां ऋतेनेत्यांह। स्वदयंत्येवैनम्। व्युं त्रितो जीर्माणं न आनुडित्यांह। आयुरेवास्मिन्दधाति। द्वाभ्यां विमृष्टे। द्विपाद्यजमानः प्रतिष्ठित्ये। अग्नीषोमीयंस्य चैकांदशकपालस्य देवसुवां चे ह्विषांमुग्नयें स्विष्टकृतें समवंद्यति। देवतांभिरेवैनंमुभ्यतः परिगृह्णाति। विष्णुऋमान्क्रंमते। विष्णुरेव भूत्वेमाँ श्लोकान्भि-जंयति॥२७॥

स्त्यानांमधायीत्यांहातारीदित्यांह ऋमत् एकं च॥\_\_\_\_\_[४]

अर्थेतः स्थेतिं जुहोति। आहुंत्यैवैनां निष्क्रीयं गृह्णाति। अथों ह्विष्कृंतानामेवाभिघृंतानां गृह्णाति। वहंन्तीनां गृह्णाति। एता वा अपा॰ राष्ट्रम्। राष्ट्रमेवास्में गृह्णाति। अथो श्रियंमेवैनंमभिवंहन्ति। अपां पतिंरुसीत्यांह। मिथुनमेवाकंः। वृषांऽस्यूर्मिरित्यांह॥२८॥

ऊर्मिमन्तंमेवैनं करोति। वृष्सेनोंऽसीत्यांह। सेनांमेवास्य सङ्श्यंति। ब्रजिक्षितः स्थेत्यांह। एता वा अपां विशंः। विशंमेवास्मै पर्यूहति। मुरुतामोजः स्थेत्यांह। अत्रं वै मुरुतंः। अन्नंमेवावं रुन्थे। सूर्यंवर्चसः स्थेत्यांह॥२९॥

राष्ट्रमेव वर्चस्व्यंकः। सूर्यत्वचसः स्थेत्याह। सृत्यं वा

पुतत्। यद्वर्षिति। अनृतं यदातपित् वर्षिति। सृत्यानृते पुवावे रुन्थे। नैन र् सत्यानृते उदिते हिर्रस्तः। य पुवं वेदे। मान्दाः स्थेत्याह। राष्ट्रमेव ब्रह्मवर्चस्यंकः॥३०॥

वाशाः स्थेत्याह। राष्ट्रमेव वृश्यंकः। शक्वंरीः स्थेत्याह। पृशवो व शक्वंरीः। पृशूनेवावं रुन्धे। विश्वभृतः स्थेत्याह। राष्ट्रमेव पंयुस्वयंकः। जनुभृतः स्थेत्याह। राष्ट्रमेवेन्द्रियाव्यंकः। अग्नेस्तेजस्याः स्थेत्याह॥३१॥

राष्ट्रमेव तेंज्स्व्यंकः। अपामोषंधीनाः रसः स्थेत्यांह।
राष्ट्रमेव मंध्व्यंमकः। सार्स्वतं ग्रहं गृह्णाति। एषा
वा अपां पृष्ठम्। यथ्सरंस्वती। पृष्ठमेवैनः समानानां
करोति। षोड्शभिंगृह्णाति। षोडंशकलो वै पुरुषः।
यावांनेव पुरुषः। तस्मिन्वीर्यं दधाति। षोड्शभिंर्जुहोतिं
षोड्शभिंगृह्णाति। द्वात्रिःश्राथ्सम्पंद्यन्ते। द्वात्रिःशदक्षराऽनुष्टुक्। वागंनुष्टुफ्सर्वाणि छन्दाःसी। वाचैवैनः
सर्वेभिश्छन्दोंभिर्भिषिंश्रति॥३२॥

ऊर्मिरित्यांहु सूर्यंवर्चसः स्थेत्यांह ब्रह्मवर्चस्यंकस्तेज्स्याः स्थेत्यांहैव पुरुषः षट चं॥——[५]

देवीरापः सं मध्मतीर्मध्मतीभः सृज्यध्वमित्याह। ब्रह्मणैवेनाः स॰सृजिति। अनाधृष्टाः सीद्तेत्याह। ब्रह्मणैवेनाः सादयति। अन्त्रा होतुंश्च धिष्णियं ब्राह्मणाच्छु॰सिनश्च सादयति। आग्नेयो वै होतां। ऐन्द्रो ब्राह्मणाच्छु॰सी। तेजंसा चैवेन्द्रियेणं चोभ्यतो राष्ट्रं परिगृह्णाति। हिरंण्येनोत्पुंनाति। आहुंत्ये हि प्वित्रांभ्यामुत्पुनन्ति व्यावृंत्त्ये॥३३॥

श्वतमानं भवति। श्वतायुः पुरुषः श्वतिन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रति तिष्ठति। अनिभृष्टम्सीत्यांह। अनिभृष्ट्र् ह्यंतत्। वाचो बन्धुरित्यांह। वाचो ह्यंष बन्धुः। तृपोजा इत्यांह। तृपोजा ह्यंतत्। सोमंस्य दात्रम्सीत्यांह॥३४॥

सोमंस्य ह्यंतद्दात्रम्। शुक्रा वंः शुक्रेणोत्पुंनामीत्यांह। शुक्रा ह्यापंः। शुक्र १ हिरंण्यम्। चन्द्राश्चन्द्रेणेत्यांह। चन्द्रा ह्यापंः। चन्द्र १ हिरंण्यम्। अमृतां अमृत्नेनेत्यांह। अमृता ह्यापंः। अमृत्र हिरंण्यम्॥३५॥

स्वाहां राज्यस्यायेत्यांह। राज्यस्यांय ह्यंना उत्पुनाति। स्थमादौँ द्युम्निनीरूर्ज पुता इति वारुण्यर्चा गृह्णाति। वरुणस्वमेवावं रुन्थे। एकया गृह्णाति। एक्थेव यजंमाने वीर्यं दधाति। क्षत्रस्योल्बंमिस क्षत्रस्य योनिर्सीति ताप्यं चोष्णीषं च प्रयंच्छति सयोनित्वायं। एकंशतेन दर्भपुञ्जीलैः पंवयति। शतायुर्वे पुरुषः शतवीर्यः। आत्मैकंशतः॥३६॥

यावांनेव पुरुषः। तस्मिन्वीर्यं दधाति। दध्यांशयति। इन्द्रियमेवावं रुन्धे। उदुम्बरमाशयति। अन्नाद्यस्यावंरुद्धे। शष्पांण्याशयति। सुरांबिलमेवैनं करोति। आविदं एता भंवन्ति। आविदंमेवैनं गमयन्ति॥३७॥ अग्निरेवेनं गार्हंपत्येनावति। इन्द्रं इन्द्रियेणं। पूषा प्राभिः। मित्रावर्रुणो प्राणापानाभ्याम्। इन्द्रो वृत्राय् वज्रमुदंयच्छत्। स दिवंमिलिखत्। सौऽर्यम्णः पन्थां अभवत्। स आवित्रे द्यावापृथिवी धृतन्नेते इति द्यावापृथिवी उपांधावत्। स आभ्यामेव प्रसूत इन्द्रो वृत्राय वज्रं प्राहंरत्। आवित्रे द्यावापृथिवी धृतन्नेते इति यदाहं॥३८॥

आभ्यामेव प्रसूतो यजंमानो वज्रं भ्रातृंव्याय प्रहंरित। आविन्ना देव्यदितिर्विश्वरूपीत्याह। इयं वै देव्यदितिर्विश्वरूपी। अस्यामेव प्रति तिष्ठति। आविन्नोऽयम्सावांमुष्यायणौऽस्यां विश्यंस्मिन्नाष्ट्र इत्यांह। विशेवन र्रं राष्ट्रेण् समर्धयति। मृह्ते क्षुत्रायं मह्त आधिपत्याय महते जानंराज्यायेत्यांह। आशिषंमेवैतामा शांस्ते। एष वो भरता राजा सोमोऽस्माकं ब्राह्मणानार् राजेत्यांह। तस्माथ्सोमंराजानो ब्राह्मणाः॥३९॥

इन्द्रंस्य वज्रोऽसि वार्त्रघ्न इति धनुः प्रयंच्छति विजित्यै। श्रृवाधंनाः स्थेतीषून्। शत्रूनेवास्यं बाधन्ते। पात माँ प्रत्यश्चं पात मां तिर्यश्चंमन्वश्चं मा पातेत्यांह। तिस्रो वै शंर्व्याः। प्रतीचीं तिरश्चनूचीं। ताभ्यं एवैनं पान्ति। दिग्भ्यो मां पातेत्यांह। दिग्भ्य एवैनं पान्ति। विश्वाभ्यो मा नाष्ट्राभ्यः पातेत्यांह। अपंरिमितादेवैनं पान्ति। हिरंण्यवर्णावुषसां विरोक इतिं त्रिष्टुभां बाहू उद्गृह्णाति। इन्द्रियं वै वीर्यं त्रिष्टुक्। इन्द्रियमेव वीर्यमुपरिष्टादात्मन्धंत्ते॥४०॥

व्यावृत्त्यै दात्रमुसीत्यांहामृत्र् हिरंण्यमेकश्वतो गंमयन्त्याहं ब्राह्मणा नाष्ट्राभ्यः पातेत्यांह चुत्वारिं

च॥\_\_\_\_\_\_[६्]

दिशो व्यास्थांपयति। दिशाम्भिजिंत्यै। यदंनु प्रक्रामेंत्। अभि दिशों जयेत्। उत्तु माँद्येत्। मन्साऽनु प्रक्रांमित। अभि दिशों जयति। नोन्मांद्यति। स्मिध्मा तिष्ठेत्यांह। तेजं एवावं रुन्थे॥४१॥

उग्रामा तिष्ठेत्यांह। इन्द्रियमेवावं रुन्धे। विराजमातिष्ठेत्यांह। अन्नाद्यंमेवावं रुन्धे। उदींचीमा तिष्ठेत्यांह। पृश्नेवावं रुन्धे। उर्धामातिष्ठेत्यांह। सुवर्गमेव लोकम्भिजंयति। अनू जिहीते। सुवर्गस्यं लोकस्य समष्टी॥४२॥

मारुत एष भेवति। अत्रं वै मुरुतः। अन्नेमेवावं रुन्धे। एकंविश्शतिकपालो भवति प्रतिष्ठित्यै। योऽरण्येऽनुवाक्यों गणः। तं मध्यत उपंदधाति। ग्राम्यैरेव पृशुभिरारण्यान्पृशून्परिं गृह्णाति। तस्माँद्वाम्यैः पृशुभिरार्ण्याः पृशवः परिगृहीताः। पृथिर्वैन्यः। अभ्यषिच्यत॥४३॥

स राष्ट्रं नार्भवत्। स एतानि पार्थान्यंपश्यत्। तान्यंजुहोत्। तैर्वे स राष्ट्रम्भवत्। यत्पार्थानि जुहोति। राष्ट्रमेव भवति। बार्ह्स्पत्यं पूर्वेषामुत्तमं भवति। ऐन्द्रमुत्तरेषां प्रथमम्। ब्रह्मं चैवास्मै क्षत्रं चं समीचीं दधाति। अथो ब्रह्मंत्रेव क्षत्रं प्रतिं-ष्ठापयति॥४४॥

षद्वुरस्तांदिभिषेकस्यं जुहोति। षडुपरिष्टात्। द्वादंश् सम्पंद्यन्ते। द्वादंश् मासाः संवथ्सरः। संवथ्सरः खलु वै देवानां पूः। देवानांमेव पुरं मध्यतो व्यवंसपिति। तस्य न कृतंश्चनोपांव्याधो भंवति। भूतानामवेष्टीर्जुहोति। अत्रात्र वै मृत्युर्जायते। यत्रंयत्रैव मृत्युर्जायते। ततं पृवेनमवंयजते। तस्माद्वाज्सूयेनेजानो नाभिचंरित्वै। प्रत्यगेनमभिचारः स्तृंणुते॥४५॥

सोमंस्य त्विषिरसि तवेव मे त्विषिभूयादिति शार्दूल-चर्मोपंस्तृणाति। यैव सोमे त्विषिः। या शाँदूले। तामेवावं रुन्थे। मृत्योर्वा एष वर्णः। यच्छाँदूलः। अमृत्र हिरंण्यम्। अमृतंमिस मृत्योर्मा पाहीति हिरंण्यमुपाँस्यति। अमृतंमेव मृत्योर्न्तर्थत्ते। शृतमानं भवति॥४६॥

श्तायुः पुरुषः श्तेन्द्रियः। आयुष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। दिद्योन्मां पाहीत्युपरिष्टादिधे निदंधाति। उभयतं एवास्मै शर्मं दधाति। अवेष्टा दन्दशूका इतिं क्रीबर सीसेन विध्यति। दन्दशूकांनेवावयजते। तस्मौत्क्रीबं दन्दशूका दरशुंकाः। निरंस्तं नमुंचेः शिरु इतिं लोहितायसं निरंस्यति। पाप्मानंमेव नमुंचिं नि्रवंदयते। प्राणा आत्मनः पूर्वेऽभिषिच्या इत्यांहुः॥४७॥

सोमो राजा वर्रुणः। देवा धर्मसुवंश्च ये। ते ते वाचर् सुवन्तां ते ते प्राणर सुवन्तामित्यांह। प्राणानेवाऽऽत्मनः पूर्वान्भिषिश्चति। यद्भूयात्। अग्नेस्त्वा तेजंसाऽभिषिश्चामीति। तेजस्व्येव स्यात्। दुश्चर्मा तु भवेत्। सोमंस्य त्वा द्युम्नेनाभिषिश्चामीत्यांह। सौम्यो व देवतंया पुरुषः॥४८॥

स्वयैवैनं देवतंयाऽभिषिश्चति। अग्नेस्तेज्सेत्यांह। तेजं
प्वास्मिन्दधाति। सूर्यस्य वर्चसेत्यांह। वर्च प्वास्मिन्दधाति।
इन्द्रंस्येन्द्रियेणेत्यांह। इन्द्रियमेवास्मिन्दधाति। मित्रावर्रुणयोवीर्येणेत्यांह। वीर्यमेवास्मिन्दधाति। मुरुतामोज्सेत्यांह॥४९॥

ओर्ज पुवास्मिन्दधाति। क्षत्राणां क्षत्रपंतिर्सीत्यांह। क्षत्राणांमेवैनं क्षत्रपंतिं करोति। अतिं दिवस्पाहीत्यांह। अत्यन्यान्पाहीति वावैतदांह। समावंवृत्रन्नधरागुदींचीरित्यांह। राष्ट्रमेवास्मिन्ध्रुवमंकः। उच्छेषंणेन जुहोति। उच्छेषंणभागो वै रुद्रः। भागधेयेंनैव रुद्रं निरवंदयते॥५०॥

उदं द्विरत्याग्नीं द्धे जुहोति। एषा वै रुद्रस्य दिक्। स्वायां मेव दिशि रुद्रं निरवंदयते। रुद्र यत्ते ऋयी परं नामेत्यां ह। यद्वा अस्य ऋयी परं नामं। तेन वा एष हिनस्ति। य॰ हिनस्ति। तेनै वैन ॰ सह शंमयति। तस्मैं हुतमंसि यमेष्टं मुसीत्यां ह। यमादेवास्यं मृत्युमवंयजते॥५१॥

प्रजापते न त्वदेतान्यन्य इति तस्यै गृहे जुंहुयात्। यां कामयेत राष्ट्रमंस्यै प्रजा स्यादितिं। राष्ट्रमेवास्यै प्रजा भंवति। पूर्णमयेनाध्वर्युर्भिषिश्चिति। ब्रह्मवर्चसमेवास्मिन्त्विषं दधाति। औदुंम्बरेण राजन्यः। ऊर्जमेवास्मिन्नन्नाद्यं दधाति। आश्वंत्थेन वैश्यः। विश्नमेवास्मिन्पृष्टिं दधाति। नैयंग्रोधेन जन्यः। मित्राण्येवास्मै कल्पयति। अथो प्रतिष्ठित्यै॥५२॥ भवत्याहः पुरुष् ओज्सेत्यांह निर्वंदयते यजते जन्यो हे चं॥———[८]

इन्द्रंस्य वज्रोऽिस वार्त्रघ्न इति रथंमुपावंहरित विजित्यै। मित्रावरुणयोस्त्वा प्रशास्त्रोः प्रशिषां युन्ज्मीत्यांह। ब्रह्मंणैवैनं देवतांभ्यां युनिक्ता प्रष्टिवाहिनं युनिक्ता प्रष्टिवाही वे देवर्थः। देवर्थमेवास्मै युनिक्ता त्रयोऽश्वां भवन्ति। रथंश्चतुर्थः। द्वौ संव्येष्ठसारथी। षट्थ्सम्पंद्यन्ते॥५३॥

षड्वा ऋतवंः। ऋतुभिरेवैनं युनक्ति। विष्णुक्रमान्क्रंमते। विष्णुरेव भूत्वेमाँ ह्योकान्भिजंयति। यः क्षित्रियः प्रतिहितः। सौंऽन्वारंभते। राष्ट्रमेव भंवति। त्रिष्टुभाऽन्वारंभते। इन्द्रियं वै त्रिष्टुक्। इन्द्रियमेव यजंमाने दधाति॥५४॥

मुरुतां प्रस्वे जेषिमित्यांह। मुरुद्धिरेव प्रसूत उन्नयित। आप्तं मन् इत्यांह। यदेव मन्सैफ्सींत्। तदांपत्। राजन्यं जिनाति। अनांकान्त एवाकंमते। वि वा एष इंन्द्रियेणं वीर्येणर्ध्यते। यो राजन्यं जिनाति। सम्हिमेन्द्रियेणं वीर्येणत्यांह॥५५॥

इन्द्रियमेव वीर्यमात्मन्धंते। पृश्नां मृन्युरंसि तवेंव मे मृन्युर्भूयादिति वाराही उपानहावुपं मुश्रते। पृश्नां वा एष मृन्युः। यद्वंराहः। तेनैव पंश्नां मृन्युमात्मन्धंते। अभि वा इय स्पृष्वाणं कामयते। तस्येश्वरेन्द्रियं वीर्यमादातोः। वाराही उपानहावुपंमुश्रते। अस्या एवान्तर्धते। इन्द्रियस्यं वीर्यस्यानात्ये॥५६॥

नमों मात्रे पृंथिव्या इत्याहाहि ईसायै। इयंद्स्यायुंर्स्यायुंर्मे धेहीत्यांह। आयुंरेवाऽऽत्मन्धंत्ते। ऊर्ग्स्यूर्जं मे धेहीत्यांह। ऊर्जमेवाऽऽत्मन्धंत्ते। युङ्कंसि वर्चोऽसि वर्चो मिये धेहीत्यांह। वर्चे एवाऽऽत्मन्धंत्ते। एकधा ब्रह्मण उपंहरति। एकधैव यर्जमान् आयुरूर्जं वर्चो दधाति। रथविमोचनीयां जुहोति प्रतिष्ठित्यै॥५७॥

त्रयोऽश्वां भवन्ति। रथंश्चतुर्थः। तस्मां चतुर्जुहोति। यदुभौ सहावृतिष्ठंताम्। समानं लोकिमंयाताम्। सह संङ्ग्रहीत्रा रथवाहंने रथमादंधाति। सुवृगिदेवैनं लोकादन्तदंधाति। हु सः श्रुं चिषदित्यादंधाति। ब्रह्मणैवैनं मुपावृहरंति। ब्रह्मणा-ऽऽदंधाति। अतिंच्छन्दुसाऽऽदंधाति। अतिंच्छन्दु। वै सर्वाणि

छन्दा श्री। सर्वेभिरेवैनं छन्दोभिरादंधाति। वर्ष्म् वा एषा छन्दंसाम्। यदतिंच्छन्दाः। यदतिंच्छन्दसा दधांति। वर्ष्मैवैन श्रीमानानांं करोति॥५८॥

पुद्यन्ते दुधाति वीर्येणेत्याहानांत्यै प्रतिष्ठित्ये ब्रह्मणाऽऽदंधाति सप्त चं॥————[९]

मित्रोंऽसि वर्रुणोऽसीत्याह। मैत्रं वा अहं। वारुणी रात्रिं। अहोरात्राभ्यामेवैनंमुपावंहरति। मित्रोंऽसि वर्रुणोऽसीत्यांह। मैत्रो व दक्षिणः। वारुणः सव्यः। वैश्वदेव्यांमिक्षां। स्वमेवैनौं भाग्धेयंमुपावंहरति। समृहं विश्वदेविरित्यांह॥५९॥

वैश्वदेव्यों वै प्रजाः। ता एवाद्याः कुरुते। क्ष्रत्रस्य नाभिरिस क्षत्रस्य योनिर्सीत्यंधीवासमास्तृंणाति सयोनित्वायं। स्योनामा सींद सुषदामा सीदेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। मा त्वां हिश्सीन्मा मां हिश्सीदित्याहाहिश्सायै। निषंसाद धृतव्रंतो वरुणः पुस्त्यांस्वा साम्रांज्याय सुक्रतुरित्यांह। साम्रांज्यमेवैनश् सुक्रतुं करोति। ब्रह्मा(३)न्त्वश् रांजन्ब्रह्माऽसिं सविताऽसिं सृत्यसंव इत्यांह। सवितारंमेवेनश् सत्यसंवं करोति॥६०॥

ब्रह्मा(३)न्त्व राजन्ब्रह्माऽसीन्द्रोऽसि सृत्यौजा इत्याह। इन्द्रमेवैन र्स्सत्यौजंसं करोति। ब्रह्मा(३)न्त्व र राजन्ब्रह्माऽसि मित्रोऽसि सुशेव इत्याह। मित्रमेवैन र्स्स सुशेवं करोति। ब्रह्मा(३)न्त्व राजन्ब्रह्मासि वर्रणोऽसि स्त्यधर्मेत्यांह। वर्रणमेवैन र् स्त्यधंर्माणं करोति। स्विताऽसिं स्त्यसंव इत्यांह। गायत्रीमेवैतेनांभि व्याहंरति। इन्द्रोंऽसि स्त्यौजा इत्यांह। त्रिष्टुर्भमेवैतेनांभि व्याहंरति॥६१॥

मित्रोंऽसि सुशेव इत्यांह। जगंतीमेवैतेनांभि व्याहंरति। सत्यमेता देवताः। सत्यमेतानि छन्दारंसि। सत्यमेवावं रुन्धे। वर्रुणोऽसि सत्यधर्मेत्यांह। अनुष्टुभंमेवैतेनांभि व्याहंरति। सत्यानृते वा अनुष्टुप्। सत्यानृते वर्रुणः। सत्यानृते पुवावं रुन्धे॥६२॥

नैन र सत्यानृते उंदिते हि इस्तः। य एवं वेदं। इन्द्रंस्य वज्रोऽिस वार्त्रघ्न इति स्फां प्रयंच्छिति। वज्रो वे स्फाः। वज्रेणैवास्मां अवरप्र र रेन्धयित। एव हि तच्छ्रेयः। यदंस्मा एते रध्येयः। दिशोऽभ्यंय र राजांऽभूदिति पश्चाक्षान्प्रयंच्छिति। एते वे सर्वेऽयाः। अपंराजायिनमेवैनं करोति॥६३॥

ओद्नमुद्भुंवते। प्रमेष्ठी वा एषः। यदोद्नः। प्रमामेवेन्ड् श्रियं गमयति। सुश्लोकाँ(४) सुमंङ्गलाँ(४) सत्यंराजा(३)-नित्यांह। आशिषंमेवेतामा शाँस्ते। शौनः शेपमाख्यांपयते। वरुणपाशादेवेनं मुञ्जति। प्रः शतं भंवति। शतायुः पुरुषः शतेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। मारुतस्य चैकंवि॰शतिकपालस्य वैश्वदेव्ये चामिक्षांया अग्नये स्विष्टकृते समवंद्यति। देवतांभिरेवेनंमुभ्यतः परिं गृह्णाति।

अपान्नम्ने स्वाहोर्जो नम्ने स्वाहाऽग्नये गृहपंतये स्वाहेतिं तिस्र आहुंतीर्जुहोति। त्रयं इमे लोकाः। पृष्वेव लोकेषु प्रतिं तिष्ठति॥६४॥

देवैरित्यांह स्त्यसंवं करोति त्रिष्टुर्भमेवैतेनांभि व्याहरित सत्यानृते एवावं रुन्धे करोति श्तेन्द्रियः षट् चं॥————[१०]

पृतद्वाँह्मणानि धात्रे रिक्निगाँन्देवसुवाम्थेतो देवीर्दिशः सोम्स्येन्द्रंस्य मित्रो दर्श॥१०॥
पृतद्वाँह्मणानि वैष्ण्वं त्रिंकपालमन्त्रं वै पूषा वाशाः स्थेत्यांह् दिशो व्यास्थांपयृत्युदंङ्वरेत्य
ब्रह्मा(३)न्त्व॰ रांज्ञ्ञ्चतुंष्षष्टिः॥६४॥
पृतद्वाँह्मणानि प्रतिं तिष्ठति॥

## हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके सप्तमः प्रपाठकः समाप्तः॥

#### ॥अष्टमः प्रश्नः॥

### ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके अष्टमः प्रपाठकः॥

वर्रणस्य सुषुवाणस्यं दश्धेन्द्रियं वीर्यं परांऽपतत्। तथ्स्रसृद्धिरन् समंसर्पत्। तथ्स्रस्पारं सरसृत्वम्। अग्निनां देवेन प्रथमेऽह्न्ननु प्रायुंङ्कः। सरस्वत्या वाचा द्वितीर्यं। स्वित्रा प्रंस्वेनं तृतीर्यं। पूष्णा प्रशिक्षंतुर्थे। बृह्स्पतिना ब्रह्मंणा पश्चमे। इन्द्रंण देवेनं षष्ठे। वर्रणेन् स्वयां देवत्या सप्तमे॥१॥

सोमेन राज्ञांऽष्ट्रमे। त्वष्ट्रां रूपेणं नव्मे। विष्णुंना यज्ञेनांऽऽप्रोत्। यथ्स्रस्पृप् भवंन्ति। इन्द्रियमेव तद्वीर्यं यजंमान आप्नोति। पूर्वापूर्वा वेदिर्भवति। इन्द्रियस्यं वीर्यस्यावंरुख्ये। पुरस्तांदुप्सदार्श् सौम्येन प्रचंरति। सोमो वै रेतोधाः। रेतं एव तद्दंधाति। अन्तरा त्वाष्ट्रेणं। रेतं एव हितं त्वष्टां रूपाणि विकंरोति। उपरिष्टाद्वैष्ण्वेनं। यज्ञो वै विष्णुंः। यज्ञ एवान्ततः प्रतिं तिष्ठति॥२॥

स्प्रमे दंधाति पश्चं च॥------[१]

जामि वा एतत्कुंर्वन्ति। यथ्सद्यो दीक्षयंन्ति सद्यः सोमं क्रीणन्ति। पुण्डरिस्रजां प्रयंच्छत्यजांमित्वाय। अङ्गिरसः सुवर्गं लोकं यन्तिः। अपसु दीक्षातपसी प्रावेशयन्। तत्पुण्डरीकमभवत्। यत्पुण्डरिस्रजां प्रयच्छंति। साक्षादेव दींक्षात्पसी अवं रुन्धे। दुशभिवंथ्सत्रैः सोमंं क्रीणाति। दशांक्षरा विराट्॥३॥

अन्नं विराट्। विराजैवान्नाद्यमवं रुन्धे। मुष्करा भविन्ति सेन्द्रत्वायं। दृशपेयो भवित। अन्नाद्यस्यावंरुद्धे। शृतं ब्राँह्मणाः पिंबन्ति। शृतायुः पुरुषः शृतेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। सुप्तदशङ् स्तोत्रं भविति। सुप्तदशः प्रजापंतिः॥४॥

प्रजापंतेरास्यै। प्राकाशावध्वर्यवे ददाति। प्रकाशमेवैनं गमयति। स्रजंमुद्गात्रे। व्येवास्मै वासयति। रुकार होत्रै। आदित्यमेवास्मा उन्नयति। अर्थं प्रस्तोतृप्रतिहृर्तृभ्यौम्। प्राजापत्यो वा अर्थः। प्रजापंतेरास्यै॥५॥

द्वादंश पष्टौहीर्ब्रह्मणें। आयुरेवावं रुन्थे। वृशां में त्रावरुणायं। राष्ट्रमेव वृश्यंकः। ऋष्मं ब्राह्मणाच्छु १ सिनें। राष्ट्रमेविन्द्रियाव्यंकः। वासंसी नेष्टापोतृभ्याम्। प्वित्रे प्वास्यैते। स्थूरि यवाचितमंच्छावाकायं। अन्तत एव वर्रणमवं यजते॥६॥

अनुङ्गाहं मुग्नीधं। विहुर्वा अनुङ्गान्। विह्नेर्ग्नीत्। विह्नेनेव विह्ने यज्ञस्यावं रुन्धे। इन्द्रंस्य सुषुवाणस्यं त्रेधेन्द्रियं वीर्यं परांऽपतत्। भृगुस्तृतीयमभवत्। श्रायन्तीयं तृतीयम्। सरंस्वती तृतीयम्। भार्गवो होतां भवति। श्रायन्तीयं ब्रह्मसामं भंवति। वार्वन्तीयंमग्निष्टोमसामम्। सार्स्वतीर्पो गृह्णाति। इन्द्रियस्यं वीर्यस्यावंरुद्धै। श्रायन्तीयं ब्रह्मसामं भंवति। इन्द्रियमेवास्मिन्वीर्यं श्रयति। वार्वन्तीयंमग्निष्टोमसामम्। इन्द्रियमेवास्मिन्वीर्यं वारयति॥७॥

विराद्रुजापंतिरश्वः प्रजापंतेराप्त्यै यजते ब्रह्मसामं भवति सप्त चं॥————[२]

र्ड्श्वरो वा एष दिशोऽनून्मंदितोः। यं दिशोऽनुं व्यास्थापयंन्ति। दिशामवेष्टयो भवन्ति। दिक्ष्वेव प्रतिं तिष्ठत्यनुंन्मादाय। पश्चं देवतां यजित। पश्च दिशंः। दिक्ष्वेव प्रतिं तिष्ठति। हिवषोहिवष इष्ट्वा बांर्हस्पृत्यम्भिघांरयित। यज्मानदेवत्यों वै बृह्स्पितिः। यजंमानमेव तेजंसा समर्धयित॥८॥

आदित्यां मृल्हां गुर्भिणीमा लंभते। मारुतीं पृश्जिं पष्ठौहीम्। विशं चैवास्मैं राष्ट्रं चं समीचीं दधाति। आदित्यया पूर्वया प्रचंरति। मारुत्योत्तंरया। राष्ट्र एव विश्वमनुंबध्नाति। उचैरादित्याया आश्रावयति। उपार्शु मारुत्यै। तस्माँद्राष्ट्रं विशमतिंवदति। गर्भिण्यांदित्या भवति॥९॥

इन्द्रियं वै गर्भः। राष्ट्रमेवेन्द्रियाव्यंकः। अगर्भा मांरुती। विश्वे मुरुतः। विश्वमेव निरिन्द्रियामकः। देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते देवा अश्विनौः पूषन्वाचः सत्य संन्निधायं। अनृतेनासुरान्भ्यंभवन्। तैंऽश्विभ्यां पूष्णे पुरोडाशं द्वादंशकपालं निर्वपन्। ततो वै ते वाचः

## सत्यमवांरुन्धत॥१०॥

यद्श्विभ्यां पूष्णे पुरोडाशं द्वादंशकपालं निर्वपंति। अनृतेनैव भ्रातृंव्यानिभूयं। वाचः सत्यमवं रुन्धे। सरंस्वते सत्यवाचे च्रम्। पूर्वमेवोदितम्। उत्तरेणाभि गृंणाति। सवित्रे सत्यप्रंसवाय पुरोडाशं द्वादंशकपालं प्रसूत्यै। दूतान्प्रहिंणोति। आविदं एता भवन्ति। आविदंमेवैनं गमयन्ति। अथो दूतेभ्यं एव न छिंद्यते। तिसृधन्वश् शुंष्कदितिर्दक्षिंणा समृंद्धौ॥११॥

अर्ध्यति भवत्यरुन्धत गुम्यन्ति द्वे चं॥————[3]

आग्नेयम्ष्टाकंपालं निर्वपति। तस्माच्छिशिरे कुरुपश्चालाः प्राश्चो यान्ति। सौम्यं चुरुम्। तस्माँद्वस्नन्तं व्यंवसायांदयन्ति। सावित्रं द्वादंशकपालम्। तस्माँत्पुरस्ताद्यवांनाः सवित्रा विरुन्थते। बार्हुस्पत्यं चुरुम्। सवित्रेव विरुध्यं। ब्रह्मणा यवानादंधते। त्वाष्ट्रमृष्टाकंपालम्॥१२॥

रूपाण्येव तेनं कुर्वते। वैश्वान्तं द्वादंशकपालम्। तस्मां ज्ञचन्यं नैदांघे प्रत्यश्चंः कुरुपश्चाला याँन्ति। सारुस्वतं चरुं निर्वपति। तस्मां त्प्रावृष्टि सर्वा वाचो वदन्ति। पौष्णेन् व्यवस्यन्ति। मैत्रेणं कृषन्ते। वारुणेन् विधृंता आसते। क्षेत्रपत्येनं पाचयन्ते। आदित्येनादंधते॥१३॥

मासिमाँस्येतानिं ह्वी १ षिं निरुप्याणीत्यांहुः।

तेनैवर्त्नप्रयुंङ्क इति। अथो खल्वांहुः। कः संवथ्सरं जीविष्यतीति। षडेव पूर्वेद्युर्निरुप्यांणि। षडुंत्तरेद्युः। तेनैवर्त्नप्रयुंङ्के। दक्षिणो रथवाहनवाहः पूर्वेषां दक्षिणा। उत्तर् उत्तरेषाम्। संवथ्सरस्यैवान्तौ युनक्ति। सुवर्गस्यं लोकस्य समष्ट्री॥१४॥

त्वाष्ट्रमृष्टाकंपालं दधते युन्तच्येकं च॥-----[४]

इन्द्रंस्य सुषुवाणस्यं दश्धिन्द्रियं वीर्यं पर्राऽपतत्। स यत्प्रंथमं निरष्ठीवत्। तत्केलमभवत्। यद्वितीयम्। तद्वदंरम्। यत्तृतीयम्। तत्कुर्कन्धुं। यन्नुस्तः। स सिन्दुः। यदक्ष्यौः॥१५॥

स शाँदूंलः। यत्कर्णयोः। स वृक्तः। य ऊर्ध्वः। स सोमः। याऽवांची। सा सुरां। त्रयाः सक्तंवो भवन्ति। इन्द्रियस्यावंरुख्यै। त्रयाणि लोमांनि॥१६॥

त्विषिमेवावं रुन्थे। त्रयो ग्रहाः। वीर्यमेवावं रुन्थे। नाम्नां दश्मी। नव वै पुरुषे प्राणाः। नाभिर्दश्मी। प्राणा इंन्द्रियं वीर्यम्। प्राणानेवेन्द्रियं वीर्यं यजमान आत्मन्थंत्ते। सीसेन क्रीबाच्छष्पांणि क्रीणाति। न वा पुतदयो न हिरंण्यम्॥१७॥

यथ्सीसम्। न स्त्री न पुमान्। यत्क्रीबः। न सोमो न सुराँ। यथ्सौत्रामणी समृद्धौ। स्वाद्वीन्त्वाँ स्वादुनेत्यांह। सोमंमेवैनाँ करोति। सोमोंऽस्यश्विभ्याँ पच्यस्व सरंस्वत्यै पच्यस्वेन्द्रांय सुत्राम्णे पच्यस्वेत्यांह। एताभ्यो ह्यंषा देवतांभ्यः पच्यंते। तिस्रः स॰सृष्टा वसति॥१८॥

तिस्रो हि रात्रीः क्रीतः सोमो वसंति। पुनातुं ते पिर्स्रुत्मिति यजुंषा पुनाति व्यावृंत्त्यै। प्वित्रेण पुनाति। प्वित्रेण हि सोमं पुनन्ति। वारेण शश्वंता तनेत्यांह। वारेण हि सोमं पुनन्ति। वायुः पूतः प्वित्रेणेति नैतयां पुनीयात्। व्यृंद्धा ह्यंषा। अतिप्वितस्यैतयां पुनीयात्। कुविद्ङ्गेत्यनिंरुक्तया प्राजाप्त्ययां गृह्णाति॥१९॥

अनिंरुक्तः प्रजापंतिः। प्रजापंतेरास्यै। एकंयुर्चा गृह्णाति। एक्थेव यजंमाने वीर्यं दधाति। आश्विनं धूम्रमालंभते। अश्विनौ वै देवानां भिषजौं। ताभ्यांमेवास्मे भेषुजं कंरोति। सारुस्वतं मेषम्। वाग्वे सरंस्वती। वाचैवैनं भिषज्यति। ऐन्द्रमृषभ सेन्द्रत्वायं॥२०॥

अक्ष्योर्लोमानि हिरंण्यं वसति गृह्णाति भिषज्यत्येकं च॥————[५]

यित्रषु यूपैष्वालभेत। बिहुर्धाऽस्मांदिन्द्रियं वीर्यं दध्यात्। भ्रातृंव्यमस्मे जनयेत्। एक्यूप आलंभते। एक्यैवास्मिन्निन्द्रियं वीर्यं दधाति। नास्मै भ्रातृंव्यं जनयित। नेतेषां पशूनां पुरोडाशां भवन्ति। ग्रहंपुरोडाशां ह्येते। युवः सुरामंमिश्वनेतिं सर्वदेवत्यं याज्यानुवाक्यं भवतः। सर्वा एव देवताः प्रीणाति॥२१॥

ब्राह्मणं परिक्रीणीयादुच्छेषंणस्य पातारम्। ब्राह्मणो ह्याहुंत्या उच्छेषंणस्य पाता। यदिं ब्राह्मणं न विन्देत्। वल्मीक्वपायामवं नयेत्। सैव ततः प्रायंश्वित्तिः। यद्वै सौत्रामण्ये व्यृद्धम्। तदंस्ये समृद्धम्। नानादेवत्याः प्रश्वंश्व पुरोडाशांश्व भवन्ति समृद्धे। ऐन्द्रः पंशूनामृत्तमो भवति। ऐन्द्रः पुरोडाशांनां प्रथमः॥२२॥

इन्द्रिये प्वास्मैं स्मीचीं दधाति। पुरस्तांदनूयाजानाँ पुरोडाशैः प्रचरित। पुशवो वै पुरोडाशौः। पुश्नेवावं रुन्धे। पुन्द्रमेकांदशकपालुं निर्वपिति। इन्द्रियमेवावं रुन्धे। सावित्रं द्वादंशकपालुं प्रस्त्ये। वारुणं दशकपालम्। अन्तृत एव वर्रणमवं यजते। वर्डबा दक्षिणा॥२३॥

उत वा एषाऽश्व स्ते। उताऽश्वंतरम्। उत सोमं उत स्रां। यथ्मौत्रामणी समृद्धे। बार्ह्स्पत्यं पृशुं चंतुर्थमंतिपवितस्या लेभते। ब्रह्म वै देवानां बृह्स्पतिः। ब्रह्मणैव यज्ञस्य व्यृद्धमिपं वपति। पुरोडाशंवानेष पृशुभंवित। न ह्यंतस्य ग्रहं गृह्णन्ति। सोमंप्रतीकाः पितरस्तृण्णुतेतिं शतातृण्णाया समवंनयित॥२४॥

शृतायुः पुरुषः शृतेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। दक्षिणेऽग्नौ जुंहोति। पापवस्यसस्य व्यावृत्त्यै। हिरंण्यमन्त्रा धारयति। पूतामेवैनां जुहोति। शृतमानं भवति। शृतायुः पुरुषः श्तेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। यत्रैव शंतातृण्णां धारयंति॥२५॥

तन्निदंधाति प्रतिष्ठित्यै। पितृन् वा एतस्यैन्द्रियं वीर्यं गच्छति। यर सोमोऽति पर्वते। पितृणां याँज्यानुवाक्यांभिरुपं तिष्ठते। यदेवास्यं पितृनिन्द्रियं वीर्यं गच्छति। तदेवावं रुन्थे। तिस्भिरुपं तिष्ठते। तृतीये वा इतो लोके पितरंः। तानेव प्रीणाति। अथो त्रीणि वे यज्ञस्यैन्द्रियाणि। अध्वर्युर्होतां ब्रह्मा। त उपंतिष्ठन्ते। यान्येव यज्ञस्यैन्द्रियाणि। तैरेवास्मैं भेषजं करोति॥२६॥

प्रीणाति प्रथमो दक्षिणा समवंनयति धारयंतीन्द्रियाणि चत्वारिं च॥————[६]

अग्निष्टोममग्र आहंरति। यज्ञमुखं वा अंग्निष्टोमः। यज्ञमुखमेवारभ्यं स्वमा क्रंमते। अथैषोऽभिषेचनीयंश्चतु-स्त्रिष्शपंवमानो भवति। त्रयंस्त्रिष्शृद्धे देवताः। ता एवाऽऽप्नोति। प्रजापंतिश्चतुस्त्रिष्शः। तमेवाऽऽप्नोति। स्थ्शर एष स्तोमानामयंथापूर्वम्। यद्विषंमाः स्तोमाः॥२७॥

पुतावान् वै यज्ञः। यावान्यवंमानाः। अन्तः श्लेषंणं त्वा अन्यत्। यथ्समाः पवंमानाः। तेनाऽसर्श्वारः। तेनं यथापूर्वम्। आत्मनैवाग्निष्टोमेनुर्प्नोतिं। आत्मना पुण्यो भवति। प्रजा वा उक्थानिं। पृशवं उक्थानिं। यदुक्थ्यो भवत्यनु सन्तंत्त्यै॥२८॥

स्तोमाः पशवं उक्थान्येकं च॥\_\_\_\_\_

उपं त्वा जामयो गिर् इतिं प्रतिपद्भवित। वाग्वै वायुः। वाच एवैषोऽभिषेकः। सर्वासामेव प्रजानाः सूयते। सर्वा एनं प्रजा राजेतिं वदन्ति। एतम् त्यन्दश् क्षिप् इत्यांह। आदित्या वै प्रजाः। प्रजानांमेवेतेनं सूयते। यन्ति वा एते यंज्ञमुखात्। ये सम्मार्या अक्रन्॥२९॥

यदाह् पर्वस्व वाचो अंग्रिय इति। तेनैव यंज्ञमुखान्नयंन्ति। अनुष्टुक्प्रथमा भवति। अनुष्टुगुंत्तमा। वाग्वा अनुष्टुक्। वाचैव प्रयन्ति। वाचोद्यंन्ति। उद्वंतीर्भवन्ति। उद्वद्वा अनुष्टुभों रूपम्। आनुष्टुभो राजन्यः॥३०॥

तस्मादुद्वंतीर्भवन्ति। सौर्यनुष्टुगुंत्तमा भंवति। सुवर्गस्यं लोकस्य सन्तंत्यै। यो वै स्वादेतिं। नैनर्ं स्व उपनमित। यः सामंभ्य एतिं। पापींयान्थ्सुषुवाणो भंवति। पृतानि खलु वै सामानि। यत्पृष्ठानिं। यत्पृष्ठानि भवन्ति॥३१॥

तैर्व स्वान्नैतिं। यानिं देवराजानाः सामानि। तैर्मुष्मिंश्लोक ऋंध्रोति। यानिं मनुष्यराजानाः सामानि। तैर्स्मिंश्लोक ऋंध्रोति। उभयोरेव लोकयोर् ऋध्रोति। देवलोके चं मनुष्यलोके चं। एकविश्शोंऽभिषेचनीयंस्योत्तमो भवति। एकविश्शः केशवपनीयंस्य प्रथमः। सप्तद्शो दंशपेयः॥३२॥

विड्वा एंकवि १ शः। राष्ट्र १ संप्तद्शः। विशं एवैतन्मध्यतीं-ऽभिषिंच्यते। तस्माद्वा एष विशां प्रियः। विशो हि मंध्यतों ऽभिषिच्यतें। यद्वा एंनम्दो दिशो ऽनुं व्यास्थापयंन्ति। तथ्सुंवर्गं लोकम्भ्या रोहिति। यदिमं लोकं न प्रत्यवरोहेंत्। अतिज्ञनं वेयात्। उद्वां माद्येत्। यदेष प्रतीचीनः स्तोमो भवंति। इममेव तेनं लोकं प्रत्यवंरोहित। अथों अस्मिन्नेव लोके प्रतिं तिष्ठत्यनुंन्मादाय॥३३॥

अर्क्नजाजुन्यों भवंन्ति दशुपेयों माद्येत्रीणि च॥\_\_\_\_\_[८]

ड्यं वै रंज्ता। असौ हिरंणी। यद्रुक्मौ भवंतः। आभ्यामेवैनंमुभ्यतः पिरं गृह्णाति। वर्रुणस्य वा अभिष्च्यमांनस्यापंः। इन्द्रियं वीर्यं निरंप्रन्। तथ्सुवर्ण्ष् हिरंण्यमभवत्। यद्रुक्ममंन्तर्दधांति। इन्द्रियस्यं वीर्यस्यानिर्घाताय। शतमांनो भवति शतक्षरः। शतायुः पुरुषः शतेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। आयुर्वे हिरंण्यम्। आयुष्यां पुवैनंमभ्यतिं क्षरन्ति। तेजो वे हिरंण्यम्। तेज्रस्यां पुवैनंमभ्यतिं क्षरन्ति। वर्चो वे हिरंण्यम्। तेज्रस्यां पुवैनंमभ्यतिं क्षरन्ति। वर्चो वे हिरंण्यम्। वर्चस्यां पुवैनंमभ्यतिं क्षरन्ति॥३४॥

श्तक्षंगेऽष्टौ चं॥————[९]

अप्रतिष्ठितो वा एष इत्यांहुः। यो रांज्सूयेंन् यजंत् इतिं। यदा वा एष एतेनं द्विरात्रेण यजंते। अर्थ प्रतिष्ठा। अर्थ संवथ्स्रमाप्नोति। यावंन्ति संवथ्स्रस्यांहोरात्राणि। तावंतीरेतस्यं स्तोत्रीयाः। अहोरात्रेष्वेव प्रतिं तिष्ठति। अग्निष्टोमः पूर्वमहंर्भवति। अतिरात्र उत्तरम्॥३५॥ नानैवाहोरात्रयोः प्रति तिष्ठति। पौर्णमास्यां पूर्वमहंभवित। व्यष्टकायामुत्तरम्। नानैवार्धमासयोः प्रति तिष्ठति। अमावास्यायां पूर्वमहंभविति। उद्दृष्ट उत्तरम्। नानैव मासयोः प्रति तिष्ठति। अथो खलुं। ये एव संमानपक्षे पुंण्याहे स्याताम्। तयोः कार्यं प्रतिष्ठित्यै॥३६॥

अप्श्वयो हिरात्र इत्यांहुः। हे ह्यंते छन्दंसी।
गायत्रं च त्रेष्टुंभं च। जगंतीम्नत्यंन्ति। न तेन् जगंती
कृतत्यांहुः। यदंनान्तृतीयसवने कुर्वन्तीतिं। यदा वा
पृषाऽहीन्स्याहुर्भजंते। साह्रस्यं वा सवनम्। अथैव जगंती
कृता। अथं पश्वयंः। व्यंष्टिर्वा पृष हिरात्रः। य पृवं
विद्वान्द्विरात्रेण यजंते। व्यंवास्मां उच्छति। अथो तमं पृवापं
हते। अग्निष्टोममंन्तृत आ हंरति। अग्निः सर्वा देवताः।
देवतांस्वेव प्रतिं तिष्ठति॥३७॥

उत्तरं प्रतिष्ठित्यै पश्वयः सप्त चं॥———[१०]

वर्रुणस्य जामि वा ईंश्वर आंग्नेयमिन्द्रंस्य यत्रिष्वंग्रिष्टोममुपं त्वेयं वै रंजुताऽप्रंतिष्ठितो दशं॥१०॥

वर्रणस्य यदिश्वभ्यां यत्रिषु तस्मादुद्वंतीः सप्तित्रिर्श्यत्॥३७॥ वर्रणस्य प्रति तिष्ठति॥

# हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके अष्टमः

अष्टमः प्रश्नः 143

प्रपाठकः समाप्तः॥

#### ॥ अष्टकम् २॥

॥प्रथमः प्रश्नः॥

#### ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके प्रथमः प्रपाठकः॥

अङ्गिरसो वै स्त्रमांसत। तेषां पृश्ञिर्धर्मधुगांसीत्। सर्जीषेणांजीवत्। तेंंऽब्रुवन्। कस्मै नु स्त्रमांस्महे। येंंऽस्या ओषधीर्म जनयांम् इतिं। ते दिवो वृष्टिंमसृजन्त। यावंन्तः स्तोका अवापंद्यन्त। तावंतीरोषंधयोऽजायन्त। ता जाताः पितरों विषेणांलिम्पन्॥१॥

तासाँ जुग्ध्वा रुप्यन्त्यैत्। तैंऽब्रुवन्। क इदिमृत्थमंक्रितिं। वयं भागधेयंमिच्छमाना इति पितरोंऽब्रुवन्। किं वो भागधेयमितिं। अग्निहोत्र एव नोऽप्यस्त्वित्यंब्रुवन्। तेभ्यं एतद्भागधेयं प्रायंच्छन्। यद्भुत्वा निमार्ष्टिं। ततो वै त ओषंधीरस्वदयन्। य एवं वेदं॥२॥

स्वदंन्तेऽस्मा ओषंधयः। ते वृथ्समुपावांसृजन्। इदं नों हृव्यं प्रदांपयेतिं। सोंऽब्रवीद्वरं वृणे। दशं मा रात्रींर्जातं न दोहन्। आसङ्गवं मात्रा सह चंराणीतिं। तस्मांद्वथ्सं जातं दश रात्रीर्न दुंहन्ति। आसङ्गवं मात्रा सह चंरति। वारेवृत्र् ह्यंस्य। तस्मांद्वथ्स सर्स्मृष्टध्य रुद्रो घातुंकः। अति हि सन्धान्धयंति॥३॥

अलिम्पन्वेद घातुंक एकं च॥—

प्रजापंतिर्ग्निमंसृजत। तं प्रजा अन्वंसृज्यन्त। तमंभाग उपांस्त। सोंऽस्य प्रजाभिरपांक्रामत्। तमंव्रुकंध्समानो-ऽन्वैत्। तमंव्रुधं नाशंक्रोत्। स तपोंऽतप्यत। सोंऽग्निरुपांरम्तातांपि वे स्य प्रजापंतिरितिं। स र्राटादुदंमृष्ट॥४॥

तद्घृतमंभवत्। तस्माद्यस्यं दक्षिणतः केशा उन्मृंष्टाः। ताञ्जेष्ठलक्ष्मी प्रांजापत्येत्यांहुः। यद्र्राटांदुदमृंष्ट। तस्मांद्र्राट्रे केशा न संन्ति। तद्ग्रौ प्रागृह्णात्। तद्यंचिकिथ्सत्। जुहवानी(३) मा हौषा(३)मितिं। तद्विंचिकिथ्सायै जन्मं। य पृवं विद्वान् विचिकिथ्संति॥५॥

वसीय एव चेतयते। तं वाग्भ्यंवदज्जुहुधीतिं। सौंऽब्रवीत्। कस्त्वम्सीतिं। स्वैव ते वागित्यंब्रवीत्। सोंऽजुहोथ्स्वाहेतिं। तथ्स्वांहाकारस्य जन्मं। य एवङ्स्वांहाकारस्य जन्म वेदं। क्रोतिं स्वाहाकारेणं वीर्यम्। यस्यैवं विदुषंः स्वाहाकारेण जुह्वंति॥६॥

भोगांयैवास्यं हुतं भंवति। तस्या आहंत्यै पुरुषमसृजत। द्वितीयंमजुहोत्। सोऽश्वंमसृजत। तृतीयंमजुहोत्। स गामंसृजत। चृतुर्थमंजुहोत्। सोऽविंमसृजत। पृश्चममंजुहोत्। सोऽजामंसृजत॥७॥

सौंऽग्निरंबिभेत्। आहुंतीभिवें मांऽऽप्नोतीतिं। स प्रजापंतिं पुनः प्राविंशत्। तं प्रजापंतिरब्रवीत्। जायुस्वेतिं। सौंऽब्रवीत्। किं भांगुधेयंम्भि जंनिष्य इतिं। तुभ्यंमेवेद हूंयाता इत्यंब्रवीत्। स पुतद्भांगुधेयंमुभ्यंजायत। यदंग्निहोत्रम्॥८॥

तस्मांदग्निहोत्रम्ंच्यते। तद्धूयमांनमादित्यौंऽब्रवीत्। मा हौषीः। उभयोर्वे नांवेतदितिं। सौंऽग्निरंब्रवीत्। कथं नौं होष्यन्तीतिं। सायमेव तुभ्यंं जुहवन्ं। प्रातर्मह्यमित्यंब्रवीत्। तस्मांद्ग्रयें साय हूंयते। सूर्याय प्रातः॥९॥

आग्नेयी वै रात्रिः। ऐन्द्रमहंः। यदनुंदिते सूर्यं प्रातर्जुहुयात्। उभयंमेवाग्नेय एस्यात्। उदिते सूर्यं प्रातर्जुहोति। तथाऽग्नयं साय एह्यते। सूर्याय प्रातः। रात्रिं वा अनुं प्रजाः प्र जांयन्ते। अहा प्रतिं तिष्ठन्ति। यथ्सायं जुहोतिं॥१०॥

प्रैव तेनं जायते। उदिते सूर्यें प्रातर्जुहोति। प्रत्येव तेनं तिष्ठति। प्रजापंतिरकामयत् प्रजायेयेतिं। स एतदिग्निहोत्रं मिथुनमंपश्यत्। तदुदिते सूर्येऽजुहोत्। यजुंषाऽन्यत्। तूष्णीम्न्यत्। ततो वै स प्राजायत। यस्यैवं विदुष् उदिते सूर्येऽग्निहोत्रं जुह्वंति॥११॥

प्रैव जांयते। अथो यथा दिवाँ प्रजानन्नेतिं। ताहगेव तत्। अथो खल्वांहुः। यस्य वै द्वौ पुण्यौं गृहे वसंतः। यस्तयोर्न्यः राधयंत्यन्यं न। उभौ वाव स तावृच्छ्तीतिं। अग्निं वावा-ऽऽदित्यः सायं प्र विंशति। तस्मांद्ग्निर्द्रान्नक्तंं दहशे। उभे

### हि तेजंसी सम्पद्येते॥१२॥

उद्यन्तं वावाऽऽदित्यम्ग्निरन् स्मारोहित। तस्माँद्भूम पृवाग्नेर्दिवां दहशे। यद्ग्नयें सायं जुंहुयात्। आ सूर्याय वृश्च्येत। यथ्सूर्याय प्रातर्जुंहुयात्। आऽग्नयें वृश्च्येत। देवतांभ्यः स्मदं दथ्यात्। अग्निज्योंतिज्योंतिः सूर्यः स्वाहेत्येव साय॰ होत्व्यम्। सूर्यो ज्योतिज्योंतिर्ग्निः स्वाहेतिं प्रातः। तथोभाभ्या स्माय ह्रियते॥१३॥

उभाभ्यां प्रातः। न देवतांभ्यः समदं दधाति। अग्निर्ज्योति-रित्यांह। अग्निर्वे रेतोधाः। प्रजा ज्योतिरित्यांह। प्रजा एवास्मै प्र जंनयति। सूर्यो ज्योतिरित्यांह। प्रजास्वेव प्रजांतासु रेतो दधाति। ज्योतिंरग्निः स्वाहेत्यांह। प्रजा एव प्रजांता अस्यां प्रतिष्ठापयति॥१४॥

तूष्णीमुत्तंरामाहंतिं जुहोति। मिथुन्त्वाय् प्रजांत्यै। यद्दिते सूर्ये प्रांतर्जुहुयात्। यथाऽतिंथये प्रद्रंताय शून्यायांवस्थायांहार्य हर्रन्ति। ताहगेव तत्। क्वाऽऽह् तत्स्तद्भवतीत्यांहुः। यथ्म न वेदं। यस्मै तद्धर्न्तीति। तस्माद्यदौष्मं जुहोतिं। तदेव संम्प्रति। अथो यथा प्रार्थमौष्मं परिवेवेष्टि। ताहगेव तत्॥१५॥

रुद्रो वा एषः। यद्ग्निः। पर्ली स्थाली। यन्मध्ये-ऽग्नेरिधेश्रयेत्। रुद्राय पत्नीमिपं दध्यात्। प्रमायुंका स्यात्। उदीचोऽङ्गारान्निरूह्याधिं श्रयति। पत्नियै गोपीथायं। व्यन्तान्करोति। तथा पत्यप्रमायुका भवति॥१६॥

घुर्मो वा एषोऽशाँन्तः। अहंरहुः प्र वृंज्यते। यदंग्निहोत्रम्। प्रतिषिश्चेत्पृशुकांमस्य। शान्तिमिव हि पंशुव्यम्। न प्रतिं-षिश्चेद्वह्मवर्च्सकांमस्य। समिद्धमिव हि ब्रह्मवर्च्सम्। अथो खलुं। प्रतिषिच्यंमेव। यत्प्रतिषिश्चति॥१७॥

तत्पंश्व्यम्। यञ्जुहोति। तद्वंह्मवर्चसि। उभयंमेवाकः। प्रच्युंतं वा एतद्स्माल्लोकात्। अगंतं देवलोकम्। यच्छृतः ह्विरनंभिघारितम्। अभि द्योतयति। अभ्येवैनंद्घारयति। अथो देवत्रैवैनंद्गयति॥१८॥

पर्याग्ने करोति। रक्षंसामपंहत्यै। त्रिः पर्याग्ने करोति। त्र्यांवृद्धि युज्ञः। अथों मेध्यत्वायं। यत्प्राचीनंमुद्धासयेत। यजंमान शुचाऽपंयेत्। यद्देक्षिणा। पितृदेवत्य एक्षे स्यात्। यत्प्रत्यक्॥१९॥

पत्नी १ शुचा ऽर्पयेत्। उदीची नुमुद्वां सयित। एषा वै देवमनुष्याणा १ शान्ता दिक्। तामे वैनुदनूद्वां सयित शान्त्यै। वर्त्म करोति। यज्ञस्य सन्तंत्यै। निष्टंपित। उपैव तथ्स्तृंणाित। चतुंष्पादः पृशवंः॥२०॥

पृश्नेवावं रुन्थे। सर्वांन्पूर्णानुन्नंयित। सर्वे हि पुण्यां राद्धाः। अनूच उन्नंयित। प्रजायां अनूचीनृत्वायं। अनूच्येवास्यं प्रजा-ऽर्धुका भवति। सम्मृंशित् व्यावृत्त्यै। नाहोंष्युनुपं सादयेत्। यदहोंष्यनुपसादयेंत्। यथाऽन्यस्मां उपनिधायं॥२१॥

अन्यस्मैं प्रयच्छंति। ताहगेव तत्। आऽस्मैं वृश्चेत। यदेव गार्हंपत्येऽधि श्रयंति। तेन गार्हंपत्यं प्रीणाति। अग्निरंबिभेत्। आहुंतयो माऽत्येष्यन्तीतिं। स पृताः समिधंमपश्यत्। तामाऽधंत्त। ततो वा अग्नावाहुंतयो-ऽधियन्त॥२२॥

यदेन १ समयंच्छत्। तथ्समिधंः सिम्त्वम्। सिमध्मा दंधाति। समेवैनं यच्छति। आहुंतीनां धृत्यैं। अथों अग्निहोत्रमेवेध्मवंत्करोति। आहुंतीनां प्रतिष्ठित्ये। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। यदेका १ सिमधंमाधाय द्वे आहुंती जुहोतिं। अथं कस्या १ सिमिधं द्वितीयामाहुंतिं जुहोतीतिं॥२३॥

यद्वे स्मिधांवा द्ध्यात्। भ्रातृंव्यमस्मै जनयेत्। एका र स्मिधंमाधायं। यजुंषाऽन्यामाहुंतिं जुहोति। उभे एव स्मिद्वंती आहुंती जुहोति। नास्मै भ्रातृंव्यं जनयति। आदींप्तायां जुहोति। समिद्धमिव हि ब्रह्मवर्च्सम्। अथो यथाऽतिंथिं ज्योतिंष्कृत्वा पंरि वेवेष्टि। ताहगेव तत्। चतुरुन्नंयति। द्विर्जुहोति। तस्मौद्विपाचतुंष्पादमत्ति। अथौ द्विपद्येव चतुंष्पदः प्रतिष्ठापयति॥२४॥ भुवृति प्रतिषिञ्चिति गमयति प्रत्यक्पशवं उपनिधार्यांप्रियन्तेति तच्चत्वारिं च॥———[३]

उत्तरावंतीं वै देवा आहंतिमजुंहवुः। अवांचीमसुंराः। ततों देवा अभवन्। पराऽसुंराः। यं कामयेत् वसीयान्थ्स्यादितिं। कनीयस्तस्य पूर्वर्ष हुत्वा। उत्तरं भूयो जुहुयात्। एषा वा उत्तरावृत्याहुंतिः। तान्देवा अंजुहवुः। तत्नस्तेंऽभवन्॥२५॥

यस्यैवं जुह्वंति। भवंत्येव। यं कामयंत् पापीयान्थस्यादितिं। भूयस्तस्य पूर्व हुत्वा। उत्तरं कनीयो जुहुयात्। एषा वा अवाच्याहुंतिः। तामसुंरा अजुहवुः। तत्स्ते परांऽभवन्। यस्यैवं जुह्वंति। परैव भवति॥२६॥

हुत्वोपं सादयत्यजांमित्वाय। अथो व्यावृंत्त्यै। गार्हंपत्यं प्रतींक्षते। अनंनुध्यायिनमेवेनं करोति। अग्निहोत्रस्य वे स्थाणुरंस्ति। तं य ऋच्छेत्। यज्ञस्थाणुमृंच्छेत्। एष वा अग्निहोत्रस्यं स्थाणुः। यत्पूर्वाऽऽहुंतिः। तां यदुत्तंरयाऽभि जुंहुयात्॥२७॥

यज्ञस्थाणुमृंच्छेत्। अतिहाय पूर्वामाहुंतिं जुहोति। यज्ञस्थाणुमेव परिं वृणक्ति। अथो भ्रातृंव्यमेवास्वाऽतिं क्रामित। अवाचीन सायमुपंमार्षि। रेतं एव तद्दंधाति। ऊर्ध्वं प्रातः। प्र जंनयत्येव तत्। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। चतुरुन्नंयति॥२८॥

द्विर्जुहोति। अथु क्वं द्वे आहुंती भवतु इतिं। अग्नौ वैश्वान्र

इति ब्रूयात्। एष वा अग्निर्वैश्वान्रः। यद्ग्रौह्मणः। हुत्वा द्विः प्राश्ञांति। अग्नावेव वैश्वान्रे द्वे आहुंती जुहोति। द्विर्जुहोतिं। द्विर्निमौष्टिं। द्विः प्राश्ञांति॥२९॥

षद्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतूनेव प्रीणाति। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। किं देवत्यंमग्निहोत्रमितिं। वैश्वदेवमितिं ब्र्यात्। यद्यज्ञंषा जुहोतिं। तदैन्द्राग्नम्। यत्तूष्णीम्। तत्प्रांजापुत्यम्॥३०॥

यित्रमार्ष्टिं। तदोषंधीनाम्। यिद्वितीयम्। तत्पितृणाम्। यत्प्राश्ञांति। तद्गर्भाणाम्। तस्माद्गर्भा अनंश्ञन्तो वर्धन्ते। यदाचामंति। तन्मंनुष्यांणाम्। उदंङ्घर्यावृत्याचांमति॥३१॥

आत्मनों गोपीथायं। निर्णेनेक्ति शुद्धौं। निष्टंपित स्वगाकृत्ये। उद्दिंशति। स्प्तर्षीनेव प्रींणाति। दक्षिणा पूर्यावर्तते। स्वमेव वीर्यमन् पूर्यावर्तते। तस्माद्दक्षिणोऽर्ध आत्मनों वीर्यावत्तरः। अथों आदित्यस्यैवावृत्मन् पूर्यावर्तते। हुत्वोप समिन्धे॥३२॥

ब्रह्मवर्चसस्य सिमंद्धै। न ब्र्हिरनु प्र हंरेत्। असईस्थितो वा एष यज्ञः। यदिग्निहोत्रम्। यदेनु प्रहरेत्। यज्ञं विच्छिन्द्यात्। तस्मान्नानुं प्रहृत्यम्। यज्ञस्य सन्तंत्यै। अपो नि नंयति। अवभृथस्यैव रूपमंकः॥३३॥

अभवन्भवृति जुहुयान्नंयति मार्ष्टि द्विः प्राश्ञांति प्राजापृत्यमाचांमतीन्धेऽकः॥————[४]

ब्रह्मवादिनों वदन्ति। अग्निहोत्रप्रांयणा युज्ञाः। किं प्रांयणमग्निहोत्रमितिं। वृथ्सो वा अग्निहोत्रस्य प्रायंणम्। अग्निहोत्रं युज्ञानांम्। तस्यं पृथिवी सदंः। अन्तिरिक्षमाग्नींद्धम्। द्यौर्हंविर्धानम्। दिव्या आपः प्रोक्षंणयः। ओषंधयो ब्रहिः॥३४॥

वन्स्पतंय इध्मः। दिशः परिधयः। आदित्यो यूपः। यजमानः पृशः। समुद्रोऽवभृथः। संवथ्सरः स्वंगाकारः। तस्मादाहिताग्रेः सर्वमेव बहिष्यं दत्तं भवति। यथ्मायं जुहोति। रात्रिमेव तेनं दक्षिण्यां कुरुते। यत्प्रातः॥३५॥

अहंरेव तेनं दक्षिण्यं कुरुते। यत्ततो ददांति। सा दक्षिणा। यावन्तो वै देवा अहुंतमादन्। ते परांऽभवन्। त एतदिग्निहोत्र श् सर्वस्येव संमवदायां जुहवुः। तस्मांदाहुः। अग्निहोत्रं वै देवा गृहाणां निष्कृंतिमपश्यित्रिति। यथ्मायं जुहोति। रात्रिया एव तद्धुताद्यांय॥३६॥

यजंमान्स्यापंराभावाय। यत्प्रातः। अहं एव तद्धुताद्यांय। यजंमान्स्यापंराभावाय। यत्ततोऽश्ञातिं। हुतमेव तत्। द्वयोः पर्यसा जुहुयात्पृशुकांमस्य। एतद्वा अग्निहोत्रं मिथुनम्। य एवं वेदं। प्र प्रजयां पृशुभिंमिंथुनैर्जायते॥३७॥

इमामेव पूर्वया दुहे। अमूमुत्तंरया। अधिश्रित्योत्तंरमा

नंयति। योनांवेव तद्रेतः सिश्चति प्रजनंने। आज्येन जुहुयात्तेजंस्कामस्य। तेजो वा आज्यम्। तेज्रस्येव भंवति। पर्यसा पृशुकांमस्य। एतद्वै पंशूनाः रूपम्। रूपेणैवास्मैं पश्नवं रुन्थे॥३८॥

पृशुमानेव भंवति। द्ध्रेन्द्रियकांमस्य। इन्द्रियं वै दिधे। इन्द्रियाव्येव भंवति। युवाग्वां ग्रामंकामस्योषधा वै मंनुष्याः। भागधेयेनैवास्में सजातानवं रुन्धे। ग्राम्येव भंवति। अयंज्ञो वा एषः। योऽसामा॥३९॥

चतुरुन्नंयति। चतुंरक्षर रथन्तरम्। रथन्तरस्यैष वर्णः। उपरीव हरति। अन्तरिक्षं वामदेव्यम्। वामदेव्यस्यैष वर्णः। द्विर्जुहोति। द्वांक्षरं बृहत्। बृह्त एष वर्णः। अग्निहोत्रमेव तथ्सामन्वत्करोति॥४०॥

यो वा अंग्निहोत्रस्योपसदो वेदं। उपैनमुप्सदों नमन्ति। विन्दतं उपस्तारम्। उन्नीयोपं सादयति। पृथिवीमेव प्रीणाति। होष्यन्नुपंसादयति। अन्तरिक्षमेव प्रीणाति। हुत्वोपं सादयति। दिवंमेव प्रीणाति। एता वा अंग्निहोत्रस्योपसदं:॥४१॥

य एवं वेदं। उपैनमुप्सदों नमन्ति। विन्दतं उपस्तारम्। यो वा अंग्निहोत्रस्याश्नांवितं प्रत्याश्नांवित् होतांरं ब्रह्माणं वषद्भारं वेदं। तस्य त्वेव हुतम्। प्राणो वा अंग्निहोत्रस्याश्रांवितम्। अपानः प्रत्याश्रांवितम्। मनो होतां। चक्षुंर्ब्रह्मा। निमेषो वंषद्वारः॥४२॥

य एवं वेदं। तस्य त्वंव हुतम्। सायं यावांनश्च वै देवाः प्रांत्यांवांणश्चाग्निहोत्रिणां गृहमागंच्छन्ति। तान् यन्न त्पंयेंत्। प्रजयांऽस्य पृशुभिविं तिष्ठेरन्। यत्त्पंयेंत्। तृप्ता एनं प्रजयां पृशुभिंस्तपंयेयुः। स्जूर्देवैः सायं यावंभिरितिं साय सम्मृंशति। स्जूर्देवैः प्रातर्यावंभिरितिं प्रातः। ये चैव देवाः सायं यावांनो ये चं प्रातर्यावांणः॥४३॥

तानेवोभयाईस्तर्पयति। त एंनं तृप्ताः प्रजयां पृशुभिस्तर्प-यन्ति। अरुणो हं स्माहौपंवेशिः। अग्निहोत्र एवाहर सायं प्रांतविज्रं भ्रातृंव्येभ्यः प्र हंरामि। तस्मान्मत्पापीयारसो भ्रातृंव्या इतिं। चतुरुन्नंयति। द्विर्जुहोति। समिथ्संप्तमी। सप्तपंदा शक्वंरी। शाक्वरो वर्ज्ञः। अग्निहोत्र एव तथ्सायं प्रांतविज्ञं यजंमानो भ्रातृंव्याय प्र हंरति। भवंत्यात्मनां। परांऽस्य भ्रातृंव्यो भवति॥४४॥

बुर्हिः प्रातर्हुताद्यांय जायते रुन्धेऽसामा कंरोत्येता वा अंग्निहोत्रस्योंपुसदों वषद्वारश्चं प्रात्यावांणो वञ्चस्नीणिं च॥————[५]

प्रजापंतिरकामयताऽऽत्मृन्वन्में जायेतेतिं। सोंऽजुहोत्। तस्यांऽऽत्मृन्वदंजायत। अग्निर्वायुरांदित्यः। तेंऽब्रुवन्। प्रजापंतिरहौषीदात्मृन्वन्में जायेतेतिं। तस्यं व्यमंजनिष्महि। जायंतान्न आत्मुन्वदिति तेंऽजुहवुः। प्राणानांमुग्निः। तुनुवै वायुः॥४५॥

चक्षुंष आदित्यः। तेषा हुतादंजायत् गौरेव। तस्यै पर्यसि व्यायंच्छन्त। ममं हुतादंजिन् ममेतिं। ते प्रजापंतिं प्रश्ञमायन्। स आंदित्यौंऽग्निमंब्रवीत्। यृत्रो नौ जयात्। तन्नौ सहास्दितिं। कस्यै कोऽहौषीदितिं प्रजापंतिरब्रवीत्कस्यै क इतिं। प्राणानांमहिमत्यग्निः॥४६॥

त्नुवां अहमितिं वायः। चक्षुंषोऽहमित्यांदित्यः। य एव प्राणानामहौषीत्। तस्यं हुतादंजनीतिं। अग्नेर्हुतादंजनीतिं। तदंग्निहोत्रस्यांग्निहोत्रत्वम्। गौर्वा अग्निहोत्रम्। य एवं वेद गौरंग्निहोत्रमितिं। प्राणापानाभ्यांमेवाग्नि समर्धयति। अव्यर्धुकः प्राणापानाभ्यां भवति॥४७॥

य एवं वेदं। तौ वायुरंब्रवीत्। अनु मा भंजत्मितिं। यदेव गार्हंपत्येऽधिश्रित्यांहवनीयंम्भ्यंद्रवान्। तेन त्वां प्रीणानित्यंब्र्ताम्। तस्माद्यद्गार्हंपत्येऽधिश्रित्यांहवनीयं-म्भ्यंद्रवंति। वायुमेव तेनं प्रीणाति। प्रजापंतिर्देवताः सृजमानः। अग्निमेव देवतानां प्रथममंसृजत। सौंऽन्यदां-लम्भ्यंमविंत्वा॥४८॥

प्रजापंतिम्भि प्रयावितित। स मृत्योरंबिभेत्। सोऽमुमांदित्यमात्मनो निरंमिमीत। त॰ हुत्वा पराँङ्घ्यविति। ततो वै स मृत्युमपांजयत्। अपं मृत्युं जयित। य एवं वेदं। तस्माद्यस्यैवं विदुषंः। उतैकाहमृत द्यहं न जुह्वंति।

# हुतमेवास्यं भवति। असौ ह्यांदित्यौंऽग्निह्रोत्रम्॥४९॥

रौद्रं गिवं। वाय्यंमुपंसृष्टम्। आश्विनं दुह्यमानम्। सौम्यं दुग्धम्। वारुणमिधं श्रितम्। वैश्वदेवा भिन्दवंः। पौष्णमुदंन्तम्। सारुस्वतं विष्यन्दंमानम्। मैत्र॰ शर्रः। धातुरुद्वांसितम्। बृह्स्पतेरुत्रीतम्। स्वितुः प्र क्रान्तम्। द्यावापृथिव्य हियमाणम्। ऐन्द्राग्नमुपंसन्नम्। अग्नेः पूर्वा-ऽऽह्तिः। प्रजापंतेरुत्तंरा। ऐन्द्र॰ हुतम्॥५०॥

दक्षिणत उपं सृजित। पितृलोकमेव तेनं जयित। प्राचीमा वर्तयित। देवलोकमेव तेनं जयित। उदींचीमावृत्यं दोग्धि। मनुष्यलोकमेव तेनं जयित। पूर्वौ दुह्याङ्येष्ठस्यं ज्यैष्ठिनेयस्य। यो वां गृतश्रीः स्यात्। अपंरौ दुह्यात्किनिष्ठस्यं कानिष्ठिनेयस्य। यो वा बुभूषेत्॥५१॥

न सं मृंशति। पापवस्यसस्य व्यावृत्त्यै। वायव्यं वा पृतदुपंसृष्टम्। आश्विनं दुह्यमानम्। मैत्रं दुग्धम्। अर्यम्ण उद्घास्यमानम्। त्वाष्ट्रमुंन्नीयमानम्। बृह्स्पतेरुन्नीतम्। सवितुः प्रक्रान्तम्। द्यावापृथिव्यः हियमाणम्॥५२॥

ऐन्द्राग्नमुपं सादितम्। सर्वांभ्यो वा एष देवतांभ्यो जुहोति। योंऽग्निहोत्रं जुहोतिं। यथा खलु वै धेनुं तीर्थे तुर्पयंति। एवमंग्निहोत्री यजमानं तर्पयति। तृप्यंति प्रजयां पृशुभिः। प्र सुंवर्गं लोकं जांनाति। पश्यंति पुत्रम्। पश्यंति पौत्रम्। प्र प्रजयां पृशुभिंमिंथुनैर्जायते। यस्यैवं विदुषौंऽग्निहोत्रं जुह्नंति। य उं चैनदेवं वेदं॥५३॥

बुभूषेद्धियमाणञ्जायते द्वे चं॥\_\_\_\_\_\_[८]

त्रयो वै प्रैयमेधा आंसन्। तेषां त्रिरेकोंऽग्निहोत्रमंजुहोत्। द्विरेकः। स्कृदेकः। तेषां यस्त्रिरजुंहोत्। स ऋचाऽजुंहोत्। यो द्विः। स यजुंषा। यः सुकृत्। स तूष्णीम्॥५४॥

यश्च यजुषाऽजुंहोद्यश्चं तूष्णीम्। तावुभावाँर्भुताम्। तस्माद्यजुषाऽऽहुंतिः पूर्वां होत्व्याँ। तूष्णीमृत्तंरा। उभे एवधीं अवं रुन्थे। अग्निज्यींतिज्यींतिरग्निः स्वाहेतिं सायं जुंहोति। रेतं एव तद्दंधाति। सूर्यो ज्योतिज्यींतिः सूर्यः स्वाहेतिं प्रातः। रेतं एव हितं प्र जनयित। रेतो वा एतस्यं हितं न प्र जांयते॥५५॥

यस्याँग्निहोत्रमहुंत्र सूर्योऽभ्युंदेतिं। यद्यन्ते स्यात्। उन्नीय् प्राङ्क्दाद्रंवेत्। स उपसाद्यातिमितोरासीत। स यदा ताम्येँत्। अथ भूः स्वाहेतिं जुहुयात्। प्रजापंतिर्वे भूतः। तमेवोपांसरत्। स एवेनं तत् उन्नयति। नार्तिमार्च्छति यजमानः॥५६॥
तूर्णी जांयते यजमानः॥——[९]

यद्ग्रिमुद्धरंति। वसंवस्तर्ह्यग्निः। तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्वंति। वसुंष्वेवास्यांग्निहोत्रः हुतं भवति। निहिंतो धूपायञ्छेते। रुद्रास्तर्ह्यग्निः। तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्वंति। रुद्रेष्वेवास्यांग्निहोत्र हुतं भवति। प्रथममिध्ममूर्चिरा लेभते। आदित्यास्तर्ह्यग्निः॥५७॥

तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्नंति। आदित्येष्वेवास्यांग्निहोत्र हुतं भंवति। सर्वं एव संवृंश इध्म आदींग्नो भवति। विश्वं देवास्तर्ह्यग्निः। तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्नंति। विश्वंष्वेवास्यं देवेष्वंग्निहोत्र हुतं भंवति। नित्रमिर्चिरुपावैति लोहिनीकेव भवति। इन्द्रस्तर्ह्यग्निः। तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्नंति। इन्द्रस्तर्ह्यग्निः। तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्नंति। इन्द्रं एवास्यांग्निहोत्र हुतं भंवति॥५८॥

अङ्गारा भवन्ति। तेभ्योऽङ्गारेभ्योऽर्चिरुदेति। प्रजा-पंतिस्तर्द्धाग्निः। तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्वंति। प्रजापंतावेवास्यांग्निहोत्रः हुतं भंवति। शरोऽङ्गारा अध्यूंहन्ते। ब्रह्म तर्द्धाग्निः। तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्वंति। ब्रह्मंन्नेवास्यांग्निहोत्रः हुतं भंवति। वसुंषु रुद्रेष्वांदित्येषु विश्वंषु देवेषुं। इन्द्रें प्रजापंतौ ब्रह्मन्ं। अपंरिवर्गमेवास्यैतासुं देवतांसु हुतं भंवति। यस्यैवं विदुषोंऽग्निहोत्रं जुह्वंति। य उं चैनदेवं वेदं॥५९॥

आदित्यास्तर्ह्याग्निरिन्द्रं एवास्याँग्निहोत्रः हुतं भंवति देवेषुं चृत्वारिं च (यद्ग्निन्निहिंतः प्रथमः सर्वं एव निंत्रामङ्गाराः शरोऽङ्गारा ब्रह्म वसुंष्वृष्टो॥)॥————[१०]

ऋतं त्वां सत्येन परिषिश्चामीतिं सायं परिषिश्चति। सत्यं

त्वर्तेन् परिषिश्चामीति प्रातः। अग्निर्वा ऋतम्। असावांदित्यः सत्यम्। अग्निमेव तदांदित्येनं सायं परिषिश्चति। अग्निनां-ऽऽदित्यं प्रातः सः। यावंदहोरात्रे भवंतः। तावंदस्य लोकस्यं। नार्तिर्न रिष्टिः। नान्तो न पंर्यन्तौऽस्ति। यस्यैवं विदुषौऽग्निहोत्रं जुह्वंति। य उंचैनदेवं वेदं॥६०॥

अस्ति द्वे चं॥————[११]

अङ्गिरसः प्रजापंतिर्ग्निः रुद्र उत्तरावंतीं ब्रह्मवादिनौंऽग्निहोत्रप्रांयणा युज्ञाः प्रजापंतिरकामयताऽऽत्मृन्वद्रौद्रङ्गविं दक्षिणृतस्त्रयो वे यद्ग्निमृतं त्वां सृत्येनैकांदश॥११॥ अङ्गिरसः प्रैव तेनं पृशूनेव यन्निमार्ष्ट् यो वा अग्निहोत्रस्योपसदो दक्षिणृतः षृष्टिः॥६०॥ अङ्गिरसो य उंचैनदेवं वेदं॥

# हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके प्रथमः प्रपाठकः समाप्तः॥

## ॥द्वितीयः प्रश्नः॥

### ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके द्वितीयः प्रपाठकः॥

प्रजापंतिरकामयत प्रजाः सृंज्येतिं। स पृतं दशंहोतारम-पश्यत्। तं मनंसाऽनुद्रुत्यं दर्भस्तम्बंऽजुहोत्। ततो वै स प्रजा अंसृजत। ता अंस्माथ्सृष्टा अपांकामन्। ता ग्रहेणागृह्णात्। तद्गहंस्य ग्रह्त्वम्। यः कामयेत् प्रजायेयेतिं। स दशंहोतारं मनंसाऽनुद्रुत्यं दर्भस्तुम्बे जुंहुयात्। प्रजापंति्वे दशंहोता॥१॥

प्रजापंतिरेव भूत्वा प्रजायते। मनंसा जुहोति। मनं इव् हि प्रजापंतिः। प्रजापंतेराप्त्यैं। पूर्णयां जुहोति। पूर्ण इंव् हि प्रजापंतिः। प्रजापंतेराप्त्यैं। न्यूंनया जुहोति। न्यूंनािद्ध प्रजापंतिः प्रजा असृंजत। प्रजाना ५ सृष्ट्यैं॥२॥

दुर्भस्तम्बे जुंहोति। एतस्माद्वे योनैः प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। यस्मादेव योनैः प्रजापंतिः प्रजा असृजत। तस्मादेव योनेः प्रजायते। ब्राह्मणो दक्षिणत उपास्ते। ब्राह्मणो वै प्रजानांमुपद्रष्टा। उपद्रष्टुमत्येव प्रजायते। ग्रहों भवति। प्रजानां सृष्टानां धृत्यै। यं ब्राह्मणं विद्यां विद्वाः सं यशो नर्च्छेत्॥३॥

सोऽरंण्यं प्रेत्यं। दुर्भस्तम्बमुद्भर्थ्यं। ब्राह्मणं देक्षिण्तो निषाद्यं। चतुर्होतृन्व्याचंक्षीत। एतद्वै देवानां पर्मं गुह्यं ब्रह्मं। यचतुर्होतारः। तदेव प्रकाशं गमयति। तदेनं प्रकाशं गतम्। प्रकाशं प्रजानां गमयति। दुर्भस्तम्बमुद्भथ्य व्याचेष्टे॥४॥

अग्निवान् वै देर्भस्तम्बः। अग्निवत्येव व्याचेष्टे। ब्राह्मणो देक्षिणत उपाँस्ते। ब्राह्मणो वै प्रजानांमुपद्रष्टा। उपद्रष्टुमत्येवैनं यशं ऋच्छति। ईश्वरन्तं यशोर्तोरित्यांहुः। यस्यान्ते व्याचष्ट् इतिं। वर्स्तस्मै देयः। यदेवैनं तत्रोपनमंति। तदेवावं रुन्थे॥५॥

अग्निमादधांनो दशंहोत्राऽरणिमवं दध्यात्। प्रजांतमेवैनमा धंत्ते। तेनैवोद्भुत्यांग्निहोत्रं जुंहुयात्। प्रजांतमेवैनं ज्ञुहोति। ह्विर्निर्वपस्यं दशंहोतारं व्याचंक्षीत। प्रजांतमेवैनं निर्वपति। सामिधेनीरंनुवक्ष्यं दशंहोतारं व्याचंक्षीत। सामिधेनीरेव सृष्ट्वाऽऽरभ्य प्रतंनुते। अथों युज्ञो वै दशंहोता। युज्ञमेव तंनुते॥६॥

अभिचरं दर्शहोतारं जुहुयात्। नव वै पुरुषे प्राणाः। नाभिदंशमी। सप्राणमेवैनंमभि चंरति। एतावृद्धे पुरुषस्य स्वम्। यावंत्प्राणाः। यावंदेवास्यास्ति। तद्भि चंरति। स्वकृत् इरिणे जुहोति प्रदरे वा। एतद्वा अस्यै निर्ऋतिगृहीतम्। निर्ऋतिगृहीत एवैनं निर्ऋत्या ग्राहयित। यद्वाचः कूरम्। तेन वषंद्वरोति। वाच एवैनं कूरेण् प्र वृंश्चित। ताजगार्तिमार्च्छंति॥७॥

दर्शहोता सृष्ट्यां ऋच्छेद्याचंप्टे रुन्ध एव तंनुते निर्ऋतिगृहीतं पश्चं च॥———[१]

प्रजापंतिरकामयत दर्शपूर्णमासौ सृंजेयेतिं। स एतं चतुंरहोतारमपश्यत्। तं मनंसाऽनुद्रुत्यांऽऽहव्नीयेंऽजुहोत्। ततो वै स दंर्शपूर्णमासावंसृजत। तावंस्माथ्सृष्टावपां-क्रामताम्। तौ ग्रहेणागृह्णात्। तद्वहंस्य ग्रह्त्वम्। दर्शपूर्णमासावालभंमानः। चतुंरहोतारं मनंसाऽनुद्रुत्यां-हव्नीयें जुहुयात्। दर्शपूर्णमासावेव सृष्ट्वाऽऽरभ्य प्रतंनुते॥८॥

ग्रहों भवति। दुर्शपूर्णमासयोः सृष्टयोर्धृत्यै। सोंऽकामयत चातुर्मास्यानि सृजेयेति। स एतं पश्चंहोतारमपश्यत्। तं मनसाऽनुद्रुत्यांऽऽहवनीयेंऽजुहोत्। ततो वे स चातुर्मास्यान्यंसृजत। तान्यंस्माथ्सृष्टान्यपाकामन्। तानि ग्रहेणागृह्णात्। तद्ग्रहंस्य ग्रहुत्वम्। चातुर्मास्यान्यालभंमानः॥९॥

पश्चंहोतार्ं मनंसाऽनुद्रुत्यांऽऽहवनीयें जुहुयात्। चातुर्मास्यान्येव सृष्ट्वाऽऽरभ्य प्रतंनुते। ग्रहों भवति। चातुर्मास्यानार् सृष्टानां धृत्यैं। सोंऽकामयत पशुबन्धर सृंजेयेतिं। स पृतर षङ्कोतारमपश्यत्। तं मनंसा-ऽनुद्रुत्यांऽऽहवनीयेऽजुहोत्। ततो वै स पंशुबन्धमंसृजत। सोंस्माथ्सृष्टोऽपांकामत्। तं ग्रहेणागृह्णात्॥१०॥

तद्ग्रहंस्य ग्रह्त्वम्। पृशुब्न्धेनं युक्ष्यमाणः। षङ्कोतारं मनसाऽनुद्रुत्यांऽऽहव्नीयें जुहुयात्। पृशुब्न्धमेव सृष्ट्वा-ऽऽरभ्य प्र तंनुते। ग्रहों भवति। पृशुब्न्धस्यं सृष्टस्य धृत्यैं। सोंऽकामयत सौम्यमंध्वरः सृंजेयेतिं। स एतः सप्तहोतारमपश्यत्। तं मनंसाऽनुद्रुत्यांऽऽहवनीयेंऽजुहोत्। ततो वै स सौम्यमंध्वरमंसृजत॥११॥

सौंऽस्माथ्सृष्टोऽपाँकामत्। तं ग्रहेणागृह्णात्। तद्ग्रहंस्य ग्रह्त्वम्। दीक्षिष्यमाणः। सप्तहोतारं मनंसाऽनुद्रुत्यां-ऽऽहवनीयें जुहुयात्। सौम्यमेवाध्वर सृष्ट्वाऽऽरभ्य प्र तंनुते। ग्रहों भवति। सौम्यस्याध्वरस्यं सृष्टस्य धृत्यैं। देवेभ्यो वै यज्ञो न प्राभंवत्। तमेतावच्छः समंभरन्॥१२॥

यथ्संम्भाराः। ततो वै तेभ्यों युज्ञः प्राभवत्। यथ्संम्भारा भवन्ति। युज्ञस्य प्रभूत्ये। आतिथ्यमासाद्य व्याचंष्टे। युज्ञमुखं वा आतिथ्यम्। मुख्त एव युज्ञः सम्भृत्य प्र तंनुते। अयज्ञो वा एषः। योऽप्रक्षोकंः। न प्रजाः प्रजांयेरन्। पत्नीर्व्याचंष्टे। युज्ञमेवाकंः। प्रजानां प्रजनंनाय। उपसथ्सु व्याचंष्टे। एतद्वै पत्नीनामायतंनम्। स्व एवैनां आयतनेऽवंकल्पयति॥१३॥

तुनुत आलर्भमानोऽगृह्णादसृजताभरञ्जायेरुन्थाद्वं॥\_\_\_\_\_\_[2]

प्रजापंतिरकामयत् प्रजाययेवतिं। स तपोऽतप्यतः। स त्रिवृत् रू स्तोमंमसृजतः। तं पंश्चद्शः स्तोमों मध्यत उदंतृणत्। तौ पूर्वपक्षश्चांपरपक्षश्चांभवताम्। पूर्वपक्षं देवा अन्वसृंज्यन्तः। अपूरपक्षमन्वसृंगः। ततों देवा अभवन्। पराऽसृंगः। यं कामयेत् वसीयान्थस्यादितिं॥१४॥

तं पूर्वपक्षे यांजयेत्। वसीयानेव भवति। यं कामयेंत्

पापीयान्थस्यादिति। तमंपरपक्षे यांजयेत्। पापीयानेव भंवति। तस्मौत्पूर्वपृक्षोऽपरपृक्षात्करुण्यंतरः। प्रजापंतिवै दशंहोता। चतुंर्होता पश्चंहोता। षङ्कोता सप्तहोता। ऋतवेः संवथ्सरः॥१५॥

प्रजाः प्शवं इमे लोकाः। य एवं प्रजापंतिं बहोर्भूया रेसं वेदं। बहोरेव भूयाँन्भवति। प्रजापंतिर्देवासुरानं सृजत। स इन्द्रमपि नासृंजत। तं देवा अंब्रुवन्। इन्द्रं नो जन्येतिं। सौं ऽब्रवीत्। यथाऽहं युष्मा इस्तप्साऽसृंक्षि। एविमन्द्रं जनयध्वमिति॥१६॥

ते तपोंऽतप्यन्त। त आत्मिन्निन्द्रंमपश्यन्। तमंब्रुवन्। जायुस्वेतिं। सोंऽब्रवीत्। किं भांगुधेयंमुभि जंनिष्य इतिं। ऋतून्थ्यंवथ्युरम्। प्रजाः पुशून्। इमाँ ह्योकानित्यं ब्रुवन्। तं वै माऽऽहुंत्या प्र जनयुतेत्यं ब्रवीत्॥१७॥

तं चतुंर्होत्रा प्राजंनयन्। यः कामयेत वीरो म् आजांयेतेति। स चतुंर्होतारं जुहुयात्। प्रजापंतिर्वे चतुंर्होता। प्रजापंतिरेव भूत्वा प्रजायते। जजन्दिन्द्रंमिन्द्रियाय् स्वाहेति ग्रहेण जुहोति। आऽस्यं वीरो जांयते। वीर॰ हि देवा एतयाऽऽहुंत्या प्राजंनयन्। आदित्याश्चाङ्गिरसश्च सुवर्गे लोकैंऽस्पर्धन्त। व्यं पूर्वे सुवर्गं लोकिमियाम व्यं पूर्व इतिं॥१८॥ त आंदित्या एतं पश्चेहोतारमपश्यन्। तं पुरा प्रांतरनुवाकादाग्नींधेऽजुहवुः। ततो वै ते पूर्वे सुवृगं लोकमायन्। यः सुंवृगंकामः स्यात्। स पश्चेहोतारं पुरा प्रांतरनुवाकादाग्नींधे जुहुयात्। संवृथ्सरो वै पश्चेहोता। संवृथ्सरः सुंवृगों लोकः। संवृथ्सर एवर्तुषुं प्रतिष्ठायं। सुवृगं लोकमेति। तेंऽब्रुवृन्निङ्गिरस आदित्यान्॥१९॥

क्वं स्था क्वं वः सुद्धो हुव्यं वंक्ष्याम् इति। छन्दः स्वित्यंब्रुवन्। गायित्रियां त्रिष्टुभि जगत्यामिति। तस्माच्छन्दः सु सुद्ध आदित्येभ्यः। आङ्गीर्सीः प्रजा हृव्यं वंहन्ति। वहंन्त्यस्मै प्रजा बिलिम्। ऐनमप्रतिख्यातं गच्छति। य एवं वेदं। द्वादंश मासाः पश्चर्तवंः। त्रयं इमे लोकाः। असावादित्य एंकविश्शः। एतस्मिन्वा एष श्रितः। एतस्मिन्प्रतिष्ठितः। य एवमेतः श्रितं प्रतिष्ठितं वेदं। प्रत्येव तिष्ठति॥२०॥

स्यादितिं संवथ्सरो जनयथ्वमितीत्यंब्रवीत्पूर्व इत्यांदित्यानृतवः षद्वं॥———[३]

प्रजापंतिरकामयत् प्रजांयेयेतिं। स एतं दर्शहोतारमपश्यत्। तेनं दश्धाऽऽत्मानंं विधायं। दशहोत्राऽतप्यत। तस्य चित्तिः स्रुगासींत्। चित्तमाज्यम्। तस्यैतावंत्येव वागासींत्। एतावान्ं यज्ञऋतुः। स चतुंर्होतारमसृजत। सोंऽनन्दत्॥२१॥

असृंक्षि वा इमिमितिं। तस्य सोमों हिवरासींत्। स चतुंर्होत्राऽतप्यत। सोंऽताम्यत्। स भूरिति व्याहंरत्। स भूमिंमसृजत। अग्निहोत्रं दंर्शपूर्णमासौ यजूर्ंषि। स द्वितीयंमतप्यत। सोंऽताम्यत्। स भुव इति व्याहंरत्॥२२॥

सौंऽन्तिरिक्षमसृजत। चातुर्मास्यानि सामानि। स तृतीयंमतप्यत। सोंऽताम्यत्। स सुवरिति व्याहंरत्। स दिवंमसृजत। अग्निष्टोममुक्थ्यंमितरात्रमृचंः। एता वै व्याहंतय इमे लोकाः। इमान्खलु वै लोकानन् प्रजाः पृशवृश्छन्दार्सेस् प्राजांयन्त। य एवमेताः प्रजापंतेः प्रथमा व्याहंतीः प्रजांता वेदं॥२३॥

प्र प्रजयां पृशुभिर्मिथुनैर्जायते। स पश्चंहोतारमसृजत। स ह्विनीविन्दत। तस्मै सोमंस्तृनुवं प्रायंच्छत्। एतत्तें ह्विरितिं। स पश्चंहोत्राऽतप्यत। सोऽताम्यत्। स प्रत्यङ्कंबाधत। सोऽसुंरानसृजत। तदस्याप्रियमासीत्॥२४॥

तद्दुर्वर्ण् हरंण्यमभवत्। तद्दुर्वर्णस्य हिरंण्यस्य जन्मं। स द्वितीयंमतप्यत। सोऽताम्यत्। स प्राङंबाधत। स देवानंसृजत। तदंस्य प्रियमांसीत्। तथ्सुवर्ण् र् हिरंण्यमभवत्। तथ्सुवर्णंस्य हिरंण्यस्य जन्मं। य एव॰ सुवर्णस्य हिरंण्यस्य जन्म वेदं॥२५॥

सुवर्ण आत्मनां भवति। दुर्वर्णोंऽस्य भ्रातृंव्यः। तस्मांथ्सुवर्ण् हरंण्यं भार्यम्। सुवर्णं एव भंवति। ऐनं प्रियं गंच्छति नाप्रियम्। स सप्तहोतारमसृजत। स सप्तहोंत्रैव सुंवर्गं लोकमैंत्। त्रिणवेन स्तोमेंनैभ्यो लोकेभ्यो-ऽसुंरान्प्राणुंदत। त्रयस्त्रिष्टशेन प्रत्यंतिष्ठत्। एकविष्टशेन रुचंमधत्त॥२६॥

स्प्तद्शेन प्राजांयत। य एवं विद्वान्थ्सोमेन यजंते। सप्तहोत्रैव सुंवर्गं लोकमेति। त्रिणवेन स्तोमेनैभ्यो लोकभ्यो भ्रातृंव्यान्प्रणुंदते। त्रयस्त्रिष्शेन प्रति तिष्ठति। एकविष्शेन रुचं धत्ते। स्प्तद्शेन प्र जांयते। तस्मांध्सप्तद्शः स्तोमो न निर्हत्यः। प्रजापंतिर्वे संप्तद्शः। प्रजापंतिमेव मध्यतो धंते प्रजांत्यै॥२७॥

अनुन्दद्भुव इति व्याहंर्द्वेदांसीद्वेदांधत्त प्रजाँत्यै॥————[४]

देवा वै वर्रुणमयाजयन्। स यस्यैयस्यै देवतांयै दक्षिणामनयत्। तामंब्रीनात्। ते ऽब्रुवन्। व्यावृत्य प्रतिगृह्णाम। तथां नो दक्षिणा न ब्रेष्यतीतिं। ते व्यावृत्य प्रत्यंगृह्णन्। ततो वै तान्दक्षिणा नाब्रीनात्। य एवं विद्वान्व्यावृत्य दक्षिणां प्रतिगृह्णातिं। नैनं दक्षिणा ब्रीनाति॥२८॥

राजां त्वा वरुंणो नयतु देवि दक्षिणेऽग्नये हिरंण्यमित्यांह। आग्नेयं वै हिरंण्यम्। स्वयैवैनंद्देवतंया प्रतिगृह्णाति। सोमाय वास इत्यांह। सौम्यं वै वासंः। स्वयैवैनंद्देवतंया प्रतिगृह्णाति। रुद्राय गामित्यांह। रौद्री वै गौः। स्वयैवैनां देवतंया प्रतिंग्ह्णाति। गृह्णाति। वरुंणायाश्वमित्यांह॥२९॥

वारुणो वा अर्थः। स्वयैवैनं देवतंया प्रतिंगृह्णाति।

प्रजापंतये पुरुषिमत्यांह। प्राजापत्यो वै पुरुषः। स्वयैवैनं देवतंया प्रतिं गृह्णाति। मनवे तल्पमित्यांह। मानवो वै तल्पंः। स्वयैवैनं देवतंया प्रतिं गृह्णाति। उत्तानायाँङ्गीर्सायान् इत्यांह। इयं वा उत्तान आँङ्गीर्सः॥३०॥

अनयैवैन्त्प्रति गृह्णाति। वैश्वानयर्चा रथं प्रति गृह्णाति। वैश्वानरो वै देवतया रथंः। स्वयैवैनं देवतया प्रति गृह्णाति। तेनामृत्त्वमंश्यामित्यांह। अमृतमेवाऽऽत्मन्धत्ते। वयो दात्र इत्यांह। वयं एवैनं कृत्वा। सुवर्गं लोकं गंमयति। मयो मह्यंमस्तु प्रतिग्रहीत्र इत्यांह॥३१॥

यहै शिवम्। तन्मयंः। आत्मनं पृवेषा परींत्तिः। क इदं कस्मां अदादित्यांह। प्रजापंतिर्वे कः। स प्रजापंतये ददाति। कामः कामायेत्यांह। कामेन हि ददांति। कामेन प्रतिगृह्णातिं। कामों दाता कामः प्रतिग्रहीतेत्यांह॥३२॥

कामो हि दाता। कामंः प्रतिग्रहीता। कामरे समुद्रमाविशे-त्यांह। समुद्र इंव हि कामंः। नेव हि कामस्यान्तोऽस्ति। न संमुद्रस्यं। कामेन त्वा प्रतिगृह्णामीत्यांह। येन कामेन प्रतिगृह्णाति। स एवैनममुष्मिं लोके काम आगंच्छति। कामैतत्तं एषा ते काम दक्षिणेत्यांह। कामं एव तद्यजंमानो-ऽमुष्मिं लोके दक्षिणामिच्छति। न प्रतिग्रहीतिरे। य एवं विद्वान्दक्षिणां प्रतिगृह्णातिं। अनृणामेवैनां प्रति गृह्णाति॥३३॥ ब्रीनात्यश्वमित्यांहाङ्गीर्सः प्रंतिग्रहीत्र इत्यांह प्रतिग्रहीतेत्यांह दक्षिणेत्यांह चुत्वारिं च॥ldot

अन्तो वा एष यज्ञस्यं। यद्दंशममहंः। दुश्मे-ऽहंन्थ्सर्पराज्ञियां ऋग्भिः स्तुंवन्ति। यज्ञस्यैवान्तंं गृत्वा। अन्नाद्यमर्वं रुन्थते। तिसृभिः स्तुवन्ति। त्रयं ड्रमे लोकाः। एभ्य एव लोकेभ्योऽन्नाद्यमर्वं रुन्थते। पृश्चिवतीर्भवन्ति। अन्नं वै पृश्चि॥३४॥

अन्नमेवावं रुन्थते। मनंसा प्रस्तौति। मन्सोद्गायित। मनंसा प्रतिं हरति। मनं इव हि प्रजापंतिः। प्रजापंतेरास्यै। देवा वै सूर्पाः। तेषांमिय राज्ञौ। यथ्संपराज्ञियां ऋग्भिः स्तुवन्तिं। अस्यामेव प्रतिं तिष्ठन्ति॥३५॥

चतुंरहोतृन् होता व्याचेष्टे। स्तुतमनुंशश्सित् शान्त्यैं। अन्तो वा एष यज्ञस्यं। यद्दंशममहंः। एतत्खलु वै देवानां पर्मं गृह्यं ब्रह्मं। यचतुंरहोतारः। दश्मेऽह्ध्श्चतुंर्होतृन्व्याचेष्टे। यज्ञस्यैवान्तं गृत्वा। प्रमं देवानां गृह्यं ब्रह्मावं रुन्थे। तदेव प्रंकाशं गंमयति॥३६॥

तदेनं प्रकाशं गृतम्। प्रकाशं प्रजानां गमयति। वाचं यच्छति। यज्ञस्य धृत्यै। यज्ञमानदेवत्यं वा अहं। भ्रातृव्यदेवत्यां रात्रिः। अहा रात्रिं ध्यायेत्। भ्रातृंव्यस्यैव तल्लोकं वृंङ्के। यद्दिवा वाचं विसृजेत्। अहुर्भातृंव्यायोच्छि १षेत्। यन्नक्तं विसृजेत्। रात्रिं भ्रातृंव्यायोच्छि १षेत्। अधिवृक्षसूर्ये वाचं विसृंजति। एतावन्तमेवास्मैं लोकमुच्छि १षित। यावंदादित्यौं-ऽस्तमेति॥३७॥

पृश्चिं तिष्ठन्ति गमयति शिर्षेत्पर्श्चं च॥————[६]

प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। ताः सृष्टाः समंश्लिष्यन्। ता रूपेणानुप्राविंशत्। तस्मांदाहुः। रूपं वे प्रजापंतिरितिं। ता नाम्नाऽनु प्राविंशत्। तस्मांदाहुः। नाम् वे प्रजापंतिरितिं। तस्मादप्यांमित्रौ सङ्गत्यं। नाम्ना चेद्ध्वयंते॥३८॥

मित्रमेव भंवतः। प्रजापंतिर्देवासुरानंसृजत। स इन्द्रमि नासृंजत। तं देवा अंब्रुवन्। इन्द्रं नो जन्येतिं। स आत्मित्रन्द्रंमपश्यत्। तमंसृजत। तं त्रिष्टुग्वीर्यं भूत्वाऽनु प्राविंशत्। तस्य वर्ज्ञः पश्चद्शो हस्त आपंद्यत। तेनोदय्यासुंरान्भ्यंभवत्॥३९॥

य एवं वेदं। अभि भ्रातृं व्यान्भवति। ते देवा असुंरैर्विजित्यं। सुवर्गं लोकमांयन्। तेंऽमुष्मिं लोके व्यंक्षुध्यन्। तेंऽब्रुवन्। अमुर्तः प्रदानं वा उपंजिजीविमेतिं। ते सप्तहोंतारं यज्ञं विधायायास्यम्। आङ्गीर्सं प्राहिण्वन्। एतेनामुत्रं कल्पयेतिं॥४०॥

तस्य वा इयं क्रुप्तिः। यदिदं किं चे। य एवं वेदे। कल्पेतेऽस्मै। स वा अयं मेनुष्येषु युज्ञः सप्तहोता। अमुत्रे स्द्र्यो देवेभ्यो ह्व्यं वहिति। य एवं वेदे। उपैनं युज्ञो नेमिति। सोऽमन्यत। अभि वा इमेंऽस्माल्लोकादमुं लोकं किमिष्यन्त इति। स वार्चस्पते हृदिति व्याहरत्। तस्मात्पुत्रो हृदेयम्। तस्माद्स्माल्लोकादमुं लोकं नाभि कामयन्ते। पुत्रो हि हृदेयम्॥४१॥

देवा वै चतुंर्होतृभिर्य्ज्ञमंतन्वत। ते वि पाप्मना भातृंव्येणाजंयन्त। अभि सुंवर्गं लोकमंजयन्। य एवं विद्वाःश्र्यतुंर्होतृभिर्य्ज्ञं तंनुते। वि पाप्मना भातृंव्येण जयते। अभि सुंवर्गं लोकं जंयति। षङ्क्षांत्रा प्रायणीयमा सांदयति। अमुष्मै वे लोकाय षङ्कोता। घ्रन्ति खलु वा एतथ्सोमम्। यदंभिषुण्वन्ति॥४२॥

ऋजुधेवैनंमुमुं लोकं गंमयति। चतुंर्होत्राऽऽतिथ्यम्। यशो व चतुंर्होता। यशं एवाऽऽत्मन्धंत्ते। पश्चंहोत्रा पशुमुपंसादयति। सुवृग्यों व पश्चंहोता। यजंमानः पृशुः। यजंमानमेव सुवृगं लोकं गंमयति। ग्रहानगृहीत्वा सप्तहोतारं जुहोति। इन्द्रियं व सप्तहोता॥४३॥

इन्द्रियमेवाऽऽत्मन्धंत्ते। यो वै चतुंर्होतॄननुसव्नं तूर्पयंति। तृप्यंति प्रजयां पृशुभिः। उपैन॰ सोमपीथो नमिति। बहिष्पुवृमाने दशहोतारं व्याचंक्षीत। माध्यं दिने पर्वमाने चतुर्होतारम्। आर्भवे पर्वमाने पश्चहोतारम्। पितृयज्ञे षङ्कोतारम्। यज्ञायज्ञियस्य स्तोत्रे सप्तहोतारम्। अनुसुवनमेवैना इस्तर्पयति॥४४॥

तृप्यंति प्रजयां पृश्भिः। उपैन सोमपीथो नंमति। देवा वै चतुरहोतृभिः स्त्रमांसत। ऋद्धिपरिमितं यशंस्कामाः। तेऽब्रुवन्। यन्नः प्रथमं यशं ऋच्छात्। सर्वेषात्रस्तथ्सहास्दितिं। सोम्श्चतुरहोत्रा। अग्निः पश्चंहोत्रा। धाता षड्ढोंत्रा॥४५॥

इन्द्रेः सप्तहौत्रा। प्रजापंतिर्दर्शहोत्रा। तेषाक् सोम्क् राजांनं यशं आर्च्छत्। तन्त्र्यंकामयत। तेनापांकामत्। तेनं प्रलायंमचरत्। तं देवाः प्रैषेः प्रैषंमैच्छन्। तत्प्रैषाणां प्रैषत्वम्। निविद्धिन्यंवेदयन्। तन्निविद्वांन्निविद्वन्यम्॥४६॥

आप्रीभिराप्नुवन्। तदाप्रीणांमाप्रित्वम्। तमंघ्नन्। तस्य यशो व्यंगृह्णतः। ते ग्रहां अभवन्। तद्ग्रहांणां ग्रह्त्वम्। यस्यैवं विदुषो ग्रहां गृह्यन्तें। तस्य त्वंव गृंहीताः। तेंऽब्रुवन्। यो वै नः श्रेष्ठो-ऽभूत्॥४७॥

तमंबिधष्म। पुनेरिम १ सुंवामहा इतिं। तं छन्दोभिरसुवन्त। तच्छन्दंसां छन्द्स्त्वम्। साम्ना समानंयन्। तथ्साम्नेः सामृत्वम्। उक्थैरुदंस्थापयन्। तदुक्थानांमुक्थृत्वम्। य एवं वेदं। प्रत्येव तिष्ठति॥४८॥ सर्वमायुरिति। सोमो वै यशंः। य एवं विद्वान्थ्सोमंमागच्छंति। यशं एवैनंमृच्छति। तस्मांदाहुः। यश्चैवं वेद यश्च न। तावुभौ सोम्मागंच्छतः। सोमो हि यशंः। तं त्वाऽव यशं ऋच्छ्तीत्यांहुः। यः सोमे सोमं प्राहेतिं। तस्माथ्सोमे सोमः प्रोच्यंः। यशं एवैनंमृच्छति॥४९॥

अभिषुण्वन्तिं सप्तहोता तर्पयति षङ्क्षौत्रा निवित्त्वमभूँतिष्ठति प्राहेति द्वे चं॥———[८]

ड्डदं वा अग्रे नैव किं च नाऽऽसींत्। न द्यौरांसीत्। न पृंथिवी। नान्तरिक्षम्। तदसदेव सन्मनोऽकुरुत् स्यामिति। तदंतप्यत। तस्मांत्तेपानाद्धूमोऽजायत। तद्भूयोऽतप्यत। तस्मांत्तेपानादग्निरंजायत। तद्भूयोऽतप्यत॥५०॥

तस्मौत्तेपानाञ्चोतिरजायत। तद्भ्योऽतप्यत। तस्मौत्तेपाना-दर्चिरंजायत। तद्भ्योऽतप्यत। तस्मौत्तेपानान्मरीचयो-ऽजायन्त। तद्भ्योऽतप्यत। तस्मौत्तेपानादुंदारा अंजायन्त। तद्भ्योऽतप्यत। तद्भ्रमिव समहन्यत। तद्वस्तिमंभिनत्॥५१॥

स संमुद्रोऽभवत्। तस्माँथ्समुद्रस्य न पिंबन्ति। प्रजननिमव् हि मन्यंन्ते। तस्माँत्पृशोर्जायंमानादापंः पुरस्ताँद्यन्ति। तद्दशंहोताऽन्वंसृज्यत। प्रजापंतिर्वे दशंहोता। य पृवं तपंसो वीर्यं विद्वाङ्स्तप्यंते। भवंत्येव। तद्वा इदमापंः सिललमांसीत्। सोऽरोदीत्प्रजापंतिः॥५२॥

स कस्मां अज्ञि। यद्यस्या अप्रतिष्ठाया इति। यद्पस्ववापंद्यता सा पृथिव्यंभवत्। यद्यमृष्टा तद्नतिरक्षम- भवत्। यदूर्ध्वमुदमृष्ट। सा द्यौरंभवत्। यदरोदीत्। तद्नयो रोदस्त्वम्॥५३॥

य एवं वेदे। नास्यं गृहे रुंदन्ति। एतद्वा एषां लोकानां जन्मं। य एवमेषां लोकानां जन्म वेदे। नैषु लोकेष्वार्तिमार्च्छति। स इमां प्रतिष्ठामंविन्दत। स इमां प्रतिष्ठां वित्वाऽकांमयत् प्रजांयेयेति। स तपोऽतप्यत। सौऽन्तर्वानभवत्। स जघनादसुंरानसृजत॥५४॥

तेभ्यों मृन्मये पात्रेऽन्नंमदुहत्। याऽस्य सा तुनूरासींत्। तामपाहत। सा तिमस्राऽभवत्। सोऽकामयत् प्रजायेयेति। स तपोऽतप्यत। सौन्तर्वानभवत्। स प्रजननादेव प्रजा असृजत। तस्मादिमा भूयिष्ठाः। प्रजननाद्धोना असृजत॥५५॥

ताभ्यों दारुमये पात्रे पयोंऽदुहत्। याऽस्य सा तनूरासींत्। तामपाहत। सा जोथ्स्रांऽभवत्। सोंऽकामयत् प्रजांयेयेतिं। स तपोंऽतप्यत। सोंऽन्तर्वानभवत्। स उंपपृक्षाभ्यांमेवर्तूनंसृजत। तेभ्यों रज्ते पात्रें घृतमंदुहत्। याऽस्य सा तनूरासींत्॥५६॥

तामपांहत। सोंऽहोरात्रयोः सुन्धिरंभवत्। सोंऽकामयत् प्रजांयेयेतिं। स तपोंऽतप्यत। सोंऽन्तर्वानभवत्। स मुखाँद्देवानंसृजत। तेभ्यो हरिंते पात्रे सोमंमदुहत्। याऽस्य सा तुनूरासीत्। तामपांहत। तदहंरभवत्॥५७॥

पृते वै प्रजापंतेर्दोहाँः। य पृवं वेदं। दुह पृव प्रजाः। दिवा वै नोऽभूदितिं। तद्देवानां देवत्वम्। य पृवं देवानां देवत्वं वेदं। देववांनेव भवति। पृतद्वा अहोरात्राणां जन्मं। य पृवमंहोरात्राणां जन्म वेदं। नाहोरात्रेष्वार्तिमार्च्छति॥५८॥

अस्तोऽिष् मनोऽसृज्यत। मनंः प्रजापंतिमसृजत। प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। तद्वा इदं मनंस्येव पंर्मं प्रतिष्ठितम्। यदिदं किं चं। तदेतच्छ्वांवस्यसन्नाम् ब्रह्मं। व्युच्छन्तींव्युच्छन्त्यस्मै वस्यंसीवस्यसी व्यंच्छति। प्रजायते प्रजयां पृशुभिः। प्र पंरमेष्ठिनो मात्रांमाप्रोति। य एवं वेदं॥५९॥

अग्निरंजायत् तद्भूयोंऽतप्यताभिनदरोदीत्प्रजापंतीरोद्स्त्वमंसृज्तासृंजत घृतमंदुह्द्याऽस्य सा तृनूरासीदहंरभवदच्छित् वेदं (इदं धूमौंऽग्निज्योंतिंर्चिर्मरींचय उदारास्तद्भ्भः स जघनाथ्सा तिमंस्रा स प्रजननाथ्सा जोथ्स्रा स उपपक्षाभ्याः सौऽहोरात्रयौः सन्धः स मुखात्तदहंदेववौन्मृन्मये दारुमये रज्ते हरिते तेभ्यस्ताभ्यो द्वे तेऽत्रं पर्यो घृतः सोमम्॥॥————[९]

प्रजापंतिरिन्द्रंमसृजतानुजावरं देवानांम्। तं प्राहिणोत्। परेहि। एतेषां देवानामधिपतिरेधीतिं। तं देवा अंब्रुवन्। कस्त्वमिसं। वयं वे त्वच्छ्रेया रेसः स्मृ इतिं। सोंऽब्रवीत्। कस्त्वमिसं वयं वे त्वच्छ्रेया रेसः स्मृ इतिं मा देवा अंवोचन्नितिं। अथ् वा इदं तर्हिं प्रजापंतौ हरं आसीत्॥६०॥ यदस्मिन्नांदित्ये। तदेनमब्रवीत्। एतन्मे प्रयंच्छ। अथाहमेतेषां देवानामधिपतिभीविष्यामीति। कोऽह ॥ स्यामित्यंब्रवीत्। एतत्प्रदायेति। एतथ्स्या इत्यंब्रवीत्। यदेतद्ववीषीति। को ह वै नामं प्रजापंतिः। य एवं वेदं॥६१॥

विदुरेंनं नाम्नां। तदंस्मे रुकां कृत्वा प्रत्यंमुश्चत्। ततो वा इन्द्रों देवानामधिपतिरभवत्। य एवं वेदं। अधिपतिरेव संमानानां भवति। सोऽमन्यत। किं किं वा अंकर्मितिं। स चन्द्रं म् आह्रेति प्रालंपत्। तच्चन्द्रमंसश्चन्द्रम्स्त्वम्। य एवं वेदं॥६२॥

चन्द्रवानेव भेवति। तं देवा अंब्रुवन्। सुवीर्यो मर्या यथा गोपायत् इति। तथ्सूर्यस्य सूर्यत्वम्। य एवं वेदं। नैनं दभ्नोति। कश्च नास्मिन्वा इदिमिन्द्रियं प्रत्यंस्थादिति। तदिन्द्रंस्येन्द्रत्वम्। य एवं वेदं। इन्द्रियाव्येव भेवति॥६३॥

अयं वा इदं पर्मो अर्दिति। तत्परमेष्ठिनः परमेष्ठित्वम्। य एवं वेदे। प्रमामेव काष्ठां गच्छति। तं देवाः संमन्तं पर्यविशन्। वसेवः पुरस्तात्। रुद्रा देक्षिणतः। आदित्याः पश्चात्। विश्वे देवा उत्तर्तः। अङ्गिरसः प्रत्यश्चम्॥६४॥

साध्याः परांश्चम्। य एवं वेदं। उपैन समानाः संविंशन्ति। स प्रजापंतिरेव भूत्वा प्रजा आवंयत्। ता अंस्मै नातिंष्ठन्तान्नाद्यांय। ता मुखं पुरस्तात्पश्यंन्तीः। दृक्षिणतः पर्यायन्। स दंक्षिणतः पर्यवर्तयत। ता मुखं पुरस्तात्पश्यंन्तीः। मुखं दक्षिणतः॥६५॥

पृश्चात्पर्यायन्। स पृश्चात्पर्यवर्तयत। ता मुखं पुरस्तात्पश्यंन्तीः। मुखं दक्षिणतः। मुखं पृश्चात्। उत्तर्तः पर्यायन्। स उत्तर्तः पर्यवर्तयत। ता मुखं पुरस्तात्पश्यंन्तीः। मुखं दक्षिणतः। मुखं पृश्चात्॥६६॥

मुखंमुत्तरतः। ऊर्ध्वा उदांयन्। स उपरिष्टान्त्रंवर्तयत। ताः सर्वतांमुखो भूत्वाऽऽवंयत्। ततो वै तस्मैं प्रजा अतिष्ठन्तान्नाद्यांय। य एवं विद्वान्परि च वर्तयंते नि चं। प्रजापंतिरेव भूत्वा प्रजा अति। तिष्ठंन्तेऽस्मै प्रजा अन्नाद्यांय। अन्नाद एव भंवति॥६७॥

आसीद्वेदं चन्द्रमुस्त्वं य एवं वेदैन्द्रियाव्येव भविति प्रत्यश्चं मुर्खं दक्षिणतो मुर्खं पृक्षान्नवं

च॥\_\_\_\_\_[१०]

प्रजापंतिरकामयत बहोर्भूयाँन्थ्स्यामितिं। स एतं दशंहोतारमपश्यत्। तं प्रायुंङ्कः। तस्य प्रयुंक्ति बहोर्भूयांनभवत्। यः कामयेत बहोर्भूयाँन्थ्स्यामितिं। स दशंहोतारं प्रयुंश्चीत। बहोरेव भूयाँन्भवति। सोंऽकामयत वीरो म् आजांयेतेतिं। स दशंहोतुश्चतुंरहोतारं निरंमिमीत। तं प्रायुंङ्कः॥६८॥

तस्य प्रयुक्तीन्द्रोऽजायत। यः कामयेत वीरो म् आजांयेतेति। स चतुरहोतारं प्रयुंश्चीत। आऽस्यं वीरो जांयते। सोंऽकामयत पशुमान्थ्स्यामितिं। स चतुंर्होतुः पश्चंहोतारं निरंमिमीत। तं प्रायुंङ्कः। तस्य प्रयुंक्ति पशुमानंभवत्। यः कामयेत पशुमान्थ्स्यामितिं। स पश्चंहोतारं प्रयुंक्षीत॥६९॥

पृशुमानेव भंवति। सोंऽकामयत्त्वों मे कल्पेर्न्नितिं। स पश्चंहोतुः षड्ढोतारं निरंमिमीत। तं प्रायुंङ्कः। तस्य प्रयुंत्त्यृतवौं-ऽस्मा अकल्पन्त। यः कामयेत्त्वों मे कल्पेर्न्नितिं। स षड्ढोतारं प्रयुंश्चीत। कल्पंन्तेऽस्मा ऋतवंः। सोंऽकामयत सोम्पः सोंमयाजी स्याम्। आ में सोम्पः सोंमयाजी जांयेतेतिं॥७०॥

स षड्ढोतुः स्प्तहोतारं निरंमिमीत। तं प्रायुंङ्कः। तस्य प्रयुंक्ति सोम्पः सोमयाज्यंभवत्। आऽस्यं सोम्पः सोमयाज्यंभवत्। आऽस्यं सोम्पः सोमयाज्यंजायत। यः कामयेत सोम्पः सोमयाजी स्याम्। आ में सोम्पः सोमयाजी जांयेतेति। स स्प्तहोतारं प्रयुंश्चीत। सोम्प एव सोमयाजी भवति। आऽस्यं सोम्पः सोमयाजी जांयते। स वा एष पृशुः पंश्चधा प्रतिं तिष्ठति॥७१॥

पद्भिमुंखेन। ते देवाः प्शून् वित्वा। सुवर्गं लोकमायन्। तेऽमुष्मिं लोक व्यक्षध्यन्। तेंऽब्रुवन्। अमुतः प्रदानं वा उपंजिजीविमेति। ते सप्तहोतारं यज्ञं विधायायास्यम्। आङ्गीर्सं प्राहिण्वन्। एतेनामुत्रं कल्पयेति। तस्य वा इयं कृप्तिः॥७२॥ यदिदं किं चं। य एवं वेदं। कल्पंतेऽस्मे। स वा अयं मंनुष्यंषु यज्ञः सप्तहोता। अमुत्रं सुद्धो देवेभ्यों ह्व्यं वहित। य एवं वेदं। उपेनं यज्ञो नमित। यो वै चतुंरहोतृणां निदानं वेदं। निदानंवान्भवित। अग्निहोत्रं वै दर्शहोतुर्निदानम्। दर्शपूर्णमासौ चतुंरहोतुः। चातुर्मास्यानि पश्चंहोतुः। पृशुबन्धः षङ्कांतुः। सौम्यौऽध्वरः सप्तहोतुः। एतद्वे चतुंरहोतृणां निदानम्। य एवं वेदं। निदानंवान्भवित॥७३॥ अमिमीत तं प्रायुंक्क पश्चंहोतारं प्र युंक्षीत जायेतितं तिष्ठित् क्षिप्तर्वंहोतुर्निदानरं सप्त

प्रजापंतिरकामयत प्रजाः सृंजेयेति प्रजापंतिरकामयत दर्शपूर्णमासौ सृंजेयेति प्रजापंतिरकामयत् प्रजायेयेति स तपः स त्रिवृतं प्रजापंतिरकामयत् दर्शहोतारं तेनं दश्धा- ऽऽत्मानं देवा व वर्रुणमन्तो व प्रजापंतिस्ताः सृष्टाः समिश्लेष्यं देवा व चतुंर्होतृभिरिदं वा अग्रे प्रजापंतिरन्द्रं प्रजापंतिरकामयत बहोर्भूयानेकांदश॥११॥ प्रजापंतिस्तद्वहंस्य प्रजापंतिरकामयतानयैवैनृत्तस्य वा इयं क्रृष्तिस्तस्मात्तेपानाञ्चोतिर्-यदस्मिन्नांदित्ये स षड्ढांतुः स्प्तहांतारं त्रिसंप्ततिः॥७३॥ प्रजापंतिरकामयत निदानंवान्भवति॥

हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके द्वितीयः प्रपाठकः समाप्तः॥

## ॥ तृतीयः प्रश्नः॥

### ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके तृतीयः प्रपाठकः॥

ब्रह्मवादिनों वदन्ति। किं चतुंर्होतृणां चतुर्होतृत्वमितिं। यदेवैषु चतुर्धा होतांरः। तेन चतुंर्होतारः। तस्माचतुंर्होतार उच्यन्ते। तचतुर्र्होतृणां चतुर्होतृत्वम्। सोमो वै चतुंर्होता। अग्निः पश्चंहोता। धाता षङ्कोता। इन्द्रंः सप्तहोता॥१॥

प्रजापंतिर्दर्शहोता। य एवं चतुंर्होतृणामृद्धिं वेदे। ऋभ्रोत्येव। य एषामेवं बन्धुतां वेदे। बन्धुंमान्भवति। य एषामेवं क्रुप्तिं वेदे। कल्पेतेऽस्मै। य एषामेवमायतेनं वेदे। आयतेनवान्भवति। य एषामेवं प्रतिष्ठां वेदे॥२॥

प्रत्येव तिष्ठति। ब्रह्मवादिनो वदन्ति। दर्शहोता चतुंरहोता। पश्चंहोता षड्ढांता सप्तहोता। अथ कस्माचतुंरहोतार उच्यन्त इति। इन्द्रो वै चतुंरहोता। इन्द्रः खलु वै श्रेष्ठों देवतानामुप्-देशनात्। य एविमन्द्रङ् श्रेष्ठं देवतानामुप्देशनाद्वेदं। विसेष्ठः समानानां भवति। तस्माच्छ्रेष्ठमायन्तं प्रथमेनैवानं बुध्यन्ते। अयमागनं। अयमवांसादिति। कीर्तिरंस्य पूर्वाऽऽगंच्छिति जनतांमायतः। अथों एनं प्रथमेनैवानं बुध्यन्ते। अयमागनं। अयमवांसादिति॥३॥

सप्तहोता प्रतिष्ठां वेदं बुध्यन्ते षद्वं॥

8

सिनिन्थे। तेर्जसे वीर्याय। अथौं प्रजापंतिरेवैनौं भूत्वा प्रतिगृह्णाति। आत्मनोऽनौत्यै। यद्येनमार्त्विज्याद्वृत सन्तें निर्हरेरन्। आग्नीध्रे जुहुयाद्दशंहोतारम्। चतुर्गृहीतेनाऽऽज्येन। पुरस्तौत्प्रत्यिङ्ग्रष्टन्ं। प्रतिलोमं विग्राहम्॥४॥

प्राणानेवास्योपं दासयति। यद्येनं पुनंरुप् शिक्षेयुः। आग्नीप्र एव जुंहुयाद्दशंहोतारम्। चतुर्गृहीतेनाऽऽज्येन। पृश्चात्प्राङासीनः। अनुलोममविग्नाहम्। प्राणानेवास्मैं कल्पयति। प्रायंश्चित्ती वाग्घोतेत्यृतुमुखऋंतुमुखं जुहोति। ऋतूनेवास्मैं कल्पयति। कल्पंन्तेऽस्मा ऋतवंः॥५॥

क्रुप्ता अस्मा ऋतव आयंन्ति। षह्वांता वै भूत्वा प्रजापंतिरिदश् सर्वमसृजत। स मनोंऽसृजत। मन्सोऽधिं गायत्रीमंसृजत। तद्गांयत्रीं यशं आर्च्छत्। तामाऽलंभत। गायत्रिया अधि छन्दाईस्यसृजत। छन्दोभ्योऽधि सामं। तथ्साम यशं आर्च्छत्। तदाऽलंभत॥६॥

साम्नोऽधि यजू ईष्यसृजत। यजुर्भ्योऽधि विष्णुम्। तद्विष्णुं यशं आर्च्छत्। तमाऽलंभत। विष्णोरध्योषंधीरसृजत। ओषंधीभ्योऽधि सोमम्। तथ्सोमं यशं आर्च्छत्। तमाऽलंभत। सोमादधि पुशूनंसृजत। पुशुभ्योऽधीन्द्रम्॥७॥

तिदन्द्रं यशं आर्च्छत्। तदेनुन्नाति प्राच्यंवत। इन्द्रं इव यशुस्वी भवति। य पुवं वेदं। नैनुं यशोऽति प्रच्यंवते। यद्वा इदं किं चं। तथ्सर्वम्तान प्वाऽऽङ्गीर्सः प्रत्यंगृह्णात्। तदेनं प्रतिगृहीतं नाहिनत्। यत्किं चं प्रतिगृह्णीयात्। तथ्सर्वम्तानस्त्वांऽऽङ्गीर्सः प्रतिगृह्णात्वित्येव प्रतिगृह्णीयात्। इयं वा उत्तान
आङ्गीर्सः। अनयेवेनत्प्रतिगृह्णाति। नैन १ हिनस्ति। बर्हिषा
प्रतीयाद्गां वाऽश्वं वा। पृतद्वे पंशूनां प्रियं धामं। प्रियेणैवेनं
धाम्ना प्रत्येति॥८॥

विग्राहंमृतव्स्तदाऽलंभतेन्द्रं गृह्णीयाथ्यद्वं॥\_\_\_\_\_[२]

यो वा अविद्वान्निवर्तयंते। विशीर्षा सपौप्माऽमुिष्में हो के भेवति। अथ यो विद्वान्निवर्तयंते। सशीर्षा विपौप्मा- ऽमुिष्में हो के भेवति। देवता वै सप्त पुष्टिकामा न्यंवर्तयन्त। अग्निश्चे पृथिवी चं। वायुश्चान्तरिक्षं च। आदित्यश्च द्यौश्चे चन्द्रमाः। अग्निर्यंवर्तयत। स सांहस्त्रमंपुष्यत्॥९॥

पृथिवी न्यंवर्तयत। सौषंधीभिवंनस्पतिंभिरपुष्यत्। वायुर्न्यंवर्तयत। स मरींचीभिरपुष्यत्। अन्तरिंक्ष्रं न्यंवर्तयत। तद्वयोभिरपुष्यत्। आदित्यो न्यंवर्तयत। स रिष्टमिभिरपुष्यत्। द्यौर्न्यंवर्तयत। सा नक्षंत्रैरपुष्यत्। चन्द्रमा न्यंवर्तयत। सोऽहोरात्रैर्र्धमासैर्मासैर्त्र्ऋतुभिः संवथ्सरेणांपुष्यत्। तान्योषांनपुष्यति। याइस्तेऽपुष्यन्। य पृवं विद्वान्नि चं वर्तयंते परिं च॥१०॥

अपुष्यन्नक्षंत्रेरपुष्यत्पश्चं च॥=

तस्य वा अग्नेर्हिरंण्यं प्रतिजग्रहुषंः। अर्धिमेन्द्रियस्यापाँक्रामत्। तदेतेनेव प्रत्यंगृह्णात्। तेन् वे सोंऽर्धिमेन्द्रियस्याऽऽत्मन्नुपाधंत्त। अर्धिमेन्द्रियस्याऽऽत्मन्नुपाधंत्ते। य एवं
विद्वान् हिरंण्यं प्रतिगृह्णातिं। अथ् योऽविद्वान्प्रतिगृह्णातिं।
अर्धमंस्येन्द्रियस्यापंक्रामित। तस्य वे सोमंस्य वासंः
प्रतिजग्रहुषंः। तृतींयमिन्द्रियस्यापाँक्रामत्॥११॥

तदेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन् वै स तृतींयिमिन्द्रिय-स्याऽऽत्मन्नुपाधंत्त। तृतींयिमिन्द्रियस्याऽऽत्मन्नुपाधंत्ते। य एवं विद्वान् वासंः प्रतिगृह्णातिं। अथ् योऽविंद्वान्प्रति-गृह्णातिं। तृतींयमस्येन्द्रियस्यापंक्रामित। तस्य वै रुद्रस्य गां प्रतिजग्रहुषंः। चतुर्थिमिन्द्रियस्यापाँक्रामत्। तामेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन् वै स चतुर्थिमिन्द्रियस्याऽऽत्मन्नुपाधंत्त॥१२॥

चृतुर्थिमिन्द्रियस्याऽऽत्मन्नुपार्धत्ते। य एवं विद्वान्गां प्रितिगृह्णातिं। अथ् योऽविद्वान्प्रतिगृह्णातिं। चृतुर्थमंस्येन्द्रिय-स्यापंक्रामित। तस्य वे वर्रुणस्यार्श्वं प्रतिजग्रहुषंः। पृश्चमिनद्रियस्यापाकामत्। तमेतेनेव प्रत्यंगृह्णात्। तेन् वे स पश्चमिनद्रियस्याऽऽत्मन्नुपार्धत्त। पृश्चमिनद्रियस्या-ऽऽत्मन्नुपार्धत्त। पृश्चमिनद्रियस्या-ऽऽत्मन्नुपार्धत्त। य एवं विद्वानश्वं प्रतिगृह्णातिं॥१३॥

अथ् योऽविद्वान्प्रतिगृह्णातिं। पृश्चममंस्येन्द्रियस्यापं-क्रामित। तस्य वै प्रजापंतेः पुरुषं प्रतिजग्रहुषः। षृष्ठमिन्द्रियस्यापाकामत्। तमेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन वै स षृष्ठमिन्द्रियस्याऽऽत्मन्नुपार्धत्त। षृष्ठमिन्द्रियस्या-ऽऽत्मन्नुपार्धत्ते। य एवं विद्वान्पुरुषं प्रतिगृह्णातिं। अथ् योऽविद्वान्प्रतिगृह्णातिं। षृष्ठमंस्येन्द्रियस्यापंत्रामति॥१४॥

तस्य वै मनोस्तर्लपं प्रतिजग्रहुषंः। सप्तमिनिद्वय-स्यापानामत्। तमेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन वै स संप्तमिनिद्वयस्याऽऽत्मन्नुपाधंत्त। सप्तमिनिद्वयस्या-ऽऽत्मन्नुपाधंत्ते। य एवं विद्वाङ्स्तर्ल्पं प्रतिगृह्णातिं। अथ् योऽविद्वान्प्रतिगृह्णातिं। सप्तममंस्येन्द्रियस्यापंत्रामित। तस्य वा उंत्तानस्यांऽऽङ्गीर्सस्याप्राणत्प्रतिजग्रहुषंः। अष्टमिनिद्वयस्यापानामत्॥१५॥

तदेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन वै सौंऽष्ट्रमिनिद्भयस्या-ऽऽत्मन्नुपाधंत्त। अष्ट्रमिनिद्भयस्याऽऽत्मन्नुपाधंत्ते। य एवं विद्वानप्राणत्प्रतिगृह्णातिं। अथ् योऽविद्वान्प्रतिगृह्णातिं। अष्ट्रम-मंस्येन्द्रियस्यापंत्रामित। यद्वा इदं किं चं। तथ्सर्वमृत्तान एवाऽऽङ्गीर्सः प्रत्यंगृह्णात्। तदेनं प्रतिगृहीतं नाहिनत्। यत्किं चं प्रतिगृह्णीयात्। तथ्सर्वमृत्तानस्त्वांऽऽङ्गीर्सः प्रतिगृह्णीयात्। इयं वा उत्तान आंङ्गीर्सः। प्रतिगृह्णात्वत्येव प्रतिगृह्णीयात्। इयं वा उत्तान आंङ्गीर्सः। अनयेवेनत्प्रतिगृह्णाति। नैन र् हिनस्ति॥१६॥

तृतींयमिन्द्रियस्यापाँकामचतुर्थमिन्द्रियस्यात्मज्ञुपाधृत्तार्श्वं प्रतिगृह्णाति षष्ठमंस्येन्द्रियस्यापंकामत्यष्टमिनं न्द्रियस्यापाँकामत्प्रतिगृह्णीयाचृत्वारिं च (तस्य वा अग्नेर्हिरंण्युष्ट् सोमंस्य वास्पस्तदेतेनं रुद्रस्य गान्तामेतेन् वरुणस्यार्श्वं प्रजापंतेः पुरुषं मनोस्तल्युन्तमेतेनौत्तानस्य तदेतेनाप्राणद्यद्वे। अर्थं तृतीयमष्टमं तचेतुर्थं तां पश्चमर षष्ठर संप्तमन्तम्। तदेतेन द्वे तामेतेनैकं तमेतेन त्रीणि तदेतेनैकम्॥॥————[४]

ब्रह्मवादिनों वदन्ति। यद्दर्शहोतारः स्त्रमासंत। केन् ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। केनं प्रजा अंसृजन्तेतिं। प्रजापंतिना वै ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। तेनं प्रजा अंसृजन्त। यचतुंर्होतारः स्त्रमासंत। केन् ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। केनौषंधीरसृजन्तेतिं। सोमंन् वै ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्॥१७॥

तेनौषंधीरसृजन्त। यत्पश्चंहोतारः सृत्रमासंत। केन् ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। केनैभ्यो लोकभ्योऽसुंरान्प्राणुंदन्त। केनैषां पृशूनंवृञ्जतेतिं। अग्निना वै ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। तेनैभ्यो लोकभ्योऽसुंरान्प्राणुंदन्त। तेनैषां पृशूनंवृञ्जत। यथ्यङ्कांतारः सृत्रमासंत। केन् ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्॥१८॥

केन्त्र्नंकल्पयन्तेति। धात्रा वै ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। तेन्त्र्नंकल्पयन्त। यथ्सप्तहोतारः स्त्रमासंत। केन् ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। केन् सुवंरायन्। केन्माँ श्लोकान्थ्समं-तन्वित्रिति। अर्यम्णा वै ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। तेन् सुवंरायन्। तेन्माँ श्लोकान्थ्समंतन्वित्रिति॥१९॥

पृते वै देवा गृहपंतयः। तान् य पृवं विद्वान्। अप्यन्यस्यं गार्हपते दीक्षंते। अवान्तरमेव सत्रिणांमृभ्नोति। यो वा अर्यमणं वेदं। दानंकामा अस्मै प्रजा भवन्ति। यज्ञो वा अर्यमा। आर्यावसतिरिति वै तमांहुर्यं प्रशर्सन्ति। आर्यावसृतिर्भवति। य एवं वेदं॥२०॥

यद्वा इदं किं चे। तथ्सर्वं चतुंर्होतारः। चतुंर्होतृभ्योऽधिं यज्ञो निर्मितः। स य एवं विद्वान् विवदेत। अहमेव भूयों वेद। यश्चतुंर्होतृन् वेदेतिं। स ह्येव भूयो वेदे। यश्चतुंर्होतृन् वेदे। यो वै चतुंर्होतृणा् १ होतृन् वेदे। सर्वांसु प्रजास्वन्नंमत्ति॥२१॥

सर्वा दिशोऽभि जंयति। प्रजापंतिर्वे दशंहोतृणा् होतां। सोम्श्रतुरहोतृणा् होतां। अग्निः पश्चंहोतृणा् होतां। धाता षड्ढोतृणा् होतां। अर्यमा सप्तहोतृणा् होतां। पुते वै चतुरहोतृणा् होतांरः। तान् य एवं वेदं। सर्वासु प्रजास्वन्नंमत्ति। सर्वा दिशोऽभि जंयति॥२२॥

आ़र्धुवृत्रार्धुवृत्रित्येवं वेदाँत्ति सर्वा दिशोऽभि जंयति (वै तेनं सृत्रङ्केनं॥)॥————[५]

प्रजापंतिः प्रजाः सृष्ट्वा व्यंस्नश्सत। स हृदंयं भूतों-ऽशयत्। आत्मन् हा (३) इत्यह्वंयत्। आपः प्रत्यंश्रण्वन्। ता अंग्निहोत्रेणैव यंज्ञकृतुनोपं पूर्यावंतन्त। ताः कुसिन्धमुपौंहन्। तस्मांदग्निहोत्रस्यं यज्ञकृतोः। एकं ऋत्विक्। चृतुष्कृत्वो-ऽह्वंयत्। अग्निर्वायुरांदित्यश्चन्द्रमाः॥२३॥

ते प्रत्यंश्वन्। ते देर्शपूर्णमासाभ्यांमेव यंज्ञऋतुनोपं पूर्यावंतन्त। त उपौह इश्चत्वार्यङ्गांनि। तस्माँ दर्शपूर्ण-मासयौर्यज्ञऋतोः। चृत्वारं ऋत्विजः। पृश्चकृत्वोऽह्वंयत्। पृशवः प्रत्यंश्वन्। ते चांतुर्मास्यैरेव यंज्ञऋतुनोपं पूर्यावंर्तन्त। त उपौहुं लोमं छुवीं माुर्समस्थि मुज्जानम्। तस्माचातुर्मास्यानां यज्ञकृतोः॥२४॥

पश्चर्त्विजः। षद्भुत्वोऽह्वंयत्। ऋतवः प्रत्यंशृण्वन्। ते पंशुबन्धेनैव यंज्ञऋतुनोपंपूर्यावंतिन्त। त उपौहुन्थ्स्तनांवाण्डौ शिश्ञमवाश्चं प्राणम्। तस्मात्पशुबन्धस्यं यज्ञऋतोः। षड्विजः। स्माकृत्वोऽह्वंयत्। होत्राः प्रत्यंशृण्वन्। ताः सौम्येनैवाध्वरेणं यज्ञऋतुनोपंपूर्यावंतिन्त॥२५॥

ता उपौहन्थ्मप्त शीर्षण्यांन्प्राणान्। तस्मांध्योम्यस्यांध्वरस्यं यज्ञऋतोः। सप्त होत्राः प्राचीर्वषंद्भवन्ति। दृश्कृत्वोऽह्वंयत्। तपः प्रत्यंश्वणोत्। तत्कर्मणैव संवध्यरेण सर्वैयंज्ञऋतुभिरुपं पूर्यावर्ततः। तथ्सर्वमात्मानमपंरिवर्गमुपौहत्। तस्मांध्यंवध्यरे सर्वे यज्ञऋतवोऽवंरुध्यन्ते। तस्माद्दशंहोता चतुर्होता। पश्चेहोता षङ्कोता सप्तहोता। एकंहोत्रे बुलि॰ हंरन्ति। हरंन्त्यस्मै प्रजा बुलिम्। ऐन्मप्रंतिख्यातं गच्छति। य एवं वेदं॥२६॥

चन्द्रमाँश्चातुर्मास्यानां यज्ञकृतोरंध्वरेणं यज्ञकृतुनोपं पुर्यावर्तन्त सप्तहोता चत्वारि च॥——[६]

प्रजापंतिः पुरुषमसृजत। सौंऽग्निरंब्रवीत्। ममायमन्नं-मस्त्वितं। सोऽबिभेत्। सर्वं वै माऽयं प्र धंक्ष्यतीतिं। स एता इश्चतुंरहोतृनात्मस्परंणानपश्यत्। तानंजुहोत्। तैर्वे स आत्मानंमस्पृणोत्। यदंग्निहोत्रं जुहोतिं। एकंहोतारमेव

## तद्यंज्ञऋतुमाँप्रोत्यग्निहोत्रम्॥२७॥

कुसिन्धं चाऽऽत्मनेः स्पृणोति। आदित्यस्यं च सायुंज्यं गच्छति। चतुरुन्नयति। चतुर्होतारमेव तद्यंज्ञकृतुमाँप्रोति दर्शपूर्णमासौ। चत्वारि चाऽऽत्मनोऽङ्गानि स्पृणोति। आदित्यस्यं च सायुंज्यं गच्छति। चतुरुन्नयति। समित्पंश्चमी। पश्चहोतारमेव तद्यंज्ञकृतुमाँप्रोति चातुर्मास्यानि। लोमं छुवीं मार्समस्थिं मुज्ञानम्॥२८॥

तानिं चाऽऽत्मनेः स्पृणोतिं। आदित्यस्यं च सायुंज्यं गच्छति। चतुरुन्नयति। द्विर्जुहोति। षङ्कोतारमेव तद्यंज्ञऋतुमाँप्रोति पशुबन्धम्। स्तनांवाण्डौ शिश्ञमवाँश्चं प्राणम्। तानिं चाऽऽत्मनेः स्पृणोतिं। आदित्यस्यं च सायुंज्यं गच्छति। चतुरुन्नयति। द्विर्जुहोति॥२९॥

स्मिथ्संप्तमी। स्प्तहोतारमेव तद्यंज्ञऋतुमाँप्रोति सौम्यमध्वरम्। स्प्त चाऽऽत्मनः शीर्षण्यांन्प्राणान्थस्पृणोति। आदित्यस्यं च सायुंज्यं गच्छति। चतुरुन्नंयति। द्विर्जुहोति। द्विर्निमाँष्टिं। द्विः प्राश्ञांति। दशंहोतारमेव तद्यंज्ञऋतुमाँप्रोति संवथ्मरम्। सर्वं चाऽऽत्मान्मपंरिवर्गः स्पृणोति। आदित्यस्यं च सायुंज्यं गच्छति॥३०॥

अ्ग्रिहोत्रं मुज्जानुन्द्विर्जुहोत्यपंरिवर्गङ् स्पृणोत्येकं च॥—————[७]

प्रजापंतिरकामयत् प्रजांयेयेतिं। स तपोंऽतप्यत।

सौंऽन्तर्वानभवत्। स हरितः श्यावोऽभवत्। तस्माथ्स्र्यन्तर्वेत्री। हरिणी सती श्यावा भवति। स विजायंमानो गर्भेणाताम्यत्। स तान्तः कृष्णः श्यावोऽभवत्। तस्मौत्तान्तः कृष्णः श्यावो भवति। तस्यासुरेवाजीवत्॥३१॥

तेनासुनाऽसुंरानसृजत। तदसुंराणामसुर्त्वम्। य प्वमसुंराणामसुर्त्वं वेदं। असुंमानेव भेवति। नैन्मसुंर्जहाति। सोऽसुंरान्थ्सृष्ट्वा पितेवांमन्यत। तदनुं पितॄनंसृजत। तत्पितृणां पितृत्वम्। य पृवं पितृणां पितृत्वं वेदं। पितेवैव स्वानां भवति॥३२॥

यन्त्यंस्य पितरो हवमै। स पितॄन्थ्मृष्ट्वाऽऽमंनस्यत्। तदनुं मनुष्यांनसृजत। तन्मंनुष्यांणां मनुष्यत्वम्। य एवं मंनुष्यांणां मनुष्यत्वं वेदं। मनुस्त्येव भंवति। नैनं मनुर्जहाति। तस्मै मनुष्यांन्थ्ससृजानायं। दिवां देवत्रा-ऽभंवत्। तदनुं देवानंसृजत। तद्देवानां देवत्वम्। य एवं देवानां देवत्वं वेदं। दिवां हैवास्यं देवत्रा भंवति। तानि वा एतानि चत्वार्यम्भा स्सि। देवा मनुष्याः पितरोऽसुंराः। तेषु सर्वेष्वम्भो नभं इव भवति। य एवं वेदं॥३३॥

अजीवथ्स्वानां भवति देवानंस्जत सप्त चं॥\_\_\_\_\_[८]

ब्रह्मवादिनों वदन्ति। यो वा इमं विद्यात्। यतोऽयं पर्वते। यदंभि पर्वते। यदंभि सम्पर्वते। सर्वमायुंरियात्। न पुरा- ऽऽयुंषः प्र मीयेत। पृशुमान्थ्स्यांत्। विन्देतं प्रजाम्। यो वा इमं वेदं॥३४॥

यतोऽयं पर्वते। यदंभि पर्वते। यदंभि सम्पर्वते। सर्वमायुरिति। न पुराऽऽयुषः प्र मीयते। पृशुमान्भविति। विन्दते प्रजाम्। अद्भः पंवते। अपोऽभि पंवते। अपोऽभि सम्पंवते॥३५॥

अस्याः पंवते। इमाम्भि पंवते। इमाम्भि सम्पंवते। अग्नेः पंवते। अग्निम्भि पंवते। अग्निम्भि सम्पंवते। अन्तरिक्षात्पवते। अन्तरिक्षम्भि पंवते। अन्तरिक्षम्भि सम्पंवते। आदित्यात्पंवते॥३६॥

आदित्यम्भि पंवते। आदित्यम्भि सम्पंवते। द्योः पंवते। दिवंम्भि पंवते। दिवंम्भि सम्पंवते। दिग्भ्यः पंवते। दिशोऽभि पंवते। दिशोऽभि सम्पंवते। स यत्पुरस्ताद्वातिं। प्राण एव भूत्वा पुरस्तांद्वाति॥३७॥

तस्मौत्पुरस्ताद्वान्तम्। सर्वाः प्रजाः प्रति नन्दन्ति। प्राणो हि प्रियः प्रजानाम्। प्राण इंव प्रियः प्रजानां भवति। य एवं वेदं। स वा एष प्राण एव। अथ् यद्दंक्षिणतो वार्ति। मात्रिश्वेव भूत्वा दंक्षिणतो वांति। तस्मौद्दक्षिणतो वान्तं विद्यात्। सर्वा दिश आ वांति॥३८॥

सर्वा दिशोऽनु वि वांति। सर्वा दिशोऽनु सं वातीतिं।

स वा एष मांतिरश्वेव। अथु यत्पश्चाद्वातिं। पर्वमान एव भूत्वा पश्चाद्वांति। पूतमंस्मा आहंरन्ति। पूतमुपंहरन्ति। पूतमंश्ञाति। य एवं वेदं। स वा एष पर्वमान एव॥३९॥

अथ् यदुंतर्तो वातिं। स्वितैव भूत्वोत्तर्तो वांति। स्वितेव स्वानां भवति। य एवं वेदं। स वा एष संवितेव। ते य एनं पुरस्तादायन्तंमुप्वदंन्ति। य एवास्यं पुरस्तात्पाप्मानंः। ताङ्स्तेऽपं घ्रन्ति। पुरस्तादितंरान्पाप्मनंः सचन्ते। अथ् य एनं दक्षिण्त आयन्तंमुप्वदंन्ति॥४०॥

य प्वास्यं दक्षिणतः पाप्मानः। ता इस्तेऽपं घ्रन्ति। दक्षिणत इतंरान्पाप्मनः सचन्ते। अथ् य एनं पृश्चादायन्तंमुप् वदंन्ति। य एवास्यं पृश्चात्पाप्मानः। ता इस्तेऽपं घ्रन्ति। पृश्चादितंरान्पाप्मनः सचन्ते। अथ् य एनमुत्तर्त आयन्तंमुप् वदंन्ति। य एवास्यौत्तर्तः पाप्मानः। ता इस्तेऽपं घ्रन्ति॥४१॥

उत्तरत इतंरान्पाप्मनंः सचन्ते। तस्मांदेवं विद्वान्। वीवं नृत्येत्। प्रेवं चलेत्। व्यस्येवाक्ष्यौ भाषेत। मृण्टयेदिव। ऋाथयेदिव। शृङ्गायेतेव। उत मोपं वदेयुः। उत में पाप्मान्मपं हन्युरितिं। स यान्दिशः स्निमेष्यन्थ्स्यात्। यदा तान्दिशं वातों वायात्। अथु प्रवेयात्। प्र वां धावयेत्। सातमेव रिदेतं व्यूढं गुन्धम्भि प्रच्यंवते। आऽस्य तं जनपदं पूर्वा कीर्तिर्गच्छिति। दानंकामा अस्मै प्रजा भवन्ति। य एवं वेदं॥४२॥

वेद सम्पंवत आदित्यात्पंवते वात्या वाँत्येष पर्वमान एव देक्षिणत आयन्तंमुप वर्दन्त्युत्तर्तः पाप्मानुस्ताः स्तेपं घ्रन्तीत्यृष्टौ चं॥————[९]

प्रजापंतिः सोम् राजानमसृजत। तं त्रयो वेदा अन्वसृज्यन्त। तान् हस्तेंऽकुरुत। अथ् ह सीतां सावित्री। सोम् राजांनं चकमे। श्रद्धामु स चंकमे। साऽऽहं पितरंं प्रजापंतिमुपंससार। त॰ होवाच। नमंस्ते अस्तु भगवः। उपं त्वाऽयानि॥४३॥

प्रत्वां पद्ये। सोमं वै राजांनं कामये। श्रृद्धामु स कांमयत् इति। तस्यां उ ह स्थांग्रमंलङ्कारं केल्पयित्वा। दशहोतारं पुरस्तांद्याख्यायं। चतुंरहोतारं दक्षिणतः। पश्चंहोतारं पृश्चात्। षड्ढोतारमुत्तर्तः। सप्तहोतारमुपरिष्टात्। सम्भारैश्च पिन्निभिश्च मुखेंऽलङ्कृत्यं॥४४॥

आऽस्यार्धं वंब्राज। ता होदीक्ष्योवाच। उप मा वंर्तस्वेति। त होवाच। भोगं तु मु आचंक्ष्व। पुतन्मु आचंक्ष्व। यत्ते पाणाविति। तस्यां उह त्रीन् वेदान्प्रदंदौ। तस्मादुहु स्त्रियो भोगुमैव हारयन्ते। स यः कामयेत प्रियः स्यामिति॥४५॥

यं वां कामयेत प्रियः स्यादितिं। तस्मां एतः स्थाग्रमेलङ्कारं केल्पयित्वा। दशहोतारं पुरस्ताँ द्याख्यायं। चतुरहोतारं दक्षिण्तः। पश्चहोतारं पृश्चात्। षष्ट्वोतारमुत्तरः। स्प्तहोतारमुपरिष्टात्। सम्भारश्च पिन्निभिश्च मुखेंऽलुङ्कृत्यं। आस्यार्धं व्रंजेत्। प्रियो हैव भवति॥४६॥

अयान्यलङ्कृत्यं स्यामितिं भवति॥———[१०]

ब्रह्मौत्मन्वदंसृजत। तदंकामयत। समात्मनां पद्येयेतिं। आत्मन्नात्मन्नित्यामंत्रयत। तस्मैं दश्म १ हूतः प्रत्यंश्रणोत्। स दशंहूतोऽभवत्। दशंहूतो हु वै नामैषः। तं वा एतं दशंहूत १ सन्तम्। दशंहोतेत्याचंक्षते प्रोक्षेण। प्रोक्षंप्रिया इव हि देवाः॥४७॥

आत्मन्नात्मन्नित्यामंत्रयत। तस्में सप्तमः हूतः प्रत्यंश्वणोत्। स स्प्तहूंतोऽभवत्। स्प्तहूंतो ह् वै नामेषः। तं वा पृतः स्प्तहूंतः सन्तम्। स्प्तहोतेत्याचंक्षते प्रोक्षंण। प्रोक्षंप्रिया इव हि देवाः। आत्मन्नात्मन्नित्यामंत्रयत। तस्में षष्ठः हूतः प्रत्यंश्वणोत्। स षड्ढूंतोऽभवत्॥४८॥

षड्ढूंतो हु वै नामैषः। तं वा एतः षड्ढूंतः सन्तम्। षड्ढ्योतेत्याचेक्षते प्रोक्षेण। प्रोक्षेप्रिया इव हि देवाः। आत्मन्नात्मन्नित्यामेन्त्रयत। तस्मै पञ्चमः हूतः प्रत्यंश्रणोत्। स पञ्चंहूतोऽभवत्। पञ्चंहूतो हु वै नामैषः। तं वा एतं पर्ञ्चहूतः सन्तम्। पञ्चंहोतेत्याचेक्षते प्रोक्षेण॥४९॥

पुरोक्षंप्रिया इव हि देवाः। आत्मन्नात्मन्नित्यामंत्रयत। तस्मै चतुर्थ हूतः प्रत्यंश्वणोत्। स चतुंर्हूतोऽभवत्। चतुंर्हूतो हु वै नामैषः। तं वा पृतं चतुंर्हूत्र सन्तम्। चतुंर्ह्तित्याचंक्षते पुरोक्षंण। पुरोक्षंप्रिया इव हि देवाः। तमंब्रवीत्। त्वं वै में नेदिष्ठः हूतः प्रत्यंश्रौषीः। त्वयैनानाख्यातार् इति। तस्मान्नु हैनाः श्वतंरहोतार् इत्याचंक्षते। तस्मांच्छुश्रूषुः पुत्राणाः हृद्यंतमः। नेदिष्ठो हृद्यंतमः। नेदिष्ठो हृद्यंतमः। नेदिष्ठो व्रह्मंणो भवति। य एवं वेदं॥५०॥

देवाः षड्ढूंतोऽभवृत्पश्चंहोतेत्याचंक्षते परोक्षंणाश्रौषीः षद्वं॥————[११]

ब्रह्मवादिनः किं दक्षिणां यो वा अविद्वान्तस्य वै ब्रह्मवादिनो यद्दर्शहोतारः प्रजापंतिर्व्यंस्रं प्रजापंतिः पुरुषं प्रजापंतिरकामयत् स तपः सौंऽन्तर्वांन्ब्रह्मवादिनो यो वा इमं विद्यात्प्रजापंतिः सोम् र राजानं ब्रह्मांत्मन्वदेकांदश॥११॥
ब्रह्मवादिनस्तस्य वा अग्नेर्यद्वा इदं किं चं प्रजापंतिरकामयत् य प्रवास्यं दक्षिणतः पंश्चाशत्॥५०॥

ब्रह्मवादिनो य एवं वेदं॥

हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके तृतीयः प्रपाठकः समाप्तः॥

# ॥चतुर्थः प्रश्नः॥

## ॥ तैत्तिरीयबाह्मणे द्वितीयाष्टके चतुर्थः प्रपाठकः॥

जुष्टो दर्मूना अतिथिर्दुरोणे। इमं नो यज्ञमुपं याहि विद्वान्। विश्वां अग्नेऽभियुजों विहत्यं। श्रृत्यूतामा भेरा भोजनानि। अग्ने शर्धं महते सौभंगाय। तवं द्युम्नान्यंत्तमानिं सन्तु। सञ्जास्पृत्य स्यम्मा कृणुष्व। शृत्रूयताम्भि तिष्ठा महा स्ति। अग्ने यो नोऽभितो जनंः। वृको वारो जिघा स्ति॥१॥

ता इस्त्वं वृत्रहं जिहि। वस्वस्मभ्यमा भेर। अग्ने यो नो-ऽभिदासंति। समानो यश्च निष्ठ्यः। इध्मस्येव प्रक्षायंतः। मा तस्योच्छेषि किश्चन। त्विमेन्द्राभिभूरंसि। देवो विज्ञांतवीर्यः। वृत्रहा पुंरुचेतंनः। अप प्राचं इन्द्र विश्वारं अमित्रान्॥२॥

अपापांचो अभिभूते नुदस्व। अपोदींचो अपंशूराध्रा चं ऊरौ। यथा तव शर्मन्मदेम। तिमन्द्रं वाजयामिस। महे वृत्राय हन्तंवे। स वृषां वृष्भो भुंवत्। युजे रथं गुवेषंण् हिर्रिभ्याम्। उप ब्रह्माणि जुजुषाणमंस्थुः। विबाधिष्टास्य रोदंसी महित्वा। इन्द्रों वृत्राण्यंप्रतीजंघन्वान्॥३॥

ह्व्यवाहंमभिमातिषाहम्ं। रक्षोहणं पृतंनासु जिष्णुम्। ज्योतिष्मन्तं दीद्यंतं पुरंन्धिम्। अग्निः स्विष्टकृतमा हुवेम। स्विष्टमग्ने अभि तत्पृंणाहि। विश्वां देव पृतंना अभि ष्य।

उरुं नः पन्थां प्रदिशन्विभाहि। ज्योतिष्मद्धेह्यजरं न आयुः। त्वामंग्ने हविष्मंन्तः। देवं मर्तास ईडते॥४॥

मन्ये त्वा जातवेदसम्। स ह्व्या वंक्ष्यानुषक्। विश्वांनि नो दुर्गहां जातवेदः। सिन्धुं न नावा दुरिताऽतिं पर्षि। अग्नें अत्रिवन्मनंसा गृणानः। अस्माकं बोध्यविता तनूनांम्। पूषा गा अन्वेतु नः। पूषा रक्ष्यत्वर्वतः। पूषा वाजर्रं सनोतु नः। पूषेमा आशा अनुवेद सर्वाः॥५॥

सो अस्मार अभैयतमेन नेषत्। स्वस्तिदा अघृंणिः सर्ववीरः। अप्रयुच्छन्पुर एंतु प्रजानन्। त्वमंग्ने सप्रथां असि। जुष्टो होता वरेण्यः। त्वयां यज्ञं वितंन्वते। अग्नी रक्षार्रसि सेधति। शुक्रशोंचिरमंत्र्यः। शुचिः पावक ईड्यः। अग्ने रक्षां णो अर्हसः॥६॥

प्रतिं ष्म देव रीषंतः। तिपंष्ठेर्जरों दह। अग्ने हश्स् न्यंत्रिणम्ं। दीद्यन्मर्त्येष्वा। स्वे क्षये श्चिव्रत। आ वांत वाहि भेष्जम्। वि वांत वाहि यद्रपंः। त्वश् हि विश्वभेषजः। देवानां दूत ईयंसे। द्वाविमौ वातौं वातः॥७॥

आ सिन्धोरा पंरावतः। दक्षं मे अन्य आवातुं। परान्यो वांतु यद्रपः। यद्दो वांत ते गृहे। अमृतंस्य निधिर्हितः। ततो नो देहि जीवसें। ततों नो धेहि भेषजम्। ततों नो मह् आवंह। वात् आवांतु भेषुजम्। शुम्भूर्मयोुभूर्नो हृदे॥८॥

प्रण आयूर्षि तारिषत्। त्वमंग्ने अयासिं। अया सन्मनंसा हितः। अया सन् ह्व्यमूंहिषे। अया नों धेहि भेषजम्। इष्टो अग्निराहुंतः। स्वाहांकृतः पिपर्तु नः। स्वृगा देवेभ्यं इदं नमः। कामों भूतस्य भव्यंस्य। सम्राडेको विरांजति॥९॥

स इदं प्रति पप्रथे। ऋतूनुथ्मृंजते वृशी। काम्स्तदग्रे समंवर्ततािधं। मनंसो रेतः प्रथमं यदासीत्। स्तो बन्धुमसंति निरंविन्दन्। हृदि प्रतीष्यां क्वयों मनीषा। त्वयां मन्यो स्रथंमारुजन्तः। हर्षंमाणासो धृषता मंरुत्वः। तिग्मेषंव आयुंधा स्रशिशांनाः। उप प्रयंन्ति नरों अग्निरूपाः॥१०॥

मृन्युर्भगों मृन्युरेवासं देवः। मृन्युर्होता वर्रुणो विश्ववेदाः। मृन्युं विशं ईडते देवयन्तीः। पाहि नों मन्यो तपसा श्रमेण। त्वमंग्ने व्रत्भृच्छुचिः। देवा असांदया इह। अग्ने ह्व्याय् वोढंवे। व्रतानुबिभंद्रत्पा अदांभ्यः। यजां नो देवा अज्ञरः सुवीरः। दध्द्रत्नांनि सुविदानो अंग्ने। गोपाय नों जीवसं जातवेदः॥११॥

जिघा रंसत्यमित्रां अघुन्वानीं डते सर्वा अरहंसो वातो हुदे रांजत्यग्निरूपाः सुविदानो अंग्रु एकं

[8]

चक्षुंषो हेते मनंसो हेते। वाचों हेते ब्रह्मंणो हेते। यो मांऽघायुरंभिदासंति। तमंग्ने मेन्या मेनिं कृण्। यो मा चक्षुंषा यो मनंसा। यो वाचा ब्रह्मणाऽघायुरंभिदासंति। तयाँऽग्रे त्वं मेन्या। अमुमंमेनिं कृणु। यत्किश्चासौ मनंसा यचं वाचा। यज्ञैर्जुहोति यजुंषा हिविभिंः॥१२॥

तन्मृत्युर्निर्ऋंत्या संविदानः। पुरादिष्टादाहुंतीरस्य हन्तु। यातुधाना निर्ऋंतिरादुरक्षः। ते अस्य घ्रन्त्वनृंतेन सत्यम्। इन्द्रेषिता आज्यंमस्य मथ्नन्तु। मा तथ्समृंद्धि यद्सौ क्रोतिं। हन्मिं तेऽहं कृत १ ह्विः। यो में घोरमचींकृतः। अपाँश्चौ त उभौ बाहू। अपंनह्याम्यास्यम्॥१३॥

अपं नह्यामि ते बाहू। अपं नह्याम्यास्यम्। अग्नेर्देवस्य ब्रह्मणा। सर्वं तेऽविधषं कृतम्। पुराऽमुष्यं वषद्भारात्। यृज्ञं देवेषुं नस्कृधि। स्विष्टमुस्माकं भूयात्। माऽस्मान्प्रापृत्न-रातयः। अन्तिं दूरे सुतो अंग्ने। भ्रातृंव्यस्याभिदासंतः॥१४॥

वृषद्भारेण वर्त्रेण। कृत्या हिन्म कृतामहम्। यो मा नक्तं दिवां सायम्। प्रातश्चाह्नां निपीयंति। अद्या तिमंन्द्र वर्त्रेण। भातृंव्यं पादयामिस। इन्द्रंस्य गृहोंऽसि तन्त्वां। प्रपेद्ये सगुः सार्श्वः। सह यन्मे अस्ति तेनं। ईडें अग्निं विपश्चितम्॥१५॥

गिरा यज्ञस्य सार्धनम्। श्रुष्टीवानंन्धितावांनम्। अग्नें श्केमं ते वयम्। यमं देवस्यं वाजिनंः। अति द्वेषार्रसे तरेम। अवंतं मा समंनसौ समोकसौ। सचेतसौ सरेतसौ। उभौ मामंवतञ्जातवेदसौ। शिवौ भंवतमुद्य नंः। स्वयं कृंण्वानः

## सुगमप्रंयावम्॥१६॥

तिग्मशृंङ्गो वृष्भः शोशृंचानः। प्रत्नः स्थस्थमनु पश्यंमानः। आ तन्तुंमग्निर्दिव्यं तंतान। त्वन्नस्तन्तुंरुत सेतुंरग्ने। त्वं पन्थां भवसि देव्यानः। त्वयांऽग्ने पृष्ठं व्यमारुहेम। अथां देवैः संधुमादं मदेम। उद्त्वमं मुंमुग्धि नः। वि पाशंं मध्यमश्चृंत। अवांधमानिं जीवसं॥१७॥

वय सोम व्रते तर्व। मनस्तनूषु बिभ्रंतः। प्रजावन्तो अशीमिह। इन्द्राणी देवी सुभगां सुपत्नीं। उद शोन पित्विद्यें जिगाय। त्रि श्रिदंस्या ज्ञ्चनं योजंनानि। उपस्थ इन्द्र इस्थिवंरं बिभिति। सेनां हु नामं पृथिवी धंनञ्ज्या। विश्वव्यंचा अदिंतिः सूर्यंत्वक्। इन्द्राणी देवी प्रासहा ददांना॥१८॥

सा नों देवी सुहवा शर्म यच्छतु। आत्वांऽहार्षम्नतरंभूः। ध्रुवस्तिष्ठाविंचाचितः। विशंस्त्वा सर्वा वाञ्छन्तु। मा त्वद्राष्ट्रमधि भ्रशत्। ध्रुवा द्यौर्ध्रुवा पृंथिवी। ध्रुवं विश्वंमिदं जगत्। ध्रुवा हु पर्वता इमे। ध्रुवो राजां विशाम्यम्। इहैवैधि मा व्यंथिष्ठाः॥१९॥

पर्वत इवाविचाचिलः। इन्द्रं इवेह ध्रुवस्तिष्ठ। इह राष्ट्रम् धारय। अभितिष्ठ पृतन्यतः। अधेरे सन्तु शत्रंवः। इन्द्रं इव वृत्रहा तिष्ठ। अपः क्षेत्राणि सञ्जयन्। इन्द्रं एणमदीधरत्। ध्रुवं ध्रुवेणं हृविषां। तस्मैं देवा अधिब्रवन्। अयं च

#### ब्रह्मणस्पतिः॥२०॥

ह्विर्भिरास्यमिभ् दासंतो विपश्चित्मप्रयावञ्चीवस् दर्दाना व्यथिष्ठा ब्रव्ह्रेकं च॥———[२]

जुष्टी नरो ब्रह्मणा वः पितृणाम्। अक्षंमव्ययं न किलारिषाथ। यच्छक्नरीषु बृह्ता रवेण। इन्द्रे शुष्ममदेधाथा विसष्ठाः। पावका नः सरस्वती। वाजेभिर्वाजिनीवती। युज्ञं विष्ठु धिया वेसुः। सरस्वत्यभिनों नेषि वस्यः। मा पंस्फरीः पर्यसा मा न आधंक्। जुषस्वं नः सख्यां वेश्यां च॥२१॥

मा त्वक्षेत्राण्यरंणानि गन्म। वृञ्जे ह्विर्नमंसा ब्रहिर्ग्नौ। अयामि सुग्धृतवंती सुवृक्तिः। अम्यक्षि सद्म सदेने पृथिव्याः। अश्रायि यज्ञः सूर्ये न चक्षुः। इहार्वाञ्चमितं ह्वये। इन्द्रं जैत्राय जेतंवे। अस्माकंमस्तु केवंलः। अर्वाञ्चमिन्द्रंम्मुतों हवामहे। यो गोजिद्धंनुजिदंश्वजिद्यः॥२२॥

ड्मं नो युज्ञं विंहुवे जुंषस्व। अस्य कुंमीं हरिवो मेदिनं त्वा। असंम्मृष्टो जायसे मातृवोः शुचिः। मृन्द्रः कृविरुदंतिष्ठो विवस्वतः। घृतेनं त्वा वर्धयन्नग्न आहुत। धूमस्ते केतुरंभविद्द्वि श्रितः। अग्निरग्रै प्रथमो देवतांनाम्। संयातानामृत्तमो विष्णुंरासीत्। यजमानाय परिगृह्यं देवान्। दीक्षयेद १ हविरा गंच्छतन्नः॥२३॥

अग्निश्चं विष्णो तपं उत्तमं महः। दीक्षापालेभ्योऽवनंत्र् हि शंक्रा। विश्वैर्देवैर्यज्ञियैः संविदानौ। दीक्षामस्मै यजंमानाय धत्तम्। प्र तद्विष्णुंः स्तवते वीर्याय। मृगो न भीमः कुंचरो गिरिष्ठाः। यस्योरुषुं त्रिषु विक्रमंणेषु। अधिं क्षियन्ति भुवंनानि विश्वाः। नूमर्तो दयते सनिष्यन् यः। विष्णंव उरुगायाय दार्शत्॥२४॥

प्रयः स्त्राचा मनंसा यजांतै। पृतावंन्त्त्रर्यमा विवासात्। विचंक्रमे पृथिवीमेष पृताम्। क्षेत्राय विष्णुर्मनुषे दशस्यन्। ध्रुवासो अस्य कीरयो जनांसः। उरुक्षिति स्पुजिनंमा चकार। त्रिर्देवः पृथिवीमेष पृताम्। विचंक्रमे शृतर्चंसं महित्वा। प्र विष्णुंरस्तु त्वस्स्तवीयान्। त्वेष इद्यंस्य स्थविंरस्य नामं॥२५॥

होतांरं चित्ररंथमध्वरस्यं। यज्ञस्यंयज्ञस्य केतु र रुशंन्तम्। प्रत्यंधिं देवस्यंदेवस्य मृह्णा। श्रिया त्वंग्निमितिंथिं जनांनाम्। आ नो विश्वांभिरूतिभिंः सजोषाः। ब्रह्मं जुषाणो हंर्यश्व याहि। वरीवृज्धस्थविंरभिः सुशिप्र। अस्मे दधद्वृषंणु शृष्मंमिन्द्र। इन्द्रंः सुवर्षा जनयन्नहांनि। जिगायोशिग्भः पृतंना अभि श्रीः॥२६॥

प्रारोचयन्मनंवे केतुमहाँम्। अविन्दुक्योतिंर्बृह्ते रणांय। अश्विनाववंसे निह्वंये वाम्। आ नूनं यात १ सुकृतायं विप्रा। प्रात्युक्तेनं सुवृता रथेन। उपागंच्छत्मवसागंतन्नः। अविष्टं धीष्वश्विना न आसु। प्रजावद्रेतो अह्रंयं नो अस्तु। आवाँ तोके तनये तूर्तुजानाः। सुरत्नांसो देववीतिं गमेम॥२७॥ त्व १ सोम् ऋतुंभिः सुऋतुंभूः। त्वं दक्षैः सुदक्षो विश्ववेदाः। त्वं वृषां वृष्वतेभिर्मिहृत्वा। द्युम्नेभिर्द्युम्यंभवो नृचक्षाः। अषांढं युथ्सु पृतंनासु पप्रिम्। सुवर्षामप्स्वां वृजनंस्य गोपाम्। भरेषुजा १ सृक्षिति १ सृश्रवंसम्। जयंन्तं त्वामन् मदेम सोम। भवां मित्रो न शेव्यो घृतासुंतिः। विभूतद्युम्न एव या उं सप्रथाः॥ २८॥

अर्था ते विष्णो विदुषां चिद्दध्यः। स्तोमां यज्ञस्य राध्यों ह्विष्मंतः। यः पूर्व्यायं वेधसे नवींयसे। सुमञ्जानये विष्णंवे ददांशति। यो जातमस्य महतो महि ब्रवात। सेदु श्रवोंभिर्युज्यं चिद्दभ्यंसत्। तमुं स्तोतारः पूर्व्यं यथां विद ऋतस्यं। गर्भ ह्विषां पिपर्तन। आऽस्यं जानन्तो नामं चिद्विवक्तन। बृहत्तं विष्णो सुमृतिं भंजामहे॥२९॥

ड्रमा धाना घृंतस्रुवंः। हरीं इहोपंवक्षतः। इन्द्र रं सुखतंमे रथें। एष ब्रह्मा प्रतेमहे। विदर्थे शर्सिष्ट् हरीं। य ऋत्वियः प्रते वन्वे। वनुषों हर्यतं मदम्। इन्द्रो नामं घृतन्नयः। हरिभिक्षारु सेचंते। श्रुतो गुण आ त्वां विशन्तु॥३०॥

हरिवर्पसङ्गिरंः। आचर्षणिप्रा वृष्भो जनांनाम्। राजां कृष्टीनां पुंरुहूत इन्द्रंः। स्तुतश्रंवस्यन्नवसोपंमद्रिक्। युक्ता हरी वृष्णायां ह्यर्वाङ्। प्र यथ्सिन्धंवः प्रस्वं यदायन्। आपंः समुद्र रथ्येव जग्मुः। अतंश्चिदिन्द्रः सदंसो वरीयान्। यदी १ सोमः पृणतिं दुग्धो अ१शः। ह्वयांमसि त्वेन्द्रं याह्यंर्वाङ्॥३१॥

अरंन्ते सोमंस्त्नुवे भवाति। शतंक्रतो मादयंस्वा सुतेषुं। प्रास्मा अव पृतंनासु प्रयुथ्स। इन्द्रांय सोमाः प्रदिवो विदांनाः। ऋभुर्येभिर्वृषंपर्वा विहांयाः। प्रयम्यमाणान्प्रति षू गृंभाय। इन्द्र पिब वृषंधूतस्य वृष्णंः। अहेंडमान उपंयाहि यज्ञम्। तुभ्यं पवन्त इन्दंवः सुतासंः। गावो न वंज्रिन्थ्स्वमोको अच्छं॥३२॥

इन्द्रा गंहि प्रथमो युज्ञियांनाम्। या ते काकुथ्सुकृता या वरिष्ठा। यया शश्वत्यिबंसि मध्वं ऊर्मिम्। तयां पाहि प्र ते अध्वर्युरंस्थात्। सन्ते वज्रो वर्ततामिन्द्र गृव्युः। प्रात्युंजा वि बोधय। अश्विनावेह गंच्छतम्। अस्य सोमंस्य पीतयें। प्रात्यावांणा प्रथमा यंजध्वम्। पुरा गृध्रादरंरुषः पिबाथः। प्रातर्रहि यज्ञमश्विना दधांते। प्रश्रंसन्ति क्वयः पूर्वभाजः। प्रात्यंजध्वमश्विनां हिनोत। न सायमंस्ति देवया अजुंष्टम्। उतान्यो अस्मद्यंजते विचायः। पूर्वः पूर्वो यजमानो वनीयान्॥३३॥

चाश्वजिद्यो गंच्छतं नो दाशन्नामांभिश्रीर्गमेम सप्रथां भजामहे विशन्तु याह्यंबीङच्छं पिबाथः षद्वं॥———[३]

नृक्तं जाताऽस्योषधे। रामे कृष्णे असिंक्रि च। इद॰ रंजनि रजय। किलासं पिलतं च यत्। किलासं च पिलतं चं। निरितो नांशया पृषंत्। आ नः स्वो अंश्जुतां वर्णः। पर्गं श्वेतानि पातय। असिंतं ते निलयंनम्। आस्थानमसिंतं

#### तर्व॥३४॥

असिंक्रियस्योषधे। निरितो नांशया पृषंत्। अस्थिजस्यं किलासंस्य। तुनूजस्यं च यत्त्वचि। कृत्ययां कृतस्य ब्रह्मंणा। लक्ष्मं श्वेतमंनीनशम्। सरूपा नामं ते माता। सरूपो नामं ते पिता। सरूपाऽस्योषधे सा। सरूपमिदं कृधि॥३५॥

शुन १ हुंवेम मघवांन् मिन्द्रम्ँ। अस्मिन्भरे नृतंमं वाजंसातौ। शृण्वन्तं मुग्रमूतये समथ्सुं। घ्रन्तं वृत्राणि सञ्जितं धनांनाम्। धूनुथ द्यां पर्वतान्दाशुषे वसुं। नि वो वनां जिहते यामं नो भिया। कोपयंथ पृथिवीं पृंश्विमातरः। युधे यदुंग्राः पृषंतीरयुंग्ध्वम्। प्रवेपयन्ति पर्वतान्। विविश्वन्ति वनस्पतीन्॥३६॥

प्रोवारत मरुतो दुर्मदां इव। देवांसः सर्वया विशा। पुरुत्रा हि सद्दृङ्गसिं। विशो विश्वा अनुं प्रभु। समध्सुं त्वा हवामहे। समध्स्वग्निमवंसे। वाज्यन्तों हवामहे। वाजेषु चित्रराधसम्। सङ्गेच्छध्व १ संवद्ध्वम्। सं वो मना १सि जानताम्॥३७॥

देवा भागं यथा पूर्वे। सञ्जानाना उपासंत। समानो मन्नः सिर्मितिः समानी। समानं मनः सह चित्तमेषाम्। समानं केतो अभि स॰ रंभध्वम्। संज्ञानेन वो ह्विषां यजामः। समानी व आकूंतिः। समाना हृदंयानि वः। समानमंस्तु वो मनः। यथां वः सुसहासंति॥३८॥

स्ंज्ञानं नः स्वैः। स्ंज्ञान्मरंणैः। स्ंज्ञानंमिश्विना युवम्। इहास्मासु नियंच्छतम्। स्ंज्ञानं मे बृह्स्पतिः। स्ंज्ञानं सिवता करत्। स्ंज्ञानंमिश्विना युवम्। इह मह्यं नि यंच्छतम्। उपं च्छायामिव घृणैः। अगंन्म शर्म ते वयम्॥३९॥

अग्ने हिरंण्यसन्दशः। अदंब्येभिः सवितः पायुभिष्ट्वम्। शिवेभिर्द्य परिपाहि नो गयम्। हिरंण्यजिह्वः सुविताय् नव्यंसे। रक्षा मार्किर्नो अघशर्रस ईशत। मदेमदे हि नो ददुः। यूथा गर्वामृजुऋतुः। सङ्गृभाय पुरूशता। उभया हुस्त्या वसुं। शिशीहि राय आ भर॥४०॥

शिप्रिंन्वाजानां पते। शचींवस्तवं द्र्सनां। आ तू नं इन्द्र भाजय। गोष्वश्वेषु शुभुषुं। सहस्रेषु तुवीमघ। यद्देवा देवहेर्डनम्। देवांसश्चकुमा व्यम्। आदित्यास्तस्मांन्मा यूयम्। ऋतस्युर्तेनं मुश्चत। ऋतस्युर्तेनांऽऽदित्याः॥४१॥

यजंत्रा मुश्चतेह माँ। युज्ञैर्वो यज्ञवाहसः। आशिक्षंन्तो न शेंकिम। मेदंस्वता यजंमानाः। स्रुचाऽऽज्येंन जुह्वंतः। अकामा वो विश्वेदेवाः। शिक्षंन्तो नोपं शेकिम। यदि दिवा यदि नक्तम्। एनं एन्स्योकंरत्। भूतं मा तस्माद्भव्यं च॥४२॥

द्रुपदादिव मुश्चतु। द्रुपदादिवेन्म्ममुचानः। स्विन्नः स्नात्वी मलादिव। पूतं पवित्रेणेवाऽऽज्यम्। विश्वे मुश्चन्तु मैनंसः। उद्वयं तमसस्परि। पश्यन्तो ज्योति्रुत्तरम्। देवं देवत्रा

# सूर्यम्। अगंन्म ज्योतिंरुत्तमम्॥४३॥

तवं कृषि वनस्पतीं आनतामसंति वयं भंरादित्याश्च नवं च॥————[४]

वृषासो अर्शः पंवते ह्विष्मान्थ्सोमः। इन्द्रंस्य भाग ऋत्यः शृतायः। स मा वृषाणं वृष्मं कृणोत्। प्रियं विशार सर्ववीरर सुवीरम्। कस्य वृषां सुते सचा। नियुत्वानवृष्मो रणत्। वृत्रहा सोमंपीतये। यस्ते शृङ्ग वृषोनपात्। प्रणंपात्कुण्डपाय्यः। न्यंस्मिन्दध्र आ मनः॥४४॥

त १ स्प्रीचीं कृतयो वृष्णियानि। पौ १ स्यांनि नियुतः सश्चिरिन्द्रम्। समुद्रं न सिन्धंव उक्थशुंष्माः। उरुव्यचं सङ्गिर् आ विशन्ति। इन्द्रांय गिरो अनिशितसर्गाः। अपः प्रैरंयन्थ्सगंरस्य बुप्नात्। यो अक्षेणेव चिक्रया शचींभिः। विष्वं क्तर्स्तम्भं पृथिवीमुत द्याम्। अक्षोदयच्छवं सा क्षामं बुप्नम्। वार्णवां तस्तिविधीभिरिन्द्रः॥ ४५॥

दृढान्यौँघ्रादुशमांन् ओजंः। अवांभिनत्कुकुमः पर्वतानाम्। आ नो अग्ने सुकेतुनाँ। रृयिं विश्वायुंपोषसम्। मार्डीकं धेहि जीवसेँ। त्व॰ सोम महे भगम्ँ। त्वं यूनं ऋतायते। दक्षं दधासि जीवसेँ। रथं युअते मुरुतः शुभे सुगम्। सूरो न मित्रावरुणा गविंष्टिषु॥४६॥

रजा १सि चित्रा विचंरन्ति तुन्यवंः। दिवः संम्राजा पर्यसा न उक्षतम्। वाचु सुमित्रावरुणाविरावतीम्। पुर्जन्यंश्चित्रां वंदित् त्विषींमतीम्। अभ्रा वंसत मरुतः सुमाययाँ। द्यां वंर्षयतमरुणामंरेपसम्। अयुक्त सप्त शुन्ध्यवंः। सूरो रथंस्य निष्ठियंः। ताभिर्याति स्वयंक्तिभिः। विहेष्ठेभिर्विहरंन् यासि तन्तुम्॥४७॥

अवव्ययन्नसितं देव वस्वंः। दविध्वतो र्ष्मयः सूर्यस्य। चर्मेवावाधुस्तमो अपस्वंन्तः। पूर्जन्याय प्र गांयत। दिवस्पुत्रायं मीदुषें। स नो यवसंमिच्छत्। अच्छां वद त्वसंं गीर्भिराभिः। स्तुहि पूर्जन्यं नमुसाऽऽविंवास। कनिंक्रदद्वृष्भो जीरदांनुः। रेतो दधात्वोषधीषु गर्भम्॥४८॥

यो गर्भमोषंधीनाम्। गवाँ कृणोत्यर्वताम्। पूर्जन्यः पुरुषीणाँम्। तस्मा इदास्ये हृविः। जुहोता मधुंमत्तमम्। इडाँ नः स्ंयतं करत्। तिस्रो यदंग्ने श्ररद्स्त्वामित्। शुचिं घृतेन शुचयः सप्यन्। नामांनि चिद्दिधिरे युज्ञियांनि। असूदयन्त तुनुवः सुजांताः॥४९॥

इन्द्रंश्च नः शुनासीरौ। इमं युज्ञं मिंमिक्षतम्। गर्भं धत्त इस्वस्तयें। ययोरिदं विश्वं भुवनमा विवेशं। ययोरानन्दो निहितो महंश्च। शुनांसीरावृतुभिः संविदानौ। इन्द्रंवन्तौ ह्विरिदं जुंषेथाम्। आघाये अग्निमिन्धते। स्तृणन्तिं बर्हिरांनुषक्। येषामिन्द्रो युवा सर्खां। अग्न इन्द्रंश्च मेदिनां। हुथो वृत्राण्यंप्रति। युव हि वृत्रहन्तंमा। याभ्या ह

सुवरजंयन्नग्रं एव। यावांतस्थतुर्भुवंनस्य मध्यें। प्रचंर्षणी वृषणा वर्ज्रबाहू। अग्नी इन्द्रांवृत्रहणां हुवे वाम्॥५०॥

मन् इन्द्रो गविंष्टिषु तन्तुं गर्भ्र सुजांताः सखां सुप्त चं॥————[५]

उत नंः प्रिया प्रियासुं। स्प्तस्वसा सुजुंष्टा। सरंस्वती स्तोम्यां उभूत्। इमा जुह्वां नायुष्मदा नमोंभिः। प्रति स्तोम रं सरस्वति जुषस्व। तव शर्मन्प्रियतंमे दर्धां नाः। उपंस्थेयाम शर्णं न वृक्षम्। त्रीणि प्दा विचंक्रमे। विष्णुंर्गोपा अदाँभ्यः। ततो धर्माणि धारयन्॥५१॥

तदंस्य प्रियम्भि पाथों अश्याम्। नरो यत्रं देवयवो मदंन्ति। उरुक्रमस्य स हि बन्धुंरित्था। विष्णौः पदे पर्मे मध्व उथ्सः। कृत्वादा अंस्थु श्रेष्ठः। अद्य त्वां वन्वन्थ्सुरेक्णौः। मर्त आनाश सुवृक्तिम्। इमा ब्रंह्म ब्रह्मवाह। प्रिया त आ ब्रह्मः सींद। वीहि सूर पुरोडाशम्॥५२॥

उपं नः सूनवो गिरं। शृण्वन्त्वमृतंस्य ये। सुमृडीका भंवन्तु नः। अद्या नो देव सवितः। प्रजावंथ्सावीः सौभंगम्। परां दुःष्वप्निय स्व। विश्वांनि देव सवितः। दुरितानि परां सुव। यद्भद्रं तन्म आ सुव। शुचिमकैर्बृहस्पतिम्॥५३॥

अध्वरेषुं नमस्यत। अनाम्योज् आ चंके। या धारयंन्त देवा सुदक्षा दक्षंपितारा। असुर्याय प्रमहसा। स इत् क्षेति सुधित ओकंसि स्वे। तस्मा इडां पिन्वते विश्वदानीं। तस्मै विशंः स्वयमेवानंमन्ति। यस्मिन्ब्रह्मा राजंनि पूर्व एति। सकूंतिमिन्द्र सच्युंतिम्। सच्युंतिं ज्ञघनंच्युतिम्॥५४॥

कुनात्काभात्र आ भंर। प्रयपस्यत्रिंव सुक्थ्यौं। वि नं इन्द्र मृधों जिह। कनींखुनिदव सापयन्। अभि नुः सुष्टुंतिं नय। प्रजापंतिः स्त्रियां यशः। मुष्कयोरदधाथ्सपम्। कामंस्य तृप्तिमानन्दम्। तस्यौग्ने भाजयेह मा। मोदः प्रमोद आनन्दः॥५५॥

मुष्कयोर्निहिंतः सपंः। सृत्वेव कामंस्य तृप्याणि। दक्षिणानां प्रतिग्रहे। मनसश्चित्तमाकूंतिम्। वाचः स्त्यमंशीमहि। पृशूनाः रूपमन्नस्य। यशः श्रीः श्रयतां मियं। यथाऽहम्स्या अतृंपः स्त्रियै पुमान्ं। यथा स्री तृप्यंति पुःसी प्रिये प्रिया। पृवं भगंस्य तृप्याणि॥५६॥

यज्ञस्य काम्यः प्रियः। ददामीत्यग्निर्वदित। तथेतिं वायुरांह्
तत्। हन्तेतिं सृत्यं चन्द्रमाः। आदित्यः सृत्यमोमिति।
आपुस्तथ्सत्यमा भेरन्। यशों यज्ञस्य दक्षिणाम्। असौ
मे कामः समृद्धताम्। न हि स्पश्मिविदन्नन्यम्स्मात्।
वैश्वानुरात्पुरपुतारम्भेः॥५७॥

अथेममन्थन्नमृत्ममूराः। वैश्वान्रं क्षेत्रजित्यांय देवाः। येषांमिमे पूर्वे अर्मास् आसन्। अयूपाः सद्म विभृता पुरूणि। वैश्वानर् त्वया ते नुत्ताः। पृथिवीमन्याम्भितंस्थुर्जनांसः। पृथिवीं मातरं महीम्। अन्तरिक्षमुपं ब्रुवे। बृह्तीमूतये दिवम्। विश्वं बिभर्ति पृथिवी॥५८॥

अन्तिरिक्षं वि पंप्रथे। दुहे द्यौर्बृह्ती पर्यः। न ता नंशन्ति न दंभाति तस्करः। नैनां अमित्रो व्यथिरादंधर्षति। देवाङ्श्च याभिर्यजते ददांति च। ज्योगित्ताभिः सचते गोपंतिः सह। न ता अर्वा रेणुकंकाटो अश्जते। न सङ्स्कृत्त्रमुपं यन्ति ता अभि। उ्रुगायमभयं तस्य ता अनुं। गावो मर्त्यंस्य वि चंरन्ति यज्वनः॥५९॥

रात्री व्यंख्यदायती। पुरुत्रा देव्यंक्षभिः। विश्वा अधि श्रियोऽधित। उपं ते गा इवाकंरम्। वृणीष्व दुंहितर्दिवः। रात्री स्तोमं न जिग्युषीं। देवीं वाचंमजनयन्त देवाः। तां विश्वरूपाः पृशवों वदन्ति। सा नों मृन्द्रेष्मूर्जुं दुहांना। धेनुर्वागुस्मानुष सुष्टुतैतुं॥६०॥

यद्वाग्वदंन्त्यविचेत्नानिं। राष्ट्रीं देवानां निष्सादं मृन्द्रा। चतंस्र ऊर्जं दुदुहे पयार्श्सा। क्रं स्विदस्याः पर्मं जंगाम। गौरी मिंमाय सलिलानि तक्षंती। एकंपदी द्विपदी सा चतुंष्पदी। अष्टापंदी नवंपदी बभूवुषीं। सहस्राक्षरा पर्मे व्योमन्। तस्यार्श्व समुद्रा अधि विक्षंरन्ति। तेनं जीवन्ति प्रदिश्श्वतंस्रः॥६१॥

ततंः क्षरत्यक्षरम्। तद्विश्वमुपं जीवति। इन्द्रासूरां

जनयंन्विश्वकंर्मा। म्रुत्वारं अस्तु गुणवांन्थ्सजातवान्। अस्य स्रुषा श्वशुंरस्य प्रशिष्टिम्। सपत्ना वाचं मनंसा उपांसताम्। इन्द्रः सूरों अतर्द्रजारंसि। स्रुषा सपत्ना श्वशुंरोऽयमंस्तु। अयर शत्रूं अयतु जर्ह्हंषाणः। अयं वाजं जयतु वाजंसातो। अग्निः क्षंत्रभृदिनिभृष्टमोजंः। सहस्रियों दीप्यतामप्रंयुच्छन्। विभ्राजंमानः समिधा न उग्रः। आऽन्तरिंक्षमरुहृदगुन्द्याम्॥६२॥

धारयंन्पुरोडाश्ं बृह्स्पितं ज्ञघनंच्युतिमान्नदो भगस्य तृप्याण्यग्नेः पृथिवी यज्वंन एत् प्रदिश्श्चतंस्रो वाजंसातौ चुत्वारिं च॥———[ह]

वृषाँ उस्य १ शुर्वृष्मायं गृह्यसे। वृषा उयमुग्रो नृचक्षंसे। दिव्यः कंर्मण्यो हितो बृहन्नामं। वृष्मस्य या कुकुत्। विष्वान् विष्णो भवतु। अयं यो मामको वृषाँ। अथो इन्द्रं इव देवेभ्यः। वि ब्रंवीतु जनेंभ्यः। आयुष्मन्तं वर्चंस्वन्तम्। अथो अधिपतिं विशाम्॥६३॥

अस्याः पृंथिव्या अध्यक्षम्। इमिनन्द्र वृष्भं कृणु। यः सुश्रङ्गंः सुवृष्भः। कृत्याणो द्रोण आहितः। कार्षीवल प्रगाणेन। वृष्भेणं यजामहे। वृष्भेण यजमानाः। अर्क्रूरेणेव सुर्पिषां। मृद्धेश्च सर्वा इन्द्रेण। पृतनाश्च जयामसि॥६४॥

यस्यायमृष्भो हुविः। इन्द्रांय परिणीयतें। जयांति शत्रुंमायन्तम्। अथों हन्ति पृतन्यतः। नृणामहं प्रणीरसंत्। अग्रं उद्भिन्दतामंसत्। इन्द्रं शुष्मं तुनुवा मेरंयस्व। नीचा विश्वां अभितिष्ठाभिमातीः। नि शृणीह्याबाधं यो नो अस्ति। उरुं नो लोकं कृणुहि जीरदानो॥६५॥

प्रेह्मिभ प्रेहि प्र भंग सहंस्व। मा विवेनो वि शृंणुष्वा जनेषु। उदींडितो वृंषभ तिष्ठ शुष्मैंः। इन्द्र शत्रूंन्पुरो अस्माकं युध्य। अग्ने जेता त्वं जंय। शत्रूंन्थ्सहस् ओजंसा। वि शत्रून् विमुधों नुद। एतं ते स्तोमं तुविजात विप्रः। रथं न धीरः स्वपां अतक्षम्। यदीदंग्ने प्रतित्वं देव हर्याः॥६६॥

सुवंवतीर्प एंना जयेम। यो घृतेनाभिमांनितः। इन्द्र जैत्राय जिन्ने। स नः सङ्कांसु पारय। पृत्नासाह्यंषु च। इन्द्रों जिगाय पृथिवीम्। अन्तिरिक्ष्ट्रं सुवंर्म्हत्। वृत्रहा पुरुचेतनः। इन्द्रों जिगाय सहंसा सहार्रस। इन्द्रों जिगाय पृतंनानि विश्वा॥६७॥

इन्द्रों जातो वि पुरों रुरोज। स नंः पर्स्पा वरिंवः कृणोत्। अयं कृत्रुरगृंभीतः। विश्वजिदुद्धिदिथ्सोमंः। ऋषिविंप्रः काव्येन। वायुरंग्रेगा यंज्ञप्रीः। साकङ्गन्मनंसा यज्ञम्। शिवो नियुद्धिः शिवाभिः। वायो शुक्रो अंयामि ते। मध्वो अग्रं दिविष्टिषु॥६८॥

आ यांहि सोमं पीतये। स्वारुहो देव नियुत्वंता। इमिनंद्र वर्धय क्षत्रियांणाम्। अयं विशां विश्पतिंरस्तु राजां। अस्मा इंन्द्र मिंह वर्चा १सि धेहि। अवर्चसं कणुिह शत्रुं मस्य। इममा भंज ग्रामे अश्वेषु गोषुं। निर्मुं भंज योऽिमत्रों अस्य। वर्ष्मन् क्षुत्रस्यं कुकुभिं श्रयस्व। ततों न उग्रो वि भंजा वसूंनि॥६९॥

अस्मे द्यांवापृथिवी भूरिं वामम्। सन्दुंहाथां घर्मदुघेंव धेनुः। अयः राजां प्रिय इन्द्रंस्य भूयात्। प्रियो गवामोषंधीनामुतापाम्। युनज्मिं त उत्तरावंन्तमिन्द्रम्। येन् जयांसि न परा जयांसे। स त्वांऽकरेकवृष्भः स्वानांम्। अथो राजन्नुत्तमं मानवानांम्। उत्तर्स्त्वमधेरे ते स्पन्नाः। एकंवृषा इन्द्रंसखा जिगीवान्॥७०॥

विश्वा आशाः पृतंनाः सञ्जयं जयन्। अभि तिष्ठ शत्रूयतः संहस्व। तुभ्यं भरन्ति क्षितयो यविष्ठ। बिलिमंग्ने अन्तित् ओत दूरात्। आ भन्दिष्ठस्य सुमृतिं चिकिद्धि। बृहत्ते अग्ने मिह शर्म भद्रम्। यो देह्यो अनंमयद्वधस्तैः। यो अर्यपत्नीरुषसंश्वकारं। स निरुध्या नहुंषो यह्वो अग्निः। विश्लंश्वके बलिहृतः सहोभिः॥७१॥

प्र सद्यो अंग्रे अत्यैष्यन्यान्। आविर्यस्मै चार्रुतरो ब्भूथं। ईडेन्यो वपुष्यो विभावा। प्रियो विशामितिथिर्मानुंषीणाम्। ब्रह्मंज्येष्ठा वीर्या सम्भृतानि। ब्रह्माग्रे ज्येष्ठं दिवमा ततान। ऋतस्य ब्रह्मं प्रथमोत जंज्ञे। तेनांर्हित ब्रह्मंणा स्पर्धितुङ्कः। ब्रह्म सुचो घृतवंतीः। ब्रह्मंणा स्वरंवो मिताः॥७२॥ ब्रह्मं युज्ञस्य तन्तंवः। ऋत्विजो ये हंविष्कृतंः। शृङ्गांणीवेच्छुङ्गिणा समन्दंदिश्रिरे। च्षालंबन्तः स्वरंवः पृथिव्याम्। ते देवासः स्वरंवस्तस्थिवा संः। नमः सर्खिभ्यः सृज्ञान्माऽवंगात। अभिभूरग्निरंतर्द्रजा स्ति। स्पृधो विहत्य पृतंना अभिश्रीः। जुषाणो म् आहुंतिं मामिहष्ट। हत्वा सपत्नान् वरिवस्करन्नः। ईशांनं त्वा भुवंनानामभिश्रियम्। स्तौम्यंग्न उरुकृत सुवीरम्। ह्विर्जुषाणः सपत्ना अभिभूरंसि। जहि शत्रू रप् मृधो नुदस्व॥७३॥

विशां जंयामसि जीरदानो हर्या विश्वा दिविष्टिषु वसूनि जिगीवान्थ्सहोंभिर्मिता नंश्चत्वारिं

च॥\_\_\_\_\_[*\omega*]

स प्रत्वन्नवीयसा। अग्नै द्युम्नेन स्यता। बृहत्तंतन्थ भानुना। नवं नु स्तोमंम्ग्नये। दिवः श्येनायं जीजनम्। वसोः कुविद्वनाति नः। स्वारुहा यस्य श्रियो दृशे। र्यिर्वीरवंतो यथा। अग्ने युज्ञस्य चेतंतः। अदाभ्यः पुरएता॥७४॥

अग्निर्विशां मानुंषीणाम्। तूर्णी रथः सदा नवंः। नव्र् सोमाय वाजिनें। आज्यं पर्यसोऽजिन। जुष्ट्र् शुचितम् वसुं। नवर्र् सोम जुषस्व नः। पीयूषंस्येह तृंण्णुहि। यस्ते भाग ऋता व्यम्। नवंस्य सोम ते व्यम्। आ सुंमृतिं वृंणीमहे॥७५॥

स नो रास्व सहस्रिणंः। नव १ हिवर्जुषस्व नः। ऋतुिभः सोम् भूतंमम्। तदुङ्ग प्रतिहर्य नः। राजन्थ्सोम स्वस्तयै। नव्र्स्तोम्त्रवर् ह्विः। इन्द्राग्निभ्यां नि वेदय। तज्ज्षेतार् सर्वेतसा। शुचिं नु स्तोमं नवंजातम्द्य। इन्द्रांग्नी वृत्रहणा जुषेथांम्॥७६॥

उभा हि वार् सुहवा जोहंवीमि। ता वाजरं सद्य उंश्ते धेष्ठां। अग्निरिन्द्रो नवंस्य नः। अस्य ह्व्यस्यं तृप्यताम्। इह देवौ संहुस्निणौं। यृज्ञं न आ हि गच्छंताम्। वसुंमन्तर सुवुर्विदम्। अस्य ह्व्यस्यं तृप्यताम्। अग्निरिन्द्रो नवंस्य नः। विश्वान्देवाइस्तंप्यत॥७७॥

ह्विषोऽस्य नवंस्य नः। सुव्विदो हि जंजिरे। एदं बर्हिः सुष्टरीमा नवंन। अयं यज्ञो यजमानस्य भागः। अयं बंभूव भुवंनस्य गर्भः। विश्वे देवा इदम्द्यागंमिष्ठाः। इमे नु द्यावापृथिवी समीचीं। तन्वाने यज्ञं पुरुपेशंसन्धिया। आऽस्मे पृणीतां भुवंनानि विश्वां। प्रजां पुष्टिम्मृतं नवंन॥७८॥

इमे धेनू अमृतं ये दुहातैं। पर्यस्वत्युत्तरामेतु पृष्टिः। इमं यज्ञं जुषमाणे नवेन। समीची द्यावापृथिवी घृताचीं। यविष्ठो हव्यवाहेनः। चित्रभानुर्घृतासुंतिः। नवंजातो वि रोचसे। अग्रे तत्ते महित्वनम्। त्वमंग्रे देवताभ्यः। भागे देव न मीयसे॥७९॥

स एंना विद्वान् यंक्ष्यसि। नव् इं स्तोमं जुषस्व नः। अग्निः प्रंथमः प्राश्ञांतु। स हि वेद यथां हविः। शिवा अस्मभ्यमोषंधीः। कृणोतं विश्वचंर्षणिः। भ्रात्रः श्रेयः समंनेष्ट देवाः। त्वयांऽवसेन् समंशीमिह त्वा। स नों मयोभूः पितो आ विशस्व। शं तोकायं तनुवें स्योनः। एतमु त्यं मधुना संयुतं यवम्। सरंस्वत्या अधिमनावंचकृषुः। इन्द्रं आसीथ्सीरंपितः श्रतकृतुः। कीनाशां आसन्मरुतः सुदानंवः॥८०॥

पुर्पुता वृंणीमहे जुषेथाँन्तर्पयतामृत्त्रवेंन मीयसे स्योनश्चत्वारिं च॥————[८]

जुष्टश्चश्चेषो जुष्टींनरो नक्तञ्चाता वृषास उत नो वृषाँऽस्यप्ष्णः सप्रंत्नवद्ष्टौ॥८॥ जुष्टो मन्युर्भगो जुष्टी नरो हरिंवर्पसङ्गिरः शिप्रिंन्वाजानामुत नेः प्रिया यद्वाग्वदंन्ती विश्वा आशा अशीतिः॥८०॥ जुष्टेः सुदानंवः॥

# हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके चतुर्थः प्रपाठकः समाप्तः॥

#### ॥पञ्चमः प्रश्नः॥

## ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके पश्चमः प्रपाठकः॥

प्राणो रंक्षिति विश्वमेजंत्। इर्यो भूत्वा बंहुधा बहूनि। स इथ्सर्वं व्यांनशे। यो देवो देवेषुं विभूरन्तः। आवृंदूदात् क्षेत्रियंध्वगद्वृषां। तिमत्प्राणं मन्सोपं शिक्षत। अग्रं देवानांमिदमंत्तु नो ह्विः। मनंसृश्चित्तेदम्। भूतं भव्यं च गुप्यते। तिद्धे देवेष्वंग्रियम्॥१॥

आ नं एतु पुरश्चरम्। सह देवैरिम हवम्। मनः श्रेयंसिश्रेयसि। कर्मन् युज्ञपंतिं दर्धत्। जुषतां मे वागिद श् ह्विः। विराङ्देवी पुरोहिता। हृव्यवाडनंपायिनी। ययां रूपाणि बहुधा वदंन्ति। पेशा श्रेसि देवाः पंरमे ज्नित्रें। सा नों विराडनंपस्फुरन्ती॥२॥

वाग्देवी जुंषतामिद हिवः। चक्षुंर्देवानां ज्योतिर्मृते न्यंक्तम्। अस्य विज्ञानाय बहुधा निधीयते। तस्य सुम्नमंशीमिह। मा नो हासीद्विचक्षणम्। आयुरिन्नः प्रतीयताम्। अनंन्धाश्चक्षुंषा व्यम्। जीवा ज्योतिरशीमिह। सुवर्ज्योतिरुतामृतम्। श्रोत्रेण भद्रमुत शृंण्वन्ति सत्यम्। श्रोत्रेण वाचं बहुधोद्यमानाम्। श्रोत्रेण मोदश्च महश्च श्रूयते। श्रोत्रेण सर्वा दिश् आ शृंणोमि। येन प्राच्यां उत देक्षिणा। प्रतीच्यै दिशः शृण्वन्त्युंत्रात्। तदिच्छ्रोत्रं बहुधोद्यमानम्।

अरान्न नेमिः परि सर्वं बभूव॥३॥

अ्ग्रियमनंपस्फुरन्ती सृत्यः सप्त चं॥-----[१]

उदेहिं वाजिन्यो अस्यप्स्वंन्तः। इदः राष्ट्रमा विंश सूनृतांवत्। यो रोहिंतो विश्वंमिदं जजानं। स नों राष्ट्रेषु सुधितान्दधातु। रोहं रेरोह् रेरोहिंत आर्रुरोह। प्रजािमवृद्धिं जनुषांमुपस्थम्। तािभः सःरंब्यो अविद्थ्यडुर्वीः। गातुं प्रपश्यंत्रिह राष्ट्रमाऽहाः। आऽहांर्षीद्राष्ट्रमिह रोहिंतः। मृधो व्यांस्थदभंयं नो अस्तु॥४॥

अस्मभ्यं द्यावापृथिवी शक्वंरीभिः। राष्ट्रं दुंहाथामिह रेवतीभिः। विमंमर्श रोहितो विश्वरूपः। समाचुऋाणः प्ररुहो रुहंश्च। दिवं गृत्वायं महृता मंहिम्ना। वि नो राष्ट्रमुनत्तु पर्यसा स्वेनं। यास्ते विश्वस्तपंसा सं बभूवुः। गायत्रं वृथ्समनु तास्त आऽगुः। तास्त्वा विशन्तु महंसा स्वेनं। सं मांता पुत्रो अभ्येतु रोहितः॥५॥

यूयमुंग्रा मरुतः पृश्ञिमातरः। इन्द्रेण स्युजा प्रमृणीथ् शत्रून्। आ वो रोहिंतो अशृणोदभिद्यवः। त्रिसंप्तासो मरुतः स्वादुसम्मुदः। रोहिंतो द्यावांपृथिवी जंजान। तस्मिड्स्तन्तुं परमेष्ठी तंतान। तस्मिञ्छिश्रिये अज एकंपात्। अदर्हद्यावांपृथिवी बलेन। रोहिंतो द्यावांपृथिवी अंदर्हत्। तेन सुवंः स्तिभृतन्तेन नाकंः॥६॥ सो अन्तिरिक्षे रजंसो विमानः। तेनं देवाः सुव्रन्वंविन्दन्। सुशेवं त्वा भानवो दीदिवा सम्मा समग्रासो जुह्वो जातवेदः। उक्षन्तिं त्वा वाजिनमा घृतेनं। सरसंमग्ने युवसे भोजंनानि। अग्ने शर्धं महते सौभंगाय। तवं द्युम्नान्यंत्तमानिं सन्तु। सञ्जास्पत्यर सुयम्मा कृंणुष्व। शृत्रूयताम्भि तिष्ठा महार्रस्॥७॥

अस्त्वेतु रोहिंतो नाको महा रेसि॥———[२]

पुनर्न् इन्द्रों मुघवां ददातु। धनांनि शक्तो धन्यः सुराधाः। अर्वाचीनं कृणतां याचितो मनः। श्रुष्टी नो अस्य ह्विषों जुषाणः। यानि नोऽजिनं धनांनि। जहर्थं शूर मृन्युनां। इन्द्रानुंविन्द नुस्तानि। अनेनं ह्विषा पुनः। इन्द्र आशांभ्यः परि। सर्वाभ्योऽभंयं करत्॥८॥

जेता शत्रून् विचंर्षणिः। आकूँत्यै त्वा कामांय त्वा समृधे त्वा। पुरो दंधे अमृत्त्वायं जीवसे आकूंतिम्स्यावंसे। काममस्य समृद्धौ। इन्द्रंस्य युञ्जते धियः। आकूंतिं देवीं मनंसः पुरो दंधे। युज्ञस्यं माता सुहवां मे अस्तु। यदिच्छामि मनंसा सकांमः। विदेयंमेन्द्धृदंये निविष्टम्॥९॥

सेद्ग्निर्ग्नी १ रत्यें त्युन्यान्। यत्रं वाजी तनयो वीडुपांणिः। सहस्रंपाथा अक्षरां समेतिं। आशानां त्वाऽऽशापालेभ्यः। चतुर्भ्यों अमृतेंभ्यः। इदं भूतस्याध्यंक्षेभ्यः। विधेमं ह्विषां व्यम्। विश्वा आशा मधुना स॰ सृजामि। अनुमीवा आप ओषंधयो भवन्तु। अयं यजमानो मृधो व्यस्यताम्॥१०॥

अगृंभीताः पृशवंः सन्तु सर्वें। अग्निः सोमो वर्रणो मित्र इन्द्रंः। बृह्स्पतिः सिवता यः संहस्री। पूषा नो गोभि्रवंसा सरंस्वती। त्वष्टां रूपाणि समनत्तु युज्ञैः। त्वष्टां रूपाणि दर्धती सरंस्वती। पूषा भगरं सिवता नो ददातु। बृह्स्पतिददिदिन्द्रंः सहस्रम्ं। मित्रो दाता वर्रणः सोमो अग्निः॥११॥

क्रिविष्टमस्यतान्नवं च॥

[3]

आ नों भर् भगंमिन्द्र द्युमन्तम्। नि तें देष्णस्यं धीमहि प्ररेके। उर्व इंव पप्रथे कामों अस्मे। तमापृंणा वसुपते वसूंनाम्। इमं कामंं मन्दया गोभिरश्वैः। चन्द्रवंता राधंसा पप्रथंश्च। सुवर्यवों मृतिभिस्तुभ्यं विप्राः। इन्द्रांय वाहंः कृशिकासों अऋन्। इन्द्रंस्य नु वीर्याणि प्रवोचम्। यानिं चकारं प्रथमानिं वज्री॥१२॥

अह्न्नहिमन्वपस्तंतर्द। प्रवृक्षणां अभिनृत्पर्वतानाम्। अह्न्निहुं पर्वते शिश्रियाणम्। त्वष्टांऽस्मे वज्र इं स्वर्यन्ततक्ष। वाश्रा इव धेनवः स्यन्दंमानाः। अञ्जः समुद्रमवं जग्मुरापः। वृषायमाणोऽवृणीत् सोमम्। त्रिकंद्रुकेष्विपबथ्सुतस्यं। आ सायंकं मुघवां दत्त् वज्रम्। अहंन्नेनं प्रथमुजा महीनाम्॥१३॥ यदिन्द्राहंन्प्रथम्जा महीनाम्। आन्मायिनामिनाः प्रोत मायाः। अथ्मूर्यं जनयन्द्यामुषासम्। तादीक्रा शत्रून्न किलांविविथ्मे। अहंन्वृत्रं वृंत्रतरं व्यश्सम्। इन्द्रो वर्ज्रण मह्ता व्धेनं। स्कन्धारंसीव कुलिशेनाविवृंक्णा। अहिंः शयत उपपृक्पृंथिव्याम्। अयोध्येव दुर्मद् आ हि जुह्ने। महावीरं तुंविबाधमृंजीषम्॥१४॥

नातांरीरस्य समृंतिं वधानांम्। स॰ रुजानाः पिपिष् इन्द्रंशत्रुः। विश्वो विहांया अर्तिः। वसुंद्धे हस्ते दक्षिणे। त्रणिर्न शिश्रथत्। श्रवस्यंया न शिश्रथत्। विश्वंस्मा इदिंषुध्यसे। देवत्रा ह्व्यमूहिंषे। विश्वंस्मा इथ्सुकृते वारंमृण्वति। अग्निर्द्वारा व्यृण्वति॥१५॥

उदुजिहांनो अभि कामंमीरयन्। प्रपृश्चन्विश्वा भुवंनानि पूर्वथां। आ केतुना सुषंमिद्धो यिजेष्ठः। कामं नो अग्ने अभिहंर्य दिग्भ्यः। जुषाणो ह्व्यम्मृतेषु दूढ्यः। आ नो र्यिं बंहुलां गोमंतीमिषम्। नि धेहि यक्षंद्मृतेषु भूषन्। अश्विना यज्ञमागंतम्। दाशुषः पुरुंद ससा। पूषा रक्षतु नो रियम्॥१६॥

इमं यज्ञम्श्विनां वर्धयंन्ता। इमौ र्यिं यजंमानाय धत्तम्। इमौ पृश्नत्रंक्षतां विश्वतों नः। पूषा नः पातु सद्मप्रंयच्छन्। प्रते महे संरस्वति। सुभंगे वार्जिनीवति। सत्यवाचे भरे मृतिम्। इदं ते हव्यं घृतवंथ्सरस्वति। सृत्यवाचे प्रभरेमा ह्वी १ षिं। इमानिं ते दुरिता सौभंगानि। तेभिंव्य १ सुभगांसः स्याम॥१७॥

वुज्यहींनामृजी्षं व्यृण्वित रक्षतु नो र्यि॰ सौभंगान्येकं च॥———[४]

युज्ञो रायो युज्ञ ईशे वसूनाम्। युज्ञः सस्यानांमुत सुंक्षितीनाम्। युज्ञ इष्टः पूर्विचित्तिं दधातु। युज्ञो ब्रह्मण्वा । अप्येतु देवान्। अयं युज्ञो वर्धतां गोभिरश्वैः। इयं वेदिः स्वपत्या सुवीरां। इदं बर्हिरितिं बर्ही इष्यन्या। इमं युज्ञं विश्वे अवन्तु देवाः। भगं एव भगंवा । अस्तु देवाः। तेनं वयं भगंवन्तः स्याम॥१८॥

तं त्वां भग् सर्व इज्ञोहवीमि। स नों भग पुरएता भेवेह। भग् प्रणेतुर्भग् सत्यंराधः। भगेमां धियमुदंव ददंन्नः। भग् प्र णों जनय् गोभिरश्वैः। भग् प्र नृभिर्नृवन्तः स्याम। शश्वतीः समा उपयन्ति लोकाः। शश्वतीः समा उपयन्त्यापः। इष्टं पूर्तर शश्वतीनार् समानार शाश्वतेनं। ह्विषेष्वाऽनन्तं लोकं परमा रुरोह॥१९॥

ड्यमेव सा या प्रंथमा व्यौच्छंत्। सा रूपाणि कुरुते पश्चं देवी। द्वे स्वसांरौ वयत्स्तन्नंमेतत्। सनातनं वितंत्र् षण्मंयूखम्। अवान्याङ्स्तन्त्रंन्किरतो धत्तो अन्यान्। नावंपृज्याते न गंमाते अन्तम्। आ वो यन्तूदवाहासो अद्या वृष्टिं ये विश्वं मुरुतो जुनन्ति। अयं यो अग्निर्मरुतः सिमंद्धः। पृतं जुंषध्वं कवयो युवानः॥२०॥ धारावरा मुरुतो धृष्णुवोजसः। मृगा न भीमास्तंविषेभि-रूर्मिभिः। अग्नयो न शृंशुचाना ऋजीषिणः। भ्रुमिन्धमन्त उप गा अंवृण्वत। वि चंक्रमे त्रिर्देवः। आ वेधसं नीलंपृष्ठं बृहन्तम्। बृह्स्पित् सदेने सादयध्वम्। सादद्योनिं दम् आ दीदिवा सम्। हिरंण्यवर्णमरुष संपेम। स हि शुचिः शृतपंत्रः स शुन्थ्यः॥२१॥

हिरंण्यवाशीरिष्टिरः सुंवर्षाः। बृह्स्पतिः स स्वविश ऋष्वाः। पूरू सर्खिभ्य आसुतिं करिष्ठः। पूष्ड् स्तवे व्रते व्यम्। नरिष्येम कृदाचन। स्तोतारंस्त इह स्मंसि। यास्ते पूषन्ना वो अन्तः समुद्रे। हिर्ण्ययीर्न्तरिक्षे चरंन्ति। याभिर्यासि दूत्या सूर्यस्य। कामेन कृतश्रवे इच्छमानः॥२२॥

अरंण्यान्यरंण्यान्यसौ। या प्रेव नश्यंसि। कथा ग्रामं न पृंच्छसि। न त्वाभीरिंव विन्दती (३)। वृषार्वाय वदंते। यदुपावंति चिच्चिकः। आघाटीभिरिव धावयन्। अर्ण्यानिर्महीयते। उत गावं इवादन्। उतो वेश्मेंव दृश्यते॥२३॥

उतो अंरण्यानिः सायम्। शुक्टीरिव सर्जिति। गामुङ्गेषु आ ह्वंयति। दार्वङ्गेषु उपांवधीत्। वसंन्नरण्यान्याः सायम्। अर्न्नुक्षदिति मन्यते। न वा अंरण्यानिर्हंन्ति। अन्यश्चेन्नाभिगच्छंति। स्वादोः फलंस्य जुग्ध्वा। यत्र कामं नि पंद्यते। आञ्चंनगन्धीः सुर्भीम्। बृह्वन्नामकृषीवलाम्। प्राहं मृगाणां मातरम्। अर्ण्यानीमंशः सिषम्॥२४॥ स्याम् रुरोह् युवानः शुन्य्रिष्छमांनो दृश्यते निपंद्यते चुत्वारि च॥————[५]

वार्त्रहत्याय शवंसे। पृत्नासाह्यांय च। इन्द्र त्वा वंर्तयामिस। सुब्रह्मांणं वीरवंन्तं बृहन्तम्। उरुं गंभीरं पृथुबंध्नमिन्द्र। श्रुतर्षिमुग्रमंभिमातिषाहम्। अस्मभ्यं चित्रं वृषंण र रियं दाः। क्षेत्रिये त्वा निर्ऋत्ये त्वा। द्रुहो मुंश्चामि वर्रुणस्य पाशात्। अनागसं ब्रह्मंणे त्वा करोमि॥२५॥

शिवे ते द्यावांपृथिवी उभे इमे। शं ते अग्निः सहाद्भिरंस्तु। शं द्यावांपृथिवी सहौषंधीभिः। शम्नतरिक्षः सह वातेन ते। शं ते चतंस्रः प्रदिशों भवन्तु। या दैवीश्चतंस्रः प्रदिशंः। वातंपत्नीर्भि सूर्यो विच्षे। तासाँ त्वा ज्रस् आ दंधामि। प्र यक्ष्मं एतु निर्ऋतिं पराचैः। अमोचि यक्ष्मांदुरितादवंत्रीं॥२६॥

द्रुहः पाशान्तिर्ऋत्यै चोदंमोचि। अहा अवंर्तिमविंदथ्स्योनम्। अप्यंभूद्भद्रे सुंकृतस्यं लोके। सूर्यमृतं तमंसो ग्राह्या यत्। देवा अमुंश्चन्नसृजन्व्यंनसः। एवम्हिम्मं क्षेन्त्रियाञ्जांमिश्र्सात्। द्रुहो मुंश्चामि वर्रणस्य पाशांत्। बृहंस्पते युविमन्द्रेश्च वस्वंः। दिव्यस्यंशाथे उत पार्थिवस्य। धृत्तर र्यिश् स्तुंवते की्रयंचित्॥२७॥

यूयं पांत स्वस्तिभिः सदां नः। देवायुधिमन्द्रमा जोह्रंवानाः। विश्वावृधंमभि ये रक्षंमाणाः। येनं हृता दीर्घमध्वांनमायन्। अनुन्तमर्थमिनिवर्ध्स्यमानाः। यत्तं सुजाते हिमवंथ्सु भेषजम्। मयोभूः शन्तंमा यद्धृदोसिं। ततों नो देहि सीबले। अदो गिरिभ्यो अधि यत्प्रधावंसि। स्र्शोभंमाना कृन्यंव शुभ्रे॥२८॥

तां त्वा मुद्गेला ह्विषां वर्धयन्ति। सा नः सीबले र्यिमा भाजयेह। पूर्वं देवा अपरेणानुपश्यं जन्मंभिः। जन्मान्यवंरैः पराणि। वेदांनि देवा अयम्स्मीति माम्। अह॰ हित्वा शरीरं जर्मः प्रस्तात। प्राणापानौ चक्षुः श्रोत्रम्। वाचं मनंसि सम्भृताम्। हित्वा शरीरं ज्रसः प्रस्तात्। आभूतिं भूतिं व्यमंश्वामहै। इमा एव ता उषसो याः प्रथमा व्यौच्छन्। ता देव्यः कुर्वते पश्चेरूपा। शश्वंतीर्नावंपृज्यन्ति। न गंमन्त्यन्तम्॥२९॥

क्रोम्यवंत्र्ये चिच्छुभ्रेऽश्ञवामहे चृत्वारि च॥————[६]

वसूनां त्वाऽधीतेन। रुद्राणांमूर्म्या। आदित्यानां तेर्जसा। विश्वेषां देवानां ऋतुंना। मुरुतामेम्नां जुहोमि स्वाहाँ। अभिभूंतिरहमागंमम्। इन्द्रंसखा स्वायुधंः। आस्वाशांसु दुष्यहंः। इदं वर्चो अग्निनां दत्तमागांत्। यशो भर्गः सह ओजो बलं च॥३०॥ दीर्घायुत्वायं श्तर्शारदाय। प्रतिंगृभ्णामि मह्ते वीर्याय। आयुरिस विश्वायुरिस। सर्वायुरिस सर्वमायुरिस। सर्वं म् आयुर्भूयात्। सर्वमायुर्गेषम्। भूर्भुवः सुर्वः। अग्निर्धर्मेणान्नादः। मृत्युर्धर्मेणान्नपतिः। ब्रह्मं क्षत्र स्वाहां॥३१॥

प्रजापंतिः प्रणेता। बृह्स्पतिः पुरण्ता। यमः पन्थाः। चन्द्रमाः पुनर्सुः स्वाहां। अग्निरंत्रादोऽत्रंपतिः। अन्नाद्यंमस्मिन् यज्ञे यजमानाय ददातु स्वाहां। सोमो राजा राजंपतिः। राज्यमस्मिन् यज्ञे यजमानाय ददातु स्वाहां। वरुंणः सम्माद्थ्समाद्वंतिः। साम्राज्यमस्मिन् यज्ञे यजमानाय ददातु स्वाहां॥३२॥

मित्रः क्षत्रं क्षत्रपंतिः। क्षत्रमस्मिन् युज्ञे यजंमानाय ददातु स्वाहाँ। इन्द्रो बलं बलंपितः। बलंमस्मिन् युज्ञे यजंमानाय ददातु स्वाहाँ। बृह्स्पित्र्ब्रह्म ब्रह्मंपितिः। ब्रह्मास्मिन् युज्ञे यजंमानाय ददातु स्वाहाँ। सिवृता राष्ट्रश्र राष्ट्रपंतिः। राष्ट्रमस्मिन् युज्ञे यजंमानाय ददातु स्वाहाँ। पूषा विशां विद्वंतिः। विशंमस्मिन् युज्ञे यजंमानाय ददातु स्वाहाँ। सरंस्वती पृष्टिः पृष्टिपत्नी। पृष्टिंमस्मिन् युज्ञे यजंमानाय ददातु स्वाहाँ। त्वष्टां पशूनां मिथुनाना र्रं रूपकृद्रपपंतिः। रूपेणास्मिन् युज्ञे यजंमानाय पृश्न्दंदातु स्वाहाँ॥३३॥

च स्वाहा साम्रांज्यमस्मिन् युज्ञे यजंमानाय ददातु स्वाहा विशंमुस्मिन् युज्ञे यजंमानाय ददातु स्वाहां चुत्वारिं च (अग्निः सोमो वर्रुणो मित्र इन्द्रो बृहुस्पतिः सिवता पूषा सर्रस्वती त्वष्टा दर्श॥॥-----[७]

स ईं पाहि य ऋजीषी तरुत्रः। यः शिप्रवान्वृष्भो यो मंतीनाम्। यो गौत्रभिद्धंज्रभृद्यो हंिर्ष्ठाः। स इंन्द्र चित्राश् अभि तृंन्धि वाजान्। आ ते शुष्मो वृष्भ एंतु पृश्चात्। ओत्तरादंधरागा पुरस्तौत्। आ विश्वतो अभिसमैत्वर्वाङ्। इन्द्रं द्युम्नश् सुर्वर्वद्धेह्यस्मे। प्रोष्वंस्मै पुरोर्थम्। इन्द्रांय शूषमंर्चत॥३४॥

अभीके चिद् लोककृत्। सङ्गे समथ्सुं वृत्रहा। अस्माकं बोधि चोदिता। नर्भन्तामन्यकेषाँम्। ज्याका अधि धन्वंसु। इन्द्रं वय श्रांनासीरम्ं। अस्मिन् यज्ञे हंवामहे। आ वाजैरुपं नो गमत्। इन्द्रांय शुनासीरांय। स्रुचा जुंहुत नो हुविः॥३५॥

जुषतां प्रति मेधिरः। प्र ह्व्यानि घृतवंन्त्यस्मै। हर्यश्वाय भरता स्जोषाः। इन्द्रर्तुभिर्ब्रह्मणा वावृधानः। शुनासीरी ह्विरिदं जुंषस्व। वयः सुपूर्णा उपसेदुरिन्द्रम्। प्रियमेधा ऋषयो नाधमानाः। अपं ध्वान्तमूर्णुहि पूर्धि चक्षुः। मुमुग्ध्यस्मान्निधयेऽव बुद्धान्। बृहदिन्द्रांय गायत॥३६॥

मर्रुतो वृत्रहन्तंमम्। येन् ज्योतिरजंनयन्नृतावृधेः। देवं देवाय जागृंवि। कामिहैकाः क इमे पंतुङ्गाः। मान्थालाः कुलिपरिमापतन्ति। अनांवृतैनान्प्रधंमन्तु देवाः। सौपंर्णुं चक्षुंस्तुनुवां विदेय। एवा वंन्दस्व वरुणं बृहन्तम्। न्मस्याधीरममृतंस्य गोपाम्। स नः शर्म त्रिवरूथं वियर्सत्॥३७॥

यूयं पात स्वस्तिभिः सदां नः। नाकें सुप्णमुप् यत्पतंन्तम्। हृदा वेनंन्तो अभ्यचंक्षत त्वा। हिरंण्यपक्षं वरुणस्य दूतम्। यमस्य योनौं शकुनं भुर्ण्युम्। शं नों देवीर्भिष्टंये। आपों भवन्तु पीतयैं। शं योर्भि स्रंवन्तु नः। ईशांना वार्याणाम्। क्षयंन्तीश्चर्षणीनाम्॥३८॥

अपो यांचामि भेषजम्। अपसु मे सोमों अब्रवीत्। अन्तर्विश्वांनि भेषजा। अग्निं चं विश्वशंम्भुवम्। आपश्च विश्वभेषजीः। यद्पसु ते सरस्वति। गोष्वश्वेषु यन्मधुं। तेनं मे वाजिनीवति। मुखंमिङ्गि सरस्वति। या सरस्वती वैशम्भल्या॥३९॥

तस्यां मे रास्व। तस्यांस्ते भक्षीय। तस्यांस्ते भूयिष्टभाजों भूयास्म। अहं त्वदंस्मि मदंसि त्वमेतत्। ममांसि योनिस्तव योनिरस्मि। ममैव सन्वहं ह्व्यान्यंग्ने। पुत्रः पित्रे लोंकुकुञ्जांतवेदः। इहैव सन्तत्र सन्तं त्वाऽग्ने। प्राणेनं वाचा मनसा बिभर्मि। तिरो मा सन्तमायुर्मा प्रहांसीत्॥४०॥

ज्योतिषा त्वा वैश्वान्रेणोपंतिष्ठे। अयं ते योनिर्ऋत्वियः। यतो जातो अरोचथाः। तं जानन्नंग्र आरोह। अथां नो वर्धया र्यिम्। या ते अग्ने यज्ञियां तुनूस्तयेह्यारोहात्माऽऽत्मानम्॥ अच्छा वसूंनि कृण्वन्नस्मे नर्या पुरूणि। युज्ञो भूत्वा युज्ञमा सींद् स्वां योनिम्। जातंवेदो भुव आ जायंमानः सक्षय एहि। उपावंरोह जातवेदः पुनस्त्वम्॥४१॥

देवेभ्यों ह्व्यं वंह नः प्रजानन्। आर्युः प्रजार र्यिम्स्मास्ं धेहि। अजंस्रो दीदिहि नो दुरोणे। तिमन्द्रं जोहवीमि मघवानमुग्रम्। स्त्रा दर्धानमप्रतिष्कुत्र शवार्रस। मर्रहिष्ठो गीर्भिरा चं यज्ञियोऽववर्तत्। राये नो विश्वां सुपर्थां कृणोतु वृज्ञी। त्रिकंद्रकेषु महिषो यवांशिरं तुविशुष्मंस्तृपत्। सोमंमिपबृद्धिष्णुंना सुतं यथाऽवंशत्। स ईं ममाद महि कर्म कर्तवे महामुरुम्॥४२॥

सैन र सश्चद्वेवं देवः सत्यिमिन्दु र सत्य इन्द्रेः। विद्यतीं सरमां रुग्णमद्रैः। मिह् पार्थः पूर्व्य सम्द्रियंकः। अग्रं नयथ्सुपद्यक्षंराणाम्। अच्छा रवं प्रथमा जांनतीगांत्। विदद्गव्य र स्रमां दृढमूर्वम्। येनानुकं मानुंषी भोजते विद्। आ ये विश्वाः स्वपृत्यानिं चुकः। कृण्वानासों अमृत्त्वायं गातुम्। त्वं नृभिनृंपते देवहूंतौ॥४३॥

भूरींणि वृत्वा हंर्यश्व हर्सा। त्वन्निदंस्युश्चमुंरिम्। धुनिं चास्वांपयो दुभीतंये सुहन्तुं। एवा पांहि प्रत्नथा मन्दंतु त्वा। श्रुधि ब्रह्मं वावृधस्वोत गीर्भिः। आविः सूर्यं कृणुहि पीपिहीषः। जहि शत्रूरं रुभि गा इन्द्र तृन्धि। अग्ने बाधंस्व वि मृधों नुदस्व। अपामीवा अप रक्षा १सि सेध। अस्मार्थ्समुद्राद्वेहुतो दिवो नेः॥४४॥

अपां भूमान्मुपं नः सृजेह। यज्ञ प्रतिं तिष्ठ सुमृतौ सुशेवा आ त्वां। वसूंनि पुरुधा विंशन्तु। दीर्घमायुर्यजंमानाय कृण्वन्। अथामृतेन जिर्तारमङ्गि। इन्द्रंः शुनावृद्धितंनोति सीरम्। संवथ्सरस्यं प्रतिमाणंमेतत्। अर्कस्य ज्योतिस्तिदित्तंस ज्येष्ठम्। संवथ्सरः शुनवृथ्सीरमेतत्। इन्द्रंस्य राधः प्रयंतं पुरु त्मनां। तदंर्करूपं विमिमानमेति। द्वादंशारे प्रतिं तिष्ठतीद्वृषां। अश्वायन्तों गृव्यन्तों वाज्यंन्तः। हवांमहे त्वोपंगन्तवा उं। आभूषंन्तस्त्वा सुमृतौ नवांयाम्। व्यमिन्द्र त्वा शुनः हुवेम॥४५॥

अर्चत ह्विर्गायत यश्सचर्षणीनां वैशम्भुल्या हांसीत्त्वमुरुं देवहूंतौ नुस्त्मना पद्वं॥——[८]

प्राण उदेहि पुन्रा नो भर यज्ञो रायो वार्त्रहत्याय वसूना स ई पाह्यष्टौ॥८॥ प्राणो रेक्षत्यगृंभीता धाराव्रा मुरुतों दीर्घायुत्वाय ज्योतिषा त्वा पश्चंचत्वारिश्शत्॥४५॥ प्राणः शुनश् हंवेम॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके पश्चमः प्रपाठकः समाप्तः॥

### ॥षष्ठमः प्रश्नः॥

### ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके षष्टः प्रपाठकः॥

स्वाद्वीं त्वौ स्वादुनौ। तीव्रां तीव्रेणं। अमृतांममृतेन। मधुंमतीं मधुंमता। सृजामि स॰ सोमेन। सोमौऽस्यिश्यौं पच्यस्व। सरंस्वत्यै पच्यस्व। इन्द्रांय सुत्राम्णे पच्यस्व। परीतो षिश्चता सुतम्। सोमो य उत्तम॰ हविः॥१॥

द्धन्वा यो नर्यो अपस्वंन्तरा। सुषाव सोम्मिद्रंभिः। पुनातुं ते परिस्रुतम्। सोम् सूर्यस्य दुहिता। वारेण शश्वंता तना। वायुः पूतः प्वित्रंण। प्राङ्ख्सोमो अतिद्रुतः। इन्द्रंस्य युज्यः सखा। वायुः पूतः प्वित्रंण। प्रत्यङ्ख्सोमो अतिद्रुतः॥२॥

इन्द्रंस्य युज्यः सखाँ। ब्रह्मं क्षत्रं पंवते तेजं इन्द्रियम्। सुरंया सोमंः सुत आसंतो मदांय। शुक्रेणं देव देवताः पिपृग्धि। रसेनात्रं यजंमानाय धेहि। कुविद्ङ्ग यवंमन्तो यवंश्चित्। यथा दान्त्यंनुपूर्वं वियूयं। इहेहैषां कृणुत भोजंनानि। ये ब्र्हिषो नमोवृक्तिं न ज्ग्मः। उपयामगृहीतोऽस्यश्विभ्यां त्वा जुष्टं गृह्णामि॥३॥

सरंस्वत्या इन्द्रांय सुत्राम्णैं। एष ते योनिस्तेजंसे त्वा। वीर्याय त्वा बलाय त्वा। तेजोंऽसि तेजो मियं धेहि। वीर्यमिस वीर्यं मियं धेहि। बलंमिस बलं मियं धेहि। नाना हि वाँ देवहिंत्र सर्दः कृतम्। मा सश्सृक्षाथां पर्मे व्योमन्। सुरा त्वमिसं शुष्मिणी सोमं एषः। मा मां हिश्सीः स्वां योनिमाविशन्॥४॥

उपयामगृहीतोऽस्याश्विनं तेर्जः। सार्स्वतं वीर्यम्। ऐन्द्रं बलम्। एष ते योनिर्मोदाय त्वा। आनन्दायं त्वा महंसे त्वा। ओजोऽस्योजो मियं धेहि। मन्युरंसि मन्युं मियं धेहि। महोऽसि महो मियं धेहि। सहोऽसि सहो मियं धेहि। या व्याघ्रं विषूंचिका। उभौ वृकं च रक्षंति। श्येनं पंतृत्रिण र् सिर्हम्। सेमं पात्वर्हंसः। सम्पृचंः स्थ सं मां भुद्रेणं पृङ्का। विपृचंः स्थ वि मां पाप्मनां पृङ्का। ॥

हुविः प्रत्यङ्ख्सोमो अतिंद्रुतो गृह्णाम्याविशन्विषूचिका पश्चं च॥————[१]

सोमो राजाऽमृत र सुतः। ऋजीषेणांजहान्मृत्युम्। ऋतेनं सत्यिमिन्द्रियम्। विपान र शुक्रमन्धंसः। इन्द्रंस्येन्द्रियम्। इदं पयोऽमृतं मधुं। सोमम्द्र्यो व्यंपिबत्। छन्दंसा हुर्सः शुंचिषत्। ऋतेनं सत्यिमिन्द्रियम्। अद्भः क्षीरं व्यंपिबत्॥६॥

त्रुङ्कः क्षिर्सो धिया। ऋतेनं स्त्यिमिन्द्रियम्। अन्नात्पिर्सुतो रसम्। ब्रह्मणा व्यपिबत् क्ष्न्त्रम्। ऋतेनं स्त्यिमिन्द्रियम्। रेतो मूत्रं विजंहाति। योनिं प्रविशिदिन्द्रियम्। गर्भो ज्रायुणाऽऽवृतः। उल्बं जहाति जन्मना। ऋतेनं सत्यिमिन्द्रियम्॥७॥

वेदेन रूपे व्यंकरोत्। सृतासती प्रजापंतिः। ऋतेनं

स्त्यमिन्द्रियम्। सोमेन सोमौ व्यंपिबत्। सुतासुतौ प्रजापितः। ऋतेनं स्त्यमिन्द्रियम्। दृष्ट्वा रूपे व्याकरोत्। सत्यानृते प्रजापितः। अश्रंद्धामनृतेऽदंधात्। श्रद्धाः सत्ये प्रजापितः। ऋतेनं सत्यमिन्द्रियम्। दृष्ट्वा परिस्रुतो रसम्। श्रुक्रेणं शुक्रं व्यंपिबत्। पयः सोमं प्रजापितः। ऋतेनं सत्यमिन्द्रियम्। इतं सत्यमिन्द्रियम्। विपानः श्रुक्रमन्धंसः। इन्द्रंस्येन्द्रियम्। इदं पयोऽमृतं मधुं॥८॥

अद्धाः क्षीरं व्यंपिबुज्जन्मंनुर्तेनं सुत्यमिन्द्रियः श्रृद्धाः सृत्ये प्रजापंतिरृष्टौ चं॥———[२]

सुरांवन्तं बर्ह्षिद र् सुवीरम्ं। यज्ञ हिन्वन्ति मिह्षा नमोभिः। दधानाः सोमं दिवि देवतांसु। मदेमेन्द्रं यजमानाः स्वर्काः। यस्ते रसः सम्भृत ओषंधीषु। सोमंस्य शुष्मः सुर्या सुतस्यं। तेनं जिन्व यजमानं मदेन। सर्रस्वतीमृश्विनाविन्द्रंमृग्निम्। यमृश्विना नमुंचेरासुरादिधं। सर्रस्वत्यसंनोदिन्द्रियायं॥९॥

ड्मन्तर शुक्रं मध्रमन्तमिन्दुम्। सोम्र् राजानिम्ह भक्षयामि। यदत्रं रिप्तर रिसनः सुतस्यं। यदिन्द्रो अपिबच्छचीभिः। अहं तदंस्य मनंसा शिवेनं। सोम्र् राजानिम्ह भक्षयामि। पितृभ्यः स्वधाविभ्यः स्वधा नमः। पितामहभ्यः स्वधाविभ्यः स्वधा नमः। प्रपितामहभ्यः स्वधाविभ्यः स्वधा नमः। अक्षन्यितरः॥१०॥

अमीमदन्त पितरंः। अतीतृपन्त पितरंः। अमीमृजन्त

पितरंः। पितंरः शुन्धंध्वम्। पुनन्तुं मा पितरंः सोम्यासंः। पुनन्तुं मा पितामहाः। पुनन्तु प्रपितामहाः। पवित्रेण शतायुंषा। पुनन्तुं मा पितामहाः। पुनन्तु प्रपितामहाः॥११॥

प्वित्रेण श्तायुंषा। विश्वमायुर्व्यश्ववै। अग्न आयू श्रिष् प्रवसेऽग्ने पर्वस्व। पर्वमानः सुवर्जनः पुनन्तुं मा देवज्ञनाः। जातंवेदः प्वित्रंवद्यते प्वित्रंमिर्चिषि। उभाभ्यां देव सवितर्वेश्वदेवी पुनती। ये समानाः समनसः। पितरो यम्राज्ये। तेषां लोकः स्वधा नमः। यज्ञो देवेषुं कल्पताम्॥१२॥

ये संजाताः समंनसः। जीवा जीवेषुं मामकाः। तेषा् श्रु श्रीमीयं कल्पताम्। अस्मिँ श्लोके शत्र समाँः। द्वे स्रुती अश्रणवं पितृणाम्। अहं देवानां मृत मर्त्यां नाम्। याभ्यां मिदं विश्वमे ज्ञथ्समें ति। यदंन्तरा पितरं मातरं च। इदश् ह्विः प्रजनंनं मे अस्तु। दर्शवीरश् सूर्वर्गणः स्वस्तये। आत्मसनि प्रजासनि। पृशुसन्यं भयसनि लोकसनि। अग्निः प्रजां बहुलां में करोतु। अन्नं पयो रेतों अस्मासुं धत्त। रायस्पोष् मिष्मूर्जम्समासुं दीधर्थस्वाहाँ॥१३॥

इन्द्रियायं पितरंः शतायुंषा पुनन्तुं मा पितामहाः पुनन्तु प्रपितामहाः कल्पताः स्वस्तये पश्चं

सीसेन तन्नं मनसा मनीषिणंः। ऊर्णासूत्रेणं कवयो

च∥

वयन्ति। अश्विनां युज्ञः संविता सरंस्वती। इन्द्रंस्य रूपं वरुणो भिष्उयन्। तदंस्य रूपमृमृत्ः शचींभिः। तिस्रोऽदंधुर्देवताः सःरराणाः। लोमांनि शष्पैंर्बहुधा न तोक्मंभिः। त्वगंस्य मार्समंभवन्न लाजाः। तद्श्विनां भिषजां रुद्रवंर्तनी। सरंस्वती वयति पेशो अन्तरः॥१४॥

अस्थिं मुज्ञानं मासंरैः। कारोत्रेण दर्धतो गर्वां त्वचि। सरंस्वती मनंसा पेश्लं वसुं। नासंत्याभ्यां वयति दर्शतं वपुंः। रसं परिस्नुता न रोहितम्। नुग्नहुर्धीर्स्तसंर्न्न वेमं। पर्यसा शुक्रम्मृतं जनित्रम्। सुरंया मूत्रांज्ञनयन्ति रेतः। अपामंतिं दुर्मतिं बार्धमानाः। ऊर्वध्यं वातर्थ सबुवन्तदारात्॥१५॥

इन्द्रेः सुत्रामा हृदेयेन स्त्यम्। पुरोडाशेन सिवृता जंजान। यकृत्क्रोमानं वरुणो भिष्ज्यन्। मतंस्रे वायव्यैर्न मिनाति पित्तम्। आन्नाणि स्थाली मधु पिन्वंमाना। गुदा पात्राणि सुद्धा न धेनुः। श्येनस्य पत्रं न प्रीहा शवींभिः। आस्नदी नाभिरुदरं न माता। कुम्भो विनिष्ठुर्जनिता शवींभिः। यस्मिन्नग्रे योन्यां गर्भो अन्तः॥१६॥

प्राशीर्व्यक्तः शतधार् उथ्संः। दुहे न कुम्भी इस्वधां पितृभ्यंः। मुख् सदंस्य शिर् इथ्सदेन। जिह्वा पवित्रंमिश्वना स सरंस्वती। चप्पन्न पायुर्भिषगंस्य वालः। वस्तिर्न शेपो हरंसा तर्स्वी। अश्विभ्यां चक्षुंरमृतं ग्रहाँभ्याम्। छागेन् तेजो ह्विषां शृतेनं। पक्ष्माणि गोधूमैः क्वेलेरुतानिं। पेशो न शुक्रमसितं वसाते॥१७॥

अविर्न मेषो निस वीर्याय। प्राणस्य पन्थां अमृतो ग्रहाँभ्याम्। सरंस्वृत्युप्वाकैंच्यानम्। नस्यानि बर्हिर्बदंरैर्जजान। इन्द्रंस्य रूपमृष्भो बलांय। कर्णाँभ्याड्ड् श्रोत्रंममृतं ग्रहाँभ्याम्। यवा न बर्हिर्भुवि केसंराणि। कर्कन्धुं जज्ञे मधुं सार्घं मुखाँत्। आत्मन्नुपस्थे न वृकंस्य लोमं। मुखे श्मश्रूणि न व्याँघ्रलोमम्॥१८॥

केशा न शीर्षन् यशंसे श्रिये शिखाँ। सिर्हस्य लोम् त्विषिरिन्द्रियाणि। अङ्गाँन्यात्मिन्धिजा तद्श्विनाँ। आत्मान्मङ्गैः सम्धाथ्मरंस्वती। इन्द्रंस्य रूपर श्तमान्मायुः। चन्द्रेण् ज्योतिर्मृतं दधाना। सरंस्वती योन्यां गर्भम्नतः। अश्विभ्यां पत्नी सुकृतं बिभर्ति। अपार रसेन् वर्रुणो न साम्नाँ। इन्द्रई श्रिये जनयंत्रपसु राजाँ। तेजः पश्नार ह्विरिन्द्रियावंत्। परिस्रुता पर्यसा सार्घं मधुं। अश्विभ्यां दुग्धं भिषजा सरंस्वत्या सुतासुताभ्यांम्। अमृतः सोम् इन्दंः॥१९॥

अन्तर आरादन्तर्वसाते व्याघ्रलोम॰ राजां चृत्वारि च॥—————[४]

मित्रोंऽसि वर्रुणोऽसि। समृहं विश्वैद्वैः। क्षुत्रस्य

नाभिरसि। क्षत्रस्य योनिरसि। स्योनामा सींद। सुषदामा सींद। मा त्वां हिश्सीत्। मा मां हिश्सीत्। निषंसाद धृतव्रंतो वरुणः। पुस्त्यांस्वा॥२०॥

साम्राज्याय सुक्रतुंः। देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रंस्वे। अश्विनौर्बाहुभ्याम्। पूष्णो हस्ताभ्याम्। अश्विनोर्भेषंज्येन। तेजंसे ब्रह्मवर्चसायाभिषिश्चामि। देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रंस्वे। अश्विनौर्बाहुभ्याम्। पूष्णो हस्ताभ्याम्। सरंस्वत्ये भैषंज्येन॥२१॥

वीर्यायात्राद्यायाभिषिश्चामि। देवस्यं त्वा सवितुः प्रस्वे। अश्विनौर्बाहुभ्याम्। पूष्णो हस्ताभ्याम्। इन्द्रंस्येन्द्रियेणं। श्रियै यशंसे बलायाभिषिश्चामि। कोऽसि कत्मोऽसि। कस्मैं त्वा कार्यं त्वा। सुश्लोकाँ(४) सुमंङ्गलाँ(४) सत्यंराजा(३)न्। शिरो मे श्रीः॥२२॥

यशो मुखम्ँ। त्विषिः केशाँश्च श्मश्रूंणि। राजां मे प्राणीं-ऽमृतम्ँ। सम्राद्वक्षुंः। विराद्धोत्रम्ँ। जिह्वा में भुद्रम्। वाङ्गहंः। मनों मृन्युः। स्वराङ्कामंः। मोदाः प्रमोदा अङ्गुलीरङ्गांनि॥२३॥

चित्तं मे सहंः। बाहू मे बलंमिन्द्रियम्। हस्तौं मे कर्म वीर्यम्। आत्मा क्षत्रमुरो ममं। पृष्टीर्मे राष्ट्रमुदर्म स्मौ। ग्रीवाश्च श्रोण्यौ। ऊरू अंरुब्री जानुंनी। विशो मेऽङ्गांनि सुर्वतः। नाभिर्मे चित्तं विज्ञानम्। पायुर्मेऽपंचितिर्भसत्॥ २४॥ आनन्दनन्दावाण्डौ मैं। भगः सौभाँग्यं पसंः। जङ्गाँभ्यां पद्मां धर्मों ऽस्मि। विशि राजा प्रतिष्ठितः। प्रतिं क्ष्त्रे प्रतिं तिष्ठामि राष्ट्रे। प्रत्यश्चेषु प्रतिं तिष्ठामि गोष्ं। प्रत्यङ्गेषु प्रतिं तिष्ठाम्यात्मन्। प्रति प्राणेषु प्रतिं तिष्ठामि पुष्टे। प्रति द्यावांपृथिव्योः। प्रतिं तिष्ठामि युज्ञे॥२५॥

त्रया देवा एकांदश। त्रयस्त्रिष्शाः सुराधंसः। बृह्स्पतिंपुरो-हिताः। देवस्यं सिवृतुः सवे। देवा देवैरंवन्तु मा। प्रथमा द्वितीयैः। द्वितीयांस्तृतीयैः। तृतीयाः सत्येनं। सत्यं यज्ञेनं। यज्ञो यजुंभिः॥२६॥

यजूर्षेषि सामंभिः। सामाँन्यृग्भिः। ऋचौ याज्यांभिः। याज्यां वषद्गारेः। वषद्भारा आहुंतिभिः। आहुंतयो मे कामान्थ्समंधयन्तु। भूः स्वाहाँ। लोमांनि प्रयंतिर्ममं। त्वङ्म आनंतिरागंतिः। मार्सं म् उपनितः। वस्वस्थि। मुज्जा म् आनंतिः॥२७॥

पुस्त्यांस्वा सरंस्वत्ये भैषंज्येन श्रीरङ्गांनि भुसद्यज्ञे यज्ञो यजुंर्भिरुपंनतिर्द्वे चं॥———[५]

यद्देवा देवहेर्डनम्। देवांसश्चकृमा वयम्। अग्निर्मा तस्मादेनंसः। विश्वांन्मुश्चत्व १ हंसः। यदि दिवा यदि नक्तम्। एना १ सि चकृमा वयम्। वायुर्मा तस्मादेनंसः। विश्वांन्मुश्चत्व १ हंसः। यदि जाग्रद्यदि स्वप्नें। एना १ सि चकृमा वयम्॥ २८॥

सूर्यो मा तस्मादेनंसः। विश्वान्मुश्रुत्व १ हंसः। यद्गामे

यदरंण्ये। यथ्मभायां यदिन्द्रिये। यच्छूद्रे यद्र्यें। एनंश्चकृमा वयम्। यदेकस्याधि धर्मणि। तस्यांवयजनमिस। यदापो अप्निया वरुणेति शपांमहे। ततो वरुण नो मुश्र॥२९॥

अवंभृथ निचङ्कुण निचेरुरंसि निचङ्कुण। अवं देवैर्देवकृतमेनोंऽयाट्। अव मर्त्यूर्मर्त्यंकृतम्। उरोरा नों देव रिषस्पांहि। सुमित्रा न आप ओषंधयः सन्तु। दुर्मित्रास्तस्में भूयासुः। योंऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं व्यं द्विष्मः। द्रुपदाद्विवन्मुंमुचानः। स्विन्नः स्नात्वी मलांदिव॥३०॥

पूतं प्वित्रेणेवाज्यम्। आपः शुन्धन्तु मैनेसः। उद्घयं तमस्परि। पश्यन्तो ज्योतिरुत्तरम्। देवं देवत्रा सूर्यम्। अगन्म ज्योतिरुत्तमम्। प्रतियुतो वरुणस्य पाशः। प्रत्यस्तो वरुणस्य पाशः। एधौऽस्येधिषीमहि। सुमिदंसि॥३१॥

तेजोंऽसि तेजो मियं धेहि। अपो अन्वंचारिषम्। रसेन् समंसृक्ष्मिह। पर्यस्वाः अग्न आगंमम्। तं मा सःसृंज् वर्चसा। प्रजयां च धनेन च। समावंवित पृथिवी। समुषाः। समु सूर्यः। समु विश्वंमिदं जगंत्। वैश्वान्रज्योतिर्भूयासम्। विभुं कामं व्यंश्ववै। भूः स्वाहां॥३२॥

स्वप्न एनार्श्स चकृमा वयं मुंश्च मलांदिव समिदंसि जगुत्रीणि च॥————[६]

होतां यक्षथ्यमिधेन्द्रंमिडस्पदे। नाभां पृथिव्या अधि। दिवो वर्ष्मन्थ्यमिध्यते। ओजिष्ठश्चर्षणी सहान्। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्यंजं। होतां यक्ष्वत्तनूनपांतम्। ऊतिभिजेंतांर्मपंराजितम्। इन्द्रं देव र सुंवर्विदम्। पृथिभिर्मधुंमत्तमैः। नराश रसेंन् तेजंसा॥ ३३॥

वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्ष्विद्धांभिरिन्द्रंमीडितम्। आजुह्वांनुममर्त्यम्। देवो देवैः सवींर्यः। वज्रंहस्तः पुरन्द्रः। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतांयक्षद्वर्हिषीन्द्रंन्निषद्वरम्। वृष्मं नर्यापसम्। वस्ंभीरुद्रैरांदित्यैः। स्युग्भिंर्बर्हिरा-संदत्॥३४॥

वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्ष्रदोजो न वीर्यम्ं। सहो द्वार् इन्द्रंमवर्धयन्। सुप्रायणा विश्रयन्तामृतावृधंः। द्वार् इन्द्रांय मीदुषें। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षदुषे इन्द्रंस्य धेनू। सुदुघं मातरौं मही। सवातरौ न तेजंसी। वथ्समिन्द्रंमवर्धताम्॥३५॥

वीतामाज्यंस्य होत्यंजं। होतां यक्ष्रद्देव्या होतांरा। भिषजा सखाया। ह्विषेन्द्रं भिषज्यतः। क्वी देवौ प्रचेतसौ। इन्द्रांय धत्त इन्द्रियम्। वीतामाज्यंस्य होत्यंजं। होतां यक्षत्तिस्रो देवीः। त्रयंस्त्रिधातंवोपसंः। इडा सरस्वती भारंती॥३६॥

महीन्द्रंपत्नीर्ह्विष्मंतीः। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षुत्त्वष्टांर्मिन्द्रं देवम्। भिषज्ञं सुयजं घृत्श्रियम्। पुरुरूपं सुरेतंसं मुघोनिम्। इन्द्रांय त्वष्टा दर्धदिन्द्रियाणि। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यंजं। होतां यक्षुद्वनुस्पतिम्। शुमितार १ शुतऋंतुम्। धियो जोष्टारंमिन्द्रियम्॥३७॥

मध्वां सम्ञन्यथिभिः सुगेभिः। स्वदांति ह्व्यं मधुंना घृतेनं। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्ष्विदन्द्र्र् स्वाहा-ऽऽज्यंस्य। स्वाहा मेदंसः। स्वाहां स्तोकानांम्। स्वाहां स्वाहांकृतीनाम्। स्वाहां ह्व्यसूँक्तीनाम्। स्वाहां देवाः आंज्यपान्। स्वाहेन्द्रः होत्राञ्जंषाणाः। इन्द्र आज्यंस्य वियन्तु। होत्र्यजं॥३८॥

तेर्जसाऽऽसददवर्धतां भारंतीन्द्रियं जुंषाणा द्वे चं (स्मिधेन्द्रन्तनूनपांतिमडांभिर्बुर्हिष्योर्ज उषे दैव्यां तिस्रस्त्वष्टांरं वनस्पितिमिन्द्रम्॥ समिधेन्द्रं चतुर्वेत्वेकों वियन्तु द्विर्वीतामेकों वियन्तु द्विर्वेत्वेकों वियन्तु होत्वर्यर्ज॥)॥————[७]

सिमिंद्ध इन्द्रं उषसामनीके। पुरोरुचां पूर्वकृद्वांवृधानः। त्रिभिर्देवैस्त्रिष्शता वर्ज्ञंबाहुः। ज्ञ्चानं वृत्रं वि दुरों ववार। नराशरसः प्रतिशूरो मिमानः। तनूनपात्प्रति यज्ञस्य धामं। गोभिर्वपावान्मध्ना सम्अन्। हिरंण्येश्चन्द्री यजिति प्रचेताः। ईडितो देवैर्हिरंवार अभिष्टिः। आजुह्वांनो ह्विषा शर्धमानः॥३९॥

पुरन्दरो मघवान् वर्ज्ञबाहुः। आयांतु यज्ञमुपेनो जुषाणः। जुषाणो बर्हिर्हरिवान्न इन्द्रेः। प्राचीन सीदत्प्रदिशां पृथिव्याः। उरुव्यचाः प्रथंमान स्योनम्। आदित्यैर्क्तं वसुंभिः सजोषाः। इन्द्रं दुरंः कवृष्यो धावंमानाः। वृषाणं यन्तु जनेयः सुपत्नीः। द्वारो देवीर्भितो विश्रंयन्ताम्। सुवीरां वीरं प्रथंमाना महोभिः॥४०॥

उषासानक्तां बृह्ती बृहन्तम्। पर्यस्वती सुदुधे शूरिमन्द्रम्। पेशंस्वती तन्तुंना संव्ययंन्ती। देवानां देवं यंजतः सुरुको। देवा मिमाना मनसा पुरुत्रा। होतांराविन्द्रं प्रथमा सुवाचां। मूर्धन् यज्ञस्य मधुंना दर्धाना। प्राचीनं ज्योतिंह्विषां वृधातः। तिस्रो देवीर्ह्विषा वर्धमानाः। इन्द्रं जुषाणा वृषणं न पत्नीः॥४१॥

अच्छिन्नं तन्तुं पर्यसा सरंस्वती। इडां देवी भारंती विश्वतूँर्तिः। त्वष्टा दध्दिन्द्रांय शुष्मम्। अपाकोचिष्टुर्यशसे पुरूणि। वृषा यजन्वृषणं भूरिरेताः। मूर्धन् यज्ञस्य समनक्तु देवान्। वनस्पतिरवंसृष्टो न पाशैः। त्मन्यां सम्अञ्छंिमृता न देवः। इन्द्रंस्य ह्व्यैर्जुठरंं पृणानः। स्वदांति ह्व्यं मधुना घृतेनं। स्तोकानामिन्दुं प्रति शूर इन्द्रंः। वृषायमाणो वृष्भस्तुंराषाट्। घृतप्रुषा मधुना ह्व्यमुन्दन्। मूर्धन् यज्ञस्यं जुषता् इं स्वाहां॥४२॥

शर्धमानो महोंभिः पत्नीर्घृतेनं चत्वारिं च॥————[८]

आचंर्षणिप्रा विवेष यन्मां। त॰ स्प्रीचींः। स्त्यिमित्तन्न त्वावा॰ अन्यो अस्ति। इन्द्रं देवो न मर्त्यो ज्यायान्। अहन्निहं परिशयांनुमर्णः। अवांसृजोऽपो अच्छां समुद्रम्। प्रसंसाहिषे पुरुहूत शत्रूनं। ज्येष्ठंस्ते शुष्मं इह रातिरंस्तु। इन्द्रा भंर दक्षिंणेना वसूंनि। पितः सिन्धूंनामिस रेवतींनाम्। स शेवृंध्मिधं धाद्युम्नम्से। मिहं क्षत्रं जनाषाडिंन्द्र तव्यम्। रक्षां च नो मुघोनः पाहि सूरीन्। राये चं नः स्वपत्या इषे धाः॥४३॥

रेवतीनां चत्वारिं च॥

[6]

देवं ब्रहिरिन्द्र र सुदेवं देवैः। वीरवंध्स्तीर्णं वेद्यांमवर्धयत्। वस्तौर्वृतं प्राक्तौर्भृतम्। राया ब्रहिष्मृतोऽत्यंगात्। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु यजं। देवीर्द्वार् इन्द्र र सङ्घाते। विङ्वीर्यामंन्नवर्धयन्। आ वृथ्सेन् तरुणेन कुमारेणं चमीविता अपार्वाणम्। रेणुकंकाटं नुदन्ताम्। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं॥४४॥

देवी उषासानक्तां। इन्ह्रं यज्ञे प्रयत्यंह्वेताम्। दैवीर्विशः प्रायांसिष्टाम्। सुप्रींते सुधिते अभूताम्। वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यजां। देवी जोष्ट्री वसुंधिती। देविमन्द्रंमवर्धताम्। अयांव्यन्याघा द्वेषा सि। आन्यावांक्षीद्वसु वार्याणि। यजांमानाय शिक्षिते॥४५॥

वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यजं। देवी ऊर्जाहंती दुघें सुदुघें। पयसेन्द्रंमवर्धताम्। इष्मूर्जम्नयाऽवांक्षीत्। सग्धिः सपीतिमन्या। नवेन् पूर्वं दयमाने। पुराणेन् नवम्। अधांतामूर्जमूर्जाहुंती वसु वार्याणि। यजंमानाय शिक्षिते। वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यजं॥४६॥

देवा दैव्या होतांरा। देविमन्द्रंमवर्धताम्। हृताघंशश्सावा-भांष्टां वसुवार्याणि। यजंमानाय शिक्षितौ। वसुवनं वसुधेयंस्य वीतां यजं। देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीः। पितिमिन्द्रंमवर्धयन्। अस्पृक्षद्भारती दिवम्। रुद्रैर्यज्ञश्सरंस्वती। इडा वसुंमती गृहान्॥४७॥

वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं। देव इन्द्रो नराश १ संः। त्रिव्रूथिस्रिवन्धुरः। देविमन्द्रं मवर्धयत्। शतेनं शिति-पृष्ठानामाहितः। सहस्रेण प्रवर्तते। मित्रावरुणेदंस्य होत्रमर्हतः। बृह्स्पितिः स्तोत्रम्। अश्विनाऽऽध्वर्यवम्। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु यजं॥४८॥

देव इन्द्रो वन्स्पतिः। हिरंण्यपर्णो मधुंशाखः सुपिप्पलः। देविमन्द्रंमवर्धयत्। दिव्मग्रंणाप्रात्। आऽन्तिरक्षं पृथिवीमंद्दश्तित्। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु यजं। देवं बर्हिवीरितीनाम्। देविमन्द्रंमवर्धयत्। स्वासस्थिमिन्द्रेणा-संन्नम्। अन्या बर्ही इष्यभ्यंभूत्। वसुवनं वसुधेयस्यं वेतु यजं। देवो अग्निः स्विष्टकृत्। देविमन्द्रंमवर्धयत्। स्विष्टं कुर्वन्थ्रिस्वंष्टकृत्। स्विष्टम्द्य करोतु नः। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु यजं॥४९॥

वियन्तु यजं शिक्षिते शिक्षिते वंसुवने वसुधेयंस्य वीतां यजं गृहान् वेतु यजांभृथ्यद्वं (देवं बर्गृहिर्देवीद्वारीं देवी उपासानक्तां देवी जोष्टीं देवी ऊर्जाहंती देवा दैव्या होतांरा शिक्षितौ देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीर्देव इन्द्रो नराशश्सों देव इन्द्रो वनस्पतिंदेंवं बर्गृहिर्वारितीनान्देवो अग्निः स्विष्टकृद्देवम्। वेतु वियन्तु चतुर्वीतामेकों वियन्तु चतुर्वेत्ववर्धयदवर्धयन्त्रिरंवर्धतामेकोंऽ वर्धयश्रश्चतुरंवर्धयत्। वस्तोरा वृथ्सेन् देवीरयावीपश्हताऽस्पृक्षच्छतेन् दिवश् स्वासस्थश् स्विष्टश् शिक्षिते शिक्षिते शिक्षितौ॥)॥———[१०]

होतां यक्षथ्समिधाऽग्निमिडस्पदे। अश्विनेन्द्र स्र सरंस्वतीम्। अजो धूम्रो न गोधूमैः क्वंलैर्भेषजम्। मधु शष्पैनं तेजं इन्द्रियम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्ष्तत्तनूनपाथ्सरंस्वती। अविर्मेषो न भेष्जम्। पथा मधुंमताभंरन्। अश्विनेन्द्रांय वीर्यम्॥५०॥

बदंरैरुपवाकांभिर्भेषुजं तोकांभिः। पयः सोमः परिस्नुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षं नराशरसं न नग्नहुम्। पतिर् सुरांये भेषजम्। मेषः सरंस्वती भिषक्। रथो न चन्द्र्यंश्विनौर्वपा इन्द्रंस्य वीर्यम्। बदंरैरुपवाकांभिर्भेषुजं तोकांभिः। पयः सोमः परिस्नुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होतर्यजं॥५१॥

होतां यक्षिदिडेडित आजुह्वांनः सरंस्वतीम्। इन्द्रं बलेन वर्धयन्। ऋषभेण गवेन्द्रियम्। अश्विनेन्द्रांय वीर्यम्। यवैः कर्कन्धुंभिः। मधुं लाजैर्न मासंरम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्यंजं। होतां यक्षद्धर्हिः सुष्टरीमोर्णमदाः। भिषङ्गासंत्या॥५२॥

भिषजाऽश्विनाऽश्वा शिशुंमती। भिषग्धेनुः सरंस्वती। भिषग्दुह इन्द्रांय भेषजम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षद्दुरो दिशः। कृव्ष्यों न व्यचंस्वतीः। अश्विभ्यां न दुरो दिशः। इन्द्रो न रोदंसी दुधै। दुहे कामान्थ्सरंस्वती॥५३॥

अश्विनेन्द्रांय भेषजम्। शुक्रं न ज्योतिंरिन्द्रियम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षथ्सुपेशंसोषे नक्तं दिवां। अश्विनां सञ्जानाने। समं जाते सरंस्वत्या। त्विषिमिन्द्रे न भेषजम्। श्येनो न रजंसा हृदा। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं॥५४॥

वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षद्दैव्या होतांरा भिषजाऽश्विनां। इन्द्रं न जागृंवी दिवा नक्तं न भेषजेः। शूष्ट्रं सरंस्वती भिषक्। सीसेन दुह इन्द्रियम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षत्तिस्रो देवीर्न भेषजम्। त्रयंस्त्रिधातंवोऽपसंः। रूपिनन्द्रं हिरण्ययम्॥५५॥

अश्विनेडा न भारंती। वाचा सरंस्वती। मह् इन्द्रांय दध्रिन्द्रियम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मध्रं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्यंजं। होतां यक्षत्त्वष्टांरिमन्द्रमश्विनां। भिषजुं न सरंस्वतीम्। ओजो न जूतिरिंन्द्रियम्। वृको न रंभुसो भिषक्। यशः सुरंया भेषजम्॥५६॥

श्रिया न मासंरम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षद्वनस्पतिम्। शमितार श्रे शतक्रतुम्। भीमं न मृन्यु राजांनं व्याघ्रं नमंसाऽश्विना भामम्। सरंस्वती भिषक्। इन्द्रांय दुह इन्द्रियम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं॥५७॥

होतां यक्षद्ग्निः स्वाहाऽऽज्यंस्य स्तोकानांम्। स्वाहा मेदंसां पृथंक्। स्वाहा छागंमिश्विभ्यांम्। स्वाहां मेषः सरंस्वत्ये। स्वाहंर्ष्भिमिन्द्रांय सिःश्हाय सहंसेन्द्रियम्। स्वाहाऽग्निं न भेषजम्। स्वाहा सोमंमिन्द्रियम्। स्वाहेन्द्रः सुत्रामाणः सिवतारं वरुणं भिषजां पितम्। स्वाहा वनस्पितं प्रियं पाथो न भेषजम्। स्वाहां देवाः आंज्यपान्॥५८॥

स्वाह् । प्रिम्न होत्राञ्जंषाणो अग्निर्भेष् जम्। पयः सोमः पिर्म्नुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यंजं। होतां यक्षदिश्वना सरंस्वतीमिन्द्रः सुत्रामाणम्। इमे सोमाः सुरामाणः। छागैर्न मेषेर्ऋष्भेः सुताः। शष्पैर्न तोकांभिः। लाजैर्महंस्वन्तः। मदा मासंरेण परिष्कृताः। शुक्राः पर्यस्वन्तोऽमृताः। प्रस्थिता वो मधुश्चतः। तानिश्वना सरंस्वतीन्द्रः सुत्रामां वृत्रहा। जुषन्ताः सौम्यं मधुं। पिबंन्तु मदंन्तु वियन्तु सोमम्। होत्र्यजं॥५९॥

वीर्यं वियन्त्वाज्यंस्य होत्यंज् नासंत्या सरंस्वती मधुं हिर्ण्ययं भेष्जं वियन्त्वाज्यंस्य होत्यंजांज्यपानमृताः पश्चं च (समिधाऽग्निः षट्। तनूनपांथ्सप्त। नराशःसमृषिः। इडेडितो यवैर्ष्टो। बर्हः सप्त। दुरोऽश्विना नवं। सुपेश्सर्षिः। दैव्या होतांरा सीसेन रसंः। तिस्रस्त्वष्टांरमृष्टावंष्टो। वनस्पतिमृषिः। अग्नित्रयोदश। अश्विना द्वादंश त्रयोदश। समिधाऽग्निं बदंरै्बंदंरै्यंवैर्श्विना त्विषिमृश्विना न भेष्जः रूपमृश्विनां भीमं भामम्॥)॥———[११]

सिमिंद्धो अग्निरंश्विना। तृप्तो घूर्मो विरादथ्सुतः। दुहे धेनुः सरंस्वती। सोमर्थ शुक्रमिहेन्द्रियम्। तृनूपा भिषजां सुते। अश्विनोभा सरंस्वती। मध्वा रजारंसीन्द्रियम्। इन्द्रांय पृथिभिर्वहान्। इन्द्रायेन्दुर् सरंस्वती। नराशरसेन नुग्नहुं:॥६०॥

अधांताम्श्विना मधुं। भेषजं भिषजां सुते। आजुह्वांना सरंस्वती। इन्द्रांयेन्द्रियाणि वीर्यम्। इडांभिरश्विनाविषम्। समूर्ज्र सर र्यिं दंधुः। अश्विना नमुंचेः सुतम्। सोमर् शुक्रं पंरिस्रुतां। सरंस्वती तमाभंरत्। बर्हिषेन्द्रांय पातंवे॥६१॥

कुवृष्यों न व्यर्चस्वतीः। अश्विभ्यां न दुरो दिशंः। इन्द्रो न रोदंसी दुधं। दुहे कामान्थ्सरंस्वती। उषासा नक्तंमश्विना। दिवेन्द्र सायमिन्द्रियेः। सञ्जानाने सुपेशंसा। समं जाते सरंस्वत्या। पातं नो अश्विना दिवां। पाहि नक्त सरस्वति॥६२॥

दैव्यां होतारा भिषजा। पातिमन्द्र सर्चां सुते। तिस्रस्रेधा

सरंस्वती। अश्विना भारतीडाँ। तीव्रं पेरिस्रुता सोमम्ँ। इन्द्रांय सुषवुर्मदम्ँ। अश्विना भेषजं मधुं। भेषजं नः सरंस्वती। इन्द्रे त्वष्टा यशः श्रियम्ँ। रूप १ रूपमधुः सुते। ऋतुथेन्द्रो वनस्पतिः। शशमानः पेरिस्रुताँ। कीलालमश्विभ्यां मधुं। दुहे धेनुः सरंस्वती। गोभिनं सोममश्विना। मासंरेण परिष्कृताँ। समधाता १ सरंस्वत्या। स्वाहेन्द्रे सुतं मधुं॥६३॥

नुग्रहुः पातंवे सरस्वत्यधुः सुतेँऽष्टौ चं॥————[१२]

अश्विनां ह्विरिन्द्रियम्। नमुंचेर्धिया सरंस्वती। आ शुक्रमांसुराद्वसु। मुघमिन्द्रांय जिभ्रेरे। यमश्विना सरंस्वती। ह्विषेन्द्रमवंर्धयन्। स बिंभेद वृतं मुघम्। नमुंचावासुरे सर्चां। तिमन्द्रं पृशवः सर्चां। अश्विनोभा सरंस्वती॥६४॥

दधांना अभ्यंनूषत। हृविषां यज्ञिमिन्द्रियम्। य इन्द्रं इन्द्रियं द्धुः। सृविता वर्रुणो भगः। स सुत्रामां हृविष्पंतिः। यजमानाय सश्चत। सृविता वर्रुणोऽदधंत्। यजमानाय दाशुषें। आदंत्त नमुंचेर्वसुं। सुत्रामा बलंगिन्द्रियम्॥६५॥

वर्रणः क्षत्रमिन्द्रियम्। भगेन सिवता श्रियम्। सुत्रामा यशंसा बलम्। दधांना यज्ञमांशत। अश्विंना गोभिरिन्द्रियम्। अश्वेभिर्वीर्यं बलम्। हिविषेन्द्रक् सरंस्वती। यजंमानमवर्धयन्। ता नासंत्या सुपेशंसा। हिरंण्यवर्तनी नराँ। सरंस्वती हिविष्मंती। इन्द्र कर्मसु नोऽवत। ता भिषजां सुकर्मणा। सा सुद्घा सरंस्वती। स वृत्रहा शृतक्रंतुः। इन्द्रांय दधुरिन्द्रियम्॥६६॥

उभा सर्रस्वती बलिमिन्द्रियन्नरा षद्वं॥———[१३]

देवं ब्र्हिः सरंस्वती। सुदेविमन्द्रं अश्विनां। तेजो न चक्षुंरक्ष्योः। ब्र्हिषां दध्रिन्द्रियम्। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं। देवीर्द्वारों अश्विनां। भिषजेन्द्रे सरंस्वती। प्राणं न वीर्यन्नसि। द्वारों दध्रिन्द्रियम्। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं॥६७॥

देवी उषासांविश्वनां। भिषजेन्द्रे सरंस्वती। बलं न वार्चमास्यें। उषाभ्यां दध्रिन्द्रियम्। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यर्ज। देवी जोष्टीं अश्विनां। सुत्रामेन्द्रे सरस्वती। श्रोत्रं न कर्णयोर्यशंः। जोष्ट्रींभ्यां दध्रिन्द्रियम्। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यर्ज॥६८॥

देवी ऊर्जाहुंती दुघे सुदुघें। पयसेन्द्र सरंस्वत्यश्विनां भिषजांवत। शुक्रं न ज्योतिः स्तनंयोराहुंती धत्त इन्द्रियम्। वसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यजं। देवा देवानां भिषजां। होतांराविन्द्रंमश्विनां। वषद्भारेः सरंस्वती। त्विष्ं न हृदंये मृतिम्। होतृंभ्यां दधुरिन्द्रियम्। वसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यजं॥६९॥

देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीः। सर्रस्वत्यश्विना भारतीडाँ।

शूषत्र मध्ये नाभ्यांम्। इन्द्रांय दध्रिन्द्रियम्। वसुवनें वसुधेयंस्य वियन्तु यजां। देव इन्द्रो नराशश्साः। त्रिवरूथः सरंस्वत्याऽश्विभ्यांमीयते रथाः। रेतो न रूपममृतंं जनित्रम्। इन्द्रांय त्वष्टा दर्धदिन्द्रियाणि। वसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यजां॥७०॥

देव इन्द्रो वनस्पतिः। हिरंण्यपर्णो अश्विभ्याम्। सरंस्वत्याः सुपिप्पलः। इन्द्रांय पच्यते मधुं। ओजो न जूतिमृष्भो न भामम्। वनस्पतिनीं दर्धदिन्द्रियाणि। वसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यजे। देवं बर्हार्वारितीनाम्। अध्वरे स्तीर्णमृश्विभ्यांम्। ऊर्णम्रदाः सरंस्वत्याः॥७१॥

स्योनिमंद्र ते सदं। ईशायै मृन्यु राजांनं बर्हिषां दध्रिन्द्रियम्। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं। देवो अग्निः स्विष्टकृत्। देवान् यंक्षद्यथायथम्। होतांराविन्द्रंमिश्वनां। वाचा वाच् सरंस्वतीम्। अग्नि सोम इं स्विष्टकृत्। स्विष्ट इन्द्रंः सुत्रामां सिवता वरुंणो भिषक्। इष्टो देवो वनस्पतिंः। स्विष्टा देवा आंज्यपाः। इष्टो अग्निर्ग्निनां। होतां होत्रे स्विष्टकृत्। यशो न दधंदिन्द्रियम्। ऊर्ज्मपंचिति इं स्वधाम्। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं॥७२॥

द्वारों दध्रिरिन्द्रियं वंसुवनें वसुधेयंस्य वियन्तु यज् जोष्ट्रींभ्यां दध्रिरिन्द्रियं वंसुवनें वसुधेयंस्य वियन्तु यज् होर्तृभ्यां दध्रिरिन्द्रियं वंसुवनें वसुधेयंस्य वियन्तु यजैन्द्रियाणिं वसुवनें वसुधेयंस्य वियन्तु यज् सरंस्वत्या वनस्पतिः षद्वं (देवं बुर्हिर्देवीद्वारीं देवी उषासांवृश्विनां देवी जोष्ट्रीं देवी ऊर्जाहुंती देवा देवानां भिषजां वषद्वारैर्देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीर्देव इन्द्रो नराशश्सो देव इन्द्रो वनस्पतिर्देवं बर्हिवारितीनान्देवो अग्निः स्विष्टकृद्देवान्। समिधाऽग्निं देवं बर्हिः सरंस्वत्यश्विना सर्वं वियन्तु। द्वारंस्तिस्रः सर्ववियन्तु। अज इन्द्रमोजोऽग्निं परः सरंस्वतीम्। नक्तं पूर्वः सरंस्वति। अन्यत्र सरंस्वती। भिषक्पूर्वं दुह इन्द्रियम्। अन्यत्रं दध्रिरिन्द्रियम्। सौत्रामण्याश् संतासुती। अञ्चन्त्ययं यर्जमानः॥)॥——[१४]

अग्निम् होतांरमवृणीत। अय स्रुतासुती यर्जमानः। पर्चन्पुत्तीः। पर्चन्पुरोडाशान्। गृह्णन्ग्रहान्। ब्रध्ननिश्चिभ्यां छागु सरंस्वत्या इन्द्रांय। ब्रध्नन्थ्यरंस्वत्ये मेषिनद्रांयाश्विभ्यांम्। ब्रधन्निन्द्रांयर्षभम्श्विभ्याः सरंस्वत्ये। सूपस्था अद्य देवो वनस्पतिरभवत्। अश्विभ्यां छागेन् सरंस्वत्या इन्द्रांय॥७३॥

सरंस्वत्ये मेषेणेन्द्रांयाश्विभ्यांम्। इन्द्रांयर्ष्भेणाश्विभ्याः सरंस्वत्ये। अक्षः स्तान्मंदस्तः प्रतिपच्ताग्रंभीषः। अवीवृधन्त ग्रहैंः। अपाताम्श्विना सरंस्वतीन्द्रः सुत्रामां वृत्रहा। सोमान्थ्युराम्णः। उपो उक्थामदाः श्रौद्विमदां अदन्। अवीवृधन्ताङ्गूषैः। त्वाम् द्यर्षं आर्षेयर्षीणान्नपादवृणीत। अयः सुंतासुती यजंमानः। बहुभ्य आ सङ्गंतेभ्यः। एष में देवेषु वसु वार्या यंक्ष्यत् इतिं। ता या देवा देवदानान्यदुः। तान्यस्मा आ च शास्वं। आ चं गुरस्व। इषितश्चं होत्रसिं भद्रवाच्यांय प्रेषितो मानुषः। सूक्तवाकायं सूक्ता ब्रूहि॥७४॥

इन्द्रांय यजंमानः सुप्त चं॥\_\_\_\_

उशन्तंस्त्वा हवामह् आ नो अग्ने सुकेतुनां। त्वर सोम महे भगं त्वर सोम प्रचिकितो मनीषा। त्वया हि नेः पितरं सोम पूर्वे त्वर सोम पितृभिः संविदानः। बर्हिषदः पितर् आऽहं पितृन्। उपहूताः पितरोऽग्निष्वात्ताः पितरः। अग्निष्वात्तानृतुमतो हवामहे। नराशरसे सोमपीथं य आशुः। ते नो अर्वन्तः सुहवां भवन्तु। शं नो भवन्तु द्विपदे शं चतुष्पदे। ये अग्निष्वात्ता येऽनंग्निष्वात्ताः॥७५॥

अर्श्होमुर्चः पितरंः सोम्यासंः। परेऽवंरेऽमृतांसो भवंन्तः। अधि ब्रुवन्तु ते अवन्त्वस्मान्। वान्यांयै दुग्धे जुषमांणाः कर्म्भम्। उदीरांणा अवंरे परे च। अग्निष्वात्ता ऋतुभिः संविदानाः। इन्द्रंवन्तो ह्विरिदं जुषन्ताम्। यदंग्ने कव्यवाहन् त्वमंग्न ईडितो जांतवेदः। मातंली कव्यैः। ये तांतृपुर्देवृत्रा जेहंमानाः। होत्रावृधः स्तोमंतष्टासो अर्कैः। आऽग्ने याहि सुविदत्रेभिर्वाङ्। सत्यैः कव्यैः पितृभिर्धर्मसिद्धः। ह्व्यवाहंमुजरं पुरुप्रियम्। अग्निं घृतेनं ह्विषां सप्यन्। उपांसदं कव्यवाहं पितृणाम्। स नः प्रजां वीरवंतीः समृण्वतु॥७६॥

अनंग्निष्वात्ता जेहंमानाः सुप्त चं॥

-[१६]

होतां यक्षदिडस्पदे। समिधानं महद्यशंः। सुषीमद्धं वरैण्यम्। अग्निमिन्द्रं वयोधसम्। गायत्रीं छन्दे इन्द्रियम्। त्र्यविं गां वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्रयजं। होतां यक्षुच्छुचिंव्रतम्। तनूनपातमुद्भिदम्। यं गर्भमदिंतिर्दधे॥७७॥

शुचिमिन्द्रं वयोधसम्। उष्णिहं छन्दं इन्द्रियम्। दित्यवाहं गां वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षदीडेन्यम्। ईडितं वृत्रहन्तंमम्। इडाभिरीड्यक् सहं। सोम्मिन्द्रं वयोधसम्। अनुष्टुभं छन्दं इन्द्रियम्। त्रिवृथ्सं गां वयो दर्धत्॥७८॥

वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्रयंजं। होतां यक्षथ्सुबर्हिषदम्ं। पूषण्वन्तममंत्र्यम्। सीदंन्तं बर्हिषं प्रिये। अमृतेन्द्रं वयोधसम्। बृह्तीं छन्दं इन्द्रियम्। पश्चांविं गां वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्रयंजं। होतांयक्ष्रद्यचंस्वतीः। सुप्रायणा ऋतावृधंः॥७९॥

द्वारों देवीर्हिर्ण्ययीः। ब्रह्माण् इन्द्रं वयोधसम्। पृङ्किं छन्दं इहेन्द्रियम्। तुर्यवाहं गां वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्यस्य होत्यज्ञं। होतां यक्षथ्सुपेशंसे। सुशित्ये बृह्ती उभे। नक्तोषासा न दंर्शते। विश्वमिन्द्रं वयोधसम्। त्रिष्टुमं छन्दं इन्द्रियम्॥८०॥

पृष्ठवाहुं गां वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्यस्य होतर्यजी होता यक्षत्प्रचेतसा। देवानांमुत्तमं यर्शः। होतांरा दैव्यां क्वी। स्युजेन्द्रं वयोधसम्। जर्गतीं छन्दं इहेन्द्रियम्। अनुङ्वाह्ं गां वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्यस्य होतुर्यजे। होतां यक्षत्पेशस्वतीः॥८१॥

तिस्रो देवीरहिंरुण्ययीः। भारंतीर्बृह्तीर्म्हीः। पितृमिन्द्रं वयोधसम्। विराजं छन्दं इहेन्द्रियम्। धेनुं गां न वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्यस्य होत्र्यजं। होतां यक्षथ्सुरेतंसम्। त्वष्टांरं पृष्टिवर्धनम्। रूपाणि बिभ्रंतं पृथंक्। पृष्टिमिन्द्रं वयोधसम्॥८२॥

द्विपदं छन्दं इहेन्द्रियम्। उक्षाणं गां न वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षच्छ्रतक्रंतुम्। हिरंण्य-पर्णमुक्थिनम्। रशनां बिभ्रंतं वृशिम्। भगमिन्द्रं वयोधसम्। क्कुभं छन्दं इहेन्द्रियम्। वृशां वेहतं गां न वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्ष्यस्वाहांकृतीः। अग्निं गृहपंतिं पृथंक्। वरुणं भेषजं क्विम्। क्षुत्रमिन्द्रं वयोधसम्। अतिंच्छन्दसं छन्दं इन्द्रियम्। बृहदंषभं गां वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं॥८३॥

द्धे दर्धरतावृधं इन्द्रियं पेशंस्वतीर्वयोधसं वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यंजं सप्त चं (इडस्प्दैं-ऽग्निङ्गांयुत्रीत्र्यविम्ं। शुचिंवृत् शुचिंमुण्णिहंन्दित्यवाहम्ं। ईडेन्य् सोमंमनुष्टुभं त्रिवृथ्सम्। सुब्रृह्षिदंममृतेन्द्रं बृह्तीं पश्चांविम्। व्यचंस्वतीः सुप्रायुणा द्वारौं ब्रह्माणंः पृङ्किमिह तुंर्यवाहम्ं। सुपेशंसे विश्वमिन्द्रं त्रिष्टुभं पष्टवाहम्ं। प्रचेतसा स्युजेन्द्रं जगंतीमिहानुङ्गाहम्ं। पेशंस्वतीस्तिस्रः पतिं विराजंमिह धेनुत्र। सुरेतंस-त्वष्टांरं पृष्टिमिन्द्रं द्विपदंमिहोक्षाणृत्र। शतकंतुं भगमिन्द्रं

कुकुर्भमिह वृशान्न। स्वाहांकृतीः क्षुत्रमितंच्छन्दसं बृहदंष्भं गां वयो दर्धदिन्द्रियमृषिं वसु नवं दशेहेंन्द्रियमष्टं नव दश् गां न वयो दर्धदिङस्पदे सर्वं वेतु॥)॥————[१७]

सिमंद्धो अग्निः स्मिधां। सुषंमिद्धो वरेण्यः। गायत्री छन्दं इन्द्रियम्। त्र्यविगींवयों दधुः। तनूनपाच्छुचिंव्रतः। तनूपाच् सरंस्वती। उष्णिक्छन्दं इन्द्रियम्। दित्यवाङ्गोर्वयों दधुः। इडांभिरुग्निरीड्यः। सोमों देवो अमंत्र्यः॥८४॥

अनुष्टुप्छन्दं इन्द्रियम्। त्रिव्थ्सो गौर्वयो दधुः। सुब्रहिर्ग्निः पूष्णवान्। स्तीर्णबर्हिरमंत्र्यः। बृह्ती छन्दं इन्द्रियम्। पश्चांविर्गीर्वयो दधुः। दुरो देवीर्दिशो महीः। ब्रह्मा देवो बृह्स्पतिः। पुङ्किश्छन्दं इहेन्द्रियम्। तुर्यवाङ्गौर्वयो दधुः॥८५॥

उषे यह्वी सुपेशंसा। विश्वें देवा अमंर्त्याः। त्रिष्टुप्छन्दं इन्द्रियम्। पृष्ठवाद्गौर्वयों दधुः। दैव्यां होतारा भिषजा। इन्द्रेंण स्युजां युजा। जगंती छन्दं इहेन्द्रियम्। अनुङ्वान्गौर्वयों दधुः। तिस्र इडा सरंस्वती। भारंती मुरुतो विशेः॥८६॥

विराद्धन्दं इहेन्द्रियम्। धेनुर्गौर्न वयो दधः। त्वष्टां तुरीपो अद्भंतः। इन्द्राग्नी पृष्टिवर्धना। द्विपाच्छन्दं इहेन्द्रियम्। उक्षा गौर्न वयो दधः। श्रामिता नो वनस्पितः। स्विता प्रस्वन्भगम्। कुकुच्छन्दं इहेन्द्रियम्। वृशा वेहद्गौर्न वयो दधः। स्वाहां यृज्ञं वर्रुणः। सुक्षत्रो भेषुजं करत्। अतिच्छन्दाश्छन्दं इन्द्रियम्। बृहदंष्मो गौर्वयो दधः॥८७॥

अमंर्त्यस्तुर्यवाङ्गोर्वयो दधुर्विशो वृशा वे्हद्गौर्न वयो दधुश्चत्वारि च॥———[१८]

वसन्तेन्त्नी देवाः। वसंविश्चिवृतौ स्तुतम्। रथन्तरेण् तेजंसा। ह्विरिन्द्रे वयो दधुः। ग्रीष्मेणं देवा ऋतुनौ। रुद्राः पंश्चद्रशे स्तुतम्। बृह्ता यशंसा बलम्। ह्विरिन्द्रे वयो दधुः। वर्षाभिर्ऋतुनांऽऽदित्याः। स्तोमे सप्तद्रशे स्तुतम्॥८८॥

वैरूपेण विशोजंसा। ह्विरिन्द्रे वयो दधुः। शार्देन्तुनां देवाः। एकविर्श ऋभवंः स्तुतम्। वैराजेनं श्रिया श्रियम्ं। ह्विरिन्द्रे वयो दधुः। हेमन्तेन्तुनां देवाः। मरुतंस्त्रिण्वे स्तुतम्। बलेन् शक्कंरीः सहंः। ह्विरिन्द्रे वयो दधुः। शेशिरेण्तुनां देवाः। त्रयस्त्रिर्शेऽमृतई स्तुतम्। सत्येनं रेवतीः क्षुत्रम्। ह्विरिन्द्रे वयो दधुः॥ रेवतीः क्षुत्रम्। ह्विरिन्द्रे वयो दधुः॥ ८९॥

स्तोमें सप्तद्शे स्तुत सहों ह्विरिन्द्रे वयों दधुश्चत्वारिं च (वस्नतेनं ग्रीष्मेणं वर्षाभिः शार्देनं हेमन्तेनं शैशिरेण षट्॥)॥————[१९]

देवं ब्रिहिरिन्द्रं वयोधसम्। देवं देवमंवर्धयत्। गायित्रिया छन्दंसेन्द्रियम्। तेज इन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु यजं। देवीर्द्वारों देविमन्द्रं वयोधसम्। देवीर्देवमंवर्धयन्। उण्णिहा छन्दंसेन्द्रियम्। प्राणिमन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवनं वसुधेर्यस्य वियन्तु यजं॥९०॥

देवी देवं वंयोधसम्। उषे इन्द्रंमवर्धताम्। अनुष्टुभा छन्दंसेन्द्रियम्। वाचमिन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यर्जं। देवी जोष्टीं देविमन्द्रं वयोधसम्। देवी देवमंवर्धताम्। बृह्त्या छन्दंसेन्द्रियम्। श्रोत्रमिन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवनं वसुधेयंस्य वीतां यर्जं॥९१॥

देवी ऊर्जाहुंती देविमन्द्रं वयोधसम्। देवी देवमंवर्धताम्। पङ्ग्या छन्दंसेन्द्रियम्। शुक्रिमन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवनं वसुधयंस्य वीतां यजं। देवा दैव्या होतांरा देविमन्द्रं वयोधसम्। देवा देवमंवर्धताम्। त्रिष्टुभा छन्दंसेन्द्रियम्। त्विषिमिन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवनं वसुधयंस्य वीतां यजं॥९२॥

देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीवंयोधसम्। पितिमिन्द्रंमवर्धयन्। जगत्या छन्दंसेन्द्रियम्। बलुमिन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं। देवो नराशश्सों देविमन्द्रं वयोधसम्। देवो देवमंवर्धयत्। विराजा छन्दंसेन्द्रियम्। रेत इन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु यजं॥९३॥

देवो वनस्पतिर्देविमिन्द्रं वयोधसम्। देवो देवमंवर्धयत्। द्विपदा छन्दंसेन्द्रियम्। भगमिन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु यजं। देवं बर्हिर्वारितीनां देविमन्द्रं वयोधसम्। देवं देवमंवर्धयत्। कुकुभा छन्दंसेन्द्रियम्। यश् इन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु यजं। देवो अग्निः स्विष्टकृद्देविमन्द्रं वयोधसम्। देवो देवमंवर्धयत्। अतिंच्छन्दसा छन्दंसेन्द्रियम्। क्षत्रिमन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवनं अतिंच्छन्दसा छन्दंसेन्द्रियम्। क्षत्रिमन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवनं

# वसुधेयंस्य वेतु यजं॥९४॥

वियन्तु यर्ज वीतां यर्ज वीतां यर्ज वेतु यर्ज वेतु यर्ज पश्चं च (देवं ब्रुहिर्गायित्रिया तेर्जः। देवीर्द्वारं उष्णिहाँ प्राणम्। देवी देवमुषे अनुष्टभा वाचमं। देवी जोष्ट्रीं बृहत्या श्रोत्रमं। देवी ऊर्जाहंती पृङ्क्या श्रुक्रम्। देवा दैव्या होतांरा त्रिष्टभा त्विषिमं। देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीः पितं जगंत्या बलमं। देवो नराशश्सो विराजा रेतः। देवो वनस्पितिर्द्विपदा भगमं। देवं बर्हिवीरितीनां कुकुभा यर्थः। देवो अग्निः स्विष्टकृदितिंच्छन्दसा क्षुत्रम्। वेतु वियन्तु चतुर्वीतामेको वियन्तु चतुर्वैत्ववर्धयदवर्धयः श्रुत्रतंवर्धतामेको वियन्तु चतुर्वैत्ववर्धयदवर्धयः श्रुत्रतंवर्धतामेको वियन्तु चतुर्वैत्ववर्धयदवर्धयः श्रुत्रतंवर्धतामेको वियन्तु श्रुत्रतंवर्धयत्॥)॥——[२०]

स्वाद्वीं त्वा सोमः सुरांवन्तर् सीसेन मित्रोंऽसि यहेवा होतां यक्षथ्समिधेन्द्रर् सिमंद्ध इन्द्र आचंर्षणिप्रा देवं बुर्हिर्होतां यक्षथ्समिधाऽग्निर सिमंद्धो अग्निरंश्विना-ऽश्विनां हिविरिन्द्रियं देवं बुर्हिः सरंस्वत्यग्निमद्योशन्तो होतां यक्षदिडस्पदे सिमंद्धो अग्निः सिमधां वसन्तेन्त्नां देवं बुर्हिरिन्द्रं वयोधसं विश्वश्वतिः॥२०॥ स्वाद्वीं त्वाऽमीमदन्त पितरः साम्रांज्याय पूतं पवित्रंणोषासानक्ता बदंरैरधांतां देव इन्द्रो वनस्पतिः पष्ठवाहृङ्गां देवी देवं वयोधसं चतुर्नवितिः॥९४॥ स्वाद्वीं त्वां वेतु यजं॥

## हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके षष्ठः प्रपाठकः समाप्तः॥

#### ॥सप्तमः प्रश्नः॥

### ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके सप्तमः प्रपाठकः॥

त्रिवृथ्स्तोमो भवति। ब्रह्मवर्चसं वै त्रिवृत्। ब्रह्मवर्चसमेवावं रुन्थे। अग्निष्टोमः सोमो भवति। ब्रह्मवर्चसं वा अग्निष्टोमः। ब्रह्मवर्चसमेवावं रुन्थे। रथन्तर साम भवति। ब्रह्मवर्चसं वै रथन्तरम्। ब्रह्मवर्चसमेवावं रुन्थे। परिस्रुजी होतां भवति॥१॥

अरुणो मिंर्मिरस्त्रिश्ंकः। एतद्वै ब्रंह्मवर्चसस्यं रूपम्। रूपेणैव ब्रंह्मवर्चसमवं रुन्थे। बृह्स्पतिरकामयत देवानां पुरोधां गंच्छेयमिति। स एतं बृहस्पतिस्वमंपश्यत्। तमाऽहंरत्। तेनांयजत। ततो वै स देवानां पुरोधामंगच्छत्। यः पुरोधाकांमः स्यात्। स बृहस्पतिस्वनं यजेत॥२॥

पुरोधामेव गंच्छति। तस्यं प्रातः सवने सन्नेषुं नाराश्र्थसेषुं। एकांदश् दक्षिंणा नीयन्ते। एकांदश् माध्यं दिने सर्वने सन्नेषुं नाराश्र्थसेषुं। एकांदश तृतीयसवने सन्नेषुं नाराश्र्थसेषुं। त्रयंस्निश्श्रथ्मम्पंद्यन्ते। त्रयंस्निश्शृद्वै देवताः। देवतां एवावं रुन्धे। अश्वंश्चतुस्त्रिश्शः। प्राजापत्यो वा अश्वंः॥३॥

प्रजापंतिश्चतुस्त्रिष्यो देवतांनाम्। यावंतीरेव देवताः। ता एवावं रुन्धे। कृष्णाजिनेऽभिषिश्चिति। ब्रह्मणो वा एतद्रूपम्। यत्कृष्णाजिनम्। ब्रह्मवर्चसेनैवैन्ष् समर्धयति। आज्येनाभिषिश्चति। तेजो वा आज्यम्। तेजं एवास्मिन्दधाति॥४॥

होतां भवति यजेत् वा अश्वों दधाति॥———[१]

यदाँग्नेयो भवंति। अग्निम्ंखा ह्यृद्धिः। अथ् यत्पौष्णः। पृष्टिर्वे पूषा। पृष्टिर्वेश्यस्य। पृष्टिमेवावं रुन्धे। प्रस्वायं सावित्रः। अथ् यत्त्वाष्ट्रः। त्वष्टा हि रूपाणिं विकरोतिं। निर्वरुणत्वायं वारुणः॥५॥

अथो य एव कश्च सन्थ्सूयतें। स हि वांरुणः। अथ् यद्वैंश्वदेवः। वैश्वदेवो हि वैश्यः। अथ् यन्मांरुतः। मा्रुतो हि वैश्यः। स्प्तैतानिं ह्वी १ षि भवन्ति। स्प्तगंणा वै म्रुतः। पृश्जिः पृष्ठौही मांरुत्या लेभ्यते। विश्वे म्रुतः। विश्वं पृवैतन्मध्यतोंऽभिषिंच्यते। तस्माद्वा पृष विशः प्रियः। विश्वो हि मध्यतोंऽभिषिच्यतें। ऋष्मचर्मेऽध्यभिषिंश्वति। स हि प्रंजनियता। द्ध्राऽभिषिश्चिति। ऊर्ग्वा अन्नाद्यं दिधे। ऊर्जवैनंमन्नाद्यंन समर्धयति॥६॥

वारुणो विद्वै मुरुतोऽष्टौ चं॥\_\_\_\_\_[२]

यदाँग्नेयो भवंति। आग्नेयो वै ब्राँह्मणः। अथ् यथ्सौम्यः। सौम्यो हि ब्राँह्मणः। प्रस्वायैव सांवित्रः। अथ् यद्वांर्हस्पृत्यः। एतद्वे ब्राँह्मणस्यं वाक्पृतीयम्। अथ् यदंग्नीषोमीयः। आग्नेयो वै ब्राँह्मणः। तौ यदा सङ्गच्छेते॥७॥

अर्थ वीर्यावत्तरो भवति। अथु यथ्सारस्वृतः। एतिष्क

प्रत्यक्षं ब्राह्मणस्यं वाक्पतीयम्। निर्वरुणत्वायैव वांरुणः। अथो य एव कश्च सन्थ्सूयते। स हि वांरुणः। अथ् यद्यांवापृथिव्यः। इन्द्रों वृत्रायं वज्रमुदंयच्छत्। तं द्यावांपृथिवी नान्वंमन्येताम्। तमेतेनैव भागधेयेनान्वंमन्येताम्॥८॥

वर्ज्रस्य वा एषोऽनुमानायं। अनुंमतवज्ञः सूयाता इतिं। अष्टाबेतानिं ह्वी १ षिं भवन्ति। अष्टाक्षंरा गायत्री। गायत्री ब्रह्मवर्च्सम्। गायत्रियैव बंह्मवर्च्समवं रुन्थे। हिरण्येन घृतमुत्पुंनाति। तेजंस एव रुचे। कृष्णाजिनेऽभिषिंश्वति। ब्रह्मंणो वा एतदंख्सामयों रूपम्। यत्कृंष्णाजिनम्। ब्रह्मंत्रेवेनंमृख्सामयोरध्यभिषिंश्वति। घृतेनाभिषिंश्वति। तथां वीर्यावत्तरो भवति॥९॥

स्ङ्गच्छेते भाग्धेयेनान्वंमन्येता रूपं चत्वारिं च॥------[3]

न वै सोमेन सोमंस्य स्वौंऽस्ति। ह्तो ह्येषः। अभिष्तो ह्येषः। न हि हृतः सूयतें। सौमी स्तृतविशामा लेभते। सोमो वै रेतोधाः। रेतं एव तद्दंधाति। सौम्यर्चाऽभिषिश्चिति। रेतोधा ह्येषा। रेतः सोमः। रेतं एवास्मिन्दधाति। यत्किं चे राजसूर्यमृते सोमम्। तथ्सर्वं भवति। अषांढं युथ्सु पृतंनासु पप्रिम्। सुवर्षाम्पस्वां वृजनंस्य गोपाम्। भरेषुजाः सुक्षिति स् सुश्रवंसम्। जयन्तं त्वामन् मदेम सोम॥१०॥

रेतः सोमः सप्त चं॥\_\_\_\_\_[४]

यो वै सोमेन सूयतें। स देवस्वः। यः पृशुनां सूयतें। स देवस्वः। य इष्टां सूयतें। स मनुष्यस्वः। एतं वै पृथंये देवाः प्रायंच्छन्। ततो वै सोऽप्यांरण्यानां पशूनामंसूयत। यावंतीः कियंतीश्च प्रजा वाचं वदंन्ति। तासाक् सर्वांसाक् सूयते॥११॥

य एतेन् यजंते। य उं चैनमेवं वेदं। नाराश्र्यस्यर्चाऽभिषिश्चित। मृनुष्यां वै नराश्र्यः। निह्नुत्य वावैतत्।
अथाभिषिश्चित। यित्कं चं राज्यसूर्यमनुत्तरवेदीकम्। तथ्सर्वं
भवित। ये में पश्चाशतंं दृदुः। अश्वांना स्थरतुंतिः। द्युमदेग्ने
मिह् श्रवंः। बृहत्कृधि मुघोनाम्। नृवदंमृत नृणाम्॥१२॥

सूयते स्थस्तुंतिस्रीणि च॥-----[५]

पुष गोंस्वः। षुद्रिश्श उक्थ्यों बृहथ्सांमा। पर्वमाने कण्वरथन्तरं भेवति। यो वै वाज्येर्यः। स सम्राट्थ्स्वः। यो राज्यस्यः। स वंरुणस्वः। प्रजापंतिः स्वाराज्यं परमेष्ठी। स्वाराज्यं गौरेव। गौरिव भवति॥१३॥

य एतेन् यजंते। य उं चैनमेवं वेदं। उभे बृंहद्रथन्तरे भंवतः। तिद्ध स्वारांज्यम्। अयुतं दक्षिंणाः। तिद्धि स्वारांज्यम्। प्रतिधुषाऽभिषिश्चिति। तिद्धि स्वारांज्यम्। अनुंद्धते वेदौं दक्षिणत आंहवनीयंस्य बृह्तः स्तोत्रं प्रत्यभिषिश्चिति। इयं वाव रंथन्तरम्॥१४॥ असौ बृहत्। अनयोर्वेन्मनंन्तर्हितम्भिषिश्चिति।
पृशुस्तोमो वा एषः। तेनं गोस्वः। षृद्विष्ट्शः सर्वः। रेवज्ञातः
सहंसा वृद्धः। क्षुत्राणां क्षत्रभृत्तंमो वयोधाः। महान्मंहित्वे
तंस्तभानः। क्षत्रे राष्ट्रे चं जागृहि। प्रजापंतेस्त्वा परमेष्ठिनः
स्वाराज्येनाभिषिश्चामीत्यांह। स्वाराज्यमेवैनं गमयति॥१५॥

इव भुवति र्थन्तरमाहेकं च॥———[६]

सि्र्हे व्याघ्र उत या पृदांकौ। त्विषिरुग्नौ ब्राँह्मणे सूर्ये या। इन्द्रं या देवी सुभगां जजानं। सा न आग्न्वर्चसा संविदाना। या रांजन्ये दुन्दुभावायंतायाम्। अश्वंस्य ऋन्द्ये पुरुषस्य मायौ। इन्द्रं या देवी सुभगां जजानं। सा न आग्न्वर्चसा संविदाना। या हस्तिनिं द्वीपिनि या हिरंण्ये। त्विषिरश्वंषु पुरुषेषु गोषुं॥१६॥

इन्द्रं या देवी सुभगां ज्जानं। सा न आग्न्वर्चसा संविदाना। रथे अक्षेषुं वृष्भस्य वाजें। वाते पूर्जन्ये वर्रणस्य शुष्में। इन्द्रं या देवी सुभगां ज्जानं। सा न आग्न्वर्चसा संविदाना। राडंसि विराडंसि। सुम्राडंसि स्वराडंसि। इन्द्रांय त्वा तेजंस्वते तेजंस्वन्त श्रीणामि। इन्द्रांय त्वौजंस्वत ओजंस्वन्त श्रीणामि॥१७॥

इन्द्रांय त्वा पर्यस्वते पर्यस्वन्तः श्रीणामि। इन्द्रांय त्वाऽऽयुंष्मत् आयुंष्मन्तः श्रीणामि। तेजोंऽसि। तत्ते प्र यंच्छामि। तेजंस्वदस्तु मे मुखम्ं। तेजंस्वच्छिरों अस्तु मे। तेजंस्वान् विश्वतंः प्रत्यङ्कः। तेजंसा सम्पिपृग्धि मा। ओजोंऽसि। तत्ते प्र यंच्छामि॥१८॥

ओर्जस्वदस्तु में मुखम्ं। ओर्जस्वच्छिरों अस्तु मे। ओर्जस्वान् विश्वतः प्रत्यङ्कः। ओर्जसा सं पिंपृग्धि मा। पयोऽसि। तत्ते प्र यंच्छामि। पयंस्वदस्तु में मुखम्ं। पयंस्वच्छिरों अस्तु मे। पयंस्वान् विश्वतः प्रत्यङ्कः। पयंसा सं पिंपृग्धि मा॥१९॥

आयुंरिस। तत्ते प्र यंच्छामि। आयुंष्मदस्तु मे मुखम्ँ। आयुंष्मच्छिरों अस्तु मे। आयुंष्मान् विश्वतः प्रत्यङ्कः। आयुंषा सं पिंपृग्धि मा। इममंग्र आयुंषे वर्चसे कृधि। प्रिय॰ रेतों वरुण सोम राजन्। मातेवाँस्मा अदिते शर्म यच्छ। विश्वें देवा जरंदष्टिर्यथाऽसंत्॥२०॥

आयुंरिस विश्वायुंरिस। सूर्वायुंरिस सर्वमायुंरिस। यतो वातो मनोजवाः। यतः क्षरंन्ति सिन्धंवः। तासाँ त्वा सर्वासार रुचा। अभिषिश्चामि वर्चसा। समुद्र इंवासि गृह्मनाँ। सोमं इवास्यदाँभ्यः। अग्निरिंव विश्वतः प्रत्यङ्कः। सूर्यं इव ज्योतिषा विभूः॥२१॥

अपां यो द्रवंणे रसंः। तम्हम्स्मा आंमुष्यायणायं। तेजंसे ब्रह्मवर्चसायं गृह्णामि। अपां य ऊर्मी रसंः। तम्हम्स्मा आंमुष्यायणायं। ओजंसे वीर्याय गृह्णामि। अपां यो मध्यतो रसंः। तमहम्समा आंमुष्यायणायं। पृष्ठौं प्रजनंनाय गृह्णामि। अपां यो यज्ञियो रसंः। तमहम्स्मा आंमुष्यायणायं। आयुंषे दीर्घायुत्वायं गृह्णामि॥२२॥

गोष्वोजंस्वन्तः श्रीणाम्योजोऽसि तत्ते प्रयंच्छामि पयंसा सम्पिपृग्धि माऽसंद्विभूर्यज्ञियो रसो द्वे

अभिप्रेहिं वी्रयंस्व। उग्रश्चेत्तां सपत्न्हा। आतिष्ठं मित्र्वर्धनः। तुभ्यं देवा अधिब्रवन्। अङ्कौ न्यङ्कावभित् आतिष्ठं वृत्रहृत्रथम्। आतिष्ठंन्तं पिर् विश्वं अभूषन्। श्रियं वसानश्चरित् स्वरोचाः। महत्तद्स्यासुरस्य नामं। आ विश्वरूपो अमृतांनि तस्थौ। अनु त्वेन्द्रों मद्त्वनु बृहस्पितः॥२३॥

अनु सोमो अन्वग्निरांवीत्। अनुं त्वा विश्वं देवा अंवन्तु। अनुं सप्त राजांनो य उताभिषिंक्ताः। अनुं त्वा मित्रावरुंणाविहावंतम्। अनु द्यावांपृथिवी विश्वशंम्भू। सूर्यो अहोंभिरनुं त्वाऽवतु। चन्द्रमा नक्षंत्रैरनुं त्वाऽवतु। द्यौश्चं त्वा पृथिवी च प्रचेतसा। शुक्रो बृहद्दक्षिणा त्वा पिपर्तु। अनुं स्वधा चिंकिता सोमों अग्निः। आऽयं पृंणक्तु रजंसी उपस्थम्॥२४॥

बृह्स्पतिः सोमों अग्निरेकं च॥\_\_\_\_\_[८]

प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। ता अंस्माथ्सृष्टाः परांचीरायन्।

स पृतं प्रजापंतिरोदनमंपश्यत्। सोऽन्नं भूतोंऽतिष्ठत्। ता अन्यत्रान्नाद्यमिवंत्वा। प्रजापंतिं प्रजा उपावंतिन्त। अन्नंमेवेनं भूतं पश्यंन्तीः प्रजा उपावंतिन्ते। य पृतेन् यजंते। य उं चैनमेवं वेदं। सर्वाण्यन्नानि भवन्ति॥२५॥

सर्वे पुरुषाः। सर्वांण्येवान्नान्यवं रुन्धे। सर्वान्पुरुषान्। राडंसि विराड्सीत्यांह। स्वारांज्यमेवैनं गमयति। यद्धिरंण्यं ददांति। तेज्ञस्तेनावं रुन्धे। यत्तिंसृधन्वम्। वीर्यं तेनं। यदष्ट्रांम्॥२६॥

पुष्टिं तेनं। यत्कंमण्डलुम्ं। आयुष्टेनं। यद्धिरंण्यमा बुध्नातिं। ज्योतिर्वे हिरंण्यम्। ज्योतिरेवास्मिन्दधाति। अथो तेजो वै हिरंण्यम्। तेजं एवाऽऽत्मन्धंत्ते। यदोद्नं प्राश्ञातिं। एतदेव सर्वमवरुध्यं॥२७॥

तदंस्मिन्नेक्धाऽधाँत्। रोहिण्यां कार्यः। यद्ग्राँह्मण एव रोहिणी। तस्मांदेव। अथो वर्ष्मैवैन समानानां करोति। उद्यता सूर्येण कार्यः। उद्यन्तं वा एतस् सर्वाः प्रजाः प्रतिनन्दन्ति। दिदृक्षेण्यो दर्श्ननीयो भवति। य एवं वेदं। ब्रह्मवादिनो वदन्ति॥२८॥

अवेत्यों ऽवभृथा (३) ना (३) इतिं। यद्दंभपुञ्जीलैः प्वयंति। तथ्स्वंदेवावैति। तन्नावैति। त्रिभिः पंवयति। त्रयं इमे लोकाः। एभिरेवैनं लोकैः पंवयति। अथों अपां वा एतत्तेजो वर्चः। यद्दर्भाः। यद्दर्भपुञ्जीलैः प्वयंति। अपामेवैनं तेजंसा वर्चसा-ऽभिषिञ्चति॥२९॥

भुवन्त्यष्ट्रांमवरुध्यं वदन्ति दुर्भा यद्दर्भपुञ्जीलैः पुवयत्येकं च॥\_\_\_\_\_\_[९]

प्रजापंतिरकामयत बहोर्भूयाँन्थस्यामितिं। स एतं पंश्रशार्दीयंमपश्यत्। तमाऽहंरत्। तेनांयजतः। ततो वै स बहोर्भूयांनभवत्। यः कामयेत बहोर्भूयांन्थस्यामितिं। स पंश्रशार्दीयंन यजेतः। बहोरेव भूयांन्भवतिः। मुरुथ्स्तोमो वा एषः। मुरुतो हि देवानां भूयिष्ठाः॥३०॥

बहुर्भविति। य एतेन् यजंते। य उंचैनमेवं वेदं। पश्चशारदीयो भवित। पश्च वा ऋतवंः संवथ्सरः। ऋतुष्वेव संवथ्सरे प्रतिं तिष्ठति। अथो पश्चौक्षरा पङ्किः। पाङ्को यज्ञः। यज्ञमेवावं रुन्थे। सप्तदशः स्तोमा नातिं यन्ति। सप्तदशः प्रजापंतिः। प्रजापंतेरास्यै॥३१॥

भूयिष्ठा यन्ति द्वे चं॥———[१०]

अगस्त्यों मुरुद्धं उक्षणः प्रौक्षंत्। तानिन्द्र आदंत्त।
त एनं वज्रंमुद्यत्याभ्यायन्त। तानगस्त्यंश्चैवेन्द्रंश्च
कयाशुभीयंनाशमयताम्। ताञ्छान्तानुपाँह्वयत। यत्कंयाशुभीयं
भवंति शान्त्यैं। तस्मांदेत ऐन्द्रामारुता उक्षाणंः सवनीयां
भवन्ति। त्रयंः प्रथमेऽहुन्ना लेभ्यन्ते। एवं द्वितीयें। एवं
तृतीयें॥३२॥

पुवं चंतुर्थे। पश्चौत्तमेऽहुन्ना लेभ्यन्ते। वर्षिष्ठमिव् ह्येतदहंः। वर्षिष्ठः समानानां भवति। य एतेन् यजंते। य उंचैनमेवं वेदं। स्वारौज्यं वा एष युज्ञः। एतेन् वा एक्या वां कान्द्मः स्वारौज्यमगच्छत्। स्वारौज्यं गच्छति। य एतेन् यजंते॥३३॥

य उं चैनमेवं वेदं। मारुतो वा एषः स्तोमंः। एतेन् वै मरुतों देवानां भूयिष्ठा अभवन्। भूयिष्ठः समानानां भवति। य एतेन् यजेते। य उं चैनमेवं वेदं। पृश्वशारदीयो वा एष यज्ञः। आ पश्चमात्पुरुषादन्नमित्ति। य एतेन् यजेते। य उं चैनमेवं वेदं। सप्तदशः प्रजापंतिः। प्रजापंतिरेव नैतिं॥३४॥

तृतीयें गच्छति य एतेन् यजंतेऽत्ति य एतेन् यजंते य उं चैनमेवं वेद त्रीणिं च (अगस्त्यः स्वारांज्यं मारुतः पंश्वशार्दीयो वा एष युज्ञः संप्तद्शं प्रजापंतेरेव नैतिं॥)॥———[११]

अस्या जरांसो दमा मृरित्राः। अर्चर्द्धमासो अग्नयः पावकाः। श्विचीचयः श्वात्रासो भुरण्यवः। वनर्षदो वायवो न सोमाः। यजां नो मित्रावरुणा। यजां देवा र ऋतं बृहत्। अग्ने यक्षि स्वन्दमम्। अश्विना पिबंत र सुतम्। दीद्यंग्नी शुचिव्रता। ऋतुनां यज्ञवाहसा॥३५॥

द्वे विरूपे चरतः स्वर्थे। अन्याऽन्यां वृथ्समुपं धापयेते। हरिर्न्यस्यां भवंति स्वधावान्। शुक्रो अन्यस्यां ददशे सुवर्चाः। पूर्वाप्रं चंरतो माययैतौ। शिशू कीर्डन्तौ परिं यातो अध्वरम्। विश्वान्यन्यो भुवंनाऽभि चष्टें। ऋतून्न्यो विदर्धज्ञायते पुनः। त्रीणि शृता त्रीष्हस्राण्यग्निम्। त्रिष्शचं देवा नवं चाऽसपर्यन्॥३६॥

औक्षं घृतैरास्तृंणन्बर्हिरंस्मै। आदिद्धोतांरं न्यंषादयन्त। अग्निनाऽग्निः समिध्यते। कृविर्गृहपंतिर्युवां। हृव्यवाङ्गुह्वांऽऽस्यः। अग्निर्देवानां ज्ठरम्। पूतदंक्षः कृविक्रंतुः। देवो देवेभिरा गंमत्। अग्निश्रियों मुरुतों विश्वकृष्टयः। आ त्वेषमुग्रमवं ईमहे व्यम्॥३७॥

ते स्वानिनों रुद्रियां वर्षिनिणिजः। सिर्हा न हेषक्रंतवः सुदानंवः। यदुंत्तमे मंरुतो मध्यमे वाँ। यद्वांऽवमे सुंभगासो दिवि ष्ठ। ततों नो रुद्रा उत वाऽन्वस्यं। अग्ने वित्ताद्धविषो यद्यजांमः। ईडे अग्निः स्ववंसन्नमोंभिः। इह प्रसप्तो वि चं यत्कृतं नः। रथैरिव प्रभेरे वाज्यद्भिः। प्रदक्षिणिन्म्रुताः स्तोमंमृद्धाम्॥३८॥

श्रुधि श्रुंत्कर्ण् वहिंभिः। देवैरंग्ने स्यावंभिः। आसींदन्तु बर्हिषिं। मित्रो वरुंणो अर्यमा। प्रात्यावांणो अध्वरम्। विश्वेषामदिंतिर्यज्ञियांनाम्। विश्वेषामितिंथिर्मानुंषाणाम्। अग्निर्देवानामवं आवृणानः। सुमृडीको भेवतु विश्ववेदाः। त्वे अग्ने सुमृतिं भिक्षंमाणाः॥३९॥ दिवि श्रवों दिधरे यज्ञियांसः। नक्तां च चुकुरुषसा विरूपे। कृष्णं च वर्णमरुणं च सन्धुः। त्वामंग्न आदित्यासं आस्यम्। त्वां जिह्वा १ शुचंयश्चकिरे कवे। त्वा १ रांतिषाचों अध्वरेषुं सिश्चरे। त्वे देवा ह्विरंदन्त्याहुंतम्। नि त्वां यज्ञस्य साधंनम्। अग्ने होतांरमृत्विजम्। वनुष्वद्देव धीमिह् प्रचेतसम्। जीरं दूतममंर्त्यम्॥४०॥

युज्ञुबाहुसासपूर्यन्वयमृद्धां भिक्षमाणाः प्रचेतस्मेकं च॥————[१२]

तिष्ठा हरी रथ आ युज्यमांना याहि। वायुर्न नियुतों नो अच्छं। पिबास्यन्थों अभिसृष्टो अस्मे। इन्द्रः स्वाहां रिमा ते मदाय। कस्य वृषां सुते सचाँ। नियुत्वाँन्वृष्भो रंणत्। वृत्रहा सोमंपीतये। इन्द्रं वयं मंहाधने। इन्द्रमर्भे हवामहे। युजं वृत्रेषुं विज्ञणम्॥४१॥

द्विता यो वृंत्रहन्तंमः। विद इन्द्रंः श्तकंतुः। उपं नो हरिंभिः सुतम्। स सूर् आजनयं ज्योतिरिन्द्रम्ं। अया धिया त्रणिरद्रिंबर्हाः। ऋतेनं शुष्मी नवंमानो अर्कैः। व्यंस्त्रिधों अस्रो अद्रिंबिभेद। उत्तत्यदाश्वश्वियम्। यदिन्द्र नाहुंषी्ष्वा। अग्रे विक्षु प्रतीदंयत्॥४२॥

भरेष्विन्द्र र्रं सुहवर्रं हवामहे। अर्होमुचर्रं सुकृतं दैव्यं जनम्। अग्निं मित्रं वर्रणर सातये भगम्। द्यावापृथिवी मुरुतः स्वस्तये। मृहि क्षेत्रं पुरुश्चन्द्रं वि विद्वान्। आदिथ्मखिंभ्यश्चरथ् समैरत्। इन्द्रो नृभिंरजन्दीद्यांनः साकम्। सूर्यमुषसं गातुमुग्निम्। उरुं नों लोकमनुं नेषि विद्वान्। सुर्वर्वुङ्योतिरभयः स्वस्ति॥४३॥

ऋष्वा तं इन्द्र स्थविंरस्य बाहू। उपंस्थेयाम शर्णा बृहन्तां। आ नो विश्वांभिरूतिभिः स्जोषाः। ब्रह्मं जुषाणो हर्यश्व याहि। वरींवृज्धस्थविंरेभिः सुशिप्र। अस्मे दधृदृषंणु १ शुष्मंमिन्द्र। इन्द्रांय गावं आशिरम्ं। दुदुहे विज्ञिणे मधुं। यथ्सींमुपह्वरे विदत्। तास्ते विज्ञिन्धेनवों जोजयुर्नः॥४४॥

गर्भस्तयो नियतो विश्ववाराः। अहंरहुर्भूय इञ्जोगुंवानाः। पूर्णा इन्द्र क्षुमतो भोजनस्य। इमां ते धियं प्र भेरे महो महीम्। अस्य स्तोत्रे धिषणा यत्तं आन्जे। तमुंथ्सवे चं प्रस्वे चं सासहिम्। इन्द्रं देवासः शवंसा मदं ननुं॥४५॥

वृज्ञिणमयथ्स्वस्ति जोजयुर्नः सप्त चं॥————[१३

प्रजापंतिः पृशूनंसृजत। तेंऽस्माथ्सृष्टाः परौं च आयन्। तानंग्निष्टोमेन् नाऽऽप्नौत्। तानुक्थ्येन् नाऽऽप्नौत्। तान्थ्योंड्शिना् नाऽऽप्नौत्। तान्नात्रिया् नाऽऽप्नौत्। तान्थ्यन्धिना् नाऽऽप्नौत्। सौऽग्निमंब्रवीत्। इमान्मं ईफ्सेतिं। तानृग्निस्त्रिवृता् स्तोमंन् नाऽऽप्नौत्॥४६॥

स इन्द्रंमब्रवीत्। इमान्मं ईफ्सेतिं। तानिन्द्रंः पश्चद्शेन् स्तोमेन् नाऽऽप्नौत्। स विश्वौन्देवानंब्रवीत्। इमान्मं ईफ्सतेतिं। तान् विश्वेंदेवाः संप्तद्शेन् स्तोमेन् नाऽऽप्नुंवन्। स विष्णुंमब्रवीत्। इमान्मं ईफ्सेतिं। तान् विष्णुंरेकविर्शेन् स्तोमेनाऽऽप्नोत्। वार्वन्तीयेनावारयत॥४७॥

इदं विष्णुर्वि चंक्रम् इति व्यंक्रमत। यस्मौत्पृशवः प्रप्रेव् भ्रश्रीरन्। स एतेनं यजेत। यदाप्रौत्। तद्प्तोर्यामंस्याप्तोर्याम्-त्वम्। एतेन् वे देवा जैत्वांनि जित्वा। यं काम्मकांमयन्त् तमौऽऽप्नुवन्। यं कामंं कामयंते। तमेतेनौऽऽप्नोति॥४८॥

स्तोमेंन नाऽऽप्नोदवारयत् नवं च॥-----[१४]

व्याघ्रोंऽयम्ग्रौ चंरित प्रविष्टः। ऋषींणां पुत्रो अंभिशस्तिपा अयम्। नमस्कारेण नमंसा ते जुहोमि। मा देवानां मिथुयाकंर्म भागम्। सावीर्हि देव प्रस्वायं पित्रे। वर्ष्माणंमस्मै विर्माणंमस्मै। अथास्मभ्य सिवतः सर्वतांता। दिवेदिव आ सुंवा भूरि पृश्वः। भूतो भूतेषुं चरित प्रविष्टः। स भूतानामिधंपितिर्बभूव॥४९॥

तस्यं मृत्यौ चंरित राज्ञसूयम्ं। स राजां राज्यमनुं मन्यतामिदम्। येभिः शिल्पैः पप्रथानामद्दर्हत्। येभिर्द्याम्भ्यपिर्श्यत्प्रजापितः। येभिर्वाचं विश्वरूपार्श्यस्ययत्। तेनेममंग्र इह वर्चसा समिङ्धः। येभिरादित्यस्तपिति प्र केतुभिः। येभिः सूर्यो दृदृशे चित्रभानः। येभिर्वाचं पुष्कुलेभिरव्यंयत्। तेनेममंग्र इह वर्चसा समिङ्धः॥५०॥

आऽयं भांतु शवंसा पश्चं कृष्टीः। इन्द्रं इव ज्येष्ठो भंवतु प्रजावान्। अस्मा अंस्तु पुष्कृतं चित्रभांनु। आऽयं पृणक्तु रजंसी उपस्थम्। यत्ते शिल्पं कश्यप रोचनावंत्। इन्द्रियावंत्पुष्कृतं चित्रभांनु। यस्मिन्थ्सूर्या अर्पिताः सप्त साकम्। तस्मिन्नाजांनमधि विश्रंयेमम्। द्यौरंसि पृथिव्यंसि। व्याघ्रो वैयाघ्रेऽधि॥५१॥

विश्रंयस्व दिशों महीः। विशंस्त्वा सर्वा वाञ्छन्तु। मा त्वद्राष्ट्रमिधं भ्रशत्। या दिव्या आपः पर्यसा सम्बभूवुः। या अन्तरिक्ष उत पार्थिवीर्याः। तासां त्वा सर्वासा॰ रुचा। अभिषिश्चामि वर्चसा। अभि त्वा वर्चसाऽसिचं दिव्येनं। पर्यसा सह। यथासां राष्ट्रवर्धनः॥५२॥

तथाँ त्वा सिवता करत्। इन्द्रं विश्वां अवीवृधन्।
समुद्रव्यंचसङ्गिरंः। र्थीतंमः रथीनाम्। वाजांनाः
सत्पंतिं पितम्। वसंवस्त्वा पुरस्तांद्रिभिषिश्चन्तु गायत्रेण्
छन्दंसा। रुद्रास्त्वां दक्षिण्तोऽभिषिश्चन्तु त्रैष्टुंभेन् छन्दंसा।
आदित्यास्त्वां पश्चाद्रिभिषश्चन्तु जागंतेन् छन्दंसा।
विश्वं त्वा देवा उत्तर्तोऽभिषिश्चं त्वाऽनुंष्टुभेन् छन्दंसा।
बृहस्पतिंस्त्वोपरिष्टाद्रिभिषिश्चतु पाङ्केन् छन्दंसा॥५३॥

अ्रुणं त्वा वृकंमुग्रङ्कं जङ्करम्। रोचंमानं म्रुतामग्रें अर्चिषंः। सूर्यवन्तं मुघवानं विषास्हिम्। इन्द्रंमुक्थेषुं नामहूर्तम १ हुवेम। प्र बाहवां सिसृतं जीवसं नः। आ नो गर्व्यातिमुक्षतं घृतेनं। आ नो जने श्रवयतं युवाना। श्रुतं में मित्रावरुणा हुवेमा। इन्द्रंस्य ते वीर्युकृतंः। बाहू उपावं हुरामि॥५४॥

बुभूबाव्यंयत्तेनेममंग्र इह वर्चसा समिक्षि वैयाघ्रेऽधि राष्ट्रवर्धनः पाङ्केन छन्दंसोपावंहरामि॥[१५]

अभि प्रेहिं वीरयंस्व। उग्रश्चेत्तां सपल्रहा। आतिष्ठ वृत्रहन्तमः। तुभ्यंं देवा अधिब्रवन्। अङ्कौ न्यङ्कावभितो रथं यौ। ध्वान्तं वांताग्रमन्ं स्श्चरंन्तौ। दूरेहेतिरिन्द्रियावांन्पत्त्री। ते नोऽग्नयः पप्रयः पारयन्तु। नमंस्त ऋषे गद। अव्यंथाये त्वा स्वधायें त्वा॥५५॥

मा नं इन्द्राभित्स्त्वदृष्वारिष्टासः। एवा ब्रेह्मन्तवेदेस्तु। तिष्ठा रथे अधि यद्वज्रंहस्तः। आ र्श्मीन्देव युवसे स्वर्श्वः। आ तिष्ठ वृत्रहन्नातिष्ठंन्तं परिं। अनु त्वेन्द्रो मद्त्वनुं त्वा मित्रावरुंणौ। द्यौश्चं त्वा पृथिवी च प्रचेतसा। शुक्रो बृहद्दक्षिणा त्वा पिपर्तु। अनुं स्वधा चिंकिता सोमो अग्निः। अनुं त्वाऽवतु सविता सवेनं॥५६॥

इन्द्रं विश्वां अवीवृधन्। समुद्रव्यंचस्ङ्गिरंः। र्थीतंमश् रथीनाम्। वाजांनाश् सत्पंतिं पतिम्। परिमा सेन्या घोषाः। ज्यानां वृञ्जन्तु गृध्नवंः। मेथिष्ठाः पिन्वंमाना इह। मां गोपंतिम्भि संविंशन्तु। तन्मेऽनुंमित्रिरनुं मन्यताम्। तन्माता पृंथिवी तित्पता द्यौः॥५७॥ तद्गावाणः सोम्सुतो मयोभुवंः। तदिश्वना शृणुतः सौभगा युवम्। अवं ते हेड उदुंत्तमम्। एना व्याघ्रं पिरिषस्वजानाः। सिर्हः हिन्वन्ति मह्ते सौभगाय। समुद्रं न सुहुवंन्तस्थिवाः सम्। मुमुज्यन्ते द्वीपिनंमपस्वंन्तः। उदसावेतु सूर्यः। उदिदं मांमुकं वचंः। उदिहि देव सूर्य। सह वृग्नुना ममं। अहं वाचो विवाचंनम्। मिय वागंस्तु धर्णसिः। यन्तुं नृदयो वर्षंन्तु पूर्जन्यौः। सुपिप्पुला ओषंधयो भवन्तु। अन्नंवतामोदनवंतामामिक्षंवताम्। एषाः राजां भूयासम्॥५८॥

स्वधार्यै त्वा स्वेन् द्यौः सूँर्य सप्त चं॥———[१६]

ये केशिनंः प्रथमाः स्त्रमासंत। येभिराभृंतं यदिदं विरोचंते। तेभ्यों जुहोमि बहुधा घृतेनं। रायस्पोषंणेमं वर्चसा स॰ सृंजाथ। नर्ते ब्रह्मणस्तपंसो विमोकः। द्विनाम्नी दीक्षा विश्विनी ह्यंग्रा। प्र केशाः सुवतं काण्डिनो भवन्ति। तेषां ब्रह्मेदीशे वपंनस्य नान्यः। आ रोह प्रोष्ठं विषंहस्व शत्रून्ं। अवासाग्दीक्षा विश्विनी ह्यंग्रा॥५९॥

देहि दक्षिणां प्रतिरस्वायुः। अथांमुच्यस्व वरुंणस्य पाशांत्। येनावंपथ्सिवृता क्षुरेणं। सोमंस्य राज्ञो वरुंणस्य विद्वान्। तेनं ब्रह्माणो वपतेदम्स्योर्जेमम्। रय्या वर्चसा स॰ सृजाथ। मा ते केशाननुं गाद्वर्चं एतत्। तथां धाता करोतु ते। तुभ्यमिन्द्रो बृहस्पतिः। स्विता वर्च आदंधात्॥६०॥

तेभ्यों निधानं बहुधा व्येच्छन्। अन्तरा द्यावांपृथिवी अपः सुवंः। दुर्भस्तम्बे वीर्यकृते निधायं। पौइस्येनेमं वर्चसा सइस्जाथ। बलं ते बाहुवोः संविता दंधातु। सोमंस्त्वाऽनक्तु पर्यसा घृतेनं। स्त्रीषु रूपमंश्विनैतन्नि धंत्तम्। पौइस्येनेमं वर्चसा सइस्जाथ। यथ्सीमन्तङ्कङ्कंतस्ते लिलेखं। यद्वां क्षुरः परिववर्ज् वपइस्ते। स्त्रीषु रूपमंश्विनैतन्नि धंत्तम्। पौइस्येनेम सइस्येनेम सइस्येनेम सइस्येनेम सइस्येनेम सइस्येनेम सइस्रावायो वीर्येण॥६१॥

अवाँस्राग्दीक्षा वृशिनी ह्यंग्राऽदंधाद्ववर्ज् वपeq स्ते द्वे चं॥————[१७]

इन्द्रं वै स्वाविशों मुरुतो नापांचायन्। सोऽनंपचाय्यमान एतं विघनमंपश्यत्। तमाऽहंरत्। तेनांयजता तेनैवासान्तश् सई स्तम्भं व्यंहन्। यद्यहन्ं। तिद्विघनस्यं विघनत्वम्। वि पाप्मानं भ्रातृंव्यश् हते। य एतेन् यजंते। य उं चैनमेवं वेदं॥६२॥

य राजांनं विशो नाप्चायेयुः। यो वाँ ब्राह्मणस्तमंसा पाप्मना प्रावृंतः स्यात्। स एतेनं यजेत। विघनेनैवैनंद्विहत्यं। विशामाधिपत्यं गच्छति। तस्य द्वे द्वांदशे स्तोत्रे भवंतः। द्वे चंतुर्विष्शे। औद्विंद्यमेव तत्। एतद्वै क्षुत्रस्यौद्विंद्यम्। यदंस्मै स्वाविशों बलि हर्रन्ति॥६३॥

हर्रन्त्यस्मै विशों बुलिम्। ऐनुमप्रतिख्यातं गच्छति। य एवं

वेदं। प्रबाहुग्वा अग्रें क्षत्राण्यातेपुः। तेषामिन्द्रः क्षत्राण्यादंत्त। न वा इमानि क्षत्राण्यंभूवन्नितिं। तन्नक्षंत्राणां नक्षत्रत्वम्। आ श्रेयंसो भ्रातृंव्यस्य तेजं इन्द्रियं दंत्ते। य एतेन् यजंते। य उं चैनमेवं वेदं॥६४॥

तद्यथां हु वै संचिकिणौ कप्लंकावुपावंहितौ स्यातांम्। एवमेतौ युग्मन्तौ स्तोमौं। अयुक्षु स्तोमेषु क्रियेते। पाप्मनो-ऽपंहत्यै। अपं पाप्मानं भ्रातृंव्य हते। य एतेन् यज्ञंते। य उं चैनमेवं वेदं। तद्यथां हु वै सूंतग्रामण्यंः। एवं छन्दा सि। तेष्वसावांदित्यो बृंहतीर्भ्यूंढः॥६५॥

स्तोबृंहतीषु स्तुवते स्तो बृंहन्। प्रजयां पृशुभिरसानीत्येव। व्यतिषक्ताभिः स्तुवते। व्यतिषक्तं व क्षत्रं विशा। विशेवैनं क्षत्रेण व्यतिषज्ञति। व्यतिषक्ताभिः स्तुवते। व्यतिषक्तो व ग्रांमणीः संजातैः। स्जातैरेवैनं व्यतिषज्जित। व्यतिषक्ताभिः स्तुवते। व्यतिषक्तो व पुरुषः पाप्मभिः। व्यतिषक्ताभिरेवास्यं पाप्मनों नुदते॥६६॥

वेद हर्रन्त्येनमेवं वेदाभ्यूंढः पाप्मभिरेकं च॥-----[१८]

त्रिवृद्यदाँग्रेयाँऽग्निमुंखा ह्युद्धिर्यदाँग्रेय आँग्रेयो न वै सोमेंन् यो वै सोमेंने्ष गोंस्वः सि॰्हेंऽभि प्रेहिं मित्रवर्धनः प्रजापंतिस्ता ओंद्नं प्रजापंतिरकामयत बहोर्भूयांनगस्त्योस्या जरांस्स्तिष्ठा हरीं प्रजापंतिः पृशून्व्याघ्रोंऽयम्भिप्रेहिं वृत्रहन्तंमो ये केशिन् इन्द्रं वा अष्टादंश॥१८॥

त्रिवृद्यो वै सोमेनायुरिस बहुर्भवित् तिष्ठा हरीरथ आयं भांतु तेभ्यों निधान् षट्थ्यंष्टिः॥६६॥

त्रिवृत्पाप्मनों नुदते॥

## हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके सप्तमः प्रपाठकः समाप्तः॥

#### ॥ अष्टमः प्रश्नः॥

### ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके अष्टमः प्रपाठकः॥

पीवौन्ना रियृवधः सुम्धाः। श्वेतः सिंपक्ति नियुतां-मिभुशाः। ते वायवे समनसो वितंस्थः। विश्वेन्नरंः स्वपत्यानिं चक्रः। रायेऽनु यञ्जजतू रोदंसी उभे। राये देवी धिषणां धाति देवम्। अधां वायुं नियुतंः सश्चत् स्वाः। उत श्वेतं वसुंधितिन्निरेके। आ वायो प्र याभिः। प्र वायुमच्छां बृह्ती मंनीषा॥१॥

बृहद्रंयिं विश्ववाराः रथप्राम्। द्युतद्यांमा नियुतः पत्यंमानः। कविः कविमियक्षसि प्रयज्यो। आ नो नियुद्धिः शितिनीभिरध्वरम्। सहस्रिणीभिरुपं याहि यज्ञम्। वायो अस्मिन् ह्विषिं मादयस्व। यूयं पात स्वस्तिभिः सदां नः। प्रजापते न त्वदेतान्यन्यः। विश्वां जातानि परि ता बंभूव। यत्कांमास्ते जुहुमस्तं नो अस्तु॥२॥

वय स्यांम् पतंयो रयीणाम्। रयीणां पतिं यज्तं बृहन्तम्। अस्मिन्भरे नृतंमं वाजंसातौ। प्रजापतिं प्रथम्जामृतस्य। यजांम देवमिं नो ब्रवीत्। प्रजापते त्वित्रिंधिपाः पुराणः। देवानां पिता जंनिता प्रजानांम्। पतिर्विश्वंस्य जगंतः परस्पाः। ह्विनों देव विह्वे जुंषस्व। तवेमे लोकाः प्रदिशो दिशंश्च॥३॥

प्रावतों निवतं उद्वतंश्च। प्रजांपते विश्वसृज्जीवधंन्य इदं नों देव। प्रतिहर्य ह्व्यम्। प्रजापितं प्रथमं यज्ञियांनाम्। देवानामग्रें यज्ञतं यंजध्वम्। स नों ददातु द्रविण १ सुवीर्यम्। रायस्पोषं वि ष्यंतु नाभिमस्मे। यो राय ईशें शतदाय उक्थ्यः। यः पंशूना १ रिक्षेता विष्ठिंतानाम्। प्रजापितः प्रथमजा ऋतस्यं॥४॥

स्रहस्रंधामा जुषता हिवर्नः। सोमांपूषणेमौ देवौ। सोमांपूषणा रजंसो विमानम्। स्प्तचंऋ रथमविश्वमिन्वम्। विष्वृतं मनंसा युज्यमानम्। तं जिन्वथो वृषणा पश्चरिष्टमम्। दिव्यंन्यः सदंनं च्ऋ उच्चा। पृथिव्यामन्यो अध्यन्तरिक्षे। तावस्मभ्यं पुरुवारं पुरुक्षुम्। रायस्पोषं विष्यंतान्नाभिमस्मे॥५॥

धियं पूषा जिन्वतु विश्वमिन्वः। र्यि सोमों रियपितिर्दधातु। अवंतु देव्यदितिरन्वां। बृहद्वंदेम विदर्थे स्वीराः। विश्वान्यन्यो भुवंना जजानं। विश्वमन्यो अभिचक्षांण एति। सोमांपूषणाववंतं धियं मे। युवभ्यां विश्वाः पृतंना जयेम। उद्तं मं वंरुणास्तं भाद्याम्। यत्किं चेदं कित्वासः। अवं ते हेड्स्तत्त्वां यामि। आदित्यानामवंसा न दक्षिणा। धारयंन्त आदित्यासंस्तिस्रो भूमीर्धारयन्। यज्ञो देवाना शृचिर्पः॥६॥

मनीषाऽस्तुं चर्तस्यास्मे किंतवासंश्चत्वारिं च॥

ते शुक्रासः शुचंयो रिष्मवन्तः। सीदंन्नादित्या अधिं बर्हिषिं प्रिये। कामेन देवाः स्रथं दिवो नः। आ याँन्तु यज्ञमुपं नो जुषाणाः। ते सूनवो अदितः पीवसामिषम्। घृतं पिन्वत्प्रतिहर्यन्नृतेजाः। प्र यज्ञिया यजमानाय येमुरे। आदित्याः कामं पितुमन्तंमस्मे। आ नः पुत्रा अदितेर्यान्तु यज्ञम्। आदित्यासंः पृथिभिर्देवयानैः॥७॥

अस्मे कामं दाशुषे सन्नमंन्तः। पुरोडाशं घृतवंन्तं जुषन्ताम्। स्कुभायत् निर्ऋति सेधृतामंतिम्। प्र रिश्मिभिर्यतंमाना अमृध्राः। आदित्याः काम् प्रयंतां वर्षद्वृतिम्। जुषध्वं नो ह्व्यदांतिं यजत्राः। आदित्यान्काम्मवंसे हुवेम। ये भूतानिं जनयंन्तो विचिख्युः। सीदंन्तु पुत्रा अदितेरुपस्थम्। स्तीणं बर्हिरहंविरद्यांय देवाः॥८॥

स्तीर्णं ब्र्हिः सींदता युज्ञे अस्मिन्। ध्राजाः सेधंन्तो अमंतिं दुरेवांम्। अस्मभ्यं पुत्रा अदितेः प्र यर्भता आदित्याः कामं ह्विषो जुषाणाः। अग्ने नयं सुपर्था राये अस्मान्। विश्वानि देव वयुनांनि विद्वान्। युयोध्यंस्मज्जंहुराणमेनः। भूयिष्ठान्ते नमं उक्तिं विधेम। प्र वंः शुक्रायं भानवे भरध्वम्। ह्व्यं मृतिं चाग्नये सुपूतम्॥९॥

यो दैव्यांनि मानुंषा जनूर्षे। अन्तर्विश्वांनि विद्यना जिगांति। अच्छा गिरों मृतयों देवयन्तीः। अग्निं यंन्ति द्रविणं भिक्षंमाणाः। सुसन्दशर् सुप्रतीक्ष् स्वश्रम्॥ ह्व्यवाहंमर्तिं मानुंषाणाम्। अग्ने त्वम्स्मद्यंयोध्यमीवाः। अनिग्नेत्रा अभ्यंमन्त कृष्टीः। पुनंर्स्मभ्यर् सुवितायं देव। क्षां विश्वंभिर्जरंभिर्यजत्र॥१०॥

अग्ने त्वं पारया नव्यो अस्मान्। स्वस्तिभिरतिं दुर्गाणि विश्वां। पूश्चं पृथ्वी बंहुला नं उवीं। भवां तोकाय तनयाय शं योः। प्रकारवो मन्ना वच्यमानाः। देवद्रीचीं नयथ देवयन्तंः। दक्षिणावाङ्वाजिनी प्राच्येति। ह्विभरंन्त्यग्नये घृताचीं। इन्द्रं नरों युजे रथम्ं। जुगुभ्णाते दक्षिणिमन्द्र हस्तम्॥११॥

वसूयवों वसुपते वसूंनाम्। विद्या हि त्वा गोपंति १ शूर् गोनांम्। अस्मभ्यंं चित्रं वृषंण १ रियन्दाः। तवेदं विश्वंमभितः पश्व्यम्। यत्पश्यंसि चक्षंसा सूर्यस्य। गवांमसि गोपंतिरेकं इन्द्र। भक्षीमिहं ते प्रयंतस्य वस्वंः। सिनन्द्र णो मनंसा नेषि गोभिः। स१ सूरिभिर्मघवन्थ्स १ स्वस्त्या। सं ब्रह्मंणा देवकृतं यदस्ति॥१२॥

सं देवानार् सुमृत्या यज्ञियांनाम्। आराच्छत्रुमपं बाधस्व दूरम्। उग्रो यः शम्बंः पुरुहूत तेनं। अस्मे धेहि यवंमुद्गोमंदिन्द्र। कुधीधियं जरित्रे वाजंरलाम्। आ वेधस् सहि शुचिंः। बृह्स्पतिः प्रथमं जायंमानः। महो ज्योतिषः पर्मे व्योमन्। सप्तास्यंस्तुविजातो रवेण। वि

## सप्तरंश्मिरधमृत्तमा ५सि॥१३॥

बृह्स्पतिः समंजयद्वसूनि। महो व्रजान्गोमंतो देव एषः। अपः सिषांस्न्थ्सुव्रप्रंतीत्तः। बृह्स्पतिर्हन्त्यमित्रंमकैः। बृहंस्पते पर्येवा पित्रे। आ नो दिवः पावीरवी। इमा जुह्वांना यस्ते स्तनंः। सरंस्वत्यभि नो नेषि। इय॰ शुष्मंभिर्विस्खा इंवारुजत्। सानुं गिरीणान्तंविषेभिरूर्मिभिः। पारावद्घ्रीमवंसे सुवृक्तिभिः। सरंस्वतीमा विवासेम धीतिभिः॥१४॥

देवयानैर्देवाः सुपूर्तं यजत्र हस्तमस्ति तमाईस्यूर्मिभिद्धे चं॥—————[२]

सोमों धेनु सोमों अर्वन्तमाशुम्। सोमों वीरं कर्मण्यं ददातु। साद्वन्यं विद्थ्य समेयम्। पितुः श्रवंणं यो ददांशदस्मे। अषांढं युथ्सु त्व सोम् ऋतुंभिः। या ते धामांनि ह्विषा यर्जन्ति। त्विममा ओषधीः सोम् विश्वाः। त्वमपो अंजनयस्त्वङ्गाः। त्वमातंतन्थोर्वन्तिरक्षम्। त्वं ज्योतिषा वि तमो ववर्थ॥१५॥

या ते धामांनि दिवि या पृथिव्याम्। या पर्वतेष्वोषंधीष्वपस्। तिभिर्नो विश्वैः सुमना अहेडन्। राजैन्थ्सोम् प्रतिं ह्व्या गृंभाय। विष्णोर्नुकं तदस्य प्रियम्। प्र तिद्वष्णुः। प्रो मात्रया त्नुवां वृधान। न ते महित्वमन्वंश्ज्वन्ति। उभे ते विद्य रजंसी पृथिव्या विष्णों देव त्वम्। प्रमस्यं विथ्से॥१६॥

विचंक्रमे त्रिर्देवः। आ ते महो यो जात एव। अभि गोत्राणि। अभिः स्पृधी मिथतीरिर्वण्यन्। अमित्रस्य व्यथया मृन्युमिन्द्र। आभिर्विश्वां अभियुजो विषूंचीः। आर्याय विशोवंतारीर्दासीः। अय॰ शृंण्वे अध् जयंत्रुत घ्रन्। अयमुत प्र कृंणुते युधा गाः। यदा सृत्यं कृंणुते मृन्युमिन्द्रः॥१७॥

विश्वं दृढं भंयत् एजंदस्मात्। अनुं स्वधामंक्षर्त्नापों अस्य। अवर्धत् मध्य आ नाव्यांनाम्। सुधीचीनेन मनसा तिमंन्द्र ओजिष्ठेन। हन्मंनाहन्नभिद्यून्। मुरुत्वंन्तं वृष्भं वांवृधानम्। अकंवारिं दिव्य शासिमन्द्रम्। विश्वासाहमवसे नूतंनाय। उग्र सहोदामिह त हुवेम। जिनेष्ठा उग्रः सहंसे तुरायं॥१८॥

मन्द्र ओजिंष्ठो बहुलाभिमानः। अवंधिन्निन्द्रं म्रुतंश्चिदत्रं। माता यद्वीरं द्धनृद्धिनेष्ठा। क्वस्यावों मरुतः स्वधाऽऽसींत्। यन्मामेक समर्धत्ताहिहत्ये। अह इद्यंग्रस्तिविषस्तुविष्मान्। विश्वस्य शत्रोरनमं वध्सैः। वृत्रस्यं त्वा श्वसथा दीषंमाणाः। विश्वं देवा अंजहुर्ये सर्खायः। म्रुद्धिरिन्द्र सुख्यं ते अस्तु॥१९॥

अथेमा विश्वाः पृतंना जयासि। वधीं वृत्रं मंरुत इन्द्रियेणं। स्वेन भामेन तिवृषो बंभूवान्। अहमेता मनवे विश्वश्चन्द्राः। सुगा अपश्चंकर् वर्ज्ञंबाहुः। स यो वृषा वृष्णियेभिः समीकाः। महो दिवः पृथिव्याश्चं सम्राट्। सतीनसंत्वा हव्यो भरेषु। मुरुत्वां नो भवत्विन्द्रं ऊती। इन्द्रो वृत्रमंतरद्वृतूर्ये॥२०॥

अनाधृष्यो मघवा शूर इन्द्रंः। अन्वेनं विशो अमदन्त पूर्वीः। अय राजा जगंतश्चर्षणीनाम्। स एव वीरः स उं वीर्यावान्। स एंकराजो जगंतः पर्स्पाः। यदा वृत्रमतंर्च्छूर् इन्द्रंः। अथांभवद्दमिताभिक्रंतूनाम्। इन्द्रो यज्ञं वर्धयंन्विश्ववेदाः। पुरोडाशंस्य जुषता रहिर्वनः। वृत्रं तीत्वां दांन्वं वर्ज्रंबाहुः॥२१॥

विशोऽह ५ हद्दृ ५ हिता ह ५ हंणेन। इमं युज्ञं वर्धयन्विश्व-वेदाः। पुरोडाश्ं प्रतिं गृभ्णात्विन्द्रेः। यदा वृत्रमतंरच्छूर् इन्द्रेः। अथैकराजो अभवज्ञनानाम्। इन्द्रो देवाञ्छंम्बर्हत्यं आवत्। इन्द्रो देवानामभवत्पुरोगाः। इन्द्रो युज्ञे ह्विषां वावृधानः। वृत्रतूर्नो अभय १ शर्म य १ सत्। यः सप्त सिन्धू १ रदंधात्पृथिव्याम्। यः सप्त लोकानकृणोहिशंश्च। इन्द्रो ह्विष्मान्थ्सगंणो मुरुद्धिः। वृत्रतूर्नो युज्ञमिहोपं यासत्॥ २२॥ ववर्ष विथ्म इन्द्रंस्तुरायांस्त वृत्रतूर्वे वर्षवाहः पृथ्वयात्रीणि च॥———[3]

इन्द्रस्तरंस्वानभिमातिहोग्रः। हिरंण्यवाशीरिषिरः सुंवर्षाः। तस्यं वयः सुंमृतौ यज्ञियंस्य। अपि भृद्रे सौंमन्से स्याम। हिरंण्यवर्णो अभयं कृणोतु। अभिमातिहेन्द्रः पृतंनासु जिष्णुः। स नः शर्म त्रिवरूथं वि यर्सत्। यूयं पात स्वस्तिभिः सदां नः। इन्द्रई स्तुहि वृज्जिण्ड् स्तोमंपृष्ठम्। पुरोडाशंस्य जुषतार हुविर्नः॥२३॥

ह्त्वाभिमांतीः पृतंनाः सहंस्वान्। अथाभंयं कृणुहि विश्वतों नः। स्तुहि शूरं वृज्जिणमप्रंतीत्तम्। अभिमातिहनं पुरुहूतमिन्द्रम्। य एक इच्छुतपंतिर्जनंषु। तस्मा इन्द्रांय ह्विरा जुंहोत। इन्द्रों देवानांमिधपाः पुरोहिंतः। दिशां पतिरभवद्वाजिनीवान्। अभिमातिहा तिविषस्तुविष्मान्। अस्मभ्यं चित्रं वृषंण र र्यिन्दांत्॥२४॥

य इमे द्यावांपृथिवी मंहित्वा। बलेनाह रहिदिभमातिहेन्द्रेः। स नों हिवः प्रतिं गृभ्णातु रातयें। देवानां देवो निधिपा नों अव्यात्। अनंवस्ते रथं वृष्णे यत्तें। इन्द्रंस्य नु वीर्याण्यहुन्नहिम्। इन्द्रों यातोऽवंसितस्य राजां। शमंस्य च शृङ्गिणो वर्ज्ञंबाहुः। सेदु राजां क्षेति चर्षणीनाम्। अरान्न नेमिः परि ता बंभूव॥२५॥

अभि सिध्मो अंजिगादस्य शत्रून्। वितिग्मेनं वृष्भेणा पुरोभेत्। सं वर्ज्जेणासृजद्वृत्रमिन्द्रंः। प्र स्वां मृतिमंतिर्च्छाशंदानः। विष्णुं देवं वर्रुणमूतये भगम्। मेदंसा देवा वृपयां यजध्वम्। ता नो यज्ञमागंतं विश्वधेना। प्रजावंदस्मे द्रविणेह धंत्तम्। मेदंसा देवा वृपयां यजध्वम्।

## विष्णुं च देवं वर्रुणं च रातिम्॥२६॥

ता नो अमीवा अप बार्धमानौ। इमं यज्ञं जुषमांणावुपेतम्। विष्णूंवरुणा युवमंध्वरायं नः। विशे जनांय मिह शर्मं यच्छतम्। दीर्घप्रंयज्ञ्यू हिवषां वृधाना। ज्योतिषा- ऽरांतीर्दहत्नतमा रेसि। ययोरोजंसा स्किभृता रजारेसि। वीर्यंभिर्वीरतंमा शिवंष्ठा। याऽपत्यं ते अप्रंतीत्ता सहोंभिः। विष्णूं अगुन्वरुणा पूर्वहूंतौ॥२७॥

विष्णूंवरुणाविभशस्तिपावाँम्। देवा यंजन्त ह्विषां घृतेनं। अपामीवा स्पेधत र रक्षसंश्च। अथाधत्तं यजंमानाय शं योः। अर्होमुचां वृष्मा सुप्रतूर्ती। देवानां देवतंमा शचिष्ठा। विष्णूंवरुणा प्रतिहर्यतन्नः। इदं नरा प्रयंतमूतये ह्विः। मही नु द्यावांपृथिवी इह ज्येष्ठें। रुचा भंवता र शुचयंद्भिर्कैः॥२८॥

यथ्सीं वरिष्ठे बृह्ती विमिन्वन्। नृवद्योक्षा पंप्रथानेभिरेवैंः। प्रपूर्वजे पितरा नव्यंसीभिः। गीर्भिः कृंणुध्व सदेने ऋतस्यं। आ नौं द्यावापृथिवी दैव्यंन। जनेन यातं मिहं वां वरूथम्। स इथ्स्वपा भुवंनेष्वास। य इमे द्यावापृथिवी ज्जानं। उवीं गंभीरे रजंसी सुमेकें। अव स्थे धीरः शच्या समैरत्॥२९॥

भूरिं द्वे अचंरन्ती चरंन्तम्। पृद्वन्तं गर्भम्पदींदधाते। नित्यं न सूनुं पित्रोरुपस्थैं। तं पिपृत रोदसी सत्यवाचम्। इदं द्यांवापृथिवी स्त्यमंस्तु। पितुर्मातुर्यदिहोपं ब्रुवे वाम्। भूतं देवानांमवमे अवोभिः। विद्यामेषं वृज्ञनं जीरदांनुम्। उर्वी पृथ्वी बहुले दूरे अन्ते। उपं ब्रुवे नमंसा यज्ञे अस्मिन्। दर्धाते ये सुभगं सुप्रतूर्ती। द्यावा रक्षतं पृथिवी नो अभ्वात्। या जाता ओषंधयोऽति विश्वाः परिष्ठाः। या ओषंधयः सोमंराज्ञीरश्वावती सोमवतीम्। ओषंधीरितिं मातरोऽन्या वो अन्यामंवतु॥३०॥

हुविर्नो दाद्भभूव रातिं पूर्वहूंतावुर्केरैरदुस्मिन्पश्चं च॥————[४]

शुचिं नु स्तोम् श्र्व्यद्वृत्तम्। उभा वांमिन्द्राग्नी प्र चंर्षणिभ्यः। आ वृत्तहणा गीर्भिर्विप्रः। ब्रह्मणस्पते त्वमस्य यन्ता। सूक्तस्यं बोधि तनयं च जिन्व। विश्वं तद्भद्रं यद्वन्तिं देवाः। बृहद्वंदेम विदथे सुवीराः। स ईर् सत्येभिः सर्विभिः शुचद्भिः। गोधायसं विधनसैरतर्दत्। ब्रह्मणस्पतिर्वृषंभिर्वराहैः॥३१॥

घर्मस्वेदेभिद्रविणं व्यानट्। ब्रह्मण्स्पतेरभवद्यथाव्शम्। सत्यो मन्युर्मिह् कर्मा करिष्यतः। यो गा उदाज्ञथ्स दिवे वि चाभजत्। महीवं रीतिः शवंसा सर्त्पृथंक्। इन्यांनो अग्निं वंनवद्वनुष्यतः। कृतब्रंह्मा शूश्वद्रातहंव्य इत्। जातेनं जातमित्सुत्प्र सृरंसते। यं यं युजं कृणुते ब्रह्मण्स्पतिः। ब्रह्मणस्पते सुयमस्य विश्वहाँ॥३२॥

रायः स्याम रथ्यो विवस्वतः। वीरेषुं वीरा उपपृङ्खि

न्स्त्वम्। यदीशांनो ब्रह्मणा वेषि मे हवम्। स इञ्जनेन स विशा स जन्मना। स पुत्रैर्वाजं भरते धना नृभिः। देवानां यः पितरमा विवासति। श्रृद्धामना ह्विषा ब्रह्मणस्पतिम्। यास्ते पूषन्नावो अन्तः। शुक्रं ते अन्यत्पूषेमा आशाः। प्रपंथे प्थामंजनिष्ट पूषा॥३३॥

प्रपंथे दिवः प्रपंथे पृथिव्याः। उमे अभि प्रियतंमे स्थस्थैं। आ च परां च चरित प्रजानन्। पूषा सुबन्धंदिव आ पृथिव्याः। इडस्पितंम्घवां दस्मवंचाः। तं देवासो अदंदः सूर्यायैं। कामेन कृतं त्वस्ड् स्वश्रम्ं। अजाऽर्श्वः पशुपा वाजंबस्त्यः। धियं जिन्वो विश्वे भुवंने अपितः। अष्ट्रां पूषा शिथिरामुद्धरीवृजत्॥३४॥

स्श्रक्षांणो भुवंना देव ईयते। शुचीं वो ह्व्या मंरुतः शुचींनाम्। शुचिर्ं हिनोम्यध्वर शुचिंभ्यः। ऋतेनं सत्यमृतसापं आयन्। शुचिंजन्मानः शुचंयः पावकाः। प्रचित्रमुकं गृंणते तुरायं। मारुंताय स्वतंवसे भरध्वम्। ये सहारंसि सहंसा सहंन्ते। रेजंते अग्ने पृथिवी मुखेभ्यः। अरुसेष्वा मंरुतः खादयों वः॥३५॥

वक्षंः सुरुक्ता उपं शिश्रियाणाः। वि विद्युतो न वृष्टिभीं रुचानाः। अनुं स्वधामायुंधैर्यच्छंमानाः। या वः शर्म शशमानाय सन्ति। त्रिधातूंनि दाशुषे यच्छताधि। अस्मभ्यं तानि मरुतो वियन्त। र्यिं नो धत्त वृषणः सुवीरम्। इमे तुरं मुरुतो रामयन्ति। इमे सहः सहंस् आ नमन्ति। इमे शर्संवनुष्यतो नि पान्ति॥३६॥

गुरुद्वेषो अरंरुषे दधन्ति। अरा इवेदचंरमा अहेव। प्रप्रं जायन्ते अकंवा महोभिः। पृश्ञैः पुत्रा उपमासो रभिष्ठाः। स्वयां मृत्या मुरुतः सं मिमिक्षुः। अनुं ते दायि मृह इन्द्रियायं। स्त्रा ते विश्वमनुं वृत्रहत्यै। अनुं क्षत्रमनु सहो यजत्र। इन्द्रं देवेभिरनुं ते नृषह्यै। य इन्द्र शुष्मो मघवन्ते अस्ति॥३७॥

शिक्षा सर्खिभ्यः पुरुहूत नृभ्यः। त्व हि दृढा मंघवन्विचेताः। अपांवृधि परिवृतिं न राधः। इन्द्रो राजा जगंतश्चर्षणीनाम्। अधिक्षमि विषुंरूपं यदस्ति। ततो ददातु दाशुषे वसूनि। चोद्द्राध उपंस्तुतश्चिद्वांक्। तमुंष्टुहि यो अभिभूत्योजाः। वन्वन्नवांतः पुरुहूत इन्द्रः। अषांढमुग्र सहंमानमाभिः॥३८॥

गीर्भिर्वर्ध वृष्मं चंर्षणीनाम्। स्थूरस्यं रायो बृंह्तो य ईशैं। तम् ष्टवाम विदथेष्विन्द्रम्। यो वायुना जयंति गोमंतीष्। प्र धृंष्णुया नयिति वस्यो अच्छं। आ ते शुष्मो वृष्म एंतु पृश्चात्। ओत्तरादंधरागा पुरस्तौत्। आ विश्वतो अभिसमैंत्वर्वाङ्। इन्द्रं द्युम्न सुवंवद्धेह्यस्मे॥३९॥

व्राहैर्विश्वहांऽजिनष्ट पूषोद्वरीवृजल्खादयों वः पान्त्यस्त्याभिर्नवं च॥————[५]

आ देवो यांतु सिवता सुरत्नः। अन्तिरिक्षप्रा वहंमानो अश्वैः। हस्ते दर्धानो नर्या पुरूणि। निवेशयं च प्रसुवं च भूमं। अभीवृंतं कृशंनैर्विश्वरूपम्। हिरंण्यशम्यं यज्ततो बृहन्तम्। आस्थाद्रथर् सिवता चित्रभानुः। कृष्णा रजार्सि तिविधीं दर्धानः। सर्घा नो देवः सिवता स्वायं। आ साविषद्वसुंपतिर्वसूनि॥४०॥

विश्रयंमाणो अमंतिमुरूचीम्। मूर्तभोजंनमधंरासतेन। विजनां ज्छावाः शिंतिपादो अख्यन्। रथ् हरंण्यप्रउगं वहंन्तः। शश्वद्दिशंः सवितुर्दैव्यंस्य। उपस्थे विश्वा भुवंनानि तस्थः। वि सुंपूर्णो अन्तरिक्षाण्यख्यत्। गुभीरवेपा असुंरः सुनीथः। क्वेदानी सूर्यः कश्चिकत। कृतमान्द्या रशिमरस्या तंतान॥४१॥

भगं धियं वाजयंन्तः पुरंन्धिम्। नराशश्सो ग्रास्पतिनीं अव्यात्। आ ये वामस्यं सङ्ग्थे रंयीणाम्। प्रिया देवस्यं सिवतुः स्यांम। आ नो विश्वे अस्क्रांगमन्तु देवाः। मित्रो अर्यमा वर्रणः सजोषाः। भुवन् यथां नो विश्वे वृधासः। करंन्थ्रमुषाहां विथुरं न शवंः। शं नो देवा विश्वदेवा भवन्तु। शश् सरंस्वती सह धीभिरंस्तु॥४२॥

शर्मभिषाचः शर्मु रातिषाचः। शं नो दिव्याः पार्थिवाः शं नो अप्याः। ये संवितः सत्यसंवस्य विश्वे। मित्रस्यं व्रते वरुणस्य देवाः। ते सौभंगं वीरवद्गोमदप्रः। दर्धातन् द्रविंणं चित्रम्स्मे। अग्ने याहि दूत्यं वारिषेण्यः। देवाः अच्छां ब्रह्मकृतां गुणेनं। सरस्वतीं मुरुतों अश्विनापः। युक्षि देवात्रंब्रधेयांय विश्वान्॥४३॥

द्योः पितः पृथिवि मात्रधूंक्। अग्नै भ्रातर्वसवो मृडतां नः। विश्वं आदित्या अदिते स्जोषाः। अस्मभ्युष् शर्म बहुलं वि यंन्त। विश्वं देवाः शृणुतेमक्ष हवं मे। ये अन्तरिक्षे य उप द्यवि ष्ठ। ये अग्निजिह्वा उत वा यजंत्राः। आसद्यास्मिन्बर्हिषं मादयध्वम्। आ वां मित्रावरुणा हृव्यजुंष्टिम्। नमंसा देवाववंसाऽऽववृत्याम्॥४४॥

अस्माकं ब्रह्म पृतंनासु सह्या अस्माकम्। वृष्टिर्दिव्या सुंपारा। युवं वस्त्राणि पीवसा वंसाथे। युवोरिच्छंद्रा मन्तंवो हु सर्गाः। अवांतिरत्मनृंतानि विश्वाः। ऋतेनं मित्रावरुणा सचेथे। तथ्सु वां मित्रावरुणा महित्वम्। ई्रमा त्स्थुषी्रहंभिर्दुदुह्ने। विश्वाः पिन्वथ् स्वसंरस्य धेनाः। अनुं वामेकः प्विरा वंवर्ति॥४५॥

यद्व १ हिष्ठुन्नाति विदे सुदान्। अच्छिंद्र १ शर्म भुवंनस्य गोपा। ततों नो मित्रावरुणाववीष्टम्। सिषांसन्तो जीगिवा १ संः स्याम। आ नो मित्रावरुणा ह्व्यदांतिम्। घृतैर्गव्यूतिमुक्षत्मिडांभिः। प्रतिं वामत्र वर्मा जनांय। पृणीतमुद्रो दिव्यस्य चारौंः। प्र बाहवां सिसृतं जीवसें नः। आ नो गर्व्यूतिमुक्षतं घृतेनं॥४६॥

आ नो जने श्रवयतं युवाना। श्रुतं में मित्रावरुणा हवेमा। इमा रुद्रायं स्थिरधंन्वने गिरंः। क्षिप्रेषंवे देवायं स्वधाम्ने। अषांढाय सहंमानाय मीढुषे। तिग्मायंधाय भरता शृणोतंन। त्वादंत्तेभी रुद्र शन्तंमेभिः। शृत हिमां अशीय भेषजेभिः। व्यंस्मद्देषों वित्रं व्यक्षंः। व्यमीवाइश्चातयस्वा विष्चीः॥४७॥

अर्हंन्बिभर्षि मा नंस्तोके। आ ते पितर्मरुता समुमेंतु। मा नः सूर्यस्य सन्दशों युयोथाः। अभि नों वीरो अर्वति क्षमेत। प्र जांयेमिह रुद्र प्रजाभिः। प्रवा बंभ्रो वृषभ चेकितान। यथां देव न हंणीषे न हश्सिं। हावनश्रूर्नो रुद्रेह बोंधि। बृहद्वंदेम विदथें सुवीराः। पिरं णो रुद्रस्यं हेतिः स्तुहि श्रुतम्। मीढुंष्टमार्हंन्बिभर्षि। त्वमंग्ने रुद्र आ वो राजांनम्॥४८॥ वर्मिन ततानास्तु विश्वानं ववृत्यां ववित् धृतेन विष्चाः श्रुतन्द्वे चं॥———[६]

सूर्यो देवीमुषस् रोचंमानामर्यः। न योषांमभ्येति पृश्चात्। यत्रा नरो देवयन्तो युगानि। वितन्वते प्रति भद्रायं भद्रम्। भद्रा अश्वां हुरितः सूर्यंस्य। चित्रा एदंग्वा अनुमाद्यांसः। नमस्यन्तो दिव आ पृष्ठमंस्थुः। परि द्यावांपृथिवी यन्ति सद्यः। तथ्सूर्यस्य देवत्वं तन्मंहित्वम्। मुध्या कर्तोविंतंत्र् सञ्जेभार॥४९॥ यदेदयंक्त हरितंः सधस्थांत्। आद्रात्री वासंस्तनुते सिमस्मैं। तिन्मित्रस्य वर्रुणस्याभिचक्षें। सूर्यो रूपं कृणुते द्योरुपस्थें। अनुन्तमृन्यद्रुशंदस्य पार्जः। कृष्णमृन्यद्धरितः सं भरिन्त। अद्या देवा उदिता सूर्यस्य। निर॰हंसः पिपृतान्निरंवद्यात्। तन्नो मित्रो वर्रुणो मामहन्ताम्। अदितिः सिन्धुंः पृथिवी उत द्योः॥५०॥

दिवो रुका उरुचक्षा उदेति। दूरे अर्थस्तरणिभ्रजिमानः। नूनं जनाः सूर्येण प्रसूताः। आयन्नर्थानि कृणवन्नपार्शसा। शं नो भव चक्षेसा शं नो अहाँ। शं भानुना शर हिमा शं घृणेनं। यथा शम्समै शमसंदुरोणे। तथ्सूर्य द्रविणं धेहि चित्रम्। चित्रं देवानामुदंगादनीकम्। चक्षेंस्त्रिस्य वर्रुणस्याग्नेः॥५१॥

आप्रा द्यावांपृथिवी अन्तरिक्षम्। सूर्यं आत्मा जगतस्त्रस्थुषेश्च। त्वष्टा दध्तन्नंस्तुरीपम्। त्वष्टां वीरं पिशङ्गंरूपः। दश्नेमन्त्वष्टंर्जनयन्त् गर्भम्। अतंन्द्रासो युवतयो बिभंत्रम्। तिग्मानीक्ड् स्वयंशस्ं जनेषु। विरोचंमानं परिषीन्नयन्ति। आविष्ट्यों वर्धते चारुरास्। जिह्मानांमूर्ध्वस्वयंशा उपस्थै॥५२॥

उभे त्वष्टुंर्बिभ्यतुर्जायंमानात्। प्रतीचीं सि॰्हं प्रतिं-जोषयेते। मित्रो जनान्त्र स मित्र। अयं मित्रो नंमस्यंः सुशेवंः। राजां सुक्षत्रो अंजनिष्ट वेधाः। तस्यं वयः सुंमतौ यज्ञियंस्य। अपि भुद्रे सौंमनुसे स्यांम। अनुमीवास् इडंया मदंन्तः। मितज्मंवो वरिंमुन्ना पृंथिव्याः। आदित्यस्यं व्रतमुंपक्ष्यन्तः॥५३॥

वयं मित्रस्यं सुमृतौ स्यांम। मित्रं न ई१ शिम्या गोषुं गृव्यवंत्। स्वाधियों विदर्थं अपस्वजींजनन्। अरेजयता १ रोदंसी पाजंसा गिरा। प्रतिं प्रियं यंजतं जनुषामवंः। महा१ आंदित्यो नमंसोपसद्यः। यात्यज्ञंनो गृणते सुशेवंः। तस्मां एतत्पन्यंतमाय जुष्टम्ं। अग्नौ मित्रायं ह्विरा जुंहोत। आवा९ रथो रोदंसी बद्धधानः॥५४॥

हिर्ण्ययो वृषंभिर्यात्वश्वैः। घृतवंतिनः प्विभीरुचानः। इषां वोढा नृपतिर्वाजिनीवान्। स पंप्रथानो अभि पश्च भूमं। त्रिवन्धुरो मनसायात् युक्तः। विशो येन गच्छंथो देवयन्तीः। कुत्रां चिद्याममिश्विना दर्धाना। स्वश्वां यशसाऽऽयातम्वीक्। दस्रां निधिं मधुंमन्तं पिबाथः। वि वार् रथों वध्वां यादंमानः॥५५॥

अन्तौं दिवो बांधते वर्तनिभ्यौम्। युवोः श्रियं परि योषांवृणीत। सूरों दुहिता परितिक्सयायाम्। यद्देवयन्तमवंथः शचींभिः। परिघ्रक्ष सवां मनांवां वयोगाम्। यो ह्स्यवार्ष रथिरावस्तं उस्राः। रथों युजानः परियातिं वर्तिः। तेनं नः शं योरुषसो व्युष्टौ। न्यंश्विना वहतं युज्ञे अस्मिन्। युवं भुज्युमवंविद्ध समुद्रे॥५६॥ उदूंहथुर्णसो अस्रिधानैः। प्तित्रिभिरश्रमैरेव्यथिभिः। दुःसनांभिरिश्वना पारयंन्ता। अग्नीषोमा यो अद्य वाँम्। इदं वर्चः सप्यितिं। तस्मै धत्तः सुवीर्यम्। गवां पोषुः स्विश्वयम्। यो अग्नीषोमां हिवषां सप्यात्। देवद्रीचा मनसा यो घृतेनं। तस्यं व्रतः रक्षतं पातमः हंसः॥५७॥

विशे जनांय मिह् शर्म यच्छतम्। अग्नीषोमा य आहुंतिम्। यो वां दाशाँखिविष्कृंतिम्। स प्रजयां सुवीर्यम्ं। विश्वमायुर्व्यश्ववत्। अग्नीषोमा चेति तद्वीर्यं वाम्। यदमुंष्णीतमवसं पणिङ्गोः। अवांतिरतं प्रथंयस्य शेषंः। अविंन्दतं ज्योतिरेकं बहुभ्यंः। अग्नीषोमाविम स् मेऽग्नीषोमा हविषः प्रस्थितस्य॥५८॥

जुभारु द्यौरुग्नेरुपस्थं उपुक्ष्यन्तों बद्धधानो वुध्वां यादंमानः समुद्रेऽ १ हंसः प्रस्थितस्य॥—[ ৬ ]

अहमंस्मि प्रथम्जा ऋतस्यं। पूर्वं देवेभ्यां अमृतंस्य नाभिः। यो मा ददांति स इदेव माऽऽवाः। अहमन्नमन्नं-मदन्तंमिद्मा। पूर्वम्ग्नेरिपं दहृत्यन्नम्। यृत्तौ हांसाते अहमुत्तरेषुं। व्यात्तंमस्य पृश्वंः सुजम्भम्। पश्यंन्ति धीराः प्रचंरन्ति पाकाः। जहाँम्यन्यन्न जंहाम्यन्यम्। अहमन्नं वश्मिचरामि॥५९॥

समानमर्थं पर्येमि भुञ्जत्। को मामन्नं मनुष्यों दयेत। परांके अन्नं निहितं लोक एतत्। विश्वैदिवैः पितृभिर्गुप्तमन्नम्। यद्द्यते लुप्यते यत्पंरोप्यतें। शृतत्मी सा त्नूमें बभूव। महान्तौं चरू संकृद्दुग्धेनं पप्रौ। दिवंं च पृश्ञिं पृथिवीं चं साकम्। तथ्सम्पिबंन्तो न मिनन्ति वेधसंः। नैतद्भयो भवंति नो कनीयः॥६०॥

अन्नं प्राणमन्नंमपानमांहुः। अन्नं मृत्युं तम्ं जीवातुंमाहुः। अन्नं ब्रह्माणों जरसं वदन्ति। अन्नंमाहुः प्रजनंनं प्रजानांम्। मोघमन्नं विन्दते अप्रचेताः। सृत्यं ब्रंवीमि वध इथ्स तस्यं। नार्यमणुं पुष्यंति नो सर्खायम्। केवंलाघो भवति केवलादी। अहं मेघः स्तनयन्वर्षंन्नस्मि। मामंदन्त्यहमंद्रयन्यान्॥६१॥

अह सद्मृतों भवामि। मदांदित्या अधि सर्वे तपन्ति। देवीं वार्चमजनयन्त् यद्वाग्वदंन्ती। अनुन्तामन्तादिधि निर्मितां महीम्। यस्यां देवा अंदधुर्भीजंनानि। एकांक्षरां द्विपदा पदंदां च। वार्चं देवा उपं जीवन्ति विश्वं। वार्चं देवा उपं जीवन्ति विश्वं। वार्चं वेवा उपं जीवन्ति विश्वं। वार्चं विश्वा भ्वंनान्यर्पिता॥६२॥

सा नो हवं जुषतामिन्द्रंपत्नी। वागुक्षरं प्रथमजा ऋतस्यं। वेदांनां माताऽमृतंस्य नाभिः। सा नो जुषाणोपं यज्ञमागांत्। अवन्ती देवी सुहवां मे अस्तु। यामृषंयो मत्रृकृतों मनीषिणंः। अन्वैच्छं देवास्तपंसा श्रमंण। तान्देवीं वाच र् ह्विषां यजामहे। सा नों दधातु सुकृतस्यं लोके। चृत्वारि वाक्परिंमिता पदानिं॥६३॥

तानि विदुर्बाह्मणा ये मंनीषिणंः। गुहा त्रीणि निहिता नेङ्गंयन्ति। तुरीयं वाचो मंनुष्यां वदन्ति। श्रृद्धयाऽग्निः समिध्यते। श्रुद्धयां विन्दते हुविः। श्रुद्धां भगस्य मूर्धनि। वचसा वेदयामसि। प्रियक् श्रेद्धे ददेतः। प्रियक् श्रेद्धे दिदांसतः। प्रियं भोजेषु यज्वंसु॥६४॥

इदं मं उदितं कृषि। यथां देवा असुरेषु। श्रद्धामुग्रेषुं चित्रेरे। एवं भोजेषु यज्वंसु। अस्माकंमुदितं कृषि। श्रद्धां देवा यजमानाः। वायुगोंपा उपांसते। श्रद्धां हंदय्यंया-ऽऽकूँत्या। श्रद्धयां हूयते ह्विः। श्रद्धां प्रातर्हंवामहे॥६५॥

श्रुद्धां मध्यन्दिनं परि। श्रुद्धाः सूर्यस्य निम्नुचिं। श्रद्धे श्रद्धांपयेह माँ। श्रुद्धा देवानिधं वस्ते। श्रुद्धा विश्वमिदं जगंत्। श्रुद्धां कामस्य मातरम्। हृविषां वर्धयामिस। ब्रह्मं जज्ञानं प्रथमं पुरस्तात। वि सीमृतः सुरुचों वेन आंवः। स बुिध्रयां उप मा अंस्य विष्ठाः॥६६॥

स्तश्च योनिमसंतश्च विवंः। पिता विराजांमृष्भो रयीणाम्। अन्तरिक्षं विश्वरूप् आविवेश। तम्कैर्भ्यंचिन्त वृथ्सम्। ब्रह्म सन्तुं ब्रह्मणा वृधयन्तः। ब्रह्मं देवानंजनयत्। ब्रह्म विश्वमिदं जगत्। ब्रह्मणः क्षत्रं निर्मितम्। ब्रह्मं ब्राह्मण आत्मनाः। अन्तरंस्मिन्निमे लोकाः॥६७॥

अन्तर्विश्वंमिदं जगंत्। ब्रह्मैव भूतानां ज्येष्ठम्।
तेन कोऽर्हित स्पर्धितुम्। ब्रह्मेन्देवास्त्रयंस्त्रिश्शत्।
ब्रह्मेन्निन्द्रप्रजापती। ब्रह्मेन् ह् विश्वां भूतानिं। नावीवान्तः
समाहिता। चतस्त्र आशाः प्रचरन्त्वग्नयः। इमं नो यज्ञं नयतु
प्रजानन्। घृतं पिन्वंन्नजर्शं सुवीरम्॥६८॥

ब्रह्मं स्मिद्धंवत्याहुंतीनाम्। आ गावों अग्मत्रुत भ्द्रमंक्रन्। सीदंन्तु गोष्ठे रणयंन्त्वस्मे। प्रजावंतीः पुरुरूपां इह स्युः। इन्द्रांय पूर्वीरुषसो दुहानाः। इन्द्रो यज्वंने पृण्ते चं शिक्षति। उपेद्दंदाति न स्वं मुंषायति। भूयोभूयो र्यिमिदंस्य वर्धयन्। अभिन्ने खिल्ले नि दंधाति देवयुम्। न ता नंशन्ति न ता अर्वा॥६९॥

गावो भगो गाव इन्द्रों मे अच्छात्। गावः सोमंस्य प्रथमस्यं भृक्षः। इमा या गावः सर्जनास् इन्द्रंः। इच्छामीद्धृदा मनसा चिदिन्द्रम्। यूयं गांवो मेदयथा कृशं चित्। अश्वीलं चित्कृणुथा सुप्रतीकम्। भृद्रं गृहं कृणुथ भद्रवाचः। बृहद्वो वयं उच्यते सभासुं। प्रजावंतीः सूयवंस रिशन्तीः। शुद्धा अपः सुप्रपाणे पिबंन्तीः। मा वंः स्तेन ईशत् माऽघशर्सः। परि वो हेती रुद्रस्यं वृञ्चात्। उपेदमुंपपर्चनम्। आसु गोषूपंपृच्यताम्। उपंर्षभस्य रेतंसि। उपेन्द्र तवं वीर्ये॥७०॥

ता सूँर्याचन्द्रमसां विश्वभृत्तंमा महत्। तेजो वसुंमद्राजतो दिवि। सामात्माना चरतः सामचारिणां। ययोंर्वृतं न मुमे जातुं देवयोंः। उभावन्तौ परि यात् अर्म्यां। दिवो न र्ष्मी इस्तंनुतो व्यंर्णवे। उभा भुवन्ती भुवना क्विकंत्। सूर्या न चन्द्रा चंरतो हुतामंती। पतीं द्युमिद्वंश्वविदां उभा दिवः। सूर्या उभा चन्द्रमंसा विचक्षणा॥ ७१॥

विश्ववारा वरिवोभा वरैण्या। ता नोंऽवतं मित्मन्ता मिहंव्रता। विश्ववपेरी प्रतरेणा तर्न्ता। सुवर्विदां दृशये भूरिरश्मी। सूर्या हि चन्द्रा वसुं त्वेषदर्शता। मनस्विनोभानुंचरतोनु सन्दिवम्। अस्य श्रवो नद्याः सप्त विभ्रति। द्यावा क्षामां पृथिवी दंर्शतं वपुः। अस्म सूर्याचन्द्रमसांऽभिचक्षे। श्रद्धेकिमन्द्र चरतो विचर्तुरम्॥७२॥

पूर्वाप्रं चंरतो माययैतौ। शिशू क्रीडंन्तौ परि यातो अध्वरम्। विश्वांन्यन्यो भुवंनाऽभि चष्टें। ऋतूनन्यो विदधंज्ञायते पुनंः। हिरंण्यवर्णाः शुचंयः पावका यासाः राजां। यासां देवाः शिवेनं मा चक्षुंषा पश्यत। आपो भूद्रा आदित्पंश्यामि। नासंदासीन्नो सदांसीत्तदानींम्। नासीद्रजो नो व्योमा प्रो यत्। किमावंरीवः कुह् कस्य शर्मन्ं॥७३॥

अम्भः किर्मासीद्गहनं गभीरम्। न मृत्युर्मृतं तर्हि

न। रात्रिया अहं आसीत्प्रकेतः। आनींदवातः स्वधया तदेकम्। तस्माँद्धान्यं न पुरः किश्चनासं। तमं आसीत्तमंसा गूढमग्रें प्रकेतम्। सृतिलः सर्वमा इदम्। तुच्छेना्भविपिहितं यदासीत्। तमंस्रस्तन्महिना जांयतैकम्। कामस्तदग्रे समंवर्ततािधं॥७४॥

मनंसो रेतः प्रथमं यदासींत्। स्तो बन्धुमसंति निरंबिन्दन्। हृदि प्रतीष्यां क्वयों मनीषा। तिर्श्वीनो वितंतो रिश्मरेषाम्। अधः स्विदासी(३)दुपरि स्विदासी(३)त्। रेतोधा आंसन्महिमानं आसन्। स्वधा अवस्तात्प्रयंतिः प्रस्तांत्। को अद्धा वेंद्र क इह प्र वोंचत्। कृत आजांता कृतं इयं विसृष्टिः। अर्वाग्देवा अस्य विसर्जनाय॥७५॥

अथा को वेद यतं आब्भूवं। इयं विसृष्टिर्यतं आब्भूवं। यदिं वा द्धे यदिं वा न। यो अस्याध्यक्षः पर्मे व्योमन्। सो अङ्ग वेद यदिं वा न वेदं। किङ्ख्विद्वनङ्क उ स वृक्ष आंसीत्। यतो द्यावांपृथिवी निष्टतृक्षुः। मनीषिणो मनंसा पृच्छतेदुतत्। यद्ध्यतिष्ठद्भुवंनानि धारयन्। ब्रह्म वनं ब्रह्म स वृक्ष आंसीत्॥७६॥

यतो द्यावांपृथिवी निष्ठतृक्षुः। मनींषिणो मनेसा विब्नंवीमि वः। ब्रह्माध्यतिष्ठद्भुवनानि धारयन्। प्रातर्ग्निं प्रातरिन्द्र १ हवामहे। प्रातर्मित्रावरुणा प्रातर्श्विनां। प्रातर्भगं पूषणं ब्रह्मणस्पतिम्। प्रातः सोमंमुत रुद्र हुवेम। प्रातर्जितं भर्गमुग्र॰ हुंवेम। व्यं पुत्रमदितेयीं विधर्ता। आध्रिश्चद्यं मन्यंमानस्तुरिश्चेत्॥७७॥

राजां चिद्यं भगं भृक्षीत्याहं। भग् प्रणेतुर्भग् सत्यंराधः। भग्मां धियमुदंव ददंत्रः। भग् प्रणो जनय गोभिरश्वैः। भग् प्रनृभिर्नृवन्तः स्याम। उतेदानीं भगवन्तः स्याम। उत प्रपित्व उत मध्ये अह्राम्। उतोदिता मघवन्थ्सूर्यस्य। व्यं देवानार् सुमृतौ स्याम। भगं एव भगवार अस्तु देवाः॥७८॥

तेनं वयं भगंवन्तः स्याम। तं त्वां भग् सर्व इञ्जोहवीमि। स नो भग पुर एता भंवेह। समध्वरायोषसो नमन्त। द्धिकावेव शुचंये पदायं। अर्वाचीनं वसुविदं भगं नः। रथंमिवाश्वां वाजिन आवंहन्तु। अश्वांवतीर्गोमतीर्न उषासंः। वीरवंतीः सदंमुच्छन्तु भृद्राः। घृतं दहांना विश्वतः प्रपीनाः। यूयं पात स्वस्तिभिः सदां नः॥७९॥

विच्क्षणा विंचर्तुर शर्मन्निधं विसर्जनाय ब्रह्म वनं ब्रह्म स वृक्ष आंसीत्तुरिश्चंद्देवाः प्रपीना एकं च॥—[९] पीवौन्नान्ते शुक्रासः सोमों धेनुमिन्द्रस्तरंस्वाञ्छुचिमा देवो यांतु सूर्यो देवीमुहमंस्मि ता सूर्याचन्द्रमसा नवं॥९॥

पीवौँन्नामग्ने त्वं पांरयानाधृष्यः शुचिं नु विश्रयंमाणो दिवो रुक्मोऽन्नं प्राणमन्नन्ता सूँर्याचन्द्रमसा नवंसप्ततिः॥७९॥

पीवौन्नां यूयं पात स्वस्तिभिः सदां नः॥

# हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके

अष्टमः प्रपाठकः समाप्तः॥

### ॥ अष्टकम् ३॥

#### ॥प्रथमः प्रश्नः॥

### ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके प्रथमः प्रपाठकः॥

अग्निर्नः पातु कृत्तिकाः। नक्षेत्रं देविमेन्द्रियम्। इदमांसां विचक्षणम्। ह्विरासं जुंहोतन। यस्य भान्तिं र्ष्मयो यस्यं केतवः। यस्येमा विश्वा भुवनानि सर्वां। स कृत्तिंकाभिर्मिसंवसानः। अग्निर्नो देवः सुंविते दंधातु। प्रजापंते रोहिणी वेतु पत्नीं। विश्वरूपा बृह्ती चित्रभानुः॥१॥

सा नो यज्ञस्यं सुविते दंधातु। यथा जीवेम श्ररदः सवीराः। रोहिणी देव्युदंगात्पुरस्तात्। विश्वां रूपाणि प्रतिमोदंमाना। प्रजापंति १ ह्विषां वर्धयंन्ती। प्रिया देवानामुपंयातु यज्ञम्। सोमो राजां मृगशीर्षेण आगन्। शिवं नक्षेत्रं प्रियमंस्य धामं। आप्यायंमानो बहुधा जनेषु। रेतः प्रजां यजंमाने दधातु॥२॥

यत्ते नक्षेत्रं मृगशीर्षमस्ति। प्रियः राजन् प्रियतंमं प्रियाणांम्। तस्मै ते सोम ह्विषां विधेम। शं नं एधि द्विपदे शं चतुंष्पदे। आईयां रुद्रः प्रथंमा न एति। श्रेष्ठों देवानां पतिरिष्ट्रियानांम्। नक्षेत्रमस्य ह्विषां विधेम। मा नंः प्रजाः रीरिष्नमोत वीरान्। हेती रुद्रस्य परिं णो वृणक्तु। आईरा नक्षेत्रं जुषताः हिवीः॥३॥

प्रमुश्रमांनौ दुरितानि विश्वां। अपाघश र सन्नुदतामरांतिम्। पुनंनी देव्यदितिः स्पृणोतु। पुनंवीसू नः पुनरेतां यज्ञम्। पुनंनी देवा अभियंन्तु सर्वे। पुनंः पुनर्वी ह्विषां यजामः। पुवा न देव्यदितिरन्वा। विश्वस्य भूत्री जगंतः प्रतिष्ठा। पुनंवीसू ह्विषां वर्धयंन्ती। प्रियं देवानामप्येतु पार्थः॥४॥

बृह्स्पतिः प्रथमं जायंमानः। तिष्यं नक्षंत्रम्भि सम्बंभूव। श्रेष्ठां देवानां पृतंनासु जिष्णुः। दिशोऽनु सर्वा अभयं नो अस्तु। तिष्यः पुरस्तांदुत मध्यतो नः। बृह्स्पतिर्नः परि पातु पश्चात्। बाधेतां द्वेषो अभयं कृणुताम्। सुवीर्यस्य पत्तयः स्याम। इद॰ स्पेभ्यो ह्विरंस्तु जुष्टम्। आश्रेषा येषांमनुयन्ति चेतः॥५॥

ये अन्तरिक्षं पृथिवीं क्षियन्तिं। ते नेः सूर्पासो हवमागिमिष्ठाः। ये रोचने सूर्यस्यापिं सूर्पाः। ये दिवं देवीमनुं स्थरन्ति। येषांमाश्रेषा अनुयन्ति कामम्। तेभ्यः सूर्पभ्यो मधुमञ्जहोमि। उपहूताः पितरो ये मुघासुं। मनोजवसः सुकृतः सुकृत्याः। ते नो नक्षेत्रे हवमागिमिष्ठाः। स्वधाभिर्य्ज्ञं प्रयंतं जुषन्ताम्॥६॥

ये अग्निद्ग्धा येऽनंग्निदग्धाः। येऽमुं लोकं पितरः क्षियन्ति। याङ्श्चं विद्म या॰ उं च न प्रविद्म। मुघासुं युज्ञ॰ सुकृतं जुषन्ताम्। गवां पितः फल्गुंनीनामसि त्वम्। तदेर्यमन्वरुणमित्र चारुं। तं त्वां वयः संनितारः सनीनाम्। जीवा जीवन्तमुप संविशेम। येनेमा विश्वा भुवनानि सञ्जिता। यस्यं देवा अनु सं यन्ति चेतः॥७॥

अर्यमा राजाऽजर्स्तुविष्मान्। फल्गुंनीनामृष्भो रोरवीति। श्रेष्ठो देवानां भगवो भगासि। तत्त्वां विदुः फल्गुंनीस्तस्यं वित्तात्। अस्मभ्यं क्षुत्रमृजर्रं सुवीर्यम्। गोमदश्वंवदुप सन्नुंदेह। भगों ह दाता भग इत्प्रंदाता। भगों देवीः फल्गुंनीरा विवेश। भगस्येत्तं प्रंस्वं गंमेम। यत्रं देवैः संधमादं मदेम॥८॥

आयांतु देवः संवितोपंयातु। हिर्ण्ययंन सुवृता रथेन। वह्न् हस्तर् सुभगं विद्यनापंसम्। प्रयच्छंन्तं पपुंरिं पुण्यमच्छं। हस्तः प्रयंच्छत्वमृतं वसीयः। दक्षिणेन् प्रति-गृभ्णीम एनत्। दातारंम्द्य संविता विदेय। यो नो हस्तांय प्रसुवातिं यज्ञम्। त्वष्टा नक्षंत्रम्भ्येति चित्राम्। सुभ र संसं युवृति र रोचंमानाम्॥९॥

निवेशयंत्रमृतान्मर्त्या ईश्च। रूपाणि पि श्वान् भुवंनानि विश्वा। तत्रस्त्वष्टा तदं चित्रा विचंष्टाम्। तत्रक्षंत्रं भूरिदा अंस्तु मह्मम्। तत्रः प्रजां वीरवंती स्मनेतु। गोभिनी अश्वेः समनत्तु यज्ञम्। वायुर्नक्षंत्रमभ्येति निष्ट्याम्। तिग्मश्वं विष्मो रोरुवाणः। समीरयन् भुवंना मात्रिश्वा। अप् द्वेषा स्मि नुदतामरांतीः॥१०॥

तन्नों वायुस्तदु निष्टमां शृणोतु। तन्नक्षंत्रं भूरिदा अंस्तु मह्मम्। तन्नों देवासो अनुंजानन्तु कामम्। यथा तरेम दुरितानि विश्वां। दूरमस्मच्छत्रं वो यन्तु भीताः। तदिन्द्राग्नी कृणतां तद्विशांखे। तन्नों देवा अनुंमदन्तु यज्ञम्। पृश्चात् पुरस्तादभंयं नो अस्तु। नक्षंत्राणामिधंपत्नी विशांखे। श्रेष्ठांविन्द्राग्नी भुवंनस्य गोपौ॥११॥

विषूंचः शत्रूंनप् बाधंमानौ। अप् क्षुधं नुदतामरांतिम्। पूर्णा पृश्चादुत पूर्णा पुरस्तात्। उन्मध्यतः पौर्णमासी जिंगाय। तस्यां देवा अधि संवसंन्तः। उत्तमे नाकं इह मांदयन्ताम्। पृथ्वी सुवर्चा युवृतिः स्जोषाः। पौर्णमास्युदंगाच्छोभंमाना। आप्याययंन्ती दुरितानि विश्वां। उरुं दुहां यजंमानाय युज्ञम्॥१२॥

चित्रभांनुर्यजमाने दधातु हुविर्नुः पाथुश्चेतों जुषन्ताञ्चेतों मदेम् रोचंमानामरांतीर्गोपौ युज्ञम्॥[१]

ऋद्धारमं ह्व्यैर्नमंसोप्सद्यं। मित्रं देवं मित्र्धेयं नो अस्तु। अनूराधान् ह्विषां वर्धयन्तः। शृतं जीवेम श्ररदः सवीराः। चित्रं नक्षंत्रमुदंगात्पुरस्तात्। अनूराधास् इति यद्वदंन्ति। तन्मित्र एति पृथिभिर्देवयानैः। हिर्ण्ययैर्वितंतैर्न्तरिक्षे। इन्द्रौ ज्येष्ठामनु नक्षंत्रमेति। यस्मिन्वृत्रं वृत्रतूर्ये ततारं॥१३॥

तस्मिन्वयम्मृतं दुहांनाः। क्षुधं तरेम् दुरितिं दुरिष्टिम्। पुरन्दरायं वृष्भायं धृष्णवें। अषांढाय सहंमानाय मीढुषें।

इन्द्रांय ज्येष्ठा मधुंमृद्दुहांना। उरुं कृंणोतु यजंमानाय लोकम्। मूलंं प्रजां वीरवंतीं विदेय। पराँच्येतु निर्ऋतिः पराचा। गोभिर्नक्षंत्रं पृशुभिः समंक्तम्। अहंर्भूयाद्यजंमानाय् मह्मम्॥१४॥

अहंनी अद्य सुंवित दंधातु। मूलं नक्षंत्रमिति यद्वदंन्ति। परांचीं वाचा निर्ऋतिं नुदामि। शिवं प्रजाये शिवमंस्तु मह्मम्। या दिव्या आपः पर्यंसा सम्बभूवः। या अन्तरिक्ष उत पार्थिवीर्याः। यासांमषाढा अनुयन्ति कामम्। ता न आपः शङ् स्योना भंवन्तु। याश्च कूप्या याश्चं नाद्याः समुद्रियाः। याश्चं वेशन्तीरुत प्रांस्चीर्याः॥१५॥

यासांमषाढा मधुं भृक्षयंन्ति। ता न आपः शङ् स्योना भंवन्तु। तन्नो विश्वे उपं शृण्वन्तु देवाः। तदंषाढा अभिसंयंन्तु यज्ञम्। तन्नक्षंत्रं प्रथतां पृशुभ्यंः। कृषिर्वृष्टिर्यजंमानाय कल्पताम्। शुभाः कृन्यां युवृतयः सुपेशंसः। कृर्मकृतः सुकृतों वीर्यावतीः। विश्वांन् देवान् ह्विषां वर्धयंन्तीः। अषाढाः काममुपं यान्तु यज्ञम्॥१६॥

यस्मिन् ब्रह्माऽभ्यजंयथ्सवंमेतत्। अमुं चं लोकमिदमूं च सर्वम्। तन्नो नक्षंत्रमभिजिद्विजित्यं। श्रियं दधात्वह्रंणीय-मानम्। उभौ लोकौ ब्रह्मंणा सञ्जितेमौ। तन्नो नक्षंत्रमभिजिद्विचंष्टाम्। तस्मिन्वयं पृतंनाः सञ्जयेम। तन्नो देवासो अनुंजानन्तु कामम्। शृण्वन्तिं श्रोणाम्मृतंस्य गोपाम्। पुण्यांमस्या उपशृणोमि वाचम्॥१७॥

महीं देवीं विष्णुंपत्नीमजूर्याम्। प्रतीचीमेना हिवं यजामः। त्रेधा विष्णुंरुरुगायो विचंक्रमे। महीं दिवं पृथिवीम्न्तिरक्षम्। तच्छ्रोणैतिश्रवं इच्छमाना। पुण्य श्रक्षेकं यजमानाय कृण्वती। अष्टौ देवा वसंवः सोम्यासंः। चतंस्रो देवीर्जराः श्रविष्ठाः। ते यज्ञं पान्तु रजंसः प्रस्तात्। संवथ्सरीणंम्मृत इस्ति॥१८॥

यज्ञं नंः पान्तु वसंवः पुरस्तांत्। दक्षिणतोंऽभियंन्तु श्रविष्ठाः। पुण्यं नक्षंत्रम्भि संविशाम। मा
नो अरातिर्घशृष्ताऽगन्। क्षत्रस्य राजा वर्रुणोऽधिराजः।
नक्षंत्राणा श्वतिभेष्वविसेष्ठः। तौ देवेभ्यंः कृणुतो दीर्घमायुः।
श्वर सहस्रां भेष्जानि धत्तः। यज्ञं नो राजा वर्रुण
उपयातु। तन्नो विश्वं अभि संयंन्तु देवाः॥१९॥

तन्नो नक्षंत्र श्वतिभेषग्जुषाणम्। दीर्घमायुः प्रति-रद्भेषजानि। अज एकंपादुदंगात्पुरस्तात्। विश्वा भूतानि प्रति मोदंमानः। तस्यं देवाः प्रस्वं यन्ति सर्वै। प्रोष्ठपदासो अमृतंस्य गोपाः। विभ्राजंमानः समिधान उग्रः। आऽन्तरिक्षमरुहृदगुन्द्याम्। त स्पूर्यं देवम्जमेकंपादम्। प्रोष्ठपदासो अनुंयन्ति सर्वे॥२०॥ अहिंबुंध्रियः प्रथंमान एति। श्रेष्ठों देवानांमुत मानुंषाणाम्। तं ब्राँह्मणाः सोमपाः सोम्यासंः। प्रोष्ठपदासो अभि रंक्षन्ति सर्वे। चत्वार् एकंम्भि कर्म देवाः। प्रोष्ठपदास् इति यान् वदंन्ति। ते बुंध्रियं परिषद्यई स्तुवन्तः। अहिई रक्षन्ति नमंसोप्सद्यं। पूषा रेवत्यन्वंति पन्थांम्। पुष्टिपती पशुपा वाजंबस्त्यौ॥२१॥

ड्मानि ह्व्या प्रयंता जुषाणा। सुगैर्नो यानैरुपंयातां यज्ञम्। क्षुद्रान् पृशून् रंक्षतु रेवतीं नः। गावों नो अश्वाः अन्वेतु पूषा। अत्रः रक्षंन्तौ बहुधा विरूपम्। वाजः सन्तां यजंमानाय यज्ञम्। तद्श्विनांवश्वयुजोपंयाताम्। शुभुङ्गिष्ठौ सुयमेंभिरश्वैः। स्वं नक्षंत्र ह्विषा यजंन्तौ। मध्वा सम्पृंक्तौ यजुंषा समंक्तौ॥२२॥

यौ देवानां भिषजौं हव्यवाहौ। विश्वंस्य दूताव्मृतंस्य गोपौ। तौ नक्षंत्रं जुजुषाणोपंयाताम्। नमोऽश्विभ्यां कृणुमोऽश्वयुग्भ्यांम्। अपं पाप्मानं भरंणीर्भरन्तु। तद्यमो राजा भगवान् विचंष्टाम्। लोकस्य राजां महतो महान् हि। सुगं नः पन्थामभंयं कृणोतु। यस्मिन्नक्षंत्रे यम एति राजां। यस्मिन्नेनम्भ्यषिश्चन्त देवाः। तदंस्य चित्रः ह्विषां यजाम। अपं पाप्मानं भरंणीर्भरन्तु। निवेशंनी यत्तं देवा अदंधुः॥२३॥

तृतार् मह्यं प्रास्चीर्या याँन्तु युज्ञं वाचई स्वस्ति देवा अनुयन्ति सर्वे वाजंबस्त्यौ समंक्तौ देवास्त्रीणि च॥—————[२]

नवोनवो भवति जायंमानो यमांदित्या अष्शुमाँप्याययंन्ति। ये विरूपे समनसा संव्ययंन्ती। समानं तन्तुं परितातना तैं। विभू प्रभू अनुभू विश्वतों हुवे। ते नो नक्षंत्रे हवमागंमेतम्। वयं देवी ब्रह्मणा संविदानाः। सुरत्नांसो देववीतिं दर्धानाः। अहोरात्रे ह्विषां वर्धयंन्तः। अतिं पाप्मान्मितं मुत्त्वा गमेम। प्रत्युवदृश्यायती॥२४॥

व्युच्छन्तीं दुहिता दिवः। अपो मही वृंणुते चक्षुंषा। तमो ज्योतिंष्कृणोति सूनरीं। उदुस्रियाः सचते सूर्यः। सचां उद्यन्नक्षंत्रमर्चिमत्। तवेदुंषो व्युषि सूर्यस्य च। सं भक्तेनं गमेमहि। तन्नो नक्षंत्रमर्चिमत्। भानुमक्तेजं उचरंत्। उपंयुज्ञमिहागंमत्॥२५॥

प्र नक्षंत्राय देवायं। इन्द्रायेन्दु रे हवामहे। स नेः सविता स्वथ्मनिम्। पुष्टिदां वीरवंत्तमम्। उदुत्यं चित्रम्। अदितिर्न उरुष्यतु महीमू षु मातरम्। इदं विष्णुः प्रतिद्वष्णुः। अग्निर्मूर्धा भुवः। अनुनोऽद्यानुंमित्रिरन्विदंनुमते त्वम्। हृव्यवाहु र्ष्ट् स्विष्टम्॥२६॥

आ्यत्यंगम्थित्वंष्टम्॥———[3]

अग्निर्वा अंकामयत। अन्नादो देवाना ईस्यामिति। स एतम्ग्रये कृत्तिकाभ्यः पुरोडाशम्ष्टाकपालं निरवपत्। ततो वै सोंऽन्नादो देवानांमभवत्। अग्निर्वे देवानांमन्नादः। यथां ह् वा अग्निर्देवानांमन्नादः। एव॰ ह् वा एष मंनुष्यांणां भवति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये स्वाहा कृत्तिंकाभ्यः स्वाहां। अम्बाये स्वाहां दुलाये स्वाहां। नित्त्ये स्वाहाऽभ्रयंन्त्ये स्वाहां। मेघयंन्त्ये स्वाहां वर्षयंन्त्ये स्वाहां। चुपुणीकांये स्वाहेतिं॥२७॥

प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। ता अंस्माथ्सृष्टाः परांचीरायन्। तासा रे रोहिणीम्भ्यंध्यायत्। सोंऽकामयत। उप मा वंर्तेत। समेंनया गच्छेयेतिं। स एतं प्रजापंतये रोहिण्ये च्रं निरंवपत्। ततो वै सा तमुपावंर्तत। समेंनयागच्छत। उप ह वा एंनं प्रियमावंर्तते। सं प्रियेणं गच्छते। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उंचैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। प्रजापंतये स्वाहां रोहिण्ये स्वाहां। रोचंमानाये स्वाहां प्रजाभ्यः स्वाहेतिं॥२८॥

सोमो वा अंकामयत। ओषंधीना र गुज्यम्भिजंयेयमितिं। स एत र सोमांय मृगशीर्षायं श्यामाकं च्रं पर्यस् निरंवपत्। ततो वै स ओषंधीना र गुज्यम्भ्यंजयत्। समानाना र हु वै गुज्यम्भिजंयित। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। सोमांय स्वाहां मृगशीर्षाय स्वाहां। इन्वकाभ्यः स्वाहोषंधीभ्यः स्वाहां। गुज्याय स्वाहाऽभिजित्यै स्वाहेतिं॥२९॥

रुद्रो वा अंकामयत। पृशुमान्थ्स्यामितिं। स एत १

रुद्रायाऽऽद्रिये प्रैय्यंङ्गवं चुरुं पर्यसि निरंवपत्। ततो वै स पंशुमानंभवत्। पृशुमान् हु वै भंवति। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। रुद्राय स्वाहाऽऽद्रिये स्वाहां। पिन्वंमानाये स्वाहां पृशुभ्यः स्वाहेतिं॥३०॥

ऋक्षा वा इयमंलोमकांऽऽसीत्। साऽकांमयत। ओषंधीभिवंनस्पतिंभिः प्रजांयेयेति। सैतमदिंत्ये पुनंवंसुभ्यां चरुं निरंवपत्। ततो वा इयमोषंधीभिवंनस्पतिंभिः प्राजांयत। प्रजांयते ह् वै प्रजयां पृशुभिः। य पृतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अदित्ये स्वाहा पुनंवंसुभ्याम्। स्वाहा भूँत्ये स्वाहा प्रजाँत्ये स्वाहेतिं॥३१॥

बृह्स्पतिर्वा अंकामयत। ब्रह्मवर्चसी स्यामितिं। स एतं बृह्स्पतिये तिष्याय नैवारं चरुं पर्यासे निरंवपत्। ततो वै स ब्रह्मवर्चस्यंभवत्। ब्रह्मवर्चसी हु वै भवति। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। बृह्स्पतंये स्वाहां तिष्यांय स्वाहां। ब्रह्मवर्चसाय स्वाहेतिं॥३२॥

देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते देवाः सर्पेभ्यं आश्रेषाभ्य आज्यं कर्म्मं निरंवपन्। तानेताभिरेव देवतांभिरुपानयन्। एताभिर्ह् वे देवतांभिर्द्धिषन्तं भ्रातृंव्यमुपंनयति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। सर्पेभ्यः स्वाहाँऽऽश्रेषाभ्यः स्वाहाँ। दुन्दुशूकैंभ्यः स्वाहेतिं॥३३॥ पितरो वा अंकामयन्त। पितृलोक ऋंध्रयामेति। त एतं पितृभ्यो मुघाभ्यः पुरोडाश्र् षद्धंपालं निरंवपन्। ततो वै ते पितृलोक आंध्र्वन्। पितृलोके ह् वा ऋंध्रोति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। पितृभ्यः स्वाहां मुघाभ्यः। स्वाहांऽनुघाभ्यः स्वाहांऽगुदाभ्यः। स्वाहां-ऽरुभ्यतीभ्यः स्वाहेतिं॥३४॥

अर्यमा वा अंकामयत। पृशुमान्थ्स्यामितिं। स एतमेर्यम्णे फल्गुंनीभ्यां चुरुं निरंवपत्। ततो वै स पंशुमानंभवत्। पृशुमान् हु वै भंवति। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अर्यम्णे स्वाहा फल्गुंनीभ्या इं स्वाहां। पृशुभ्यः स्वाहेतिं॥३५॥

भगो वा अंकामयत। भगी श्रेष्ठी देवाना इस्यामिति। स एतं भगाय फल्गुंनीभ्यां चुरुं निरंवपत्। ततो वै स भगी श्रेष्ठी देवानांमभवत्। भगी हु वै श्रेष्ठी संमानानां भवति। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। भगाय स्वाहा फल्गुंनीभ्या इस्वाहां। श्रेष्ठांय स्वाहेति॥३६॥

स्विता वा अंकामयत। श्रन्में देवा दधीरन्। स्विता स्यामिति। स एत र संवित्रे हस्ताय पुरोडाशं द्वादंशकपालं निरंवपदाशूनां व्रीहीणाम्। ततो वै तस्मै श्रद्देवा अदंधत। स्विताऽभंवत्। श्रद्धवा अंस्मै मनुष्यां दधते। स्विता संमानानां भवति। य एतेनं हविषा यजंते। य उं चैनदेवं

वेदं। सोऽत्रं जुहोति। सृवित्रे स्वाहा हस्तांय। स्वाहां दद्ते स्वाहां पृण्ते। स्वाहां प्रयच्छेते स्वाहां प्रतिगृभ्णते स्वाहेति॥३७॥

त्वष्टा वा अंकामयत। चित्रं प्रजां विन्देयेतिं। स एतं त्वष्ट्रं चित्रायें पुरोडाशंम्ष्टाकंपालं निरंवपत्। ततो वै स चित्रं प्रजामंविन्दत। चित्र ह वै प्रजां विन्दते। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। त्वष्ट्रे स्वाहां चित्राये स्वाहां। चैत्रांय स्वाहां प्रजाये स्वाहेतिं॥३८॥

वायुर्वा अंकामयत। काम्चारंमेषु लोकेष्वभिजंयेयमिति। स एतद्वायवे निष्टाये गृष्ट्ये दुग्धं पयो निरंवपत्। ततो वै स काम्चारंमेषु लोकेष्वभ्यंजयत्। काम्चार ह वा एषु लोकेष्वभिजंयति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। वायवे स्वाहा निष्टाये स्वाहाँ। काम्चाराय स्वाहाऽभिजिंत्यै स्वाहेतिं॥३९॥

इन्द्राग्नी वा अंकामयेताम्। श्रेष्ठमं देवानांम्भिजंयेवेतिं। तावेतिमंन्द्राग्निभ्यां विशांखाभ्यां पुरोडाश्मेकांदशकपालं निरंवपताम्। ततो वे तौ श्रेष्ठमं देवानांमभ्यंजयताम्। श्रेष्ठमं हु वे संमानानांम्भि जंयति। य पुतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। इन्द्राग्निभ्याङ् स्वाह्य विशांखाभ्याङ् स्वाहां। श्रेष्ठमांय स्वाह्यऽभिजित्यै स्वाहेतिं॥४०॥ अष्टौ पश्चंदश॥

काम् आज्यम्। कामेनेव काम् समर्धयति। क्षिप्रमेन् स् सकाम् उपनमति। येन् कामेन् यजंते। सोऽत्रं जुहोति। पौर्णमास्ये स्वाहा कामाय स्वाहाऽऽगंत्ये स्वाहेति॥४१॥ अग्निः पश्चंदश प्रजापंतिः पोडंश सोम् एकांदश रुद्रो दश्केंकांदश बृह्स्पित्रदंशं देवासुरा नवं पितर् एकांदशार्यमा भगो दशं दश सिवता चतुर्दश् त्वष्टां वायुरिन्द्राग्नी दशं दशायैतत्यौर्णमास्या

अथैतत्पौर्णमास्या आज्यं निर्वपति। कामो वै पौर्णमासी।

मित्रो वा अंकामयत। मित्रधेयंमेषु लोकेष्वभिजंयेयमितिं। स एतं मित्रायांनूराधेभ्यंश्चरुं निरंवपत्। ततो वै स मित्रधेयंमेषु लोकेष्वभ्यंजयत्। मित्रधेय हे वा एषु लोकेष्वभिजंयति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। मित्राय स्वाहांऽनूराधेभ्यः स्वाहां। मित्रधेयांय स्वाहाऽभिजित्यै स्वाहेतिं॥४२॥

इन्द्रो वा अंकामयत। ज्येष्ठमं देवानांम्भिजंयेय्मिति। स एतिमन्द्रांय ज्येष्ठायं पुरोडाश्मेकांदशकपालं निरंवपन्महाव्रीहीणाम्। ततो वे स ज्येष्ठमं देवानांम्भ्यंजयत्। ज्येष्ठमं हु वे संमानानांम्भिजंयति। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। इन्द्रांय स्वाहां ज्येष्ठाये स्वाहां। ज्येष्ठमांय स्वाहाऽभिजिंत्ये स्वाहेतिं॥४३॥

प्रजापंतिर्वा अंकामयत। मूलं प्रजां विंन्देयेतिं। स एतं प्रजापंतये मूलाय चुरुं निरंवपत्। ततो वै स मूलं प्रजामंविन्दत। मूलई हु वै प्रजां विन्दते। य एतेनं हुविषा यजेते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। प्रजापंतये स्वाहा मूलांय स्वाहां। प्रजाये स्वाहेतिं॥४४॥

आपो वा अंकामयन्त। स्मुद्रं कामंम्भिजंयेमेति। ता पृतम्द्र्योऽषाढाभ्यंश्चरं निरंवपन्। ततो वै ताः संमुद्रं कामंमभ्यंजयन्। स्मुद्र ह वै कामंम्भिजंयति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अद्भाः स्वाहांऽषाढाभ्यः स्वाहां। स्मुद्राय स्वाहा कामांय स्वाहां। अभिजित्ये स्वाहेतिं॥४५॥

विश्वे वै देवा अंकामयन्त। अनुपुज्य्यं जंयेमेतिं। त एतं विश्वेभ्यो देवेभ्योऽषाढाभ्यंश्चरुं निरंवपन्। ततो वै तें-ऽनपज्य्यमंजयन्। अनुपुज्य्यः हु वै जंयति। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। विश्वेभ्यो देवेभ्यः स्वाहांऽषाढाभ्यः स्वाहां। अनुपुज्य्याय स्वाहा जित्यै स्वाहेतिं॥४६॥

ब्रह्म वा अंकामयत। ब्रह्मलोकम्भिजंयेयमिति। तदेतं ब्रह्मणेऽभिजितं चुरुं निरंवपत्। ततो वै तद्भेह्मलोकम्भ्यंजयत्। ब्रह्मलोक ह वा अभिजंयति। य पृतेनं ह्विषा यजंते। य उ चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। ब्रह्मणे स्वाहांऽभिजिते स्वाहां। ब्रह्मलोकाय स्वाहाऽभिजित्ये स्वाहेतिं॥४७॥ विष्णुर्वा अंकामयत। पुण्यु श्रोक शृण्वीय। न मां पापी कीर्तिरागंच्छेदितिं। स एतं विष्णंवे श्रोणायैं पुरोडाशं त्रिकपालं निरंवपत्। ततो वै स पुण्यु श्रोकंमशृणुत। नैनं पापी कीर्तिरागंच्छत्। पुण्य ह वै श्लोक शृणुते। नैनं पापी कीर्तिरागंच्छति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। विष्णंवे स्वाहां श्रोणाये स्वाहां। श्लोकांय स्वाहां श्रुताय स्वाहेतिं॥४८॥

वसंवो वा अंकामयन्त। अग्रं देवतांनां परीयामेतिं। त एतं वसुभ्यः श्रविष्ठाभ्यः पुरोडाशंमुष्टाकंपालं निरंवपन्। ततो वै तेऽग्रं देवतांनां पर्यायन्। अग्रं हु वै संमानानां पर्येति। य एतेनं हृविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। वसुभ्यः स्वाहा श्रविष्ठाभ्यः स्वाहाँ। अग्रांय स्वाहा परींत्यै स्वाहेतिं॥४९॥

इन्द्रो वा अंकामयत। दृढोऽशिंथिलः स्यामितिं। स एतं वर्रुणाय श्वतिभेषजे भेषजेभ्यः पुरोडाशं दर्शकपालं निर्रवपत्कृष्णानां व्रीहीणाम्। ततो वे स दृढोऽशिंथिलो-ऽभवत्। दृढो हु वा अशिंथिलो भवति। य एतेनं हृविषा यजते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। वर्रुणाय स्वाहां श्वतिभेषजे स्वाहां। भेषजेभ्यः स्वाहेति॥५०॥

अजो वा एकंपादकामयत। तेजस्वी ब्रंह्मवर्चसी

स्यामितिं। स पृतम्जायैकंपदे प्रोष्ठपुदेभ्यंश्चरं निरंवपत्। ततो वै स तेंजस्वी ब्रंह्मवर्चस्यंभवत्। तेजस्वी हु वै ब्रंह्मवर्चसी भंवति। य पृतेनं हुविषा यजते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अजायैकंपदे स्वाहाँ प्रोष्ठपुदेभ्यः स्वाहाँ। तेजंसे स्वाहाँ ब्रह्मवर्चसाय स्वाहेतिं॥५१॥

अहिर्वे बुभ्नियोऽकामयत। इमां प्रतिष्ठां विन्देयेति। स एतमहंये बुभ्नियाय प्रोष्ठपदेभ्यः पुरोडाशं भूमिकपालं निरंवपत्। ततो वै स इमां प्रतिष्ठामंविन्दत। इमा॰ ह वै प्रतिष्ठां विन्दते। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अहंये बुभ्नियांय स्वाहाँ प्रोष्ठपदेभ्यः स्वाहाँ। प्रतिष्ठाये स्वाहेतिं॥५२॥

पूषा वा अंकामयत। पृशुमान्थ्स्यामितिं। स एतं पूष्णे रेवत्ये चरुं निरंवपत्। ततो वे स पंशुमानंभवत्। पृशुमान् ह् वे भंवति। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। पूष्णे स्वाहां रेवत्ये स्वाहां। पृशुभ्यः स्वाहेतिं॥५३॥

अश्विनौ वा अंकामयेताम्। श्रोत्रस्विनावबंधिरौ स्यावेतिं। तावेतमृश्विभ्यांमश्वयुग्भ्यां पुरोडाशं द्विकपालं निरंवपताम्। ततो वे तौ श्रोत्रस्विनावबंधिरावभवताम्। श्रोत्रस्वी हु वा अबंधिरो भवति। य एतेनं हृविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अश्विभ्याङ् स्वाहांऽश्वयुग्भ्याङ् स्वाहां। श्रोत्रांय स्वाहा श्रुत्ये स्वाहेतिं॥५४॥ यमो वा अंकामयत। पितृणा र राज्यम्भिजंयेयमितिं। स एतं यमायांपभरंणीभ्यश्चरुं निरंपवत्। ततो वै स पिंतृणा र राज्यम्भ्यंजयत्। समानाना र हु वै राज्यम्भि जंयति। य एतेनं हिविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। यमाय स्वाहांऽपभरंणीभ्यः स्वाहां। राज्याय स्वाहाऽभिजिंत्ये स्वाहेतिं॥५५॥

अथैतदंमावास्यांया आज्यं निर्वपति। कामो वा अमावास्यां। काम् आज्यम्। कामेंनैव काम् समर्धयति। क्षिप्रमेंन् सकाम् उपनमति। येन् कामेन् यजंते। सोऽत्रं जुहोति। अमावास्यांयै स्वाहा कामांय स्वाहाऽऽगंत्यै स्वाहेतिं॥५६॥

मित्र इन्द्रंः प्रजापंतिर्दशं दशाप् एकांदश् विश्वे ब्रह्म दशंदश् विष्णुस्रयोंदश् वसंव् इन्द्रोऽजोऽहिर्वे बुधियंः पूषाऽश्विनौं युमो दशं दुशाथैतदंमावास्यांया अष्टौ पश्चंदश॥——[५]

चन्द्रमा वा अंकामयत। अहोरात्रानंधमासान्मासांनृतून्थ्सं-वथ्सरमास्वा। चन्द्रमंसः सायुंज्य स्सलोकतांमाप्रयामिति। स एतं चन्द्रमंसे प्रतीदृश्यांये पुरोडाशं पश्चंदशकपालं निरंवपत्। ततो वे सोंऽहोरात्रानंधमासान्मासांनृतून्थ्यंवथ्सर-मास्वा। चन्द्रमंसः सायुंज्य सलोकतांमाप्रोत्। अहोरात्रान् ह वा अर्धमासान्मासांनृतून्थ्यंवथ्सरमास्वा। चन्द्रमंसः सायुंज्य सलोकतांमाप्रोति। य एतेनं हृविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। चन्द्रमंसे स्वाहां प्रतीदृश्यांयै स्वाहाँ। अहोरात्रेभ्यः स्वाहाँऽर्धमासेभ्यः स्वाहाँ। मासेँभ्यः स्वाहर्तुभ्यः स्वाहाँ। सुंवृथ्सराय स्वाहेतिं॥५७॥

अहोरात्रे वा अंकामयेताम्। अत्यंहोरात्रे मुंच्येविह।
न नांवहोरात्रे आंप्रुयातामिति। ते एतमहोरात्राभ्यां च्रं
निरंवपताम्। द्वयानां ब्रीहीणाम्। शुक्लानां च कृष्णानां च।
स्वात्योर्दुग्धे। श्वेतायं च कृष्णायं च। ततो व ते अत्यंहोरात्रे
अमुच्येते। नैनं अहोरात्रे आंप्रुताम्। अति ह वा अंहोरात्रे
मुंच्यते। नैनंमहोरात्रे आंप्रुतः। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं
चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अह्रे स्वाहा रात्रिये स्वाहां।
अतिमुक्त्ये स्वाहेति॥५८॥

उषा वा अंकामयत। प्रियाऽऽदित्यस्यं सुभगां स्यामितिं। सैतमुषसं चुरुं निरंवपत्। ततो वे सा प्रियाऽऽदित्यस्यं सुभगांऽभवत्। प्रियो हु वे संमानाना र् सुभगों भवति। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। उषसे स्वाहा व्यंष्ट्रो स्वाहां। व्यूष्ट्रये स्वाहां व्युच्छन्त्ये स्वाहां। व्यंष्टाये स्वाहेतिं॥५९॥

अथैतस्मै नक्षंत्राय चुरुं निर्वपिति। यथा त्वं देवानामिसी। एवमहं मंनुष्याणां भूयासमिति। यथां हु वा एतद्देवानांम्। एव॰ हु वा एष मंनुष्याणां भवति। य एतेनं हुविषा यजते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। नक्षंत्राय स्वाहोंदेष्यते स्वाहां। उद्यते स्वाहोदिंताय स्वाहां। हरंसे स्वाहा भरंसे स्वाहाँ। भ्राजंसे स्वाहा तेजंसे स्वाहाँ। तपंसे स्वाहाँ ब्रह्मवर्चसाय स्वाहेतिं॥६०॥

सूर्यो वा अंकामयत। नक्षंत्राणां प्रतिष्ठा स्यामिति। स एत र सूर्याय नक्षंत्रभ्यश्चरुं निरंवपत्। ततो वै स नक्षंत्राणां प्रतिष्ठाऽभंवत्। प्रतिष्ठा हु वै संमानानां भवति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। सूर्याय स्वाहा नक्षंत्रभ्यः स्वाहां। प्रतिष्ठायै स्वाहेति॥६१॥

अथैतमदिंत्यै चुरुं निर्वपिति। इयं वा अदिंतिः। अस्यामेव प्रतिं तिष्ठति। सोऽत्रं जुहोति। अदित्यै स्वाहाँ प्रतिष्ठायै स्वाहेतिं॥६२॥

अथैतं विष्णंवे चुरुं निर्वपति। युज्ञो वै विष्णुंः। युज्ञ एवान्तृतः प्रति तिष्ठति। सोऽत्रं जुहोति। विष्णंवे स्वाहां युज्ञाय स्वाहां। प्रतिष्ठायै स्वाहेति॥६३॥

चन्द्रमाः पश्चंदशाहोरात्रे सप्तदंशोषा एकांद्रशाथैतस्मै नक्षंत्राय त्रयोदश् सूर्यो दशाथैतमदित्यै पश्चाथैतं विष्णंव पद्थ्सप्त (स्विताऽऽशूनां ब्रींहीणामिन्द्रों महाब्रींहीणामिन्द्रेः कृष्णानां ब्रीहीणामंहोरात्रे द्वयानां ब्रीहीणाम्। पितरः पद्वंपालर सिवता द्वादंशकपालमिन्द्राग्नी एकांदशकपालमिन्द्र एकांदशकपालमिन्द्रो दशंकपालं विष्णंस्त्रिकपालमिहुर्भूमिंकपालमृश्विनौं द्विकपालं चन्द्रमाः पश्चंदशकपालमृश्निस्त्वष्टा वसंवोऽष्टाकंपालमृन्यत्रं चुरुम्। रुद्रौंऽर्यमा पूषा पंशुमान्थ्स्यार् सोमों रुद्रो बृहुस्पितः पयंसि वायुः पयः सोमों वायुरिन्द्राग्नी मित्र इन्द्र आपो ब्रह्मं युमोंऽभिजित्यै त्वष्टां प्रजापंतिः प्रजायं पौर्णमास्या अमावास्याया अगत्यै विश्वे जित्यां अश्विनौ श्रुत्यैं। ब्रह्म तदेतं विष्णुः स एतं

वायुः स पुतदाप्स्ताः। पितरो विश्वे वसंवोऽकामयन्त् मेति त पुतन्निरंवपन्। आपौऽकामयन्त् मेति ता पुतन्निरंवपन्। इन्द्राग्नी अश्विनांवकामयेतां वेति तावेतन्निरंवपताम्। अहोरात्रे वा अंकामयेतामिति ते पुतन्निरंवपताम्। अन्यत्रांकामयतेति स पुतन्निरंवपत्। इन्द्राग्नी श्रैष्ट्यमिन्द्रो उपैष्ट्यमिन्द्रो इढः। अहिः सूर्योऽदिंत्यै विष्णंवे प्रतिष्ठायैं। सोमो युमः संमानानांम्। अग्निनीं रीरिषद्न्यत्रं रीरिषः॥)॥———[६]

अ्ग्निर्न ऋध्यास्म नवोनवोऽग्निर्मित्रश्चन्द्रमाः षट्॥ ॥
अ्ग्निर्नस्तन्नों वायुरहिंबुंभ्रियं ऋक्षा वा इयमथैतत्पौंर्णमास्या अजो वा
एकंपाथ्सूर्यस्त्रिषंष्टिः॥६३॥
अ्ग्निर्नः पातु प्रतिष्ठायै स्वाहेतिं॥

## हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके प्रथमः प्रपाठकः समाप्तः॥

### ॥द्वितीयः प्रश्नः॥

### ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके द्वितीयः प्रपाठकः॥

तृतीयंस्यामितो दिवि सोमं आसीत्। तं गांयत्र्या-ऽहंरत्। तस्यं पूर्णमंच्छिद्यत। तत्पूर्णोऽभवत्। तत्पूर्णस्यं पर्णत्वम्। ब्रह्म वै पूर्णः। यत्पंणशाखयां वृथ्सानंपाकरोति। ब्रह्मणैवैनान्पाकरोति। गायत्रो वै पूर्णः। गायत्राः पृशवः॥१॥

तस्मात्रीणित्रीणि पूर्णस्यं पलाशानि। त्रिपदां गायत्री। यत्पंर्णशाखया गाः प्राप्यंति। स्वयैवैनां देवत्या प्राप्यंति। यं कामयेतापृशः स्यादितिं। अपूर्णान्तस्मै शुष्कांग्रामाहंरेत्। अपृशुरेव भंवति। यं कामयेत पशुमान्थस्यादितिं। बहुपूर्णान्तस्मै बहुशाखामाहंरेत्। पृशुमन्तंमेवैनं करोति॥२॥

यत्प्राचीमा हरैंत्। देवलोकम्भि जंयेत्। यदुदीचीं मनुष्यलोकम्। प्राचीमुदीचीमा हंरति। उभयौर्लोकयोर्भि-जित्यै। इषे त्वोर्जे त्वेत्यांह। इषमेवोर्जं यजमाने दधाति। वायवः स्थेत्यांह। वायुवी अन्तरिक्षस्याध्येक्षाः। अन्तरिक्षदेवत्याः खलु वै पृशवः॥३॥

वायवं एवैनान्परि ददाति। प्र वा एंनानेतदा कंरोति। यदाहं। वायवः स्थेत्युंपायवः स्थेत्यांह। यजंमानायैव पृशूनुपं ह्वयते। देवो वंः सिवता प्रापंयत्वित्यांह प्रसूत्यै। श्रेष्ठंतमाय कर्मण इत्यांह। युज्ञो हि श्रेष्ठंतमं कर्म। तस्मांदेवमांह।

### आप्यांयध्वमघ्रिया देवभागमित्यांह॥४॥

वृथ्सेभ्यंश्च वा एताः पुरा मनुष्येभ्यश्चाप्यांयन्त। देवेभ्यं एवेना इन्द्रायाप्यांययति। ऊर्जस्वतीः पर्यस्वतीरित्यांह। ऊर्ज् हे हि पर्यः सम्भरंन्ति। प्रजावंतीरनमीवा अयक्षमा इत्यांह प्रजांत्ये। मा वंः स्तेन ईशत् माऽघश्र हेस् इत्यांह गुत्यैं। रुद्रस्यं हेतिः परिं वो वृण्कित्यांह। रुद्रादेवेनां स्नायते। ध्रुवा अस्मिन्गोपंतौ स्यात बह्वीरित्यांह। ध्रुवा एवास्मिन्बह्वीः करोति॥५॥

यजंमानस्य पृश्न्याहीत्यांह। पृश्न्नां गोंपीथायं। तस्माँथ्सायं पृशव् उपसमावंतन्ते। अनंधः सादयति। गर्भाणां धृत्या अप्रंपादाय। तस्माद्गर्भाः प्रजानामप्रंपादुकाः। उपरीव् निदंधाति। उपरीव् हि सुवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्य समेष्ट्री॥६॥

पुशर्वः करोति पुशर्वो देवभागमित्यांह करोति नवं च॥————[१]

देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रंस्व इत्यंश्वप्र्शुमादंते प्रसूँत्यै। अश्विनौर्बाहुभ्यामित्यांह। अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्तांम्। पूष्णो हस्तांभ्यामित्यांहु यत्यैं। यो वा ओषंधीः पर्वशो वेदं। नैनाः स हिनस्ति। प्रजापंतिर्वा ओषंधीः पर्वशो वेद। स एना न हिनस्ति। अश्वपृश्वा बर्हिरच्छैति। प्राजापत्यो वा अश्वः सयोनित्वायं॥७॥

ओषंधीनामहिर्सायै। यज्ञस्यं घोषद्सीत्यांह। यजंमान एव र्यिं दंधाति। प्रत्युष्ट्र रक्षः प्रत्युष्टा अरातय इत्यांह। रक्षंसामपंहत्यै। प्रेयमंगाद्धिषणां ब्र्हिरच्छेत्यांह। विद्या वै धिषणां। विद्ययैवैनदच्छेंति। मनुंना कृता स्वधया वित्रष्टेत्यांह। मानुवी हि पर्शुः स्वधाकृता॥८॥

त आवंहिन्ति क्वयंः पुरस्तादित्यांह। शुश्रुवा सो वै क्वयंः। यज्ञः पुरस्तांत्। मुख्त एव यज्ञमा रंभते। अथो यदेतदुक्ता यतः कृतंश्चा हरंति। तत्प्राच्यां एव दिशो भंवित। देवेभ्यो जुष्टंमिह ब्र्हिरासद इत्यांह। ब्र्हिषः समृद्धै। कर्मणोऽनंपराधाय। देवानां परिषूतम्सीत्यांह॥९॥

यद्वा इदं किं चं। तद्देवानां परिषूतम्। अथो यथा वस्यंसे प्रतिप्रोच्याहेदं केरिष्यामीति। एवमेव तदंध्वर्युर्देवेभ्यः प्रतिप्रोच्यं बर्हिर्दाति। आत्मनोऽहिर्स्सायै। यावंतः स्तम्बान्पंरिदिशेत्। यत्तेषांमुच्छिङ्घ्यात्। अति तद्यज्ञस्यं रेचयेत्। एकई स्तम्बं परिदिशेत्। तर सर्वं दायात्॥१०॥

युज्ञस्यानंतिरेकाय। वर्षवृंद्धम्सीत्यांह। वर्षवृंद्धा वा ओषंधयः। देवंबर्हिरित्यांह। देवेभ्यं एवैनंत्करोति। मा त्वा-ऽन्वङ्गा तिर्यगित्याहाहि १ सायै। पर्व ते राध्यासमित्याहध्यै। आच्छेत्ता ते मा रिषमित्यांह। नास्याऽऽत्मनो मीयते। य एवं वेदं॥११॥ देवंबर्हिः शतवंल्श्ं विरोहेत्यांह। प्रजा वै ब्र्हिः। प्रजानां प्रजनंनाय। सहस्रंवल्शा वि वय र रुहेमेत्यांह। आशिषंमेवेतामा शांस्ते। पृथिव्याः सम्पृचंः पाहीत्यांह प्रतिष्ठित्ये। अयुंङ्गायुङ्गान्मुष्टीं लुंनोति। मिथुन्त्वाय प्रजांत्ये। सुसम्भृतां त्वा सम्भंरामीत्यांह। ब्रह्मंणैवैन्थ्सम्भंरति॥१२॥

अदित्यै रास्नाऽसीत्यांह। इयं वा अदितिः। अस्या एवैन्द्रास्नां करोति। इन्द्राण्ये सन्नहंन्मित्यांह। इन्द्राणी वा अग्ने देवतांना समंनह्यत। साऽऽभ्नीत्। ऋख्ये सन्नह्यति। प्रजा वै बर्हिः। प्रजानामपंरावापाय। तस्माथ्स्नावंसन्तताः प्रजा जांयन्ते॥१३॥

पूषा तें ग्रन्थिं ग्रंशात्वित्यांह। पृष्टिमेव यर्जमाने दधाति। स ते मास्थादित्याहाहि रेसायै। पृश्चात्प्राश्चमुपंगूहित। पृश्चाद्वे प्राचीन् रेतों धीयते। पृश्चादेवास्में प्राचीन् रेतों दधाति। इन्द्रंस्य त्वा बाहुभ्यामुद्यंच्छ इत्याह। इन्द्रियमेव यर्जमाने दधाति। बृहुस्पतें मूर्भा हंग्मीत्यांह। ब्रह्म वे देवानां बृहुस्पतिं:॥१४॥

ब्रह्मणैवैनंद्धरित। उर्वन्तिरिक्षमिन्विहीत्यांहु गत्यै। देवङ्गमम्सीत्यांह। देवानेवैनंद्रमयित। अनेधः सादयित। गर्भाणां धृत्या अप्रंपादाय। तस्माद्गर्भाः प्रजानामप्रंपादुकाः। उपरीव नि दंधाित। उपरीव हि सुंवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं

### लोकस्य समंष्ट्री॥१५॥

स्योनित्वार्यं स्वधाकृंताऽसीत्यांह दायाद्वेदं भरति जायन्ते बृह्स्पतिः समंष्ठौ॥———[२]

पूर्वेद्युरिध्माब्र्हिः करोति। यज्ञमेवारभ्यं गृहीत्वोपंवसति। प्रजापंतिर्यज्ञमंसृजत। तस्योखे अंस्रश्सेताम्। यज्ञो वै प्रजापंतिः। यथ्मांन्नाय्योखे भवंतः। यज्ञस्यैव तदुखे उपंदधात्यप्रंस्रश्साय। शुन्धंध्वं दैव्यांय कर्मणे देवयुज्याया इत्यांह। देवयुज्यायां एवैनांनि शुन्धति। मात्रिश्वंनो घुर्मोऽसीत्यांह॥१६॥

अन्तरिक्षं वै मांत्रिश्वंनो घर्मः। एषां लोकानां विधृत्यै। द्यौरंसि पृथिव्यंसीत्यांह। दिवश्च ह्येषा पृथिव्याश्च सम्भृंता। यदुखा। तस्मादेवमांह। विश्वधाया असि पर्मेण धाम्नेत्यांह। वृष्टिर्वे विश्वधायाः। वृष्टिमेवावं रुन्धे। दण्हंस्व मा ह्वारित्यांह धृत्यै॥१७॥

वसूनां प्वित्रम्सीत्याह। प्राणा वै वस्वः। तेषां वा पृतद्भाग्धेयम्। यत्प्वित्रम्। तेभ्यं पृवैनंत्करोति। शृतधार सहस्रधार्मित्याह। प्राणेष्वेवायुर्दधाति सर्वत्वायं। त्रिवृत्पंलाशशाखायां दर्भमयं भवति। त्रिवृद्धे प्राणः। त्रिवृतंमेव प्राणं मध्यतो यजमाने दधाति॥१८॥

सौम्यः पूर्णः संयोनित्वायं। साक्षात्प्वित्रं दुर्भाः। प्राख्सायमधिनि दंधाति। तत्प्राणापानयो रूपम्। तिर्यक्प्रातः। तद्दर्शस्य रूपम्। दार्श्यङ् ह्यंतदहंः। अन्नं वै चन्द्रमाः। अन्नं प्राणाः। उभयंमेवोपैत्यजांमित्वाय॥१९॥

तस्मांदय सर्वतंः पवते। हुतः स्तोको हुतो द्रपस इत्यांह् प्रतिष्ठित्यै। हुविषोऽस्कन्दाय। न हि हुत इ स्वाहांकृत इ स्कन्दिति। दिवि नाको नामाग्निः। तस्ये विप्रुषो भागधेयम्। अग्नये बृह्ते नाकायेत्यांह। नाकंमेवाग्निं भागधेयेन समर्धयति। स्वाहा द्यावांपृथिवीभ्यामित्यांह। द्यावांपृथिव्योरेवैनत्प्रतिष्ठापयति॥२०॥

प्वित्रंवत्यानंयित। अपां चैवौषंधीनां च रस्ध् सर्भ्जति। अथो ओषंधीष्वेव पृश्नम्प्रतिष्ठापयित। अन्वारभ्य वाचं यच्छति। यज्ञस्य धृत्यै। धारयंन्नास्ते। धारयंन्त इव हि दुहन्ति। कामधुक्ष इत्याहातृतीयंस्यै। त्रयं इमे लोकाः। इमानेव लोकान् यजमानो दुहे॥२१॥

अमूमिति नामं गृह्णाति। भुद्रमेवासां कर्मा विष्कंरोति। सा विश्वायुः सा विश्वव्यंचाः सा विश्वक्रमेत्यांह। इयं वै विश्वायुंः। अन्तरिक्षं विश्वव्यंचाः। असौ विश्वकंर्मा। इमानेवेताभिर्लोकान् यंथापूर्वं दुंहे। अथो यथां प्रदात्रे पुण्यंमाशास्तें। एवमेवेनां एतदुपंस्तौति। तस्मात्प्रादादित्युन्नीय वन्दंमाना उपस्तुवन्तंः पृशून्दुं-हन्ति॥२२॥ बहु दुग्धीन्द्रांय देवेभ्यों ह्विरिति वाचं विसृंजते। यथादेवतमेव प्रसौति। दैव्यंस्य च मानुषस्यं च व्यावृंत्यै। त्रिराह। त्रिषंत्या हि देवाः। अवांचं यमोऽनंन्वार्भ्योत्तराः। अपंरिमितमेवावं रुन्थे। न दांरुपात्रेणं दुह्यात्। अग्निवद्वै दांरुपात्रम्। यद्दांरुपात्रेणं दुह्यात्॥२३॥

यातयाँम्ना ह्विषां यजेत। अथो खल्वांहः। पुरोडाशंमुखानि वै ह्वी॰िषं। नेत इंतः पुरोडाश॰ ह्विषो यामोऽस्तीतिं। कामंमेव दांरुपात्रेणं दुह्यात्। शूद्र एव न दुंह्यात्। असंतो वा एष सम्भूतः। यच्छूद्रः। अहंविरेव तदित्यांहुः। यच्छूद्रो दोग्धीतिं॥२४॥

अग्निहोत्रमेव न दुंह्याच्छूद्रः। तद्धि नोत्पुनन्ति। यदा खलु वै प्वित्रंमत्येति। अथ् तद्धविरिति। सम्पृच्यध्वमृतावरीरित्याह। अपां चैवौषंधीनां च रस् स् सर् सृजिति। तस्माद्पां चौषंधीनां च रस्मुपंजीवामः। मृन्द्रा धनंस्य सात्य इत्याह। पृष्टिंमेव यजमाने दधाति। सोमेन् त्वातंनच्मीन्द्रांय दधीत्यांह॥२५॥

सोमं मेवैनंत्करोति। यो वै सोमं भक्षयित्वा। संवथ्सरश् सोमं न पिबंति। पुनुर्भक्ष्यों ऽस्य सोमपीथो भंवति। सोमः खलु वै सान्नाय्यम्। य एवं विद्वान्थ्सान्नाय्यं पिबंति। अपुनुर्भक्ष्यों ऽस्य सोमपीथो भंवति। न मृन्मयेनापि दध्यात्। यन्मृन्मयेनापिद्ध्यात्। पितृदेवत्य ई स्यात्॥२६॥ अयस्पात्रेणं वा दारुपात्रेण वाऽपिं दधाति। तिद्ध सदेवम्। उद्न्वद्भवति। आपो वे रक्षोघ्रीः। रक्षंसामपंहत्ये। अदंस्तमसि विष्णंवे त्वेत्यांह। यज्ञो वे विष्णंः। यज्ञायैवेन्ददंस्तं करोति। विष्णां हृव्य रक्षंस्वेत्यांह् गृत्यैं। अनंधः सादयति। गर्भाणां धृत्या अप्रंपादाय। तस्माद्गर्भाः प्रजानामप्रंपादुकाः। उपरीव निदंधाति। उपरीव हि सुंवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्ष्ये॥२७॥

असीत्यांह धृत्ये यजंमाने दधात्यजांमित्वाय स्थापयति दुहे दुहन्ति दुह्याद्दोग्धीति दधीत्यांह स्याथ्सादयति पश्चं च॥————[3]

कर्मणे वां देवेभ्यः शकेयमित्यांह् शक्त्यैं। यज्ञस्य वै सन्तंतिमन् प्रजाः पृशवो यजंमानस्य सन्तांयन्ते। यज्ञस्य विच्छित्तिमन् प्रजाः पृशवो यजंमानस्य विच्छिद्यन्ते। यज्ञस्य सन्तंतिरिस यज्ञस्यं त्वा सन्तंत्ये स्तृणामि सन्तंत्ये त्वा यज्ञस्येत्याहंवनीयाथ्सन्तंनोति। यजंमानस्य प्रजाये पश्नाः सन्तंत्ये। अपः प्रणंयति। श्रद्धा वा आपः। श्रद्धामेवारभ्यं प्रणीय प्रचंरति। अपः प्रणंयति। यज्ञो वा आपः॥२८॥

युज्ञमेवारभ्यं प्रणीय प्रचंरित। अपः प्रणंयित। वज्रो वा आपः। वज्रमेव भ्रातृंव्येभ्यः प्रहृत्यं प्रणीय प्रचंरित। अपः प्रणंयित। आपो वै रंक्षोष्ठीः। रक्षंसामपहत्यै। अपः प्रणंयित। आपो वै देवानां प्रियं धामं। देवानांमेव प्रियं धामं प्रणीय प्रचंरित॥२९॥ अपः प्रणंयति। आपो वै सर्वा देवताः। देवतां एवारभ्यं प्रणीय प्रचंरति। वेषाय त्वेत्यांह। वेषाय ह्यंनदादत्ते। प्रत्युष्ट्र रक्षः प्रत्युष्टा अरातय इत्यांह। रक्षंसामपंहत्ये। धूरसीत्यांह। एष वै धुर्योऽग्निः। तं यदनुंपस्पृश्यातीयात्॥३०॥

अध्वर्यं च यजमानं च प्रदेहेत्। उपस्पृश्यात्येति। अध्वर्योश्च यजमानस्य चाप्रदाहाय। धूर्व तं यौस्मान्धूर्वित् तं धूर्व यं व्यं धूर्वाम् इत्याह। द्वौ वाव पुरुषौ। यं चैव धूर्वित। यश्चेनं धूर्वित। तावुभौ शुचाऽर्पयित। त्वं देवानांमिस् सिस्तिमं पप्रितमं जुष्टतमं विह्नितमं देवहूर्तम्मित्याह। यथायजुरेवैतत्॥३१॥

अहुंतमिस हिव्धानिमित्याहानांत्र्ये। द १ हंस्व मा ह्यारित्यांह धृत्यें। मित्रस्यं त्वा चक्षुंषा प्रेक्ष इत्यांह मित्रत्वायं। मा भेमा संविंक्था मा त्वां हि १ सिष्मित्याहाहि १ सायै। यद्वे किं च वातो नाभि वातिं। तथ्सर्वं वरुणदेवत्यम्। उरु वातायेत्यांह। अवांरुणमेवेनंत्करोति। देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रमुव इत्यांह प्रसूत्ये। अश्विनोंर्बाहुभ्यामित्यांह॥३२॥

अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्तांम्। पूष्णो हस्तांभ्यामित्यांह् यत्यैं। अग्नये जुष्टं निर्वपामीत्यांह। अग्नयं एवैनां जुष्टं निर्वपति। त्रिर्यजुषा। त्रयं इमे लोकाः। एषां लोकानामास्यैं। तूष्णीं चंतुर्थम्। अपंरिमितमेवावं रुन्थे।

# स पुवमेवानुंपूर्व १ ह्वी १ षि निर्वपति॥ ३३॥

ड्दं देवानांमिदम् नः सहत्यांह् व्यावृत्यै। स्फात्ये त्वा नारांत्या इत्यांह् गृत्यैं। तमंसीव वा एषों उन्तश्चंरति। यः पंरीणिहि। सुवंरिभ वि ख्येषं वैश्वान्रं ज्योतिरित्यांह। सुवंरेवाभि वि पंश्यित वैश्वान्रं ज्योतिः। द्यावांपृथिवी ह्विषि गृहीत उदंवेपेताम्। दृश्हंन्तान्दुर्या द्यावांपृथिव्योरित्यांह। गृहाणां द्यावांपृथिव्योर्थृत्यैं। उर्वन्तिरक्षमिन्वहीत्यांह् गत्यैं। अदित्यास्त्वोपस्थे सादयामीत्यांह। इयं वा अदितिः। अस्या एवेनंदुपस्थे सादयति। अग्ने ह्व्यः रक्षस्वत्यांह् गृत्यै॥३४॥ य्जो वा आणे धामं प्रणीय प्रचंत्यतीयादेतद्वाहुभ्यामित्यांह ह्वीःष् निवंपित गत्ये च्त्वारि

इन्द्रों वृत्रमंहन्। सोंऽपः। अभ्यंम्रियत। तासां यन्मेध्यं यिज्ञय् सदेवमासीत्। तदपोदंक्रामत्। ते दुर्भा अभवन्। यद्दर्भर्प उत्पुनाति। या एव मेध्यां यिज्ञयाः सदेवा आपः। ताभिरेवेना उत्पुनाति। द्वाभ्यामृत्पुनाति॥३५॥

द्विपाद्यजंमानः प्रतिष्ठित्यै। देवो वंः सिव्तोत्पुंनात्वित्यांह। सिव्तृप्रंसूत एवेना उत्पुंनाति। अच्छिंद्रेण प्वित्रेणेत्यांह। असौ वा आंदित्योऽच्छिंद्रं प्वित्रम्ं। तेनैवेना उत्पुंनाति। वसोः सूर्यस्य रिष्मिभिरित्यांह। प्राणा वा आपंः। प्राणा वसंवः। प्राणा रश्मयंः॥३६॥ प्राणेरेव प्राणान्थ्सं पृंणिक्ति। सावित्रियर्चा। सिवृत्प्रंसूतं मे कर्मासदिति। सिवृत्प्रंसूतमेवास्य कर्म भवति। पच्छो गांयित्रिया त्रिष्णमृद्धत्वायं। आपो देवीरग्रेपुवो अग्रेगुव इत्याह। रूपमेवासामेतन्मंहिमानं व्याचेष्टे। अग्रं इमं यज्ञं नंयताग्रं यज्ञपंतिमित्यांह। अग्रं एव यज्ञं नंयन्ति। अग्रं यज्ञपंतिम्॥३७॥

युष्मानिन्द्रोऽवृणीत वृत्रतूर्ये यूयमिन्द्रंमवृणीध्वं वृत्रतूर्यं इत्यांह। वृत्र हं हिन्ष्यिन्निन्द्र आपों वव्रे। आपो हेन्द्रं विवरे। संज्ञामेवासांमेतथ्सामानं व्याचेष्टे। प्रोक्षिताः स्थेत्यांह। तेनाऽऽपः प्रोक्षिताः। अग्नये वो जुष्टं प्रोक्षांम्यग्नीषोमांभ्यामित्यांह। यथादेवतमेवैनान्प्रोक्षंति। त्रिः प्रोक्षंति। त्र्यांवृद्धि युज्ञः॥३८॥

अथो रक्षंसामपंहत्यै। शुन्धंध्वं दैव्यांय कर्मणे देवयुज्याया इत्यांह। देवयुज्यायां एवैनांनि शुन्धित। त्रिः प्रोक्षंति। त्र्यांवृद्धि युज्ञः। अथो मेध्यत्वायं। अवंधूत्र रक्षोऽवंधूता अर्रातय इत्यांह। रक्षंसामपंहत्यै। अदित्यास्त्वगुसीत्यांह। इयं वा अदिंतिः॥३९॥

अस्या एवैन्त्वचं करोति। प्रतिं त्वा पृथिवी वेत्त्वित्यांह् प्रतिष्ठित्यै। पुरस्तांत्प्रतीचीनंग्रीवृमुत्तंरलोमोपंस्तृणाति मेध्यत्वायं। तस्मांत्पुरस्तांत्प्रत्यश्चः पृशवो मेधुमुपंतिष्ठन्ते। तस्मौत्प्रजा मृगं ग्राहुंकाः। युज्ञो देवेभ्यो निलायत। कृष्णो रूपं कृत्वा। यत्कृष्णाजिने हृविरिध्यवहन्ति। युज्ञादेव तद्यज्ञं प्रयुंक्के। हविषोऽस्कन्दाय॥४०॥

अधिषवंणमसि वानस्पत्यमित्यांह। अधिषवंण-मेवैनत्करोति। प्रति त्वाऽदित्यास्त्वग्वेत्त्वित्यांह सयत्वायं। अग्नेस्त्नूरसीत्यांह। अग्नेर्वा एषा तुनूः। यदोषंधयः। वाचो विसर्जन्मित्यांह। यदा हि प्रजा ओषंधीनामुश्जन्तिं। अथ वाचं विसृंजन्ते। देववींतये त्वा गृह्णामीत्यांह॥४१॥

देवतांभिरेवैन्थ्समंध्यति। अद्रिरिस वानस्पृत्य इत्यांह। ग्रावाणमेवैनंत्करोति। स इदं देवेभ्यों हृव्य स्पुशिमं शिम्ष्वेत्यांह् शान्त्यैं। हिविष्कृदेहीत्यांह। य एव देवाना रे हिव्ष्कृतंः। तान् ह्वंयति। त्रिह्वंयति। त्रिषंत्या हि देवाः। इषमावदोर्जमावदेत्यांह॥४२॥

इषंमेवोर्जं यजंमाने दधाति। द्युमद्वंदत वय संङ्घातं जेष्मेत्यांह् भ्रातृंव्याभिभूत्यै। मनोः श्रद्धादेवस्य यजंमानस्या-सुर्घ्नी वाक्। यज्ञायुधेषु प्रविष्टाऽऽसीत्। तेऽसुरा यावंन्तो यज्ञायुधानांमुद्वदंतामुपाशृण्वन्। ते पराभवन्। तस्माथ्स्वानां मध्येऽवसायं यजेत। यावंन्तोऽस्य भ्रातृंव्या यज्ञायुधानां-मुद्वदंतामुपशृण्वन्तिं। ते परां भवन्ति। उच्चेः समाहंन्त् वा आंह विजित्यै॥४३॥ वृङ्क एषामिन्द्रियं वीर्यम्। श्रेष्ठं एषां भवति। वर्षवृद्धमस् प्रति त्वा वर्षवृद्धं वेत्त्वित्यांह। वर्षवृद्धा वा ओषंधयः। वर्षवृद्धा इषीकाः समृद्धौ। यज्ञ रक्षाङ्स्यनु प्राविंशन्। तान्यस्रा पृशुभ्यों निरवांदयन्त। तुषैरोषंधीभ्यः। परांपूत रक्षः परांपूता अरांतय इत्यांह। रक्षंसामपंहत्यै॥४४॥

रक्षंसां भागोंऽसीत्यांह। तुषैरेव रक्षा रेसि निरवंदयते। अप उपंस्पृशति मेध्यत्वायं। वायुर्वो विविन्तिकत्यांह। पवित्रं वै वायुः। पुनात्येवैनान्। अन्तरिक्षादिव वा एते प्रस्केन्दन्ति। ये शूर्पात्। देवो वंः सिवता हिरंण्यपाणिः प्रतिंगृह्णात्वित्यांह प्रतिष्ठित्ये। हिवषोऽस्केन्दाय। त्रिष्फलीकेर्त्वा आह। त्र्यांवृद्धि युज्ञः। अथों मेध्यत्वायं॥४५॥

द्वाभ्यामुत्पुंनाति रुश्मयों नयुन्त्यग्रें युज्ञपंतिं युज्ञोऽदिंतिरस्कंन्दाय गृह्णमीत्यांह वदेत्यांह् विजित्या अपंहत्या अस्कंन्दाय त्रीणि च॥—————————————————[५]

अवंधूत्र रक्षोऽवंधूता अरांतय इत्यांह। रक्षंसामपंहत्यै। अदित्यास्त्वग्सीत्यांह। इयं वा अदितिः। अस्या एवैन्त्वचं करोति। प्रतिं त्वा पृथिवी वेत्त्वत्यांह प्रतिंष्ठित्यै। पुरस्तांत्प्रतीचीनंग्रीवमुत्तंरलोमोपंस्तृणाति मेध्यत्वायं। तस्मांत्पुरस्तांत्प्रत्यश्चः पृशवो मेधुमुपंतिष्ठन्ते। तस्मांत्प्रजा मृगं ग्राहुंकाः। युज्ञो देवेभ्यो निलायत॥४६॥

कृष्णों रूपं कृत्वा। यत्कृष्णाजिने हिवरिधिपिनष्टिं। यज्ञादेव तद्यज्ञं प्रयुंङ्के। हिविषोऽस्कन्दाय। द्यावापृथिवी सहास्ताम्। ते शंम्यामात्रमेकमहर्व्वेता १ शम्यामात्रमेकमहंः। दिवः स्कम्भानिरंसि प्रति त्वाऽदित्यास्त्वग्वेत्त्वित्यांह। द्यावांपृथिव्योवीत्यै। धिषणांऽसि पर्वत्या प्रतिं त्वा दिवः स्कम्भानिर्वेत्त्वित्यांह। द्यावांपृथिव्योविधृत्यै॥४७॥

धिषणांऽसि पार्वतेयी प्रतिं त्वा पर्वतिर्वेत्त्वित्यांह। द्यावांपृथिव्योर्धृत्यैं। देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रस्व इत्यांह् प्रसूत्ये। अश्विनौंर्बाहुभ्यामित्यांह। अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्तौम्। पूष्णो हस्तौभ्यामित्यांह यत्त्यैं। अधिवपामीत्यांह। यथादेवतमेवैनानिधं वपति। धान्यमिस धिनुहि देवानित्यांह। एतस्य यजुंषो वीर्येण॥४८॥

यावदेकां देवतां कामयंते यावदेकां। तावदाहुंतिः प्रथते। न हि तदस्ति। यत्तावंदेव स्यात्। यावंज्जुहोतिं। प्राणायं त्वाऽपानाय त्वेत्यांह। प्राणानेव यजंमाने दधाति। दीर्घामनु प्रसितिमायुंषे धामित्यांह। आयुंरेवास्मिन्दधाति। अन्तरिक्षादिव वा एतानि प्रस्केन्दन्ति। यानि दृषदंः। देवो वंः सिवता हिरंण्यपाणिः प्रतिगृह्णात्वत्यांह प्रतिष्ठित्यै। हिवषोऽस्केन्दाय। असंवपन्ती पिश्षाणूनि कुरुतादित्यांह मध्यत्वायं॥४९॥

निलांयत् विधृंत्यै वीर्येण स्कन्दन्ति चत्वारिं च॥—————[६]

धृष्टिरसि ब्रह्मं युच्छेत्यांहु धृत्यैं। अपाँग्नेऽग्निमामादं जिह्

निष्क्रव्याद रेस्था देवयर्जं वहेत्यांह। य प्रवामात्क्रव्यात्। तमंपहत्यं। मेध्येऽग्रौ कपालमुपंदधाति। निर्दंग्धर् रक्षो निर्दंग्धा अरांतय इत्यांह। रक्षार्रस्येव निर्देहति। अग्निवत्युपंदधाति। अस्मिन्नेव लोके ज्योतिर्धत्ते। अङ्गार्मिधं वर्तयति॥५०॥

अन्तरिक्ष एव ज्योतिर्धत्ते। आदित्यमेवाम् ि हेशे के ज्योतिर्धत्ते। ज्योतिष्मन्तोऽस्मा इमे लोका भवन्ति। य एवं वेदं। ध्रुवमंसि पृथिवीं दृश्हेत्यांह। पृथिवीमेवैतेनं दृश्हित। धर्त्रमंस्यन्तरिक्षं दृश्हेत्यांह। अन्तरिक्षमेवैतेनं दृश्हित। धरुणंमसि दिवं दृश्हेत्यांह। दिवंमेवैतेनं दृश्हित॥५१॥

धर्मासि दिशों हु हेत्यांह। दिशं एवैतेनं हु हित। इमाने वैते लें कान्ह रेहित। हु हैन्ते उस्मा इमे लोकाः प्रजयां पश्मिः। य एवं वेदं। त्रीण्यग्नें कृपालान्यपदधाति। त्रयं इमे लोकाः। एषां लोकानामाध्यै। एक् मग्नें कृपालमुपं दधाति। एकं वा अग्नें कृपालं पुरुषस्य सम्भवंति॥५२॥

अथ् द्वे। अथ् त्रीणिं। अथं चृत्वारिं। अथाष्ट्रौ। तस्मादृष्टाकंपालुं पुरुषस्य शिरंः। यदेवं कृपालाँन्युपृद्धांति। यज्ञो वै प्रजापंतिः। यज्ञमेव प्रजापंति सङ्स्कंरोति। आत्मानंमेव तथ्सङ्स्कंरोति। तह् सङ्स्कृतमात्मानम्॥५३॥

अमुष्मिँ ह्योकेऽनु परैति। यद्ष्यावुंप्दधांति। गायत्रिया

तथ्सम्मितम्। यन्नवं। त्रिवृता तत्। यद्दर्शं। विराजा तत्। यदेकांदश। त्रिष्टुभा तत्। यद्वादंश॥५४॥

जगंत्या तत्। छन्देः सम्मितानि स उपदर्धत्कपालांनि। इमाँ ह्यो कानंनुपूर्वं दिशो विधृत्ये दृश्हित। अथाऽऽयुंः प्राणान्य्रजां पृशून् यजंमाने दधाति। सृजातानंस्मा अभितो बहुलान्कंरोति। चितः स्थेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। भृगूंणामङ्गिरसां तपंसा तप्यध्वमित्यांह। देवतांनामेवैनांनि तपंसा तपति। तानि ततः सङ्स्थिते। यानि घर्मे कृपालांन्युपचिन्वन्तिं वेधस् इति चतुंष्पदय्चां वि मुंश्रति। चतुंष्पादः पृशवंः। पृशुष्वेवोपरिष्टात्प्रतिं तिष्ठति॥५५॥

वृर्त्यृति दिवंमेवैतेनं दृश्हित सम्भवंति तर सङ्स्कृतमात्मानं द्वादंश सङ्स्थिते त्रीणि

च॥\_\_\_\_\_\_[७]

देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रंस्व इत्यांह् प्रसूँत्यै। अश्विनौर्बाहुभ्यामित्यांह। अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्तांम्। पूष्णो हस्तांभ्यामित्यांह् यत्यैं। सं वेपामीत्यांह। यथादेवतमेवेनांनि संवंपति। समापो अद्भिरंग्मत समोषंधयो रसेनेत्यांह। आपो वा ओषंधीर्जिन्वन्ति। ओषंधयोऽपो जिन्वन्ति। अन्या वा एतासांमन्या जिन्वन्ति॥५६॥

तस्मदिवमांह। स॰ रेवतीर्जगंतीभिर्मध्रंमतीर्मध्रंमतीभिः सृज्यध्वमित्यांह। आपो वै रेवतीः। पृशवो जगंतीः। ओषंधयो मध्रंमतीः। आप ओषंधीः पृशून्। तानेवास्मां एक्धा स्र्नुज्यं। मध्मतः करोति। अद्भः परि प्रजांताः स्थ समुद्भिः पृच्यध्वमितिं पूर्याप्नांवयति। यथा सुवृष्ट इमामनुविसृत्यं॥५७॥

आप् ओषंधीर्महयंन्ति। ताहगेव तत्। जनंयत्ये त्वा संयौमीत्यांह। प्रजा पुवैतेनं दाधार। अग्नयें त्वाऽग्नीषोमांभ्यामित्यांह् व्यावृत्त्ये। मुखस्य शिरो-ऽसीत्यांह। युज्ञो वै मुखः। तस्यैतच्छिरंः। यत्पुंरोडाशंः। तस्मादेवमांह॥५८॥

घर्मोऽसि विश्वायुरित्यांह। विश्वंमेवायुर्यजंमाने दधाति। उरु प्रथस्वोरु ते यज्ञपंतिः प्रथतामित्यांह। यजंमानमेव प्रजयां पृश्निमेः प्रथयति। त्वचं गृह्णीष्वेत्यांह। सर्वमेवैन् र सर्तनुं करोति। अथाऽऽप आनीय परिमार्षि। मार्स एव तत्त्वचं दधाति। तस्मौत्वचा मार्सं छन्नम्। घर्मो वा एषो-ऽशौन्तः॥५९॥

अर्धमासें ऽर्धमासे प्रवृंज्यते। यत्पुंरोडाशंः। स ईंश्वरो यजमान श्रुचा प्रदहंः। पर्यम्नि करोति। पृशुमेवेनंमकः। शान्त्या अप्रदाहाय। त्रिः पर्यम्नि करोति। त्र्यांवृद्धि युज्ञः। अथो रक्षंसामपंहत्यै। अन्तरित् रक्षोऽन्तरिता अरातय इत्यांह॥६०॥

रक्षंसाम्नतर्हित्यै। पुरोडाशं वा अधिश्रित्र रक्षा ईस्य-

जिघा स्मा दिवि नाको नामाग्री रेक्षोहा। स एवास्माद्रक्षा इस्यपांहन्। देवस्त्वां सिवता श्रंपयत्वित्यांह। सिवतृ प्रमूत एवैन ई श्रपयति। वर्षिष्ठे अधि नाक् इत्यांह। रक्षंसामपहत्यै। अग्निस्तें तुनुवं माऽतिंधागित्याहा-ऽनंतिदाहाय। अग्नें हव्य र रेक्षस्वेत्यांह गुप्त्यैं॥६१॥

अविंदहन्तः श्रपयतेति वाचं विसृंजते। यज्ञमेव ह्वी इष्यंभिव्याहृत्य प्रतंनुते। पुरोरुचमविंदाहाय शृत्यें करोति। मुस्तिष्को वै पुरोडाशः। तं यन्नाभिं वासयेत्। आविर्मस्तिष्केः स्यात्। अभिवांसयित। तस्माद्गृहां मुस्तिष्केः। भस्मंनाऽभिवांसयित। तस्मान्मा इसेनास्थिं छन्नम्॥६२॥

वेदेनाभिवांसयति। तस्मात्केशैः शिरंश्छुन्नम्। अर्खेलितभावुको भवति। य एवं वेदं। पृशोर्वे प्रतिमा पुंरोडाशंः। स नायुजुष्कंमिभवास्यंः। वृथेव स्यात्। ईश्वरा यर्जमानस्य पृशवः प्रमेतोः। सं ब्रह्मंणा पृच्यस्वेत्यांह। प्राणा वै ब्रह्मं॥६३॥

प्राणाः प्रावंः। प्राणेरेव प्राच्याम्पृणिक्ति। न प्रमायुंका भवन्ति। यजंमानो वै पुरोडाशंः। प्रजा प्रावः पुरीषम्। यदेवमंभिवासयंति। यजंमानमेव प्रजयां प्राभिः समंध्यति। देवा वै ह्विर्भृत्वाऽब्रुंवन्। कस्मिन्निदं म्रेक्ष्यामह् इतिं। सौऽग्निरंब्रवीत्॥६४॥

मियं तुनूः सं निधंध्वम्। अहं वस्तं जनियिष्यामि। यस्मिन्मृक्ष्यध्व इतिं। ते देवा अग्नौ तुनूः सन्न्यंदधत। तस्मादाहुः। अग्निः सर्वा देवता इतिं। सोऽङ्गारेणाऽऽपः। अभ्यंपातयत्। ततं एकतोऽजायत। स द्वितीयंमभ्यं-पातयत्॥६५॥

ततौँ द्वितौंऽजायत। स तृतीयंम्भ्यंपातयत्। ततिस्त्रितौं-ऽजायत। यद्द्योऽजांयन्त। तदाप्यानांमाप्यत्वम्। यदात्मभ्योऽजांयन्त। तदात्म्यानांमात्म्यत्वम्। ते देवा आप्येष्वंमृजत। आप्या अंमृजत् सूर्यौभ्युदिते। सूर्यौभ्युदितः सूर्याभिनिम्रुक्ते॥६६॥

सूर्याभिनिमुक्तः कुन्खिनि। कुन्खी श्यावदंति। श्यावदंत्रग्रदिधिषौ। अग्रदिधिषुः परिवित्ते। परिवित्तो वीर्हणि। वीर्हा ब्रह्महणि। तद्बेह्महणुं नात्यंच्यवत। अन्तर्वेदि निनंयत्यवंरुद्धै। उल्मुंकेनाभि गृह्णाति शृत्त्वायं। शृतकांमा इव हि देवाः॥६७॥

अन्या जिन्वन्त्यन् विसृत्यैवमाहाशाँन्त आह् गुप्त्यैं छुन्नं ब्रह्माँब्रवीद्वितीयंमुभ्यंपातयथ्सूर्याभिनिम्रुक्ते

देवाः॥————[८]

देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रंसव इति स्प्यमादेते प्रसूँत्यै। अश्विनौर्बाहुभ्यामित्यांह। अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्तौम्। पूष्णो हस्तौभ्यामित्यांहु यत्यै। आदेद इन्द्रंस्य बाहुरंसि दक्षिण इत्यांह। इन्द्रियमेव यजंमाने दधाति। सहस्रंभृष्टिः शृततेंजा इत्यांह। रूपमेवास्यैतन्मंहिमानं व्याचंष्टे। वायुरंसि तिग्मतेंजा इत्यांह। तेजो वै वायुः॥६८॥

तेर्ज एवास्मिन्दधाति। विषाद्वै नामांसुर आंसीत्। सोंऽबिभेत्। यज्ञेनं मा देवा अभिभंविष्युन्तीतिं। स पृंथिवीम्भ्यंवमीत्। सा मेध्याऽभंवत्। अथो यदिन्द्रों वृत्रमहन्। तस्य लोहितं पृथिवीमनु व्यंधावत्। सा मेध्याऽभंवत्। पृथिवि देवयज्नीत्यांह॥६९॥

मेध्यांमेवैनां देवयर्जनीं करोति। ओषंध्यास्ते मूलं मा हिर्श्सेष्मित्यांह। ओषंधीनामहिर्श्सायै। ब्रजं गंच्छ गोस्थानमित्यांह। छन्दार्श्से वै ब्रजो गोस्थानी। छन्दार्श्स्येवास्में ब्रजं गोस्थानें करोति। वर्षंतु ते द्यौरित्यांह। वृष्टिवें द्यौः। वृष्टिमेवावं रुन्धे। ब्रधान देव सवितः पर्मस्यां परावतीत्यांह॥७०॥

द्वौ वाव पुरुषौ। यं चैव द्वेष्टिं। यश्चैनं द्वेष्टिं। तावुभौ बंध्नाति पर्मस्यां परावितं श्तेन पाशैंः। योंऽस्मान्द्वेष्टि यं चं व्यं द्विष्मस्तमतो मा मौगित्याहानिं मुक्त्यै। अररुर्वे नामां सुर आंसीत्। स पृथिव्यामुपं मुप्तोऽशयत्। तं देवा अपंहतो-ऽररुंः पृथिव्या इति पृथिव्या अपाँ प्रन्। भ्रातृं व्यो वा अररुंः। अपंहतोऽरुरुंः पृथिव्या इति यदाहं॥७१॥

भ्रातृंव्यमेव पृंथिव्या अपंहन्ति। तेंऽमन्यन्त। दिवं वा

अयमितः पंतिष्यतीति। तम्ररुंस्ते दिवं माऽस्कानिति दिवः पर्यवाधन्त। भ्रातृंब्यो वा अरुरुं। अरुरुंस्ते दिवं मा स्कानिति यदाहं। भ्रातृंब्यमेव दिवः परिवाधते। स्तम्बयजुर्हंरति। पृथिव्या एव भ्रातृंब्यमपहन्ति। द्वितीय हरित॥७२॥

अन्तरिक्षादेवैन्मपंहन्ति। तृतीय हरित। दिव एवैन्मपंहन्ति। तृष्णीं चंतुर्थ हरिति। अपंरिमितादेवैन्मपं-हन्ति। असुराणां वा इयमग्रं आसीत्। यावदासींनः परापश्यंति। तावंद्देवानांम्। ते देवा अंब्रुवन्। अस्त्वेव नोऽस्यामपीतिं॥ ७३॥

क्यंत्रो दास्यथेतिं। यावंथ्स्वयं पंरिगृह्णीथेतिं। ते वसंवस्त्वेतिं दक्षिणतः पर्यगृह्णन्। रुद्रास्त्वेतिं पश्चात्। आदित्यास्त्वेत्यंत्तर्तः। तेंऽग्निना प्राञ्चोऽजयन्। वसुंभिदिक्षिणा। रुद्रैः प्रत्यश्चंः। आदित्येरुदंश्चः। यस्यैवं विदुषो वेदिं परिगृह्णन्ति॥७४॥

भवंत्यात्मनां। परांऽस्य भ्रातृं व्यो भवति। देवस्यं सिवृतुः स्व इत्यांह् प्रसूँत्ये। कर्म कृण्वन्ति वेधस् इत्यांह। इषितः हि कर्म क्रियतें। पृथिव्ये मेध्यं चामेध्यं च व्युदंक्रामताम्। प्राचीनंमुदीचीनं मेध्यम्। प्रतीचीनं दक्षिणाऽमेध्यम्। प्राचीमुदीचीं प्रवृणां करोति। मेध्यांमेवैनां देव्यर्जनीं करोति॥७५॥ प्राश्चौ वेद्यश्सावुन्नयिति। आहुवनीयंस्य परिगृहीत्यै। प्रतीची श्रोणीं। गार्हपत्यस्य परिगृहीत्यै। अथो मिथुनत्वायं। उद्धन्ति। यदेवास्यां अमेध्यम्। तदपंहन्ति। उद्धन्ति। तस्मादोषंधयः परांभवन्ति॥७६॥

मूलं छिनत्ति। भ्रातृंव्यस्यैव मूलं छिनत्ति। मूलं वा अंतितिष्ठद्रक्षाः स्यनृत्यंपते। यद्धस्तेन छिन्द्यात्। कुन्खिनीः प्रजाः स्युः। स्फोनं छिनत्ति। वज्रो वै स्फाः। वज्रेणैव यज्ञाद्रक्षाः स्यपंहन्ति। पितृदेवत्याऽतिंखाता। इयंतीं खनति॥७७॥

प्रजापंतिना यज्ञमुखेन सम्मिताम्। वेदिर्देवेभ्यो निलायत। तां चंतुरङ्गुलेऽन्वंविन्दन्। तस्माँ चतुरङ्गुलं खेयाँ। चतुरङ्गुलं खंनति। चतुरङ्गुले ह्योषंधयः प्रतितिष्ठंन्ति। आ प्रंतिष्ठायैं खनति। यजमानमेव प्रंतिष्ठां गंमयति। दक्षिणतो वर्षीयसीं करोति। देवयजनस्यैव रूपमंकः॥७८॥

पुरीषवतीं करोति। प्रजा वै पृशवः पुरीषम्। प्रजयैवैनं पृशिमः पुरीषवन्तं करोति। उत्तरं परिग्राहं परिगृह्णाति। पृताविती वै पृथिवी। याविती वेदिः। तस्यां पृतावित एव भ्रातृंव्यं निर्भज्यं। आत्मन् उत्तरं परिग्राहं परिगृह्णाति। ऋतमंस्यृत्सदंनमस्यृत्श्रीर्सीत्यांह। यथायजुरेवैतत्॥७९॥

कूरमिंव वा पुतत्करोति। यद्वेदिं करोतिं। धा असि

स्वधा असीतिं योयप्यते शान्त्यैं। उर्वी चासि वस्वीं चासीत्यांह। उर्वीमेवेनां वस्वीं करोति। पुरा क्रूरस्यं विसृपों विरप्शिन्नित्यांह मेध्यत्वायं। उदादायं पृथिवीं जीरदांनुर्यामेरंयं चन्द्रमंसि स्वधाभिरित्यांह। यदेवास्यां अमेध्यम्। तदंपहत्यं। मेध्यां देवयजंनीं कृत्वा॥८०॥

यद्दश्चन्द्रमंसि मेध्यम्। तद्स्यामेरयित। तां धीरांसो अनुदृश्यं यजन्त् इत्याहानुंख्यात्यै। प्रोक्षंणीरा सांदय। इध्माबर्हिरुपंसादय। स्रुवं च स्रुचंश्च सम्मृंड्डि। पत्नी १ सन्नंह्य। आज्येंनोदेहीत्यांहानुपूर्वतांयै। प्रोक्षंणीरा सांदयित। आपो वै रंक्षोष्नीः॥८१॥

रक्षंसामपंहत्ये। स्फास्य वर्त्मंन्थ्सादयति। युज्ञस्य सन्तंत्ये। उवाच हासितो देवलः। पृतावंतीवां अमुष्मिं छोक आपं आसन्। यावंतीः प्रोक्षंणीरिति। तस्माँ द्वहीरासाद्याः। स्फामुदस्यन्। यं द्विष्यात्तं ध्यांयेत्। शुचैवैनंमपंयति॥८२॥ व वायुर्गह परावतीत्याहाहं द्वितीय हर्तीतिं परिगृह्वितं देवयर्जनीं करोति भवित्र खनत्यकरेतत्कृत्वा रक्षोष्टीरंपंयति॥—[९]

वज्रो वै स्फाः। यद्नवश्चं धारयेंत्। वज्रेंऽध्वर्युः क्षंण्वीत। पुरस्तांत्तिर्यश्चं धारयति। वज्रो वै स्फाः। वज्रेंणैव यज्ञस्यं दक्षिणतो रक्षाङ्स्यपंहन्ति। अग्निभ्यां प्राचंश्च प्रतीचंश्च। स्फोनोदींचश्चाध्रराचंश्च। स्फोन वा एष वज्रेंणास्यै पाप्मानं

## भार्तृव्यमपुहत्यं। उत्क्रेऽधि प्रवृंश्वति॥८३॥

यथोपधार्यं वृश्चन्त्येवम्। हस्ताववं नेनिक्ते। आत्मानंमेव पंवयते। स्फ्यं प्रक्षांलयति मेध्यत्वार्यः। अथो पाप्मनं एव भ्रातृंव्यस्य न्युङ्गं छिनित्ति। इध्माबुर्हिरुपंसादयति युक्त्यै। यज्ञस्यं मिथुन्त्वार्यः। अथो पुरोरुचंमेवैतां दंधाति। उत्तरस्य कर्मणोऽनुंख्यात्यै। न पुरस्तांत्प्रत्यगुपंसादयेत्॥८४॥

यत्पुरस्तौत्प्रत्यगुंपसादयौत्। अन्यत्रांऽऽहुतिपृथादि्धमं प्रतिंपादयेत्। प्रजा वै ब्र्हिः। अपंराध्रुयाद्वर्हिषां प्रजानां प्रजनंनम्। पृश्चात्प्रागुपंसादयित। आहुतिपृथेने्धमं प्रतिं-पादयित। सम्प्रत्येव ब्र्हिषां प्रजानां प्रजनंनम्पैति। दक्षिणिम्ध्मम्। उत्तंरं ब्र्हिः। आत्मा वा इध्मः। प्रजा ब्र्हिः। प्रजा ह्यांत्मन् उत्तंरतरा तीर्थे। ततो मेधंमुप्नीयं। यथादेवतमेवेनत्प्रतिंष्ठापयित। प्रतिं तिष्ठति प्रजयां पशुभिर्यजमानः॥८५॥

वृश्चित् साद्येदिध्मः पर्श्वं च॥------[१०]

तृतीयंस्यां देवस्याश्वपुर्शुं यो वै पूँर्वेद्युः कर्मणे वामिन्द्रों वृत्रमंहुन्थ्सोऽपोऽवंधूतं धृष्टिंदेवस्येत्यांहु सं वंपामि देवस्य स्फ्यमा दंदे वज्रो वै स्फ्यो दर्श॥१०॥ तृतीयंस्यां यज्ञस्यानंतिरेकाय प्वित्रंवत्यध्वर्युं चांधिषवंणमस्यन्तिरक्षि एव रक्षंसाम्नतर्हित्ये द्वौ वाव पुरुषौ यद्दश्चन्द्रमंसि मेध्यं पञ्चाशींतिः॥८५॥ तृतीयंस्यां यज्ञमानः॥

हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके द्वितीयः प्रपाठकः समाप्तः॥

## ॥ तृतीयः प्रश्नः॥

## ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके तृतीयः प्रपाठकः॥

प्रत्युंष्ट्र रक्षः प्रत्युंष्टा अरांतय इत्यांह। रक्षंसामपंहत्यै। अग्नेर्वस्तेजिष्ठेन तेजंसा निष्टंपामीत्यांह मेध्यत्वायं। स्रुचः सम्मौष्टिं। स्रुवमग्नें। पुमार्ंसमेवाभ्यः सङ्श्यंति मिथुन्त्वायं। अथं जुहूम्। अथोप्भृतम्ं। अथं ध्रुवाम्। असौ वै जुहूः॥१॥

अन्तरिक्षमुप्भृत्। पृथिवी ध्रुवा। इमे वै लोकाः स्रुचेः। वृष्टिः सम्मार्जनानि। वृष्टिवां इमाँ लोकानं नुपूर्वं केल्पयति। ते ततः क्रुप्ताः समेधन्ते। समेधन्तेऽस्मा इमे लोकाः प्रजयां पृश्मिः। य एवं वेदे। यदि कामयेत् वर्षुकः पूर्जन्यः स्यादिति। अग्रतः सम्मृज्यात्॥२॥

वृष्टिमेव नि यंच्छति। अवाचीनांग्रा हि वृष्टिः। यदिं कामयेतावंर्षकः स्यादितिं। मूलतः सम्मृंज्यात्। वृष्टिंमेवोद्यंच्छति। तदु वा आंहुः। अग्रत एवोपरिंष्टाथ्सम्मृं-ज्यात्। मूलतोंऽधस्तांत्। तदंनुपूर्वं कंल्पते। वर्षुंको भवतीतिं॥३॥

प्राचीमभ्याकारम्। अग्रैरन्तर्तः। एविमव् ह्यन्नम् ह्यते। अथो अग्राद्वा ओषंधीनामूर्जं प्रजा उपंजीवन्ति। ऊर्ज एवान्नाद्यस्यावंरुद्धे। अधस्तात्प्रतीचीम्। दण्डमुत्तम्तः। मूलंनु मूलं प्रतिष्ठित्ये। तस्मादर् ह्यो प्राञ्चपरिष्टा ह्योमानि।

### प्रत्यश्चधस्तांत्॥४॥

सुग्ध्येषा। प्राणो वै स्रुवः। जुहूर्दक्षिणो हस्तः। उपभृथ्सव्यः। आत्मा ध्रुवा। अन्न सम्मार्जनानि। मुख्तो वै प्राणोऽपानो भूत्वा। आत्मानमन्नं प्रविश्यं। बाह्यतस्तनुव श्रिभयति। तस्माध्स्रुवमेवाग्रे सम्मार्षि। मुख्तो हि प्राणो-ऽपानो भूत्वा। आत्मानमन्नमाविश्विति। तौ प्राणापानौ। अव्यर्धकः प्राणापानाभ्यां भवति। य एवं वेदं॥५॥

दिवः शिल्पमवंततम्। पृथिव्याः कुक्भिं श्रितम्। तेनं वयः सहस्रंवल्शेन। सपत्नं नाशयामसि स्वाहेतिं सुख्सम्मार्जनान्यग्नौ प्र हंरति। आपो वै दर्भाः। रूपमेवैषांमेतन्मंहिमानं व्याचेष्टे। अनुष्टुभूर्चा। आनुष्टुभः प्रजापंतिः। प्राजापत्यो वेदः। वेदस्याग्रः सुख्सम्मार्जनानि॥६॥

स्वेनैवैनांनि छन्दंसा। स्वयां देवतंया समर्धयति। अथो ऋग्वाव योषां। दुर्भो वृषां। तन्मिथुनम्। मिथुनमेवास्य तद्यज्ञे कंरोति प्रजनंनाय। प्रजायते प्रजयां पृशुभिर्यजमानः। तान्येके वृथैवापांस्यन्ति। तत्तथा न कार्यम्। आरंब्यस्य य्ज्ञियंस्य कर्मणः सविंदोहः॥७॥

यद्यंनानि पृशवोंऽभि तिष्ठंयुः। न तत्पृशुभ्यः कम्।

अद्भिर्मार्जियित्वोत्करे न्यंस्येत्। यद्वै यज्ञियंस्य कर्मणो-ऽन्यत्राऽऽहुंतीभ्यः सन्तिष्ठंते। उत्करो वाव तस्यं प्रतिष्ठा। एता हि तस्मैं प्रतिष्ठां देवाः समर्भरन्। यद्द्भिर्मार्जयंति। तेनं शान्तम्। यदुंत्करे न्यस्यतिं। प्रतिष्ठामेवैनांनि तद्गंमयति॥८॥

प्रतिं तिष्ठति प्रजयां पृशुभिर्यजंमानः। अथौं स्तम्बस्य वा पृतद्रूपम्। यथ्स्रुंख्सम्मार्जनानि। स्तम्बशो वा ओषंधयः। तासां जरत्कक्षे पृशवो न रंमन्ते। अप्रियो ह्येषां जरत्कक्षः। यावंदप्रियो हु वे जंरत्कक्षः पंशूनाम्। तावंदप्रियः पशूनां भंवति। यस्यैतान्यन्यत्राग्नेर्दधंति। नुवदाव्यांसु वा ओषंधीषु पृशवो रमन्ते॥९॥

न्वदावो ह्यंषां प्रियः। यावंत्प्रियो ह् वै नंवदावः पंशूनाम्। तावंत्प्रियः पशूनां भंवति। यस्यैतान्यग्रौ प्रहरंन्ति। तस्मदितान्यग्रावेव प्रहरेत्। यत्रस्मिन्थ्सम्मृज्यात्। पृशूनां धृत्यैं। यो भूतानामधिपतिः। रुद्रस्तंन्तिचरो वृषां। पृशूनस्माकं मा हि ईसीः। एतदंस्तु हुतं तव स्वाहेत्यंग्निस्ममार्जनान्यग्रौ प्रहरिते। एषा वा एतेषां योनिः। एषा प्रतिष्ठा। स्वामेवैनांनि योनिम्ं। स्वां प्रतिष्ठां गंमयति। प्रतिं तिष्ठति प्रजयां पृशुभिर्यजमानः॥१०॥

वेदस्याग्रईं सुख्सम्मार्जनानि विदोहों गंमयति पुशवों रमन्ते हि॰सीः षट् चं॥——[२]

अयंज्ञो वा एषः। योऽप्त्तीकः। न प्रजाः प्रजायेरन्। पत्यन्वास्ते। यज्ञमेवाकः। प्रजानां प्रजननाय। यत्तिष्ठंन्ती सन्नह्येत। प्रियं ज्ञाति १ रुन्ध्यात्। आसीना सन्नह्यते। आसीना ह्येषा वीर्यं करोति॥११॥

यत्पश्चात्प्राच्यन्वासीत। अनयां समदंन्दधीत। देवानां पित्निया समदंन्दधीत। देशाँदक्षिणत उदीच्यन्वाँस्ते। आत्मनों गोपीथायं। आशासांना सौमन्सिमत्यांह। मेध्यांमेवैनां केवंलीं कृत्वा। आशिषा समर्धयित। अग्नेरनुंव्रता भूत्वा सन्नेह्ये सुकृताय किनत्यांह। एतद्वै पित्नेयै व्रतोपनयंनम्॥१२॥

तेनैवैनां व्रतमुपंनयति। तस्मांदाहुः। यश्चैवं वेद् यश्च न। योर्ऋमेव युंते। यम्नवास्तें। तस्यामुष्मिं ह्योके भंवतीति योर्ऋण। यद्योक्रम्ं। स योगः। यदास्तें। स क्षेमः॥१३॥

योगक्षेमस्य क्र्रह्यै। युक्तं क्रियाता आशीः कामें युज्याता इतिं। आशिषः समृद्धे। ग्रन्थिं ग्रंश्नाति। आशिषं पुवास्यां परिं गृह्णाति। पुमान् वै ग्रन्थिः। स्त्री पत्नीं। तन्मिथुनम्। मिथुनम्वास्य तद्यज्ञे कंरोति प्रजनंनाय। प्र जांयते प्रजयां पश्मिर्यजमानः॥१४॥

अथों अर्धो वा एष आत्मनंः। यत्पर्नीं। यज्ञस्य धृत्या अशिथिलं भावाय। सुप्रजसंस्त्वा वयः सुपत्नीरुपं सेदिमेत्यांह। यज्ञमेव तन्मिथुनीकरोति। ऊनेऽतिरिक्तं धीयाता इति प्रजाँत्यै। महीनां पयोऽस्योषंधीनाः रस् इत्यांह। रूपमेवास्यैतन्मंहिमानं व्याचंष्टे। तस्य तेऽक्षीयमाणस्य निर्वपामि देवयुज्याया इत्यांह। आशिषंमेवैतामा शाँस्ते॥१५॥

क्रोतिं व्रतोपनर्यनुं क्षेमो यर्जमानः शास्ते॥\_\_\_\_\_[3]

घृतं च वै मध्रं च प्रजापंतिरासीत्। यतो मध्यांसीत्। ततः प्रजा अंसृजत। तस्मान्मध्रंषि प्रजननिमवास्ति। तस्मान्मध्रंषा न प्रचंरन्ति। यातयांम् हि। आज्येन् प्रचंरन्ति। यज्ञो वा आज्यम्। यज्ञेनैव यज्ञं प्रचंरन्त्ययांतयामत्वाय। पत्न्यवेक्षते॥१६॥

मिथुन्त्वाय प्रजांत्यै। यहै पत्नी यज्ञस्यं क्रोतिं। मिथुनं तत्। अथो पत्निया एवेष यज्ञस्यांन्वारम्भोऽनंवच्छित्त्यै। अमेध्यं वा एतत्कंरोति। यत्पत्य्वेक्षंते। गार्हंपत्येऽधिं श्रयति मेध्यत्वायं। आह्वनीयंम्भ्युद्रंवति। यज्ञस्य सन्तंत्यै। तेजोऽस् तेजोऽनु प्रेहीत्यांह॥१७॥

तेजो वा अग्निः। तेज् आज्यम्। तेजंसैव तेजः समर्धयति। अग्निस्ते तेजो मा विनैदित्याहाहि रंसायै। स्फ्यस्य वर्त्मन्थ्सादयति। यज्ञस्य सन्तंत्यै। अग्नेर्जिह्वाऽसिं सुभूर्देवानामित्यांह। यथायजुरेवैतत्। धाम्नेधाम्ने देवेभ्यो यजुंषेयजुषे भ्वेत्यांह। आशिषंमेवैतामा शांस्ते॥१८॥

तद्वा अतंः पुवित्रांभ्यामेवोत्पुंनाति। यजंमानो

वा आज्यम्। प्राणापानौ प्वित्रें। यजंमान एव प्राणापानौ दंधाति। पुन्राहारम्। एविमेंव हि प्राणापानौ स्थरंतः। शुक्रमंसि ज्योतिरसि तेजोऽसीत्याह। रूपमेवास्यैतन्महिमानं व्याचंष्टे। त्रिर्यज्ञंषा। त्रयं इमे लोकाः॥१९॥

पुषां लोकानामास्यै। त्रिः। त्र्यांवृद्धि युज्ञः। अथों मेध्यत्वायं। अथाऽऽज्यंवतीभ्यामुपः। रूपमेवासांमेतद्वर्णं दधाति। अपि वा उताऽऽहुंः। यथां हु वै योषां सुवर्ण् क्ष् हिरंण्यं पेश्वलं बिभ्रंती रूपाण्यास्तै। पुवमेता पुतर्हीति। आपो वै सर्वा देवताः॥२०॥

पुषा हि विश्वेषां देवानां तृनः। यदाज्यम्। तृत्रोभयोमीमार्सा। जामि स्यात्। यद्यजुषाऽऽज्यं यज्ञेषाऽप उत्पृनीयात्। छन्दंसाऽप उत्पृनात्यजामित्वाय। अथो मिथुनत्वायं। सावित्रियर्चा। सवितृप्रंसूतं मे कर्मासदिति। सवितृप्रंसूतमेवास्य कर्म भवति। पच्छो गांयत्रिया त्रिष्यमृद्धत्वायं। अद्भिरेवौषंधीः सं नयति। ओषंधीभिः पृशून्। पृशुभिर्यज्ञंमानम्। शुक्रं त्वां शुक्रायां ज्योतिंस्त्वा ज्योतिंष्यर्चिस्त्वाऽर्चिषीत्याह सर्वत्वायं। पर्यांप्त्या अनंन्तरायाय॥२१॥

ईक्षुत आह शास्ते लोका देवता भवति षट् चं॥\_\_\_\_\_

देवासुराः संयंत्ता आसन्। स एतिमन्द्र आज्यंस्याव-काशमंपश्यत्। तेनावैंक्षत्। ततो देवा अभवन्। पराऽसुंराः। य एवं विद्वानाज्यंम्वेक्षते। भवंत्यात्मनां। परांऽस्य भ्रातृंव्यो भवति। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। यदाज्येनान्यानि ह्वी इष्यंभिघारयंति॥२२॥

अथ् केनाऽऽज्यमितिं। स्त्येनेतिं ब्रूयात्। चक्षुर्वे स्त्यम्। स्त्येनैवैनंद्भि घारयति। ईश्वरो वा एषोंऽन्धो भविंतोः। यश्चक्षुषाऽऽज्यंम्वेक्षंते। निमील्यावेंक्षेत। दाधारात्मश्चक्षुंः। अभ्याज्यं घारयति। आज्यं गृह्णाति॥२३॥

छन्दा रेस् वा आज्यम्। छन्दा रेस्येव प्रीणाति। चतुर्जुह्वां गृह्णाति। चतुंष्पादः पृशवंः। पृश्न्वेवावं रुन्धे। अष्टावृंपभृतिं। अष्टाक्षंरा गायत्री। गायत्रः प्राणः। प्राणमेव पृश्र्षं दधाति। चतुर्ध्रवायांम्॥२४॥

चतुंष्पादः प्शवंः। पृशुष्वेवोपरिष्टात्प्रतिं तिष्ठति। यजमानदेवत्यां वै जुहूः। भातृव्यदेवत्योपभृत्। चतुर्जुह्वां गृह्णन्भूयो गृह्णीयात्। अष्टावुंपभृतिं गृह्णन्कनीयः। यजमानायैव भातृंव्यमुपंस्तिं करोति। गौर्वे सुचंः। चतुर्जुह्वां गृह्णाति। तस्माचतुंष्पदी॥२५॥

अष्टावंपभृतिं। तस्मांद्ष्टाशंफा। चृतुर्ध्वायांम्। तस्मा्चतुंः स्तना। गामेव तथ्सङ्स्कंरोति। साऽस्मै सङ्स्कृतेषुमूर्जं दुहे। यञ्जुह्वां गृह्णातिं। प्रयाजेभ्यस्तत्। यदुंपभृतिं। प्रयाजानूयाजेभ्यस्तत्। सर्वस्मै वा एतद्यज्ञायं गृह्यते। यद्भुवायामाज्यम्॥२६॥

अभि्षारयंति गृह्णाति ध्रुवायां चतुंष्पदी प्रयाजानूयाजिभ्यस्तद्वे चं॥—————[५]

आपो देवीरग्रेपुवो अग्रेगुव इत्याह। रूपमेवासांमेतन्महि-मानं व्याचेष्टे। अग्रं इमं यज्ञन्नयताग्रं यज्ञपंतिमित्याह। अग्रं एव यज्ञं नयन्ति। अग्रं यज्ञपंतिम्। युष्मानिन्द्रो-ऽवृणीत वृत्रतूर्ये यूयमिन्द्रंमवृणीध्वं वृत्रतूर्य इत्याह। वृत्र॰ हं हिन्ष्यन्निन्द्र आपो वव्रे। आपो हेन्द्रं विव्ररे। संज्ञामेवासांमेतथ्सामानं व्याचेष्टे। प्रोक्षिताः स्थेत्यांह॥२७॥

तेनाऽऽपः प्रोक्षिताः। अग्निर्देवेभ्यो निलायत। कृष्णो रूपं कृत्वा। स वनस्पतीन्प्राविशत्। कृष्णो ऽस्याखरेष्ठो ऽग्नये त्वा स्वाहेत्याह। अग्नयं एवैनं जुष्टं करोति। अथो अग्नेरेव मेधमवे रुन्धे। वेदिरिस ब्रहिषे त्वा स्वाहेत्याह। प्रजा व ब्रहिः। पृथिवी वेदिः॥२८॥

प्रजा एव पृथिव्यां प्रतिष्ठापयित। बर्हिरेसि सुग्भ्यस्त्वा स्वाहेत्यांह। प्रजा वै बर्हिः। यजंमानः स्रुचंः। यजंमानमेव प्रजासु प्रतिष्ठापयित। दिवे त्वाऽन्तरिक्षाय त्वा पृथिव्यै त्वेतिं बर्हिरासाद्य प्रोक्षंति। एभ्य एवैनं ल्लोकेभ्यः प्रोक्षंति। अथ ततः सह स्रुचा पुरस्तांत्प्रत्यश्चं ग्रन्थिं प्रत्युंक्षति। प्रजा वै बर्हिः। यथा सूत्यै काल आपंः पुरस्ताद्यन्तिं॥२९॥

ताहगेव तत्। स्वधा पितृभ्य इत्यांह। स्वधाकारो हि पितृणाम्। ऊर्ग्भव बर्हिषद्ध इति दक्षिणाये श्रोणेरोत्तंरस्ये निनंयति सन्तंत्ये। मासा वै पितरों बर्हिषदंः। मासांनेव प्रीणाति। मासा वा ओषंधीर्वर्धयंन्ति। मासाः पचन्ति समृद्धे। अनंतिस्कन्दन् ह पूर्जन्यों वर्षित। यत्रैतदेवं क्रियते॥३०॥

ऊर्जा पृथिवीं गंच्छुतेत्यांह। पृथिव्यामेवोर्जं दधाति। तस्मांत्पृथिव्या ऊर्जा भुंञ्जते। ग्रुन्थिं वि स्नर्स्सयित। प्रजनयत्येव तत्। ऊर्ध्वं प्राश्चमुद्गूढं प्रत्यश्चमा यंच्छिति। तस्मांत्प्राचीन् रे रेतों धीयते। प्रतीचीः प्रजा जायन्ते। विष्णोः स्तूपोऽसीत्याह। युज्ञो वै विष्णुं:॥३१॥

यज्ञस्य धृत्यै। पुरस्तांत्प्रस्तरं गृंह्णाति। मुख्यंमेवेनं करोति। इयंन्तं गृह्णाति। प्रजापंतिना यज्ञमुखेन सम्मितम्। इयंन्तं गृह्णाति। यज्ञप्रुषा सम्मितम्। इयंन्तं गृह्णाति। पृतावृद्दे पुरुषे वीर्यम्। वीर्यसम्मितम्॥३२॥

अपंरिमितं गृह्णाति। अपंरिमित्स्यावंरुख्यै। तस्मिन्यवित्रे अपि सृजति। यजमानो व प्रस्तरः। प्राणापानौ प्वित्रें। यजमान एव प्राणापानौ दंधाति। ऊर्णांम्रदसं त्वा स्तृणामीत्याह। यथायजुरेवेतत्। स्वास्स्थं देवेभ्य इत्याह। देवेभ्यं पुवैनंथ्स्वास्स्थं करोति॥३३॥ ब्र्हिः स्तृंणाति। प्रजा वे ब्र्हिः। पृथिवी वेदिः। प्रजा एव पृथिव्यां प्रतिष्ठापयति। अनंतिदृश्वः स्तृणाति। प्रजयैवेनं पृश्मिरनंतिदृश्वं करोति। धारयंन्प्रस्तरं परिधीन्परि दधाति। यजमानो वे प्रस्तरः। यजमान एव तथ्स्वयं परिधीन्परि दधाति। गृन्धुर्वोऽसि विश्वावंसुरित्यांह॥३४॥

विश्वमेवायुर्यजंमाने दधाति। इन्द्रंस्य बाहुरंसि दक्षिण इत्यांह। इन्द्रियमेव यजंमाने दधाति। मित्रावरुंणौ त्वोत्तर्तः परिधत्तामित्यांह। प्राणापानौ मित्रावरुंणौ। प्राणापानावेवास्मिन्दधाति। सूर्यस्ता पुरस्तांत् पात्वित्यांह। रक्षंसामपंहत्यै। कस्यांश्चिद्भिशंस्त्या इत्यांह। अपंरिमितादेवैनंं पाति॥३५॥

वीतिहौंत्रं त्वा कव इत्यांह। अग्निमेव होत्रेण् समर्धयति। द्युमन्त्र समिधीमहीत्यांह समिद्धे। अग्ने बृहन्तंमध्वर इत्यांह वृद्धैं। विशो यन्ने स्थ इत्यांह। विशां यत्यैं। उदीचीनांग्ने नि दंधाति प्रतिष्ठित्ये। वसूंनार रुद्राणांमादित्यानार सदिस सीदेत्यांह। देवतांनामेव सदेने प्रस्तरर सांदयति। जुहूरंसि घृताची नाम्नेत्यांह॥३६॥

असौ वै जुहूः। अन्तरिक्षमुप्भृत्। पृथिवी ध्रुवा। तासामेतदेव प्रियं नाम। यद्घृताचीतिं। यद्घृताचीत्याहं। प्रियेणैवैना नाम्नां सादयति। एता अंसदन्थ्सुकृतस्यं लोक इत्यांह। सृत्यं वै सुंकृतस्यं लोकः। सृत्य एवैनाः सुकृतस्यं लोके सांदयित। ता विष्णो पाहीत्यांह। युज्ञो वै विष्णुंः। युज्ञस्य धृत्यैं। पाहि युज्ञं पाहि युज्ञपंतिं पाहि मां यंज्ञनियमित्यांह। युज्ञाय यजंमानायाऽऽत्मनें। तेभ्यं पुवाऽऽशिषुमाशास्तेऽनांत्ये॥३७॥

स्थेत्यांह पृथिवी वेदिर्यन्ति क्रियते वीर्णुर्वीर्यंसम्मितं करोत्याह पाति नाम्नेत्यांह लोके सांदयित षद चं॥————[६]

अग्निना वै होत्रां। देवा असुंरान्भ्यंभवन्। अग्नयं सिम्ध्यमानायानुंबूहीत्यांह् भ्रातृंव्याभिभूत्ये। एकंविश्वातिमिध्मदारूणिं भवन्ति। एकविश्वा वै पुरुषः। पुरुष्ट्याऽऽस्यै। पश्चंदशेध्मदारूण्यभ्या दंधाति। पश्चंदश्च वा अर्धमासस्य रात्रयः। अर्धमास्याः संवथ्सर औप्यते। त्रीन्पंरिधीन्परिं दधाति॥३८॥

ऊर्ध्वे स्मिधावा दंधाति। अन्याजेभ्यंः स्मिध्मितं शिनष्टि। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतूनेव प्रीणाति। वेदेनोपं वाजयित। प्राजापत्यो वै वेदः। प्राजापत्यः प्राणः। यजमान आहवनीयंः। यजमान एव प्राणं दंधाति॥३९॥

त्रिरुपं वाजयित। त्रयो वै प्राणाः। प्राणानेवास्मिन्दधाति। वेदेनोप्यत्यं स्रुवेणं प्राजापत्यमांघारमा घारयित। यज्ञो वै प्रजापंतिः। यज्ञमेव प्रजापंतिं मुख्त आरंभते। अथौं प्रजापंतिः सर्वा देवताः। सर्वा एव देवताः प्रीणाति। अग्निमंग्नीतिस्तिः सं मृङ्कीत्यांह। त्र्यांवृद्धि यज्ञः॥४०॥ अथो रक्षंसामपंहत्यै। परिधीन्थ्सं माँष्टिं। पुनात्येवैनान्। त्रिस्त्रिः सं माँष्टिं। त्र्यांवृद्धि युज्ञः। अथों मेध्यत्वाये। अथों एते वै देवाश्वाः। देवाश्वानेव तथ्सं माँष्टिं। सुवर्गस्यं लोकस्य समष्ट्रो। आसीनोऽन्यमांघारमा घारयति॥४१॥

तिष्ठंत्रन्यम्। यथाऽनों वा रथं वा युआत्। एवमेव तदंध्वर्युर्यज्ञं युंनिक्ता। सुवर्गस्यं लोकस्याभ्यूँढौ। वहंन्त्येनं ग्राम्याः पृशवंः। य एवं वेदं। भुवंनमिस वि प्रथस्वेत्यांह। यज्ञो वै भुवंनम्। यज्ञ एव यजंमानं प्रजयां पृशुभिः प्रथयति। अग्ने यष्टंरिदन्नम् इत्यांह॥४२॥

अग्निर्वे देवानां यष्टां। य एव देवानां यष्टां। तस्मां एव नमंस्करोति। जुह्वेह्यग्निस्त्वां ह्वयति देवयुज्याया उपंभृदेहिं देवस्त्वां सिवृता ह्वयति देवयुज्याया इत्याह। आग्नेयी वै जुहूः। सावित्र्युप्भृत्। ताभ्यांमेवैने प्रसूत् आदंत्ते। अग्नांविष्णू मा वामवं ऋमिष्मित्यांह। अग्निः पुरस्तांत्। विष्णुंर्यज्ञः पश्चात्॥४३॥

ताभ्यांमेव प्रंतिप्रोच्यात्या क्रांमित। विजिंहाथां मा मा सन्तांप्तमित्याहाहि स्सायै। लोकं में लोककृतौ कृणुत्मित्यांह। आशिषंमेवैतामा शांस्ते। विष्णोः स्थानम्सीत्यांह। युज्ञो वे विष्णुः। एतत्खलु वे देवानामपंराजितमायतंनम्। यद्यज्ञः। देवानांमेवापंराजित आयतंने तिष्ठति। इत इन्द्रों अकृणोद्वीर्याणीत्यांह॥४४॥ इन्द्रियमेव यजंमाने दधाति। समारभ्योर्ध्वो अध्वरो दिविस्पृश्मित्यांह् वृद्धौ। आघारमांघार्यमांणमनुं समारभ्यं। एतस्मिन्काले देवाः सुंवर्गं लोकमांयन्। साक्षादेव यजंमानः सुवर्गं लोकमेति। अथो समृद्धेनैव युजेन यजंमानः सुवर्गं लोकमेति। अहुंतो युजो युज्ञपंतिरत्याहानांत्ये। इन्द्रांवान्थ्स्वाहेत्यांह। इन्द्रियमेव यजंमाने दधाति। बृहद्भा इत्यांह॥४५॥

सुवर्गो वै लोको बृहद्भाः। सुवर्गस्यं लोकस्य समेष्ट्री। यजमानदेवत्यां वै जुहूः। भ्रातृव्यदेवत्योपभृत्। प्राण आंघारः। यथ्म ईस्पर्शयेत्। भ्रातृंव्येऽस्य प्राणं दंध्यात्। अस ईस्पर्शयन्नत्या क्रांमति। यजमान एव प्राणं दंधाति। पाहि माँउग्ने दुश्चंरितादा मा सुचंरिते भुजेत्याह॥४६॥

अग्निर्वाव प्वित्रम्। वृज्जिनमनृतं दुश्चरितम्। ऋजुक्रमं स्त्य स्यंरितम्। अग्निरेवैनं वृज्जिनादनृताद्दश्चरितात्पाति। ऋजुक्में स्त्ये सुचरिते भजति। तस्मदिवमा शास्ते। आत्मनों गोपीथायं। शिरो वा एतद्यज्ञस्यं। यदांघारः। आत्मा ध्रुवा॥४७॥

आघारमाघार्यं ध्रुवा र समंनक्ति। आत्मन्नेव यज्ञस्य शिरः प्रति दधाति। द्विः समंनक्ति। द्वौ हि प्राणापानौ। तदांहुः। त्रिरेव समंश्यात्। त्रिधांतु हि शिर् इतिं। शिरं इवैतद्यज्ञस्यं। अथो त्रयो वै प्राणाः। प्राणानेवास्मिन्दधाति। मुखस्य शिरोंऽसि सञ्चोतिषा ज्योतिरङ्गामित्यांह। ज्योतिरेवास्मां उपरिष्टाद्वधाति। सुवर्गस्यं लोकस्यानुंख्यात्यै॥४८॥

परिंदधाति प्राणं दंधाति हि युज्ञो घांरयित नम् इत्यांह पृश्चाद्वीर्याणीत्यांह् भा इत्यांह भुजेत्यांह ध्रुवैवास्मिन्दधाति त्रीणि च॥—————————[७]

धिष्णिया वा एते न्युंप्यन्ते। यद्घ्रह्मा। यद्घोतां। यदंध्वर्युः। यद्ग्रीत्। यद्यजमानः। तान् यदंन्तरेयात्। यजमानस्य प्राणान्थ्सङ्कर्षेत्। प्रमायुंकः स्यात्। पुरोडाशमप्गृह्य सश्चरत्यध्वर्युः॥४९॥

यजंमानायैव तल्लोक शिर्षिति। नास्यं प्राणान्थ्सङ्कर्षित। न प्रमायंको भवति। पुरस्तांत प्रत्यङ्कासीनः। इडांया इडामा दंधाति। हस्त्या होत्रें। प्रावो वा इडां। प्रावः पुरुषः। प्रावेव प्राव्यति। इडांये वा एषा प्रजांतिः॥५०॥

तां प्रजांतिं यजमानोऽनु प्र जांयते। द्विर्ङ्गुलांवनिक्ति पर्वणोः। द्विपाद्यजमानः प्रतिष्ठित्यै। स्कृदुपं स्तृणाति। द्विरा दंधाति। स्कृद्भि घांरयति। चृतुः सम्पंद्यते। चृत्वारि वै पृशोः प्रतिष्ठानांनि। यावांनेव पृशुः। तमुपंह्वयते॥५१॥

मुर्खिमिव प्रत्युपंह्वयेत। सम्मुखानेव पृश्नुपं ह्वयते। पृशवो वा इडाँ। तस्माथ्साऽन्वारभ्याँ। अध्वर्युणां च यजंमानेन च। उपंहूतः पशुमानंसानीत्यांह। उप ह्येनो ह्वयंते होताँ। इडांये देवतांनामुपहुवे। उपंहूतः पशुमान्भंवति। य एवं वेदं॥५२॥ यां वै हस्त्यामिडांमादधांति। वाचः सा भांगधेयम्। याम्पूं व्यते। प्राणाना सा। वाचं चैव प्राणा श्र्यावं रुन्धे। अथ वा एतर्ह्युपंहूतायामिडांयाम्। पुरोडाशंस्यैव बंहिषदों मीमा सा। यजंमानं देवा अंब्रुवन्। ह्विनी निर्व्पेति। नाहमंभागो निर्वपस्यामीत्यं ब्रवीत्॥ ५३॥

न मयांऽभागयाऽनुंवक्ष्यथेति वागंब्रवीत्। नाहमंभागा पुरोनुवाक्यां भविष्यामीतिं पुरोनुवाक्यां। नाहमंभागा याज्यां भविष्यामीतिं याज्यां। न मयांऽभागेन वर्षद्वरिष्यथेतिं वषद्वारः। यद्यंजमानभागं निधायं पुरोडाशं बर्हिषदं क्रोतिं। तानेव तद्भागिनंः करोति। चतुर्धा करोति। चतंस्रो दिशंः। दिक्ष्वंव प्रतिं तिष्ठति। ब्रहिषदं करोति॥५४॥

यजंमानो वै पुरोडाशंः। प्रजा बर्हिः। यजंमानमेव प्रजासु प्रतिष्ठापयति। तस्मादस्थ्राऽन्याः प्रजाः प्रतितिष्ठंन्ति। मार्सेनान्याः। अथो खल्वांहुः। दक्षिंणा वा पृता हंविर्यज्ञस्यांन्तर्वेद्यवं रुध्यन्ते। यत्पुरोडाशं बर्हिषदं करोतीतिं। चतुर्धा कंरोति। चत्वारो ह्यंते हंविर्यज्ञस्यर्त्विजः॥५५॥

ब्रह्मा होताँ ऽध्वर्युरग्नीत्। तम्भि मृंशेत्। इदं ब्रह्मणंः। इदः होतुंः। इदमंध्वर्योः। इदम्ग्नीध् इतिं। यथैवादः सौम्येँ ऽध्वरे। आदेशंमृत्विग्भ्यो दक्षिणा नीयन्तें। ताद्दगेव तत्। अग्नीधें

### प्रथमाया दंधाति॥५६॥

अग्निम्ंखा ह्यृद्धिः। अग्निम्ंखामेवर्द्धि यजंमान ऋभ्नोति। सकृदुंपस्तीर्य द्विरादधंत्। उपस्तीर्य द्विर्भि घारयति। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतूनेव प्रीणाति। वेदेनं ब्रह्मणे ब्रह्मभागं परिहरति। प्राजापत्यो वै वेदः। प्राजापत्यो ब्रह्मा॥५७॥

स्विता यज्ञस्य प्रसूँत्यै। अथ कामंमन्येनं। ततो होत्रैं। मध्यं वा एतद्यज्ञस्यं। यद्धोताँ। मध्यत एव यज्ञं प्रीणाति। अथाध्वर्यवैं। प्रतिष्ठा वा एषा यज्ञस्यं। यद्ध्वर्युः। तस्मौद्धविर्यज्ञस्यैतामेवाऽऽवृतमनुं॥५८॥

अन्या दक्षिणा नीयन्ते। युज्ञस्य प्रतिष्ठित्यै। अग्निमंग्नीध्मकृथ्मंकृथ्मं मृड्ढीत्यांह। परांङिव ह्यंतर्हिं युज्ञः। इषिता दैव्या होतांर इत्यांह। इषित हि कर्म क्रियतें। भृद्रवाच्यांय प्रेषितो मानुषः सूक्तवाकायं सूक्ता ब्रूहीत्यांह। आशिषंमेवैतामा शांस्ते। स्वगा दैव्या होतृभ्य इत्यांह। युज्ञमेव तथ्स्वगा करोति। स्वस्तिर्मानुषभ्य इत्यांह। आशिषंमेवैतामा शांस्ते। शुं योर्ब्रूहीत्यांह। शुंयुमेव बांर्हस्पत्यं भांगुधेयेन समर्धयति॥५९॥

च्रत्युष्वुर्युः प्रजातिर्ह्वयते वेदाँब्रवीद्वर्रहिषदं करोत्यृत्विजों दधाति ब्रह्माऽनुंकरोति च्त्वारिं

\_\_\_\_[¿]

अथु सुचांवनुष्टुग्भ्यां वाजंवतीभ्यां व्यूहति। प्रतिष्ठा वा

अंनुष्टुक्। अत्रं वाजः प्रतिष्ठित्यै। अन्नाद्यस्यावंरुद्धै। प्राचीं जुहूमूहित। जातानेव भ्रातृंव्यान्प्रणुंदते। प्रतीचींमुप्भृतम्। जिन्ष्यमाणानेव प्रतिनुदते। सविषूंच एवापोह्यं सपत्नान् यजमानः। अस्मिँ श्लोके प्रति तिष्ठति॥६०॥

द्वाभ्यांम्। द्विप्रंतिष्ठो हि। वसुंभ्यस्त्वा रुद्रेभ्यंस्त्वा-ऽऽदित्येभ्यस्त्वेत्यांह। यथायजुरेवेतत्। स्रुक्षु प्रस्तरमंनक्ति। इमे वै लोकाः स्रुचंः। यजंमानः प्रस्तरः। यजंमानमेव तेजंसाऽनक्ति। त्रेधाऽनंक्ति। त्रयं इमे लोकाः॥६१॥

पृभ्य एवैनं लोकेभ्योऽनिक्तः। अभिपूर्वमंनिकः। अभिपूर्वमेव यजमानं तेजंसाऽनिक्तः। अक्तः रिहाणा इत्याहः। तेजो वा आज्यम्। यजमानः प्रस्तरः। यजमानमेव तेजंसाऽनिक्तः। वियन्तु वयु इत्याहः। वयं एवैनं कृत्वाः सुवृगं लोकं गंमयति॥६२॥

प्रजां योनिं मा निर्मृक्षमित्यांह। प्रजायें गोपीथायं। आप्यायन्तामाप ओषंधय इत्यांह। आपं एवौषंधीरा प्याययति। मुरुतां पृषंतयः स्थेत्यांह। मुरुतो वै वृष्ट्यां ईशते। वृष्टिंमेवावं रुन्धे। दिवंं गच्छु ततों नो वृष्टिमेर्येत्यांह। वृष्टिर्वे द्यौः। वृष्टिंमेवावं रुन्धे॥६३॥

यावृद्वा अध्वर्युः प्रस्तरं प्रहरंति। तावंदस्यायुंमीयते। आयुष्पा अंग्रेऽस्यायुंमें पाहीत्यांह। आयुंरेवाऽऽत्मन्धंत्ते। यावृद्वा अध्वर्युः प्रस्त्रं प्रहरित। तावेदस्य चक्षुंर्मीयते। चक्षुष्पा अग्नेऽसि चक्षुंर्मे पाहीत्यांह। चक्षुंरेवाऽऽत्मन्धंते। भ्रवाऽसीत्यांह प्रतिष्ठित्यै। यं परिधिं पूर्यर्थत्था इत्यांह॥६४॥

यथायज्ञरेवैतत्। अग्ने देव पणिभिवीयमाण इत्याह। अग्नयं एवेनं जुष्टं करोति। तन्तं एतमनु जोषं भरामीत्यांह। सजातानेवास्मा अनुंकान्करोति। नेदेष त्वदंपचेतयांता इत्याहानुंख्यात्ये। यज्ञस्य पाथ उप समितमित्यांह। भूमानंमेवोपैति। परिधीन्त्र हंरति। यज्ञस्य समिष्ठौ॥६५॥

सुचौ सं प्रस्नांवयित। यदेव तत्रं क्रूरम्। तत्तेनं शमयित। जुह्वामुंपभृतम्। यजमानदेवत्यां वै जुहूः। भ्रातृव्यदेवत्योपभृत्। यजमानायैव भ्रातृंव्यमुपंस्तिं करोति। सङ्स्रावभागाः स्थेत्यांह। वसंवो वै रुद्रा आंदित्याः सङ्स्रावभागाः। तेषां तद्भागधेयम्॥६६॥

तानेव तेनं प्रीणाति। वैश्वदेव्यर्चा। एते हि विश्वं देवाः। त्रिष्टुग्नंवति। इन्द्रियं वे त्रिष्टुक्। इन्द्रियमेव यजमाने दधाति। अग्नेर्वामपंत्रगृहस्य सदिस सादयामीत्यांह। इयं वा अग्निरपंत्रगृहः। अस्या एवैने सदेने सादयति। सुम्नायं सुम्निनी सुम्ने मां धत्तमित्यांह॥६७॥

प्रजा वै प्शवंः सुम्नम्। प्रजामेव पृशूनात्मन्धंत्ते। धुरि धुर्यौ पातुमित्यांह। जायापत्योर्गोपीथायं। अग्नेऽदब्धायोऽशीततनो इत्यांह। यथायजुरेवैतत्। पाहि माऽद्य दिवः पाहि प्रसित्ये पाहि दुरिष्ट्रे पाहि दुंरद्मन्ये पाहि दुर्श्वरितादित्यांह। आशिषंमेवैतामा शाँस्ते। अविषन्नः पितुं कृणु सुषदा योनिङ् स्वाहेतींध्मस्ंवृश्चनान्यन्वाहार्यपचनेऽभ्याधायं फलीकरणहोमं जुंहोति। अतिरिक्तानि वा इध्मसं वृश्चनानि॥६८॥

अतिरिक्ताः फलीकरणाः। अतिरिक्तमाज्योच्छेषणम्। अतिरिक्त एवातिरिक्तं दधाति। अथो अतिरिक्तेनैवातिरिक्त-मास्वाऽवं रुन्धे। वेदिर्देवेभ्यो निलायत। तां वेदेनान्वंविन्दन्। वेदेन् वेदिं विविद्ः पृथिवीम्। सा पंप्रथे पृथिवी पार्थिवानि। गर्भं बिभर्ति भुवंनेष्वन्तः। ततो यज्ञो जांयते विश्वदानिरिति पुरस्तांथ्स्तम्बयुजुषां वेदेन् वेदिष् सम्मार्ध्यनुंवित्त्यै॥६९॥

अथो यद्वेदश्च वेदिश्च भवंतः। मिथुन्त्वाय प्रजाँत्यै। प्रजापंतेर्वा एतानि श्मश्रृंणि। यद्वेदः। पत्निया उपस्थ आस्यंति। मिथुनमेव कंरोति। विन्दते प्रजाम्। वेद॰ होता-ऽऽहंवनीयांध्स्तृणन्नेति। यज्ञमेव तथ्सन्तंनोत्योत्तंरस्मादर्ध-मासात्। त॰ सन्तंतमुत्तंरेऽर्धमास आलंभते॥७०॥

तं कालेकांल आगंते यजते। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। स त्वा अध्वर्युः स्यात्। यो यतो यज्ञं प्रयुङ्के। तदेनं प्रतिष्ठापयतीति। वाताद्वा अध्वर्युर्यज्ञं प्रयुङ्के। देवां गातुविदो गातुं वित्वा गातुमितत्याह। यतं एव यज्ञं प्रयुङ्के। तदेनं प्रतिष्ठापयति। प्रतिं तिष्ठति प्रजयां प्रशुभिर्यजमानः॥७१॥

तिष्ठुर्तीमे लोका गंमयित द्यौर्वृष्टिमेवावं रुन्धे पूर्यधंत्था इत्यांहु सिम्ध्ये भाग्धेयंन्धत्तमित्यांहु वा इंध्मसं वृश्चंनान्यनंवित्त्ये लभते यर्जमानः॥————[९]

यो वा अयंथादेवतं यज्ञम्प्यंचरित। आ देवतांभ्यो वृश्च्यते। पापीयान्भवति। यो यंथादेवतम्। न देवतांभ्य आवृश्च्यते। वसीयान्भवति। वारुणो वे पार्शः। इमं विष्यांमि वरुणस्य पाश्मित्यांह। वरुणपाशादेवेनां मुश्चति। स्वितृप्रंसूतो यथादेवतम्॥७२॥

न देवताँभ्य आवृंश्च्यते। वसीयान्भवति। धातुश्च योनौं सुकृतस्यं लोक इत्याह। अग्निर्वे धाता। पुण्यं कर्म सुकृतस्यं लोकः। अग्निरेवैनां धाता। पुण्ये कर्मणि सुकृतस्यं लोके दंधाति। स्योनं में सह पत्यां करोमीत्याह। आत्मनश्च यर्जमानस्य चानांत्ये सन्त्वायं। समायुंषा सं प्रजयेत्यांह॥७३॥

आशिषंमेवैतामा शाँस्ते पूर्णपात्रे। अन्ततोंऽनुष्टुभाँ। चतुंष्पद्वा एतच्छन्दः प्रतिष्ठितं पित्नियै पूर्णपात्रे भवति। अस्मिँ छोके प्रतिं तिष्ठानीति। अस्मिन्नेव लोके प्रतिं तिष्ठति। अथो वाग्वा अनुष्टुक्। वाङ्गिंथुनम्। आपो रेतः प्रजननम्। एतस्माद्वे मिथुनाद्विद्योतंमानः स्तनयंन्वर्षति। रेतः सिश्चन्॥७४॥

प्रजाः प्रंजनयन्। यद्वै यज्ञस्य ब्रह्मणा युज्यतें। ब्रह्मणा वै तस्यं विमोकः। अद्भिः शान्तिः। विमुक्तं वा एतर्हि योक्रं ब्रह्मणा। आदायैन्त्पत्नी सहाप उपेगृह्णीते शान्त्यै। अञ्जलौ पूर्णपात्रमा नयिति। रेतं एवास्याँ प्रजां देधाति। प्रजया हि मेनुष्येः पूर्णः। मुखं वि मृष्टे। अवभृथस्यैव रूपं कृत्वोत्तिष्ठति॥७५॥

स्वितृप्रंसूतो यथादेवतं प्रजयेत्यांह सिञ्चन्मृष्ट एकं च॥————[१०]

परिवेषो वा एष वनस्पतीनाम्। यदुंपवेषः। य एवं वेदं। विन्दते परिवेष्टारम्। तमुंत्करे। यं देवा मनुष्येषु। उपवेषमधारयन्। ये अस्मदर्प चेतसः। तानस्मभ्यमिहा कुरु। उपवेषोपं विङ्कि नः॥७६॥

प्रजां पृष्टिमथो धनम्। द्विपदो नृश्चतुंष्पदः। ध्रुवाननंपगान्कुर्विति पुरस्तांत्प्रत्यश्चमुपं गूहति। तस्मांत्पुर-स्तांत्प्रत्यश्चंः शूद्रा अवंस्यन्ति। स्थविमृत उपंगूहति। अप्रंतिवादिन पृवैनांन्कुरुते। धृष्टि्वा उपवेषः। शुचर्तो वज्रो ब्रह्मणा सर्शितः। योपंवेषे शुक्। साऽमुमृंच्छतु यं द्विष्म इतिं॥७७॥

अथाँस्मै नाम् गृह्य प्रहेरित। निर्मुन्नुंद् ओकंसः। स्पत्नो यः पृंतन्यितं। निर्बाध्येन हिवषां। इन्द्रं एणं परांशरीत्। इहि तिस्रः परावतः। इहि पश्च जनार् अति। इहि तिस्रोऽतिं रोचनायावंत्। सूर्यो असंदिवि। प्रमान्त्वां परावतम्॥७८॥

इन्द्रो नयतु वृत्रहा। यतो न पुन्रायंसि। शृश्वतीभ्यः समाभ्य इतिं। त्रिवृद्वा एष वज्रो ब्रह्मणा स॰शिंतः। शुचैवैनं विध्वा। पुभ्यो लोकेभ्यों निर्णुद्यं। वन्नेण ब्रह्मंणा स्तृणुते। हृतोंऽसाववंधिष्मामुमित्यांहु स्तृत्यैं। यं द्विष्यात्तं ध्यायेत्। शुचैवैनंमर्पयति॥७९॥

प्रत्युष्टं दिवः शिल्पमयंज्ञो घृतं चं देवासुराः स एतिमन्द्र आपौ देवीर्ग्निना धिष्णिया अथ स्रुचौ यो वा अयंथादेवतं परिवेषो वा एकांदश॥११॥ प्रत्युष्टमयंज्ञ एषा हि विश्वेषां देवानांमूर्जा पृथिवीमथो रक्षंसान्तां प्रजातिं द्वाभ्यां तं कालेकांले नवंसप्ततिः॥७९॥ प्रत्युष्टमपंयति॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके तृतीयः प्रपाठकः समाप्तः॥

# ॥चतुर्थः प्रश्नः॥

## ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके चतुर्थः प्रपाठकः॥

ब्रह्मणे ब्राह्मणमालंभते। क्षुत्रायं राज्जन्यम्। मुरुद्धो वैश्यम्। तपंसे शूद्रम्। तमंसे तस्करम्। नारंकाय वीर्हणम्। पाप्मने क्रीबम्। आक्रयायांयोगूम्। कामांय पुङ्श्वलूम्। अतिंकुष्टाय मागुधम्॥१॥

गीतायं सूतम्। नृत्तायं शैलूषम्। धर्माय सभाच्रम्। नर्मायं रेभम्। नरिष्ठायै भीमलम्। हसाय कारिम्। आनुन्दायं स्त्रीषुखम्। प्रमुदें कुमारीपुत्रम्। मेधायैं रथका्रम्। धैर्याय तक्षाणम्॥२॥

श्रमाय कौलालम्। मायायै कार्मारम्। रूपायं मणिकारम्। शुभे वपम्। शर्व्याया इषुकारम्। हेत्यै धेन्वकारम्। कर्मणे ज्याकारम्। दिष्टायं रञ्जसर्गम्। मृत्यवे मृग्युम्। अन्तंकाय श्वनितम्॥३॥

स्न्थये जारम्। ग्रेहायोपप्तिम्। निर्ऋंत्ये परिवित्तम्। आर्त्ये परिविविदानम्। अराध्ये दिधिषूपतिम्। प्वित्रांय भिषजम्। प्रज्ञानांय नक्षत्रदर्शम्। निष्कृत्ये पेशस्कारीम्। बलांयोपदाम्। वर्णायानूरुधम्॥४॥

न्दीभ्यः पौञ्जिष्टम्। ऋक्षीकाँभ्यो नैषांदम्। पुरुष्व्याघ्रायं

दुर्मदम्। प्रयुद्ध उन्मंत्तम्। गृन्धव्रिप्सराभ्यो व्रात्यम्। सर्पदेवजनभ्योऽप्रतिपदम्। अवभ्यः कित्वम्। इर्यताया अकितवम्। पिशाचेभ्यो बिदलकारम्। यातुधानेभ्यः कण्टककारम्॥५॥

उथ्मादेभ्यः कुज्जम्। प्रमुदे वामनम्। ह्याभ्यः स्रामम्। स्वप्नायान्थम्। अधमाय बधिरम्। स्वज्ञानाय स्मरकारीम्। प्रकामोद्यायोपसदम्। आशिक्षायै प्रश्जिनम्। उपशिक्षायां अभिप्रश्जिनम्। मुर्यादाये प्रश्जिववाकम्॥६॥

ऋत्यैं स्तेनहंदयम्। वैरंहत्याय पिशुंनम्। विवित्त्यै क्षुत्तारम्। औपंद्रष्टाय सङ्ग्रहीतारम्। बलायानुचरम्। भूम्ने पंरिष्कुन्दम्। प्रियायं प्रियवादिनम्। अरिष्ट्या अश्वसादम्। मेधांय वासः पल्पूलीम्। प्रकामायं रजयित्रीम्॥७॥

भायै दार्वाह्यरम्। प्रभायां आग्नेन्धम्। नार्कस्य पृष्ठायांभिषेक्तारम्। ब्रुध्नस्यं विष्ठपाय पात्रनिर्णेगम्। देवलोकायं पेशितारम्। मनुष्यलोकायं प्रकरितारम्। सर्वेभ्यो लोकभ्यं उपसेक्तारम्। अवर्त्ये वधायोपमन्थितारम्। सुवर्गायं लोकायं भागद्धम्। वर्षिष्ठाय नाकांय परिवेष्टारम्॥८॥

अर्मेंभ्यो हस्तिपम्। जुवायांश्वपम्। पुष्टीं गोपालम्। तेजंसेऽजपालम्। वीर्यायाविपालम्। इरांयै कीनाशम्। कीलालांय सुराकारम्। भुद्रायं गृहुपम्। श्रेयंसे वित्तुधम्। अध्यंक्षायानुक्षुत्तारम्॥९॥

मृन्यवेऽयस्तापम्। क्रोधांय निस्रम्। शोकांयाभिस्रम्। उत्कूलविकूलाभ्यां त्रिस्थिनम्। योगांय योक्तारम्। क्षेमांय विमोक्तारम्। वर्ष्षे मानस्कृतम्। शीलांयाञ्जनीकारम्। निर्ऋत्यै कोशकारीम्। यमायासूम्॥१०॥

युम्यै यमसूम्। अर्थर्वभ्योऽवंतोकाम्। संवथ्सरायं पर्यारिणींम्। परिवथ्सरायाविजाताम्। इदावथ्सरायांप्-स्कद्वरीम्। इद्वथ्सरायातीत्वरीम्। वथ्सराय विजर्जराम्। संवथ्सराय पर्लिक्रीम्। वनाय वन्पम्। अन्यतोरण्याय दावपम्॥११॥

सरोँभ्यो धेवरम्। वेशंन्ताभ्यो दाशम्ँ। उपस्थावंरीभ्यो बैन्दम्ँ। नुङ्गुलाभ्यः शौष्कलम्। पार्याय कैवर्तम्। अवार्याय मार्गारम्। तीर्थेभ्यं आन्दम्। विषंमभ्यो मैनालम्। स्वनेँभ्यः पर्णकम्। गुहाँभ्यः किरांतम्। सानुंभ्यो जम्भंकम्। पर्वतेभ्यः किम्पूंरुषम्॥१२॥

प्रतिश्रुत्कांया ऋतुलम्। घोषांय भृषम्। अन्तांय बहुवादिनम्। अनुन्ताय मूकम्। महंसे वीणावादम्। क्रोशांय तूणव्ध्मम्। आक्रन्दायं दुन्दुभ्याघातम्। अवरुस्प्रायं शङ्ख्ध्मम्। ऋभुभ्योजिनसन्धायम्। साध्येभ्यंश्चर्म्णम्॥१३॥ बीभ्थ्सायै पौल्क्सम्। भूत्यै जागर्णम्। अभूत्यै स्वपनम्। तुलायै वाणिजम्। वर्णाय हिरण्यकारम्। विश्वैभ्यो देवेभ्यः सिध्मलम्। पृश्चाद्दोषायं ग्लावम्। ऋत्यै जनवादिनम्। व्यृद्धा अपगल्भम्। स्र्श्रारायं प्रच्छिदम्॥१४॥

हसाय पु श्रृष्ट्रमा लेभते। वीणावादं गणेकं गीताये। यादेसे शाबुल्याम्। नुर्मायं भद्रवृतीम्। तूण्वुध्मं ग्रामण्यं पाणिसङ्घातं नृत्ताये। मोदायानुक्रोशंकम्। आन्नन्दायं तलुवम्॥१५॥

अक्षराजायं कित्वम्। कृतायं सभाविनम्। त्रेतांया आदिनवदुर्शम्। द्वापरायं बिहुः सदम्। कलये सभास्थाणुम्। दुष्कृतायं चरकांचार्यम्। अध्वंने ब्रह्मचारिणम्। पिशाचेभ्यंः सैलुगम्। पिपासायें गोव्यच्छम्। निर्ऋत्ये गोघातम्। क्षुधे गोविकृर्तम्। क्षुत्तृष्णाभ्यान्तम्। यो गां विकृन्तंन्तं मार्सं भिक्षंमाण उपतिष्ठते॥१६॥

भूम्यै पीठस्पिणमा लंभते। अग्नयेऽर्स्सलम्। वायवे चाण्डालम्। अन्तरिक्षाय वर्शनृतिनम्। दिवे खंलतिम्। सूर्याय हर्यक्षम्। चन्द्रमंसे मिर्मिरम्। नक्षेत्रेभ्यः किलासम्। अहे शुक्रं पिङ्गलम्। रात्रियै कृष्णं पिङ्गाक्षम्॥१७॥

वाचे पुरुषमा लेभते। प्राणमंपानं व्यानमुंदान संमानं

तान् वायवें। सूर्याय चक्षुरा लंभते। मनंश्चन्द्रमंसे। दिग्भ्यः श्रोत्रम्। प्रजापंतये पुरुषम्॥१८॥

अथैतानरूपेभ्य आर्लभते। अतिंह्रस्वमितंदीर्घम्। अतिंकृश्मत्यर्थसलम्। अतिंशुक्रुमितंकृष्णम्। अतिंश्वक्षण्-मितंलोमशम्। अतिंकिरिट्मितंदन्तुरम्। अतिंमिर्मिर्मितं-मेमिषम्। आुशायैं जामिम्। प्रतीक्षायैं कुमारीम्॥१९॥

ब्रह्मणे गीताय श्रमाय सन्धर्ये नदीभ्यं उथ्सादेभ्य ऋत्यै भाया अर्मेभ्यो मृन्यवे युग्यैं दशंदश् सरोभ्यो द्वादंश प्रतिश्रुत्काये बीभ्थ्सायै दशंदश् हसाय सप्ताक्षंराजाय त्रयोंदश् भूम्यै दशं वाचे षडथ् नवैकान्नवि शितिः॥१९॥ ब्रह्मणे युग्यै नवंदश॥१९॥

ब्रह्मणे कुमारीम्॥

## हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके चतुर्थः प्रपाठकः समाप्तः॥

#### ॥पञ्चमः प्रश्नः॥

# ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके पश्चमः प्रपाठकः॥

स्तयं प्रपेद्ये। ऋतं प्रपेद्ये। अमृतं प्रपेद्ये। प्रजापेतेः प्रियां तनुव्मनातां प्रपेद्ये। इदम्हं पेश्चद्शेन् वज्रेण। द्विषन्तं भ्रातृंव्यमवं क्रामामि। योऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं व्यं द्विष्मः। भूर्भुवः सुवंः। हिम्॥१॥

प्र वो वाजां अभिद्यंवः। ह्विष्मंन्तो घृताच्यां। देवाञ्जिंगाति सुमृयुः। अग्न आयांहि वीतयें। गृणानो ह्व्यदांतये। नि होतां सिथ्स ब्रहिषिं। तं त्वां समिद्धिरङ्गिरः। घृतेनं वर्धयामिस। बृहच्छोंचा यविष्ठा। स नः पृथुः श्रवाय्यम्॥२॥

अच्छां देव विवाससि। बृहदंग्ने सुवीर्यम्। ईडेन्यों नम्स्यंस्तिरः। तमा १सि दर्शतः। सम्ग्रिरिध्यते वृषां। वृषों अग्निः समिध्यते। अश्वो न देववाहंनः। त॰ ह्विष्मंन्त ईडते। वृषंणं त्वा वृयं वृषन्ं। वृषांणः समिधीमहि॥३॥

अग्रे दीर्घतं बृहत्। अग्निं दूतं वृंणीमहे। होतांरं विश्ववंदसम्। अस्य यज्ञस्यं सुऋतुम्। समिध्यमांनो अध्वरे। अग्निः पांवक ईड्याः। शोचिष्केशस्तमीमहे। समिद्धो अग्न आहुत। देवान् यंक्षि स्वध्वर। त्व॰ हि हं व्यवाहिसी। आ जुंहोत दुवस्यतं। अग्निं प्रयत्यंध्वरे। वृणीध्व॰ हं व्यवाहं नम्। त्वं वर्रण उत मित्रो अंग्ने। त्वां वंधन्ति मृतिभिवंसिष्ठाः। त्वे वसुं सुषण्नानिं सन्तु। यूयं पात स्वस्तिभिः सदां नः॥४॥ श्रवायंमिधीमुह्यसिं सुप्त चं॥————[२]

अग्नें महार असि ब्राह्मण भारत। असावसौँ। देवेद्धो मन्विद्धः। ऋषिष्ठतो विप्रांनुमदितः। कृविश्वस्तो ब्रह्मंसर्शितो घृताहंवनः। प्रणीर्यज्ञानाम्। र्थीरेध्वराणाम्। अतूर्तो होता। तूर्णिर्हव्यवाट्। आस्पात्रं जुहूर्देवानाम्॥५॥

चुम्सो देवपानः। अराश् ईवाग्ने नेमिर्देवाश्स्त्वं परिभूरसि। आ वंह देवान् यजंमानाय। अग्निमंग्न आवंह। सोम्मावंह। अग्निमावंह। प्रजापंतिमावंह। अग्नीषोमावावंह। इन्द्राग्नी आवंह। इन्द्रमावंह। मृहेन्द्रमावंह। देवाश् औज्यपाश् आवंह। अग्निश् होत्रायावंह। स्वं मंहिमानमा वंह। आ चौग्ने देवान् वहं। सुयजां च यज जातवेदः॥६॥

देवानामिन्द्रमा वंह षद चं॥———[३]

अग्निर्होता वेत्वग्निः। होत्रं वैत्तु प्रावित्रम्। स्मो वयम्। साधु ते यजमान देवता। घृतवंतीमध्वर्यो सुचमास्यंस्व। देवायुवं विश्ववाराम्। ईडांमहै देवा ईडेन्यान्। नुमस्यामं नमस्यान्। यजांम यज्ञियान्॥७॥

स्मिधों अग्नु आज्यंस्य वियन्तु। तनूनपांदग्नु आज्यंस्य

वेतु। इडो अंग्र आज्यंस्य वियन्तु। ब्र्हिरंग्र आज्यंस्य वेतु। स्वाहाऽग्निम्। स्वाहा सोमम्। स्वाहाऽग्निम्। स्वाहाँ प्रजापंतिम्। स्वाहाऽग्नीषोमौ। स्वाहेँन्द्राग्नी। स्वाहेन्द्रम्। स्वाहां महेन्द्रम्। स्वाहां देवा अाँज्यपान्। स्वाहाऽग्नि होत्राञ्चंषाणाः। अग्न आज्यंस्य वियन्तु॥८॥

डुन्द्राग्नी पर्श्व च॥————[५]

अग्निर्वृत्राणि जङ्घनत्। द्रविणस्युर्विप्न्ययां। सिमिद्धः शुक्र आहुंतः। जुषाणो अग्निराज्यंस्य वेतु। त्व सोमासि सत्पंतिः। त्व राजोत वृंत्रहा। त्वं भद्रो असि क्रतुंः। जुषाणः सोम् आज्यंस्य ह्विषो वेतु। अग्निः प्रत्नेन जन्मंना। शुम्भांनस्त्नुव् स्वाम्। क्विविप्रेण वावृधे। जुषाणो अग्निराज्यंस्य वेतु। सोमं गीर्भिष्टां व्यम्। वर्धयांमो वचोविदंः। सुमृडीको न आविंश। जुषाणः सोम् आज्यंस्य ह्विषों वेतु॥९॥

स्वा॰ षट् चं॥\_\_\_\_\_\_[ह्

अग्निर्मूर्धा दिवः कुकुत्। पितः पृथिव्या अयम्। अपार रेतार्स्सि जिन्वति। भुवो यज्ञस्य रजंसश्च नेता। यत्रां नियुद्धिः सचंसे शिवाभिः। दिवि मूर्धानं दिधषे सुवर्षाम्। जिह्वामंग्ने चकृषे हव्यवाहम्। प्रजांपते न त्वदेतान्यन्यः। विश्वां जातानि परि ता बंभूव। यत्कांमास्ते जहुमस्तं नो अस्तु॥१०॥ वय स्यांम् पतंयो रयीणाम्। स वेंद पुत्रः पितर् समातरम्। स सूनुर्भुवथ्स भुंवत्पुनंभिषः। स द्यामौर्णोदन्तिरिक्ष स् स सुर्वः। स विश्वा भुवो अभवथ्स आभंवत्। अग्नीषोमा सवेंदसा। सहूंती वनत् क्षिरं। सन्देवत्रा बंभूवथः। युवमेतानि दिवि रोचनानि। अग्निश्चं सोम् सर्कत् अधत्तम्॥११॥

युव सिन्धू रे रिभशंस्तेरवद्यात्। अग्नीषोमावम् श्वतं गृभीतान्। इन्द्रौग्नी रोचना दिवः। पिर् वाजेषु भूषथः। तद्वौश्वेति प्रवीर्यम्। श्वथंद्वृत्रमुत संनोति वाजम्। इन्द्रायो अग्नी सहुरी सप्यात्। इर्ज्यन्तां वस्व्यंस्य भूरैः। सहंस्तमा सहंसा वाज्यन्तौ। एन्द्रं सान्सि रियम्॥१२॥

स्जित्वांन सदासहम्ँ। वर्षिष्ठमूतये भर। प्रसंसाहिषे पुरुहूत शत्रूनं। ज्येष्ठंस्ते शुष्मं इह रातिरंस्तु। इन्द्रा भंर दक्षिणेना वसूंनि। पितः सिन्धूंनामिस रेवतींनाम्। महा इन्द्रो य ओजंसा। पूर्जन्यो वृष्टिमा इंव। स्तोमैंर्व्थसस्यं वावृधे। महा इन्द्रों नृवदाचंर्षणिप्राः॥१३॥

उत द्विबर्हां अमिनः सहोभिः। अस्मद्रियंग्वावृधे वीर्याय। उरुः पृथुः सुकृंतः कुर्तृभिर्भूत्। पिप्रीहि देवा र उशतो यंविष्ठ। विद्वा र ऋतू र र ऋतु पते यजेह। ये दैव्यां ऋत्विज् स्तेभिरग्ने। त्व र होतॄणाम् स्यायंजिष्ठः। अग्नि र स्विष्टकृतम्। अयां द्विग्नर्गेः प्रिया धामांनि। अयाद्थ्सोमंस्य

#### प्रिया धार्मानि॥१४॥

अयांड्ग्रेः प्रिया धामांनि। अयांद्रुजापंतेः प्रिया धामांनि। अयांड्ग्रीषोमंयोः प्रिया धामांनि। अयांडिन्द्राग्नियोः प्रिया धामांनि। अयांडिन्द्रस्य प्रिया धामांनि। अयांण्महेन्द्रस्यं प्रिया धामांनि। अयांड्वेवानांमाज्यपानां प्रिया धामांनि। यक्षंद्ग्रेरहोतुंः प्रिया धामांनि। यक्ष्यस्वं मंहिमानम्। आयंजतामेज्या इषंः। कृणोतु सो अध्वरा जातवेदाः। जुषता हिवः। अग्रे यदद्य विशो अध्वरस्य होतः। पावंक शोचे वेष्व हि यज्वां। ऋता यंजासि महिना वियद्भः। हव्या वंह यविष्ठ या ते अद्या१५॥

अस्त्वधत्तुः रुयिं चंर्षणिप्राः सोमंस्य प्रिया धामानीषः षद्वं॥—————[७]

उपंहूत रथन्तर रस्ह पृथिव्या। उपं मा रथन्तर स्ह पृथिव्या ह्वंयताम्। उपंहूतं वामदेव्य स्हान्तिरक्षेण। उपं मा वामदेव्य स्हान्तिरक्षेण ह्वयताम्। उपंहूतं बृहथ्सह दिवा। उपं मा बृहथ्सह दिवा ह्वंयताम्। उपंहूताः सप्त होत्राः। उपं मा सप्त होत्रां ह्वयन्ताम्। उपंहूता धेनुः सहर्षंभा। उपं मा धेनुः सहर्षंभा ह्वयताम्॥१६॥

उपंहूतो भृक्षः सर्खां। उपं मा भृक्षः सर्खां ह्वयताम्। उपंहूताँ(४)हो। इडोपंहूता। उपंहूतेडां। उपो अस्मा १ इडां ह्वयताम्। इडोपंहूता। उपंहूतेडां। मान्वी घृतपंदी मैत्रावरुणी। ब्रह्मं देवकृत्मुपंहूतम्॥१७॥ दैव्यां अध्वर्यव उपहूताः। उपहूता मनुष्याः। य इमं यज्ञमवान्। ये यज्ञपंतिं वर्धान्। उपहूते द्यावापृथिवी। पूर्वजे ऋतावंरी। देवी देवपुंत्रे। उपहूतोऽयं यज्ञमानः। उत्तरस्यान्देवयञ्यायामुपंहूतः। भूयंसि हविष्करंण उपहूतः। दिव्ये धामन्नुपंहूतः। इदं में देवा ह्विर्जुषन्तामिति तस्मिन्नुपंहूतः। विश्वंमस्य प्रियमुपंहूतम्। विश्वंस्य प्रियस्योपंहृतस्योपंहृतः॥१८॥

सहर्षंभा ह्वयतामुपंहूत हिवेष्करंण उपंहूतश्चत्वारिं च॥————[८]

देवं बर्हिः। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु। देवो नराशरसंः। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु। देवो अग्निः स्विष्टकृत्। सुद्रविणा मन्द्रः कृविः। सृत्यमंन्मायजी होतां। होतुंर्होतुरायंजीयान्। अग्ने यान्देवानयांट। यार अपिप्रेः। ये ते होत्रे अमंथ्सत। तार संसनुषीर होत्रांन्देवङ्गमाम्। दिवि देवेषुं यज्ञमेरंयेमम्। स्विष्टकृचाग्ने होताऽभूः। वसुवनं वसुधेयंस्य नमोवाके वीहिं॥१९॥

अपिंप्रेः पश्चं च॥———[९]

ड्दं द्यांवापृथिवी भुद्रमंभूत्। आध्मं सूक्तवाकम्। उत नंमोवाकम्। ऋध्यास्मं सूक्तोच्यंमग्ने। त्व॰ सूक्तवागंसि। उपंश्रितो दिवः पृथिव्योः। ओमंन्वती तेऽस्मिन् युज्ञे यंजमान् द्यावांपृथिवी स्ताम्। शङ्गये जीरदान्। अत्रंस्रू अप्रंवेदे। उरुगंव्यूती अभयं कृतौ॥२०॥ वृष्टिद्यांवा रीत्यांपा। शम्भवौं मयोभवौं। ऊर्जस्वती च् पर्यस्वती च। सूप्चरणा चं स्वधिचरणा चं। तयोराविदिं। अग्निरिद॰ ह्विरंजुषत। अवींवृधत् महो ज्यायोऽकृत। सोमं इद॰ह्विरंजुषत। अवींवृधत् महो ज्यायोऽकृत। अग्निरिद॰ हविरंजुषत॥२१॥

अवींवृधत् महो ज्यायोंऽकृत। प्रजापंतिरिदश् ह्विरंजुषत। अवींवृधत् महो ज्यायोंऽकृत। अग्नीषोमांविदश् ह्विरंजुषेताम्। अवींवृधेतां महो ज्यायोंऽकाताम्। इन्द्राग्नी इदश् ह्विरंजुषेताम्। अवींवृधेतां महो ज्यायोंऽकाताम्। इन्द्रं इदश् ह्विरंजुषता अवींवृधत् महो ज्यायोंऽकृत। महेन्द्र इदश् ह्विरंजुषत॥२२॥

अवीवृधत् महो ज्यायोऽकृत। देवा आँज्यपा आज्यंमजुषन्त। अवीवृधन्त महो ज्यायोऽकृत। अग्निरहोत्रेणेद १ ह्विरंजुषत। अवीवृधत् महो ज्यायोऽकृत। अस्यामृधद्धोत्रांयान्देवङ्गमायांम्। आशांस्तेऽयं यजंमानोऽसौ। आयुरा शांस्ते। सुप्रजास्त्वमा शांस्ते। स्जात्वनस्यामा शांस्ते॥२३॥

उत्तरान्देवयुज्यामा शाँस्ते। भूयों हिव्षष्करंणमा शाँस्ते। दिव्यं धामा शाँस्ते। विश्वं प्रियमा शाँस्ते। यद्नेनं हृविषाऽऽशाँस्ते। तदंश्यात्तदंध्यात्। तदंस्मै देवा रांसन्ताम्। तदुग्निर्देवो देवेभ्यो वनंते। वयमुग्नेर्मानुषाः। इष्टं चं वीतं चं। उभे चं नो द्यावांपृथिवी अश्हंसस्पाताम्। इह गतिंर्वामस्येदं चं। नमों देवेभ्यं:॥२४॥

अभ्यं कृतांवकृताग्निरिदर हुविरंजुषत महेन्द्र इदर हुविरंजुषत सजातवनस्यामा शाँस्ते वीतं च त्रीणिं च॥————[१०]

तच्छुं योरावृंणीमहे। गातुं यज्ञायं। गातुं यज्ञपंतये। दैवीं स्वस्तिरंस्तु नः। स्वस्तिर्मानुंषेभ्यः। ऊर्ध्वं जिंगातु भेषजम्। शं नो अस्तु द्विपदें। शं चतुंष्पदे॥२५॥

तच्छुं योर्ष्टौ॥———[११]

आप्यायस्व सन्तैं। इह त्वष्टांरमग्रियं तन्नंस्तुरीपम्ं। देवानां पत्नीरुश्तीरंवन्तु नः। प्रावंन्तु नस्तुजये वार्जसातये। याः पार्थिवासो या अपामिपं व्रते। ता नों देवीः सुहवाः शर्म यच्छत। उत ग्ना वियन्तु देवपंत्नीः। इन्द्राण्यंग्नाय्यश्विनी राट्। आ रोदंसी वरुणानी श्रंणोतु। वियन्तुं देवीर्य ऋतुर्जनीनाम्॥२६॥

अग्निर्होतां गृहपंतिः स राजां। विश्वां वेद् जिनेमा जातवेदाः। देवानांमुत यो मर्त्यानाम्। यिजेष्टः स प्र यंजतामृतावां। व्यम् त्वा गृहपते जनांनाम्। अग्ने अकंर्म समिधां बृहन्तम्। अस्थूिर णो गार्हंपत्यानि सन्तु। तिग्मेनं नस्तेजंसा सर्शिशाधि॥२७॥

जनीनाम्ष्टौ चं॥——[१२]

उपंहूत रथन्तर रसह पृंथि व्या। उपं मा रथन्तर सह पृंथि व्या ह्वंयताम्। उपंहूतं वामदेव्य र सहान्तरिक्षेण। उपं मा वामदेव्य र सहान्तरिक्षेण ह्वयताम्। उपंहूतं बृहथ्सह दिवा। उपं मा बृहथ्सह दिवा ह्वंयताम्। उपंहूताः सप्त होत्रौः। उपं मा सप्त होत्रौ ह्वयन्ताम्। उपंहूता धेनुः सहर्षंभा। उपं मा धेनुः सहर्षंभा ह्वयताम्॥ २८॥

उपहूतो भृक्षः सखाँ। उपं मा भृक्षः सखाँ ह्वयताम्। उपहूताँ(४)हो। इडोपहूता। उपहूतेडाँ। उपो अस्मा १ इडाँ ह्वयताम्। इडोपहूता। उपहूतेडाँ। मान्वी घृतपंदी मैत्रावरुणी। ब्रह्मं देवकृत्मुपहूतम्॥२९॥

दैव्यां अध्वर्यव उपंहूताः। उपंहूता मनुष्याः।
य इमं यज्ञमवान्। ये यज्ञपंत्रीं वर्धान्। उपंहूते
द्यावांपृथिवी। पूर्वजे ऋतावंरी। देवी देवपुंत्रे। उपंहूतेयं
यजमाना। इन्द्राणीवांऽविध्वा। अदितिरिव सुपुत्रा।
उत्तरस्यान्देवयुज्यायामुपंहूता। भूयंसि हिव्ष्करंण उपंहूता।
दिव्ये धामन्नुपंहूता। इदं में देवा हुविर्जुषन्तामिति
तस्मिन्नुपंहूता। विश्वंमस्याः प्रियमुपंहूतम्। विश्वंस्य
प्रियस्योपंहूतस्योपंहूता॥३०॥

स्हर्षंभा ह्वयता्मुपंहूत र सुपुत्रा षद्वं॥-----[१३]

स्तयं प्रवोऽग्ने म्हानृग्निर्होतां स्मिधोऽग्निर्वृत्राण्यग्निर्मूर्धोपंहूतं देवं ब्र्हिरिदं द्यांवापृथिवी तच्छुं योरा प्यायस्वोपंहूतन्त्रयोदश॥१३॥ स्तयं वयः स्याम वृष्टिद्यांवा त्रिष्ट्शत्॥३०॥ स्त्यमुपंहृता॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके पश्चमः प्रपाठकः समाप्तः॥

#### ॥षष्ठमः प्रश्नः॥

# ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके षष्ठः प्रपाठकः॥

अञ्जन्ति त्वामंध्वरे देवयन्तः। वनस्पते मध्ना दैव्येन। यदूर्ध्वस्तिष्ठाद्वविणेह धंत्तात्। यद्वा क्षयो मातुरस्या उपस्थै। उच्छ्रंयस्व वनस्पते। वर्ष्मन्पृथिव्या अधि। सुमिती मीयमानः। वर्चोधा यज्ञवाहसे। समिद्धस्य श्रयंमाणः पुरस्तात्। ब्रह्मं वन्वानो अजर्र सुवीरम्॥१॥

आरे अस्मदमंतिं बाधंमानः। उच्छ्रंयस्व मह्ते सौभंगाय। ऊर्ध्व ऊषुणं ऊतयें। तिष्ठां देवो न संविता। ऊर्ध्वो वाजंस्य सनिता यदिक्षिभिः। वाघिद्विर्विह्वयांमहे। ऊर्ध्वो नः पाह्य १ हंसो नि केतुनां। विश्व १ सम्तिर्णन्दह। कृधी ने ऊर्ध्वां च रथांय जीवसें। विदा देवेषुं नो दुवंः॥२॥

जातो जांयते सुदिन्त्वे अह्राँम्। सम्पर्य आ विदथे वर्धमानः। पुनन्ति धीरां अपसां मनीषा। देवया विप्र उदियर्ति वाचम्ं। युवां सुवासाः परिवीत् आगांत्। स उ श्रेयांन्भवित् जायंमानः। तं धीरांसः क्वय् उन्नयन्ति। स्वाधियो मनसा देवयन्तः। पृथुपाजा अमर्त्यः। घृतिनिर्णिख्स्वाहुतः। अग्निर्यज्ञस्यं हव्यवाद। त॰ स्वाधों यतः स्नुचः। इत्था धिया यज्ञवंन्तः। आचंकुर्ग्निमूत्यें। त्वं वर्रण उत मित्रो अग्ने। त्वां वर्धन्ति मृतिभिर्वसिष्ठाः। त्वे वसुं सुषण्नानि

# सन्तु। यूयं पांत स्वस्तिभिः सदां नः॥३॥ सुबीरं दुवः स्वांहुतोऽष्टौ चं॥

[ १ ]

होतां यक्षदग्नि समिधां सुषमिधा समिद्धं नाभां पृथिव्याः संङ्गथे वामस्यं। वर्ष्मन्दिव इडस्पदे वेत्वाऽऽज्यंस्य होतुर्यजं। होतां यक्षुत्तनूनपातुमदितेर्गर्भं भुवंनस्य गोपाम्। मध्वाद्य देवो देवेभ्यों देवयानांन्यथो अनक्त वेत्वाऽऽज्यंस्य होतर्यजं। होतां यक्षन्नराश रसं नृशस्त्रं नृ ः प्रणेत्रम्। गोभिर्वपावान्थ्स्याद्वीरेः शक्तीवान्नथैः प्रथम्या वा हिरंण्यैश्चन्द्री वेत्वाऽऽज्यंस्य होतर्यजं। होतां यक्षदग्निमिड ईंडितो देवो देवा अविक्षदूतो हेळ्यवाडमूरः। उपेमं यज्ञमुपेमां देवो देवहूंतिमवतु वेत्वाऽऽज्यंस्य होतुर्यजं। होतां यक्षद्बर्हिः सुष्टरीमोर्णम्रदा अस्मिन् यज्ञे वि च प्र चं प्रथता इ स्वासस्थं देवेभ्यः। एमेनदद्य वसंवो रुद्रा आंदित्याः संदन्तु प्रियमिन्द्रंस्यास्तु वेत्वाऽऽज्यंस्य होतुर्यजं॥४॥

होतां यक्ष्रद्दुरं ऋष्वाः कंवष्यो कोषधावनीरुदातांभीर्जिहंतां विपक्षोंभिः श्रयन्ताम्। सुप्रायणा अस्मिन् यज्ञे विश्रयन्तामृतावृधों वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यंजं। होतां यक्षदुषासानक्तां बृह्ती सुपेशंसा नृशः पितंभ्यो योनिं कृण्वाने। स्र्स्मयंमाने इन्द्रंण देवैरेदं ब्र्हिः सींदतां वीतामाज्यंस्य होत्र्यंजं। होतां यक्षद्दैव्या होतांरा

मन्द्रा पोतारा कवी प्रचेतसा। स्विष्टमद्यान्यः करदिषा स्वंभिगूर्तमन्य ऊर्जा सतंवसेमं यज्ञं दिवि देवेषुं धत्तां वीतामाज्यंस्य होतर्यजं। होतां यक्षत्तिस्रो देवीरपसांमपस्तंमा अच्छिंद्रमद्येदमपंस्तन्वताम्। देवेभ्यों देवीर्देवमपों वियन्त्वाज्यंस्य होतुर्यजं। होतां यक्षत्त्वष्टांरमचिष्टुमपांक ५ रेतोधां विश्रवसं यशोधाम्। पुरुरूपुमकांमकर्शन १ सुपोषः पोषेः स्याथ्सुवीरों वीरैर्वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्यंजं। होतां यक्षद्वनस्पतिमुपावंस्रक्षद्धियो जोष्टार १ शुशमुन्नर्रः। स्वदाथ्स्वधितिर्ऋतुथाद्य देवो देवेभ्यो हव्यावाङ्गेत्वाऽऽज्यंस्य होतर्यजं। होतां यक्षद्ग्निः स्वाहाऽऽज्यंस्य स्वाहा मेदंसः स्वाहाँ स्तोकाना् स्वाहा स्वाहांकृतीना् इं स्वाहां हव्यसूँक्तीनाम्। स्वाहां देवार आंज्युपान्थ्स्वाहाऽग्निर होत्राञ्जुंषाणा अग्न आज्यंस्य वियन्तु होतुर्यजं॥५॥

प्रियमिन्द्रंस्यास्तु वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यंजं सुवीरों वी्रैर्वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यंजं चृत्वारिं च (अग्निन्तनूनपांतृत्रराश्यः संमृग्निमिड ईिंडुतो बुर्हिर्दुरं उषासानक्ता दैव्यां तिस्रस्त्वष्टांरं वन्स्पतिंमृग्निम्। पश्च वेत्वेकों वियन्तु द्विर्वीतामेकों वियन्तु द्विर्वेत्वेकों वियन्तु होत्र्यंजं॥)॥[२]

सिमिद्धो अद्य मनुषो दुरोणे। देवो देवान् यंजिसि जातवेदः। आ च वहं मित्रमहिश्चिकित्वान्। त्वं दूतः कृविरेसि प्रचेताः। तनूनपात्पथ ऋतस्य यानान्। मध्यां सम्अन्थ्स्वंदया सुजिह्न। मन्मांनि धीभिरुत यज्ञमृन्धन्। देवत्रा चं कृणुह्यध्वरं नंः। नराशर्श्संस्य महिमानंमेषाम्। उपं स्तोषाम यजतस्यं यज्ञैः॥६॥

ते सुऋतंवः शुचंयो धियन्थाः। स्वदंन्तु देवा उभयांनि ह्व्या। आजुह्वांन् ईड्यो वन्द्यंश्च। आयाँह्यग्ने वसुंभिः सजोषाः। त्वं देवानांमिस यह्न होतां। स एनान् यक्षीषितो यजीयान्। प्राचीनं बूर्हिः प्रदिशां पृथिव्याः। वस्तोर्स्या वृंज्यते अग्रे अहाँम्। व्यं प्रथते वित्रं वरीयः। देवेभ्यो अदिंतये स्योनम्॥७॥

व्यचंस्वतीरुर्विया विश्रंयन्ताम्। पितिभ्यो न जनंयः शुम्भंमानाः। देवीँद्वारो बृहतीर्विश्वमिन्वाः। देवेभ्यो भवथ सुप्रायणाः। आसुष्वयंन्ती यज्तते उपांके। उषासानक्तां सदतां नि योनौं। दिव्ये योषणे बृहती सुरुक्ते। अधि श्रियर् शुक्रपिशं दर्धाने। दैव्या होर्तारा प्रथमा सुवाचौ। मिमाना यज्ञं मनुषो यज्ञंध्यै॥८॥

प्रचोदयंन्ता विदर्थेषु कारू। प्राचीनं ज्योतिः प्रदिशां दिशन्तां। आ नो यज्ञं भारती तूर्यमेतु। इडां मनुष्वदिह चेतयंन्ती। तिस्रो देवीर्बर्हिरेद स्योनम्। सरंस्वती स्वपंसः सदन्तु। य इमे द्यावांपृथिवी जिनेत्री। रूपैरिपर्श्यद्भवंनानि विश्वां। तमुद्य होतिरिषितो यजीयान्। देवं त्वष्टांरिमेह यंक्षि विद्वान्॥९॥

उपावंसृज्तन्मन्यां सम्अन्। देवानां पार्थं ऋतुथा ह्वी १ षिं। वनस्पतिः शमिता देवो अग्निः। स्वदंन्तु हव्यं मधुना घृतेनं। सुद्यो जातो व्यंमिमीत युज्ञम्। अग्निर्देवानांमभवत्पुरोगाः। अस्य होतुंः प्रदिश्यृतस्यं वाचि। स्वाहांकृतः ह्विरंदन्तु देवाः॥१०॥

युज्ञैः स्योनं यर्जध्यै विद्वानृष्टौ चं॥—————[3]

अग्निर्होतां नो अध्वरे। वाजी सन्परिणीयते। देवो देवेषुं यज्ञियंः। परित्रिविष्टांध्वरम्। यात्यग्नी र्थीरिव। आ देवेषु प्रयो दर्धत्। परि वाजंपतिः कविः। अग्निर्ह्व्यान्यंक्रमीत्। दधद्रत्नांनि दाशुषे॥११॥

अग्निरहोतां नो नवं॥———[४]

अजैंद्गिः। असंनुद्वाजित्रि। देवो देवेभ्यों हुव्यावाँट्। प्राञ्जोभिर्हिन्वानः। धेर्नाभिः कर्ल्पमानः। यज्ञस्यार्युः प्रतिरन्। उप प्रेष्यं होतः। हव्या देवेभ्यः॥१२॥

दैव्याः शमितार उत मंनुष्या आरंभध्वम्। उपंनयत् मेध्या दुरंः। आशासांना मेधंपतिभ्यां मेधम्। प्रास्मां अग्निं भंरत। स्तृणीत बर्हिः। अन्वेनं माता मंन्यताम्। अनुं पिता। अनु भ्राता सर्गर्भ्यः। अनु सखा सयूँथ्यः। उदीचीनार् अस्य पदो निधंत्तात्॥१३॥

सूर्यं चक्षुंर्गमयतात्। वातं प्राणम्नववंसृजतात्। दिशः श्रोत्रम्। अन्तरिक्षमसुम्। पृथिवी शरीरम्। एक्धाऽस्य त्वचमाच्छातात्। पुरा नाभ्यां अपिशसो वपामुत्खिंदतात्। अन्तरेवोष्माणं वारयतात्। श्येनमंस्य वक्षः कृणुतात्। प्रशसां बाहू॥१४॥

श्रुला दोषणीं। कृश्यपेवारसां। अच्छिंद्रे श्रोणीं। कृवषोरू स्रेकपंणिष्ठीवन्तां। षड्विर्शातिरस्य वङ्कंयः। ता अनुष्ठोच्यांवयतात्। गात्रं गात्रमस्यानूनं कृणुतात्। ऊवध्यगोहं पार्थिवं खनतात्। अस्रा रक्षः सरसृंजतात्। वनिष्ठमस्य मा रांविष्ट॥१५॥

उर्रूकं मन्यंमानाः। नेद्वंस्तोके तनये। रवितारवंच्छमितारः। अधिगो शमीध्वम्। सुशमि शमीध्वम्। शुमीध्वमंधिगो। अधिगुश्चापांपश्च। उभौ देवानार्श्व शमितारौँ। ताविमं पृशू ॥ श्रंपयतां प्रविद्वारसौँ। यथांयथाऽस्य श्रपंणन्तथांतथा॥१६॥

धृत्ताद्भाहू मा रांविष्ट् तथांतथा॥-------

जुषस्वं सप्रथंस्तमम्। वचो देवपसंरस्तमम्। ह्व्या जुह्वांन आसिनं। इमं नो यज्ञममृतेषु धेहि। इमा ह्व्या जांतवेदो जुषस्व। स्तोकानांमग्रे मेदंसो घृतस्य। होतः प्राशांन प्रथमो निषद्यं। घृतवंन्तः पावक ते। स्तोकाः श्चोतन्ति मेदंसः। स्वधंमं देववीतये॥१७॥

श्रेष्ठं नो धेहि वार्यम्। तुभ्य है स्तोका घृतश्चर्तः। अग्ने विप्राय सन्त्य। ऋषिः श्रेष्ठः समिध्यसे। यज्ञस्यं प्राविता भंव। तुभ्य है श्चोतन्त्यिप्रगो शचीवः। स्तोकासो अग्ने मेर्दसो घृतस्यं। कृविशस्तो बृंह्ता भानुनागाः। ह्व्या जुंषस्व मेधिर। ओजिंष्ठन्ते मध्यतो मेद् उद्भृतम्। प्र ते वयं दंदामहे। श्चोतंन्ति ते वसो स्तोका अधित्वचि। प्रति तान्देवशोविंहि॥१८॥

आवृंत्रहणा वृत्रहिमः शुष्तैः। इन्द्रं यातन्नमोभिरग्ने अर्वाक्। युव र राधोभिरकंवेभिरिन्द्र। अग्ने अस्मे भंवतमुत्तमेभिः। होतां यक्षदिन्द्राग्नी। छागंस्य वृपाया मेदंसः। जुषेता हित्रां होत्यंजं। विह्यख्यन्मनंसा वस्यं इच्छन्। इन्द्रौग्नी ज्ञास उत वां सजातान्॥१९॥

नान्या युवत्प्रमंतिरस्ति मह्मम्। स वां धियं वाज्यन्तीमतक्षम्। होतां यक्षदिन्द्राग्नी। पुरोडाशंस्य जुषेता हिवः। होत्र्यजं। त्वामींडते अजिरं दूत्यांय। हिविष्मंन्तः सद्मिन्मानुंषासः। यस्यं देवैरासंदो बर्हिरंग्ने। अहाँन्यस्मै सुदिनां भवन्तु। होतां यक्षदिग्नम्। पुरोडाशंस्य जुषता हिवः। होत्र्यजं॥२०॥

स्जातानुष्रिन्द्वे चं॥————[८]

गीर्भिर्विप्रः प्रमंतिमिच्छमानः। ईट्टे र्यिं यशसं पूर्वभाजम्। इन्द्रांग्री वृत्रहणा सुवज्रा। प्र णो नव्येभिस्तिरतं देष्णैः। माच्छेंद्म र्श्मी श्रिति नाधंमानाः। पितृणा शक्तीरनुयच्छंमानाः। इन्द्राग्निभ्यां कं वृषंणो मदन्ति। ताह्यद्री धिषणांया उपस्थें। अग्निश् सुंदीतिश सुदृशं गृणन्तंः।

नमस्यामस्त्वेड्यं जातवेदः। त्वां दूतमंर्ति १ हंव्यवाहम्। देवा अंकृण्वन्नमृतंस्य नाभिम्॥२१॥

जात्वेदो द्वे चं॥-----[९]

त्व इ ह्यंग्ने प्रथमो म्नोताँ। अस्या धियो अभंवो दस्महोताँ। त्व सीं वृषन्नकृणोर्दुष्टरीत्। सहो विश्वंस्मै सहंसे सहंध्ये। अधा होता न्यंसीदो यजीयान्। इडस्पद इषयन्नीड्यः सन्। तं त्वा नरंः प्रथमं देवयन्तंः। महो राये चितयंन्तो अनुंग्मन्। वृतेव यन्तं बहुभिर्वस्व्यैः। त्वे र्यिं जांगृवा स्सो अनुंग्मन्॥२२॥

रुशंन्तमृग्निं देर्शतं बृहन्तम्। वृपावंन्तं विश्वहां दीदिवा स्म्मं। पृदं देवस्य नमंसा वियन्तः। श्रृवस्यवः श्रवं आपृत्रमृंक्तम्। नामानि चिद्दिधिरे यृज्ञियांनि। भृद्रायां ते रणयन्त सन्दंष्टो। त्वां वंधिन्त क्षित्रयः पृथिव्याम्। त्व रायं उभयांसो जनांनाम्। त्वं त्राता तंरणे चेत्यों ऽभूः। पिता माता सदिमिन्मानुंषाणाम्॥२३॥

सप्र्येण्यः स प्रियो विक्ष्वंग्निः। होतां मृन्द्रो निषंसादा यजीयान्। तं त्वां व्यं दम् आ दीदिवा स्मम्। उपंज्ञुबाधो नमंसा सदेम। तं त्वां व्य स्पुधियो नव्यंमग्ने। सुम्रायवं ईमहे देव्यन्तः। त्वं विशों अनयो दीद्यानः। दिवो अंग्ने बृह्ता रोचनेनं। विशां कृविं विश्पति शर्श्वतीनाम्। नितोशंनं वृष्मं चंर्षणीनाम्॥२४॥ प्रेतीषणि मिषयंन्तं पावकम्। राजंन्तमृग्निं यंज्तरः रंयीणाम्। सो अंग्न ईजे शशुमे च मर्तः। यस्त आनंदथ्समिधां ह्व्यदांतिम्। य आहुंतिं पिर् वेदा नमोंभिः। विश्वेथ्सवामा दंधते त्वोतः। अस्मा उं ते मिहं मृहे विधेम। नमोंभिरग्ने समिधोत ह्व्यैः। वेदीसूनो सहसो गीर्भिरुक्थैः। आ ते भुद्राया समुतौ यंतेम॥२५॥

आ यस्तृतन्थ रोदंसी विभासा। श्रवोंभिश्च श्रवस्यंस्तरुंत्रः। बृहद्भिवांजैः स्थविरेभिर्स्मे। रेवद्भिरग्ने वित्रं वि भांहि। नृवद्वंसो सद्मिद्धेंह्यस्मे। भूरितोकाय तनयाय पृश्वः। पूर्वीरिषों बृहतीरारे अंघाः। अस्मे भूद्रा सौंश्रवसानिं सन्तु। पुरूण्यंग्ने पुरुधा त्वाया। वसूनि राजन्वसुतांते अश्याम्। पुरूणि हि त्वे पुरुवार सन्तिं। अग्ने वसुं विधृते राजनित्वे॥२६॥

जागृवारसो अनुंग्मुन्मानुंषाणाश्चर्षणीनां यंतेमाश्यान्द्वे चं॥\_\_\_\_\_[१०]

आभेरत शक्षितं वज्रबाहू। अस्मा ईन्द्राग्नी अवत श्र् शचींभिः। इमे नु ते र्श्मयः सूर्यस्य। येभिः सिपृत्वं पितरो न आयन्। होतां यक्षदिन्द्राग्नी। छागंस्य ह्विष् आत्तांम्द्य। मध्यतो मेद उद्गृतम्। पुरा द्वेषौभ्यः। पुरा पौरुषेय्या गृभः। घस्तौन्नूनम्॥२७॥

घासे अंज्राणां यवंसप्रथमानाम्। सुमत्क्षंराणाः शतरुद्रियाणाम्। अग्निष्वात्तानां पीवोपवसनानाम्। पार्श्वतः श्रोणितः शिंतामृत उंथ्साद्तः। अङ्गांदङ्गादवंत्तानाम्। करंत एवेन्द्राग्नी। जुषेता १ हुविः। होतुर्यर्जं। देवेभ्यों वनस्पते हुवी १ षिं। हिरण्यपर्ण प्रदिवंस्ते अर्थम्॥ २८॥

प्रदक्षिणिद्रंशनयां नियूयं। ऋतस्यं विश्व पृथिभी रिजेष्ठेः। होतां यक्षद्वनस्पितमिभिहि। पिष्टतमया रिभेष्ठया रश्नयाधित। यत्रैन्द्राग्नियोश्छागंस्य ह्विषंः प्रिया धामानि। यत्र वनस्पतैः प्रिया पाथा स्सि। यत्रं देवानांमाज्यपानां प्रिया धामानि। यत्राग्नेरहोतुंः प्रिया धामानि। तत्रैतं प्रस्तुत्येवोप्स्तुत्ये वोपावंस्रक्षत्। रभीया समिव कृत्वी॥२९॥

करंदेवं देवो वनस्पतिः। जुषता हिवः। होत्र्यजी पिप्रीहि देवा उष्ट्रातो यविष्ठ। विद्वा स्कृत्र स्कृत्पते यजेह। ये देव्यां ऋत्विज् स्तेभिरग्ने। त्व स्हातृणामस्यायिजिष्ठः। होतां यक्षद्ग्रि स्विष्ट्रकृतम्। अयांड्रग्निरिन्द्राग्नियोष्ठागंस्य हिवषः प्रिया धामांनि। अयाङ्गनस्पतः प्रिया पाथा सि। अयाङ्ग्विवानांमाज्यपानां प्रिया धामांनि। यक्षंद्ग्नेरहोतुः प्रिया धामांनि। यक्ष्यस्वं महिमानम्। आयंजतामेज्या इषः। कृणोतु सो अध्वरा जातवेदाः। जुषता हिवः। होतर्यजं॥३०॥

नूनमर्थं कृत्वी पाथा रेसि सप्त चं॥———[११]

उपों हु यद्विदर्थं वाजिनो गूः। गीर्भिर्विप्राः प्रमंतिमिच्छमानाः। अर्वन्तो न काष्ठान्नक्षंमाणाः।

इन्द्राग्नी जोहुंवतो नर्स्ते। वनंस्पते रश्नयांऽभिधायं। पिष्टतंमया वयुनांनि विद्वान्। वहं देवत्रा दिंधिषो ह्वी १ षिं। प्र चंदातारंम्मृतेषु वोचः। अग्नि १ स्विष्टकृतम्। अयां इग्निरिन्द्राग्नियोश्छागंस्य हविषः प्रिया धामांनि॥ ३१॥

अयाङ्गन्स्पतैः प्रिया पाथा १सि। अयाङ्गेवानां माज्यपानां प्रिया धामानि। यक्षंद्रग्नेर्होतुः प्रिया धामानि। यक्ष्यस्वं महिमानम्। आयंजतामेज्या इषः। कृणोतु सो अध्वरा जातवंदाः। जुषता १ हिवः। अग्ने यदद्य विशो अध्वरस्य होतः। पावंक शोचे वेष्व १ हि यज्वां। ऋता यंजासि महिना वियद्भः। ह्व्या वंह यविष्ठ या ते अद्या ३२॥

धार्मानि भूरेकं च॥——[१२]

देवं ब्रहिः सुंदेवं देवैः स्याथ्सुवीरं वीरैर्वस्तौंर्वृज्येताकाः प्रिभेयेतात्यन्यात्राया ब्रहिष्मतो मदेम वसुवने वसुधेयस्य वेतु यर्जा। देवीर्द्वारंः सङ्घाते विङ्वीर्यामञ्छिथिरा ध्रुवा देवहूंतौ वथ्म ईमेनास्तरुण आमिमीयात्कुमारो वा नवंजातो मैना अर्वा रेणुकंकाटः पृणंग्वसुवने वसुधेयस्य वियन्तु यर्जा। देवी उषासानक्ताऽद्यास्मिन् य्र्जे प्रयत्यंह्वेतामपि नूनं देवीर्विशः प्रायांसिष्टा सप्रीते सुधिते वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यर्जा। देवी जोष्टी वसुंधिती ययोर्न्याऽघाद्वेषा सिम युयवदान्यावंक्षद्वसु

वार्याणि यजंमानाय वसुवनं वसुधेयंस्य वीतां यजं। देवी ऊर्जाहुंती इषुमूर्जम्यावंक्षथ्मिण्यः सपीतिम्न्या नवेन पूर्वन्दयंमानाः स्यामं पुराणेन नवन्तामूर्जमूर्जाहुती ऊर्जयमाने अधातां वसुवने वसुधेयस्य वीतां यजे। देवा दैव्या होतांरा नेष्टांरा पोतांरा हताघंश सावाभ्रद्वंसू वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यजं। देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीरिडा सरस्वती भारती द्यां भारत्यादित्यैरस्पृक्षथ्सरस्वतीम र रुद्रैर्य्ज्ञमांवीदिहैवेडंया वसुंमत्या सधुमादं मदेम वसुवनं वसुधेयस्य वियन्तु यजी देवो नराशश्सिशीर्षा षंडुक्षः शतमिदंन शितिपृष्ठा आदंधति सहस्रंमीं प्रवंहन्ति मित्रावरुणेदंस्य होत्रमर्हंतो बृहस्पतिः स्तोत्रमश्विना-ऽऽध्वंर्यवं वसुवनं वसुधेयस्यं वेतु यर्जा। देवो वनस्पतिं वर्षप्रांवा घृतिने णिग्द्यामग्रेणास्पृक्षदान्तरिक्षं मध्यंनाप्राः पृथिवीमुपंरेणाद शहिद्सुवनं वसुधेयंस्य वेतु यजं। देवं ब्रहिर्वारितीनां निधेषांऽसि प्रच्यंतीनामप्रं-च्युतन्निकाम्धरंणं पुरुस्पार्हं यशंस्वदेना बुर्हिषाऽन्या ब्रही इप्यभि प्यांम वसुवने वसुधेयंस्य वेतु यर्जा। देवो अग्निः स्विष्टकृथ्सुद्रविणा मन्द्रः कविः सत्यमन्माऽऽयजी होता होतुंर्होतुरायंजीयानम् यान्देवानयाड्या अपिप्रेर्ये ते होत्रे अमंध्सत तार संसनुषीर होत्रां देवङ्गमान्दिवि

देवेषुं यज्ञमेरंयेमङ् स्विष्टकृचाग्ने होताऽभूवंसुवने वसुधेयंस्य नमोवाके वीहि यजं॥३३॥

यजैकं च॥----[१३]

देवं ब्रहिः। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु। देवीर्द्वारंः। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु। देवी उषासानक्तां। वसुवनं वसुधेयंस्य वीताम्। देवी जोष्ट्रीं। वसुवनं वसुधेयंस्य वीताम्। देवी ऊर्जाहंती। वसुवनं वसुधेयस्य वीताम्। देवी

देवा दैव्या होतांरा। वसुवनं वसुधेयंस्य वीताम्। देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीः। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु। देवो नराशः संः। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु। देवो वनस्पितः। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु। देवो वनस्पितः। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु। देवं बर्हिवीरितीनाम्। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु॥३५॥

देवो अग्निः स्विष्टकृत्। सुद्रविणा मृन्द्रः कृविः। सृत्यमेन्मायजी होता। होतुंरहोतुरायंजीयान्। अग्ने यान्देवानयाँट्। या अपिप्रेः। ये ते होत्रे अमेथ्सत। ता र संसुनुषी होत्रान्देवङ्गमाम्। दिवि देवेषु यज्ञमेरंयेमम्। स्विष्टकृचाग्ने होताऽभूः। वसुवने वसुधेयंस्य नमोवाके वीहि॥३६॥

वीतां वेत्वभूरेकं च॥----[१४]

अग्निम्द्य होतांरमवृणीतायं यजंमानः पर्चन्यक्तीः

पर्चन्पुरोडाशं बृध्रन्निन्द्राग्निभ्यां छाग्रं सूप्स्था अद्य देवो वनस्पतिरभवदिन्द्राग्निभ्यां छाग्रेनाघंस्तान्तं मेंद्स्तः प्रतिपचताग्रंभीष्टामवीवृधेतां पुरोडाशेन त्वामद्यर्षं आर्षेय ऋषीणान्नपादवृणीतायं यजंमानो बहुभ्य आ सङ्गंतेभ्य एष में देवेषु वसु वार्या यंक्ष्यत् इति ता या देवा देवदानान्यदुस्तान्यंस्मा आ च शास्वा चं गुरस्वेषितश्चं होत्रसिं भद्रवाच्यांय् प्रेषितो मानुषः सूक्तवाकायं सूका ब्रूंहि॥३७॥

अग्निमद्यैकम्ँ॥———[१५]

अञ्जन्ति होतां यक्ष्यसमिद्धो अद्याग्निरजैद्दैच्यां जुषस्वा वृंत्रहणा गी्रिस्त्व इ ह्याभंरतमुपोंह् यद्देवं बुर्हिः सुंदेवं देवं बुर्हिर्ग्निम्द्य पश्चंदश॥१५॥ अञ्जन्त्यग्निर्होतां नो गी्रिस्पों हु यद्विदर्थं वाजिनः सप्तित्रिर्शत्॥३७॥ अञ्जन्तिं सूक्ताब्रूंहि॥

## हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके षष्ठः प्रपाठकः समाप्तः॥

## ॥सप्तमः प्रश्नः॥

## ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके सप्तमः प्रपाठकः॥

सर्वान् वा एषों ऽग्नौ कामान्प्रवेशयति। यों ऽग्नीनंन्वाधायं व्रतमुपैति। सयदिनं द्वा प्रयायात्। अकामप्रीता एनं कामा नानुप्रयायः। अतेजा अंवीर्यः स्यात्। स जुंहुयात्। तुभ्यं ता अंङ्गिरस्तम। विश्वाः सुिक्षतयः पृथंक्। अग्ने कामाय येमिर् इति। कामानेवास्मिन्दधाति॥१॥

कामंप्रीता एनं कामा अनु प्रयांन्ति। तेज्स्वी वीर्यावान्भवति। सन्तितिर्वा एषा यज्ञस्यं। योंऽग्नीनंन्वाधायं व्रतमुपैतिं। स यदुद्वायंति। विच्छिंत्तिरेवास्य सा। तं प्राश्चंमुद्धृत्यं। मन्सोपितिष्ठेत। मनो वै प्रजापितिः। प्राजापत्यो यज्ञः॥२॥

मनंसैव यज्ञ सन्तंनोति। भूरित्यांह। भूतो वै प्रजापंतिः। भूतिंमेवोपैति। वि वा एष इंन्द्रियेणं वीर्येणर्ध्यते। यस्याऽऽहिंताग्नेर्ग्निरंपृक्षायंति। यावच्छम्यंया प्रविध्येत। यदि तावंदपृक्षायेत्। त सम्भरेत्। इदं त एकं प्र उं त एकम्॥३॥

तृतीयेंन ज्योतिषा संविशस्व। संवेशंनस्तुनुवै चारुरेधि। प्रिये देवानां पर्मे जनित्र इतिं। ब्रह्मणैवैन्र् सम्भरित। सैव ततः प्रायेश्चित्तिः। यदिं परस्तरामंपक्षायेत्। अनुप्रयायावंस्येत्। सो एव ततः प्रायंश्चित्तिः। ओषंधीर्वा एतस्यं पृशून्पयः प्रविंशति। यस्यं ह्विषे वृथ्सा अपाकृता धर्यन्ति॥४॥

तान् यद्दुह्यात्। यातयांमा ह्विषां यजेत। यन्न दुह्यात्। यज्ञपुरुरुन्तरियात्। वायव्यां यवागून्निर्वपेत्। वायुर्वे पयंसः प्रदापयिता। स एवास्मै पयः प्रदापयित। पयो वा ओषंधयः। पयः पयः। पयंसैवास्मै पयोऽवं रुन्धे॥५॥

अथोत्तंरस्मे ह्विषं वृथ्सान्पार्कुर्यात्। सैव ततः प्रायंश्चित्तः। अन्यत्रान् वा एष देवान्भांगुधेयेन् व्यर्धयति। ये यर्जमानस्य सायं गृहमा गच्छंन्ति। यस्यं सायं दुग्धः ह्विरार्तिमार्च्छति। इन्द्रांय ब्रीहीन्निरुप्योपं वसेत्। पयो वा ओषंधयः। पयं प्वारभ्यं गृहीत्वोपं वसति। यत्प्रातः स्यात्। तच्छृतं कुर्यात्॥६॥

अथेतंर ऐन्द्रः पुंरोडाशः स्यात्। इन्द्रिये एवास्मै स्मीचीं दधाति। पयो वा ओषंधयः। पयः पयः। पयंसैवास्मै पयो-ऽवं रुन्धे। अथोत्तंरस्मै ह्विषं वृथ्सान्पाकुंर्यात्। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। उभयान् वा एष देवान्भांगुधेयेन् व्यर्धयति। ये यजंमानस्य सायं चं प्रातश्चं गृहमा गच्छंन्ति। यस्योभयर्ष ह्विरार्तिमाुर्च्छतिं॥७॥

पुन्द्रं पश्चंशरावमोदनं निर्वपेत्। अग्निं देवतानां प्रथमं

यंजेत्। अग्निमुंखा एव देवताः प्रीणाति। अग्निं वा अन्वन्या देवताः। इन्द्रमन्वन्याः। ता एवोभर्याः प्रीणाति। पयो वा ओषंधयः। पयः पयंः। पयंसैवास्मै पयोऽवं रुन्धे। अथोत्तरस्मै हविषं वृथ्सानुपाकुर्यात्॥८॥

सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। अर्धो वा एतस्यं यज्ञस्यं मीयते। यस्य व्रत्येऽह्न्यल्यंनालम्भुका भवंति। तामंप्रुध्यं यजेत। सर्वेणेव यज्ञेनं यजते। तामिष्ट्वोपं ह्वयेत। अमूहमंस्मि। सा त्वम्। द्यौर्हम्। पृथिवी त्वम्। सामाहम्। ऋक्तम्। तावेहि सम्भवाव। सह रेतों दधावहै। पुर्से पुत्राय वेत्तंवै। रायस्पोषांय सुप्रजास्त्वायं सुवीर्यायेति। अर्ध एवैनामुपं ह्वयते। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः॥९॥

द्धाति यज्ञ उत् एक्न्थयंन्ति रुन्थे कुर्यादार्च्छत्यपाकुर्यात्पृथिवी त्वमृष्टौ चं (सर्वान् वि वै यदिं परस्तरामोषंधीरन्यत्रानुभयांनुर्धो वै॥)॥———[१]

यद्विष्यंणोन जुहुयात्। अप्रंजा अपृशुर्यजंमानः स्यात्। यदनांयतने निनयेत्। अनायतनः स्यात्। प्राजापत्ययूर्चा वंल्मीकवपायामवं नयेत्। प्राजापत्यो वै वल्मीकः। युज्ञः प्रजापंतिः। प्रजापंतावेव युज्ञं प्रतिष्ठापयति। भूरित्यांह। भूतो वै प्रजापंतिः॥१०॥

भूतिंमेवोपैति। तत्कृत्वा। अन्यां दुग्ध्वा पुनेर्होत्व्यम्। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। यत्कीटावंपन्नेन जुहुयात्। अप्रंजा अपृशुर्यजंमानः स्यात्। यदनांयतने निनयैत्। अनायतनः स्यांत्। मध्यमेनं पूर्णेनं द्यावापृथिव्यंयुर्चाऽन्तः परिधि निनंयेत्। द्यावांपृथिव्योरेवैनत्प्रतिष्ठापयति॥११॥

तत्कृत्वा। अन्यां दुग्ध्वा पुनेर्होत्व्यम्। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। यदवेवृष्टेन जुहुयात्। अपंरूपमस्याऽऽत्मञ्जायेत। किलासो वास्यादंर्श्वसो वा। यत्प्रत्येयात्। यृज्ञं विच्छिन्द्यात्। स जुंहुयात्। मित्रो जनान्कल्पयति प्रजानन्॥१२॥

मित्रो दांधार पृथिवीमुत द्याम्। मित्रः कृष्टीरनिंमिषाऽभि चंष्टे। सत्यायं हृव्यं घृतवंज्जहोतेति। मित्रेणैवैनंत्कल्पयति। तत्कृत्वा। अन्यां दुग्ध्वा पुनंरहोत्व्यम्। सेव ततः प्रायंश्चित्तिः। यत्पूर्वस्यामाहुंत्या हृतायामुत्तराऽऽहुंतिः स्कन्देंत्। द्विपाद्भिः पशुभिर्यजंमानो व्यृध्येत। यदुत्तंरयाऽभि जुंहुयात्॥१३॥

चतुष्पाद्भिः पृशुभिर्यजमानो व्यृध्येत। यत्र वेत्थं वनस्पते देवानां गुह्या नामानि। तत्रं ह्व्यानिं गामयेतिं वानस्पत्ययुर्चा समिधंमाधायं। तूष्णीमेव पुनर्जुहुयात्। वनस्पतिनैव यज्ञस्यार्तां चानांतां चाऽऽहुंती वि दांधार। तत्कृत्वा। अन्यां दुग्ध्वा पुनरहोत्व्यम्। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। यत्पुरा प्रयाजेभ्यः प्राङङ्गारः स्कन्देंत्। अध्वर्यवे च यजंमानाय चाक इं स्यात्॥१४॥

यदंक्षिणा। ब्रुह्मणें च यजंमानाय चाकई स्यात्। यत्प्रत्यक्। होत्रें च पत्निये च यजंमानाय चाकई स्यात्। यदुदङ्कं। अग्नीधं च पृशुभ्यंश्च यजंमानाय चाकः स्यात्। यदंभिजुहुयात्। रुद्रौऽस्य पृशून्धातुंकः स्यात्। यन्नाभिजुहुयात्। अशौन्तः प्रह्नियेत॥१५॥

स्रुवस्य बुध्नेनाभिनिदंध्यात्। मा तंमो मा यज्ञस्तंमन्मा यजंमानस्तमत्। नमंस्ते अस्त्वायते। नमों रुद्र परायते। नमो यत्रं निषीदंसि। अमुं मा हिर्श्सीरमुं मा हिर्श्सीरिति येन स्कन्देंत्। तं प्रहंरेत्। सहस्रंशृङ्गो वृष्मो जातवेदाः। स्तोमंपृष्ठो घृतवान्थ्सुप्रतीकः। मा नो हासीन्मेत्थितो नेत्त्वा जहांम। गोपोषं नो वीरपोषं चं यच्छेति। ब्रह्मंणैवैनं प्र हंरति। सेव ततः प्रायंश्चित्तिः॥१६॥

वै प्रजापंतिः स्थापयति प्रजानन्त्रभि जुंहुयाथ्स्याँद्धियेत् जहांम् त्रीणिं च (यद्विष्यंण्णेन प्राजापृत्यया यत्कीटा मेध्यमेन् यदवेवृष्टेन् यत्पूर्वंस्यां यत्पुरा प्रयाजेभ्यः प्राङङ्गारो यद्वेक्षिणा यत्प्रत्यग्यदुदङ्क्ष्ण)॥————[२]

वि वा एष इंन्द्रियेणं वीर्येणध्यते। यस्याऽऽहिंताग्ने-रिग्नर्मध्यमानो न जायते। यत्रान्यं पश्येत्। ततं आहृत्यं होत्व्यम्। अग्नावेवास्यांग्निहोत्रः हुतं भंवति। यद्यन्यन्न विन्देत्। अजायाः होत्व्यम्। आग्नेयी वा एषा। यद्जा। अग्नावेवास्यांग्निहोत्रः हुतं भंवति॥१७॥

अजस्य तु नाश्नीयात्। यद्जस्याँश्नीयात्। यामेवाग्नावाहुंतिं जुहुयात्। तामंद्यात्। तस्माद्जस्य नाश्यम्। यद्यजान्न विन्देत्। ब्राह्मणस्य दक्षिणे हस्ते होत्व्यम्। एष वा अग्निर्वेश्वान्रः। यद्ग्राह्मणः। अग्नावेवास्यांग्निहोत्रः हुतं भेवति॥१८॥

ब्राह्मणं तु वंस्त्यै नापं रुन्ध्यात्। यद्ग्राह्मणं वंस्त्या अपरुन्ध्यात्। यस्मिन्नेवाग्नावाहुंतिं जुहुयात्। तं भागधेयेन् व्यर्धयेत्। तस्माद्भाह्मणो वंस्त्यै नाप्रध्यः। यदिं ब्राह्मणं न विन्देत्। दुर्भस्तम्बे होत्व्यम्। अग्निवान् वै दंर्भस्तम्बः। अग्नावेवास्याग्निहोत्र हुतं भवति। दुर्भाङ्स्तु नाध्यांसीत॥१९॥

यद्दर्भान्ध्यासीत। यामेवाग्नावाहुंतिं जुहुयात्। तामध्यांसीत। तस्माँद्दर्भा नाध्यांसित्व्याः। यदिं दुर्भान्न विन्देत्। अपसु होत्व्यम्। आपो वै सर्वा देवताः। देवतांस्वेवास्यांग्निहोत्र हुतं भवति। आप्स्तु न परिचक्षीत। यदापः परिचक्षीत॥२०॥

यामेवाफ्स्वाहुंतिं जुहुयात्। तां परिंचक्षीत। तस्मादापो न परि्चक्ष्याः। मेध्यां च वा एतस्यांमेध्या चं तनुवौ सश् सृज्येते। यस्याऽऽहिंताग्नेर्न्यैर्ग्निभिर्ग्नयः सश्सृज्यन्तैं। अग्नये विविंचये पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निर्वपेत्। मेध्यां चैवास्यांमेध्यां चं तनुवौ व्यावर्तयति। अग्नये व्रतपंतये पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निर्वपेत्। अग्निमेव व्रतपंतिङ् स्वेनं भागुधेयेनोपं धावति। स एवैनं व्रतमा लम्भयति॥२१॥

गर्भ्ड् स्रवंन्तमग्दमंकः। अग्निरिन्द्रस्त्वष्टा बृह्स्पतिः। पृथिव्यामवं चुश्चोतैतत्। नाभिप्राप्नोति निर्ऋतिं पराचैः। रेतो वा पृतद्वाजिनमाहिताग्नेः। यदिग्नहोत्रम्। तद्यथ्सवैत्। रेतोऽस्य वाजिन्ड् स्रवेत्। गर्भ्ड् स्रवंन्तमग्दमंकरित्यांह। रेतं पुवास्मिन्वाजिनं दधाति॥२२॥

अग्निरित्यांह। अग्निर्वे रेतोधाः। रेतं एव तद्दंधाति। इन्द्र इत्यांह। इन्द्रियमेवास्मिन्दधाति। त्वष्टेत्यांह। त्वष्टा वै पंशूनां मिथुनाना रे रूपकृत्। रूपमेव पृशुषुं दधाति। बृह्स्पतिरित्यांह। ब्रह्म वै देवानां बृह्स्पतिः। ब्रह्मणैवास्मै प्रजाः प्र जनयति। पृथिव्यामव चुश्चोतैतदित्यांह। अस्यामेवैन्त्प्रतिष्ठापयति। नाभिप्राप्नोति निर्ऋतिं पराचैरित्यांह। रक्षंसामपंहत्यै॥२३॥

अजाऽग्नावेवास्याँग्निहोत्र हुतं भंवति भवत्यासीत परिचक्षीत लम्भयति दधाति देवानां बृह्स्पतिः पश्चं च (वि वै यद्यन्यमृजायां ब्राह्मणस्यं दर्भस्तुम्बेंऽफ्सु होत्वयम्॥ )॥——[३]

याः पुरस्तौत्प्रस्रवंन्ति। उपरिष्टाथ्सर्वतंश्च याः। ताभी रश्मिपंवित्राभिः। श्रृद्धां यज्ञमा रंभे। देवां गातुविदः। गातुं यज्ञायं विन्दत। मनस्यपतिना देवेनं। वातौद्यज्ञः प्र युज्यताम्। तृतीयंस्यै दिवः। गायत्रिया सोम् आभृतः॥२४॥

सोमपीथाय सन्नंयितुम्। वकंलमन्तंरमा दंदे। आपों देवीः शुद्धाः स्थं। इमा पात्रांणि शुन्धत। उपातुङ्क्यांय देवानांम्। पूर्णवल्कमुत शुंन्धत। पयो गृहेषु पयो अघ्नियासुं। पयो वथ्सेषु पय इन्द्रांय ह्विषे ध्रियस्व। गायत्री पंर्णवल्केनं। पयः सोमं करोत्विमम्॥२५॥

अग्निं गृह्णामि सुरथं यो मंयोभूः। य उद्यन्तंमारोहंति सूर्यमहें। आदित्यं ज्योतिषां ज्योतिरुत्तमम्। श्वो यज्ञायं रमतां देवतांभ्यः। वसूत्रुद्रानादित्यान्। इन्द्रेण सह देवताः। ताः पूर्वः परिं गृह्णामि। स्व आयतंने मनीषयां। इमामूर्जं पश्चद्शीं ये प्रविष्टाः। तान्देवान्परिं गृह्णामि पूर्वः॥२६॥

अग्निर्हं व्यवाडिह ताना वंहतु। पौर्णमास हिविरिदमें षां मिये। आमावास्य हिविरिदमें षां मिये। अन्तराऽग्नी पृशवंः। देवस स्पदमा गंमन्। तान्पूर्वः पिरं गृह्णामि। स्व आयतंने मनीषयां। इह प्रजा विश्वरूपा रमन्ताम्। अग्निं गृहपंतिम्भि संवसानाः। ताः पूर्वः पिरं गृह्णामि॥२७॥

स्व आयतंने मनीषयाँ। इह पृशवों विश्वरूपा रमन्ताम्। अग्निं गृहपंतिम्भि संवसानाः। तान्पूर्वः परिं गृह्णामि। स्व आयतंने मनीषयाँ। अयं पिंतृणामृग्निः। अवांह्रुव्या पितृभ्य आ। तं पूर्वः परिं गृह्णामि। अविषन्नः पितुं करत्। अजंस्रं त्वा॰ संभापालाः॥२८॥

विजयभांगुर् सिमंन्धताम्। अग्ने दीदांय मे सभ्य। विजित्यै शुरदेः शुतम्। अन्नमावसुथीयम्। अभि हंराणि श्ररदेः श्रतम्। आवस्थे श्रियं मन्नम्। अहिंर्बुध्नियो नि यंच्छत्। इदम्हम्ग्रिज्येष्ठिभ्यः। वस्भयो यज्ञं प्रब्रंवीमि। इदमहमिन्द्रंज्येष्ठेभ्यः॥२९॥

रुद्रेभ्यों यज्ञं प्र ब्रंवीमि। इदमहं वर्रणज्येष्ठेभ्यः। आदित्येभ्यों यज्ञं प्र ब्रंवीमि। पर्यस्वतीरोषंधयः। पर्यस्वद्वीरुधां पर्यः। अपां पर्यसो यत्पर्यः। तेन मामिन्द्र स॰ सृंज। अग्ने व्रतपते वृतं चेरिष्यामि। तच्छंकेयं तन्मे राध्यताम्। वार्यों व्रतपत् आदित्य व्रतपते॥३०॥

वृतानां व्रतपते वृतं चेरिष्यामि। तच्छंकेयं तन्में राध्यताम्। इमां प्राचीमुदीचीम्। इष्मूर्जमिभ सङ्स्कृताम्। बहुपूर्णामशृष्काग्राम्। हरामि पशुपामहम्। यत्कृष्णों रूपं कृत्वा। प्राविश्वस्त्वं वनस्पतीन्। तत्स्त्वामेकविश्शित्धा। सम्भेरामि सुसम्भृतां॥३१॥

त्रीन्पंरिधी इस्तिम्नः समिधंः। यज्ञायुंरनुसश्चरान्। उपवेषं मेक्षंणं धृष्टिम्। सं भेरामि सुसम्भृतां। या जाता ओषंधयः। देवेभ्यंस्त्रियुगं पुरा। तासां पर्वं राध्यासम्। परिस्तरमाहरन्। अपां मेध्यं यज्ञियम्। सदेव शिवमंस्तु मे॥३२॥

आच्छेत्ता वो मा रिषम्। जीवांनि श्ररदेः श्तम्। अपंरिमितानां परिमिताः। सन्नेह्ये सुकृताय कम्। एनो मा निगांङ्कतमच्चनाहम्। पुनंरुत्थायं बहुला भंवन्तु। सकृदाच्छिन्नं बर्हिरूणांमृदु। स्योनं पितृभ्यंस्त्वा भराम्यहम्। अस्मिन्थ्सींदन्तु मे पितरंः सोम्याः। पितामहाः प्रपितामहाश्चानुगैः सह॥३३॥

त्रिवृत्पंलाशे दर्भः। इयाँन्प्रादेशसंम्मितः। यज्ञे प्वित्रं पोतृंतमम्। पयो हृव्यं करोतु मे। इमौ प्रांणापानौ। यज्ञस्याङ्गांनि सर्वृशः। आप्याययंन्तौ सर्श्वरताम्। प्वित्रे हव्यशोधंने। प्वित्रे स्थो वैष्ण्वी। वायुर्वां मनंसा पुनातु॥३४॥

अयं प्राणश्चापानश्चं। यजंमान्मिपं गच्छताम्। यज्ञे ह्यभूंतां पोतांरौ। पिवित्रं हव्यशोधंने। त्वया वेदिं विविद्ः पृथिवीम्। त्वयां यज्ञो जांयते विश्वदानिः। अच्छिंद्रं यज्ञमन्वेषि विद्वान्। त्वया होता सन्तंनोत्यर्धमासान्। त्रयस्त्रिष्शोऽसि तन्तूंनाम्। पिवित्रेण सहागंहि॥३५॥

शिवय र चुंरिभ्धानीं। अग्नियामुपं सेवताम्। अप्रंस्र साय यज्ञस्यं। उखे उपंदधाम्यहम्। पृशुभिः सन्नीतं बिभृताम्। इन्द्रांय शृतं दिधं। उपवेषोऽसि यज्ञायं। त्वां परिवेषमधारयन्। इन्द्रांय हिवः कृण्वन्तः। शिवः शृग्मो भंवासि नः॥३६॥

अमृंन्मयन्देवपात्रम्। यज्ञस्याऽऽयुंषि प्र युंज्यताम्। तिरः पवित्रमितनिताः। आपो धारय मातिगुः। देवेनं सिवत्रोत्पूंताः। वसोः सूर्यस्य रुश्मिभिः। गां दोहपिवत्रे रज्जुम्। सर्वा पात्राणि शुन्धत। एता आ चंरन्ति मधुंमृद्दुहांनाः। प्रजावंतीर्य्शसों विश्वरूपाः॥३७॥

बह्वीर्भवंन्तीरुप्जायंमानाः। इह व इन्द्रों रमयतु गावः। पूषा स्थं। अयक्ष्मा वंः प्रजया सः सृंजािम। रायस्पोषंण बहुलाभवंन्तीः। ऊर्जं पयः पिन्वंमाना घृतं चं। जीवो जीवंन्तीरुपंवः सदेयम्। द्यौश्चेमं यज्ञं पृथिवी च सन्दुंहाताम्। धाता सोमेन सह वातेन वायुः। यजमानाय द्रविणं दधातु॥३८॥

उथ्सं दुहन्ति कुलशं चतुंर्बिलम्। इडाँ देवीं मधुंमती १ सुवर्विदम्। तदिन्द्राग्नी जिन्वत १ सूनृतांवत्। तद्यजंमान-ममृतत्वे देधातु। कामधुक्षः प्र णौ ब्रूहि। इन्द्रांय ह्विरिन्द्रियम्। अमूं यस्याँ देवानांम्। मनुष्यांणां पयों हितम्। बहु दुग्धीन्द्रांय देवेभ्यः। हुव्यमा प्यांयतां पुनः॥३९॥

वृथ्सेभ्यों मनुष्येंभ्यः। पुनर्दोहायं कल्पताम्। यृज्ञस्य सन्तंतिरसि। यृज्ञस्यं त्वा सन्तंतिमनु सन्तंनोमि। अदंस्तमिस् विष्णंवे त्वा। यृज्ञायापि दधाम्यृहम्। अद्भिरिक्तेन पात्रेण। याः पूताः परिशेरते। अयं पयः सोमं कृत्वा। स्वां योनिमपि गच्छतु॥४०॥

पूर्णवुल्कः प्वित्रम्। सौम्यः सोमाद्धि निर्मितः। इमौ पूर्णं चं दुर्भं चं। देवाना १ हव्यशोधंनौ। प्रातुर्वेषायं गोपाय। विष्णों ह्व्य १ हि रक्षंसि। उभावृग्नी उपस्तृण्ते। देवता उपवसन्तु मे। अहं ग्राम्यानुपं वसामि। मह्यं गोपंतये पृशून्॥४१॥ आर्थत इमं गृंह्णामि पूर्वस्ताः पूर्वः परिगृह्णामि सभापाला इन्द्रंज्येष्ठेभ्य आदित्य व्रतपते सुसम्भृतां मे सह पुंनातु गिह नो विश्वरूपा दथातु पुनर्गच्छतु पृशून् (याः पुरस्तांदिमामूर्जमिह प्रजा इह पृशवोऽयं पितृणामृग्निः।)॥———[४]

देवां देवेषु पराँकमध्वम्। प्रथंमा द्वितीयेषु। द्वितीयास्तृतीयेषु। त्रिरंकादशा इह मांऽवत। इदश् शंकेयं यदिदं क्रोमिं। आत्मा करोत्वात्मनें। इदं केरिष्ये भेषजम्। इदं में विश्वभेषजा। अश्विना प्रावंतं युवम्। इदमहश् सेनांया अभीत्वंर्ये॥४२॥

मुख्मपोहामि। सूर्यं ज्योतिर्वि भांहि। मह्त इंन्द्रियायं। आ प्यायतां घृतयोनिः। अग्निर्ह्व्याऽनुं मन्यताम्। खमंङ्क्ष् त्वचंमङ्क्षा सुरूपं त्वां वसुविदम्। पृशूनां तेजंसा। अग्नये जुष्टंमिभ घारयामि। स्योनं ते सदेनं करोमि॥४३॥

घृतस्य धार्रया सुशेवं कल्पयामि। तस्मिन्थ्सीदामृते प्रतिं तिष्ठ। व्रीहीणां मेध सुमन्स्यमानः। आर्द्रः प्रथसुर्भुवंनस्य गोपाः। शृत उथ्म्नांति जनिता मंतीनाम्। यस्तं आत्मा पृशुषु प्रविष्टः। देवानां विष्ठामनु यो वितस्थे। आत्मन्वान्थ्सोम घृतवान् हि भूत्वा। देवानांच्छ् सुवंविन्द यजमानाय मह्मम्। इरा भूतिः पृथिव्यै रसो मोत्क्रंमीत्॥४४॥ देवाः पितरः पितंरो देवाः। योऽहमंस्मि स सन् यंजे। यस्यांस्मि न तम्नतरेमि। स्वं मं इष्ट्रं स्वं दत्तम्। स्वं पूर्तः स्वः श्रान्तम्। स्वः हुतम्। तस्यं मेऽग्निरुंपद्रष्टा। वायुरुंपश्चोता। आदित्योऽनुख्याता। द्यौः पिता॥४५॥

पृथिवी माता। प्रजापंतिर्बन्धुः। य एवास्मि स सन् यंजे। मा भेमी संविक्था मा त्वां हिश्सिषम्। मा ते तेजोऽपं क्रमीत्। भरतमुद्धेरेमनुंषिश्च। अवदानांनि ते प्रत्यवदास्यामि। नमंस्ते अस्तु मा मां हिश्सीः। यदंवदानांनि तेऽवद्यन्। विलोमाकांर्षमात्मनः॥४६॥

आज्येन प्रत्यंनज्म्येनत्। तत्त् आ प्यांयतां पुनेः। अज्यांयो यवमात्रात्। आव्याधात्कृत्यतामिदम्। मा रूरुपाम यज्ञस्यं। शुद्ध स्वष्टिमिद हिवः। मनुना दृष्टां घृतपंदीम्। मित्रावरुणसमीरिताम्। दक्षिणार्धादसंम्भिन्दन्। अवंद्याम्येकतोमुंखाम्॥४७॥

इडें भागं जुंषस्व नः। जिन्व गा जिन्वार्वतः। तस्याँस्ते भिक्षवाणः स्याम। सूर्वात्मानः सूर्वगंणाः। ब्रध्न पिन्वंस्व। ददंतो मे मा क्षांयि। कुर्वतो मे मोपंदसत्। दिशां क्रिप्तिंरिस। दिशों मे कल्पन्ताम्। कल्पंन्तां मे दिशः॥४८॥

देवींश्च मानुंषिश्च। अहोरात्रे में कल्पेताम्। अर्धमासा में कल्पन्ताम्। मासां मे कल्पन्ताम्। ऋतवों मे कल्पन्ताम्। सुंवृथ्सरो में कल्पताम्। क्रुप्तिरिस् कल्पंतां मे। आशांनां त्वाऽऽशापा॒लेभ्यः। चृतुभ्यों अमृतेभ्यः। इदं भूतस्याध्यंक्षेभ्यः॥४९॥

विधेमं ह्विषां वयम्। भजंतां भागी भागम्। मा भागोऽभंक्ता निरंभागं भंजामः। अपस्पिन्व। ओषंधीर्जिन्व। द्विपात्पांहि। चतुंष्पादव। दिवो वृष्टिमेरंय। ब्राह्मणानांमिद॰ ह्विः॥५०॥

सोम्याना सोमपीथिनांम्। निर्भक्तो ब्राह्मणः। नेहा ब्राह्मणस्यास्ति। समंङ्कां बर्हिर्ह्विषां घृतेनं। समादित्यैर्वसृभिः सं मुरुद्भिः। समिन्द्रेण विश्वेभिर्देविभिरङ्काम्। दिव्यं नभो गच्छतु यथ्स्वाहां। इन्द्राणीवांविध्वा भूयासम्। अदितिरिव सुपुत्रा। अस्थूरि त्वां गार्हपत्य॥५१॥

उपनिषंदे सुप्रजास्त्वायं। सं पत्नी पत्यां सुकृतेनं गच्छताम्। यज्ञस्यं युक्तौ धुर्यावभूताम्। सञ्जानानौ विजंहतामरांतीः। दिवि ज्योतिरजरमा रंभेताम्। दशंते तनुवो यज्ञ यज्ञियाः। ताः प्रीणातु यजंमानो घृतेनं। नारिष्ठयोः प्रिशिषमीडंमानः। देवानां दैव्येऽपि यजंमानोऽमृतोऽभूत्। यं वां देवा अंकल्पयन्॥५२॥

ऊर्जी भागः शंतऋत्। एतद्वां तेनं प्रीणानि। तेनं तृप्यतमः हहौ। अहं देवानाः सुकृतांमस्मि लोके। ममेदिम्षृष्टं न मिथुंर्भवाति। अहं नांरिष्ठावनुं यजामि विद्वान्। यदाँभ्यामिन्द्रो अदंधाद्भागुधेयम्। अदांरसृद्भवत देवसोम। अस्मिन् युज्ञे मंरुतो मृडता नः। मा नो विदद्भिभामो अशंस्तिः॥५३॥

मा नो विदद्धुजना द्वेष्या या। ऋष्मं वाजिनं वयम्। पूर्णमांसं यजामहे। स नो दोहता स्वीर्यम्। रायस्पोष सहस्रिणम्। प्राणायं सुराधंसे। पूर्णमांसाय स्वाहां। अमावास्यां सुभगां सुशेवां। धेनुरिव भूयं आप्यायंमाना। सा नो दोहता सुवीर्यम्। रायस्पोष सहस्रिणम्। अपानायं सुराधंसे। अमावास्यांये स्वाहां। अभि स्तृंणीहि परि धेहि वेदिम्। जामिं मा हि सीरमुया शयांना। होतृषदंना हरिताः सुवर्णाः। निष्का इमे यर्जमानस्य ब्रिश्ने॥ ५४॥

परिस्तृणीत् परिधत्ताग्निम्। परिहितोऽग्निर्यजंमानं भुनक्तु। अपा॰ रस् ओषंधीना॰ सुवर्णः। निष्का इमे यजंमानस्य सन्तु कामदुर्घाः। अमुत्रामुष्मिं श्लोके। भूपंते भुवंनपते। महतो भूतस्यं पते। ब्रह्माणं त्वा वृणीमहे। अहं भूपंतिरहं भुवंनपतिः। अहं महतो भूतस्य पतिः॥५५॥

देवेनं सिवता प्रसूत् आर्त्विज्यं करिष्यामि। देवं सिवतरेतं

त्वां वृणते। बृह्स्पतिं दैव्यं ब्रह्माणम्। तद्हं मनंसे प्र ब्रंवीमि। मनो गायत्रिये। गायत्री त्रिष्टुभें। त्रिष्टुज्जगंत्ये। जगंत्यनुष्टुभें। अनुष्टुक्पङ्की। पुङ्किः प्रजापंतये॥५६॥

प्रजापंतिर्विश्वेंभ्यो देवभ्यः। विश्वे देवा बृह्स्पतंये। बृह्स्पतिर्ब्रह्मणे। ब्रह्म भूर्भुवः सुवंः। बृह्स्पतिर्देवानां ब्रह्मा। अहं मनुष्याणाम्। बृहंस्पते युज्ञं गोपाय। इदं तस्मै हुम्यं करोमि। यो वो देवाश्चरंति ब्रह्मचर्यम्। मेधावी दिक्षु मनसा तप्स्वी॥५७॥

अन्तर्दूतश्चरित मानुंषीषु। चतुंः शिखण्डा युवृतिः सुपेशाँः। घृतप्रंतीका भुवंनस्य मध्यैं। मुर्मृज्यमांना महृते सौभंगाय। मह्यं धुक्ष्व यजंमानाय कामान्। भूमिंभूत्वा मंहिमानं पुपोष। ततो देवी वंध्यते पया सि। यज्ञियां यज्ञं वि च यन्ति शं चं। ओषंधीरापं इह शक्वरिश्च। यो मां हृदा मनंसा यश्चं वाचा॥५८॥

यो ब्रह्मणा कर्मणा द्वेष्टिं देवाः। यः श्रुतेन् हृदंयेनेष्णृता चं। तस्यैन्द्र वज्रेण शिरंश्छिनद्मि। ऊर्णामृदु प्रथमानः स्योनम्। देवेभ्यो जुष्ट्र सदंनाय ब्रुहिः। सुवर्गे लोके यर्जमान्र हि धेहि। मां नाकस्य पृष्ठे पंरमे व्योमन्। चर्तुः शिखण्डा युवृतिः सुपेशाः। घृतप्रतीका व्युनानि वस्ते। साऽऽस्तीर्यमाणा मह्ते सौभंगाय॥५९॥ सा में धुक्ष्व यर्जमानाय कामान्। शिवा चं मे श्ग्मा चैधि। स्योना चं मे सुषदां चैधि। ऊर्जस्वती च मे पर्यस्वती चैधि। इष्मूर्जं मे पिन्वस्व। ब्रह्म तेजों मे पिन्वस्व। क्ष्त्रमोजों मे पिन्वस्व। विश्ं पुष्टिं मे पिन्वस्व। आयुंर्न्नाद्यं मे पिन्वस्व। प्रजां पश्नमें पिन्वस्व॥६०॥

अस्मिन् यज्ञ उप भूय इन्नु में। अविक्षोभाय परिधीं देधामि। धर्ता धरुणो धरीयान्। अग्निर्देषा देसे निरितो नुंदाते। विच्छिनिद्यो विधृतीभ्या स्पलान्। जातान्त्रातृंच्यान् ये चं जिन्छ्यमाणाः। विशो यन्नाभ्यां विध्माम्येनान्। अह स्वानां मृत्तमो उसानि देवाः। विशो यन्ने नुदमाने अरांतिम्। विश्वं पाप्मान् ममंतिं दुर्मरायुम्॥ ६१॥

सीर्दन्ती देवी सुंकृतस्यं लोके। धृतीं स्थो विधृती स्वधृती। प्राणान्मयि धारयतम्। प्रजां मियं धारयतम्। पश्नमियं धारयतम्। अयं प्रस्तुर उभयंस्य धृती। धृती प्रयाजानांमुतानूंयाजानांम्। स दाधार समिधो विश्वरूपाः। तस्मिन्थ्स्रचो अध्या सांदयामि। आ रोह पृथो जुंहु देवयानान्॥६२॥

यत्रर्षयः प्रथम्जा ये पुराणाः। हिरंण्यपक्षाऽजिरा सम्भृताङ्गा। वहांसि मा सुकृतां यत्रं लोकाः। अवाहं बांध उपभृतां सपत्नान्। जातान्त्रातृंव्यान् ये चं जिन्ष्यमाणाः। दोहैं युज्ञ स् सुदुर्घामिव धेनुम्। अहमुत्तंरो भूयासम्। अधेरे मथ्सपत्नाः। यो मां वाचा मनसा दुर्मरायः। हृदाऽरांतीयादंभिदासंदग्ने॥६३॥

इदमंस्य चित्तमधंरं ध्रुवायाः। अहमृत्तंरो भूयासम्। अधंरे मथ्सपत्नाः। ऋषभोऽसि शाक्तरः। घृताचीना स्रूनुः। प्रियेण नाम्नां प्रिये सदंसि सीद। स्योनो में सीद सुषदः पृथिव्याम्। प्रथंिय प्रजयां पृशुभिः सुवर्गे लोके। दिवि सीद पृथिव्याम्नतिरक्षे। अहमृत्तंरो भूयासम्॥६४॥

अधेरे मथ्सपत्नाः। इयः स्थाली घृतस्यं पूर्णा। अच्छिन्नपयाः शतधार उथ्सः। मारुतेन शर्मणा दैव्येन। यज्ञोऽसि सर्वतः श्रितः। सर्वतो मां भूतं भविष्यच्छ्रंयताम्। शतं में सन्त्वाशिषः। सहस्रं मे सन्तु सूनृताः। इरावतीः पशुमतीः। प्रजापंतिरसि सर्वतः श्रितः॥६५॥

स्वतो मां भूतं भविष्यच्छ्रंयताम्। शृतं में सन्त्वाशिषंः।
सहस्रं मे सन्तु सूनृताः। इरावतीः पशुमतीः।
इदिमेन्द्रियम्मृतं वीर्यम्। अनेनेन्द्रांय पृशवोऽचिकिथ्सन्।
तेनं देवा अवतोप माम्। इहेष्मूर्जं यशः सह ओर्जः सनेयम्।
शृतं मियं श्रयताम्। यत्पृंथिवीमचंरत्तत्प्रविष्टम्॥६६॥

येनासिश्चद्वलुमिन्द्रैं प्रजापितिः। इदं तच्छुकं मधुं वाजिनीवत्। येनोपरिष्टादिधेनोन्महेन्द्रम्। दिध मां धिनोतु। अयं वेदः पृथिवीमन्वंविन्दत्। गुहां स्तीं गहंने गह्वंरेषु। स विन्दतु यर्जमानाय लोकम्। अच्छिद्रं यृज्ञं भूरिकर्मा करोतु। अयं यृज्ञः समसदद्धविष्मान्। ऋचा साम्ना यर्जुषा देवतांभिः॥६७॥

तेनं लोकान्थ्सूर्यंवतो जयेम। इन्द्रंस्य सुख्यमंमृत्त्वमंश्याम्। यो नुः कनीय इह कामयाते। अस्मिन् युज्ञे यर्जमानाय् मह्मम्। अपु तिमेन्द्राग्नी भुवंनान्नुदेताम्। अहं प्रजां वीरवंतीं विदेय। अग्ने वाजजित्। वाजं त्वा सिर्ष्यन्तम्। वाजं जेष्यन्तम्। वाजिनं वाजजितम्॥६८॥

वाज्जित्यायै सं माँजिम। अग्निमंत्रादम्त्राद्यांय। उपंहूतो द्यौः पिता। उप मां द्यौः पिता ह्वंयताम्। अग्निराग्नींप्रात्। आयुंषे वर्चसे। जीवात्वै पुण्यांय। उपंहूता पृथिवी माता। उप मां माता पृंथिवी ह्वंयताम्। अग्निराग्नींप्रात्॥६९॥

आयुंषे वर्चसे। जीवात्वै पुण्यांय। मनो ज्योतिंर्जुषतामा-ज्यम्। विच्छिन्नं युज्ञ र सिम्मं दंधातु। बृह्स्पतिंस्तनुतािम्मं नंः। विश्वे देवा इह मांदयन्ताम्। यन्ते अग्न आवृश्वािमं। अहं वा क्षिपितश्चरन्। प्रजां च तस्य मूलं च। नीवैर्देवा नि वृश्वत॥७०॥

अग्ने यो नोंऽभिदासंति। सुमानो यश्च निष्ठ्यः। इध्मस्येव प्रक्षायंतः। मा तस्योच्छेषि किश्चन। यो मां द्वेष्टिं जातवेदः। यं चाऽऽहं द्वेष्मि यश्च माम्। सर्वाङ्स्तानंश्चे सन्देह। याङ्श्चाहं द्वेष्मि ये च माम्। अग्ने वाजजित्। वाजं त्वा ससृवारसम्॥७१॥

वाजं जिगिवा रसम्। वाजिनं वाजितम्। वाजितित्यायै सम्माजिमं। अग्निमंत्रादम्त्राद्याय। वेदिर्व्रहः शृत र ह्विः। इध्मः परिधयः सुर्चः। आज्यं यज्ञ ऋचो यजुः। याज्याश्च वषद्वाराः। सं मे सन्नंतयो नमन्ताम्। इध्मस्त्रहंने हुते॥७२॥

दिवः खीलोऽवंततः। पृथिव्या अध्युत्थितः। तेनां सहस्रकाण्डेन। द्विषन्तर्श्र शोचयामसि। द्विषन्मं बहु शोंचतु। ओषंधे मो अहर्श्यंचम्। यज्ञ नमंस्ते यज्ञ। नमो नमंश्च ते यज्ञ। शिवेनं मे सन्तिष्ठस्व। स्योनेनं मे सन्तिष्ठस्व॥७३॥

सुभूतेनं मे सन्तिष्ठस्व। ब्रह्मवर्चसेनं मे सन्तिष्ठस्व। यज्ञस्यर्ष्ट्रिमनु सन्तिष्ठस्व। उपं ते यज्ञ नमः। उपं ते नमः। उपं ते नमः। त्रिष्फुलीक्रियमाणानाम्। यो न्युङ्गो अवशिष्यंते। रक्षंसां भाग्धेयम्। आपुस्तत्प्र वहतादितः॥७४॥

उलूखंले मुसंले यच्च शूर्पं। आशिश्लेषं दृषि यत्कपालैं। अवप्रुषों विप्रुषः संयंजािम। विश्वे देवा ह्विरिदं जुंषन्ताम्। यज्ञे या विप्रुषः सन्तिं बह्बीः। अग्नौ ताः सर्वाः स्विष्टाः सुहुंता जुहोिम। उद्यन्नद्यमित्र महः। सपत्नौन्मे अनीनशः। दिवैनान् विद्युतां जिहि। निम्नोचन्नधंरान्कृिध॥७५॥ उद्यन्नद्य वि नों भज। पिता पुत्रेभ्यो यथाँ। दीर्घायुत्वस्यं हेशिषे। तस्यं नो देहि सूर्य। उद्यन्नद्य मित्रमहः। आरोहृन्नुत्तंरां दिवम्ं। हृद्रोगं ममं सूर्य। हृरिमाणं च नाशय। शुकेषु मे हरिमाणम्। रोपणाकांसु दध्मसि॥७६॥

अथों हारिद्रवेषुं मे। हृरिमाणं नि देध्मसि। उदंगाद्यमादित्यः। विश्वेन सहसा सह। द्विषन्तं ममं रन्थयन्। मो अहं द्विष्तो रेधम्। यो नः शपादशंपतः। यश्चे नः शपंतः शपात्। उषाश्च तस्मै निम्नुक्रं। सर्वं पापः समूहताम्॥७७॥

यो नंः सपत्नो यो रणंः। मर्तोऽभिदासंति देवाः। इध्मस्येव प्रक्षायंतः। मा तस्योच्छेषि किश्चन। अवसृष्टः परापत। शरो ब्रह्मंस॰शितः। गच्छाऽमित्रान्प्र विंश। मैषां कश्चनोच्छिषः॥७८॥

पतिः प्रजापंतये तप्स्वी वाचा सौभंगाय पृशून्में पिन्वस्व दुर्मरायुं देवयानांनग्रेऽन्तरिक्षेऽहमुत्तरो
भूयासं प्रजापंतिरसि सुर्वतः श्रितः प्रविष्टं देवतांभिर्वाजुजितं पृथिवी ह्वंयतामृग्निराग्नींधाद्वश्चत
ससृवारसर् हुते स्योनेनं मे सन्तिष्ठस्वेतः कृषि दथ्मस्यूहतामृष्टौ चं॥————[६]

सक्षेदं पंश्य। विधंतिरिदं पंश्य। नाकेदं पंश्य। रमितः पिनेष्ठा। ऋतं वर्षिष्ठम्। अमृतायान्याहुः। सूर्यो विरेष्ठो अक्षिभिविभाति। अनु द्यावापृथिवी देवपुत्रे। दीक्षाऽसि तपंसो योनिः। तपोऽसि ब्रह्मणो योनिः॥७९॥ ब्रह्मांसि क्ष्रतस्य योनिः। क्ष्रत्रमंस्यृतस्य योनिः। क्ष्रतमंसि भूरा रेभे। श्रद्धां मनंसा। दीक्षां तपंसा। विश्वंस्य भ्वंनस्याधिपत्नीम्। सर्वे कामा यजमानस्य सन्तु। वातं प्राणं मनंसाऽन्वा रेभामहे। प्रजापंतिं यो भुवंनस्य गोपाः। स नो मृत्योस्रायतां पात्वश्हंसः॥८०॥

ज्योग्जीवा ज्रामंशीमिह। इन्द्रं शाक्कर गायतीं प्र पंद्ये। तान्ते युनज्मि। इन्द्रं शाकर त्रिष्टुभं प्र पंद्ये। तान्ते युनज्मि। इन्द्रं शाकर् जगंतीं प्र पंद्ये। तान्ते युनज्मि। इन्द्रं शाकरानुष्टुभं प्र पंद्ये। तान्ते युनज्मि। इन्द्रं शाकर पृङ्किः प्रपंद्ये॥८१॥

तान्ते युनज्मि। आऽहं दीक्षामंरुहमृतस्य पर्नीम्। गायत्रेण् छन्दंसा ब्रह्मणा च। ऋतः सत्येऽधायि। सत्यमृतेऽधायि। ऋतं चे मे सत्यं चांभूताम्। ज्योतिरभूवः सुवंरगमम्। सुवर्गं लोकं नाकंस्य पृष्ठम्। ब्र्ध्नस्यं विष्टपंमगमम्। पृथिवी दीक्षा॥८२॥

तयाऽग्निर्दीक्षयां दीक्षितः। ययाऽग्निर्दीक्षयां दीक्षितः। तयां त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। अन्तिरिक्षं दीक्षा। तयां वायुर्दीक्षयां दीक्षितः। ययां वायुर्दीक्षयां दीक्षितः। तयां त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। द्यौर्दीक्षा। तयांऽऽदित्यो दीक्षयां दीक्षितः। ययांऽऽदित्यो दीक्षयां दीक्षितः॥८३॥

तयाँ त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। दिशों दीक्षा। तयां चुन्द्रमां

दीक्षयां दीक्षितः। ययां चन्द्रमां दीक्षयां दीक्षितः। तयां त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। आपों दीक्षा। तया वरुणो राजां दीक्षयां दीक्षितः। यया वरुणो राजां दीक्षयां दीक्षितः। तयां त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। ओषंधयो दीक्षा॥८४॥

तया सोमो राजां दीक्षयां दीक्षितः। यया सोमो राजां दीक्षयां दीक्ष्यां दीक्ष्यां दीक्षयां दीक्षयां वार्दीक्षा। तयां प्राणो दीक्षयां दीक्ष्यां दीक्ष्यां दीक्ष्यां दीक्ष्यां दीक्ष्यां दीक्ष्यां दीक्ष्यां प्राणो दीक्षयां दीक्ष्यां तयां त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। पृथिवी त्वा दीक्षंमाणमनुं दीक्षताम्। अन्तरिक्षं त्वा दीक्षंमाणमनुं दीक्षताम्। दोक्षताम्॥८५॥

दिशंस्त्वा दीक्षंमाण्मनुं दीक्षन्ताम्। आपंस्त्वा दीक्षंमाण्मनुं दीक्षन्ताम्। ओषंधयस्त्वा दीक्षंमाण्मनुं दीक्षन्ताम्। वाक्का दीक्षंमाण्मनुं दीक्षताम्। ऋचंस्त्वा दीक्षंमाण्मनुं दीक्षताम्। ऋचंस्त्वा दीक्षंमाण्मनुं दीक्षन्ताम्। सामानि त्वा दीक्षंमाण्मनुं दीक्षन्ताम्। यजूर्षेषि त्वा दीक्षंमाण्मनुं दीक्षन्ताम्। अहंश्च रात्रिंश्च। कृषिश्च वृष्टिंश्च। त्विषिश्चापंचितिश्च॥८६॥

आपृश्चौषंधयश्च। ऊर्क्च सूनृतां च। तास्त्वा दीक्षंमाणमनुं दीक्षन्ताम्। स्वे दक्षे दक्षंपितृह सींद। देवाना र सुम्नो महृते रणांय। स्वास्थ्यस्तनुवा संविंशस्व। पितेवैंधि सूनव आ सुशेवंः। शिवो मां शिवमा विंश। सृत्यं मं आत्मा। श्रृद्धा मेऽक्षिंतिः॥८७॥ तपों मे प्रतिष्ठा। स्वितृप्रंसूता मा दिशों दीक्षयन्तु। सत्यमंस्मि। अहं त्वदंस्मि मदंसि त्वमेतत्। ममांसि योनिस्तव योनिरस्मि। ममैव सन्वहं ह्व्यान्यंग्ने। पुत्रः पित्रे लोंककृञ्जांतवेदः। आजुह्वांनः सुप्रतींकः पुरस्तांत्। अग्ने स्वां योनिमा सींद साध्या। अस्मिन्थ्स्थस्थे अध्युत्तंरस्मिन्॥८८॥

विश्वं देवा यजंमानश्च सीदत। एकंमिषे विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। द्वे ऊर्जे विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। त्रीणि व्रताय विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। चत्वारि मायोभवाय विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। पश्चं पृशुभ्यो विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। षड्रायस्पोषांय विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। सप्त स्प्तभ्यो होत्राभ्यो विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। स्प्त स्प्तभ्यो होत्राभ्यो विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। सखांयः स्प्तपंदा अभूम। सख्यं ते गमेयम्॥८९॥

स्ख्याते मा योषम्। स्ख्यान्मे मा योष्ठाः। साऽसिं सुब्रह्मण्ये। तस्यास्ते पृथिवी पादः। साऽसिं सुब्रह्मण्ये। तस्यास्तेऽन्तिरेक्षं पादः। साऽसिं सुब्रह्मण्ये। तस्यास्तेऽन्तिरेक्षं पादः। साऽसिं सुब्रह्मण्ये। तस्यास्ते दिशः पादः॥९०॥

प्रोरंजास्ते पश्चमः पादंः। सा न इष्मूर्जं धुक्ष्व। तेजं इन्द्रियम्। ब्रह्मवर्चसम्न्नाद्यम्। वि मिमे त्वा पर्यस्वतीम्। देवानां धेनु सुद्धामनंपस्फुरन्तीम्। इन्द्रः सोमं पिबत्। क्षेमो अस्तु नः। इमान्नंराः कृणुत् वेदिमेत्यं। वसुंमती रुद्रवंतीमादित्यवंतीम्॥९१॥

वर्ष्मन्दिवः। नामां पृथिव्याः। यथाऽयं यजमानो न रिष्येत्। देवस्यं सिवतुः स्वे। चतुः शिखण्डा युवतिः सुपेशाः। घृतप्रंतीका भुवंनस्य मध्ये। तस्यारं सुपूर्णाविध् यो निविष्टो। तयोदिवानामिधं भागधेयम्। अप जन्यं भ्यं नुद। अपं च्काणि वर्तय। गृहर सोमस्य गच्छतम्। न वा उं वेतन्प्रियसे न रिष्यसि। देवार इदेषि पृथिभिः सुगेभिः। यत्र यन्तिं सुकृतो नापिं दुष्कृतः। तत्रं त्वा देवः संविता देधातु॥९२॥

ब्रह्मणो योनिर १ हंसः पृङ्किः प्रपंद्ये दीक्षा ययांऽऽदित्यो दीक्षयां दीक्षितस्तयां त्वा दीक्षयां दीक्षयां दीक्षयां दीक्षा द्यौस्त्वा दीक्षंमाणमन् दीक्षतामपंचितिश्चाक्षिंतिरुत्तंरस्मिन्गमेयं दिशः पादं आदित्यवंतीं वर्तय पश्चं च॥———[७]

यदस्य पारे रर्जसः। शुक्रं ज्योतिरजायत। तन्नः पर्षदित द्विषः। अग्ने वैश्वानर् स्वाहाँ। यस्माँद्भीषाऽवांशिष्ठाः। ततो नो अभयं कृधि। प्रजाभ्यः सर्वांभ्यो मृड। नमो रुद्रायं मी्दुषें। यस्माँद्भीषा न्यषंदः। ततो नो अभयं कृधि॥९३॥

प्रजाभ्यः सर्वांभ्यो मृड। नमों रुद्रायं मीढुषें। उद्दंस्र तिष्ठ प्रति तिष्ठ मारिषः। मेमं यज्ञं यजमानं च रीरिषः। सुव्गें लोके यजमान् हि धेहि। शन्नं एधि द्विपदे शं चतुंष्पदे। यस्माद्भीषाऽवेपिष्ठाः पुलायिष्ठाः समज्ञांस्थाः। ततों नो अभयं कृधि। प्रजाभ्यः सर्वांभ्यो मृड। नमों रुद्रायं मीढुषें॥९४॥ य इदमकंः। तस्मै नमंः। तस्मै स्वाहाँ। न वा उंवेतिन्त्रियसे। आशांनां त्वा विश्वा आशाः। यज्ञस्य हि स्थ ऋत्वियौं। इन्द्रांग्री चेतंनस्य च। हुताहुतस्यं तृप्यतम्। अहंतस्य हुतस्यं च। हुतस्य चाहंतस्य च। अहंतस्य हुतस्यं च। इन्द्रांग्री अस्य सोमंस्य। वीतं पिंबतं जुषेथांम्। मा यजंमानं तमो विदत्। मर्त्विजो मो इमाः प्रजाः। मा यः सोमंमिमं पिबात्। स॰सृष्टमुभयं कृतम्॥९५॥

कृधि मीढुषेऽह्रंतस्य च सप्त चं॥-

[2]

अनागसंस्त्वा वयम्। इन्द्रंण प्रेषिता उपं। वायुष्टं अस्त्व १ शुभूः। मित्रस्ते अस्त्व १ शुभूः। वर्रणस्ते अस्त्व १ शुभूः। अपाङ्क्षया ऋतंस्य गर्भाः। भुवंनस्य गोपाः १ येनां अतिथयः। पर्वतानां ककुभः प्रयुतों नपातारः। वृशुनेन्द्र १ ह्वयत। घोषेणामीं वा १ श्वातयत॥ ९ ६॥

युक्ताः स्थ् वहंत। देवा ग्रावांण् इन्दुरिन्द्र इत्यंवादिषुः। एन्द्रंमचुच्यवुः पर्मस्याः परावतः। आऽस्माथ्स्थस्यात्। ओरोर्न्तरिक्षात्। आ स्ंभूतमंसुषवुः। ब्रह्मवर्चसं म् आस्ंषवुः। समरे रक्षाः स्यविषयुः। अपंहतं ब्रह्मज्यस्यं। वाक्रं त्वा मनेश्च श्रीणीताम्॥९७॥

प्राणर्श्वं त्वाऽपानश्चं श्रीणीताम्। चक्षुंश्च त्वा श्रोत्रं च श्रीणीताम्। दक्षंश्चत्वा बलं च श्रीणीताम्। ओजंश्च त्वा सहंश्च श्रीणीताम्। आयुंश्च त्वाऽज्ज्रा चं श्रीणीताम्। आत्मा चं त्वा तुनूश्चं श्रीणीताम्। शृतोऽिस शृतं कृतः। शृतायं त्वा शृतेभ्यंस्त्वा। यमिन्द्रंमाहुर्वरुणं यमाहुः। यं मित्रमाहुर्यमुं स्त्यमाहुः॥९८॥

यो देवानां देवतंमस्तपोजाः। तस्मैं त्वा तेभ्यंस्त्वा। मिय त्यदिन्द्रियं महत्। मिय दक्षो मिय ऋतुंः। मियं धायि सुवीर्यम्। त्रिशुंग्धर्मो वि भातु मे। आकृत्या मनंसा सह। विराजा ज्योतिषा सह। यज्ञेन पर्यसा सह। तस्य दोहंमशीमहि॥९९॥

तस्यं सुम्नमंशीमिह। तस्यं भृक्षमंशीमिह। वाग्जुंषाणा सोमंस्य तृप्यतु। मित्रो जनान्त्र स मित्र। यस्मान्न जातः परो अन्यो अस्ति। य आविवेश भृवंनािन विश्वां। प्रजापंतिः प्रजयां संविदानः। त्रीणि ज्योती १षि सचते स षोंडशी। एष ब्रह्मा य ऋत्वियः। इन्द्रो नामं श्रुतो गुणे॥१००॥

प्रते महे विदथे शश्सिष्ट्र हरीं। य ऋत्वियः प्रते वन्वे। वनुषो हर्यतं मदम्। इन्द्रो नामं घृतं नयः। हरिभिश्चारु सेचेते। श्रुतो गण आ त्वां विशन्तु। हरिवर्पसङ्गिरेः। इन्द्राधिपतेऽधिपतिस्त्वं देवानांमिस। अधिपतिं माम्। आयुंष्मन्तं वर्चस्वन्तं मनुष्येषु कुरु॥१०१॥

इन्द्रेश्च समाङ्गरुणश्च राजां। तौ ते भृक्षं चंक्रतुरग्नं एतम्। तयोरन्ं भृक्षं भंक्षयामि। वाग्जुंषाणा सोमंस्य तृप्यतु। प्रजापितिर्विश्वकंमी। तस्य मनों देवं युज्ञेनं राध्यासम्। अर्थेगा अस्य जंहितः। अवसानंपतेऽवसानं मे विन्द। नमों रुद्रायं वास्तोष्पतंये। आयने विद्रवंणे॥१०२॥

उद्याने यत्परायंणे। आवर्तने विवर्तने। यो गोंपायित् त॰ हुंवे। यान्यंपामित्यान्यप्रंतीत्तान्यस्मिं। यमस्यं बिलिना चर्रामि। इहैव सन्तः प्रति तद्यांतयामः। जीवा जीवेभ्यो नि हंराम एनत्। अनृणा अस्मिन्नंनृणाः परंस्मिन्। तृतीये लोके अनृणाः स्यांम। ये देवयानां उत पितृयाणाः॥१०३॥

सर्वांन्पथो अंनृणा आक्षीयेम। इदमून श्रेयों-ऽवसानमा गंन्म। शिवे नो द्यावांपृथिवी उभे इमे। गोम् द्धनंवदर्श्वंवदूर्जंस्वत्। सुवीरां वीरैरन् सश्चरेम। अर्कः प्वित्र रं रंजसो विमानः। पुनातिं देवानां भुवंनानि विश्वां। द्यावांपृथिवी पर्यसा संविदाने। घृतं दुंहाते अमृतं प्रपींने। प्वित्रम्कों रंजसो विमानः। पुनातिं देवानां भुवंनानि विश्वां। स्वज्योतिर्यशों महत्। अशीमिहं गाधमुत प्रतिष्ठाम्॥१०४॥ चात्यत् श्रीणीतार सत्यमाहुरंशीमिह गणे कुंक विद्रवंणे पितृयाणां अर्को रंजसो विमानसीणि

उदंस्ताम्फ्सीथ्सिवता मित्रो अंर्यमा। सर्वानिमित्रांन-वधीद्युगेने। बृहन्तं मामंकरद्वीरवन्तम्। रथन्त्रे श्रंयस्व स्वाहां पृथिव्याम्। वामदेव्ये श्रंयस्व स्वाहाऽन्तरिक्षे। बृहति श्रंयस्व स्वाहां दिवि। बृह्ता त्वोपंस्तभ्रोमि। आ त्वां ददे यशंसे वीर्याय च। अस्मास्वंिष्ठया यूयं दंधाथेन्द्रियं पर्यः। यस्तै द्रफ्सो यस्तं उदर्षः॥१०५॥

दैव्यः केतुर्विश्वं भुवंनमाविवेशं। स नः पाह्यरिष्ट्रो स्वाहाँ। अनुं मा सर्वो यज्ञोऽयमेतु। विश्वं देवा मुरुतः सामार्कः। आप्रियुश्छन्दार्श्स निविदो यजूर्श्ष। अस्यै पृथिव्ये यद्यज्ञियम्। प्रजापंतेर्वर्तनिमनुं वर्तस्व। अनुंवीरैरनुं राध्याम् गोभिः। अन्वश्वेरनु सर्वेरु पुष्टेः। अनुं प्रजया-ऽन्विन्द्रियेणं॥१०६॥

देवा नों यज्ञमृंजुधा नंयन्तु। प्रतिक्षत्रे प्रतिं तिष्ठामि राष्ट्रे। प्रत्यश्वेषु प्रतिं तिष्ठामि गोषुं। प्रतिं प्रजायां प्रतिं तिष्ठामि भव्यें। विश्वंमन्याऽभिं वावृधे। तद्न्यस्यामधिंश्रितम्। दिवे चं विश्वकर्मणे। पृथिव्ये चांकरं नमः। अस्कान्द्योः पृथिवीम्। अस्कांनृष्भो युवागाः॥१०७॥

स्कन्नेमा विश्वा भुवंना। स्कन्नो यज्ञः प्र जंनयतु। अस्कानजंनि प्राजंनि। आ स्कन्नाज्ञांयते वृषां। स्कन्नात्प्र जंनिषीमिह। ये देवा येषांमिदं भागधेयं बभूवं। येषां प्रयाजा उतानूंयाजाः। इन्द्रंज्येष्ठेभ्यो वरुणराजभ्यः। अग्निहोतृभ्यो देवेभ्यः स्वाहां। उत त्या नो दिवां मृतिः॥१०८॥

अदितिरूत्या गंमत्। सा शन्तांची मयंस्करत्। अप

स्निधंः। उत त्या दैव्यां भिषजां। शन्नंस्करतो अश्विनां। यूयातांम्स्मद्रपंः। अप स्निधंः। शम्भिर्म्निर्मस्करत्। शन्नंस्तपतु सूर्यः। शं वातों वात्वरुपाः॥१०९॥

अप स्निधंः। तदित्पदं न विचिकेत विद्वान्। यन्मृतः पुनंरुप्येतिं जीवान्। त्रिवृद्यद्भवंनस्य रथवृत्। जीवो गर्भो न मृतः स जीवात्। प्रत्यंस्मै पिपींषते। विश्वांनि विदुषे भर। अरङ्गमाय जग्मेवे। अपश्चाद्द्यवने नरें। इन्दुरिन्दुमवांगात्। इन्दोरिन्द्रोऽपात्। तस्यं त इन्द्विन्द्रंपीतस्य मधुंमतः। उपहृतस्योपंहृतो भक्षयामि॥११०॥

उद्र्ष इंन्द्रियेण गा मृतिरंरूपा अंगात्रीणिं च॥————[१०]

ब्रह्मं प्रतिष्ठा मनंसो ब्रह्मं वाचः। ब्रह्मं युज्ञानार् हिवषामाज्यंस्य। अतिरिक्तं कर्मणो यचं हीनम्। युज्ञः पर्वाणि प्रतिरन्नेति कुल्पयन्। स्वाहांकृताऽऽहुंतिरेतु देवान्। आश्रांवितम्त्याश्रांवितम्। वर्षद्वृतमृत्यनूँक्तं च युज्ञे। अतिरिक्तं कर्मणो यचं हीनम्। युज्ञः पर्वाणि प्रतिरन्नेति कुल्पयन्। स्वाहांकृताऽऽहुंतिरेतु देवान्॥१११॥

यद्वो देवा अतिपादयांनि। वाचा चित्प्रयंतं देवहेर्डनम्। अरायो अस्माः अभिदुंच्छुनायतें। अन्यत्रास्मन्मंरुतस्तन्निधे-तन। ततं म् आपस्तदुं तायते पुनः। स्वादिष्ठा धीतिरुचथाय शस्यते। अयः संमुद्र उत विश्वभेषजः। स्वाहांकृतस्य सम्तृण्णुतर्भुवः। उद्वयं तमंस्स्परिं। उदुत्यं चित्रम्॥११२॥

ड्मं में वरुण तत्त्वां यामि। त्वन्नां अग्ने स त्वन्नां अग्ने। त्वमंग्ने अयासि प्रजापते। इमं जीवेभ्यः पिरिधिं दंधामि। मैषान्नुगादपरो अर्धमेतम्। शतं जीवन्तु शरदः पुरूचीः। तिरो मृत्युं दंधतां पर्वतेन। इष्टेभ्यः स्वाहा वष्डिनिष्टेभ्यः स्वाहां। भेषजं दुरिष्ट्रो स्वाहा निष्कृत्ये स्वाहां। दोरांध्ये स्वाहा देवींभ्यस्तुनूभ्यः स्वाहां॥११३॥

ऋद्धै स्वाह्य समृद्धै स्वाहाँ। यतं इन्द्र भयांमहे। ततों नो अभयं कृषि। मघंवञ्छ्गि तव तन्नं ऊतयें। वि द्विषो वि मृधो जिहा स्वस्तिदा विशस्पतिः। वृत्रहा वि मृधो वृशी। वृषेन्द्रः पुर एतु नः। स्वस्तिदा अभयङ्करः। आभिर्गीर्भियंदतों न ऊनम्॥११४॥

आप्यांयय हरिवो वर्धमानः। यदा स्तोतृभ्यो महिं गोत्रा रुजासिं। भूयिष्ठभाजो अधं ते स्याम। अनांज्ञातं यदाज्ञांतम्। यज्ञस्यं क्रियते मिथुं। अग्रे तदंस्य कल्पय। त्व॰ हि वेत्थं यथात्थम्। पुरुषसम्मितो युज्ञः। युज्ञः पुरुषसम्मितः। अग्रे तदंस्य कल्पय। त्व॰ हि वेत्थं यथात्थम्। यत्पांकत्रा मनसा दीनदंक्षा न। यज्ञस्यं मन्वते मर्तांसः। अग्निष्टद्धोतां कर्तुविद्विजानन्। यजिष्ठो देवा॰ ऋतुशो यंजाति॥११५॥

देवाङ्श्चित्रं तुनूभ्यः स्वाहोनं पुर्रुषसम्मितोऽग्ने तदंस्य कल्पय पश्चं च॥————[११]

यद्देवा देव्हेडंनम्। देवांसश्चकृमा वयम्। आदित्या-स्तस्मांन्मा मुश्चत। ऋतस्यर्तेन् मामुत। देवां जीवनकाम्या यत्। वाचाऽनृंतमूदिम। अग्निर्मा तस्मादेनंसः। गार्हंपत्यः प्रमुश्चतु। दुरिता यानिं चकृम। करोतु मामनेनसम्॥११६॥

ऋतेनं द्यावापृथिवी। ऋतेन् त्वः संरस्वति। ऋतान्मां मुञ्चताः हंसः। यद्न्यकृतमारिम। सृजात्शः सादुत वां जामिशः स्सात्। ज्यायंसः शः सादुत वा कनीयसः। अनौज्ञातं देवकृतं यदेनंः। तस्मात्त्वम्स्माञ्जातवेदो मुमुन्धि। यद्वाचा यन्मनंसा। बाहुभ्यांमूरुभ्यांमष्ठीवद्धांम्॥११७॥

शिश्जैर्यदर्नृतं चकुमा वयम्। अग्निर्मा तस्मादेनंसः। यद्धस्ताभ्यां चकर् किल्बिषाणि। अक्षाणां वृग्नुम्पुजिन्नंमानः। दूरेप्श्या चं राष्ट्रभृचं। तान्यंपस्रसावनुंदत्तामृणानि। अदींव्यन्नृणं यद्हं चकारं। यद्वादांस्यन्थ्सञ्जगरा जनेभ्यः। अग्निर्मा तस्मादेनंसः। यन्मयिं माता गर्भे स्ति॥११८॥

एनंश्चकार् यत्पता। अग्निर्मा तस्मादेनंसः। यदां पिपेषं मातरं पितरम्। पुत्रः प्रमुंदितो धयन्। अहि स्सितौ पितरौ मया तत्। तदंग्ने अनुणो भंवामि। यदन्तरिक्षं पृथिवीमुत द्याम्। यन्मातरं पितरं वा जिहि स्मिम। अग्निर्मा तस्मादेनंसः। यदाशसां निशसा यत्पंराशसां॥११९॥

यदेनश्चकृमा नूतेनं यत्पुराणम्। अग्निर्मा तस्मादेनसः।

अतिं क्रामामि दुर्तिं यदेनेः। जहांमि रिप्रं पर्मे स्थस्थैं। यत्र यन्तिं सुकृतो नापिं दुष्कृतिः। तमा रोहामि सुकृतां नु लोकम्। त्रिते देवा अंमृजतैतदेनेः। त्रित एतन्मंनुष्येषु मामृजे। ततों मा यदि किश्चिदानुशे। अग्निर्मा तस्मादेनसः॥१२०॥

गार्हंपत्यः प्रमुंश्चतु। दुरिता यानि चकुम। क्रोतु मामनेनसम्। दिवि जाता अपसु जाताः। या जाता ओषंधीभ्यः। अथो या अंग्रिजा आपंः। ता नेः शुन्धन्तु शुन्धंनीः। यदापो नक्तं दुरितं चर्राम। यद्वा दिवा नूतंनं यत्पुंराणम्। हिरंण्यवर्णास्तत् उत्पुंनीत नः। इमं में वरुण तत्त्वां यामि। त्वन्नों अग्रे स त्वन्नों अग्रे। त्वमंग्रे अयासिं॥१२१॥

अनेनसंमधीवद्धारं स्ति पंराशसांऽऽन्शेंऽग्निर्मा तस्मादेनंसः पुनीत नुस्नीणिं च (यहेवा देवां ऋतेनं सजातश्र्रसाद्यद्वाचा यद्धस्तांभ्यामदींव्यं यन्मियं माता यदां पिपेष यदन्तिरक्षं यदाशसाऽतिं कामामि त्रिते देवा दिवि जाता अपसु जाता यदापं इमं में वरुण तत्त्वां यामि त्वन्नों अग्रे स त्वन्नों अग्रे त्वमंग्ने अयासिं। )॥———[१२]

यत्ते ग्राव्णां चिच्छिद्ः सोम राजन्। प्रियाण्यङ्गांनि स्विधिता परूरंषि। तथ्मन्ध्रथ्याज्येनोत वर्धयस्व। अनागसो अधिमध्सङ्क्षयेम। यत्ते ग्रावां बाहुच्युंतो अचुंच्यवः। नरो यत्ते दुदुहुर्दक्षिणेन। तत्त् आप्यांयतां तत्ते। निष्ट्यांयतां देव सोम। यत्ते त्वचं बिभिदुर्यच् योनिम्। यदास्थानात्प्रच्युंतो वेनंसि त्मनां॥१२२॥

त्वया तथ्सोम गुप्तमंस्तु नः। सा नः सुन्धासंत्पर्मे व्योमन्। अहाच्छरीरं पर्यसा समेत्यं। अन्योन्यो भवति वर्णो अस्य। तस्मिन्वयमुपंहूतास्तवं स्मः। आ नो भज् सदंसि विश्वरूपे। नृचक्षाः सोमं उत शुश्रुगंस्तु। मा नो वि हांसीद्रिरं आवृणानः। अनांगास्तुनवो वावृधानः। आ नो रूपं वहतु जायंमानः॥१२३॥

उपं क्षरन्ति जुह्नों घृतेनं। प्रियाण्यङ्गांनि तवं वर्धयंन्तीः। तस्मैं ते सोम् नम् इद्वषंद्व। उपं मा राजन्थ्सुकृते ह्वंयस्व। सं प्राणापानाभ्या सम् चक्षुंषा त्वम्। सः श्रोत्रेण गच्छस्व सोम राजन्। यत्त् आस्थित शम् तत्ते अस्तु। जानीतान्नेः सङ्गमेने पथीनाम्। एतं जानीतात्पर्मे व्योमन्। वृकाः सधस्था विद रूपमंस्य॥१२४॥

यदागच्छांत्पथिभिर्देवयानैः। इष्टापूर्ते कृणुतादाविरंस्मै। अरिष्टो राजन्नगदः परेहि। नमस्ते अस्तु चक्षंसे रघूयते। नाकुमारोह सह यजंमानेन। सूर्यं गच्छतात्पर्मे व्योमन्। अभूद्देवः संविता वन्द्योनु नंः। इदानीमह्रं उपवाच्यो नृभिः। वि यो रत्ना भजंति मानविभ्यः। श्रेष्ठं नो अत्र द्रविणं यथा दर्धत्। उप नो मित्रावरुणाविहावंतम्। अन्वादीध्याथामिह नंः सखाया। आदित्यानां प्रसितिरहेतिः। उग्रा श्तापाष्टा घविषा परि णो वृणक्तु। आप्यांयस्व सन्ते॥१२५॥

त्मना जार्यमानोऽस्य दधत्पश्चं च॥------[१३]

यिद्दिशक्षे मनसा यर्च वाचा। यद्वाँ प्राणेश्वक्षंषा यच्च श्रोत्रेण। यद्रेतंसा मिथुनेनाप्यात्मनाँ। अद्भो लोका देधिरे तेजं इन्द्रियम्। शुक्रा दीक्षायै तपंसो विमोचंनीः। आपो विमोक्रीर्मिये तेजं इन्द्रियम्। यद्वा साम्रा यजुंषा। पृशूनां चर्मन् ह्विषां दिदीक्षे। यच्छन्दोंभिरोषंधीभिर्वनस्पतौँ। अद्भो लोका देधिरे तेजं इन्द्रियम्॥१२६॥

शुक्रा दीक्षायै तपंसो विमोर्चनीः। आपो विमोक्रीर्मिय तेर्ज इन्द्रियम्। येन् ब्रह्म येनं क्षुत्रम्। येनेंन्द्राग्नी प्रजापंतिः सोमो वर्रुणो येन राजां। विश्वे देवा ऋषयो येनं प्राणाः। अद्भो लोका दंधिरे तेर्ज इन्द्रियम्। शुक्रा दीक्षायै तपंसो विमोर्चनीः। आपो विमोक्रीर्मिये तेर्ज इन्द्रियम्। अपां पुष्पंमस्योषंधीना रूपंः। सोमंस्य प्रियं धामं॥१२७॥

अग्नेः प्रियतंम १ ह्विः स्वाहाँ। अपां पुष्पंमस्योषंधीना १ रसंः। सोमस्य प्रियं धामं। इन्द्रंस्य प्रियतंम १ ह्विः स्वाहाँ। अपां पुष्पंमस्योषंधीना १ रसंः। सोमस्य प्रियं धामं। विश्वेषां देवानां प्रियतंम १ ह्विः स्वाहां। वय १ सोम व्रते तवं। मनंस्तुनूषु पिप्रंतः। प्रजावंन्तो अशीमहि॥१२८॥

देवेभ्यः पितृभ्यः स्वाहाँ। सोम्येभ्यः पितृभ्यः स्वाहाँ। कृव्येभ्यः पितृभ्यः स्वाहाँ। देवांस इह मादयध्वम्। सोम्यांस इह मादयध्वम्। कव्यांस इह मादयध्वम्। अनन्तिरताः पितरंः सोम्याः सोमपीथात्। अपैतु मृत्युर्मृतं न आगन्। वैवस्वतो नो अभयं कृणोतु। पुर्णं वनस्पतेरिव॥१२९॥

अभि नंः शीयता १ र्यिः। सर्चतां नः शचीपितः। परं मृत्यो अनु परेहि पन्थांम्। यस्ते स्व इतरो देवयानांत्। चक्षुंष्मते शृण्वते ते ब्रवीमि। मा नंः प्रजा १ रीरिषो मोत वीरान्। इदमूनु श्रेयोवसानमार्गन्म। यद्गोजिद्धनिजिदंश्वजिद्यत्। पूर्णं वनस्पतेरिव। अभि नंः शीयता १ र्यिः। सर्चतां नः शचीपितिः॥१३०॥

वनस्पतांबुद्धो लोका दंधिरे तेजं इन्द्रियं धामांशीमहीबाभिनः शीयता र्यिरेकं चा [१४]

सर्वान् यद्विष्यंण्णेन् वि वै याः पुरस्ताद्देवां देवेषु परिस्तृणीत् सक्षेदं यदस्य पारेंऽनागस् उदंस्ताम्पसीद्वह्मं प्रतिष्ठा यद्देवा यत्ते ग्राव्ण्णा यद्दिंदीक्षे चतुंर्दश॥१४॥ सर्वान्भूतिमेव यामेवापस्वाहंतिं ब्रतानां पर्णवल्कः सोम्यानांमस्मिन् य्ज्ञेऽग्रे यो नो ज्योग्जीवाः प्रोरंजाः प्रतेमहे ब्रह्मं प्रतिष्ठा गार्हंपत्यस्त्रिष्शाद्तंत्तरशतम्॥१३०॥ सर्वाञ्छचीपतिः॥

# हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके सप्तमः प्रपाठकः समाप्तः॥

#### ॥अष्टमः प्रश्नः॥

### ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके अष्टमः प्रपाठकः॥

साङ्ग्रहण्येष्ट्यां यजते। इमाञ्चनता सङ्गिह्णानीति। द्वादेशारत्नी रशना भवति। द्वादेश मासाः संवथ्सरः। संवथ्सरमेवावं रुन्धे। मौञ्जी भवति। ऊर्ग्वे मुञ्जाः। ऊर्ज-मेवावं रुन्धे। चित्रा नक्षेत्रं भवति। चित्रं वा एतत्कर्म॥१॥

यदंश्वमेधः समृद्धौ। पुण्यंनाम देवयजंनम्ध्यवंस्यति। पुण्यांमेव तेनं कीर्तिम्भि जंयति। अपंदातीनृत्विजंः समावंहन्त्या सुंब्रह्मण्यायाः। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्ष्ठौ। केश्रश्मश्रु वंपते। नुखानि नि कृन्तते। द्तो धांवते। स्नाति। अहंतं वासः परिधत्ते। पाप्मनोऽपंहत्यै। वाचं यत्वोपं वसति। सुवर्गस्यं लोकस्य गुप्त्यै। रात्रिं जाग्रयंन्त आसते। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्ष्ठौ॥२॥

कर्म धत्ते पश्च च॥------[१]

चतुंष्टय्य आपों भवन्ति। चतुंः शफो वा अश्वंः प्राजापृत्यः समृंद्धौ। ता दिग्भ्यः समाभृंता भवन्ति। दिक्षु वा आपंः। अत्रं वा आपंः। अत्रो वा अत्रं जायते। यदेवाद्योऽत्रं जायते। तदवं रुन्थे। तासुं ब्रह्मौद्नं पंचति। रेतं एव तद्दंधाति॥३॥

चतुंः शरावो भवति। दिक्ष्वेव प्रतिं तिष्ठति। उभयतों रुक्मौ भवतः। उभयतं एवास्मिन्नुचं दधाति। उद्धंरित शृतुत्वायं। सूर्पिष्वांन्भवति मेध्यत्वायं। चृत्वारं आर्षेयाः प्राश्ञंन्ति। दिशामेव ज्योतिंषि जुहोति। चृत्वारि हिरंण्यानि ददाति। दिशामेव ज्योती्र्ष्यवं रुन्धे॥४॥

यदाज्यंमुच्छिष्यंते। तस्मिन्नश्नान्यंनत्ति। प्रजापंतिर्वा ओंद्नः। रेत् आज्यम्। यदाज्यं रश्नान्युनत्ति। प्रजापंतिमेव रेतंसा समर्धयति। दुर्भमयी रश्ना भवति। बहु वा एष कुंचरों मेध्यमुपंगच्छति। यदश्वः। प्वित्रं वै दुर्भाः॥५॥

यर्द्धभ्मयीं रश्ना भवंति। पुनात्येवैनम्ं। पूतमेंनं मेध्यमा लेभते। अश्वंस्य वा आलंब्यस्य मिह्मोदंक्रामत्। स महर्त्विजः प्राविंशत्। तन्महर्त्विजां महर्त्विक्तम्। यन्महर्त्विजः प्राश्वनितं। मृहिमानंमेवास्मिन्तद्दंधित। अश्वंस्य वा आलंब्यस्य रेत उदंक्रामत्। तथ्सुवर्ण्ष् हिरंण्यमभवत्। यथ्सुवर्ण्ष् हिरंण्यं ददांति। रेतं एव तद्दंधाति। ओद्ने दंदाति। रेतो वा ओद्नः। रेतो हिरंण्यम्। रेतंसैवास्मिन्नेतो दधाति॥६॥

द्धाति रुन्धे दर्भा अभव्ष्यद चं॥———[२]

यो वै ब्रह्मणे देवेभ्यः प्रजापंतयेऽप्रतिप्रोच्याश्वं मेध्यं बुध्नाति। आ देवताभयो वृथ्यते। पापीयान्भवति। यः प्रतिप्रोच्यं। न देवताभय आवृथ्यते। वसीयान्भवति। यदाहं। ब्रह्मन्नश्वं मेध्यं भन्थस्यामि देवेभ्यः प्रजापंतये तेनं राध्यास्मितिं। ब्रह्म वै ब्रह्मा। ब्रह्मण एव देवेभ्यः प्रजापंतये प्रतिप्रोच्याश्वं मेध्यं बध्नाति॥७॥

न देवताँभ्य आ वृंश्च्यते। वसीयान्भवति। देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रस्व इति रश्नामादत्ते प्रसूत्यै। अश्विनौर्बाहुभ्यामित्यांह। अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्तांम्। पूष्णो हस्तांभ्यामित्यांह यत्यैं। व्यृंद्धं वा एतद्यज्ञस्यं। यदंयज्ञष्केण क्रियतें। इमामंगृभ्णत्रश्नामृतस्ये-त्यिं वदति यजुंष्कृत्यै। यज्ञस्य समृंद्धौ॥८॥

तदांहुः। द्वादंशारत्नी रश्ना कंर्त्व्या(३) त्रयोदशार्त्नी(३)-रितिं। ऋष्भो वा एष ऋंतूनाम्। यथ्संवथ्सरः। तस्यं त्रयोदशो मासों विष्टपम्। ऋष्भ एष यज्ञानाम्। यदंश्वमेधः। यथा वा ऋष्भस्यं विष्टपम्। एवमेतस्यं विष्टपम्। त्रयोदशमंरत्निः रंश्नायांमुपा दंधाति॥९॥

यथंर्षभस्यं विष्टपर्ं सङ्स्करोतिं। ताहगेव तत्। पूर्व आयंषि विदथेषु कृव्येत्यांह। आयंरेवास्मिन्दधाति। तयां देवाः सुतमा बंभूवुरित्यांह। भूतिंमेवोपावंति। ऋतस्य सामन्थ्यरमारपन्तीत्यांह। सृत्यं वा ऋतम्। स्त्येनैवनंमृतेनारंभते। अभिधा असीत्यांह॥१०॥

तस्मांदश्वमेधयाजी सर्वाणि भूतान्यभि भंवति। भुवंनमुसीत्यांह। भूमानंमेवोपैति। युन्ताऽसीत्यांह। यन्तारंमेवेनं करोति। धूर्ताऽसीत्यांह। धूर्तारंमेवेनं करोति। सौंऽग्निं वैश्वानरमित्यांह। अग्नावेवेनं वश्वानरे जुंहोति। सप्रथस्मित्यांह॥११॥

प्रजयैवेनं प्रशुभिः प्रथयति। स्वाहांकृत् इत्यांह। होमं एवास्येषः। पृथिव्यामित्यांह। अस्यामेवेनं प्रतिष्ठापयति। यन्ता राड्यन्ताऽसि यमंनो धर्ताऽसि धरुण इत्यांह। रूपमेवास्यैतन्मंहिमानं व्याचंष्टे। कृष्ये त्वा क्षेमांय त्वा रय्ये त्वा पोषांय त्वेत्यांह। आशिषमेवेतामा शांस्ते। स्वगा त्वां देवेभ्य इत्यांह। देवेभ्यं पृवेनई स्वगा कंरोति। स्वाहां त्वा प्रजापंतय इत्यांह। प्राजापत्यो वा अश्वः। यस्यां पृव देवतांया आलुभ्यतें। तयैवेन् समर्धयति॥१२॥

बुध्राति समृद्धा उपादंधात्यसीत्यांह् सप्रथस्मित्यांह देवेभ्य इत्यांह् पश्चं च॥———[३]

यः पितुरंनुजायाः पुत्रः। स पुरस्ताःत्रयति। यो मातुरंनुजायाः पुत्रः। स पृश्चान्नंयति। विष्वंश्चमेवास्मांत्पाप्मानं विवृंहतः। यो अर्वन्तं जिघारंसित् तम्भ्यंमीति वरुण इति श्वानं चतुरक्षं प्रसौति। परो मर्तः पुरः श्वेति शुनंश्चतुरक्षस्य प्रहंन्ति। श्वेव वै पाप्मा भ्रातृंव्यः। पाप्मानंमेवास्य भ्रातृंव्यः हन्ति। सैभ्रकं मुसंलं भवति॥१३॥

कर्मकर्मेवास्में साधयति। पौ्ड्श्वलेयो हंन्ति। पुड्श्वल्वां वै देवाः शुचुं न्यंदधुः। शुचैवास्य शुचर्र हिन्त। पाप्मा वा एतमींपस्तीत्यांहुः। योंऽश्वमेधेन् यजंत् इति। अश्वंस्याधस्पदमुपांस्यित। वृज्जी वा अश्वः प्राजापत्यः। वञ्जेणैव पाप्मानं भ्रातृंव्यमवंक्रामित। दृक्षिणाऽपं प्रावयति॥१४॥

पाप्मानंमेवास्माच्छमंलमपं प्लावयति। ऐषीक उंदूहो भंवति। आयुर्वा इषीकाः। आयुरेवास्मिन्दधित। अमृतं वा इषीकाः। अमृतंमेवास्मिन्दधित। वेतस्शाखोपसम्बद्धा भवति। अपसुयोनिर्वा अश्वंः। अपसुजो वेतसः। स्वादेवैनं योनेर्निर्मिमीते। पुरस्तांत्प्रत्यश्चंमभ्युदूंहित। पुरस्तांदेवास्मिन्प्रतीच्यमृतं दधाति। अहं च त्वं चं वृत्रहिन्नितं ब्रह्मा यजमानस्य हस्तं गृह्णाति। ब्रह्मक्षत्रे एव सन्दंधाति। अभिक्रत्वेन्द्र भूरध्जमन्नित्यंध्वर्युर्यजमानं वाचयत्यभिजित्यै॥१५॥

भुवृति प्रावयिति मिमीते पर्श्वं च॥————[४]

चृत्वारं ऋत्विजः समृक्षिन्ति। आभ्य एवैनं चत्सृभ्यों दिग्भ्योऽभि समीरयन्ति। श्तेनं राजपुत्रैः सहाध्वर्यः। पुरस्तांत्प्रत्यिङ्गष्टम्प्रोक्षंति। अनेनाश्वंन मेध्येनेष्ट्वा। अयश्राजां वृत्रं वध्यादिति। राज्यं वा अध्वर्यः। क्षत्रश्र राजपुत्रः। राज्येनैवास्मिन्क्षत्रं दंधाति। श्तेनां राजिभिरुग्रैः सह ब्रह्मा॥१६॥

दक्षिणत उदङ्गिष्ठन्प्रोक्षंति। अनेनाश्वंन मेध्यंनेष्ट्वा। अयश् राजांप्रतिधृष्यों ऽस्त्विति। बलं वे ब्रह्मा। बलंमराजोग्रः। बलंनेवास्मिन्बलं दधाति। शतेनं सूतग्रामणिभिः सह होतां। पश्चात्प्राङ्गिष्ठन्प्रोक्षंति। अनेनाश्वंन मेध्येनेष्ट्वा। अयश् राजाऽस्यै विशः॥१७॥

बहुग्वे बंहुश्वायें बहुजाविकायैं। बहुव्रीहियवायें बहुमाषितलायैं। बहुहिरण्यायें बहुहस्तिकाये। बहुदास-पूरुषायें रियमत्ये पृष्टिंमत्ये। बहुरायस्पोषाये राजास्त्विति। भूमा वे होतां। भूमा सूंतग्रामण्यः। भूम्नेवास्मिन्भूमानं दधाति। श्तेनं क्षत्तसङ्गृहीतृभिः सहोद्गाता। उत्तर्तो देक्षिणा तिष्ठन्त्रोक्षंति॥१८॥

अनेनाश्वेन मेध्येनेष्ट्वा। अय राजा सर्वमायुरेत्विति। आयुर्वा उद्गता। आयुं क्षत्तसङ्ग्रहीतारंः। आयुंषैवास्मिन्नायुंदि-धाति। श्तरशंतं भवन्ति। श्तायुः पुरुषः श्तेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। चृतुः श्ता भवन्ति। चतंस्रो दिशंः। दिक्ष्वेव प्रतिं तिष्ठति॥१९॥

ब्रह्मा विश उक्षिति दिश एकं च॥———[५]

यथा वै ह्विषों गृहीतस्य स्कन्दिति। एवं वा एतदश्वीस्य स्कन्दित। यित्रक्तमनालब्धमुध्मृजन्ति। यथ्स्तोक्यां अन्वाही। सर्वहुतमेवेनं करोत्यस्कन्दाय। अस्केन्न् हि तत्। यद्धुतस्य स्कन्दंति। सहस्रमन्वांह। सहस्रंसिम्मितः सुवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्याभिजिंत्यै॥२०॥

यत्परिमिता अनुब्रूयात्। परिमित्मवं रुन्धीत। अपरिमिता अन्वांह। अपरिमितः सुवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्य समेष्ट्री। स्तोक्यां जुहोति। या एव वर्ष्या आपः। ता अव रुन्धे। अस्यां जुंहोति। इयं वा अग्निवैश्वानरः॥२१॥

अस्यामेवेनाः प्रतिष्ठापयति। उवाचं ह प्रजापंतिः। स्तोक्यांसु वा अहमंश्वमेधः सङ्स्थांपयामि। तेन ततः सङ्स्थितेन चरामीतिं। अग्नये स्वाहेत्यांह। अग्नयं एवैनं जुहोति। सोमांय स्वाहेत्यांह। सोमांयैवैनं जुहोति। स्वित्र एवैनं जुहोति॥२२॥

सरंस्वत्ये स्वाहेत्यांह। सरंस्वत्या एवैनं जुहोति। पूष्णे स्वाहेत्यांह। पूष्ण एवैनं जुहोति। बृह्स्पतंये स्वाहेत्यांह। बृह्स्पतंय एवैनं जुहोति। अपां मोदांय स्वाहेत्यांह। अन्ध एवैनं जुहोति। वायवे स्वाहेत्यांह। वायवं एवैनं जुहोति॥२३॥

मित्राय स्वाहेत्यांह। मित्रायैवैनं जुहोति। वर्रुणाय स्वाहेत्यांह। वर्रुणायैवैनं जुहोति। एताभ्यं एवैनं देवताभ्यो जुहोति। दशंदश सम्पादं जुहोति। दशाक्षरा विराट्। अत्रं विराट्। विराजेवात्राद्यमवं रुन्थे। प्र वा एषों- ऽस्माल्लोकाच्यंवते। यः परांचीराहुंतीर्जुहोतिं। पुनंः

पुनरभ्यावर्तं जुहोति। अस्मिन्नेव लोके प्रतिं तिष्ठति। पुता ह वाव सौं ऽश्वमेधस्य सङ्स्थितिमुवाचास्कंन्दाय। अस्कंन्नु हि तत्। यद्यज्ञस्य सङ्स्थितस्य स्कन्दंति॥२४॥ अभिजित्ये वैश्वान्यः संवित्र पुवेनं जुहोति वायवं पुवेनं जुहोति च्यवते पद चं॥—[६]

प्रजापंतये त्वा जुष्टं प्रोक्षामीति पुरस्तांत्प्रत्यिङ्गछन्प्रोक्षंति।
प्रजापंतिर्वे देवानांमन्नादो वीर्यांवान्। अन्नाद्यंमेवास्मिन्वीर्यं
दधाति। तस्मादश्वः पशूनामंन्नादो वीर्यांवत्तमः। इन्द्राग्निभ्यां
त्वेति दक्षिणतः। इन्द्राग्नी व देवानामोजिष्ठौ बिर्लिष्ठौ।
ओजं प्रवास्मिन्बलं दधाति। तस्मादश्वः पशूनामोजिष्ठो
बिर्लिष्ठः। वायवे त्वेति पृश्चात्। वायुर्वे देवानांमाशः
सारसारितंमः॥२५॥

ज्वमेवास्मिन्दधाति। तस्मादश्वः पशूनामाशः सारसारितंमः। विश्वेभ्यस्त्वा देवभ्य इत्यंत्तर्तः। विश्वे व देवा देवानां यशस्वितंमाः। यशं एवास्मिन्दधाति। तस्मादश्वः पशूनां यशस्वितंमः। देवभ्यस्त्वेत्यधस्तांत्। देवा व देवानामपंचिततमाः। अपंचितिमेवास्मिन्दधाति। तस्मादश्वः पशूनामपंचिततमः॥२६॥

सर्वेभ्यस्त्वा देवेभ्य इत्युपिरेष्टात्। सर्वे वै देवास्त्विषिमन्तो हर्स्वनंः। त्विषिमेवास्मिन् हरों दधाति। तस्मादश्वंः पशूनां त्विषिमान् हर्स्वितंमः। दिवे त्वाऽन्तरिक्षाय त्वा पृथियौ त्वेत्याह। पुभ्य पुवैनं लोकभ्यः प्रोक्षंति।
स्ते त्वाऽसंते त्वाऽद्यस्त्वौषंधीभ्यस्त्वा विश्वभ्यस्त्वा
भूतेभ्य इत्यांह। तस्मांदश्वमेधयाजिन् सर्वाणि
भूतान्युपंजीवन्ति। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। यत्प्रांजापृत्योऽश्वंः।
अथ् कस्मांदेनम्न्याभ्यों देवताभ्योऽपि प्रोक्षतीतिं। अश्वे वै
सर्वा देवतां अन्वायंत्ताः। तं यद्विश्वभ्यस्त्वा भूतेभ्य इति
प्रोक्षतिं। देवतां पुवास्मिन्नन्वा यांतयित। तस्मादश्वे सर्वा
देवतां अन्वायंत्ताः॥२७॥

सार्सारितमोऽपंचिततमः प्राजापृत्योऽश्वः पश्चं च॥—————[७]

यथा वै ह्विषों गृहीतस्य स्कन्दंति। एवं वा एतदश्वंस्य स्कन्दति। यत्प्रोक्षित्मनांलब्धमुथ्मृजन्ति। यदंश्वचिर्तानिं जुहोतिं। सूर्वहुतंमेवेनं करोत्यस्कन्दाय। अस्कंन्न् हि तत्। यद्धुतस्य स्कन्दंति। ईङ्काराय स्वाहेङ्कृंताय स्वाहेत्यांह। एतानि वा अंश्वचिर्तानिं। चरितैरेवैन् समर्धयति॥२८॥

तदांहुः। अनांहुतयो वा अश्वचिर्तानि। नैता होंत्व्यां इति। अथो खल्बांहुः। होत्व्यां एव। अत्र वावैवं विद्वानश्वमेधः सङ्स्थांपयति। यदंश्वचिर्तानिं जुहोतिं। तस्मांद्वोत्व्यां इतिं। बहि्र्धा वा एनमेतदायतंनाद्दधाति। भ्रातृंव्यमस्मै जनयति॥२९॥

यस्यांनायत्ने ऽन्यत्राग्नेराहुंतीर्जुहोतिं। सावित्रिया इष्ट्याः

पुरस्तौथ्स्वष्टकृतः। आहुवनीयैंऽश्वचिर्तानिं जुहोति। आयतंन पुवास्याहुंतीर्जुहोति। नास्मै भ्रातृंव्यं जनयित। तदांहुः। युज्ञमुखेयंज्ञमुखे होतृव्यौः। युज्ञस्य क्रृष्ट्यैं। सुवर्गस्यं लोकस्यानुंख्यात्या इतिं। अथो खल्वांहुः॥३०॥

यद्यंज्ञमुखेयंज्ञमुखे जुहुयात्। पृशुभियंजंमानं व्यंध्येत्। अवं सुवर्गाल्लोकात्पंद्येत। पापीयान्थ्स्यादितिं। सुकृदेव होत्व्याः। न यजंमानं पृशुभिर्व्यर्धयति। अभि सुंवर्गं लोकं जंयति। न पापीयान्भवति। अष्टाचंत्वारिश्शतमश्वरूपाणि जुहोति। अष्टाचंत्वारिश्शदक्षरा जगंती। जाग्तोऽश्वंः प्राजापृत्यः समृद्धे। एक्मितिरक्तं जुहोति। तस्मादेकंः प्रजास्वर्धुंकः॥३१॥

अर्ध्यति जन्यति खल्वांहुर्जगंती त्रीणिं च॥------[८]

विभूर्मात्रा प्रभूः पित्रेत्यांह। इयं वै माता। असौ पिता। अभ्यामेवेनं परिददाति। अश्वीऽिस हयोऽसीत्यांह। शास्त्येवेनंमेतत्। तस्मांच्छिष्टाः प्रजा जांयन्ते। अत्यो-ऽसीत्यांह। तस्मादश्वः सर्वोन्पशूनत्येति। तस्मादश्वः सर्वेषां पशूना श्रेष्ठां गच्छति॥३२॥

प्र यशः श्रेष्ठांमाप्नोति। य एवं वेदं। नरोऽस्यर्वाऽसि सप्तिरिस वाज्यंसीत्यांह। रूपमेवास्यैतन्मंहिमानं व्याचंष्टे। ययुर्नामाऽसीत्यांह। एतद्वा अश्वंस्य प्रियं नांमुधेयम्। प्रियेणैवैनं नाम्धेयंनाभि वंदति। तस्मादप्यांमित्रौ सङ्गत्यं। नाम्ना चेद्ध्वयंते। मित्रमेव भंवतः॥३३॥

आदित्यानां पत्वाऽन्विहीत्यांह। आदित्यानेवेनं गमयित। अग्नये स्वाहा स्वाहेंन्द्राग्निभ्यामितिं पूर्वहोमां जुंहोति। पूर्व पृव द्विषन्तं भ्रातृंव्यमितं क्रामित। भूरंसि भुवे त्वा भव्याय त्वा भविष्यते त्वेत्युथ्मृंजित सर्वृत्वायं। देवां आशापाला पृतं देवभ्योऽश्वं मेधांय प्रोक्षितं गोपायतेत्यांह। शृतं वे तत्प्यां राजपुत्रा देवा आशापालाः। तेभ्यं पृवेनं परिं ददाति। ईश्वरो वा अश्वः प्रमृंक्तः परां परावतं गन्तौः। इह धृतिः स्वाहेह विधृतिः स्वाहेह रितः स्वाहेह रमितः स्वाहेह रमितः स्वाहेह रमितः स्वाहेह रमितः स्वाहेह रमितः स्वाहेते चतृषु पृथ्मु जुंहोति॥३४॥

पुता वा अश्वंस्य बन्धंनम्। ताभिरेवैनं बध्नाति। तस्मादश्वः प्रमुंक्तो बन्धंनमा गंच्छति। तस्मादश्वः प्रमुंक्तो बन्धंनं न जंहाति। राष्ट्रं वा अश्वमेधः। राष्ट्रे खलु वा एते व्यायंच्छन्ते। येऽश्वं मेध्य रक्षंन्ति। तेषां य उद्दवं गच्छंन्ति। राष्ट्रादेव ते राष्ट्रं गंच्छन्ति। अथु य उद्दवं न गच्छंन्ति॥३५॥

राष्ट्रादेव ते व्यवंच्छिद्यन्ते। परा वा एष सिंच्यते। योऽबुलौऽश्वमेधेन् यजंते। यदमित्रा अश्वं विन्देरन्। हुन्येतांस्य यज्ञः। चृतुः शता रंक्षन्ति। यज्ञस्याघांताय। अथान्यमानीय प्रोक्षेयुः। सैव ततः प्रायंश्वित्तिः॥३६॥ गुच्छुति भुवृतः पृथ्सु जुंहोति न गच्छंन्ति नवं च॥———[९]

प्रजापंतिरकामयताश्वमेधेनं यजेयेतिं। स तपोंऽतप्यत। तस्यं तेपानस्यं। सप्तात्मनों देवता उदंक्रामन्। सा दीक्षाऽभंवत्। स एतानिं वैश्वदेवान्यंपश्यत्। तान्यंजुहोत्। तैर्वे स दीक्षामवांरुन्थ। यद्वैश्वदेवानिं जुहोतिं। दीक्षामेव तैर्यजंमानोऽवं रुन्थे॥३७॥

सप्त जुंहोति। सप्त हि ता देवतां उदक्रांमन्। अन्वहं जुंहोति। अन्वहम्व दीक्षामवं रुन्थे। त्रीणिं वैश्वदेवानिं जुहोति। चृत्वायौद्भहुणानिं। सप्त सम्पंद्यन्ते। सप्त वै शीर्षण्याः प्राणाः। प्राणा दीक्षा। प्राणेरेव प्राणान्दीक्षामवं रुन्थे॥३८॥

एकंविश्शतिं वैश्वदेवानिं जुहोति। एकंविश्शतिर्वे देवलोकाः। द्वादंश् मासाः पञ्चर्तवंः। त्रयं इमे लोकाः। असावादित्य एकविश्शः। एष स्वार्गे लोकः। तद्दैव्यं क्षत्रम्। सा श्रीः। तद्वप्नस्यं विष्टपम्। तथ्स्वाराज्यमुच्यते॥३९॥

त्रिष्शतंमौद्गहुणानिं जुहोति। त्रिष्शदंक्षरा विराट्। अन्नं विराट्। विराजैवान्नाद्यमवं रुन्धे। त्रेधा विभज्यं देवतां जुहोति। त्र्यांवृतो वै देवाः। त्र्यांवृत इमे लोकाः। एषां लोकानामास्ये। एषां लोकानां क्रुस्ये। अप वा एतस्मात्प्राणाः क्रांमन्ति॥४०॥

यो दीक्षामंतिरेचयंति। सप्ताहं प्रचंरन्ति। सप्त वै

शीर्षण्याः प्राणाः। प्राणा दीक्षा। प्राणेरेव प्राणान्दीक्षामवं रुन्थे। पूर्णाहुतिमंत्तमां जुंहोति। सर्वं वै पूर्णाहुतिः। सर्वमेवाप्नोति। अथो इयं वै पूर्णाहुतिः। अस्यामेव प्रतिं तिष्ठति॥४१॥

रुन्धे प्राणान्दीक्षामवं रुन्ध उच्यते क्रामन्ति तिष्ठति॥\_\_\_\_\_[१०]

प्रजापंतिरश्वमेधमंसृजत। त॰ सृष्टं न किश्चनोदंयच्छत्। तं वैश्वदेवान्येवोदंयच्छन्। यद्वैश्वदेवानि जुहोति। यज्ञस्योद्यंत्ये। स्वाहाऽऽधिमाधीताय स्वाहाँ। स्वाहा-ऽधीतं मनसे स्वाहाँ। स्वाहा मनः प्रजापंतये स्वाहाँ। काय् स्वाहा कस्मै स्वाहां कत्मस्मै स्वाहेति प्राजापृत्ये मुख्ये भवतः। प्रजापंतिमुखाभिरेवैनं देवतांभिरुद्यंच्छते॥४२॥

अदित्ये स्वाहाऽदित्ये मृह्यै स्वाहाऽदित्ये सुमृडीकाये स्वाहेत्यांह। इयं वा अदितिः। अस्या पृवैनं प्रतिष्ठायोद्यंच्छते। सरंस्वत्ये स्वाहा सरंस्वत्ये वृह्त्यै स्वाहा सरंस्वत्ये पावकाये स्वाहेत्यांह। वाग्वे सरंस्वती। वाचैवेनमुद्यंच्छते। पूष्णे स्वाहां पूष्णे प्रपृथ्यांय स्वाहां पूष्णे न्रन्धिषाय स्वाहेत्यांह। पृश्वो वे पूषा। पृश्विनेमुद्यंच्छते। त्वष्ट्रे स्वाहा त्वष्ट्रे तुरीपांय स्वाहा त्वष्ट्रे पुरुरूपांय स्वाहेत्यांह। त्वष्टा वे पंशूनां मिथुनाना रूपकृत्। रूपमेव पृशुषुं दधाति। अथों रूपरेवेनमुद्यंच्छते। विष्णंवे स्वाहा विष्णंवे निखुर्यपाय स्वाहा विष्णंवे निभूयपाय स्वाहेत्यांह। युज्ञो वे विष्णंः।

यज्ञायैवैनमुद्यंच्छते। पूर्णाहुतिम्त्मां जुहोति। प्रत्युत्तं ब्ये सयत्वायं॥४३॥

युच्छुते पुरुरूपाय स्वाहेत्यांहाष्टौ चं॥-----[११]

सावित्रमृष्टाकंपालं प्रातिर्निवंपति। अष्टाक्षंरा गायत्री। गायत्रं प्रांतः सवनम्। प्रातः सवनादेवैनं गायित्रियाश्छन्दसो-ऽिं निर्मिमीते। अथौ प्रातः सवनमेव तेनौऽऽप्नोति। गायत्रीं छन्दंः। सवित्रे प्रंसवित्र एकांदशकपालं मध्यन्दिने। एकांदशाक्षरा त्रिष्टुप्। त्रेष्टुंभं माध्यं दिन् सवनम्। माध्यं दिनादेवैन सवनाित्रिष्टुभश्छन्दसोऽिं निर्मिमीते॥४४॥

अथो माध्यं दिनमेव सर्वनं तेनांऽऽप्नोति। त्रिष्टुमं छन्दं। स्वित्र आंसवित्रे द्वादंशकपालमपराह्ने। द्वादंशाक्षरा जगती। जागतं तृतीयसवनम्। तृतीयसवनादेवैनं जगत्याश्छन्दसोऽधि निर्मिमीते। अथो तृतीयसवनमेव तेनांऽऽप्नोति। जगतीं छन्दं। ईश्वरो वा अश्वः प्रमुंक्तः परां परावतं गन्तोः। इह धृतिः स्वाहेह विधृतिः स्वाहेह रन्तिः स्वाहेह रमितः स्वाहेत चतंस्र आहुंतीर्जुहोति॥४५॥

चर्तस्रो दिशः। दिग्भिरेवैनं परिगृह्णाति। आश्वंत्थो व्रजो भवति। प्रजापंतिर्देवेभ्यो निलायत। अश्वां रूपं कृत्वा। सौंऽश्वत्थे संवथ्स्रमंतिष्ठत्। तदंश्वत्थस्यांश्वत्थत्वम्। यदाश्वंत्थो व्रजो भवंति। स्व पुवैनं योनौ प्रतिष्ठापयति॥४६॥ त्रिष्टुभुश्छन्द्सोऽधि निर्मिमीते जुहोति नवं च॥————[१२]

आ ब्रह्मंन्ब्राह्मणो ब्रह्मवर्च्सी जांयतामित्यांह। ब्राह्मण एव ब्रह्मवर्च्सं दंधाति। तस्मौत्पुरा ब्राह्मणो ब्रह्मवर्च्स्यंजायत। आऽस्मित्राष्ट्रे रांजन्यं इष्व्यः शूरों महार्थो जांयतामित्यांह। राजन्यं एव शौर्यं महिमानं दधाति। तस्मौत्पुरा रांजन्यं इष्व्यः शूरों महार्थोऽजायत। दोग्ध्री धेनुरित्यांह। धेन्वामेव पयो दधाति। तस्मौत्पुरा दोग्ध्री धेनुरंजायत। वोढांऽनङ्गानित्यांह॥४७॥

अनुडुह्येव वीर्यं दधाति। तस्मौत्पुरा वोढांऽनुङ्वानंजायत। आशुः सिप्तिरित्याह। अश्वं एव जवं दंधाति। तस्मौत्पुरा-ऽऽशुरश्वोंऽजायत। पुरेन्धिर्योषेत्याह। योषित्येव रूपं दंधाति। तस्माथ्स्री युवतिः प्रिया भावुंका। जिष्णू रंथेष्ठा इत्याह। आ ह वै तत्रं जिष्णू रंथेष्ठा जांयते॥४८॥

यत्रैतनं यज्ञेन यजंन्ते। स्भेयो युवेत्यांह। यो वै पूँववयसी। स स्भेयो युवा। तस्माद्युवा पुमान्त्रियो भावुंकः। आऽस्य यजंमानस्य वीरो जांयतामित्यांह। आ हु वै तत्र यजंमानस्य वीरो जांयते। यत्रैतेनं यज्ञेन यजंन्ते। निकामेनिंकामे नः पर्जन्यो वर्षित्वत्यांह। निकामेनिंकामे हु वै तत्रं पर्जन्यों वर्षित। यत्रैतेनं यज्ञेन यजंन्ते। फिलन्यों न ओषंधयः पच्यन्तामित्यांह। फिलन्यों हु वै तत्रौषंधयः पच्यन्ते। यत्रैतेनं यज्ञेन यजंन्ते। योगुक्षेमो नंः कल्पतामित्यांह। कल्पंते हु वै

तत्रं प्रजाभ्यों योगक्षेमः। यत्रैतेनं युज्ञेन् यर्जन्ते॥४९॥
अनुङ्गानित्यांह जायते वर्षित सुप्त चं॥———[१३]

प्रजापंतिर्देवेभ्यों यज्ञान्व्यादिशत्। स आत्मन्नेश्वमेधमंधत्त। तं देवा अंब्रुवन्। एष वाव यज्ञः। यदेश्वमेधः। अप्येव नोऽत्रास्त्विति। तेभ्यं एतानंत्रहोमान्प्रायंच्छत्। तानंजुहोत्। तैर्वे स देवानंप्रीणात्। यदंत्रहोमां जुहोति॥५०॥

देवानेव तैर्यजंमानः प्रीणाति। आज्येंन जुहोति। अग्नेर्वा एतद्रूपम्। यदाज्यम्। यदाज्येंन जुहोतिं। अग्निमेव तत्प्रींणाति। मधुंना जुहोति। महत्यै वा एतद्देवतांयै रूपम्। यन्मधुं। यन्मधुंना जुहोतिं॥५१॥

मह्तीमेव तद्देवतां प्रीणाति। तृण्डुलैर्जुहोति। वसूनां वा एतद्रूपम्। यत्तंण्डुलाः। यत्तंण्डुलैर्जुहोतिं। वसूनेव तत्प्रीणाति। पृथुंकैर्जुहोति। रुद्राणां वा एतद्रूपम्। यत्पृथुंकाः। यत्पृथुंकैर्जुहोति॥५२॥

रुद्रानेव तत्प्रीणाति। लाजैर्जुहोति। आदित्यानां वा एतद्रूपम्। यल्लाजाः। यल्लाजैर्जुहोतिं। आदित्यानेव तत्प्रीणाति। क्रम्बैर्जुहोति। विश्वेषां वा एतद्देवानार्थं रूपम्। यत्क्रम्बाः। यत्क्रम्बैर्जुहोतिं॥५३॥

विश्वांनेव तद्देवान्प्रींणाति। धानाभिंर्जुहोति। नक्षंत्राणां वा पुतद्रूपम्। यद्धानाः। यद्धानाभिंर्जुहोतिं। नक्षंत्राण्येव तत्त्रींणाति। सक्तुंभिर्जुहोति। प्रजापंतेर्वा एतद्रूपम्। यथ्सक्तंवः। यथ्सक्तुंभिर्जुहोतिं॥५४॥

प्रजांपितमेव तत्प्रींणाति। मुसूस्यैंर्जुहोति। सर्वांसां वा एतद्देवतांनाः रूपम्। यन्मसूस्यांनि। यन्मसूस्यैंर्जुहोति। सर्वा एव तद्देवताः प्रीणाति। प्रियङ्गुतण्डुलैर्जुहोति। प्रियाङ्गां ह वे नामैते। एतेर्वे देवा अश्वस्याङ्गांनि समंदधः। यत्प्रियङ्गतण्डुलैर्जुहोति। अश्वंस्यैवाङ्गांनि सन्दंधाति। दशान्नांनि जुहोति। दशांक्षरा वि्राट्। विराद्गुथ्मस्यान्नाद्यस्यावंरुद्धौ॥५५॥

जुहोति मधुंना जुहोति पृथुंकैर्जुहोतिं क्रम्बैंर्जुहोति सक्तंभिर्जुहोतिं प्रियङ्गुतण्डुलैर्जुहोतिं च्रत्वारिं च (अन्नहोमानाऽऽज्येना्ग्नेर्मधुंना तण्डुलैः पृथुंकैर्लाजैः क्रम्बैंर्धानाभिः सक्तंभिर्म्सूस्यैः प्रियङ्गुतण्डुलैर्द्शान्नांनि द्वादंश। )॥——[१४]

प्रजापंतिरश्वमेधमंसृजत। तर सृष्टर रक्षा ईस्यजिघारसन्।
स एतान्प्रजापंतिर्नृक्तर होमानंपश्यत्। तानंजुहोत्। तैर्वे
स यज्ञाद्रक्षा इस्यपंहन्। यन्नंक्तर होमां जुहोति। यज्ञादेव
तैर्यजंमानो रक्षा इस्यपंहिन्त। आज्येन जुहोति। वज्रो वा
आज्यम्। वज्रेणैव यज्ञाद्रक्षा इस्यपंहिन्त॥५६॥

आज्यंस्य प्रतिपर्दं करोति। प्राणो वा आज्यम्। मुख्त एवास्यं प्राणं दंधाति। अन्नहोमाञ्जहोति। शरीरवदेवावं रुन्थे। व्यत्यासं जुहोति। उभयस्यावंरुख्यै। नक्तं जुहोति।

# रक्षंसामपंहत्यै। आज्यंनान्त्तो जुंहोति॥५७॥

प्राणो वा आज्यम्। उभयतं एवास्यं प्राणं देधाति। पुरस्तां चोपरिष्टा च। एकंस्मे स्वाहेत्यांह। अस्मिन्नेव लोके प्रतिं तिष्ठति। द्वाभ्या इं स्वाहेत्यांह। अमुष्मिन्नेव लोके प्रतिं तिष्ठति। उभयोरेव लोकयोः प्रतिं तिष्ठति। अस्मि इश्वाम् प्रतिं पूर्णवः श्वावीर्यः। आयुरेव वीर्यमवं रुन्थे। सहस्रायं स्वाहेत्यांह। आयुर्वे सहस्रम्। आयुरेवावं रुन्थे। सर्वस्मे स्वाहेत्यांह। अपरिमितमेवावं रुन्थे॥५८॥

पुव युज्ञाद्रक्षाुं हस्यपंहन्त्यन्तुतो र्जुहोति शृताय स्वाहेत्यांह सप्त चं॥————[१५]

प्रजापंतिं वा एष ईंप्सतीत्यांहुः। योंऽश्वमेधेन यजंत इतिं। अथों आहुः। सर्वाणि भूतानीतिं। एकंस्मै स्वाहेत्यांह। प्रजापंतिर्वा एकंः। तमेवाऽऽप्नोति। एकंस्मै स्वाहा द्वाभ्याः स्वाहेत्यंभिपूर्वमाहुंतीर्जुहोति। अभिपूर्वमेव सुंवर्गं लोकमेति। एकोत्तरं जुंहोति॥५९॥

एकवदेव सुंवर्गं लोकमेति। सन्तंतं जुहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य सन्तंत्यै। शताय स्वाहेत्यांह। शतायुर्वे पुरुषः शतवींर्यः। आयुरेव वीर्यमवं रुन्धे। सहस्राय स्वाहेत्यांह। आयुर्वे सहस्रम्। आयुरेवावं रुन्धे। अयुतांय स्वाहां नियुतांय स्वाहां प्रयुतांय स्वाहेत्यांह॥६०॥ त्रयं इमे लोकाः। इमानेव लोकानवं रुन्धे। अर्बुदाय स्वाहेत्याह। वाग्वा अर्बुदम्। वाचमेवावं रुन्धे। न्यंर्बुदाय स्वाहेत्याह। यो वै वाचो भूमा। तन्न्यंर्बुदम्। वाच एव भूमानमवं रुन्धे। समुद्राय स्वाहेत्यांह॥६१॥

स्मुद्रमेवाऽऽप्नोति। मध्याय स्वाहेत्यांह। मध्यमेवाऽऽप्नोति। अन्ताय स्वाहेत्यांह। अन्तमेवाऽऽप्नोति। प्रार्थाय स्वाहेत्यांह। प्रार्थमेवाऽऽप्नोति। उषसे स्वाहा व्यंष्ट्रमे स्वाहेत्यांह। प्रार्थमेवाऽऽप्नोति। उषसे स्वाहा व्यंष्ट्रमे स्वाहेत्यांह। रात्रिर्वा उषाः। अहर्व्यंष्टिः। अहोरात्रे एवावं रुन्थे। अथो अहोरात्रयोरेव प्रति तिष्ठति। ता यदुभयीर्दिवां वा नक्तं वा जुहुयात्। अहोरात्रे मोहयेत्। उषसे स्वाहा व्यंष्ट्रमे स्वाहोदेष्यते स्वाहोद्यते स्वाहेत्यनंदिते जुहोति। उदिताय स्वाहां सुवर्गाय स्वाहां लोकाय स्वाहेत्युदिते जुहोति। अहोरात्रयोरव्यंतिमोहाय॥६२॥

एकोत्तरं जुंहोति प्रयुतांय स्वाहेत्यांह समुद्राय स्वाहेत्याहाहुर्व्युष्टिः सप्त चं॥——[१६]

विभूमात्रा प्रभूः पित्रेत्यंश्वनामानि जुहोति। उभयोरेवैनं लोकयौर्नामधेयं गमयति। आयंनाय स्वाहा प्रायंणाय स्वाहेत्यंद्वावाञ्चंहोति। सर्वमेवैन्मस्कंत्रः सुवृगं लोकं गंमयति। अग्नये स्वाहा सोमाय स्वाहेति पूर्वहोमाञ्चंहोति। पूर्व एव द्विषन्तं भ्रातृंव्यमिति कामित। पृथिव्ये स्वाहा- उन्तरिक्षाय स्वाहेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। अग्नये स्वाहा

सोमांय स्वाहेतिं पूर्वदीक्षा जुंहोति। पूर्वं एव द्विषन्तं भ्रातृंव्यमितं ऋामिति॥६३॥

पृथिव्यै स्वाहाऽन्तिरिक्षाय स्वाहेत्येकिविश्शिनीं दीक्षां जुंहोति। एकिविश्शितिर्वे देवलोकाः। द्वादेश मासाः पश्चर्तवः। त्रयं इमे लोकाः। असावादित्य एकिविश्शः। एष सुंवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्प्रेष्टो। भुवो देवानां कर्मणेत्यृंतुदीक्षा जुंहोति। ऋतूनेवास्में कल्पयति। अग्नये स्वाहां वायवे स्वाहेतिं जुहोत्यनंन्तिरत्यै॥६४॥

अर्वाङ्यज्ञः सङ्गांमृत्वित्याप्तींर्जुहोति। सुवर्गस्यं लोकस्याप्त्यै। भूतं भव्यं भिवष्यदिति पर्याप्तीर्जुहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य पर्याप्त्ये। आ में गृहा भवन्त्वत्याभूर्जुहोति। सुवर्गस्यं लोकस्याभूत्ये। अग्निना तपोऽन्वंभवदित्यंनुभूर्जुहोति। सुवर्गस्यं लोकस्याभूत्ये। अग्निना तपोऽन्वंभवदित्यंनुभूर्जुहोति। सुवर्गस्यं लोकस्यानुंभूत्ये। स्वाहाऽऽिधमाधीताय स्वाहिति समस्तानि वैश्वदेवानि जुहोति। समस्तमेव द्विषन्तं भ्रातृंव्यमितं कामित॥६५॥

दुद्धः स्वाह्य हर्न्मैभ्या स्वाहेत्यं झहोमा श्रुंहोति। अङ्गं अङ्गं वै पुरुंषस्य पाप्मोपंश्लिष्टः। अङ्गांदङ्गादेवैनं पाप्मन् स्तेनं मुश्रति। अञ्चेताय स्वाहां कृष्णाय स्वाहां श्वेताय स्वाहेत्यंश्वरूपाणि जुहोति। रूपैरेवैन् समंध्यति। ओषंधीभ्यः स्वाह्य मूलेंभ्यः स्वाहेत्योषिधहोमा श्रुंहोति। द्वय्यो वा ओषंधयः। पुष्पैभ्योऽन्याः फलं गृह्णन्तिं। मूलैभ्योऽन्याः। ता एवोभयीरवं रुन्धे॥६६॥

वन्स्पतिंभ्यः स्वाहेतिं वनस्पतिहोमाञ्जंहोति। आर्ण्यस्यान्नाद्यस्यावंरुद्धो। मेषस्त्वां पचतेरंवत्वित्यपाँच्यानि जुहोति। प्राणा वै देवा अपाँच्याः। प्राणानेवावं रुन्थे। कूप्याँभ्यः स्वाहाद्धः स्वाहेत्यपा होमाँ जुहोति। अपसु वा आपंः। अन्नं वा आपंः। अन्न्यो वा अन्नं जायते। यदेवाद्धोऽन्नं जायते। तदवं रुन्थे॥६७॥

पूर्वदीक्षा जुंहोति पूर्व पुव द्विषन्तुं भ्रातृंव्यमितं क्रामृत्यनंन्तिरत्यै क्रामित रुन्धे जायंतु एकं

अम्भार्शसे जुहोति। अयं वै लोकोऽम्भार्शसे। तस्य वस्वोऽधिपतयः। अग्निज्योतिः। यदम्भार्शसे जुहोति। इममेव लोकमवं रुन्थे। वसूनार्श्व सार्युज्यं गच्छति। अग्निं ज्योतिरवं रुन्थे। नभार्शसे जुहोति। अन्तरिक्षं वै नभार्शसे॥६८॥

तस्यं रुद्रा अधिपतयः। वायुर्ज्योतिः। यन्नभार्शस जुहोति। अन्तरिक्षमेवावं रुन्धे। रुद्राणार्श्वसायुर्ज्यं गच्छति। वायुं ज्योतिरवं रुन्धे। महार्श्वस जुहोति। असौ वै लोको महार्श्वस। तस्यांदित्या अधिपतयः। सूर्यो ज्योतिः॥६९॥

यन्महा १ सि जुहोति। अमुमेव लोकमवं रुन्धे। आदित्याना १ सार्युंज्यं गच्छति। सूर्युं ज्योतिरवं रुन्थे। नमो राज्ञे नमो वर्रुणायेति युव्यानि जुहोति। अन्नाद्यस्यावरुद्धे। मयोभूर्वातो अभि वांतूस्ना इति गव्यानि जुहोति। पुशूनामवरुद्धे। प्राणाय स्वाहाँ व्यानाय स्वाहेति सन्ततिहोमाञ्जहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य सन्तत्यै॥७०॥

स्वात्यं स्वाहाऽसितायं स्वाहेति प्रमुक्तीर्जुहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य प्रमुक्त्ये। पृथिव्ये स्वाहाऽन्तरिक्षायं स्वाहेत्याह। यथायजुरेवैतत्। दत्वते स्वाहाऽदन्तकायं स्वाहेति शरीरहोमाञ्जहोति। पितृलोकमेव तैर्यजमानोऽवं रुन्थे। कस्त्वां युनक्ति स त्वां युनक्तिति परिधीन् युनक्ति। इमे वे लोकाः परिधयः। इमानेवास्मे लोकान् युनक्ति। सुवर्गस्यं लोकस्य समष्ट्रौ॥७१॥

यः प्राण्तो य आंत्मदा इति महिमानौ जुहोति। सुवर्गो वै लोको महंः। सुवर्गमेव ताभ्यां लोकं यर्जमानोऽवं रुन्थे। आ ब्रह्मंन्ब्राह्मणो ब्रह्मवर्च्सी जांयतामिति समस्तानि ब्रह्मवर्च्सानि जुहोति। ब्रह्मवर्च्समेव तैर्यजमानोऽवं रुन्थे। जित्र बीजमिति जुहोत्यनंन्तरित्यै। अग्नये समनमत्पृथिव्यै समनम्दिति सन्नतिहोमाञ्चंहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य सन्नत्यै। भूताय स्वाहां भिवष्यते स्वाहेति भूताम्व्यौ होमौ जुहोति। अयं वै लोको भूतम्॥७२॥

असौ भंविष्यत्। अनयोरेव लोकयोः प्रतिं तिष्ठति। सर्वस्यार्यै। सर्वस्यावरुद्धे। यदर्त्रन्दः प्रथमं जायमान् इत्यंश्वस्तोमीयं जुहोति। सर्वस्यास्यै। सर्वस्य जित्यै। सर्वमेव तेनौप्रोति। सर्वं जयति। यौऽश्वमेधेन यजंते॥७३॥

य उं चैनमेवं वेदं। युज्ञश् रक्षा ईस्यजिघाश्सन्। स एतान्प्रजापंतिर्नक्तश्होमानपश्यत्। तानंजुहोत्। तैर्वे स युज्ञाद्रक्षा इस्यपाहन्। यन्नक्तश्होमां जुहोति। युज्ञादेव तैर्यजमानो रक्षा इस्यपहन्ति। उषसे स्वाहा व्युष्टि स्वाहेत्यन्त्तो जुहोति। सुव्गस्यं लोकस्य समष्टि॥७४॥ व नभारेसि सूर्यो ज्योतिः सन्तियै समष्टि भूतं यजीते नवं च॥———[१८]

पुक्यूपो वैंकाद्शिनीं वा। अन्येषां यज्ञानां यूपो भवन्ति। पुक्विश्शिन्यंश्वमेधस्यं। सुवर्गस्यं लोकस्याभिजित्यै। बैल्वो वां खादिरो वां पालाशो वां। अन्येषां यज्ञकतूनां यूपो भवन्ति। राज्जंदाल एकंविश्शत्यरिक्षिमेधस्यं। सुवर्गस्यं लोकस्य समेष्ट्यै। नान्येषां पशूनां तेंजन्या अवद्यन्ति। अवंद्यन्त्यश्वंस्य॥७५॥

पाप्मा वै तेज्नी। पाप्मनोऽपंहत्यै। प्रक्षशाखायांमुन्येषां पशूनामंवद्यन्ति। वेत्सशाखायामश्वंस्य। अपसुयोनिर्वा अश्वंः। अपसुजो वेत्सः। स्व एवास्य योनाववं द्यति। यूपेषु ग्राम्यान्पशून्नियुञ्जन्ति। आरोकेष्वांरण्यान्धांरयन्ति। पशूनां व्यावृत्त्यै। आ ग्राम्यान्पशूङ्गंभन्ते। प्रार्ण्यान्ध्संजन्ति। पाप्मनोऽपंहत्यै॥७६॥

अर्श्वस्य व्यावृत्त्यै त्रीणिं च॥-----[१९]

राञ्जंदालमग्निष्ठं मिनोति। भ्रूणहृत्याया अपंहत्यै। पौतुंद्रवाव्भितों भवतः। पुण्यंस्य गुन्थस्यावंरुद्धौ। भ्रूणहृत्यामेवास्मांदपहत्यं। पुण्यंन गुन्थेनोभ्यतः परिं गृह्णाति। षड्वैल्वा भवन्ति। ब्रह्मवर्चसस्यावंरुद्धौ। षद्धांदिराः। तेजसोऽवंरुद्धौ॥७७॥

षद्वांलाशाः। सोम्पीथस्यावंरुद्धौ। एकंविश्शितः सम्पंद्यन्ते। एकंविश्शितिर्वे देवलोकाः। द्वादंश् मासाः पश्चर्तवंः। त्रयं इमे लोकाः। असावादित्य एकंविश्शः। एष सुवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्प्रिः। शृतं पृश्वों भवन्ति॥७८॥

श्वतायुः पुरुषः श्वतिन्द्रियः। आयुंष्येविन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। सर्वं वा अश्वमेध्याप्नोति। अपंरिमिता भवन्ति। अपंरिमित्स्यावंरुद्धे। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। कस्मांध्मत्यात्। दक्षिणतोंऽन्येषां पशूनामंवद्यन्ति। उत्तर्तोऽश्वस्येतिं। वारुणो वा अश्वंः॥७९॥

पुषा वै वर्रुणस्य दिक्। स्वायांमेवास्यं दिश्यवंद्यति। यदितंरेषां पशूनामंवद्यतिं। शृतदेवत्यं तेनावं रुन्धे। चितेंऽग्नाविधं वैत्से कटेऽश्वं चिनोति। अपसुयोंनिर्वा अश्वंः। अपसुजो वेत्सः। स्व पुवैनं योनौ प्रतिष्ठापयति। पुरस्तांत्प्रत्यश्चं तूपरं चिनोति। पृश्चात्प्राचीनं गोमृगम्॥८०॥ प्राणापानावेवास्मिन्थ्सम्यश्ची दधाति। अर्श्वं तूपरं गोमृगमिति सर्वहृतं पृताञ्चंहोति। पृषां लोकानांमभिजित्यै। आत्मनाऽभि जुंहोति। सात्मानमेवेन् सत्नं करोति। सात्मानमेवेन् सत्नं करोति। सात्माऽमुष्मिं लोके भेवति। य पृवं वेदं। अथो वसोरेव धारां तेनावं रुन्थे। इलुवर्दाय स्वाहां बिलवर्दाय स्वाहेत्यांह। संवथ्सरो वा इंलुवर्दः। परिवथ्सरो बंलिवर्दः। संवथ्सरोदेव परिवथ्सरादायुर्वं रुन्थे। आयुरेवास्मिन्दधाति। तस्मादश्वमेधयाजी जरसां विस्नसामुं लोकमेति॥८१॥

तेजुसोऽवंरुद्धै भवुन्त्यक्षों गोमृगमिंलुवर्दश्चत्वारिं च॥——————[२०]

पुक्विष्शौंऽग्निर्भवति। पुक्विष्शः स्तोमंः। एकं-विश्वतिर्यूपाः। यथा वा अश्वां वर्षमा वा वृषांणः सङ्स्फुरेरन्ं। पुवमेव तथ्स्तोमाः सङ्स्फुरन्ते। यदेकविष्शाः। ते यथ्संमृच्छेरन्ं। हुन्येतास्य यज्ञः। द्वाद्व पुवाग्निः स्यादित्यांहुः। द्वाद्वाः स्तोमंः॥८२॥

एकांदश् यूपाः। यद्वांदशों ऽग्निर्भवंति। द्वादंश् मासाः संवथ्सरः। संवथ्सरेणैवास्मा अन्नमवं रुन्धे। यद्दश् यूपा भवंन्ति। दशाक्षरा विराट्। अन्नं विराट्। विराजैवान्नाद्यमवं रुन्धे। य एंकाद्शः। स्तनं एवास्यै सः॥८३॥

दुह पुवैनां तेनं। तदांहुः। यद्वांदशौंऽग्निः स्यांद्वादशः स्तोम् एकांदश् यूपौः। यथा स्थूरिणा यायात्। तादक्तत्। एकवि १ श एवाग्निः स्यादित्यांहुः। एकवि १ शः स्तोर्मः। एकवि १ शतिर्यूपाः। यथा प्रष्टिंभिर्याति। तादगेव तत्॥८४॥

यो वा अश्वमेधे तिस्रः क्कुभो वेदं। क्कुद्ध राज्ञाँ भवति। एक्वि॰्शाँऽग्निर्भवति। एक्वि॰्शाः स्तोमंः। एकंवि॰शित्यूंपाः। एता वा अश्वमेधे तिस्रः क्कुभः। य एवं वेदं। क्कुद्ध राज्ञाँ भवति। यो वा अश्वमेधे त्रीणि शीर्षाण् वेदं। शिरो ह राज्ञाँ भवति। एक्वि॰्शाँऽग्निर्भवति। एक्वि॰्शाः स्तोमंः। एकंवि॰शतिर्यूपाः। एतानि वा अश्वमेधे त्रीणि शीर्षाणि। य एवं वेदं। शिरो ह राज्ञाँ भवति॥८५॥ बाद्यः स्तोमः स एव तिन्ध्वरं ह राज्ञां भवति पद चं॥———[२१]

देवा वा अंश्वमेधे पर्वमाने। सुवर्गं लोकं न प्राजानन्। तमश्वः प्राजानात्। यदंश्वमेधेऽश्वेन मेध्येनोदंश्चो बहिष्पवमानः सर्पन्ति। सुवर्गस्यं लोकस्य प्रज्ञात्यै। न वै मंनुष्यः सुवर्गं लोकमञ्जसा वेद। अश्वो वै सुंवर्गं लोकमञ्जसा वेद। यदुंद्रातोद्गायेत्। यथा क्षेत्रज्ञोऽन्येनं पृथा प्रतिपादयेत्। तादक्तत्॥८६॥

उद्गातारंमप्रध्यं। अश्वंमुद्गीथायं वृणीते। यथां क्षेत्रज्ञो-ऽञ्जंसा नयंति। एवमेवैन्मश्वंः सुवर्गं लोकमञ्जंसा नयति। पुच्छंमन्वा रंभन्ते। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्ध्ये। हिं करोति। सामैवाकंः। हिं करोति। उद्गीथ एवास्य सः॥८७॥ वर्डबा उपं रुन्धन्ति। मिथुन्त्वाय् प्रजाँत्यै। अथो यथोपगातारं उपगायंन्ति। ताहगेव तत्। उदंगासीदश्वो मध्य इत्याह। प्राजापत्यो वा अश्वः। प्रजापंतिरुद्गीयः। उद्गीथमेवावं रुन्धे। अथों ऋख्सामयोरेव प्रतिं तिष्ठति। हिरंण्येनोपाकंरोति। ज्योतिर्वे हिरंण्यम्। ज्योतिरेव मुंखतो दंधाति। यजंमाने च प्रजासुं च। अथो हिरंण्यज्योतिरेव यजंमानः सुवर्गं लोकमेति॥८८॥

तथ्स उपाकंरोति चुत्वारि च॥\_\_\_\_\_[२२]

पुरुषो वै यज्ञः। यज्ञः प्रजापंतिः। यदश्वे पृश्नियुञ्जन्ति। यज्ञादेव तद्यज्ञं प्रयुङ्के। अश्वें तूपरं गोमृगम्। तानिग्निष्ठ आलंभते। सेनामुखमेव तथ्सङ्श्यंति। तस्माद्राजमुखं भीष्मं भावुंकम्। आग्नेयं कृष्णग्रींवं पुरस्तां हुलाटें। पूर्वाग्निमेव तं कुरुते॥८९॥

तस्मौत्पूर्वाभ्रिं पुरस्तौथ्स्थापयन्ति। पौष्णम्नवश्रम्॥ अत्रं वै पूषा। तस्मौत्पूर्वाभ्रावांहार्यमा हंरन्ति। ऐन्द्रापौष्णमुपरिष्टात्। ऐन्द्रो वै रांज्न्योऽत्रं पूषा। अन्नाद्येनैवेनंमुभ्यतः परि गृह्णाति। तस्मौद्राज्न्यौऽन्नादो भावुंकः। आ्रभ्रेयौ कृष्णग्रीवौ बाहुवोः। बाहुवोरेव वीर्यं धत्ते॥९०॥

तस्मौद्राज्ञन्यों बाहुबुलीभावुंकः। त्वाष्ट्रौ लोमशस्क्यौ सुक्थ्योः। सुक्थ्योरेव वीर्यं धत्ते। तस्मौद्राजुन्यं ऊरुब्लीभावुंकः। शितिपृष्ठौ बांर्हस्पृत्यौ पृष्ठे। ब्रह्मवर्चसमेवोपरिष्टाद्धत्ते। अथां क्वचें एवैते अभितः पर्यूहते। तस्माद्राजन्यः सन्नद्धो वीर्यं करोति। धात्रे पृषोद्रम्धस्तात्। प्रतिष्ठामेवेतां कुरुते। अथां इयं वै धाता। अस्यामेव प्रतिं तिष्ठति। सौर्यं बलक्षं पुच्छैं। उथ्सेधमेव तं कुरुते। तस्माद्थ्सेधं भये प्रजा अभिसङ्श्रंयन्ति॥९१॥

कुरुते ध्ते कुरुते पर्श्व च॥-----[२३]

साङ्ग्रहण्या चतुष्टय्यो यो वै यः पितुश्चत्वारो यथां निक्तं प्रजापंतये त्वा यथा प्रोक्षितं विभूरांह प्रजापंतिरकामयताश्वमेधेनं प्रजापंतिर्ने किश्चन सांवित्रमा ब्रह्मंन्य्रजापंतिर्देवैभ्यः प्रजापंती रक्षा १सि प्रजापंतिमीफ्सित विभूरंश्वनामान्यम्भा १स्येकयूपो राज्जंदालमेकवि १शो देवाः पुरुष्म् य्रोवि १शितः॥२३॥

साङ्ग्रहुण्या तस्मादश्वमेधयाजी यत्परिमिता यद्यंज्ञमुखे यो दीक्षां देवानेव त्रयं इमे सितायं प्राणापानावेवास्मिन्तस्माँद्राजुन्यं एकंनवतिः॥९१॥

साङ्ग्रहुण्या सङ्श्रंयन्ति॥

# हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके अष्टमः प्रपाठकः समाप्तः॥

#### ॥ नवमः प्रश्नः॥

#### ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके नवमः प्रपाठकः॥

प्रजापंतिरश्वमेधमंसृजत। सोंऽस्माथ्सृष्टोऽपांकामत्। तमंष्टाद्शिभिरनु प्रायुंङ्कः। तमांप्रोत्। तमाक्ष्वाऽष्टांद्शिभिरवां-रुन्ध। यदंष्टाद्शिनं आलुभ्यन्तें। यज्ञमेव तैराक्ष्वा यजंमानो-ऽवं रुन्धे। संवथ्सरस्य वा एषा प्रतिमा। यदंष्टाद्शिनंः। द्वादंशु मासाः पञ्चर्तवंः॥१॥

संव्थ्सरों ऽष्टाद्शः। यदेष्टाद्शिनं आलुभ्यन्तें। संव्थ्सरमेव तैराम्वा यजंमानोऽवं रुन्धे। अग्निष्ठें ऽन्यान्पशूनुंपाकरोतिं। इतरेषु यूपेंष्वष्टाद्शिनोऽजांमित्वाय। नवंनवालंभ्यन्ते सवीर्यत्वायं। यदांरुण्यैः सर्इस्थापयेंत्। व्यवंस्येतां पितापुत्रो। व्यध्वांनः क्रामेयुः। विदूरं ग्रामंयोर्ग्रामान्तौ स्यांताम्॥२॥

ऋक्षीकाः पुरुषव्याघ्राः पंरिमोषिणं आव्याधिनीस्तस्करा अरेण्येष्वाजांयेरन्। तदांहुः। अपेशवो वा एते। यदांर्ण्याः। यदांर्ण्येः सर्थस्थापयेत्। क्षिप्रे यजमानमरेण्यं मृत १ हरियुः। अरेण्यायतना ह्यांर्ण्याः पृशव इतिं। यत्पशून्नालभेत। अनंवरुद्धा अस्य पृशवंः स्युः। यत्पर्यग्निकृतानुथ्मुजेत्॥३॥

यज्ञवेशसं केर्यात्। यत्पशूनालभेते। तेनैव पृशूनवे रुन्धे। यत्पर्यग्निकृतानुथ्मृजत्ययंज्ञवेशसाय। अवंरुद्धा अस्य पृशवो भवन्ति। न यंज्ञवेशसम्भविति। न यजमान्मरंण्यं मृतः हंरन्ति। ग्राम्येः सः स्थापयिति। एते वै पृशवः क्षेमो नामं। सं पितापुत्राववंस्यतः। समध्वानः क्रामन्ति। स्मृन्तिकं ग्रामंयोर्ग्रामान्तौ भवतः। नक्षीकाः पुरुषव्याघ्राः पंरिमोषिणं आव्याधिनीस्तस्करा अरंण्येष्वाजांयन्ते॥४॥

प्रजापंतिरकामयतोभौ लोकाववं रुन्धीयेतिं। स एतानुभयाँन्पशूनंपश्यत्। ग्राम्या श्र्श्वांरण्या श्र्श्वं। तानालंभतः। तैर्वे स उभौ लोकाववां रुन्धः। ग्राम्येरेव पृशुभिरिमं लोकमवां रुन्धः। आर्ण्येरमुम्। यद्ग्राम्यान्पशूनालभेते। इममेव तैर्लोकमवं रुन्धे। यदांरण्यान्॥५॥

अमुं तैः। अनंवरुद्धो वा एतस्यं संवथ्सर इत्यांहुः। य इतइंतश्चातुर्मास्यानिं संवथ्सरं प्रयुङ्क इतिं। एतावान् वै संवथ्सरः। यचांतुर्मास्यानिं। यदेते चांतुर्मास्याः पृशवं आलुभ्यन्तैं। प्रत्यक्षंमेव तैः संवथ्सरं यजमानोऽवं रुन्धे। वि वा एष प्रजयां पृशुभिर्ऋध्यते। यः संवथ्सरं प्रयुङ्के। संवथ्सरः सुवर्गो लोकः॥६॥

सुवर्गं तु लोकं नापंराध्नोति। प्रजा वै प्शवं एकाद्शिनीं। यदेत ऐकादशिनाः पृशवं आलभ्यन्तें। साक्षादेव प्रजां पृशून् यजमानोऽवं रुन्थे। प्रजापंतिर्विराजमसृजत। सा सृष्टाऽश्वमेधं प्राविंशत्। तान्द्शिभिरनु प्रायुंङ्कः। तामाप्रोत्। तामाष्ट्रा द्शिभिरवारुन्ध। यद्द्शिनं आलुभ्यन्ते॥७॥

विराजमेव तैराह्वा यजमानोऽवं रुन्धे। एकांदश दृशत् आलंभ्यन्ते। एकांदशाक्षरा त्रिष्टुप्। त्रैष्टुंभाः पृशवंः। पृशूनेवावं रुन्धे। वैश्वदेवो वा अश्वंः। नानादेवत्याः पृशवं भवन्ति। अश्वंस्य सर्वृत्वायं। नानांरूपा भवन्ति। तस्मान्नानांरूपाः पृशवंः। बहुरूपा भवन्ति। तस्मांद्वहरूपाः पृशवः समृंद्धौ॥८॥ आर्ण्यां हो वे विश्वं आल्भ्यन्ते नानांरूपाः पृशवे हे वे॥——[२]

अस्मै वै लोकायं ग्राम्याः पृशव आलंभ्यन्ते। अमुष्मां आर्ण्याः। यद्ग्राम्यान्पृश्नृनालभेते। इममेव तैर्लोकमवं रुन्थे। यदांर्ण्यान्। अमुं तैः। उभयांन्पृश्नृनालंभते। गाम्या इश्चांर्ण्या इश्चं। उभयां लीक्योरवं रुद्धे। उभयां न्पृश्ना-लंभते॥ ९॥

ग्राम्या इश्वां रुण्या इश्वं। उभयंस्या न्ना द्यावं रु छै। उभयाँ न्युश्नालं भते। ग्राम्या इश्वां रुण्या इश्वं। उभयेषां पश्नामवं रु छै। त्रयं स्त्रयो भवन्ति। त्रयं इमे लोकाः। एषां लोकानामास्ये। ब्रह्मवादिनो वदन्ति। कस्मां ध्यत्यात्॥ १०॥

अस्मिँ होते। यथ्संमानीभ्यों देवताभ्योऽन्येंऽन्ये पृशवं आलुभ्यन्तें। अस्मिन्नेव तह्नोके कामान्दधाति। तस्माद्सिँ होके बहुवः कामाः। त्रयाणां त्रयाणाः सह वपा जुंहोति। त्र्यांवृतो व देवाः। त्र्यांवृत होने लोकाः। पृषां लोकानामात्र्ये। पृषां लोकानां कृत्यै।

# पर्यम्निकृतानारुण्यानुथ्मृंजुन्त्यहि ५ंसायै॥११॥

अवंरुद्धा उभयाँन्पृशूनालंभते सत्यादिहि रंसायै॥———[3]

युअन्तिं ब्रध्नमित्यांह। असौ वा आंदित्यो ब्रध्नः। आदित्यमेवास्मैं युनक्ति। अरुषमित्यांह। अग्निर्वा अरुषः। अग्निमेवास्मैं युनक्ति। चर्रन्तमित्यांह। वायुर्वे चरन्ं। वायुमेवास्मैं युनक्ति। परितस्थुष इत्यांह॥१२॥

ड्मे वै लोकाः परितस्थुषः। इमानेवास्मै लोकान् युनिक्ति। रोचेन्ते रोचना दिवीत्यांह। नक्षंत्राणि वै रोचना दिवि। नक्षंत्राण्येवास्मै रोचयित। युअन्त्यंस्य काम्येत्यांह। कामानेवास्मै युनिक्ति। हरी विपंक्षसेत्यांह। इमे वै हरी विपंक्षसा। इमे पुवास्मै युनिक्ति॥१३॥

शोणां धृष्णू नृवाह्सेत्यांह। अहोरात्रे वै नृवाहंसा। अहोरात्रे एवास्में युनिक्ता एता एवास्में देवतां युनिक्ता। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्ध्रे। केतुं कृण्वन्नंकेतव इति ध्वजं प्रतिमुश्चति। यशं एवैन् र राज्ञां गमयति। जीमूतंस्येव भवित् प्रतींकमित्यांह। यथायजुरेवैतत्। ये ते पन्थांनः सवितः पूर्व्यास् इत्यंध्वर्युर्यजमानं वाचयत्यभिजिंत्यै॥१४॥

परा वा एतस्यं यज्ञ एंति। यस्यं पृशुरुपाकृंतोऽन्यत्र वेद्या एति। एतः स्तोतरेतेनं पृथा पुन्रश्वमावंर्तयासि न् इत्यांह। वायुर्वे स्तोतां। वायुमेवास्यं पुरस्तांद्वधात्यावृंत्त्यै। यथा वै ह्विषों गृहीतस्य स्कन्दंति। एवं वा एतदश्वंस्य स्कन्दति। यदंस्योपाकृतस्य लोमानि शीयंन्ते। यद्वालेषु काचानावयंन्ति। लोमान्येवास्य तथ्सम्भंरन्ति॥१५॥

भूर्भुवः सुव्रितिं प्राजापृत्याभिरावयिन्त। प्राजापृत्यो वा अश्वः। स्वयैवैनं देवत्या समर्धयन्ति। भूरिति महिषी। भुव इति वावाता। सुव्रितिं परिवृक्ती। एषां लोकानांम्भिजिंत्यै। हिर्ण्ययाः काचा भवन्ति। ज्योतिर्वे हिरंण्यम्। राष्ट्रमंश्वमेधः॥१६॥

ज्योतिंश्चैवास्मै राष्ट्रं चं समीचीं दधाति। सहस्रं भवन्ति। सहस्रंसम्मितः सुवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्याभिजिंत्यै। अप वा एतस्मात्तेजं इन्द्रियं पृशवः श्रीः ऋांमन्ति। यौंऽश्वमेधेन यजंते। वसंवस्त्वाऽअन्तु गायत्रेण छन्दसेति महिष्यभ्यंनक्ति। तेजो वा आज्यम्। तेजों गायत्री। तेजंसैवास्मै तेजोऽवं रुन्थे॥१७॥

रुद्रास्त्वां अन्तु त्रैष्टुंभेन् छन्द्रसेतिं वावातां। तेजो वा आज्यम्। इन्द्रियं त्रिष्टुप्। तेजंसैवास्मां इन्द्रियमवं रुन्थे। आदित्यास्त्वां ऽअन्तु जागंतेन् छन्द्रसेतिं परिवृक्ती। तेजो वा आज्यम्। पृशवो जगंती। तेजंसैवास्में पृशूनवं रुन्थे। पत्नयो ऽभ्यं अन्ति। श्रिया वा पृतद्रूपम्॥१८॥

यत्पत्नयः। श्रियंमेवास्मिन्तद्दंधित। नास्मात्तेर्जं इन्द्रियं पुशवः श्रीरपं क्रामन्ति। लाजी(३)ञ्छाची(३)न् यशोमुमाँ(४) इत्यतिरिक्तमन्नमश्वायोपाहंरन्ति। प्रजामेवान्नादीं कुंवते। एतद्देवा अन्नमत्तैतदन्नमिद्ध प्रजापत् इत्यांह। प्रजायांमेवान्नाद्यं दधते। यदि नावृजिघ्रेंत्। अग्निः पृशुरांसीदित्यवंघ्रापयेत्। अवं हैव जिंघ्रति। आक्रान्ं वाजी क्रमैरत्यंक्रमीद्वाजी द्यौस्तें पृष्ठं पृथिवी स्थस्थमित्यश्वमनुमन्नयते। पृषां लोकानांम्भिजिंत्ये। समिद्धो अञ्चन्कृदंरं मतीनामित्यश्वंस्याप्रियों भवन्ति सरूपत्वायं॥१९॥

परिंतुस्थुष् इत्यांह्मे एवास्मै युनक्त्यभिजिंत्यै भरन्त्यश्वमेधो रुन्धे रूपिक्षंप्रति त्रीणिं च॥ [४]

तेजंसा वा एष ब्रंह्मवर्चसेन व्यृंद्धते। योंऽश्वमेधेन यजंते। होतां च ब्रह्मा चं ब्रह्मोद्यं वदतः। तेजंसा चैवैनं ब्रह्मवर्चसेनं च समर्धयतः। दक्षिणतो ब्रह्मा भवति। दक्षिणतआयतनो वे ब्रह्मा। बार्ह्स्पत्यो वे ब्रह्मा। ब्रह्मवर्चसमेवास्यं दक्षिणतो दंधाति। तस्मादक्षिणोऽधीं ब्रह्मवर्चसितंरः। उत्तरतो होतां भवति॥२०॥

उत्तर्तआंयतनो वै होतां। आग्नेयो वै होतां। तेजो वा अग्निः। तेजं एवास्योत्तर्तो दंधाति। तस्मादुत्तरो- ऽर्धस्तेजस्वितंरः। यूपंमभितो वदतः। यज्मानदेवत्यो वै यूपंः। यजंमानमेव तेजंसा च ब्रह्मवर्चसेनं च् समर्धयतः। किङ् स्विदासीत्पूर्विचित्तिरित्यांह। द्यौर्वे वृष्टिः पूर्विचित्तिः॥२१॥

दिवंमेव वृष्टिमवं रुन्धे। कि स्वंदासीद्भृहद्वय

इत्यांह। अश्वो वै बृहद्वयः। अश्वमेवावं रुन्थे। किश् स्विदासीत्पिशङ्गिलेत्यांह। रात्रिर्वे पिशङ्गिला। रात्रिमेवावं रुन्थे। किश् स्विदासीत्पिलिप्पिलेत्यांह। श्रीर्वे पिलिप्पिला। अन्नाद्यमेवावं रुन्थे॥२२॥

कः स्विदेकाकी चर्तीत्याह। असौ वा आंदित्य एकाकी चरित। तेजं एवावं रुन्धे। क उस्विज्ञायते पुन्रित्याह। चन्द्रमा वै जायते पुनः। आयुरेवावं रुन्धे। कि स्विद्धिमस्यं भेषजमित्यांह। अग्निर्वे हिमस्यं भेषजम्। ब्रह्मवर्चसमेवावं रुन्धे। कि स्विदावपंनं महदित्यांह॥२३॥

अयं वै लोक आवर्पनं महत्। अस्मिन्नेव लोके प्रतिं तिष्ठति। पृच्छामिं त्वा पर्मन्तं पृथिव्या इत्याह। वेदिवें परो-ऽन्तः पृथिव्याः। वेदिमेवावं रुन्थे। पृच्छामिं त्वा भुवंनस्य नाभिमित्याह। यज्ञो वै भुवंनस्य नाभिः। यज्ञमेवावं रुन्थे। पृच्छामिं त्वा वृष्णो अश्वंस्य रेत इत्याह। सोमो वै वृष्णो अश्वंस्य रेतः। सोमपीथमेवावं रुन्थे। पृच्छामिं वाचः पंरमं व्योमेत्याह। ब्रह्म वै वाचः पंरमं व्योम। ब्रह्मवर्च्समेवावं रुन्थे॥२४॥

होतां भवित वे वृष्टिः पूर्वचित्तिरन्नाद्यमेवावं रुन्धे महिदत्यांह् सोमो वे वृष्णो अश्वंस्य रेतंश्चत्वारिं

च॥-----[५]

अप वा एतस्मौत्राणाः क्रांमन्ति। यौंऽश्वमेधेन् यजंते। प्राणाय स्वाहौं व्यानाय स्वाहेतिं संज्ञुप्यमान् आहुंतीर्जुहोति। प्राणानेवास्मिन्दधाति। नास्मौत्प्राणा अपंक्रामन्ति। अवन्तीः स्थावन्तीस्त्वाऽवन्तु। प्रियं त्वौ प्रियाणौम्। वर्षिष्टमाप्यांनाम्। निधीनां त्वां निधिपति ह हवामहे वसो ममेत्यांह। अपैवास्मै तद्भुंवते॥२५॥

अथों धुवन्त्येवैनम्। अथो न्येवास्मैं हुवते। त्रिः परियन्ति। त्रयं इमे लोकाः। एभ्य एवैनं लोकेभ्यों धुवते। त्रिः पुनः परियन्ति। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतुभिरेवैनं धुवते। अप वा एतेभ्यः प्राणाः क्रांमन्ति॥२६॥

ये यज्ञे धुवंनं तन्वतें। नुवकृत्वः परियन्ति। नव वै पुरुषे प्राणाः। प्राणानेवाऽऽत्मन्दंधते। नैभ्यः प्राणा अपेक्रामन्ति। अम्बे अम्बाल्यम्बिक् इति पत्नीमुदानंयति। अह्वंतैवैनाम्। सुभगे काम्पीलवासिनीत्याह। तपं पुवैनामुपंनयति। सुवर्गे लोके सम्प्रोर्ण्वांथामित्यांह॥२७॥

सुवर्गमेवेनां लोकं गंमयति। आऽहमंजानि गर्भधमा त्वमंजाऽसि गर्भधमित्यांह। प्रजा वै प्रशवो गर्भः। प्रजामेव प्रशूनात्मन्धंत्ते। देवा वा अंश्वमेधे पर्वमाने। सुवर्गं लोकं न प्राजानन्। तमश्वः प्राजानात्। यथ्सूचीभिरसिप्थान्कल्पयंन्ति। सुवर्गस्यं लोकस्य प्रज्ञात्यै। गायत्री त्रिष्टुङग्तीत्यांह॥२८॥

यथायजुरेवैतत्। त्रय्यः सूच्यों भवन्ति। अयस्मय्यों रज्ता

हरिण्यः। अस्य वै लोकस्यं रूपमंयस्मय्यंः। अन्तरिक्षस्य रज्ञताः। दिवो हरिण्यः। दिशो वा अयस्मय्यंः। अवान्त्रदिशा रंज्ताः। ऊर्ध्वा हरिण्यः। दिशं पुवास्मै कल्पयति। कस्त्वां छाति कस्त्वा विशास्तीत्याहाहि रसायै॥२९॥

ह्रुवते ऋाम्न्त्यूर्ण्वाथामित्यांह् जगतीत्यांह कल्पयत्येकं च॥————[६]

अप वा पृतस्माच्छ्री राष्ट्रं ऋांमित। याँऽश्वमेधेन् यजंते। ऊर्ध्वामेनामुच्छ्रंयतादित्यांह। श्रीर्वे राष्ट्रमंश्वमेधः। श्रियंमेवास्में राष्ट्रमूर्ध्वमुच्छ्रंयित। वेणुभारिङ्गराविवेत्यांह। राष्ट्रं वै भारः। राष्ट्रमेवास्मे पर्यूहिति। अथास्या मध्यंमेधतामित्यांह। श्रीर्वे राष्ट्रस्य मध्यम्॥३०॥

श्रियंमेवावं रुन्थे। शीते वातें पुनन्निवेत्यांह। क्षेमो वै राष्ट्रस्यं शीतो वातः। क्षेमंमेवावं रुन्थे। यद्धंरिणी यवमत्तीत्यांह। विड्वे हंरिणी। राष्ट्रं यवः। विशं चैवास्मैं राष्ट्रं चं स्मीचीं दधाति। न पुष्टं पृशु मन्यत् इत्यांह। तस्माद्राजां पृशून्न पुष्यंति॥३१॥

शूद्रा यदर्यजारा न पोषांय धनायतीत्यांह। तस्माँद्वैशीपुत्रं नाभिषिश्चन्ते। इयं यका शंकुन्तिकेत्यांह। विड्वे शंकुन्तिका। राष्ट्रमश्वमेधः। विशं चैवास्में राष्ट्रं चं समीचीं दधाति। आहलमिति सर्पतीत्यांह। तस्माँद्राष्ट्राय विशं सर्पन्ति। आहंतं गुभे पस् इत्यांह। विड्वे गर्भः॥३२॥ राष्ट्रं पसंः। राष्ट्रमेव विश्याहंन्ति। तस्माँद्राष्ट्रं विशं घातुंकम्। माता चं ते पिता चं त इत्यांह। इयं वे माता। असौ पिता। आभ्यामेवैनं परिंददाति। अग्रं वृक्षस्यं रोहत इत्यांह। श्रीवैं वृक्षस्याग्रम्। श्रियंमेवावं रुन्धे॥३३॥

प्रसृंलामीति ते पिता गुभे मुष्टिमंत एसयदित्यांह। विश्वे गर्भः। राष्ट्रं मुष्टिः। राष्ट्रमेव विश्वयाहंन्ति। तस्माँद्राष्ट्रं विश्वं घातुं कम्। अप वा एतेभ्यः प्राणाः क्रांमन्ति। ये युज्ञे ऽपूतं वदंन्ति। दुधिकाळणों अकारिष्मितिं सुरिभमतीमृचं वदन्ति। प्राणा वै सुर्भयः। प्राणानेवाऽऽत्मन्दं धते। नैभ्यः प्राणा अपंक्रामन्ति। आपो हि ष्ठा मंयोभुव इत्यद्भिर्मार्जयन्ते। आपो वै सर्वां देवताः। देवतांभिरेवात्मानं पवयन्ते॥३४॥

राष्ट्रस्य मध्यं पुर्ष्यति गभों रुन्धे दधते चृत्वारिं च॥————[७]

प्रजापंतिः प्रजाः सृष्ट्वा प्रेणाऽनु प्राविशत्। ताभ्यः पुनः सम्भवितुं नाशंक्रोत्। सौंऽब्रवीत्। ऋध्रवृदिथ्सः। यो मेतः पुनः सम्भर्दिति। तं देवा अश्वमेधेनैव सम्भरन्। ततो वे त आध्रवन्। योंऽश्वमेधेन् यजंते। प्रजापंतिमेव सम्भरत्यृध्नोतिं। पुरुषमालंभते॥३५॥

वैराजो वै पुरुषः। विराजमिवार्लभते। अथो अन्नं वै विराट्। अन्नमेवार्व रुन्थे। अश्वमार्लभते। प्राजापत्यो वा अर्थः। प्रजापंतिमेवार्लभते। अथो श्रीर्वा एकंशफम्। श्रियंमेवार्व रुन्थे। गामार्लभते॥३६॥ यज्ञो वै गौः। यज्ञमेवार्लभते। अथो अन्नं वै गौः। अन्नमेवार्वं रुन्थे। अजावी आर्लभते भूम्ने। अथो पृष्टिर्वे भूमा। पृष्टिमेवार्वं रुन्थे। पर्यग्निकृतं पुरुषं चारण्या इक्षोध्सृंजन्त्यिहि सायै। उभौ वा एतौ पृश् आर्लभ्येते। यश्चांवमो यश्चं पर्मः। तेंऽस्योभयं यज्ञे बृद्धाः। अभीष्टां अभिप्रीताः। अभिजिता अभिह्नंता भवन्ति। नैनं दृङ्क्ष्वंः पृशवों यज्ञे बृद्धाः। अभीष्टां अभिप्रीताः। अभिजिता अभिह्नंता हि सन्ति। योंऽश्वमेधेन यज्ञंते। य उं चैनमेवं वेदं॥३७॥

लुभुते गामालंभते परुमों ऽष्टौ चं॥

**-**[८]

प्रथमेन वा एष स्तोमेन राध्वा। चतुष्टोमेनं कृतेनायांनामुत्तरेहन्। एकविश्शे प्रतिष्ठायां प्रति तिष्ठति। एकविश्शात्प्रतिष्ठायां ऋतूनन्वारोहित। ऋतवो वै पृष्ठानि। ऋतवेः संवथ्सरः। ऋतुष्वेव संवथ्सरे प्रतिष्ठायं। देवतां अभ्यारोहित। शक्वरयः पृष्ठं भवन्त्यन्यदेन्यच्छन्देः। अन्यैऽन्ये वा एते पशव आलंभ्यन्ते॥३८॥

उतेवं ग्राम्याः। उतेवांरण्याः। अहंरेव रूपेण समर्धयति। अथो अह्नं एवैष बृलिर्ह्वियते। तदांहुः। अपंशवो वा एते। यदंजावयंश्चारण्याश्चं। एते वै सर्वे पृशवंः। यद्गव्या इतिं। गृव्यान्पृशूनुंत्तमेऽहुं नालभते॥३९॥

तेनैवोभयाँन्पृशूनवं रुन्धे। प्राजापृत्या भंवन्ति। अनंभिजितस्याभिजिंत्यै। सौरीर्नवं श्वेता वृशा अंनूबन्ध्यां भवन्ति। अन्त्त एव ब्रंह्मवर्चसमवं रुन्धे। सोमांय स्वराज्ञें ऽनोवाहावं नुङ्घाहावितिं द्वन्द्वनः पृश्वनालं भते। अहोरात्राणां मृभिजिंत्ये। पृशुभिवां एष व्यृध्यते। यों ऽश्वमेधेन् यजंते। छुगुलं कृल्माषं किकिदीविं विदीगयमितिं त्वाष्ट्रान्पशूना लंभते। पृशुभिरेवात्मान् समर्धयित। ऋतुभिवां एष व्यृध्यते। यों ऽश्वमेधेन् यजंते। पिशङ्गास्त्रयों वासन्ता इत्यृंतुपृशूनालंभते। ऋतुभिरेवात्मान् समर्धयित। आ वा एष पृशुभ्यों वृक्ष्यते। यों ऽश्वमेधेन् यजंते। पर्यग्निकृता उथ्यृंजन्त्यनां वृक्ष्यते। यों ऽश्वमेधेन् यजंते। पर्यग्निकृता

लुभ्यन्ते लुभुते त्वाष्ट्रान्पृश्नालंभतेऽष्टौ चं॥———[९]

प्रजापंतिरकामयत महानंत्रादः स्यामिति। स प्तावंश्वम्धे मंहिमानांवपश्यत्। तावंगृह्णीत। ततो वै स महानंत्रादों- ऽभवत्। यः कामयेत महानंत्रादः स्यामिति। स प्तावंश्वम्धे मंहिमानौं गृह्णीत। महानेवात्रादो भंवति। यज्ञमानदेवत्यां वै वपा। राजां महिमा। यद्धपां मंहिम्रोभ्यतः परियजंति। यज्जमानमेव राज्येनोभ्यतः परिगृह्णाति। पुरस्तां अस्वाहाकारा वा अन्ये देवाः। उपरिष्टाध्स्वाहाकारा अन्ये। ते वा पृतेऽश्वं पृव मेध्यं उभयेऽवंरुध्यन्ते। यद्धपां मंहिम्रोभ्यतः परियजंति। तानेवोभयांन्त्रीणाति॥४१॥

परियर्जित षद्वं॥------[१०]

वैश्वदेवो वा अश्वः। तं यत्प्रांजापृत्यं कुर्यात्। या

देवता अपिभागाः। ता भागधेयेन व्यर्धयेत्। देवताभ्यः समदं दध्यात्। स्तेगान्दङ्ष्ट्राभ्यां मृण्डूकां जम्भ्येभिरिति। आज्येमवदानं कृत्वा प्रतिसङ्ख्यायमाहुतीर्जुहोति। या एव देवता अपिभागाः। ता भागधेयेन समर्धयति। न देवताभ्यः समदं दधाति॥४२॥

चतुंर्दशैतानंनुवाकाञ्जंहोत्यनंन्तरित्यै। प्रयासाय स्वाहेतिं पश्चदशम्। पश्चदश् वा अर्धमासस्य रात्रयः। अर्धमासशः संवथ्सर आप्यते। देवासुराः संयंत्ता आसन्। तेंऽब्रुवन्नग्नयः स्विष्टकृतः। अर्श्वस्य मेध्यंस्य वयमुंद्धारमुद्धंरामहै। अथैतान्भि भंवामेतिं। ते लोहिंत्मुदंहरन्त। ततों देवा अभंवन्॥४३॥

पराऽसुंराः। यथ्स्वंष्टकृद्धो लोहितं जुहोति भ्रातृंव्याभिभूत्ये। भवंत्यात्मनां। परांऽस्य भ्रातृंव्यो भवति। गोमृग्कुण्ठेनं प्रथमामाहुंतिं जुहोति। पृशवो वै गोंमृगः। रुद्रोंऽग्निः स्विष्टकृत्। रुद्रादेव पृशूनन्तर्दधाति। अथो यत्रैषाऽऽहुंतिरहूयतें। न तत्रं रुद्रः पृशून्भिमंन्यते॥४४॥

अश्वश्रफेनं द्वितीयामाहुंतिं जुहोति। पृशवो वा एकंशफम्। रुद्रोंऽग्निः स्विष्टकृत्। रुद्रादेव पृश्ननन्तर्दधाति। अथो यत्रैषा-ऽऽहुंतिर्हूयतें। न तत्रं रुद्रः पृश्नन्भिमंन्यते। अयुस्मयेन कमण्डलुंना तृतीयांम्। आहुंतिं जुहोत्यायास्यों वै प्रजाः।

रुद्रौँऽग्निः स्विष्टकृत्। रुद्रादेव प्रजा अन्तर्दधाति। अथो यत्रैषाऽऽहुतिर्ह्यते। न तत्र रुद्रः प्रजा अभिमन्यते॥४५॥ द्यात्यर्भवन्मन्यते प्रजा अन्तर्दधाति हे चं॥————[११]

अश्वंस्य वा आलंब्यस्य मेध् उदंक्रामत्। तदंश्वस्तोमीयं-मभवत्। यदंश्वस्तोमीयं जुहोतिं। समेधमेवेनमालंभते। आज्यंन जुहोति। मेधो वा आज्यम्। मेधोंऽश्वस्तोमीयम्। मेधेनैवास्मिन्मेधं दधाति। षद्गिरंशतं जुहोति। षद्गिरंशदक्षरा बृहती॥४६॥

बार्हताः पृशवंः। सा पंशूनां मात्रां। पृशूनेव मात्रंया समर्थयति। तायद्भूयंसीर्वा कनींयसीर्वा जुहुयात्। पृशून्मात्रंया व्यर्धयेत्। षद्भिर्शतं जुहोति। षद्भिर्श्यदक्षरा बृह्ती। बार्हताः पृशवंः। सा पंशूनां मात्रां। पृशूनेव मात्रंया समर्थयति॥४७॥

अश्वस्तोमीय हुत्वा द्विपदां जुहोति। द्विपाद्वे पुरुषो द्विप्रंतिष्ठः। तदेनं प्रतिष्ठया समर्धयति। तदांहुः। अश्वस्तोमीयं पूर्व होत्व्याँ(३)न्द्विपदा(३) इति। अश्वो वा अश्वस्तोमीयम्। पुरुषो द्विपदाः। अश्वस्तोमीय हुत्वा द्विपदां जुहोति। तस्मांद्विपाच तुंष्पादमत्ति। अथौं द्विपद्येव चतुंष्पदः प्रतिष्ठायपति। द्विपदां हुत्वा। नान्यामुत्तं रामाहुंतिं जुहुयात्। यदन्यामुत्तं रामाहुंतिं जुहुयात्। प्रप्रंतिष्ठायां श्वयवेत।

## द्विपदां अन्तुतो जुंहोति प्रतिष्ठित्यै॥४८॥

बृहुत्यंर्धयति स्थापयति पश्चं च॥———[१२]

प्रजापंतिरश्वमेधमंसृजत। सौंऽस्माथ्सृष्टोऽपांकामत्। तं यंज्ञकृतुभिरन्वैंच्छत्। तं यंज्ञकृतुभिर्नान्वंविन्दत्। तिमिष्टिंभिरन्वैंच्छत्। तिमिष्टिंभिरन्वंविन्दत्। तिदिष्टींनािमिष्टित्वम्। यथ्संवथ्सरमिष्टिंभिर्यजंते। अश्वंमेव तदन्विंच्छति। सावित्रियों भवन्ति॥४९॥

इयं वै संविता। यो वा अस्यान्नश्यंति यो निलयंते। अस्यां वाव तं विन्दन्ति। न वा इमां कश्चनेत्यांहुः। तिर्यङ्गोर्ध्वोत्यंतुमर्ह्तीतिं। यथ्सांवित्रियो भवंन्ति। स्वितृ-प्रंसूत एवैनंमिच्छति। ईश्वरो वा अश्वः प्रमुक्तः परौं परावतं गन्तौः। यथ्सायं धृतींर्जुहोतिं। अश्वंस्यैव यत्यै धृत्यै॥५०॥

यत्प्रातिरिष्टिंभिर्यजंते। अश्वंमेव तदिन्वंच्छिति। यथ्मायं धृतींर्जुहोति। अश्वंस्य यत्यै धृत्यैं। तस्मांथ्सायं प्रजाः क्षेम्यां भवन्ति। यत्प्रातिरिष्टिंभिर्यजंते। अश्वंमेव तदिन्वंच्छिति। तस्मादिवां नष्टेष एति। यत्प्रातिरिष्टिंभिर्यजंते सायं धृतींर्जुहोतिं। अहोरात्राभ्यांमेवेन्मिन्वंच्छिति। अथों अहोरात्राभ्यांमेवासमें योगक्षेमं केल्पयित॥५१॥

भृवन्ति धृत्यां एन्मन्विंच्छुत्येकं च॥----[१३]

अप वा एतस्माच्छ्री राष्ट्रं ऋामिति। योंऽश्वमेधेन यजेते। ब्राह्मणो वीणागाथिनौ गायतः। श्रिया वा एतद्रूपम्। यद्वीणां। श्रियंमेवास्मिन्तद्धंत्तः। यदा खलु वै पुरुषः श्रियंमश्जुते। वीणाँऽस्मै वाद्यते। तदांहुः। यदुभौ ब्राँह्मणौ गायंताम्॥५२॥

प्रभःशुंकास्माच्छीः स्यात्। न वै ब्राँह्मणे श्री रंमत् इति। ब्राह्मणाँ उन्यो गायेत्। राजन्यों उन्यः। ब्रह्म वै ब्राँह्मणः। क्षत्रः राजन्यः। तथां हास्य ब्रह्मणा च क्षत्रेणं चोभ्यतः श्रीः परिगृहीता भवति। तदांहुः। यदुभौ दिवा गायेताम्। अपाँस्माद्राष्ट्रं क्रांमेत्॥५३॥

न वै ब्राँह्मणे राष्ट्र रंमत् इतिं। यदा खलु वै राजां कामयंते। अर्थ ब्राह्मणं जिनाति। दिवाँ ब्राह्मणो गांयेत्। नक्त राजन्यः। ब्रह्मणो वै रूपमहंः। क्षत्रस्य रात्रिः। तथां हास्य ब्रह्मणा च क्षत्रेणं चोभ्यतो राष्ट्रं परिगृहीतं भवति। इत्यंददा इत्यंयजथा इत्यंपच इतिं ब्राह्मणो गायेत्। इष्टापूर्तं वे ब्राँह्मणस्यं॥५४॥

ड्ष्टापूर्तेनैवेन् स समर्धयित। इत्यंजिना इत्यंयुध्यथा इत्यमु संङ्गाममंहिन्निति राजन्यः। युद्धं व राजन्यंस्य। युद्धेनैवेन् स समर्धयित। अक्रुप्ता वा एतस्यर्तव इत्यांहुः। योऽश्वमेधेन् यजंत इति। तिस्रोंऽन्यो गायंति तिस्रोंऽन्यः। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवः। ऋतूनेवास्में कल्पयतः। ताभ्या स् सङ्स्थायाम्। अनोयुक्ते च शते च ददाति। श्तायुः पुरुषः श्तेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रति तिष्ठति॥५५॥

गार्येताङ्कामेद्वाह्मणस्यं कल्पयतश्चत्वारिं च॥\_\_\_\_\_\_\_[

सर्वेषु वा एषु लोकेषुं मृत्यवोऽन्वायंत्ताः। तेभ्यो यदाहुंतीर्न जुंहुयात्। लोकेलोक एनं मृत्युर्विन्देत्। मृत्यवे स्वाहां मृत्यवे स्वाहेत्यंभिपूर्वमाहुंतीर्जुहोति। लोकाल्लोकादेव मृत्युमवंयजते। नैनं लोकेलोके मृत्युर्विन्दित। यदमुष्मे स्वाहाऽमुष्मे स्वाहेति जुह्वंथ्मश्रक्षीत। बहुं मृत्युम्मित्रं कुर्वीत। मृत्यवे स्वाहेत्येकंस्मा एवकां जुहुयात्। एको वा अमुष्मिंलोके मृत्युः॥५६॥

अशन्या मृत्युरेव। तमेवामुष्मिं ह्लोके ऽवंयजते। भ्रूणहृत्यायै स्वाहेत्यंवभृथ आहुंतिं जुहोति। भ्रूणहृत्यामेवावं यजते। तदांहुः। यद्भूणहृत्या पात्र्याऽथं। कस्मां द्यज्ञेऽपिं क्रियत् इतिं। अमृत्युर्वा अन्यो भ्रूणहृत्याया इत्यांहुः। भ्रूणहृत्या वाव मृत्युरितिं। यद्भूणहृत्यायै स्वाहेत्यंवभृथ आहुंतिं जुहोतिं॥५७॥

मृत्युमेवाऽऽहुंत्या तर्पयित्वा पंरिपाणं कृत्वा। भ्रूण्घ्रे भेषजं कंरोति। एता॰ हु वै मृण्डिभ औदन्यवः। भ्रूण्हृत्याये प्रायंश्चित्तिं विदां चंकार। यो हास्यापि प्रजायां ब्राह्मण॰ हन्तिं। सर्वस्मै तस्मै भेषजं कंरोति। जुम्बकाय स्वाहेत्यंवभृथ उंत्तमामाहुंतिं जुहोति। वर्रुणो वै जुम्बकः। अन्तृत एव वर्रुण्मवयजते। खुलुतेर्विक्रिथस्यं शुक्रस्यं पिङ्गाक्षस्यं मूर्धं जुंहोति। एतद्वै वर्रुणस्य रूपम्। रूपेणैव वर्रुणमवयजते॥५८॥

लोके मृत्युर्जुहोतिं मूर्धं जुंहोति द्वे चं॥————[१५]

वारुणो वा अश्वंः। तं देवतंया व्यर्धयति। यत्प्रांजापृत्यं करोति। नमो राज्ञे नमो वरुणायेत्यांह। वारुणो वा अश्वंः। स्वयैवैनं देवतंया समर्धयति। नमोऽश्वांय नमंः प्रजापंतय इत्यांह। प्राजापत्यो वा अश्वंः। स्वयैवैनं देवतंया समर्धयति। नमोऽधिपतय इत्यांह॥५९॥

धर्मो वा अधिपतिः। धर्ममेवावं रुन्धे। अधिपतिर्स्यधिपतिं मा कुर्वधिपतिरहं प्रजानां भूयासमित्यांह। अधिपतिमेवेन रे समानानां करोति। मां धेहि मियं धेहीत्यांह। आशिषं-मेवेतामाशांस्ते। उपाकृंताय स्वाहेत्युपाकृंते जुहोति। आलंब्धाय स्वाहेति नियुंक्ते जुहोति। हुताय स्वाहेतिं हुते जुंहोति। एषां लोकानांम्भिजिंत्यै॥६०॥

प्र वा एष एभ्यो लोकेभ्यंश्च्यवते। योंऽश्वमेधेन यजंते। आग्नेयमैंन्द्राग्नमांश्विनम्। तान्पशूनालंभते प्रतिष्ठित्यै। यदांग्नेयो भवंति। अग्निः सर्वा देवताः। देवतां एवावं रुन्थे। ब्रह्म वा अग्निः। क्षुत्रमिन्द्रंः। यदैन्द्राग्नो भवंति॥६१॥

ब्रह्मक्षत्रे एवावं रुन्धे। यदांश्विनो भवंति। आशिषामवंरुद्धे। त्रयो भवन्ति। त्रयं इमे लोकाः। एष्वंव लोकेषु प्रतिं तिष्ठति। अग्नयेऽ रहोमुचेऽष्टाकंपाल इति दशंहिवष्मिष्टिं निर्वपित। दशांक्षरा विराट्। अन्नं विराट्। विराजैवान्नाद्यमवं रुन्थे। अग्नेर्मन्वे प्रथमस्य प्रचेतस् इतिं याज्यानुवाक्यां भवन्ति सर्वत्वायं॥६२॥

अधिपतय इत्यांहाभिंजित्या ऐन्द्राग्नो भवंति रुन्ध् एकं च॥———[१६]

यद्यश्वमुप्तपंद्विन्देत्। आग्नेयमृष्टाकंपालं निर्वपेत्। सौम्यं चरुम्। सावित्रमृष्टाकंपालम्। यदाँग्नेयो भवंति। अग्निः सर्वा देवताः। देवतांभिरेवेनं भिषज्यति। यथ्सौम्यो भवंति। सोमो वा ओषंधीना राजाः। याभ्यं एवेनं विन्दति॥६३॥

ताभिरेवैनं भिषज्यति। यथ्सांवित्रो भवंति। स्वितृप्रंसूत एवैनं भिषज्यति। एताभिरेवैनं देवतांभिर्भिषज्यति। अगदो हैव भंवति। पौष्णां चरुं निर्वपेत्। यदिं श्लोणः स्यात्। पूषा वै श्लौण्यंस्य भिषक्। स एवैनं भिषज्यति। अश्लोणो हैव भंवति॥६४॥

रौद्रं चुरुं निर्विपेत्। यदिं महुती देवतांऽभिमन्येत।
एत्द्देवत्यों वा अश्वः। स्वयैवैनं देवत्या भिषज्यति।
अगदो हैव भवति। वैश्वानुरं द्वादेशकपालं निर्विपेन्मृगाख्रे
यदि नागच्छैत्। इयं वा अग्निवैश्वानुरः। इयमेवैनंमुर्चिभ्यां
परिरोधमानंयति। आहैव सुत्यमहंर्गच्छति। यद्यंधीयात्॥६५॥

अग्नयेऽ रहोमुचेऽष्टाकंपालः। सौर्यं पर्यः। वायव्यं आज्यंभागः। यजंमानो वा अश्वः। अरहंसा वा एष गृहीतः। यस्याश्वो मेधांय प्रोक्षितोऽध्येति। यद रहोमुचें निर्वपंति। अरहंस एव तेनं मुच्यते। यजंमानो वा अश्वः। रतंसा वा एष व्यृध्यते॥६६॥

यस्याश्वो मेधांय प्रोक्षिंतोऽध्येतिं। सौर्य रेतः। यथ्सौर्यं पयो भवंति। रेतंसैवेन् स् समर्धयित। यजंमानो वा अश्वः। गर्भैर्वा एष व्यृध्यते। यस्याश्वो मेधांय प्रोक्षिंतोऽध्येतिं। वायव्यां गर्भाः। यद्वांयव्यं आज्यंभागो भवंति। गर्भेरेवेन् स समर्धयिति। अथो यस्यैषाऽश्वंमेधे प्रायंश्वित्तः क्रियतें। इष्ट्वा वसींयान्भवति॥६७॥

विन्दत्यश्लोणो हैव भंवत्यधीयादंध्यते गर्भेरेवैन् स समर्धयति द्वे चं॥———[१७]

तदांहुः। द्वादंश ब्रह्मौद्नान्थ्स इस्थिते निर्वपत्। द्वाद्शिभवें विष्टिभियं जेति। यदिष्टिभियं जेत। उपनामुंक एनं यज्ञः स्यात्। पापीया इस्तु स्यात्। आप्तानि वा एतस्य छन्दा स्मि। य ईजानः। तानि क एतावंदाशु पुनः प्रयं जीतेति। सर्वा वै स इस्थिते यज्ञे वागांप्यते॥६८॥

साप्ता भंवति यातयाँम्नी। ऋरीकृतेव हि भवत्यरुष्कृता। सा न पुनः प्रयुज्येत्यांहुः। द्वादंशैव ब्रंह्मौदनान्थ्सङ्स्थिंते निर्वपेत्। प्रजापंतिर्वा ओंदनः। युज्ञः प्रजापंतिः। उपनामुंक एनं युज्ञो भेवति। न पापीयान्भवति। द्वादेश भवन्ति। द्वादेशमासाः संवथ्सरः। संवथ्सर एव प्रतिं तिष्ठति॥६९॥

आप्यते संबुध्सर एकं च॥----[१८]

पृष वै विभूनामं युज्ञः। सर्वर् हु वै तत्रं विभु भंवति। यत्रैतेनं युज्ञेन यजंन्ते। पृष वै प्रभूनामं युज्ञः। सर्वर् हु वै तत्रं प्रभु भंवति। यत्रैतेनं युज्ञेन यजंन्ते। पृष वा ऊर्जस्वान्नामं युज्ञः। सर्वर् हु वै तत्रोर्जस्वद्भवति। यत्रैतेनं युज्ञेन यजंन्ते। पृष व पर्यस्वान्नामं युज्ञः॥७०॥

सर्वर् हु वै तत्र पर्यस्वद्भवति। यत्रैतेनं युज्ञेन् यर्जन्ते। एष वै विधृतो नामं युज्ञः। सर्वर् हु वै तत्र विधृतं भवति। यत्रैतेनं युज्ञेन् यर्जन्ते। एष वै व्यावृत्तो नामं युज्ञः। सर्वर् हु वै तत्र व्यावृत्तो भवति। यत्रैतेनं युज्ञेन् यर्जन्ते। एष वै प्रतिष्ठितो नामं युज्ञः। सर्वर् ह वै तत्र प्रतिष्ठितं भवति॥७१॥

यत्रैतनं यज्ञेन यजंन्ते। एष वै तेंज्ञस्वी नामं य्ज्ञः। सर्व ह वै तत्रं तेज्ञस्वि भंवति। यत्रैतनं यज्ञेन यजंन्ते। एष वै ब्रह्मवर्च्सी नामं य्ज्ञः। आ ह तत्रं ब्राह्मणो ब्रह्मवर्च्सी जांयते। यत्रैतेनं य्ज्ञेन यजंन्ते। एष वा अंतिव्याधी नामं य्ज्ञः। आ ह वै तत्रं राज्ञन्योंऽतिव्याधी जांयते। यत्रैतेनं य्ज्ञेन यजंन्ते। एष वै दीर्घो नामं य्ज्ञः। दीर्घायुंषो ह वै तत्रं मनुष्यां भवन्ति। यत्रैतेनं य्ज्ञेन यजंन्ते। एष वै क्रुप्तो नामं य्ज्ञः। कल्पंते ह वै तत्रं प्रजाभ्यों योगक्षेमः। यत्रैतेनं य्ज्ञेन

#### यजंन्ते॥७२॥

पर्यस्वान्नामं युज्ञः प्रतिष्ठितं भवति यत्रैतेनं युज्ञेन् यर्जन्ते षट्वं (एष वै विभूः प्रभूरूर्जस्वान्पर्यस्वान् विधृतो व्यावृत्तः प्रतिष्ठितस्तेजस्वी ब्रह्मवर्चस्यतिव्याधी दीर्घः क्रुप्तो द्वादंश॥)॥———[१९]

तार्प्येणाश्वर् संज्ञंपयन्ति। यज्ञो वै तार्प्यम्। यज्ञेनैवैन्र् समंध्यन्ति। यामेन् साम्ना प्रस्तोताऽनूपंतिष्ठते। यमुलोकमेवैनं गमयति। तार्प्ये चं कृत्यधीवासे चाश्वर् संज्ञंपयन्ति। एतद्वे पंशूनार रूपम्। रूपेणैव पृशूनवं रुन्थे। हिर्ण्यकृशिपु भवति। तेजुसोऽवंरुद्धे॥७३॥

रुक्मो भंवति। सुवर्गस्यं लोकस्यानुंख्यात्यै। अश्वीं भवति। प्रजापंतेराप्त्यै। अस्य वै लोकस्यं रूपन्तार्प्यम्। अन्तरिक्षस्य कृत्यधीवासः। दिवो हिरण्यकशिपु। आदित्यस्यं रुक्मः। प्रजापंतेरश्वः। इममेव लोकन्तार्प्यणाप्तोति॥७४॥

अन्तरिक्षं कृत्यधीवासेनं। दिवर्ं हिरण्यकशिपुनां। आदित्यर रुक्नेणं। अश्वेंनैव मेध्येन प्रजापंतेः सायुंज्यर सलोकतांमाप्नोति। एतासांमेव देवतांनार् सायुंज्यम्। सार्षितारं समानलोकतांमाप्नोति। योंऽश्वमेधेन यजंते। य उं चैनमेवं वेदं॥७५॥

अवंरुध्या आप्नोत्यृष्टौ चं॥\_\_\_\_\_[२०]

आदित्याश्चाङ्गिरसश्च सुवर्गे लोकैंऽस्पर्धन्त। तेऽङ्गिरस आदित्येभ्यः। अमुमादित्यमश्वई श्वेतं भूतं दक्षिणामनयन्। तेंंऽब्रुवन्। यन्नो नेंष्ट। स वर्यो भूदितिं। तस्मादश्वर् सवर्येत्याह्वंयन्ति। तस्माँ द्यञ्जे वरो दीयते। यत्प्रजापंतिरा-लुब्धोऽश्वोऽभंवत्। तस्मादश्वो नामं॥७६॥

यच्छ्वयदरुरासीत्। तस्मादर्वा नामं। यथ्सद्यो वाजाँन्थ्समजंयत्। तस्माद्वाजी नामं। यदसुराणां लोकानादत्ता तस्मादादित्यो नामं। अग्निर्वा अश्वमेधस्य योनिरायतंनम्। सूर्योऽग्नेर्योनिरायतंनम्। यदंश्वमेधेऽग्नौ चित्यं उत्तरवेदिमुंपवपंति। योनिमन्तमेवैनमायतंनवन्तं करोति॥७७॥

योनिमानायतंनवान्भवति। य एवं वेदं। प्राणापानौ वा एतौ देवानाँम्। यदंर्काश्वमेधौ। प्राणापानावेवावं रुन्धे। ओजो बलं वा एतौ देवानाँम्। यदंर्काश्वमेधौ। ओजो बलंमेवावं रुन्धे। अग्निर्वा अश्वमेधस्य योनिरायतंनम्। सूर्योग्नेर्योनिरायतंनम्। यदंश्वमेधेँऽग्नौ चित्यं उत्तरवेदिं चिनोतिं। तावंर्काश्वमेधौ। अर्काश्वमेधावेवावं रुन्धे। अथों अर्काश्वमेधयोरेव प्रतिं तिष्ठति॥७८॥

नामं करोति सूर्योऽग्नेयोनिरायतंनश्चत्वारिं च॥————[२१]

प्रजापंतिं वै देवाः पितरम्। पृशुं भूतं मेधायालंभन्त। तमालभ्योपावसन्। प्रातर्यष्टांस्मह् इति। एकं वा पृतद्देवानामहंः। यथ्संवथ्सरः। तस्मादर्श्वः पुरस्तांथ्संवथ्सर आलभ्यते। यत्प्रजापंतिरालुब्धोऽश्वोऽभवत्। तस्मादर्श्वः। यथ्सद्यो मेधोऽभवत्॥७९॥ तस्मांदश्वमेधः। वेदुकोऽश्वंमाशुं भंवति। य एवं वेदं। यद्वै तत्प्रजापंतिरालुब्योऽश्वोऽभंवत्। तस्मादश्वः प्रजापंतेः पशूनामनुंरूपतमः। आऽस्यं पुत्रः प्रतिंरूपो जायते। य एवं वेदं। सर्वाणि भूतानि सम्भृत्यालंभते। समेनं देवास्तेजंसे ब्रह्मवर्चसायं भरन्ति। यौऽश्वमेधेन यजंते॥८०॥

य उं चैनमेवं वेदं। एतद्वै तद्देवा एतान्देवतांम्। पृशुं भूतं मेधायालंभन्त। यज्ञमेव। यज्ञेनं यज्ञमंयजन्त देवाः। कामप्रं यज्ञमंकुर्वत। तेऽमृतृत्वमंकामयन्त। तेऽमृतृत्वमंगच्छन्। योऽश्वमेधेन यजंते। देवानांमेवायंनेनैति॥८१॥

प्राजापत्येनैव यज्ञेनं यजते काम्प्रेणं। अपुनर्मारमेव गंच्छति। एतस्य वै रूपेणं पुरस्तांत्प्राजापत्यमृष्मं तूपरं बंहुरूपमालंभते। सर्वेभ्यः कामेंभ्यः। सर्वस्याप्त्यै। सर्वस्य जित्यै। सर्वमेव तेनाप्तोति। सर्वं जयति। योंऽश्वमेधेन् यजंते। य उं चैनमेवं वेदं॥८२॥

मेधोऽभंवद्यजंत एति वेदं॥----[२२]

यो वा अर्श्वस्य मेध्यंस्य लोमंनी वेदं। अर्श्वस्यैव मेध्यंस्य लोमं लोमं जुहोति। अहोरात्रे वा अर्श्वस्य मेध्यंस्य लोमंनी। यथ्मायं प्रांतर्जुहोतिं। अर्श्वस्यैव मेध्यंस्य लोमं लोमं जुहोति। एतदंनुकृति ह स्मृ वै पुरा। अर्श्वस्य मेध्यंस्य लोमं लोमं जुह्नति। यो वा अर्श्वस्य मेध्यंस्य पुदे वेदं। अर्श्वस्यैव मेध्यंस्य पुदेपंदे जुहोति। दुर्शपूर्णमासौ वा अश्वंस्य मेध्यंस्य पदे॥८३॥

यद्दं रशपूर्णमासौ यजंते। अश्वंस्येव मेध्यंस्य प्देपंदे जुहोति। एतदं नुकृति ह स्म वै पुरा। अश्वंस्य मेध्यंस्य प्देपंदे जुह्वति। यो वा अश्वंस्य मेध्यंस्य विवर्तनं वेदं। अश्वंस्येव मेध्यंस्य विवर्तनेविवर्तने जुहोति। असौ वा आंदित्योऽश्वंः। स आंहवनीयमागंच्छिति। तिद्ववंति। यदंग्निहोत्रं जुहोति। अश्वंस्येव मेध्यंस्य विवर्तनेविवर्तने जुहोति। एतदं नुकृति ह स्म वै पुरा। अश्वस्य मेध्यंस्य विवर्तनेविवर्तने जुहोति। एतदं नुकृति ह स्म वै पुरा। अश्वस्य मेध्यंस्य विवर्तनेविवर्तने जुहोति। जुहित॥८४॥

पदे अग्निहोत्रं जुहोति त्रीणिं च॥———[२३]

प्रजापंतिस्तमंष्टादिशिभिः प्रजापंतिरकामयतोभावस्मै युञ्जन्ति तेज्साऽपंप्राणा अपृश्रीरूष्वां प्रजापंतिः प्रेणाऽनुं प्रथमेनं प्रजापंतिरकामयत महान्वें श्वदेवो वा अश्वोऽश्वंस्य प्रजापंतिस्तं यंज्ञऋतुभिरपृश्रीर्बां ह्यणो सर्वेषु वारुणो यद्यश्वन्तदांहुरेष वै विभूस्तार्प्येणांदित्याः प्रजापंतिं पितर्ं यो वा अश्वंस्य मेध्यंस्य लोमेनी त्रयोंविश्शितः॥२३॥ प्रजापंतिर्स्मिँ ह्योक उत्तर्तः श्रियंमेव प्रजापंतिरकामयत महान्यत्प्रातः प्र वा एष एभ्यो लोकेभ्यः सर्वर्ष हु वै तत्र पर्यः स्वद्य उं चैनमेवं वेदं चत्वार्यशीतिः॥८४॥ प्रजापंतिरश्वमेधं जुंह्वति॥

# हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके नवमः

प्रपाठकः समाप्तः॥

## ॥तैत्तिरीय आरण्यकम्॥

॥प्रथमः प्रश्नः — अरुणप्रश्नः॥

ॐ भद्रं कर्णेभिः शृणुयामं देवाः। भद्रं पंश्येमाक्षभिर्यजंत्राः। स्थिरेरङ्गें स्तुष्टुवा र संस्तुनूभिः। व्यशेम देविहेतं यदायुः। स्वस्ति न इन्द्रों वृद्धश्रंवाः। स्वस्ति नंः पूषा विश्ववेदाः। स्वस्ति नस्ताक्ष्यों अरिष्टनेमिः। स्वस्ति नो बृह्स्पतिर्दधातु॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

भृद्रं कर्णिभिः शृणुयामं देवाः। भृद्रं पंश्येमाक्षिभिर्यजंत्राः। स्थिरेरङ्गैंस्तुष्टुवा र संस्तुनूभिः। व्यशेम देविहेतं यदायुः। स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रंवाः। स्वस्ति नः पूषा विश्ववंदाः। स्वस्ति नस्ताक्ष्यों अरिष्टनेमिः। स्वस्ति नो बृह्स्पितिर्दधातु। आपंमापामुपः सर्वाः। अस्माद्स्मादितोऽमुतः॥१॥

अग्निर्वायुश्च सूर्यश्च। सह संश्चस्करिष्ट्या। वाय्वश्वां रिश्मिपतंयः। मरींच्यात्मानो अद्रुंहः। देवीर्भुवनसूर्वरीः। पुत्रवत्वायं मे सुत। महानाम्नीर्महामानाः। मृहुसो महसः स्वः। देवीः पंर्जन्युसूर्वरीः। पुत्रवत्वायं मे सुत॥२॥

अपार्श्यंष्णिम्पा रक्षंः। अपार्श्यंष्णिम्पारघम्ं। अपाँघ्रामपं चावर्तिम्। अपदेवीरितो हित। वर्ज्रं देवीरजीता ॥ भवंनं देवसूवंरीः। आदित्यानदितिं देवीम्। योनिनोर्ध्वमुदीषंत। शिवा नः शन्तंमा भवन्तु। दिव्या आप ओषंधयः। सुमृडीका सरंस्वति। मा ते व्योम सन्दर्शि॥३॥

[8]

स्मृतिः प्रत्यक्षंमैतिह्यम्। अनुंमानश्चतुष्ट्यम्। एतैरादिंत्य-मण्डलम्। सर्वेरेव विधास्यते। सूर्यो मरीचिमादंत्ते। सर्वस्माद्भवंनाद्धि। तस्याः पाकविंशेषेण। स्मृतं काल-विशेषंणम्। नदीव प्रभंवात्काचित्। अक्षय्याध्स्यन्दते यथा॥४॥

तां नद्योऽभि संमायन्ति। सो्रः सतीं न निवंति। एवं नानासंमुत्थानाः। कालाः संवथ्सरः श्रिताः। अणुशश्च महश्श्च। सर्वे समवयत्रितम्। सतैः सुर्वेः संमाविष्टः। ऊरुः संत्र निवर्तते। अधिसंवथ्सरं विद्यात्। तदेवं लक्षणे॥५॥

अणुभिश्च महिद्धिश्च। समार्रूढः प्रदृश्यंते। संवथ्सरः प्रत्यक्षेण। नाधिसंत्वः प्रदृश्यंते। पृटरों विक्लिधः पिङ्गः। पृतद्वंरुणलक्षंणम्। यत्रैतंदुपृदृश्यंते। सहस्रं तत्र नीयंते। एक १ हि शिरो नाना मुखे। कृथ्स्रं तंदृतुलक्षंणम्॥६॥

उभयतः सप्तैन्द्रियाणि। जिल्पतं त्वेव दिह्यंते। शुक्लकृष्णे संवंध्सर्स्य। दक्षिणवामयोः पार्श्वयोः। तस्यैषा भवंति। शुक्रं ते अन्यद्यंजतं ते अन्यत्। विषुंरूपे अहंनी द्यौरिवासि। विश्वा हि माया अवंसि स्वधावः। भुद्रा ते पूषिन्नह रातिरस्तिवितं।

नात्र भुवंनम्। न पूषा। न पृशवंः। नाऽऽदित्यः संवथ्सर एव प्रत्यक्षेण प्रियतंमं विद्यात्। एतद्वै संवथ्सरस्य प्रियतंम श्र रूपम्। योऽस्य महानर्थ उत्पथ्स्यमांनो भुवति। इदं पुण्यं कुरुष्वेति। तमाहरंणं दुद्यात्॥७॥

[२]

साकुआना र स्प्रथंमाहुरेक जम्। षडुं द्यमा ऋषंयो देवजा इतिं। तेषांमिष्टानि विहिंतानि धामुशः। स्थात्रे रेजन्ते विकृतानि रूपशः। को नुं मर्या अमिथितः। सखा सखांयमब्रवीत्। जहांको अस्मदीषते। यस्तित्याजं सिख्विदिष् सखांयम्। न तस्यं वाच्यपि भागो अस्ति। यदी र शृणोत्यलक र शृणोति॥८॥

न हि प्रवेदं सुकृतस्य पन्थामितिं। ऋतुर्ऋतुना नुद्यमानः। विनेनादाभिधावः। षष्टिश्च त्रिश्शंका वृल्गाः। शुक्लकृष्णौ च षाष्टिंकौ। साराग्वस्त्रेर्ज्ररदेक्षः। वस्नतो वसुंभिः सह। संवथ्सरस्यं सिवतुः। प्रैषकृत्प्रंथमः स्मृतः। अमूनादयंतेत्यन्यान्॥९॥

अमू इश्चं परिरक्षंतः। एता वाचः प्रंयुज्यन्ते। यत्रैतंदुपृदृश्यंते। एतदेव विंजानीयात्। प्रमाणं कालपंर्यये। विशेषणं तुं वक्ष्यामः। ऋतूनां तिन्नबोधंत। शुक्लवासां रुद्रगणः। ग्रीष्मेणांऽऽवर्तते संह। निजहंन् पृथिंवी स् सर्वाम्॥१०॥ ज्योतिषाँ ऽप्रतिख्येनं सः। विश्वरूपाणिं वासार्सा। आदित्यानां निबोधंत। संवथ्मरीणं कर्मफलम्। वर्षाभिर्दंदतार् सह। अदुःखां दुःखचंक्षुरिव। तद्मांऽऽपीत इव दृश्यंते। शीतेनां व्यथंयित्रव। रुरुदंक्ष इव दृश्यंते। ह्रादयतें ज्वलंतश्चेव। शाम्यतंश्चास्य चक्षुंषी। या वे प्रजा भ्रंश्यन्ते। संवथ्मरात्ता भ्रंश्यन्ते। याः प्रतितिष्ठन्ति। संवथ्मरे ताः प्रतितिष्ठन्ति। वर्षाभ्यं इत्यर्थः॥११॥

अक्षिदुःखोत्थितस्यैव। विप्रसंत्रे क्नीनिके। आङ्के चार्नणं नास्ति। ऋभूणां तित्रबोधंत। कनकाभानि वासार्से। अहतांनि निबोधंत। अन्नमश्रीतं मृज्मीत। अहं वो

जीवनप्रदः। एता वाचः प्रयुज्यन्ते। शरद्यंत्रोपदृश्यंते॥१२॥

अभिधून्वन्तोऽभिघ्नंन्त इव। वातवंन्तो म्रुद्गंणाः। अमृतो जेतुमिषुमुंखिम्व। सन्नद्धाः सह दंदशे ह। अपध्वस्तैवंस्तिवंणैरिव। विशिखासंः कप्रदिनः। अनुद्धस्य योथ्स्यंमान्स्य। नुद्धस्यंव लोहिनी। हेमतश्चक्षंषी विद्यात्। अक्ष्णयोः क्षिपणोरिंव॥१३॥

दुर्भिक्षं देवेलोकेषु। मनूनांमुद्कं गृंहे। एता वाचः प्रवदन्तीः। वैद्युतों यान्ति शैशिंरीः। ता अग्निः पर्वमना अन्वैक्षत। इह जीविकामपंरिपश्यन्। तस्यैषा भवंति। इहेह्नंवः स्वतपसः। मरुतः सूर्यत्वचः। शर्म सप्रथा

### आर्वृणे॥१४॥

[8]

अतिताम्राणि वासार्सा। अष्टिवंजिशतिष्ट्रं च। विश्वे देवा विप्रहर्नता अग्निजिंह्वा असश्चेता नैव देवों न मूर्त्यः। न राजा वंरुणो विभुः। नाग्निर्नेन्द्रो न पंवमानः। मातृक्कंचन् विद्यंते। दिव्यस्यैका धनुंरार्तिः। पृथिव्यामपंरा श्रिता॥१५॥

तस्येन्द्रो विम्नेरूपेण। धनुज्यांमिछिनथ्स्वंयम्। तिदेन्द्रधनुं-रित्युज्यम्। अभवंणेषु चक्षंते। एतदेव शंयोबीर्हंस्पत्यस्य। एतद्रुंद्रस्य धनुः। रुद्रस्यं त्वेव धनुंरार्तिः। शिर् उत्पिपेष। स प्रंवुग्योंऽभवत्। तस्माद्यः सप्रंवुग्येणं युज्ञेन यजंते। रुद्रस्य स शिरः प्रतिदधाति। नैन रूद्र आरुको भवति। य एवं वेदं॥१६॥

[ الح

अत्यूर्ध्वाक्षोऽतिरश्चात्। शिशिरः प्रदृश्यते। नैव रूपं ने वासार्सि। न चक्षुः प्रतिदृश्यते। अन्योन्यं तु ने हिइस्रातः। सृतस्तद्देवलक्षणम्। लोहितोऽक्ष्णि शारशीर्ष्णिः। सूर्यस्योदयनं प्रति। त्वं करोषि न्यञ्जलिकाम्। त्वं करोषि निजानुकाम्॥१७॥

निजानुका में न्यञ्जलिका। अमी वाचमुपासंतामिति। तस्मै सर्व ऋतवों नमन्ते। मर्यादाकरत्वात्प्रंपुरोधाम्। ब्राह्मणं आप्नोति। य एवं वेद। स खलु संवथ्सर एतैः सेनानीभिः स्ह। इन्द्राय सर्वान्कामानंभिवृहति। स द्रफ्सः। तस्यैषा भवंति॥१८॥

अवंद्रफ्सो अर्श्युमतीमितिष्ठत्। इयानः कृष्णो दशिनिः सहस्रैः। आवर्तिमिन्द्रः शच्या धर्मन्तम्। उपस्रुहि तं नृमणामर्थद्रामिति। एतयैवेन्द्रः सलावृंक्या सह। असुरान् पिरवृश्चति। पृथिव्यर्शुमती। तामन्ववंस्थितः संवथ्सरो दिवं चं। नैवं विदुषाऽऽचार्यान्तेवासिनौ। अन्योन्यस्मै द्रुह्याताम्। यो द्रुह्यति। भ्रश्यते स्वंर्गाल्लोकात्। इत्यृतुमण्डलानि। सूर्यमण्डलान्याख्यायिकाः। अत ऊर्ध्वर संनिर्वचनाः॥१९॥

**-**[٤]

आरोगो भ्राजः पटरंः पत्रङ्गः। स्वर्णरो ज्योतिषिमान् विभासः। ते अस्मै सर्वे दिवमांतपुन्ति। ऊर्जं दुहाना अनपस्फुरंन्त इति। कश्यंपोऽष्ट्रमः। स महामेरुं नं जहाति। तस्यैषा भवंति। यत्ते शिल्पं कश्यप रोचनावंत्। इन्द्रियावंतपुष्कुलं चित्रभांनु। यस्मिन्थ्सूर्या अर्पिताः सप्त साकम्॥२०॥

तस्मिन् राजानमधिविश्रयेमिमिति। ते अस्मै सर्वे कश्यपाञ्चोतिर्लभुन्ते। तान्थ्सोमः कश्यपादधिनिर्धमित। भ्रस्ताकर्मकृदिवैवम्। प्राणो जीवानीन्द्रियंजीवानि। सप्त शीर्षण्याः प्राणाः। सूर्या इंत्याचार्याः। अपश्यमहमेतान्थ्सप्त सूर्यानिति। पश्चकर्णो वाथ्स्यायनः। सप्तकर्णश्च प्राक्षिः॥२१॥

आनुश्रविक एव नौ कश्यंप इति। उभौ वेद्यिते। न हि शेकुमिव महामेंरुं गुन्तुम्। अपश्यमहमेथ्सूर्यमण्डलं परिवर्तमानम्। गार्ग्यः प्राणत्रातः। गच्छन्त महामेरुम्। एकं चाजहतम्। भ्राजपटरपतंङ्गा निहने। तिष्ठन्नांतपन्ति। तस्मांदिह तिष्ठिंतपाः॥२२॥

अमुत्रेतरे। तस्मांदिहातिष्ठितपाः। तेषांमेषा भवंति। सप्त सूर्या दिव्मनुप्रविष्टाः। तान्-वेति पृथिभिदिक्षिणावान्। ते अस्मै सर्वे घृतमांतप्नि। ऊर्जं दुहाना अनपस्फुरंन्त इति। सप्तर्त्विजः सूर्या इंत्याचार्याः। तेषांमेषा भवंति। सप्त दिशो नानांसूर्याः॥२३॥

स्प्त होतांर ऋत्विजंः। देवा आदित्यां ये स्प्ता तेभिः सोमाभी रक्षण इति। तदंप्याम्रायः। दिग्भाज ऋतूँन् करोति। एतंयैवावृता सहस्रसूर्यताया इति वैशम्पायनः। तस्यैषा भवंति। यद्यावं इन्द्र ते श्तर श्तं भूमीः। उतस्युः। नत्वां विज्ञन्थ्सहस्रूर् सूर्याः॥२४॥

अनु न जातमष्ट रोदंसी इति। नानालिङ्गत्वाहतूनां नानांसूर्यत्वम्। अष्टौ तु व्यवसिता इति। सूर्यमण्डलान्यष्टांत ऊर्ध्वम्। तेषांमेषा भवंति। चित्रं देवानामुदंगादनींकम्। चक्षुंर्मित्रस्य वर्रुणस्याग्नेः। आऽप्रा द्यावांपृथिवी अन्तरिक्षम्। सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुंषश्चेति॥२५॥

**-**[り]

क्वेदमभ्रं निविशते। क्वायरं संवथ्सरो मिथः। क्वाहः क्वेयं देव रात्री। क्व मासा ऋतवः श्रिताः। अर्धमासां मुहूर्ताः। निमेषास्तुंटिभिः सह। क्वेमा आपो निविशन्ते। यदीतों यान्ति सम्प्रंति। काला अफ्सु निविशन्ते। आपः सूर्ये समाहिताः॥२६॥

अभ्राण्यपः प्रंपद्यन्ते। विद्युथ्सूर्ये सुमाहिता। अनवर्णे ईमे भूमी। इयं चांऽसौ च रोदंसी। किङ्स्विदत्रान्तंरा भूतम्। येनेमे विधृते उभे। विष्णुनां विधृते भूमी। इति वंथ्सस्य वेदंना। इरावती धेनुमती हि भूतम्। सूयवसिनी मनुषे दशुस्यै॥२७॥

व्यंष्टभाद्रोदंसी विष्णंवेत। दाधर्थ पृथिवीम्भितीं म्यूखैंः। किं तद्विष्णोर्बलमाहुः। का दीप्तिः किं प्रायंणम्। एको युद्धारंयद्देवः। रेजती रोदसी उंभे। वाताद्विष्णोर्बलमाहुः। अक्षराद्दीप्तिरुच्यंते। त्रिपदाद्धारंयद्देवः। यद्विष्णोरेकमुत्तंमम्॥२८॥

अग्नयो वायंवश्चैव। एतदंस्य प्रायंणम्। पृच्छामि त्वा पंरं मृत्युम्। अवमं मध्यमश्चंतुम्। लोकं च पुण्यंपापानाम्। एतत्पृच्छामि सम्प्रंति। अमुमांहुः पंरं मृत्युम्। प्वमानं तु मध्यंमम्। अग्निरेवावंमो मृत्युः। चन्द्रमांश्चतुरुच्यंते॥२९॥ अनाभोगाः पंरं मृत्युम्। पापाः संयन्ति सर्वदा। आभोगास्त्वेवं संयन्ति। यत्र पुण्यकृतो जंनाः। ततो मध्यमंमायन्ति। चतुमंग्निं च सम्प्रति। पृच्छामि त्वां पापकृतः। यत्र यातयते यमः। त्वं नस्तद्वह्मंन् प्रब्रूहि। यदि वैत्थाऽसतो गृहान्॥३०॥

कृश्यपांद्दिताः सूर्याः। पापान्निर्प्रान्ति सर्वदा। रोदस्योन्तिर्देशेषु। तत्र न्यस्यन्ते वास्वैः। तेऽशरीराः प्रंपद्यन्ते। यथाऽपुंण्यस्य कर्मणः। अपाँण्यपादंकेशासः। तत्र तेऽयोनिजा जनाः। मृत्वा पुनर्मृत्युमांपद्यन्ते। अद्यमानाः स्वकर्मभिः॥३१॥

आशातिकाः क्रिमंय इव। ततः पूयन्तं वास्रवैः। अपैतं मृत्युं जंयित। य पृवं वेदं। स खल्वैवं विद्वाह्मणः। दीर्घश्रुंत्तमो भवंति। कश्यंपस्यातिथिः सिद्धगंमनः सिद्धागंमनः। तस्यैषा भवंति। आयस्मिन्थ्सप्त वांस्रवाः। रोहंन्ति पूर्व्यां रुहंः॥३२॥

ऋषिर्ह दीर्घश्रुत्तंमः। इन्द्रस्य घर्मो अतिथिरित। कश्यपः पश्यंको भ्वति। यथ्सवं परिपश्यतीति सौक्ष्म्यात्। अथाग्नेरष्टपुरुष्स्य। तस्येषा भवंति। अग्ने नयं सुपर्थां राये अस्मान्। विश्वांनि देव वयुनांनि विद्वान्। युयोध्यंस्मञ्जंहराणमेनः। भूयिष्ठां ते नम उक्तिं विधेमेति॥३३॥

[८]

अग्निश्च जातंवेदाश्च। सहोजा अंजिराप्रभुः। वैश्वानरो नर्यापाश्च। पङ्किराधाश्च सप्तमः। विसर्पेवाऽष्टमोऽग्नीनाम्। एतेऽष्टौ वसवः, क्षिता इति। यथर्त्ववाग्नेरर्चिर्वर्णविशेषाः। नीलार्चिश्च पीतकाँर्चिश्चेति। अथ वायोरेकादशपुरुषस्यैका-दशंस्त्रीकस्य। प्रभाजमाना व्यंवदाताः॥३४॥

याश्च वासुंकिवैद्युताः। रजताः पर्रुषाः श्यामाः। कपिला अंतिलोहिताः। ऊर्ध्वा अवपंतन्ताश्च। वैद्युत इंत्येकादश। नैनं वैद्युतो हिनुस्ति। य एवं वेद। स होवाच व्यासः पाराशर्यः। विद्युद्वधमेवाहं मृत्युमैंच्छमिति। न त्वकांम १ हन्ति॥३५॥

य एवं वेद। अथ गंन्धर्वगणाः। स्वानुभ्राट्। अङ्घारिकम्भारिः। हस्तः सुहंस्तः। कृशांनुर्विश्वावंसुः। मूर्धन्वान्थ्सूर्यवर्चाः। कृतिरित्येकादश गंन्धर्वगणाः। देवाश्च महादेवाः। रश्मयश्च देवां गरगिरः॥३६॥

नैनं गरों हिन्स्ति। य एंवं वेद। गौरी मिंमाय सलिलानि तक्षंती। एकंपदी द्विपदी सा चतुंष्पदी। अष्टापंदी नवंपदी बभूवुषीं। सहस्राक्षरा परमे व्योमन्निति। वाचों विशेषणम्। अथ निगदंव्याख्याताः। ताननुर्क्रमिष्यामः। व्राहवंः स्वतपसः॥३७॥

विद्युन्मंहसो धूपंयः। श्वापयो गृहमेधाँश्चेत्येते। ये चेमेऽशिमिविद्विषः। पर्जन्याः सप्त पृथिवीमभिवंर्षन्ति। वृष्टिंभिरिति। एतयैव विभक्तिविंपरीताः। सप्तिभिवां तैंरुदीरिताः। अमूँ ल्लोकानभिवंर्षिन्ति। तेषांमेषा भवंति। समानमेतदुदंकम्॥३८॥

उ्चैत्यंवचाहंभिः। भूमिं पूर्जन्या जिन्वंन्ति। दिवं जिन्वन्त्यग्रय इति। यदक्षरं भूतकृतम्। विश्वं देवा उपासंते। महर्षिमस्य गोप्तारम्। जमदंग्निमकुर्वत। जमदंग्निराप्यांयते। छन्दोभिश्चतुरुत्तरेः। राज्ञः सोमंस्य तृप्तासंः॥३९॥

ब्रह्मणा वीर्यावता। शिवा नेः प्रदिशो दिशेः। तच्छुं योरावृंणीमहे। गातुं यज्ञायं। गातुं यज्ञपंतये। दैवीः स्वस्तिरंस्तु नः। स्वस्तिर्मानुंषेभ्यः। ऊर्ध्वं जिंगातु भेषजम्। शं नो अस्तु द्विपदें। शं चतुंष्पदे। सोमपा (३) असोमपा (३) इति निगदंव्याख्याताः॥४०॥

[8]

सहस्रवृदियं भूमिः। परं व्योम सहस्रवृत्। अश्विनां भुज्यूनास्त्या। विश्वस्यं जगतस्पंती। जाया भूमिः पंतिर्व्योम। मिथुनंन्ता अतुर्यथः। पुत्रो बृहस्पंती रुद्रः। स्रमां इतिं स्रीपुमम्। शुक्रं वांमन्यद्यंज्तं वांमन्यत्। विषुंरूपे अहंनी द्यौरिव स्थः॥४१॥

विश्वा हि माया अवंथः स्वधावन्तौ। भुद्रा वाँ पूषणाविह रातिरंस्तु। वासांत्यौ चित्रौ जगंतो निधानौ। द्यावांभूमी चुरथंः स् सर्खायौ। तावृश्विनां रासभाश्वा हवंं मे। शुभस्पती आगत र्रं सूर्ययां सह। त्युग्रोह भुज्युमंश्विनोदमेघे। र्यिं न कश्चिन्ममृवां (२) अवांहाः। तमूहथुनौंभिरांत्मन्वतींभिः। अन्तरिक्षप्रिक्षिर्प्रक्षिरपोदकाभिः॥४२॥

तिस्रः, क्षपस्त्रिरहांतिव्रजिद्धिः। नासंत्या भुज्युमूंहथुः पत्ङ्गेः। समुद्रस्य धन्वंन्नार्द्रस्यं पारे। त्रिभीरथैः श्तपंद्धिः षडिश्वेः। सवितारं वितन्वन्तम्। अनुंबध्नाति शाम्बरः। आपपूर्षम्बरश्चेव। सवितारेप्सोऽभवत्। त्यः सुतृप्तं विदित्वेव। बहुसोम गिरं वंशी॥४३॥

अन्वेति तुग्रो वंक्रियान्तम्। आयसूयान्थ्सोमंतृपसुषु। स सङ्ग्रामस्तमौद्योऽत्योतः। वाचो गाः पिंपाति तत्। स तद्गोभिः स्तवाऽत्येत्यन्ये। रक्षसानन्विताश्चं ये। अन्वेति परिवृत्याऽस्तः। एवमेतौ स्थों अश्विना। ते एते द्युंः पृथिव्योः। अहंरहर्गर्भं दधाथे॥४४॥

तयोंरेतौ वृथ्सावंहोरात्रे। पृथिव्या अहंः। दिवो रात्रिः। ता अविसृष्टौ। दम्पंती एव भवतः। तयोंरेतौ वृथ्सौ। अग्निश्चांदित्यश्चं। रात्रेर्वृथ्सः। श्वेत आंदित्यः। अह्रोऽग्निः॥४५॥

ताम्रो अंरुणः। ता अविंसृष्टौ। दम्पंती एव भंवतः। तयोरेतौ वृथ्सौ। वृत्रश्चं वैद्युतश्चं। अग्नेर्वृत्रः। वैद्युतं आदित्यस्यं। ता अविसृष्टौ। दम्पंती एव भंवतः। तयोरेतौ वृथ्सौ॥४६॥

उष्मा चं नीहारश्चं। वृत्रस्योष्मा। वैद्युतस्यं नीहारः। तौ तावेव प्रतिपद्येते। सेय र रात्रीं गुर्भिणीं पुत्रेण संवंसित। तस्या वा एतदुल्बणम्ं। यद्रात्रौं रृष्टमयः। यथा गोर्गिभिण्यां उल्बणम्ं। एवमेतस्यां उल्बणम्ं। प्रजियष्णुः प्रजया च पशुभिश्च भ्वति। य एवं वेद। एतमुद्यन्तमिपयन्तं चेति। आदित्यः पुण्यंस्य वृथ्सः। अथ पवित्राङ्गिरसः॥४७॥

**-**[80]

प्वित्रंवन्तः परिवाज्ञमासंते। पितेषां प्रत्नो अभिरंक्षति व्रतम्। महः संमुद्रं वर्रणस्तिरोदंधे। धीरां इच्छेकुर्धरुणेष्वारभम्। पिवित्रं ते वितंतं ब्रह्मणस्पतें। प्रभुगित्रांणि पर्येषिविश्वतः। अतंप्ततनूर्न तदामो अंश्रुते। शृतास् इद्वहंन्तस्तथ्समांशत। ब्रह्मा देवानांम्। असंतः सद्ये ततंक्षुः॥४८॥

ऋषंयः स्प्तात्रिश्च यत्। सर्वेऽत्रयो अंगस्त्यश्च। नक्षंत्रैः शङ्कृंतोऽवसन्। अथं सिवतुः श्यावाश्वस्याऽवर्तिकामस्य। अमी य ऋक्षा निहितास उचा। नक्तं दर्दश्चे कुहंचिद्दिवंयः। अदंब्यानि वर्रुणस्य व्रतानि। विचाकशंचन्द्रमा नक्षंत्रमेति। तथ्संवितुवरिण्यम्। भर्गो देवस्यं धीमहि॥४९॥

धियो यो नंः प्रचोदयाँत्। तथ्संवितुर्वृणीमहे। वयं देवस्य भोजनम्। श्रेष्ठ र् सर्वधातमम्। तुरं भगस्य धीमहि। अपांगूहत सविता तृभीन्। सर्वान्दिवो अन्धंसः। नक्तं तान्यंभवन्दृशे। अस्थ्यस्थ्रा सम्भविष्यामः। नाम् नामैव नाम मै॥५०॥

नपुरसंकं पुमाङ्क्यंस्मि। स्थावंरोऽस्म्यथ् जङ्गंमः। यजेऽयिक्षे यष्टाहे चं। मयां भूतान्यंयक्षत। पृशवों ममं भूतानि। अनूबन्ध्योऽस्म्यंहं विभुः। स्त्रियंः स्तीः। ता उमे पुर्स आंहुः। पश्यंदक्षण्वान्नविचेतद्न्धः। कृविर्यः पुत्रः स इमा चिकेत॥५१॥

यस्ता विजानाथ्मंवितुः पितासंत्। अन्धो मणिमंविन्दत्। तमनङ्गुलिरावयत्। अग्रीवः प्रत्यमुश्चत्। तमजिह्वा असश्चंत। ऊर्ध्वमूलमेवाक्छाखम्। वृक्षं यो वेद सम्प्रंति। न स जातु जनः श्रद्धध्यात्। मृत्युर्मा मार्यादितिः। हसित र रुदितं गीतम्॥५२॥

वीणांपणवलासिंतम्। मृतं जीवं चं यत्किश्चित्। अङ्गानिं स्नेव विद्धिं तत्। अतृष्यु इस्तृष्यंध्यायत्। अस्माञ्जाता में मिथू चरन्नं। पुत्रो निर्ऋत्यां वैदेहः। अचेतां यश्च चेतंनः। स् तं मणिमंविन्दत्। सोंऽनङ्गुलिरावंयत्। सोऽग्रीवः प्रत्यंमुश्चत्॥५३॥

सोऽजिंह्वो असश्चंत। नैतमृषिं विदित्वा नगरं प्रविशेत्। यंदि प्रविशेत्। मिथौ चरित्वा प्रविशेत्। तथ्सम्भवंस्य व्रतम्। आतमंग्ने रथं तिष्ठ। एकाँश्वमेक्योजनम्। एकचर्त्रमेक्धुरम्। वातप्रांजिगतिं विभो। न रिष्यतिं न व्यथते॥५४॥

नास्याक्षो यातु सर्ज्ञति। यच्छ्वेतांन् रोहिंता इश्राग्नेः। र्थे युंकाऽधितिष्ठंति। एकया च दशिश्चं स्वभूते। द्वाभ्यामिष्टये विर्शत्या च। तिसृभिश्च वहसे त्रिरंशता च। नियुद्धिर्वायविह तां विमुश्च॥५५॥

आतंनुष्व प्रतंनुष्व। उद्धमाऽऽधंम् सन्धंम। आदित्ये चन्द्रंवर्णानाम्। गर्भमाधेहि यः पुमान्। इतः सिक्तः सूर्यगतम्। चन्द्रमंसे रसं कृधि। वारादं जनयाग्रेऽग्निम्। य एको रुद्र उच्यंते। असङ्ख्याताः संहस्राणि। स्मर्यते न च दश्यंते॥५६॥

पुवमेतं निंबोधत। आम्न्द्रैरिन्द्र हरिभिः। याहि म्यूररोमभिः। मा त्वा केचिन्नियेमुरिन्न पाशिनः। द्धन्वेव ता इंहि। मा म्न्द्रैरिन्द्र हरिभिः। यामि म्यूररोमभिः। मा मा केचिन्नियेमुरिन्न पाशिनः। नि्धन्वेव तां (२) इंमि। अणुभिश्च महद्भिश्व॥५७॥

निघृष्वैरस्मायुंतैः। कालैर्हरित्वंमापृन्नैः। इन्द्राऽऽयांहि स्हस्रयुक्। अग्निर्विभाष्टिंवसनः। वायुः श्वेतंसिकद्रुकः। स्वथ्सरो विषूवर्णैः। नित्यास्तेऽनुचरास्तव। सुब्रह्मण्योश सुब्रह्मण्योश सुब्रह्मण्योम्। इन्द्राऽऽगच्छ हरिव आगच्छ मेंधातिथेः। मेष वृषणश्वंस्य मेने॥५८॥

गौरावस्कन्दिन्नहल्यांये जार। कौशिकब्राह्मण गौतमंब्रुवाण। अरुणाश्वां इहागंताः। वसंवः पृथिविक्षितंः। अष्टौदिग्वासंसोऽग्नयंः। अग्निश्च जातवेदांश्चेत्येते। ताम्राश्वांस्ताम्ररथाः। ताम्रवर्णांस्तथाऽसिताः। दण्डहस्ताः खादग्दतः। इतो रुद्राः पराङ्गताः॥५९॥

उक्त स्थानं प्रमाणं चं पुर् इत। बृह्स्पतिश्च सिवता चं। विश्वरूंपैरिहाऽऽगंताम्। रथेनोदक्वर्त्मना। अफ्सुषां इति तद्वंयोः। उक्तो वेषों वासार्श्स च। कालावयवानामितः प्रतीज्या। वासात्यां इत्यश्विनोः। कोऽन्तरिक्षे शब्दं करोतीति। वासिष्टो रौहिणो मीमार्श्सां चक्रे। तस्यैषा भवंति। वाश्रेवं विद्युदितिं। ब्रह्मण उदरंणमिस। ब्रह्मण उदीरणंमिस। ब्रह्मण आस्तरंणमिस। ब्रह्मण उपस्तरंणमिस॥६०॥

**-**[१२]

[अपंक्रामत गर्भिण्यंः]

अष्टयोनीम्ष्टपुंत्राम्। अष्टपंत्रीम्मां महींम्। अहं वेद् न में मृत्युः। न चामृत्युर्घाऽऽहंरत्। अष्टयौन्यृष्टपुंत्रम्। अष्टपंदिदम्नतिरक्षम्। अहं वेद् न में मृत्युः। न चामृत्युर्घाऽऽहंरत्। अष्टयोनीम्ष्टपुंत्राम्। अष्टपंत्रीम्मूं दिवम्॥६१॥

अहं वेद न में मृत्युः। न चामृत्युरघाऽऽहंरत्। सुत्रामाणं मुहीमू षु। अदिंतिचौरिदंतिरन्तरिक्षम्। अदिंतिर्माता स पिता स पुत्रः। विश्वें देवा अदितिः पश्चजनाः। अदितिर्जातमदितिर्जनित्वम्। अष्टौ पुत्रासो अदितेः। ये जातास्तुन्वः परि। देवां (२) उपप्रैथ्सप्तर्भिः॥६२॥

पुरा मार्ताण्डमास्यंत्। सप्तिभंः पुत्रेरिदंतिः। उपप्रैत्पूर्व्यं युगम्। प्रजाये मृत्यवे तंत्। पुरा मार्ताण्डमाभरदिति। ताननुर्क्रमिष्यामः। मित्रश्च वर्रुणश्च। धाता चौर्यमा च। अर्शश्च भगश्च। इन्द्रश्च विवस्वार्श्वेक्षेत्येते। हिर्ण्यगर्भी हु सः शुंचिषत्। ब्रह्मंजज्ञानं तदित्पदिमिति। गर्भः प्रांजापत्यः। अथ पुरुषः सप्त पुरुषः॥६३॥

[यथास्थानं गंभिण्यः]

योऽसौ तुपन्नुदेतिं। स सर्वेषां भूतानां प्राणानादायोदेतिं। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणानादायोदंगाः। असौ यौं उस्तुमेति। स सर्वेषां भूतानां प्राणानादाया उस्तमेति। मा मैं प्रजायां मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणानादायाऽस्तंङ्गाः। असौ य आपूर्यति। स सर्वेषां भूतानां प्राणैरापूर्यति॥६४॥

मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणैरापूरिष्ठाः। असौ योऽपृक्षीयंति। स सर्वेषां भूतानां प्राणैरपंक्षीयति। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणैरपंक्षेष्ठाः। अमूनि नक्षंत्राणि। सर्वेषां भूतानां प्राणैरपंप्रसर्पन्ति चोथ्संपन्ति च। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणैरपंप्रसृपत् मोथ्सृपत॥६५॥

ड्मे मासाँश्चार्धमासाश्चं। सर्वेषां भूतानां प्राणैरपंप्रसर्पन्ति चोथ्संपन्ति च। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणैरपंप्रसृपत् मोथ्संपत्। ड्म ऋतवंः। सर्वेषां भूतानां प्राणैरपंप्रसर्पन्ति चोथ्संपन्ति च। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणैरपंप्रसृपत् मोथ्संपत्। अयश् संवथ्सरः। सर्वेषां भूतानां प्राणैरपंप्रसर्पति चोथ्संपति च॥६६॥

मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणेरपंप्रसृप् मोथ्सृंप। इदमहंः। सर्वेषां भूतानां प्राणेरपंप्रसर्पति चोथ्संपंति च। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणेरपंप्रसृप् मोथ्सृंप। इय॰ रात्रिः। सर्वेषां भूतानां प्राणेरपंप्रसर्पति चोथ्संपंति च। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणेरपंप्रसृप् मोथ्सृंप। ॐ भूर्भुवः स्वंः। एतद्वो मिथुनं मा नो मिथुंन॰ रीद्वम्॥६७॥

[88]

अथाऽऽदित्यस्याष्टपुंरुषस्य। वसूनामादित्याना स्थाने

स्वतेजंसा भानि। रुद्राणामादित्यानाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। आदित्यानामादित्यानाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। सताः सत्यानाम्। आदित्यानाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। अभिधून्वतांमभिष्ठताम्। वातवंतां मुरुताम्। आदित्यानाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। ऋभूणामादित्यानाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। विश्वेषां देवानाम्। आदित्यानाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। संवथ्सरंस्य स्वितुः। आदित्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। ॐ भूर्भवः स्वंः। रष्टमयो वो मिथुनं मा नो मिथुनः रीद्वम्॥६८॥

[१५]

आरोगस्य स्थाने स्वतेर्जमा भानि। भ्राजस्य स्थाने स्वतेर्जमा भानि। पटरस्य स्थाने स्वतेर्जमा भानि। पतङ्गस्य स्थाने स्वतेर्जमा भानि। पवङ्गस्य स्थाने स्वतेर्जमा भानि। ज्योतिषीमतस्य स्थाने स्वतेर्जमा भानि। विभासस्य स्थाने स्वतेर्जमा भानि। कश्यपस्य स्थाने स्वतेर्जमा भानि। ॐ भूर्भुवः स्वंः। आपो वो मिथुनं मा नो मिथुनं रीृद्वम्॥६९॥

[१६]

अथ वायोरेकादशपुरुषस्यैकादशंस्त्रीकस्य। प्रभ्राजमानानाः रहाणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। व्यवदातानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। वासुिकवैद्युतानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। रजतानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा

भानि। परुषाणाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेर्जसा भानि। श्यामानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेर्जसा भानि। कपिलानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेर्जसा भानि। अतिलोहितानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेर्जसा भानि। ऊर्ध्वानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेर्जसा भानि॥७०॥

अवपतन्ताना १ रुद्राणा इ स्थाने स्वते जंसा भानि। वैद्युताना १ रुद्राणा इ स्थाने स्वते जंसा भानि। प्रभ्राजमानीना १ रुद्राणीना इ स्थाने स्वते जंसा भानि। व्यवदातीना १ रुद्राणीना इ स्थाने स्वते जंसा भानि। वासु कि वैद्युतीना १ रुद्राणीना इ स्थाने स्वते जंसा भानि। रजताना १ रुद्राणीना इ स्थाने स्वते जंसा भानि। परुषाणा १ रुद्राणीना इ स्थाने स्वते जंसा भानि। प्रयामाना १ रुद्राणीना इ स्थाने स्वते जंसा भानि। किपलाना १ रुद्राणीना इ स्थाने स्वते जंसा भानि। अतिलोहितीना १ रुद्राणीना इ स्थाने स्वते जंसा भानि। अधिलो हितीना १ रुद्राणीना इ स्थाने स्वते जंसा भानि। अध्याना १ रुद्राणीना इ स्थाने स्वते जंसा भानि। वैद्युतीना १ रुद्राणीना इ स्थाने स्वते जंसा भानि। वैद्युतीना १ रुद्राणीना इ स्थाने स्वते जंसा भानि। कै भूर्भुवः स्वंः। रूपाणि वो मिथुनं मा नो मिथुन १ रीद्वम्॥ ७१॥

**-**[१७

अथाग्नेरष्टपुंरुष्स्य। अग्नेः पूर्वदिश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। जातवेदस उपदिश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। सहोजसो दक्षिणदिश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। अजिराप्रभव उपदिश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। वैश्वानरस्यापरदिश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। नर्यापस उपदिश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। पङ्किराधस उदग्दिश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। विसर्पिण उपदिश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। ॐ भूर्भुवः स्वंः। दिशो वो मिथुनं मा नो मिथुंन रिद्वम्॥७२॥

[१८]

दक्षिणपूर्वस्यां दिशि विसंपी न्रकः। तस्मान्नः पंरिपाहि। दक्षिणापरस्यां दिश्यविसंपी न्रकः। तस्मान्नः पंरिपाहि। उत्तरपूर्वस्यां दिशि विषादी न्रकः। तस्मान्नः पंरिपाहि। उत्तरापरस्यां दिश्यविषादी न्रकः। तस्मान्नः पंरिपाहि। आ यस्मिन्थ्सप्त वासवा इन्द्रियाणि शतक्रतंवित्येते॥७३॥

**-**[88]

इन्द्रघोषा वो वसुंभिः पुरस्तादुपंदधताम्। मनोजवसो वः पितृभिंदिक्षिणत उपंदधताम्। प्रचेता वो रुद्रैः पश्चादुपंदधताम्। विश्वकंमां व आदित्यैरुंत्तर्त उपंदधताम्। त्वष्टां वो रूपेरुपरिष्टादुपंदधताम्। संज्ञानं वः पश्चादिति। आदित्यः सर्वोऽग्निः पृथिव्याम्। वायुर्न्तिरक्षे। सूर्यो दिवि। चन्द्रमां दिक्षु। नक्षंत्राणि स्वलोके। एवा ह्यंव। एवा ह्यंग्ने। एवा हि वायो। एवा हींन्द्र। एवा हि पूंषन्। एवा हि देवाः॥ ७४॥

-[२०]

आपंमापाम्पः सर्वाः। अस्माद्स्मादितोऽम्तः। अग्निर्वायुश्च सूर्यश्च। सह संश्चस्क्रिद्या। वाय्वश्वां रश्मिपतंयः। मरींच्यात्मानो अद्रुहः। देवीर्भुवनसूर्वरीः। पुत्रवत्वायं मे सुत। महानाम्नीर्महामानाः। महुसो महसः स्वः॥७५॥

देवीः पंर्जन्यसूर्वरीः। पुत्रवृत्वायं मे सुत। अपाश्चंिष्णम्पा रक्षः। अपाश्चंिष्णम्पारघम्। अपाँघामपंचावर्तिम्। अपंदेवीरितो हित। वज्ञं देवीरजीता ॥ भवंनं देवसूर्वरीः। आदित्यानदितिं देवीम्। योनिनोर्ध्वमुदीषंत॥ ७६॥

भृद्रं कर्णंभिः शृणुयामं देवाः। भृद्रं पंश्येमाक्षभिर्यजंत्राः। स्थिरेरङ्गैं स्तुष्टुवा र संस्तृन्भिः। व्यशेम देविहेतं यदायुः। स्वस्ति न इन्द्रों वृद्धश्रंवाः। स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः। स्वस्ति नस्ताक्ष्यों अरिष्टनेमिः। स्वस्ति नो बृह्स्पतिंदिधातु। केतवो अरुंणासश्च। ऋष्यो वातंरश्नाः। प्रतिष्ठा श्रातधां हि। समाहितासो सहस्रधायंसम्। शिवा नः शन्तंमा भवन्तु। दिव्या आप ओषंधयः। सुमृडीका सरंस्वति। मा ते व्योम सन्दिशे॥७७॥

योऽपां पुष्पं वेदं। पुष्पंवान् प्रजावांन् पशुमान् भंवति। चन्द्रमा वा अपां पुष्पम्। पुष्पंवान् प्रजावांन् पशुमान् भंवति। य एवं वेदं। योऽपामायतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। अग्निर्वा अपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। योऽग्नेरायतंनं वेदं॥७८॥

आयतंनवान् भवति। आपो वा अग्नेरायतंनम्। आयतंनवान् भवति। य एवं वेदं। योऽपामायतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। वायुर्वा अपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। यो वायोरायतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति॥७९॥

आपो वै वायोरायतंनम्। आयतंनवान् भवति। य एवं वेदं। योऽपामायतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। असौ वै तपंत्रपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। योऽमुष्य तपंत आयतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। आपो वा अमुष्य तपंत आयतंनम्॥८०॥

आयतंनवान् भवति। य एवं वेदं। योऽपामायतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। चन्द्रमा वा अपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। यश्चन्द्रमंस आयतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। आपो वै चन्द्रमंस आयतंनम्। आयतंनवान् भवति॥८१॥

य एवं वेदं। योऽपामायतंनुं वेदं। आयतंनवान् भवति। नक्षंत्राणि वा अपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। यो

नक्षंत्राणामायतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। आपो वै नक्षंत्राणामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। य एवं वेदं॥८२॥

योऽपामायतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। पूर्जन्यो वा अपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। यः पूर्जन्यंस्याऽऽयतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। आपो वै पूर्जन्यंस्याऽऽयतंनम्। आयतंनवान् भवति। य पृवं वेदं। योऽपामायतंनं वेदं॥८३॥

आयतंनवान् भवति। संवथ्सरो वा अपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। यः संवथ्सरस्याऽऽयतंनं वेदे। आयतंनवान् भवति। आपो वै संवथ्सरस्याऽऽयतंनम्। आयतंनवान् भवति। य एवं वेदे। यौऽपसु नावं प्रतिष्ठितां वेदे। प्रत्येव तिष्ठति॥८४॥

इमे वै लोका अपसु प्रतिष्ठिताः। तदेषाऽभ्यनूँक्ता। अपाश् रस्मुदंयश्सत्र्। सूर्ये शुक्रश् समार्भृतम्। अपाश् रसंस्य यो रसंः। तं वो गृह्णाम्युत्तममितिं। इमे वै लोका अपाश् रसंः। तेऽमुष्मिन्नादित्ये समार्भृताः। जानुद्व्रीमृत्तरवेदीं खात्वा। अपां पूरियत्वा गुल्फद्रम्॥८५॥

पुष्करपर्णैः पुष्करदण्डैः पुष्करैश्चं सङ्स्तीर्य। तस्मिन्वि-हायसे। अग्निं प्रणीयोपसमाधाये। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। कस्मौत्प्रणीतेऽयम्ग्निश्चीयतें। साप्रणीतेऽयम्पसु ह्ययंं चीयतें। असौ भुवंनेप्यनांहिताग्निरेताः। तम्भितं एता अबीष्टंका उपंदधाति। अग्निहोत्रे दंर्शपूर्णमासयोः। पृशुबन्धे चातुर्मास्येषुं॥८६॥

अथो आहुः। सर्वेषु यज्ञऋतुष्विति। एतद्धे स्मृ वा आहुः शण्डिलाः। कमृग्निं चिनुते। सृत्रियमृग्निं चिन्वानः। स्वथ्सरं प्रत्यक्षेण। कमृग्निं चिनुते। सावित्रमृग्निं चिन्वानः। अमुमादित्यं प्रत्यक्षेण। कमृग्निं चिनुते॥८७॥

नाचिकेतम्भिं चिन्वानः। प्राणान्प्रत्यक्षेण। कम्भिं चिन्ते। चातुर्होत्रियम्भिं चिन्वानः। ब्रह्मं प्रत्यक्षेण। कम्भिं चिन्ते। वैश्वसृजम्भिं चिन्वानः। शरीरं प्रत्यक्षेण। कम्भिं चिन्ते। उपानुवाक्यमाशुम्भिं चिन्वानः॥८८॥

ड्माँ ह्यो कान्य्रत्यक्षेण। कम् भिं चिन्ते। ड्ममां रूणकेतुकम् भिं चिन्वान इति। य एवासौ। इतश्चा ऽमृतंश्चा ऽव्यतीपाती। तिमिति। यौ ऽग्नेर्मिथूया वेदे। मिथुन्वान्नेवति। आपो वा अग्नेर्मिथूयाः। मिथुन्वान्नेवति। य एवं वेदे॥८९॥

[२२]

आपो वा इदमांसन्थ्सिल्लमेव। स प्रजापंतिरेकः पुष्करपूर्णे समंभवत्। तस्यान्तुर्मनंसि कामः समंवर्तत। इदः सृंजेयमिति। तस्माद्यत्पुरुषो मनंसाऽभिगच्छंति। तद्वाचा वंदति। तत्कर्मणा करोति। तदेषाऽभ्यनूँक्ता। कामस्तदग्रे समंवर्त्ताधि। मनंसो रेतः प्रथमं यदासीत्॥९०॥ स्तो बन्धुमसंति निरंविन्दन्न्। हृदि प्रतीष्यां क्वयों मनीषेति। उपैनन्तदुपंनमित। यत्कामो भवंति। य एवं वेदं। स तपोऽतप्यत। स तपंस्तृत्वा। शरीरमधूनुत। तस्य यन्मा १ समासीत्। ततोऽरुणाः केतवो वातंरश्ना ऋषंय उदंतिष्ठन्न्॥९१॥

ये नखाः। ते वैखान्साः। ये वालाः। ते वालखिल्याः। यो रसः। सोऽपाम्। अन्तर्तः कूर्मं भूतः सर्पन्तम्। तमंब्रवीत्। मम् वैत्वङ्गार्सा। समभूत्॥९२॥

नेत्यंब्रवीत्। पूर्वमेवाहिम्हास्मितिं। तत्पुरुंषस्य पुरुष्वत्वम्। स सहस्रंशीर्षा पुरुषः। सहस्राक्षः सहस्रंपात्। भूत्वोदंतिष्ठत्। तमंब्रवीत्। त्वं वै पूर्वर्ं समंभूः। त्विम्दं पूर्वः कुरुष्वेतिं। स इत आदायाऽऽपः॥९३॥

अञ्चलिनां पुरस्तांदुपादंधात्। एवाह्येवेतिं। ततं आदित्य उदंतिष्ठत्। सा प्राची दिक्। अथांरुणः केतुर्दक्षिणत उपादंधात्। एवाह्यग्र इतिं। ततो वा अग्निरुदंतिष्ठत्। सा दंक्षिणा दिक्। अथांरुणः केतुः पृश्चादुपादंधात्। एवा हि वायो इतिं॥९४॥

ततों वायुरुदंतिष्ठत्। सा प्रतीची दिक्। अथांरुणः केतुरुंत्तर्त उपादंधात्। एवाहीन्द्रेतिं। ततो वा इन्द्र उदंतिष्ठत्। सोदींची दिक्। अथांरुणः केतुर्मध्यं उपादंधात्। एवा हि पूष्तितिं। ततो वै पूषोदंतिष्ठत्। सेयं दिक्॥९५॥

अथांरुणः केतुरुपरिष्टादुपादंधात्। एवा हि देवा इति। ततो देवमनुष्याः पितरंः। गृन्धर्वाप्रसरस्श्रोदंतिष्ठन्न्। सोध्वां दिक्। या विप्रुषो विपरापतन्न्। ताभ्योऽसुंरा रक्षा श्रीस पिशाचाश्चोदंतिष्ठन्। तस्मात्ते पराभवन्न्। विप्रुङ्ग्रो हि ते समभवन्न्। तदेषाऽभ्यनूक्ता॥९६॥

आपो ह् यहृंहतीर्गर्भमायत्र्ं। दक्ष्यं दधांना जनयंन्तीः स्वयम्भुम्। ततं इमेध्यसृंज्यन्त् सर्गाः। अद्भो वा इदश् समभूत्। तस्मादिदश् सर्वं ब्रह्मं स्वयम्भिवतिं। तस्मादिदश् सर्वश् शिथिलम्वाऽध्रुवंमिवाभवत्। प्रजापंतिर्वाव तत्। आत्मनाऽऽत्मानं विधायं। तदेवानुप्राविशत्। तदेषाऽभ्यनूँक्ता॥९७॥

विधायं लोकान् विधायं भूतानि। विधाय सर्वाः प्रदिशो दिशंश्च। प्रजापंतिः प्रथम्जा ऋतस्यं। आत्मनाऽऽत्मानंमभि संविवेशेति। सर्वमेवेदमास्वा। सर्वमवरुद्धं। तदेवानुप्रविशति। य एवं वेदं॥९८॥

[२३]

चतुंष्टय्य आपों गृह्णाति। चत्वारि वा अपार रूपाणि। मेघों विद्युत्। स्तुन्यिबुर्वृष्टिः। तान्येवावंरुन्थे। आतपंति वर्ष्यां गृह्णाति। ताः पुरस्तादुपंदधाति। पृता वै ब्रह्मवर्च्स्या आपंः। मुख्त एव ब्रह्मवर्चसमवंरुन्धे। तस्मौन्मुख्तो ब्रह्मवर्चसितरः॥९९॥

कूप्यां गृह्णाति। ता दंक्षिण्त उपंदधाति। पृता वै तेज्ञस्विनीरापंः। तेजं पृवास्यं दक्षिण्तो दंधाति। तस्माद्दक्षिणोऽर्धस्तेज्ञस्वितंरः। स्थावरा गृह्णाति। ताः पश्चादुपंदधाति। प्रतिष्ठिता वै स्थावराः। पश्चादेव प्रतितिष्ठति। वहंन्तीर्गृह्णाति॥१००॥

ता उत्तर्त उपंदधाति। ओजंसा वा पृता वहंन्तीरिवोद्गंतीरिव आकूर्जतीरिव धावंन्तीः। ओजं पृवास्यौत्तर्तो दंधाति। तस्मादुत्तरोऽर्धं ओजस्वितंरः। सम्भार्या गृंह्णाति। ता मध्य उपंदधाति। इयं वै संम्भार्याः। अस्यामेव प्रतितिष्ठति। पुल्वल्या गृंह्णाति। ता उपरिष्टादुपादंधाति॥१०१॥

असौ वै पंल्वयाः। अमुष्यांमेव प्रतितिष्ठति। दिक्षूपंदधाति। दिक्षु वा आपंः। अन्नं वा आपंः। अन्द्र्यो वा अन्नं जायते। यदेवान्द्र्योऽन्नं जायते। तदवंरुन्थे। तं वा एतमंरुणाः केतवो वातंरश्ना ऋषंयोऽचिन्वन्। तस्मांदारुणकेतुकंः॥१०२॥

तदेषाऽभ्यनूँक्ता। केतवो अर्रुणासश्च। ऋष्यो वातंरश्नाः। प्रतिष्ठाः श्तर्धां हि। समाहितासो सहस्र्धायंस्मितिं। श्तर्शश्चेव सहस्रंशश्च प्रतितिष्ठति। य एतम्प्रिं चिंनुते। य उंचैनमेवं वेदं॥१०३॥

[२४]

जानुद्व्रीमुंत्तरवेदीं खात्वा। अपां पूरयति। अपार संर्वत्वायं। पुष्करपूर्णर रुकां पुरुषमित्युपंदधाति। तपो वै पुष्करपूर्णम्। सत्यर रुकाः। अमृतं पुरुषः। एतावृद्वा वाँऽस्ति। यावंदेतत्। यावंदेवास्ति॥१०४॥

तदवंरुन्थे। कूर्ममुपंदधाति। अपामेव मेधमवंरुन्थे। अथौं स्वर्गस्यं लोकस्य सम्ष्ट्रो। आपंमापाम्पः सर्वाः। अस्माद्स्मादितोऽमुतः। अग्निर्वायुश्च सूर्यश्च। सह संश्चस्क्ररिद्धया इति। वाय्वश्वां रिष्म्पत्यः। लोकं पृणच्छिद्रं पृण॥१०५॥

यास्तिस्रः पंरम्जाः। इन्द्रघोषा वो वसुंभिरेवाह्येवेति। पश्चिवत्यं उपंदधाति। पाङ्कोऽग्निः। यावानेवाग्निः। तं चिनुते। लोकं पृणया द्वितीयामुपंदधाति। पश्चं पदा वै विराट्। तस्या वा इयं पादः। अन्तरिक्षं पादः। द्यौः पादः। दिशः पादः। प्रोरंजाः पादः। विराज्येव प्रतितिष्ठति। य पृतमृग्निं चिनुते। य उंचैनमेवं वेदं॥१०६॥

-[२५]

अग्निं प्रणीयोपसमाधायं। तम्भित पृता अबीष्टका उपंदधाति। अग्निहोत्रे दंर्शपूर्णमासयौः। पृशुबन्धे चातुर्मास्येषुं। अथो आहुः। सर्वेषुं यज्ञऋतुष्वितिं। अथे ह स्माहारुणः स्वांयम्भुवंः। सावित्रः सर्वोऽग्निरित्यनंनुषङ्गं मन्यामहे। नाना वा पुतेषां वीर्याणि। कमुग्निं चिनुते॥१०७॥

स्त्रियम्ग्निं चिन्वानः। कम्ग्निं चिन्ते। सावित्रम्ग्निं चिन्वानः। कम्ग्निं चिन्ते। नाचिकेतम्ग्निं चिन्वानः। कम्ग्निं चिन्ते। चातुर्होत्रियम्ग्निं चिन्वानः। कम्ग्निं चिन्ते। वैश्वसृजम्ग्निं चिन्वानः। कम्ग्निं चिन्ते॥१०८॥

उपानुवाक्यंमाशुम्भिं चिंन्वानः। कम्भिं चिंनुते। इममारुणकेतुकम्भिं चिंन्वान इतिं। वृषा वा अभिः। वृषांणौ सङ्स्फालयेत्। हुन्येतांस्य यज्ञः। तस्मान्नानुषज्यः। सोत्तरवेदिषुं ऋतुषुं चिन्वीत। उत्तरवेद्याङ् ह्यंभिश्चीयतें। प्रजाकांमश्चिन्वीत॥१०९॥

प्राजापत्यो वा एषौं ऽग्निः। प्राजापत्याः प्रजाः। प्रजावांन् भवति। य एवं वेदं। पृशुकांमश्चिन्वीत। संज्ञानं वा एतत् पंशूनाम्। यदापंः। पृशूनामेव संज्ञाने ऽग्निं चिनुते। पृशुमान् भंवति। य एवं वेदं॥११०॥

वृष्टिंकामश्चिन्वीत। आपो वै वृष्टिः। पूर्जन्यो वर्ष्ंको भवति। य एवं वेदं। आमयावी चिन्वीत। आपो वै भेष्जम्। भेषजमेवास्में करोति। सर्वमायुरित। अभिचर श्विन्वीत। वज्रो वा आपंः॥१११॥

वर्ज्रमेव भ्रातृं व्येभ्यः प्रहंरित। स्तृणुत एंनम्। तेजंस्कामो यशंस्कामः। ब्रह्मवर्चसकांमः स्वर्गकांमश्चिन्वीत। एतावृद्वा वाँऽस्ति। यावंदेतत्। यावंदेवास्ति। तदवंरुन्थे। तस्यैतद्वृतम्।

## वर्षंति न धांवेत्॥११२॥

अमृतं वा आपंः। अमृत्स्यानंन्तिरत्यै। नाफ्सु मूत्रंपुरीषं कुर्यात्। न निष्ठीवेत्। न विवसंनः स्नायात्। गृह्यो वा एषौंऽग्निः। एतस्याग्नेरनंतिदाहाय। न पुष्करपूर्णानि हिरंण्यं वाऽधितिष्ठैत्। एतस्याग्नेरनंभ्यारोहाय। न कूर्मस्याश्नीयात्। नोदकस्याघातुंकान्येनंमोदकानिं भवन्ति। अघातुंका आपंः। य एतम्ग्निं चिनुते। य उंचैनमेवं वेदं॥११३॥

**—**[२६]

इमानुंकं भुंबना सीषधेम। इन्द्रेश्च विश्वें च देवाः। यज्ञं चं नस्तन्वं चं प्रजां चं। आदित्यैरिन्द्रंः सह सीषधातु। आदित्यैरिन्द्रः सगंणो मुरुद्धिः। अस्माकं भूत्विवता तनूनाम्। आप्नंबस्व प्रप्लंबस्व। आण्डीभंवज् मा मुहुः। सुखादीन्दुंःखनिधनाम्। प्रतिमुश्चस्व स्वां पुरम्॥११४॥

मरींचयः स्वायम्भुवाः। ये शरीराण्यंकल्पयत्र्। ते ते देहं केल्पयन्तु। मा चं ते ख्यास्मं तीरिषत्। उत्तिष्ठत् मा स्वंप्ता अग्निमिच्छध्वं भारताः। राज्ञः सोमस्य तृप्तासः। सूर्येण स्युजोषसः। युवां सुवासाः। अष्टाचंक्रा नवंद्वारा॥११५॥

देवानां पूर्रयोध्या। तस्यार् हिरण्मयः कोशः। स्वर्गो लोको ज्योतिषाऽऽवृंतः। यो वै तां ब्रह्मणो वेद। अमृतेनाऽऽवृतां पुरीम्। तस्मै ब्रह्म चं ब्रह्मा च। आयुः कीर्तिं प्रजां दंदुः। विभाजमाना ह हरिणीम्। यशसां सम्पुरीवृंताम्। पुर हिरण्मंयीं ब्रह्मा॥११६॥

विवेशांऽप्राजिता। पराङेत्यंज्याम्यी। पराङेत्यंनाश्की। इह चांमुत्रं चान्वेति। विद्वान्देवासुरानुंभ्यान्। यत्कुंमारी मन्द्रयंते। यद्योषिद्यत्पंतिव्रतां। अरिष्टं यत्किं चं क्रियतें। अग्निस्तदनुंवेधति। अशृतांसः शृंतास्श्व॥११७॥

युज्वानो येऽप्यंयुज्वनंः। स्वंर्यन्तो नापेंक्षन्ते। इन्द्रंमुग्निं चं ये विदुः। सिकंता इव संयन्ति। रश्मिभिः समुदीरिताः। अस्माल्लोकादंमुष्माच। ऋषिभिरदात्पृश्निभिः। अपेत वीत वि चं सर्पतातः। येऽत्र स्थ पुराणा ये च नूतंनाः। अहोभिरद्भिर्त्तु-भिर्व्यक्तम्॥११८॥

यमो दंदात्ववसानंमस्मै। नृ मुंणन्तु नृपात्वर्यः। अकृष्टा ये च कृष्टंजाः। कुमारीषु कनीनीषु। जारिणीषु च ये हिताः। रेतः पीता आण्डंपीताः। अङ्गिरेषु च ये हुताः। उभयान् पुत्रंपौत्रकान्। युवेऽहं यमराजंगान्। श्तिमन्नु श्ररदः॥११९॥

अदो यद्वह्मं विल्बम्। पितृणां चं यमस्यं च। वर्रुणस्याश्विनोर्ग्नेः। मुरुतां च विहायसाम्। काम्प्रयवणं मे अस्तु। स ह्येवास्मिं सुनातनः। इति नाको ब्रह्मिश्रवो रायो धनम्। पुत्रानापो देवीरिहाऽऽहित॥१२०॥

[99]

विशींर्ष्णीं गृध्रंशीर्ष्णीं च। अपेतों निर्ऋति हैथः। परिबाध श्वेतकुक्षम्। निजङ्क श्वे शब्लोदंरम्। स् तान् वाच्यायया सह। अग्रे नाश्य सन्दर्शः। ईर्ष्यासूये बुंभुक्षाम्। मन्युं कृत्यां चे दीधिरे। रथेन किश्शुकावंता। अग्रे नाश्येय सन्दर्शः॥१२१॥

**-**[२८]

पूर्जन्यांय प्रगांयत। दिवस्पुत्रायं मीढुषें। स नों यवसंमिच्छत्। इदं वर्चः पूर्जन्यांय स्वराजें। हृदो अस्त्वन्तंर्न्तद्युंयोत। मृयोभूर्वातो विश्वकृष्टयः सन्त्वस्मे। सुपिप्पूला ओषंधीर्देवगोपाः। यो गर्भमोषंधीनाम्। गर्वां कृणोत्यर्वताम्। पूर्जन्यः पुरुषीणांम्॥१२२॥

[२९]

पुनंमांमैत्विन्द्रियम्। पुन्रायुः पुन्भगंः। पुन्क्राह्मंणमैतु
मा। पुन्द्रविणमैतु मा। यन्मेऽद्य रेतंः पृथिवीमस्कान्।
यदोषंधीरप्यसंर्द्यदापंः। इदं तत्पुन्रादंदे। दीर्घायुत्वाय्
वर्चसे। यन्मे रेतः प्रसिच्यते। यन्म आजांयते पुनंः। तेनं
माम्मृतंं कुरु। तेनं सुप्रजसंं कुरु॥१२३॥

[३०]

अ्द्यस्तिरोऽधाऽजांयत। तवं वैश्रवृणः संदा। तिरोऽधेहि सपुत्रान्नः। ये अपोऽश्नन्तिं केचुन। त्वाष्ट्रीं मायां वैश्रवृणः। रथर् सहस्रवन्ध्रंरम्। पुरुश्चऋर सहंस्राश्वम्। आस्थायायांहि नो बुलिम्। यस्मै भूतानि बुलिमावंहन्ति। धनं गावो हस्ति हिरंण्यमश्वान्॥१२४॥

असाम सुमृतौ युज्ञियंस्य। श्रियं बिश्रुतोऽन्नंमुखीं विराजम्। सुदर्शने च क्रौश्रे च। मैनागे च महागिरौ। शृतद्वाट्टारंगम्न्ता। स्र्हार्यं नगरं तव। इति मन्नाः। कल्पोऽत ऊर्ध्वम्। यदि बिलुर् हरैत्। हिर्ण्यनाभये वितुदयें कौबेरायायं बंिलः॥१२५॥

सर्वभूताधिपतये नम इति। अथ बलि हत्वोपितिष्ठेत। क्षत्रं क्षत्रं वैश्वणः। ब्राह्मणां वयु स्मः। नमस्ते अस्तु मा मां हि सीः। अस्मात्प्रविश्यान्नंमद्धीति। अथ तमग्निमांदधीत। यस्मिन्नेतत्कर्म प्रंयुश्चीत। तिरोऽधा भूः। तिरोऽधा भुवंः॥१२६॥

तिरोऽधाः स्वंः। तिरोऽधा भूर्भुवः स्वंः। सर्वेषां लोकानामाधिपत्यं सीदेति। अथ तमग्निंमिन्धीत। यस्मिन्नेतत्कर्म प्रयुश्चीत। तिरोऽधा भूः स्वाहाँ। तिरोऽधा भुवः स्वाहाँ। तिरोऽधाः स्वंः स्वाहाँ। तिरोऽधाः भूर्युः स्वाहाँ। विरोऽधाः भूर्युः स्वाहाँ। यस्मिन्नस्य काले सर्वा आहुतीर्हुतां भवेयुः॥१२७॥

अपि ब्राह्मणंमुखीनाः। तस्मिन्नहः काले प्रंयुञ्जीत। पर्रः सुप्तजंनाद्वेपि। मास्म प्रमाद्यन्तंमाध्यापयेत्। सर्वार्थाः सिद्ध्यन्ते। य एवं वेद। क्षुध्यन्निदंमजानताम्। सर्वार्था ने सिद्धान्ते। यस्ते विघातुंको भ्राता। ममान्तर्ह्हंदये श्रितः॥१२८॥

तस्मां इममग्रपिण्डं जुहोमि। स मैंऽर्थान्मा विवंधीत्।
मिय् स्वाहाँ। राजाधिराजायं प्रसह्यसाहिनें। नमों वयं
वैश्वणायं कुर्महे। स मे कामान्कामकामांय मह्यम्ं।
कामेश्वरो वैश्वणो दंदातु। कुबेरायं वेश्वणायं। महाराजाय
नमंः। केतवो अरुंणासश्च। ऋषयो वातंरश्नाः। प्रतिष्ठाः
श्वाधां हि। समाहितासो सहस्रधायंसम्। शिवा नः शन्तंमा
भवन्तु। दिव्या आप ओषंधयः। सुमृडीका सरंस्वति। मा
ते व्योम सन्दर्शि॥१२९॥

[३१]

संवथ्सरमेतंद्वतं चरेत्। द्वौ वा मासौ। नियमः संमासेन। तस्मिन्नियमंविशेषाः। त्रिषवणमुदकोपस्पूर्शी। चतुर्थकालपानंभक्तः स्यात्। अहरहर्वा भैक्षंमश्रीयात्। औदुम्बरीभिः समिद्धिरिग्नं परिचरेत्। पुनर्मामैत्त्विन्द्रियमि-त्येतेनऽनुंवाकेन। उद्धृतपरिपूताभिरद्भिः कार्यं कुर्वीत॥१३०॥

अंसश्चयवान्। अग्नये वायवे सूर्याय। ब्रह्मणे प्रंजापृतये। चन्द्रमसे नेक्षत्रेभ्यः। ऋतुभ्यः संवंध्सराय। वरुणायारुणायेति व्रंतहोमाः। प्रवर्ग्यवंदादेशः। अरुणाः काण्डऋषयः। अरण्येऽधीयीरत्र्। भद्रं कर्णभिरिति द्वे जिपत्वा॥१३१॥

महानाम्रीभिरुदक र सं इस्पर्श्य। तमाचौर्यो दद्यात्। शिवा

नः शन्तमेत्योषधीराल्भते। सुमृडीकेति भूमिम्। एवमंपव्गे। धेनुर्दक्षिणा। क॰सं वासंश्च क्षौमम्। अन्यंद्वा शुक्रम्। यंथाशक्ति वा। एवङ्स्वाध्यायंधर्मेण। अरण्यंऽधीयीत। तपस्वी पुण्यो भवति तपस्वी पुण्यो भवति॥१३२॥

[३२]

भद्रं कर्णेभिः शृणुयामं देवाः। भद्रं पंश्येमाक्षभिर्यजंत्राः। स्थिरेरङ्गैं स्तुष्टुवा र संस्तुनूभिः। व्यशंम देविहेतं यदायुः। स्वस्ति न इन्द्रों वृद्धश्रंवाः। स्वस्ति नः पूषा विश्ववंदाः। स्वस्ति नस्ताक्ष्यों अरिष्टनेमिः। स्वस्ति नो बृह्स्पतिंदिधातु॥

॥ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

## ॥द्वितीयः प्रश्नः॥

ॐ नमो ब्रह्मणे नमो अस्त्वग्नये नमेः पृथिव्यै नम् ओषंधीभ्यः। नमो वाचे नमो वाचस्पतये नमो विष्णवे बृह्ते करोमि॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

सह वे देवानां चास्राणां च युज्ञौ प्रतंतावास्तां वय स्वर्गं लोकमें ष्यामो वयमें ष्याम् इति तेऽस्राः स्त्रह्य सहंसैवाचरन् ब्रह्मचर्येण् तपंसैव देवास्तेऽस्रा अमुह्य स्तं न प्राजांन इस्ते परांऽभवन्ते न स्वर्गं लोकमायन् प्रसृतेन वे युज्ञेनं देवाः स्वर्गं लोकमायन् प्रसृतेनास्रेग्न् परांभावयन् प्रसृतो ह वे यंज्ञोपवीतिनों युज्ञोऽप्रंसृतोऽन् पवीतिनो यत्किं चं ब्राह्मणो यंज्ञोपवीत्यधीते यज्ञंत एव तत्तस्मां द्यज्ञोपवीत्येवाधीयीत याज्येद्यजेत वा यज्ञस्य प्रसृत्या अजिनं वासो वा दक्षिण्त उपवीय दक्षिणं बाहुमुद्धंरतेऽवं धत्ते स्व्यमितिं यज्ञोपवीतमेतदेव विपंरीतं प्राचीनावीत स्वंवीतं मानुषम्॥१॥

[१]

रक्षा रेसि ह वां पुरोऽनुवाके तपोग्रंमतिष्ठन्त तान् प्रजापंतिर्वरेणोपामंत्रयत् तानि वरंमवृणीताऽऽदित्यो नो योद्धा इति तान् प्रजापंतिरब्रवीद्योधंयध्वमिति तस्माद्तिष्ठन्तर् ह वा तानि रक्षा रस्यादित्यं योधंयन्ति यावंदस्तमन्वंगात्तानिं ह वा एतानि रक्षा रेसि गायत्रिया- ऽभिमित्रितेनाम्भंसा शाम्यन्ति तद् ह वा एते ब्रह्मवादिनः पूर्वाभिमुखाः सन्ध्यायाँ गायित्रयाऽभिमित्रिता आपं ऊर्ध्वं विक्षिपन्ति ता एता आपो वृज्ञीभूत्वा तानि रक्षा रेसि मन्देहारुणे द्वीपे प्रक्षिपन्ति यत्प्रंदिक्षणं प्रक्रमन्ति तेनं पाप्मानमविधून्वन्त्युद्यन्तंमस्तं यन्तंम् आदित्यमंभिध्यायन् कुर्वन् ब्राह्मणो विद्वान्थ्सकलं भृद्रमंश्रुतेऽसावांदित्यो ब्रह्मिति ब्रह्मेव सन् ब्रह्माप्येति य एवं वेदं॥२॥

[२]

यद्देवा देव्हेळंनं देवांसश्चकृमा व्यम्। आदित्यास्तस्मांन्मा मुश्चत्तिस्यतेन् मामित। देवां जीवनकाम्या यद्वाचाऽनृंत-मूदिम। तस्मांन्न इह मुंश्चत् विश्वं देवाः स्जोषंसः। ऋतेनं द्यावापृथिवी ऋतेन् त्व॰ संरस्वति। कृतान्नंः पाह्येनंसो यत्किं चानृंतमूदिम। इन्द्राग्नी मित्रावर्रुणौ सोमो धाता बृह्स्पतिः। ते नो मुश्चन्त्वेनंसो यद्न्यकृतमारिम। स्जात्श्र॰्सादुत जांमिश्॰्साञ्च्यायंसः श॰सांदुत वा कनीयसः। अनांधृष्टं देवकृतं यदेन्स्तस्मात् त्वम्स्माञ्जातवेदो मुमुग्धि॥३॥

यद्वाचा यन्मनंसा बाहुभ्यांमूरुभ्यांमश्चीवद्धा १ शिश्वैर्यदर्नृतं चकुमा वयम्। अग्निर्मा तस्मादेनंसो गार्हंपत्यः प्रमुंश्चतु चकुम यानि दुष्कृता। येनं त्रितो अंर्णवान्निर्बभूव येन् सूर्यं तमंसो निर्मुमोर्च। येनेन्द्रो विश्वा अर्जहादरातीस्तेनाहं ज्योतिंषा ज्योतिरानशान आंक्षि। यत्कुसींद्मप्रंतीत्तं मयेह

येनं यमस्यं निधिना चरांमि। एतत्तदंग्ने अनृणो भंवामि जीवंन्नेव प्रति तत्तं दधामि। यन्मियं माता यदां पिपेष् यदन्तिरंक्षं यदाशसातिंकामामि त्रिते देवा दिवि जाता यदापं इमं में वरुण तत्त्वां यामि त्वं नो अग्ने स त्वं नो अग्ने त्वमंग्ने अयासिं॥४॥

**-**[३]

यददीं व्यन्नृणमहं बभूवादिं थ्सन्वा सञ्जगर जनें भ्यः। अग्निर्मा तस्मादिन्द्रेश्च संविदानौ प्रमुश्चताम्। यद्धस्तौभ्यां चकर किल्बिषाण्यक्षाणां वृगुर्मुपुजिघ्नमानः। उुग्रुं पुश्या र्च राष्ट्रभृच् तान्यंपस्रसावनुंदत्तामृणानिं। उग्रं पश्ये राष्ट्रंभृत्किल्बिषाणि यदक्षवृंत्तमनुंदत्तमेतत्। नेन्नं ऋणानृणव इथ्समानो युमस्य लोके अधिरज्जराय। अवं ते हेळ उद्तमिममं में वरुण तत्त्वां यामि त्वं नों अग्ने स त्वं नो अग्ने। सङ्कंसुको विकुंसुको निर्ऋथो यश्चं निस्वनः। तेऽ(१)स्मद्यक्ष्ममनांगसो दूरादूरमंचीचतम्। निर्यक्ष्ममचीचते कृत्यां निर्ऋतिं च। तेन योऽ(१)स्मथ्समृच्छातै तमस्मै प्रसुवामसि। दुःशुरुसानुशुरुसाभ्यां घणेनानुघणेन च। तेनान्योऽ(१)स्मथ्समृंच्छाते तमंस्मे प्रसुंवामसि। सं वर्चसा पर्यसा सन्तनूभिरगन्मिह मनसा सर शिवेनं। त्वष्टां नो अत्र विदंधातु रायोऽनुंमार्षु तन्वो(१) यद्विलिष्टम्॥५॥

[8]

आयंष्टि विश्वतों दधद्यम् ग्निर्वरेण्यः। पुनस्ते प्राण आयांति परायक्ष्म र सुवामि ते। आयुर्दा अंग्ने ह्विषों जुषाणो घृतप्रंतीको घृतयोंनिरेषि। घृतं पीत्वा मधु चारु गर्व्यं पितेवं पुत्रम्भिरंक्षतादिमम्। इममंग्न आयंषे वर्चसे कृषि तिग्ममोजों वरुण सर्शिशाधि। मातेवासमा अदिते शर्म यच्छ विश्वं देवा जरंदष्टिर्यथाऽसंत्। अग्न आयूर्षेष पवस आ सुवोर्ज्ञमिषं च नः। आरे बांधस्व दुच्छुनाम्। अग्ने पवंस्व स्वपां अस्मे वर्चः सुवीर्यम्। दधंद्रियं मिय् पोषम्॥६॥

अग्निरऋषिः पर्वमानः पार्श्वजन्यः पुरोहितः। तमीमहे महाग्यम्। अग्ने जातान्प्रणुंदा नः सप्रतान्प्रत्यजाताञ्चातवेदो नुदस्व। अस्मे दीदिहि सुमना अहेळ्ञ्छर्मन्ते स्याम त्रिवरूथ उद्भौ। सहंसा जातान्प्रणुंदा नः सपत्रान्प्रत्यजाताञ्चातवेदो नुदस्व। अधि नो ब्रूहि सुमन्स्यमानो वयः स्याम प्रणुंदा नः सपत्रान्। अग्ने यो नोऽभितो जनो वृको वारो जिघा सपत्रान्। अग्ने यो नोऽभितो जनो वृको वारो जिघा सित। ता इस्त्वं वृत्रहं जिह् वस्वस्मभ्यमाभर। अग्ने यो नोऽभिदासंति समानो यश्च निष्ट्यः। तं वयः समिधं कृत्वा तुभ्यम्ग्नेऽपि दध्मसि॥७॥

यो नः शपादशंपतो यश्चं नः शपंतः शपात्। उषाश्च

तस्मैं निम्रुक् सर्वं पाप समूहताम्। यो नेः स्पत्नो यो रणो मर्तोऽभिदासंति देवाः। इध्मस्येव प्रक्षायंतो मा तस्योच्छेषि किं चन। यो मां द्वेष्टिं जातवेदी यं चाहं द्वेष्मि यश्च माम्। सर्वाङ्क्तानंग्ने सन्दंह याङ्श्राहं द्वेष्मि ये च माम्। यो अस्मभ्यंमरातीयाद्यश्चं नो द्वेषते जनः। निन्दाद्यो अस्मान्दिफ्सांच् सर्वाङ्क्तान्मंष्मुषा कुरु। सर्श्रीतं मे ब्रह्म सर्शितं वीर्या(१)म्बलम्ं। सर्श्रीतं क्षृत्रं में जिष्णु यस्याहमस्मिं पुरोहितः। उदेषां बाहू अतिरमुद्वर्चो अथो बलम्ं। क्षिणोमि ब्रह्मंणाऽमित्रानुन्नंयामि स्वा(१)म् अहम्। पुनर्मनः पुनरायुर्म् आगात्पुनश्चित्तं पुनराधीतं म् आगात्पुनंः प्राणः पुनराकूतं म् आगात्पुनंश्चित्तं पुनराधीतं म् आगात्पुनं विश्वा॥८॥ वैश्वानरो मेऽदंब्यस्तनूपा अवंबाधतां दुरितानि विश्वा॥८॥

[٤]

वैश्वान्राय प्रतिवेदयामो यदीनृण संङ्गरो देवतांस्। स एतान्पाशांन प्रमुचन प्रवेद स नो मुञ्जात दुरितादवद्यात्। वैश्वान्रः पर्वयात्रः प्वित्रैर्यथ्संङ्गरम्भिधावांम्याशाम्। अनोजान्नमनंसा याचंमानो यदत्रैनो अव तथ्संवामि। अमी ये सुभगे दिवि विचृतौ नाम तारंके। प्रेहामृतंस्य यच्छतामेतद्वंद्वक्रमोचंनम्। विजिहीष्वं लोकान्कृंधि बन्धान्मंश्रासि बद्धंकम्। योनेरिव प्रच्यंतो गर्भः सर्वान् प्रथो अनुष्व। स प्रजानन्प्रतिंगृभ्णीत विद्वान्प्रजापंतिः प्रथम्जा ऋतस्यं। अस्माभिर्दत्तं ज्ररसंः प्रस्तादच्छिन्नं तन्तुंमनुसर्श्वरेम॥९॥

तृतं तन्तुमन्वेके अनु सश्चरिन्त् येषां दत्तं पित्र्यमायनवत्। अबुन्ध्वेके दर्दतः प्रयच्छादातुं चेच्छुक्रवा १ स्वर्ग एषाम्। आरंभेथामनु सर्रंभेथार समानं पन्थांमवथो घृतेनं। यद्वां पूर्तं परिविष्टं यदुग्नौ तस्मै गोत्रायेह जायांपती सं रंभेथाम्। यदन्तरिक्षं पृथिवीमुत द्यां यन्मातरं पितरं वा जिहि सिम। अग्निर्मा तस्मादेनंसो गार्हंपत्य उन्नों नेषद्दुरिता यानिं चकुम। भूमिंमा्ताऽदिंतिनीं जनित्रं भ्राताऽन्तरिंक्षम्भिशंस्त एनः। द्यौर्नः पिता पितृयाच्छं भंवासि जामि मित्वा मा विविध्सि लोकात्। यत्रं सुहार्दः सुकृतो मदन्ते विहाय रोगं तुन्वा(१) इ स्वायाम्। अस्त्रोणाङ्गेरह्नुताः स्वर्गे तत्रं पश्येम पितरंं च पुत्रम्। यदन्नमद्यनृतेन देवा दास्यन्नदांस्यनुत वा करिष्यन्। यद्देवानां चक्षुष्यागो अस्ति यदेव किं चं प्रतिजग्राहम्भिर्मा तस्मादनृणं कृणोत्। यदन्रमिद्रा बहुधा विरूपं वासो हिरंण्यमुत गामुजामविम्। यद्देवानां चक्षुष्यागो अस्ति यदेव किं चे प्रतिजग्राहमग्निर्मा तस्मोदनृणं कृणोतु। यन्मयां मनसा वाचा कृत्मेनेः कदाचन। सर्वस्मौत्तस्मौन्मेळितो मोग्धि त्वर हि वेत्थं यथातथम्॥१०॥

**-[٤]** 

वातंरशना हु वा ऋषंयः श्रम्णा ऊर्ध्वमंन्थिनो बंभूवुस्तानृषंयोऽर्थमांय्र्स्ते निलायंमचर्र्स्तेऽनुप्रविशः कूश्माण्डानि ताङ्स्तेष्वन्वंविन्दञ्छूद्धयां च तपंसा च तानृषंयोऽब्रुवन्कथा निलायं चर्थेति त ऋषींनब्रुवन्नमो वोऽस्तु भगवन्तोऽस्मिन्धांमि केनं वः सपर्यामेति तानृषंयोऽब्रुवन्पवित्रं नो ब्रूत् येनारेपसंः स्यामेति त एतानि सूक्तान्यंपश्यन् यद्देवा देवहेळनं यददीं व्यन्नृणमहं ब्भूवाऽऽयुष्टे विश्वतां दधदित्येतैराज्यं जुहुत वेश्वान्राय प्रतिवेदयाम् इत्युपंतिष्ठत् यदंर्वाचीन्मेनो भ्रूणहृत्याया-स्तस्मान्मोक्ष्यध्व इति त एतैरंजुहवुस्तेऽरेपसो-ऽभवन्कर्मादिष्वेतैर्जुहुयात्पूतो देवलोकान्थ्समंश्रुते॥११॥

[७]

कूश्माण्डेर्जुंहुयाद्योऽपूंत इव मन्यंत यथां स्तेनो यथां भ्रूणहैवमेष भंवति योऽयोनौ रेतः सिश्चित् यदंर्वाचीनमेनों भ्रूणहृत्यायास्तस्मांन्मुच्यते यावदेनो दीक्षामुपैति दीक्षित एतेः संतित जुंहोति संवथ्सरं दींक्षितो भंवति संवथ्सरादेवाऽऽत्मानं पुनीते मासं दीक्षितो भंवति यो मासः स संवथ्सरः संवथ्सरादेवाऽऽत्मानं पुनीते चतुंर्विश्शिति रात्रींदीिक्षितो भंवति चतुंर्विश्शितिरर्धमासाः संवथ्सरः संवथ्सरादेवाऽऽत्मानं पुनीते द्वादंश रात्रींदीक्षितो भवित द्वादंश मासाः संवथ्सरः संवथ्सरादेवाऽऽत्मानं पुनीते षड्ठात्रींदीक्षितो भवित षड्ठा ऋतवः संवथ्सरः संवथ्सरादेवाऽऽत्मानं पुनीते तिस्रो रात्रींदीक्षितो भवित त्रिपदां गायत्री गांयत्रिया पृवाऽऽत्मानं पुनीते न मार्समंश्रीयात्र स्त्रियमुपंयात्रोपर्यासीत् जुगुंपसेतानृतात्पयौ ब्राह्मणस्यं वृतं येवागू राजन्यंस्यामिक्षा वैश्यस्याथों सौम्येप्यंध्वर एतद्वतं ब्रूयाद्यदि मन्यंतोपदस्यामीत्योदनं धानाः सक्तूं घृतमित्यनुव्रतयेदात्मनोऽनुंपदासाय॥१२॥

[८]

अजान् ह् वै पृश्नी इंस्तप्स्यमांनान् ब्रह्मं स्वयम्भवंभ्यानंर्ष्त्त ऋषयोऽभवन्तद्दषीणामृषित्वं तां देवतामुपातिष्ठन्त यज्ञकांमास्त एतं ब्रह्मय्ज्ञमंपश्यन्तमाहंर्न्तेनांयजन्त् यद्द्योऽध्यगीषत् ताः पयंआहुतयो देवानांमभवन् यद्यजूर्रेषि घृताहुंतयो यथ्सामांनि सोमांहृतयो यदर्थवीङ्गिरसो मध्याहुतयो यद्माह्मणानीतिहासान् पुराणानि कल्पान्गार्था नाराश्र्सीर्मेदाहुतयो देवानांमभवन्ताभिः क्षुधं पाप्मान्म-पांघुन्नपंहतपाप्मानो देवाः स्वर्गं लोकमायन् ब्रह्मणः सायुंज्यमृषयोऽगच्छन्॥१३॥

पश्च वा एते मंहायज्ञाः संतति प्रतांयन्ते सतति सन्तिष्ठन्ते देवयज्ञः पितृयज्ञो भूतयज्ञो मनुष्ययज्ञो ब्रह्मयज्ञ इति यदुग्रौ जुहोत्यपि समिधं तद्देवयुज्ञः सन्तिष्ठते यत्पितृभ्यः स्वधा करोत्यप्यपस्तित्पंतृयज्ञः सन्तिष्ठते यद्भूतेभ्यो बुलि १ हरित् तद्भंतयज्ञः सन्तिष्ठते यद्ग्राँह्मणेभ्योऽत्रं ददांति तन्मंनुष्ययज्ञः सन्तिष्ठते यथ्स्वाध्यायमधीयीतैकामप्यृचं यजुः साम वा तद्वंह्मयज्ञः सन्तिष्ठते यद्दचोऽधीते पर्यसः कूल्यां अस्य पितृन्थ्स्वधा अभिवंहन्ति यद्यजू ५षि घृतस्यं कूल्या यथ्सामानि सोमं एभ्यः पवते यदर्थवाङ्गिरसो मधौः कूल्या यद्वाँह्मणानीतिहासान् पुंराणानि कल्पान्गार्था नाराश श्सीमें दंसः कूल्यां अस्य पितृन्थ्स्वधा अभिवंहन्ति यद्योऽधींते पर्यआहुतिभिरेव तद्देवा इस्तर्पयति यद्यजू ईषि घृताहुंतिभिर्यथ्सामानि सोमांहुतिभिर्यदर्थवाङ्गिरसो मध्वां-ह्तिभिर्यद्वांह्मणानीतिहासान् पुराणानि कल्पान्गाथां नाराशृ रसीर्में दाहुतिभिरेव तद्देवा इस्तर्पयित त एनं तृप्ता आयुंषा तेर्जसा वर्चसा श्रिया यशंसा ब्रह्मवर्चसेनान्नाद्येन च तर्पयन्ति॥१४॥

**-**[१०]

ब्रह्मयज्ञेनं यक्ष्यमांणः प्राच्यां दिशि ग्रामादछंदिर्द्श उदींच्यां प्रागुदीच्यां वोदितं आदित्ये दंक्षिणत उपवीयोपविश्य हस्तांववनिज्य त्रिराचांमेद्दिः पंरिमृज्यं

सकृदुंपस्पृश्य शिर्श्वक्षुंषी नासिंके श्रोत्रे हृदंयमालभ्य यित्रराचामंति तेन ऋचंः प्रीणाति यद्दिः परिमृजंति तेन यजू रेषि यथ्सकृदुंपस्पृशंति तेन सामानि यथ्सव्यं पाणि पादौ प्रोक्षति यच्छिरश्चक्षुंषी नासिके श्रोत्रे हृदयमालभंते तेनाथंवाङ्गिरसौं ब्राह्मणानीतिहासान् पुराणानि कल्पान्गाथां नाराश १ सी: प्रींणाति दर्भांणां मृहदुंपुस्तीर्योपस्थं कृत्वा प्राङासीनः स्वाध्यायमधीयीतापां वा एष ओषधीना रसो यद्दर्भाः सरंसमेव ब्रह्मं कुरुते दक्षिणोत्तरौ पाणी पादौ कृत्वा सप्वित्रावोमिति प्रतिपद्यत एतद्वै यजुंस्त्रयीं विद्यां प्रत्येषा वागेतत्परममक्षरं तदेतदचा ऽभ्युंक्तमृचो अक्षरे परमे व्योमन् यस्मिन्देवा अधि विश्वे निषेदुर्यस्तन्न वेद किमृचा केरिष्यति य इत्तद्विदुस्त इमे समासत् इति त्रीनेव प्रायुंङ्क भूर्भुवः स्वंरित्यांहैतद्वे वाचः सत्यं यदेव वाचः सत्यं तत्प्रायुङ्कार्थं सावित्रीं गांयत्रीं त्रिरन्वांह पच्छौंऽर्धर्चशोऽनवान संविता श्रियंः प्रसविता श्रियंमेवाऽऽप्नोत्यथौं प्रज्ञातंयैव प्रंतिपदा छन्दा ५सि प्रतिपद्यते॥१५॥

**-**[११]

ग्रामे मनंसा स्वाध्यायमधीयीत दिवा नक्तं वेति हं स्माऽऽह शौच आह्वेय उतारंण्येऽबलं उत वाचोत तिष्ठंन्रुत व्रजन्तुताऽऽसीन उत शयांनोऽधीयीतैव स्वाध्यायं तपंस्वी पुण्यो भवति य एवं विद्वान्थ्स्वाध्यायमधीते नमो ब्रह्मणे नमों अस्त्वग्नये नमः पृथिव्यै नम् ओर्षधीभ्यः। नमों वाचे नमों वाचस्पतंये नमो विष्णंवे बृह्ते कंरोमि॥१६॥

[१२]

मध्यन्दिने प्रबल्मधीयीतासौ खलु वावैष आंदित्यो यद्वाँह्मणस्तस्मात्तर्हि तेऽक्ष्णिष्ठं तपित् तदेषाऽभ्यंक्ता। चित्रं देवानामुदेगादनीकं चक्षुंर्मित्रस्य वर्रुणस्याग्नेः। आऽप्रा द्यावांपृथिवी अन्तरिक्ष्ण् सूर्यं आत्मा जगंतस्तस्थुषश्चेति स वा एष यज्ञः सद्यः प्रतांयते सद्यः सन्तिष्ठते तस्य प्राक् सायमंवभृथो नमो ब्रह्मण् इतिं परिधानीयां त्रिरन्वांहाप उंपस्पृश्यं गृहानेति ततो यत्किं च ददांति सा दक्षिणा॥१७॥

१३

तस्य वा एतस्यं यज्ञस्य मेघों हिवधीनं विद्युदिग्निर्वर्ष हिवः स्तंनियृत्वंषद्वारो यदंवस्फूर्जित् सोऽनुंवषद्वारो वायुरात्माऽमांवास्यां स्विष्टकृद्य एवं विद्वान्मेघे वर्षितं विद्योतंमाने स्तनयंत्यवस्फूर्जित् पर्वमाने वायावंमावास्यांया इत्यंत्तमं स्वाध्यायमधीते तपं एव तत्तंप्यते तपो हि स्वाध्याय इत्यंत्तमं नाक रे रोहत्युत्तमः संमानानां भवित् यावंन्त ह वा इमां वित्तस्यं पूर्णां ददंथ्स्वर्गं लोकं जंयित् तावंन्तं लोकं जंयित् भूयारेसं चाक्ष्ययं चापं पुनर्मृत्यं जंयित् ब्रह्मणः सायुंज्यं गच्छिति॥१८॥

तस्य वा पुतस्यं युज्ञस्य द्वावंनध्यायौ यदात्माऽशुचियंद्देशः समृद्धिर्देवतानि य पुवं विद्वान्महारात्र उषस्युदिते व्रज्ञ इस्तिष्ठन्नासीनः शयानोऽरण्ये ग्रामे वा यावंत्तरसई स्वाध्यायमधीते सर्वां होका अंयति सर्वां होका नंनृणोऽनु-सश्चरित तदेषाभ्यंक्ता। अनृणा अस्मिन्नंनृणाः परेस्मि इ-स्तृतीयं लोके अनृणाः स्योम। ये देवयानां उत पितृयाणाः सर्वांन्यथो अनृणा आक्षीयेमेत्युग्निं वै जातं पाप्मा जंग्राह तं देवा आहंतीभिः पाप्मानमपौघ्नत्राहुंतीनां युज्ञेनं युज्ञस्य दक्षिणाभिदिक्षिणानां ब्राह्मणेन ब्राह्मणस्य छन्दोभिश्छन्देसाङ् स्वाध्यायेनापंहतपाप्मा स्वाध्यायों देवपंवित्रं वा एतत्तं योऽनूष्मुजत्यभागो वाचि भवत्यभागो नाके तदेषाऽभ्यंक्ता। यस्तित्याजं सिखविद्र सर्खायं न तस्यं वाच्यपिं भागो अस्ति। यदी र शृणोत्यलक र शृणोति न हि प्रवेदं सुकृतस्य पन्थामिति तस्मांथ्स्वाध्यायोऽध्येतव्यो यं यं ऋतुमधीते तेनं तेनास्येष्टं भंवत्यग्नेर्वायोरांदित्यस्य सायुंज्यं गच्छति तदेषाऽभ्यंक्ता। ये अविङ्गत वो पुराणे वेदं विद्वा रसंमभितो वदन्त्यादित्यमेव ते परिवदन्ति सर्वे अग्निं द्वितीयं तृतीयं च हर्समिति यावंतीवें देवतास्ताः सर्वा वेदविदिं ब्राह्मणे वंसन्ति तस्माँद्वाह्मणेभ्यों वेदविद्धों दिवे दिवे नमस्कुर्यान्नाश्चीलं कीर्तयेदेता एव देवताः प्रीणाति॥१९॥

[१५]

रिच्यंत इव वा एष प्रेव रिच्यते यो याजयंति प्रतिं वा गृह्णाति याजयित्वा प्रतिगृह्य वाऽनंश्रुन्तिः स्वाध्यायं वेदमधीयीत त्रिरात्रं वां सावित्रीं गांयत्रीम्नवातिरेचयति वरो दक्षिणा वरेणैव वर इंस्पृणोत्यात्मा हि वरंः॥२०॥

१६]

दुहे हु वा एष छन्दा १ सि यो याजयंति स येनं यज्ञऋतुनां याजयेथ्सोऽरंण्यं प्रेत्यं शुचौ देशे स्वाध्यायमेवेन्मधीयन्नासीत तस्यानशंनं दीक्षा स्थानम्प्सद आसंन १ सुत्या वाग्जुहूर्मनं उप्भृद्धृतिर्ध्रुवा प्राणो ह्विः सामाध्वर्यः स वा एष यज्ञः प्राणदंक्षिणोऽनंन्तदक्षिणः समृद्धतरः॥२१॥

[१७]

कृतिधावंकीणीं प्रविशितं चतुर्धेत्यांहुर्ब्रह्मवादिनों मुरुतंः प्राणैरिन्द्रं बलेन बृह्स्पितं ब्रह्मवर्चसेनाग्निमेवतंरेण सर्वेण तस्यैतां प्रायेश्वित्तिं विदां चंकार सुदेवः काँश्यपो यो ब्रह्मचार्यविकरेदमावास्यायाः रात्र्यामग्निं प्रणीयोपसमाधाय द्विराज्यंस्योपघातं जुहोति कामावंकीर्णोऽस्म्यवंकीर्णोऽस्मि काम कामाय स्वाहा कामाभिद्रुग्धोऽस्म्यभिद्रुग्धोऽस्मि काम कामाय स्वाहेत्यमृतं वा आज्यंममृतंमेवाऽऽत्मन्धंते हुत्वा प्रयंताञ्चितः कवांतिर्यङ्काग्निमिन्त्रयेत् सं मांऽऽसिञ्चन्तु मुरुतः सिमन्द्रः सं बृह्स्पितिः। सं

माऽयम्भिः सिश्चत्वायुंषा च बलेन् चाऽऽयुंष्मन्तं करोत् मेति प्रतिं हास्मै मुरुतः प्राणान्दंधित् प्रतीन्द्रो बलं प्रति बृहुस्पतिर्ब्रह्मवर्चसं प्रत्यग्निरितर्थ्सर्वर् सर्वतनुर्भूत्वा सर्वमायुरिति त्रिर्भिमंत्रयेत् त्रिषंत्या हि देवा योऽपूंत इव मन्येत् स इत्थं जुंहुयादित्थम्भिमंत्रयेत् पुनीत प्वाऽऽत्मान्मायुरेवाऽऽत्मन्धंत्ते वरो दक्षिणा वरेणैव वरई स्पृणोत्यात्मा हि वरंः॥२२॥

**-**[86]

भूः प्रपंद्ये भुवः प्रपंद्ये स्वः प्रपंद्ये भूभुवः स्वः प्रपंद्ये ब्रह्म प्रपंद्ये ब्रह्म प्रपंद्ये ब्रह्म प्रपंद्ये ब्रह्म प्रपंद्ये ब्रह्म प्रपंद्ये ब्रह्मकोशं प्रपंद्ये परीवृतो वरीवृतो ब्रह्मणा वर्मणाऽहं तेर्जसा कश्येपस्य यस्मै नमस्तिच्छिरो धर्मो मूर्धानं ब्रह्मोत्तरा हर्नुर्यज्ञोऽधंरा विष्णुर्हृदंय संवथ्सरः प्रजनंनम्श्विनौ पूर्वपादांवित्रिर्मध्यं मित्रावरुणावपर्पादांवित्रिः पुच्छंस्य प्रथमं काण्डं तत इन्द्रस्ततः प्रजापंतिरभयं चतुर्थ स वा एष दिव्यः शांक्षरः शिशुंमारस्त ह य एवं वेदापं पुनर्मृत्यं जयित जयित स्वर्गं लोकं नाध्विन् प्रमीयते नापस प्रमीयते नाग्नौ प्रमीयते नानपत्यः प्रमीयते लुष्वान्नो भवित ध्रुवस्त्वमंसि ध्रुवस्य क्षितमिस् त्वं भूताना् श्रेष्ठोऽसि

त्वां भूतान्युपं पूर्यावंर्तन्ते नमंस्ते नमः सर्वं ते नमो नमः शिशुकुमाराय नमः॥२३॥

[१९]

नमः प्राच्यै दिशे याश्चं देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नमो दक्षिणाये दिशे याश्चं देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नमः प्रतींच्ये दिशे याश्चं देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नम् उदींच्ये दिशे याश्चं देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नमं ऊर्ध्वाये दिशे याश्चं देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नमोऽधंराये दिशे याश्चं देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नमोऽवान्त्राये दिशे याश्चं देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नमो गङ्गायमुनयोर्मध्ये ये वसन्ति ते मे प्रसन्नात्मानश्चिरं जीवितं वर्धयन्ति नमो गङ्गायमुनयोर्मुनिभ्यश्च नमो नमो गङ्गायमुनयोर्मुनिभ्यश्च नमः॥२४॥

**-**[२०]

ॐ नमो ब्रह्मणे नमों अस्त्वग्नये नमेः पृथिव्यै नम् ओषंधीभ्यः। नमों वाचे नमों वाचस्पतंये नमो विष्णंवे बृह्ते कंरोमि॥

॥ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

## ॥ तृतीयः प्रश्नः॥

ॐ तच्छुं योरावृंणीमहे। गातुं युज्ञायं। गातुं युज्ञपंतये। दैवीः स्वस्तिरंस्तु नः। स्वस्तिर्मानुषेभ्यः। ऊर्ध्वं जिंगातु भेषजम्। शं नो अस्तु द्विपदें। शं चतुंष्पदे। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

चित्तिः स्रुक्। चित्तमाज्यम्। वाग्वेदिः। आधीतं ब्र्हिः। केतो अग्निः। विज्ञातम्ग्निः। वाक्पंतिरहोतां। मनं उपवृक्ता। प्राणो ह्विः। सामाध्वर्युः। वाचंस्पते विधे नामन्। विधेमं ते नामं। विधेस्त्वम्स्माकं नामं। वाचस्पतिः सोमं पिबतु। आऽस्मासुं नृम्णन्थाथ्स्वाहां॥१॥

अुष्वर्युः पश्चं च॥———[१]

पृथिवी होताँ। द्यौरंध्वर्युः। रुद्रौंऽग्नीत्। बृह्स्पतिंरुपवक्ता। वार्चस्पते वाचो वीर्येण। सम्भृततमेनायंक्ष्यसे। यजमानाय वार्यम्। आसुवस्करंस्मे। वाचस्पतिः सोमं पिबतु। जजनदिन्द्रंमिन्द्रियाय स्वाहाँ॥२॥

पृथिवी होता दर्श॥———[२]

अग्निर्होताँ। अश्विनाँऽध्वर्यू। त्वष्टाऽग्नीत्। मित्र उंपवृक्ता। सोमः सोमंस्य पुरोगाः। शुक्रः शुक्रस्यं पुरोगाः। श्रातास्तं इन्द्र सोमाः। वातांपेर्हवनश्रुतः स्वाहाँ॥३॥

अ्ग्रिर्होताऽष्टौ॥———[३]

सूर्यं ते चक्षुः। वातं प्राणः। द्यां पृष्ठम्। अन्तरिक्षमात्मा। अङ्गैर्यज्ञम्। पृथिवी १ शरीरैः। वाचंस्पतेऽच्छिंद्रया वाचा। अच्छिंद्रया जुह्नां। दिवि देवावृध् १ होत्रा मेर्यस्व स्वाहां॥४॥

सूर्यं ते नवं॥**———**[४]

महाहं विरहोतां। सृत्यहं विरध्वर्यः। अच्युंतपाजा अग्नीत्। अच्युंतमना उपवक्ता। अना्धृष्यश्चांप्रतिधृष्यश्चं यज्ञस्यां भिग्रो। अयास्यं उद्गाता। वाचंस्पते हृद्विधे नामन्। विधेमं ते नामं। विधेस्त्वम्समाकं नामं। वाचस्पतिः सोमंमपात्। मा दैव्यस्तन्तु श्छेदि मा मंनुष्यंः। नमों दिवे। नमंः पृथिव्ये स्वाहां॥५॥

वाग्घोताँ। दीक्षा पत्नीं। वातों ऽध्वर्युः। आपों ऽभिग्रः। मनों ह्विः। तपंसि जुहोमि। भूर्भृवः सुवेः। ब्रह्मं स्वयम्भु। ब्रह्मंणे स्वयम्भुवे स्वाहाँ॥६॥

वाग्घोता नवं॥———[६]

ब्राह्मण एकंहोता। स युज्ञः। स में ददातु प्रजां प्शून्पुष्टिं यशंः। युज्ञश्चं मे भूयात्। अग्निर्द्धिहोता। स भूर्ता। स में ददातु प्रजां पुशून्पुष्टिं यशंः। भूर्ता चं मे भूयात्। पृथिवी त्रिहोता। स प्रतिष्ठा॥७॥

स में ददातु प्रजां पुशून्पुष्टुं यशंः। प्रतिष्ठा चं मे भूयात्।

अन्तरिक्षं चतुरहोता। स विष्ठाः। स में ददातु प्रजां पृशून्पृष्टिं यशः। विष्ठाश्चं मे भूयात्। वायुः पश्चहोता। स प्राणः। स में ददातु प्रजां पृशून्पृष्टिं यशः। प्राणश्चं मे भूयात्॥८॥

चन्द्रमाः षड्ढोता। स ऋतून्केल्पयाति। स में ददातु प्रजां पृशून्पुष्टिं यशः। ऋतवेश्च मे कल्पन्ताम्। अन्नर्रं सप्तहोता। स प्राणस्यं प्राणः। स में ददातु प्रजां पृशून्पुष्टिं यशः। प्राणस्यं च मे प्राणो भूयात्। द्यौरष्टहोता। सोऽनाधृष्यः॥९॥

स में ददातु प्रजां पृशून्पृष्टिं यशः। अनाधृष्यश्चं भूयासम्। आदित्यो नवंहोता। स तेजस्वी। स में ददातु प्रजां पृशून्पृष्टिं यशः। तेजस्वी चं भूयासम्। प्रजापंतिर्दशंहोता। स इदश् सर्वम्। स में ददातु प्रजां पृशून्पृष्टिं यशः। सर्वं च मे भूयात्॥१०॥

प्रतिष्ठा प्राणर्श्व मे भूयादनाधृष्यः सर्वं च मे भूयात्॥————[9]

अग्निर्यजुंभिः। स्विता स्तोमैः। इन्द्रं उक्थाम्दैः। मित्रावरुणावाशिषाः। अङ्गिरसो धिष्णियैर्ग्निभिः। म्रुतः सदोहविर्धानाभ्याम्। आपः प्रोक्षणीभिः। ओषंधयो ब्र्हिषाः। अदितिर्वेद्याः। सोमो दीक्षयाः॥११॥

त्वष्टेभ्मेनं। विष्णुंर्यज्ञेनं। वसंव आज्येंन। आदित्या दक्षिणाभिः। विश्वें देवा ऊर्जा। पूषा स्वंगाकारेणं। बृह्स्पितिः पुरोधयां। प्रजापंतिरुद्गीथेनं। अन्तरिक्षं प्वित्रेण। वायुः पात्रैः। अहङ् श्रद्धयां॥१२॥ दीक्षया पात्रैरेकं च॥----[८]

सेनेन्द्रंस्य। धेना बृह्स्पतेः। पृत्थ्यां पूष्णः। वाग्वायोः। दीक्षा सोमंस्य। पृथिव्यंग्नेः। वसूनां गायत्री। रुद्राणां त्रिष्टुक्। आदित्यानां जगती। विष्णोरनुष्टुक्॥१३॥

वर्रणस्य विराट्। यज्ञस्यं पृङ्किः। प्रजापंतरनुंमितः। मित्रस्यं श्रद्धा। स्वितुः प्रसूंतिः। सूर्यस्य मरीचिः। चन्द्रमंसो रोहिणी। ऋषीणामरुन्यती। पूर्जन्यस्य विद्युत्। चतंस्रो दिशः। चतंस्रोऽवान्तरिद्धाः। अहंश्च रात्रिश्च। कृषिश्च वृष्टिश्च। त्विषिश्चापंचितिश्च। आपृश्चौषंधयश्च। ऊर्क्व सूनृतां च देवानां पत्नयः॥१४॥

देवस्यं त्वा सिवतुः प्रसिवं। अश्विनौर्बाहुभ्याम्। पूष्णो हस्तौभ्यां प्रतिगृह्णामि। राजां त्वा वरुणो नयतु देवि दक्षिणेऽग्नये हिरण्यम्। तेनांमृतत्वमंश्याम्। वयो दात्रे। मयो मह्यमस्तु प्रतिग्रहीत्रे। क इदं कस्मां अदात्। कामः कामांय। कामो दाता॥१५॥

कार्मः प्रतिग्रहीता। काम् समुद्रमाविश। कार्मन त्वा प्रतिगृह्णामि। कामैतत्तै। एषा ते काम् दक्षिणा। उत्तानस्त्वौङ्गीर्सः प्रतिगृह्णातु। सोमाय वार्सः। रुद्राय गाम्। वरुणायाश्वम्। प्रजापंतये पुरुषम्॥१६॥

मनेवे तल्पम्ं। त्वष्ट्रेऽजाम्। पूष्णेऽविम्ं। निर्ऋंत्या अश्वतरगर्दभौ। हिमवंतो हुस्तिनम्ं। गुन्धर्वाफ्स्राभ्यंः स्नगलं कर्णे। विश्वेभ्यो देवेभ्यो धान्यम्। वाचेऽन्नम्ं। ब्रह्मण ओदनम्। सुमुद्रायापंः॥१७॥

उत्तानायाँङ्गीर्सायानंः। वैश्वान्राय रथम्ँ। वैश्वान्रः प्रत्नथा नाक्मारुहत्। दिवः पृष्ठं भन्दंमानः सुमन्मंभिः। स पूर्ववञ्चनयंञ्चन्तवे धनम्ँ। समानमंज्मा परियाति जागृंविः। राजाँ त्वा वर्रुणो नयतु देवि दक्षिणे वैश्वान्राय रथम्ँ। तेनांमृत्त्वमंश्याम्। वयो दात्रे। मयो मह्यंमस्तु प्रतिग्रहीत्रे॥१८॥

क इदं कस्मां अदात्। कामः कामांय। कामों दाता। कामः प्रतिग्रहीता। कामः समुद्रमा विंश। कामेंन त्वा प्रतिंगृह्णामि। कामैतत्तें। एषा तें काम् दक्षिणा। उत्तानस्त्वांक्षीर्सः प्रतिंगृह्णातु॥१९॥

दाता पुरुषमर्पः प्रतिग्रहीत्रे नवं च॥------[१०]

सुवर्णं घर्मं परिवेद वेनम्। इन्द्रंस्यात्मानं दश्धा चरंन्तम्। अन्तः संमुद्रे मनंसा चरंन्तम्। ब्रह्मान्वंविन्द्दशंहोतार्मर्णं। अन्तः प्रविष्टः शास्ता जनानाम्। एकः सन्बंहुधा विचारः। श्वतः शुक्राणि यत्रैकं भवंन्ति। सर्वे वेदा यत्रैकं भवंन्ति। सर्वे होतांरो यत्रैकं भवंन्ति। समानंसीन आत्मा जनानाम्॥२०॥

अन्तः प्रविष्टः शास्ता जनांना सर्वांत्मा। सर्वाः प्रजा यत्रेकं भवंन्ति। चतुंरहोतारो यत्रं सम्पदं गच्छंन्ति देवैः। समानंसीन आत्मा जनांनाम्। ब्रह्मेन्द्रं मृग्निं जगंतः प्रतिष्ठाम्। दिव आत्मान से सिवतारं बृह्स्पतिम्। चतुंरहोतारं प्रदिशोऽनं क्रुप्तम्। वाचो वीर्यं तप्साऽन्वंविन्दत्। अन्तः प्रविष्टं कुर्तारंमेतम्। त्वष्टांर रूपाणि विकुर्वन्तं विपश्चिम्॥२१॥

अमृतंस्य प्राणं यज्ञमेतम्। चतुंर्होतृणामात्मानं क्वयो निचिक्यः। अन्तः प्रविष्टं कर्तारंमेतम्। देवानां बन्धु निहितं गुहांसु। अमृतेन क्रुप्तं यज्ञमेतम्। चतुंर्होतृणामात्मानं क्वयो निचिक्यः। श्वतं नियुतः परिवेद विश्वां विश्ववारः। विश्वमिदं वृंणाति। इन्द्रंस्यात्मा निहितः पश्चंहोता। अमृतं देवानामायुः प्रजानांम्॥२२॥

इन्द्रभ् राजांनभ् सिवतारंमेतम्। वायोरात्मानं क्वयो निर्चिक्यः। रिश्मभ् रंश्मीनां मध्ये तपंन्तम्। ऋतस्य पदे क्वयो निर्पान्ति। य आण्डकोशे भुवंनं बिभर्ति। अनिर्मिण्णः सन्नर्थं लोकान् विचष्टें। यस्याण्डकोशभ् शुष्ममाहुः प्राणमुल्बम्। तेनं क्रुप्तोऽमृतेनाहमंस्मि। सुवर्णं कोश्भ रजंसा परीवृतम्। देवानां वसुधानीं विराजम्॥२३॥

अमृतंस्य पूर्णान्ताम् कलां विचंक्षते। पाद् षड्ढोंतुर्न

किलांविविथ्से। येन्तवंः पश्चधोत क्रुप्ताः। उत वां षुड्वा मन्सोत क्रुप्ताः। त॰ षड्ढांतारमृतुभिः कर्ल्पमानम्। ऋतस्यं पदे क्वयो निपांन्ति। अन्तः प्रविष्टं कुर्तारंमेतम्। अन्तश्चन्द्रमंसि मनस्। चरंन्तम्। सहैव सन्तं न विजानन्ति देवाः। इन्द्रंस्यात्मान शत्रुधा चरंन्तम्॥२४॥

इन्द्रो राजा जगेतो य ईशैं। सप्तहोता सप्तधा विक्रिप्तः। परेण तन्तुं परिष्चियमानम्। अन्तरादित्ये मनसा चरन्तम्। देवाना ह हदयं ब्रह्मान्वंविन्दत्। ब्रह्मैतद्वह्मण् उर्ज्ञभार। अर्क इ श्चोतंन्त हत्यं परिरस्य मध्यैं। आ यस्मिन्थ्सप्त पेरंवः। मेहंन्ति बहुला इश्रियम्। बह्बश्वामिन्द्र गोमंतीम्॥२५॥

अर्च्युतां बहुला १ श्रियम्। स हरिर्वसुवित्तंमः। पे्रिरन्द्रांय पिन्वते। बृह्ध्यामिन्द्रं गोमंतीम्। अर्च्युतां बहुला १ श्रियम्। मह्यमिन्द्रो नियंच्छत्। शृत १ शृता अस्य युक्ता हरीणाम्। अर्वाङा यांतु वसुंभी रश्मिरिन्द्रः। प्रमश्हंमाणो बहुला १ श्रियम्। रश्मिरिन्द्रः सविता मे नियंच्छतु॥२६॥

घृतं तेजो मध्रमिदिन्द्रियम्। मय्ययम्ग्निर्दधातु। हरिः पत्ङ्गः पंट्री सुंपूर्णः। दिविक्षयो नभंसा य एति। स न इन्द्रः कामव्रं देदातु। पश्चारं चक्रं परिवर्तते पृथु। हिरंण्यज्योतिः सिर्रस्य मध्ये। अजस्त्रं ज्योतिर्नभंसा सर्पदेति। स न इन्द्रः कामव्रं देदातु। सप्त युंञ्जन्ति रथमकेचक्रम्॥२७॥

एको अश्वो वहति सप्तनामा। त्रिनाभि च्क्रम्जर्मनंवम्। येनेमा विश्वा भुवंनानि तस्थः। भुद्रं पश्यंन्त उपसेदुरग्रें। तपो दीक्षामृषंयः सुवर्विदंः। ततः क्षत्रं बलमोजंश्च जातम्। तद्स्मे देवा अभि सन्नमन्तु। श्वेत र रिश्मं बोभुज्यमानम्। अपा नेतारं भुवंनस्य गोपाम्। इन्द्रं निचिक्यः पर्मे व्योमन्॥२८॥

रोहिंणीः पिङ्गला एकंरूपाः। क्षरंन्तीः पिङ्गला एकंरूपाः। शृत स्रमाणि प्रयुतानि नाव्यानाम्। अयं यः श्वेतो रिश्मः। परि सर्वमिदं जगत्। प्रजां पश्चन्धनानि। अस्माकं ददातु। श्वेतो रिश्मः परि सर्वं बभूव। सुवन्मह्यं पृशून् विश्वरूपान्। पृतङ्गमृक्तमसुंरस्य माययां॥२९॥

हृदा पंश्यन्ति मनंसा मनीषिणंः। समुद्रे अन्तः क्वयो विचेक्षते। मरीचीनां पदिमिच्छन्ति वेधसंः। पत्ङ्गो वाचं मनंसा बिभिति। तां गन्धर्वोऽवदद्गर्भे अन्तः। तां द्योतंमानाः स्वर्यं मनीषाम्। ऋतस्यं पदे क्वयो निपान्ति। ये ग्राम्याः पृशवो विश्वरूपाः। विरूपाः सन्तो बहुधैकंरूपाः। अग्निस्ताः अग्रे प्रमुमोक्त देवः॥३०॥

प्रजापंतिः प्रजयां संविदानः। वीतः स्तुंकेस्तुके। युवम्स्मासु नियंच्छतम्। प्र प्रं युज्ञपंतिन्तिर। ये ग्राम्याः प्रशवों विश्वरूपाः। विरूपाः सन्तों बहुधैकंरूपाः। तेषाः सप्तानामिह रन्तिरस्तु। रायस्पोषांय सुप्रजास्त्वायं

सुवीर्याय। य आंर्ण्याः पृशवो विश्वरूपाः। विरूपाः सन्तो बहुधैकंरूपाः। वायुस्ता अग्रे प्रमुमोक्तु देवः। प्रजापंतिः प्रजयां संविदानः। इडाये सृप्तं घृतवंचराचरम्। देवा अन्वंविन्दन्गुहां हितम्। य आंर्ण्याः पृशवो विश्वरूपाः। विरूपाः सन्तो बहुधैकंरूपाः। तेषा सप्तानामिह रन्तिरस्तु। रायस्पोषांय सुप्रजास्त्वायं सुवीर्याय॥३१॥

आत्मा जनानां विकुर्वन्तं विपश्चिं प्रजानां वसुधानीं विराजं चरन्तं गोर्मतीं में नियंच्छुत्वेकंचकं व्योमन्माययां देव एकंरूपा अष्टौ चं॥————[११]

सहस्रंशीर्षा पुरुषः। सहस्राक्षः सहस्रंपात्। स भूमिं विश्वतो वृत्वा। अत्यंतिष्ठद्दशाङ्गुलम्। पुरुष पुवेद सर्वम्। यद्भूतं यच्च भव्यम्। उतामृतत्वस्येशांनः। यदन्नेनातिरोहंति। पुतावांनस्य महिमा। अतो ज्याया १ श्रु पूरुषः॥३२॥

पादौँऽस्य विश्वां भूतानि। त्रिपादंस्यामृतंं दिवि। त्रिपादूर्ध्व उदैत्पुरुषः। पादौँऽस्येहाभंवात्पुनः। ततो विष्वङ्कांकामत्। साशनानशने अभि। तस्मौद्धिराङंजायत। विराजो अधि पूरुषः। स जातो अत्यंरिच्यत। पृश्वाद्भूमिमथो पुरः॥३३॥

यत्पुरुषेण ह्विषां। देवा यज्ञमतंन्वत। वसन्तो अस्यासीदाज्यम्। ग्रीष्म इध्मः श्ररद्धविः। सप्तास्यांसन्परि-धर्यः। त्रिः सप्त समिधंः कृताः। देवा यद्यज्ञं तंन्वानाः। अबंध्रन्पुरुषं पृशुम्। तं युज्ञं बुर्हिषि प्रौक्षन्ं। पुरुषं

## जातमंग्रतः॥३४॥

तेनं देवा अयंजन्त। साध्या ऋषंयश्च ये। तस्माँ द्यज्ञार्थ्यते हुतेः। सम्भृतं पृषदाज्यम्। पृशू इस्ता इश्चेके वायव्यान्। आर्ण्यान्ग्राम्याश्च ये। तस्माँ द्यज्ञार्थ्यते हुतेः। ऋचः सामानि जज्ञिरे। छन्दा इसि जज्ञिरे तस्माँत्। यजुस्तस्मांदजायत॥३५॥

तस्मादश्वां अजायन्त। ये के चोभ्यादंतः। गावों ह जिज्ञेर् तस्मात्। तस्मांज्ञाता अंजावयः। यत्पुरुषं व्यंदधः। कृतिधा व्यंकल्पयन्। मुखं किमंस्य कौ बाहू। कावूरू पादांवुच्येते। ब्राह्मणौंऽस्य मुखंमासीत्। बाहू राजन्यः कृतः॥३६॥

ऊरू तर्दस्य यद्वैश्यः। पुद्धाः शूद्रो अंजायत। चुन्द्रमा मनसो जातः। चक्षोः सूर्यो अजायत। मुखादिन्द्रेश्चाग्निश्चं। प्राणाद्वायुरंजायत। नाभ्यां आसीदन्तरिक्षम्। शीष्णो द्यौः समेवर्तत। पुद्धां भूमिर्दिशः श्रोत्रौत्। तथां लोकाः अंकल्पयन्॥३७॥

वेदाहमेतं पुरुषं महान्तम्। आदित्यवंणं तमंसस्तु पारे। सर्वाणि रूपाणि विचित्य धीरंः। नामांनि कृत्वाऽभिवद्न् यदास्ते। धाता पुरस्ताद्यमुंदाज्हारं। श्रृ प्रविद्वान्प्रदिश्श्चतंस्रः। तमेवं विद्वान्मृतं इह भविति। नान्यः पन्था अयंनाय विद्यते। युज्ञेनं युज्ञमंयजन्त देवाः। तानि धर्माणि प्रथमान्यांसन्। ते हु नाकं महिमानंः सचन्ते। यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः॥३८॥

पूर्रेषः पुरौंऽग्रुतोंऽजायत कृतोंऽकल्पयन्नास्ं द्वे चं (ज्यायानिध् पूर्रेषः। अन्यत्र पुर्रेषः॥)॥[१२]

अद्धः सम्भूतः पृथिव्यै रसाँच। विश्वकंर्मणः समंवर्तताधि। तस्य त्वष्टां विदधंद्रूपमेति। तत्पुरुंषस्य विश्वमाजांनमग्रें। वेदाहमेतं पुरुषं महान्तम्ं। आदित्यवंणं तमंसः परंस्तात्। तमेवं विद्वानमृतं इह भंवति। नान्यः पन्थां विद्यतेऽयंनाय। प्रजापंतिश्चरित गर्भे अन्तः। अजायंमानो बहुधा विजांयते॥३९॥

तस्य धीराः परिजानित् योनिम्। मरीचीनां प्दिमिच्छिन्ति वेधसः। यो देवेभ्य आतंपित। यो देवानां पुरोहितः। पूर्वो यो देवेभ्यो जातः। नमो रुचाय ब्राह्मये। रुचं ब्राह्मं जनयंन्तः। देवा अग्रे तदंब्रवन्। यस्त्वैवं ब्राह्मणो विद्यात्। तस्यं देवा अस्नवशें। हीश्चं ते लक्ष्मीश्च पत्र्यौं। अहोरात्रे पार्श्वे। नक्षंत्राणि रूपम्। अश्विनौ व्यात्तम्ं। इष्टं मंनिषाण। अमुं मंनिषाण। सर्वं मनिषाण॥४०॥

जायते वर्शे सप्त चं॥———[१३]

भूतां सन्ध्रियमांणो बिभर्ति। एको देवो बंहुधा निर्विष्टः। यदा भारं तुन्द्रयंते स भर्तुम्। निधायं भारं पुन्रस्तमिति। तमेव मृत्युम्मृतं तमांहुः। तं भूतारं तम् गोप्तारमाहुः। स भृतो भ्रियमाणो बिभर्ति। य एनं वेदं सत्येन भर्तुम्। सद्यो जातमुत जहात्येषः। उतो जर्रन्तं न जहात्येकम्॥४१॥

उतो बहूनेक्महंर्जहार। अतंन्द्रो देवः सदंमेव प्रार्थः। यस्तद्वेद् यतं आब्भूवं। सन्धां च याः सन्द्धे ब्रह्मंणैषः। रमंते तस्मिन्नुत जीणें शयांने। नैनं जहात्यहंः सु पूर्व्येषुं। त्वामापो अनु सर्वौश्चरन्ति जानृतीः। वृथ्सं पर्यसा पुनानाः। त्वमृग्निः हंव्यवाहः सिनैन्थ्से। त्वं भूर्ता मात्तिरश्वौ प्रजानौम्॥४२॥

त्वं यज्ञस्त्वमुंवेवासि सोमंः। तवं देवा हव्मायंन्ति सर्वें। त्वमेकोऽसि बहूननुप्रविष्टः। नमंस्ते अस्तु सुहवों म एधि। नमों वामस्तु शृणुतः हवंं मे। प्राणांपानावजिरः स्श्चरंन्तौ। ह्वयांमि वां ब्रह्मणा तूर्तमेतम्। यो मां द्वेष्टि तं जंहितं युवाना। प्राणांपानौ संविदानौ जंहितम्। अमुष्यासुंनामा सङ्गंसाथाम्॥४३॥

तं में देवा ब्रह्मणा संविदानौ। वधार्य दत्तं तम्ह १ हेनामि। असंज्ञजान स्त आबंभूव। यं यं ज्जान स उं गोपो अस्य। यदा भारं तुन्द्रयंते स भर्तुम्। प्रास्यं भारं पुन्रस्तमिति। तह्रै त्वं प्राणो अभवः। महान्भोगः प्रजापंतेः। भुजः करिष्यमाणः। यद्देवान्प्राणयो नवं॥४४॥

एकं प्रजानाङ्गसाथां नवं॥

**-**[88]

हरि हर्नन्तमनुयन्ति देवाः। विश्वस्येशानं वृष्भं

मंतीनाम्। ब्रह्म सरूपमनुमेदमागाँत्। अर्थनं मा विवधीर्विक्रमस्व। मा छिदो मृत्यो मा वधीः। मा मे बलं विवृहो मा प्रमोषीः। प्रजां मा में रीरिष् आयुंरुग्र। नृचक्षंसं त्वा ह्विषां विधेम। सद्यश्चंकमानायं। प्रवेपानायं मृत्यवे॥४५॥

प्रास्मा आशां अशृण्वन्। कामेनाजनयन्पुनः। कामेन मे काम् आगाँत्। हृदंयाद्भृदंयं मृत्योः। यदमीषांमदः प्रियम्। तदैतूपमाम्भि। परं मृत्यो अनु परेहि पन्थाँम्। यस्ते स्व इतंरो देवयानाँत्। चक्षुंष्मते शृण्वते ते ब्रवीमि। मा नः प्रजाः रीरिषो मोत वीरान्। प्र पूर्वं मनसा वन्दंमानः। नार्थमानो वृष्मं चर्षणीनाम्। यः प्रजानांमेक्राण्मानुंषीणाम्। मृत्युं यंजे प्रथमजामृतस्यं॥४६॥

मृत्यवें वीरा १श्चत्वारिं च॥———[१५]

त्रणिर्विश्वदंर्शतो ज्योतिष्कृदंसि सूर्य। विश्वमा भांसि रोचनम्। उपयामगृहीतोऽसि सूर्याय त्वा भ्राजंस्वत एष ते योनिः सूर्याय त्वा भ्राजंस्वते॥४७॥

-[१६]

आ प्यांयस्व मदिन्तम् सोम् विश्वांभिरूतिभिः। भवां नः सुप्रथंस्तमः॥४८॥

[86]

ईयुष्टे ये पूर्वतरामपंश्यन् व्युच्छन्तीमुषसं मर्त्यासः। अस्माभिरू नु प्रंतिचक्ष्यांऽभूदो ते यंन्ति ये अंपरीषु पश्यान्॥४९॥

**-**[१८]

ज्योतिष्मतीं त्वा सादयामि ज्योतिष्कृतं त्वा सादयामि ज्योतिर्विदं त्वा सादयामि भास्वंतीं त्वा सादयामि ज्वलंन्तीं त्वा सादयामि मल्मलाभवंन्तीं त्वा सादयामि दीप्यंमानां त्वा सादयामि रोचंमानां त्वा सादयाम्यजंस्रां त्वा सादयामि बृहज्योतिषं त्वा सादयामि बोधयंन्तीं त्वा सादयामि जाग्रंतीं त्वा सादयामि॥५०॥

[88]

प्रयासाय स्वाहां ऽऽयासाय स्वाहां वियासाय स्वाहां संयासाय स्वाहों द्यासाय स्वाहां ऽवयासाय स्वाहां शुचे स्वाहा शोकांय स्वाहां तप्यत्वे स्वाहा तपंते स्वाहां ब्रह्महत्यायै स्वाहा सर्वसमै स्वाहां॥५१॥

२०

चित्तर संन्तानेनं भवं युक्रा रुद्रन्तनिम्ना पशुपति ई स्थूलहृद्येनाग्निर हृदंयेन रुद्रं लोहितेन शुर्वं मतस्नाभ्यां महादेवमुन्तः पार्श्वेनौषिष्ठहनर् शिङ्गीनिको्श्याभ्याम्॥५२॥

[२१]

तच्छुं योरावृंणीमहे। गातुं युज्ञायं। गातुं युज्ञपंतये। दैवीः स्वस्तिरंस्तु नः। स्वस्तिर्मानुंषेभ्यः। ऊर्ध्वं जिंगातु भेषजम्। शं नो अस्तु द्विपदें। शं चतुंष्पदे। ॐ शान्तिः शान्तिः॥



## ॥चतुर्थः प्रश्नः॥

नमों वाचे या चोंदिता या चानुंदिता तस्यैं वाचे नमो नमों वाचे नमों वाचस्पतंये नम ऋषिंभ्यो मन्नकृत्यो मन्नपितभ्यो मा मामृषंयो मन्नकृतो मन्नपतंयः परांदुर्माहमृषींन्मन्नकृतो मन्नपतीन्परादां वैश्वदेवीं वाचंमुद्यास शिवामदंस्तां जुष्टां देवेभ्यः शर्म मे द्यौः शर्म पृथिवी शर्म विश्वंमिदं जगंत्। शर्म चन्द्रश्च सूर्यश्च शर्म ब्रह्मप्रजापती। भूतं वंदिष्ये भुवंनं वदिष्ये तेजों वदिष्ये यशों वदिष्ये तपों वदिष्ये ब्रह्मं वदिष्ये सत्यं विदिष्ये तस्मा अहमिदमुपस्तरंणमुपस्तृण उपस्तरंणं में प्रजाये पशूनां भूयादुपस्तरणमहं प्रजाये पशूनां भूयासं प्राणांपानौ मृत्योर्मा पातं प्राणांपानौ मा मां हासिष्टं मधुं मनिष्ये मधुं जनिष्ये मधुं वक्ष्यामि मधुं विदष्यामि मधुंमतीं देवेभ्यो वाचंमुद्यास र शुश्रूषेण्यां मनुष्येभ्यस्तं मा देवा अवन्त् शोभायै पितरोऽनुंमदन्तु। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

नमों वाचे या चोंदिता या चानुंदिता तस्यैं वाचे नमो नमों वाचे नमों वाचस्पतंये नम् ऋषिंभ्यो मत्रकृद्धो मत्रंपतिभ्यो मा मामृषंयो मत्रकृतों मत्रुपतंयः परांदुर्माहमृषींन्मत्रकृतो मत्रुपतीन्परांदां वैश्वदेवीं वाचंमुद्यास शिवामदंस्तां जुष्टां देवेभ्यः शर्म मे द्योः शर्म पृथिवी शर्म विश्वंमिदं जगंत्। शर्म चन्द्रश्च सूर्यश्च शर्म ब्रह्मप्रजापती। भूतं वंदिष्ये भुवंनं विद्ये तेजों विद्ये यशों विद्ये तपों विद्ये ब्रह्मं विद्ये सत्यं विद्ये तस्मां अहमिदम्पूर्स्तरणम्पूर्पस्तृण उपस्तरणं मे प्रजाये पशूनां भूयादुप्स्तरणम्हं प्रजाये पशूनां भूयास् प्राणापानौ मृत्योमां पातं प्राणापानौ मा मां हासिष्टं मधुं मिन्छे मधुं जिन्छे मधुं विद्यामि मधुं विद्यामि मधुंमतीं देवेभ्यो वाचमुद्यास शृश्रूषेण्यां मनुष्येभ्यस्तं मां देवा अवन्तु शोभाये पितरोऽनुंमदन्तु॥१॥

[१]

युञ्जते मनं उत युञ्जते धियः। विप्रा विप्रंस्य बृह्तो विप्रिश्चतः। वि होत्रां दधे वयुनाविदेक इत्। मही देवस्यं सिवृतः परिष्ठतिः। देवस्यं त्वा सिवृतः प्रंस्वे। अश्विनौर्बाहुभ्याम्। पूष्णो हस्ताभ्यामादंदे। अश्विरस्य नारिरसि। अध्वर्कृद्देवभ्यः। उत्तिष्ठ ब्रह्मणस्पते॥२॥

देवयन्तंस्त्वेमहे। उप प्रयंन्तु मुरुतः सुदानंवः। इन्द्रं प्राशूर्भवा सर्चां। प्रैतु ब्रह्मणस्पतिः। प्र देव्येतु सूनृतां। अच्छां वीरं नर्यं पङ्किरांधसम्। देवा युज्ञं नंयन्तु नः। देवीं द्यावापृथिवी अनुं मे मश्साथाम्। ऋद्यासंमुद्य। मुखस्य शिरंः॥३॥

मुखायं त्वा। मुखस्यं त्वा शीर्ष्णे। इयत्यग्रं आसीः। ऋद्यासंमुद्य। मुखस्य शिरंः। मुखायं त्वा। मुखस्यं त्वा शीर्ष्णे। देवींर्वमीर्स्य भूतस्यं प्रथमजा ऋतावरीः। ऋद्यासंमुद्य। मुखस्य शिरंः॥४॥

मुखायं त्वा। मुखस्यं त्वा शीर्ष्णे। इन्द्रस्यौजींऽसि। ऋद्यासंमुद्य। मुखस्य शिरंः। मुखायं त्वा। मुखस्यं त्वा शीर्ष्णे। अग्निजा असि प्रजापंते रेतंः। ऋद्यासंमुद्य। मुखस्य शिरंः॥५॥

मुखायं त्वा। मुखस्यं त्वा शीष्णी। आयुंधेहि प्राणं धेहि। अपानं धेहि व्यानं धेहि। चक्षुंधेहि श्रोत्रं धेहि। मनों धेहि वाचं धेहि। आत्मानं धेहि प्रतिष्ठां धेहि। मां धेहि मियं धेहि। मधुं त्वा मधुला कंरोतु। मुखस्य शिरोंऽसि॥६॥

यज्ञस्यं पदे स्थंः। गायत्रेणं त्वा छन्दंसा करोमि। त्रैष्टंभेन त्वा छन्दंसा करोमि। जागंतेन त्वा छन्दंसा करोमि। मखस्य रास्नांऽसि। अदितिस्ते बिलं गृह्णातु। पाङ्कंन छन्दंसा। सूर्यस्य हरंसा श्राय। मखोंऽसि॥७॥

पते शिरं ऋतावरीर्ऋद्धासंमुद्य मुखस्य शिर्ः शिर्ः शिरोंऽसि नवं च॥———[२]

वृष्णो अश्वंस्य निष्पदंसि। वर्रणस्त्वा धृतव्रंत आधूंपयतु। मित्रावर्रणयोर्ध्रुवेण धर्मणा। अर्चिषै त्वा। शोचिषै त्वा। ज्योतिषे त्वा। तपंसे त्वा। अभीमं मंहिना दिवम्। मित्रो बंभूव सुप्रथाः। उत श्रवंसा पृथिवीम्॥८॥

मित्रस्यं चर्षणीधृतंः। श्रवों देवस्यं सानुसिम्। द्युम्नं

चित्रश्रंवस्तमम्। सिध्यैं त्वा। देवस्त्वां सिवतोद्वंपतु। सुपाणिः स्वंङ्गुरिः। सुबाहुरुत शक्त्याः। अपंद्यमानः पृथिव्याम्। आशा दिश् आ पृणा उत्तिष्ठ बृहन्भव॥९॥

ऊर्ध्वस्तिष्ठद्भुवस्त्वम्। सूर्यस्य त्वा चक्षुषाऽन्वीक्षे। ऋजवै त्वा। साधवे त्वा। सुक्षित्यै त्वा भूत्यै त्वा। इदमहम्मुमां-मुष्यायणं विशा पृशुभिर्ब्रह्मवर्चसेन् पर्यूहामि। गायत्रेणं त्वा छन्दसाऽऽच्छृंणिद्मे। त्रेष्टुंभेन त्वा छन्दसाऽऽच्छृंणिद्मे। जागंतेन त्वा छन्दसाऽऽच्छृंणिद्मे। छृणत्तुं त्वा वाक्। छृणत्तुं त्वा वाक्। छृणत्तुं त्वाक्। छृणत्तुं त्वाक्। छृणत्तुं त्वाक्। छृण्यं हिवः। छृन्धि वाचम्। छृन्ध्यूर्जम्। छृन्धि हिवः। देवं पुरश्चर सुग्ध्यासं त्वा॥१०॥

पृथिवीं भंव वाख्यद्वं॥-----[3]

ब्रह्मंन् प्रवर्ग्येण् प्रचेरिष्यामः। होतंर्घ्मम्भिष्टुंहि। अग्नीद्रौहिणौ पुरोडाशाविधेश्रय। प्रतिप्रस्थात्विहंर। प्रस्तोतः सामानि गाय। यजुंर्युक्त् सामंभिराक्तंखन्त्वा। विश्वैदिवेरनुंमतं मुरुद्भिः। दक्षिणाभिः प्रतंतं पारियण्णुम्। स्तुभो वहन्तु सुमन्स्यमानम्। स नो रुचं धेह्यहंणीयमानः। भूर्भुवः सुवंः। ओमिन्द्रंवन्तः प्रचंरत॥११॥

अहंणीयमानो द्वे चं॥-----[४]

ब्रह्मन्प्रचंरिष्यामः। होतंर्धर्मम्भिष्टंहि। यमायं त्वा मुखायं त्वा। सूर्यस्य हरंसे त्वा। प्राणाय स्वाहां व्यानाय स्वाहांऽपानाय स्वाहां। चक्षुंषे स्वाहा श्रोत्रांय स्वाहां। मनसे स्वाहां वाचे सरस्वत्ये स्वाहां। दक्षांय स्वाहा ऋतंवे स्वाहां। ओजंसे स्वाहा बलांय स्वाहां। देवस्त्वां सिवता मध्यांऽनक्तु॥१२॥

पृथिवीं तपंसस्रायस्व। अर्चिरंसि शोचिरंसि ज्योतिंरसि तपोऽसि। स॰सींदस्व महा॰ असि। शोचंस्व देववीतंमः। विधूममंग्ने अरुषं मियेध्य। सृज प्रंशस्तदर्शतम्। अञ्जन्ति यं प्रथयंन्तो न विप्राः। वपावंन्तं नाग्निना तपंन्तः। पितुर्न पुत्र उपंसि प्रेष्ठः। आ घुर्मी अग्निमृतयंत्रसादीत्॥१३॥

अनाधृष्या पुरस्तांत्। अग्नेराधिपत्ये। आयुंर्मे दाः। पुत्रवंती दक्षिणृतः। इन्द्रस्याधिपत्ये। प्रजां में दाः। सुषदां पृश्चात्। देवस्यं सिवतुराधिपत्ये। प्राणं में दाः। आश्रुंतिरुत्तरुतः॥१४॥

मित्रावरुणयोराधिपत्ये। श्रोत्रं मे दाः। विधृंतिरुपरिष्टात्। बृह्स्पतेराधिपत्ये। ब्रह्मं मे दाः क्षत्रं में दाः। तेजों मे धा वर्चों मे धाः। यशों मे धास्तपों मे धाः। मनों मे धाः। मनोरश्वांऽसि भूरिपुत्रा। विश्वांभ्यो मा नाष्ट्राभ्यः पाहि॥१५॥

सूपसदां मे भूया मा मां हिश्सीः। तपोष्वंग्ने अन्तराश् अमित्रान्। तपाशश्संमर्रुषः परंस्य। तपांवसो चिकितानो अचित्तान्। वि तें तिष्ठन्तामुजरां अयासः। चितः स्थ परिचितः। स्वाहां मुरुद्धिः परिश्रयस्व। मा असि। प्रमा असि। प्रतिमा असि॥१६॥ सम्मा असि। विमा असि। उन्मा असि। अन्तरिक्षस्यान्तर्धि-रिस। दिवं तपंसस्रायस्व। आभिर्गीर्भियदतों न ऊनम्। आप्यायय हरिवो वर्धमानः। यदा स्तोतृभ्यो मिहं गोत्रा रुजासि। भूयिष्टभाजो अधं ते स्याम। शुक्रं ते अन्यद्यंज्तं ते अन्यत्॥१७॥

विषुंरूपे अहंनी द्यौरिवासि। विश्वा हि माया अवंसि स्वधावः। भुद्रा ते पूषित्रह रातिरंस्तु। अर्हंन्बिभर्षि सायंकानि धन्वं। अर्हं निष्कं यंज्तं विश्वरूपम्। अर्हं निदन्दंयसे विश्वमञ्जंवम्। न वा ओजीयो रुद्र त्वदंस्ति। गायुत्रमंसि। त्रेष्टुंभमिस। जागंतमिस। मधु मधु मधु॥१८॥ अन्कसादीदुत्रतः पाहि प्रतिमा असि यज्ञतन्ते अन्यज्ञागंतमस्येकं च॥———[५]

दश् प्राचीर्दशं भासि दक्षिणा। दशं प्रतीचीर्दशं भास्युदीचीः। दशोध्वा भांसि सुमन्स्यमानः। स नो रुचं धेह्यहंणीयमानः। अग्निष्ट्वा वसंभिः पुरस्ताँद्रोचयतु गाय्त्रेण् छन्दंसा। स मां रुचितो रोचय। इन्द्रंस्त्वा रुद्रैदंक्षिण्तो रोचयतु त्रैष्टुंभेन् छन्दंसा। स मां रुचितो रोचय। वर्रणस्त्वादित्यैः पृश्लाद्रोचयतु जागंतेन् छन्दंसा। स मां रुचितो रोचय। वर्रणस्त्वादित्यैः पृश्लाद्रोचयतु जागंतेन् छन्दंसा। स मां रुचितो रोचय॥१९॥

द्युतानस्त्वां मारुतो मुरुद्धिरुत्तरतो रोचयत्वानुंष्टुभेन् छन्दंसा। स मां रुचितो रोचय। बृहुस्पतिंस्त्वा विश्वैद्वैरुपिरेष्टाद्रोचयतु पाङ्केन् छन्दंसा। स मां रुचितो रोचय। रोचितस्त्वं देव घर्म देवेष्वसिं। रोचिषीयाहं मनुष्येषु। सम्राह्मम रुचितस्त्वं देवेष्वायुष्मा इस्तेज्स्वी ब्रह्मवर्चस्यंसि। रुचितोऽहं मनुष्येष्वायुष्मा इस्तेज्स्वी ब्रह्मवर्चसी भूयासम्। रुगसि। रुचं मियं धेहि॥२०॥

मिय रुक्। दशं पुरस्तांद्रोचसे। दशं दक्षिणा। दशं प्रत्यङ्डा दशोदङ्कं। दशोध्वों भांसि सुमन्स्यमानः। स नः सम्राडिष्मूर्जं धेहि। वाजी वाजिने पवस्व। रोचितो घर्मो रुंचीय॥२१॥

अपंश्यं गोपामनिपद्यमानम्। आ च परां च प्थिभिश्चरंन्तम्। स स्प्रीचीः स विषूचीर्वसानः। आ वरीवर्ति भुवनेष्वन्तः। अत्रं प्रावीः। मधु माध्वींभ्यां मधु माधूचीभ्याम्। अनुं वां देववीतये। सम्ग्रिर्ग्निनां गत। सं देवनं सिव्ता। स॰ सूर्येण रोचते॥२२॥

स्वाहा समग्निस्तपंसा गत। सं देवेनं सिवता। सः सूर्यंणारोचिष्ट। धूर्ता दिवो विभांसि रजंसः। पृथिव्या धूर्ता। उरोर्न्तरिक्षस्य धूर्ता। धूर्ता देवो देवानाम्। अमर्त्यस्तपोजाः। हृदे त्वा मनंसे त्वा। दिवे त्वा सूर्याय त्वा॥२३॥

ऊर्ध्वमिममध्वरं कृधि। दिवि देवेषु होत्रां यच्छ। विश्वांसां भुवां पते। विश्वंस्य भुवनस्पते। विश्वंस्य मनसस्पते। विश्वंस्य वचसस्पते। विश्वंस्य तपसस्पते। विश्वंस्य ब्रह्मणस्पते। देवश्रस्त्वं देव घर्म देवान्पांहि। तुपोजां वाचंम्समे नियंच्छ देवायुवम्॥२४॥

गर्भो देवानाम्। पिता मंतीनाम्। पिताः प्रजानाम्। मितिः कवीनाम्। सं देवो देवेनं सिवत्रा यंतिष्ट। सः सूर्येणारुक्त। आयुर्दास्त्वम्समभ्यं धर्म वर्चोदा असि। पिता नोऽसि पिता नो बोध। आयुर्धास्तंनूधाः पंयोधाः। वर्चोदा वंरिवोदा द्रंविणोदाः॥२५॥

अन्तिरिक्षप्र उरोर्वरीयान्। अशीमिहं त्वा मा मां हिश्सीः। त्वमंग्ने गृहपंतिर्विशामंसि। विश्वांसां मानुंषीणाम्। शृतं पूर्भिर्यविष्ठ पाह्यश्हंसः। समेद्धार्श् शृतश् हिमाः। तुन्द्राविणश् हार्दिवानम्। इहैव रातयः सन्तु। त्वष्टींमती ते सपेय। सुरेता रेतो दर्धाना। वीरं विदेय तवं सुन्हिशं। माऽहश् रायस्पोषंण वि योषम्॥२६॥

रोच्ते सूर्याय त्वा देवायुवं द्रविणोदा दर्धाना द्वे चं॥—————[ $oldsymbol{9}$ ]

देवस्यं त्वा सिवतुः प्रसिव। अश्विनौर्बाहुभ्याम्। पूष्णो हस्तौभ्यामाददे। अदित्यै रास्नांसि। इड एहि। अदित एहि। सर्रस्वत्येहिं। असावेहिं। असावेहिं। असावेहिं॥२७॥

अदित्या उष्णीषंमसि। वायुरंस्यैडः। पूषा त्वोपावंसृजतु। अश्विभ्यां प्रदापय। यस्ते स्तनंः शश्यो यो मयोभूः। येन विश्वा पुष्यंसि वार्याणि। यो रंत्रुधा वंसुविद्यः सुदर्त्रः। सरंस्वति तिमेह धातंवेकः। उस्रं घुर्मः शिरंष। उस्रं घुर्मं पाहि॥२८॥

घुर्मायं शिश्ष। बृह्स्पतिस्त्वोपंसीदत्। दानंवः स्थ् पेरंवः। विष्वुग्वृतो लोहितेन। अश्विभ्यां पिन्वस्व। सरंस्वत्यै पिन्वस्व। पूष्णे पिन्वस्व। बृह्स्पतंये पिन्वस्व। इन्द्रांय पिन्वस्व। इन्द्रांय पिन्वस्व॥२९॥

गायत्रोऽसि। त्रैष्टुंभोऽसि। जागंतमिस। सहोर्जो भागेनोपमेहिं। इन्द्रौश्विना मधुनः सार्घस्यं। घर्मं पांत वसवो यजंता वट। स्वाहाँ त्वा सूर्यंस्य र्श्मये वृष्टिवनंये जुहोमि। मधुं ह्विरंसि। सूर्यस्य तपंस्तप। द्यावांपृथिवीभ्याँ त्वा परिंगृह्णामि॥३०॥

अन्तरिक्षेण त्वोपंयच्छामि। देवानां त्वा पितृणामनुंमतो भर्तु शकेयम्। तेजोऽसि। तेजोऽनु प्रेहिं। दिविस्पृङ्गा मां हि॰सीः। अन्तरिक्षस्पृङ्गा मां हि॰सीः। पृथिविस्पृङ्गा मां हि॰सीः। पृथिविस्पृङ्गा मां हि॰सीः। सुवंरिसे सुवंर्मे यच्छ। दिवं यच्छ दिवो मां पाहि॥३१॥

एहिं पाहि पिन्वस्व गृह्णामि नवं च॥————[८]

समुद्रायं त्वा वातांय स्वाहाँ। सृतिलायं त्वा वातांय स्वाहाँ। अनाधृष्यायं त्वा वातांय स्वाहाँ। अप्रतिधृष्यायं त्वा वातांय स्वाहां। अवस्यवें त्वा वातांय स्वाहां। दुवंस्वते त्वा वातांय स्वाहां। शिमिद्वते त्वा वातांय स्वाहां। अग्नयें त्वा वसुंमते स्वाहां। सोमांय त्वा रुद्रवंते स्वाहां। वरुंणाय त्वाऽऽदित्यवंते स्वाहां॥३२॥

बृह्स्पतंये त्वा विश्वदें व्यावते स्वाहाँ। स्वित्रे त्वंर्भुमतें विभुमतें प्रभुमते वाजंवते स्वाहाँ। यमाय त्वाऽङ्गिरस्वते पितृमते स्वाहाँ। विश्वा आशां दक्षिणसत्। विश्वां देवानंयाडिह। स्वाहांकृतस्य घूर्मस्यं। मधौः पिबतमिश्वना। स्वाहाऽग्नये युज्ञियांय। शं यजुंिभिः। अश्विना घुर्मं पांत शहिवानम्॥३३॥

अहंदिवाभिक्तिभिः। अनुं वां द्यावांपृथिवी मर्साताम्। स्वाहेन्द्राय। स्वाहेन्द्रावट्। घर्ममंपातमिश्वना हार्दिवानम्। अहंदिवाभिक्तिभिः। अनुं वां द्यावांपृथिवी अमरसाताम्। तं प्रार्व्यं यथा वट्। नमों दिवे। नमः पृथिव्यै॥३४॥

दिवि धां इमं यज्ञम्। यज्ञमिमं दिवि धाः। दिवं गच्छ। अन्तरिक्षं गच्छ। पृथिवीं गच्छ। पश्चं प्रदिशों गच्छ। देवान्धर्मपान्गंच्छ। पितृन्धर्मपान्गंच्छ॥३५॥

आदित्यवंते स्वाहां हार्दिवानं पृथिव्या अष्टौ चं॥———[९]

ड्षे पींपिहि। ऊर्जे पींपिहि। ब्रह्मंणे पीपिहि। क्षुत्रायं पीपिहि। अुद्धः पींपिहि। ओषंधीभ्यः पीपिहि। वनुस्पतिंभ्यः पीपिहि। द्यावांपृथिवीभ्यां पीपिहि। सुभूतायं पीपिहि। ब्रह्मवर्चसायं पीपिहि॥३६॥

यजंमानाय पीपिहि। मह्यं ज्यैष्ठ्यांय पीपिहि। त्विष्यैं त्वा। द्युम्नायं त्वा। इन्द्रियायं त्वा भूत्यैं त्वा। धर्माऽसि सुधर्मा मैं न्यस्मे। ब्रह्मांणि धारय। क्षुत्राणि धारय। विशं धारय। नेत्वा वार्तः स्कन्दयांत्॥३७॥

अमुष्यं त्वा प्राणे सांदयामि। अमुनां सह निंर्थं गंच्छ। यौऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं व्यं द्विष्मः। पूष्णे शरंसे स्वाहाँ। ग्रावंभ्यः स्वाहाँ। प्रतिरेभ्यः स्वाहाँ। द्यावांपृथिवीभ्याः स्वाहाँ। पितृभ्यों धर्मपेभ्यः स्वाहाँ। रुद्रायं रुद्रहोंत्रे स्वाहाँ॥३८॥

अह्रज्यीतिः केतुनां जुषताम्। सुज्योतिज्यीतिषा्ड् स्वाहाँ। रात्रिज्यीतिः केतुनां जुषताम्। सुज्योतिज्यीतिषा्ड् स्वाहाँ। अपीपरो माऽह्रो रात्रियै मा पाहि। पृषा ते अग्ने समित्। तया समिध्यस्व। आयुर्मे दाः। वर्चसा माञ्जीः। अपीपरो मा रात्रिया अह्रों मा पाहि॥३९॥

पुषा ते अग्ने स्मित्। तया समिध्यस्व। आयुंर्मे दाः। वर्चसा माञ्जीः। अग्निज्योतिज्योतिरग्निः स्वाहाँ। सूर्यो ज्योतिज्योतिः सूर्यः स्वाहाँ। भूः स्वाहाँ। हुत १ ह्विः। मधुं ह्विः। इन्द्रंतमेऽग्नौ॥४०॥

पिता नोंऽसि मा मां हिश्सीः। अश्यामं ते देवघर्म।

मधुंमतो वाजंवतः पितुमतः। अङ्गिरस्वतः स्वधाविनः। अशीमिहं त्वा मा मां हिश्सीः। स्वाहाँ त्वा सूर्यस्य रश्मिभ्यः। स्वाहाँ त्वा नक्षंत्रेभ्यः॥४१॥

ब्रह्मवुर्चसार्य पीपिहि स्कुन्दयाँद्रुद्रायं रुद्रहोँत्रे स्वाहाऽह्रों मा पाह्यग्रौ सप्त चं॥———[१०]

घर्म् या ते दिवि शुक्। या गांयत्रे छन्दंसि। या ब्राँह्मणे। या हंविधीनें। तान्तं एतेनावं यजे स्वाहां। घर्म् या तेऽन्तिरंक्षे शुक्। या त्रैष्टुंभे छन्दंसि। या रांजन्यें। याऽऽग्रींधे। तान्तं एतेनावं यजे स्वाहां॥४२॥

घर्म् या ते पृथिव्या १ शुक्। या जागंते छन्दंसि। या वैश्यैं। या सदंसि। तान्तं पृतेनावं यजे स्वाहाँ। अनुंनोऽद्यानुंमितिः। अन्विदंनुमते त्वम्। दिवस्त्वां पर्स्पायाः। अन्तरिक्षस्य तनुवंः पाहि। पृथिव्यास्त्वा धर्मणा॥४३॥

व्यमनुंक्रामाम सुविताय नव्यंसे। ब्रह्मंणस्त्वा पर्स्पायाः। क्षुत्रस्यं तुनुवंः पाहि। विशस्त्वा धर्मणा। व्यमनुंक्रामाम सुविताय नव्यंसे। प्राणस्यं त्वा पर्स्पायः। चक्षुंषस्तुनुवंः पाहि। श्रोत्रंस्य त्वा धर्मणा। व्यमनुंक्रामाम सुविताय नव्यंसे। वत्नुरंसि शं युधायाः॥४४॥

शिशुर्जनंधायाः। शं च विश्व पिरं च विश्वी चतुः स्रिक्तिनीभिर्ऋतस्यं। सदो विश्वायुः शर्म सप्रथाः। अप द्वेषो अप ह्वरंः। अन्यद्वेतस्य सिश्वम। धर्मैतत्तेऽन्नमेतत्पुरीषम्।

तेन् वर्धस्व चाऽऽ चं प्यायस्व। वृधिषीमहिं च वृयम्। आ चं प्यासिषीमहिं॥४५॥

रन्तिर्नामांसि दिव्यो गंन्धर्वः। तस्यं ते पृद्वर्द्वविर्धानम्। अग्निरध्यंक्षाः। रुद्रोऽधिपतिः। समृहमायुंषा। सं प्राणेनं। सं वर्चसा। सं पर्यसा। सं गौपत्येनं। स॰ रायस्पोषेण॥४६॥

व्यंसौ। योंऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं वयं द्विष्मः। अचिंऋदृहृषा हरिः। महान्मित्रो न दंर्शृतः। स॰ सूर्येण रोचते। चिदंसि समुद्रयोनिः। इन्दुर्दक्षः श्येन ऋतावा। हिरंण्यपक्षः शकुनो भुंरुण्युः। महान्थ्स्थस्थै ध्रुव आनिषंत्तः॥४७॥

नमंस्ते अस्तु मा मां हिश्सीः। विश्वावंसुश् सोम गन्ध्वंम्। आपो दृहशुषीः। तृहतेनाव्यायन्। तृद्वववैत्। इन्द्रो रारहाण आसाम्। परि सूर्यस्य परिधीश रंपश्यत्। विश्वावंसुर्भि तन्नो गृणातु। दिव्यो गंन्ध्वा रजंसो विमानः। यद्वां घा सृत्यमुत यन्न विद्या ४८॥

धियों हिन्वानो धिय इन्नों अव्यात्। सिम्नेमिवन्द् चरणे नदीनाम्। अपांवृणोद्दुरो अश्मंत्रजानाम्। प्रासांन्गन्ध्वीं अमृतांनि वोचत्। इन्द्रो दक्षं परिजानादहीनम्। एतत्त्वं देव धर्म देवो देवानुपांगाः। इदमहं मंनुष्यों मनुष्यान्। सोमंपीथानुमेहिं। सह प्रजयां सह रायस्पोषंण। सुमित्रा न आप ओषंधयः सन्तु॥४९॥

दुर्मित्रास्तस्मै भूयासुः। यों ऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं वयं द्विष्मः। उद्वयं तमंस्परिं। उद्वत्यं चित्रम्। इममूषुत्यम्स्मभ्य रं सिनम्। गायत्रं नवीया रसम्। अग्ने देवेषु प्रवोचः॥५०॥ याऽऽग्नींधे तान्तं पृतेनावं यजे स्वाहा धर्मणा शं युधायाः प्यासिषीमिह पोषेण निषंत्तो विद्य

महीनां पयोऽसि विहितं देवत्रा। ज्योतिर्भा असि वनस्पतीनामोषंधीना १ रसः। वाजिनं त्वा वाजिनोऽवं नयामः। ऊर्धं मनः सुवर्गम्॥५१॥

·[१२]

अस्कान्द्यौः पृथिवीम्। अस्कानिष्मो युवागाः। स्कन्नेमा विश्वा भुवना। स्कन्नो युज्ञः प्रजनयतु। अस्कानजनि प्राजनि। आ स्कन्नाज्ञांयते वृषां। स्कन्नात् प्रजनिषीमहि॥५२॥

**-**[१३]

या पुरस्तां द्विद्युदापंतत्। तान्तं पृतेनावं यजे स्वाहां। या देक्षिणतः। या पृश्चात्। योत्तंरतः। योपरिष्टाद्विद्युदापंतत्। तान्तं पृतेनावं यजे स्वाहां॥५३॥

**-**[88]

प्राणाय स्वाहाँ व्यानाय स्वाहांऽपानाय स्वाहाँ। चक्षुंषे स्वाहा श्रोत्रांय स्वाहाँ। मनंसे स्वाहां वाचे सरंस्वत्यै स्वाहाँ॥५४॥

·[१५]

पूष्णे स्वाहां पूष्णे शरेसे स्वाहां। पूष्णे प्रंपुत्थ्यांय स्वाहां पूष्णे नरिन्धंषाय स्वाहां। पूष्णेऽङ्गंणये स्वाहां पूष्णे नरुणांय स्वाहां। पूष्णे सांकेताय स्वाहां॥५५॥

-[१६]

उदंस्य शुष्माँद्भानुर्नात् बिर्मिति। भारं पृथिवी न भूमी प्र शुक्रैतुं देवी मंनीषा। अस्मथ्सुतृष्टो रथो न वाजी। अर्चन्त एके मिह् साममन्वत। तेन सूर्यमधारयन्। तेन सूर्यमरोचयन्। धर्मः शिर्स्तद्यमुग्निः। पुरीषमिस सं प्रियं प्रजयां पृशिभीभीवत्। प्रजापितिस्त्वा सादयतु। तयां देवत्याऽङ्गिर्स्वद्भवा सीद॥५६॥

[१७]

यास्ते अग्न आर्द्रा योनयो याः कुलायिनीः। ये ते अग्न इन्देवो या उ नाभयः। यास्ते अग्ने तनुव ऊर्जो नाम। ताभिस्त्वमुभयीभिः संविदानः। प्रजाभिरग्ने द्रविणेह सीद। प्रजापितिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥५७॥

**-**[१८]

अग्निरंसि वैश्वान्रोंऽसि। संवृथ्यरोंऽसि परिवथ्यरोंऽसि। इदावृथ्यरोंऽसीदुवथ्यरोंऽसि। इद्वथ्यरोंऽसि वथ्यरोंऽसि। तस्यं ते वसुन्तः शिरंः। ग्रीष्मो दक्षिणः पृक्षः। वर्षाः पुच्छम्। श्ररदुत्तंरः पृक्षः। हेम्न्तो मध्यम्। पूर्वपृक्षाश्चितंयः। अपूरपृक्षाः पृरीषम्। अहोरात्राणीष्टंकाः। तस्यं ते मासांश्चार्धमासाश्चं कल्पन्ताम्। ऋतवंस्ते कल्पन्ताम्। संवथ्सरस्ते कल्पताम्। अहोरात्राणि ते कल्पन्ताम्। एति प्रेति वीति समित्युदिति। प्रजापितस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवः सीद॥५८॥

चितंयो नर्व च॥-----[१९]

भूर्भुवः सुवंः। ऊर्ध्व ऊ षु णं ऊतयें। ऊर्ध्वो नंः पाह्यश्हेसः। विधुन्दंद्राणश् समेने बहूनाम्। युवांनुश् सन्तं पिलृतो जंगार। देवस्यं पश्य काव्यं मिह्त्वाद्या मुमारं। सह्यः समान। यद्दते चिंदिभिश्लिषंः। पुरा जुर्तृभ्यं आतृदंः। सन्धांता सन्धिं मुघवां पुरोवसुंः॥५९॥

निष्कंर्ता विह्नंतं पुनंः। पुनंक्र्जा सह रय्या। मा नों घर्म व्यथितो विव्यथो नः। मा नः पर्मधंरं मा रजोंऽनैः। मोष्वंस्माः स्तमंस्यन्त्रा धाः। मा रुद्रियांसो अभिगुंर्वृधानः। मा नः ऋतुंभिर्हीडितेभिर्स्मान्। द्विषांसुनीते मा परां दाः। मा नो रुद्रो निर्ऋतिर्मा नो अस्ताः। मा चावांपृथिवी हीडिषाताम्॥६०॥

उपं नो मित्रावरुणाविहावंतम्। अन्वादींध्याथामिह नेः सखाया। आदित्यानां प्रसिंतिर्हेतिः। उग्रा शतापांष्ठा घविषा परिं णो वृणक्तु। इमं में वरुण तत्त्वां यामि। त्वं नों अग्ने स त्वं नो अग्ने। त्वमंग्ने अयासि। उद्वयं तमस्परि। उदुत्यं चित्रम्। वर्यः सुपूर्णाः॥६१॥

भूर्भुवः सुवंः। मिय् त्यिदिन्द्रियं महत्। मिय् दक्षो मिय् ऋतुंः। मियं धायि सुवीर्यम्। त्रिशुंग्धर्मो विभातु मे। आकूँत्या मनंसा सह। विराजा ज्योतिषा सह। यज्ञेन पर्यसा सह। ब्रह्मणा तेजंसा सह। क्षत्रेण यशंसा सह। सत्येन तपंसा सह। तस्य दोहंमशीमिह। तस्यं सुम्रमंशीमिह। तस्यं भूक्षमंशीमिह। तस्यं त इन्द्रेण पीतस्य मधुंमतः। उपहृत्स्योपहृतो भक्षयामि॥६२॥

यशंसा सह षद्वं॥-----[२१]

यास्ते अग्ने घोरास्तनुवंः। क्षुच् तृष्णां च। अस्नुक्वानांहुतिश्च। अशन्या चं पिपासा चं। सेदिश्चामंतिश्च। एतास्ते अग्ने घोरास्तनुवंः। ताभिरमुं गंच्छ। यौऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं वयं द्विष्मः॥६३॥

[२२]

स्निक् स्नीहिंतिश्च स्निहिंतिश्च। उष्णा चे शीता चे। उग्रा चे भीमा चे। सदाम्नी सेदिरिनेरा। एतास्ते अग्ने घोरास्तुनुवेः। ताभिरमुं गंच्छ। यौऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चे वयं द्विष्मः॥६४॥

[२३]

धुनिश्च ध्वान्तश्चं ध्वनश्चं ध्वनय ईश्च। निलिम्पश्चं विलिम्पश्चं

विक्षिपः॥६५॥

**-**[२४]

उग्रश्च ध्रनिश्च ध्वान्तश्चं ध्वनश्चं ध्वनयईश्च। सहसह्यहाइश्च सहमानश्च सहस्वाइश्च सहीयाइश्च। एत्य प्रेत्यं विक्षिपः॥६६॥

-[२५]

अहोरात्रे त्वोदीरयताम्। अर्धमासास्त्वोदीं जयन्तु। मासास्त्वा श्रपयन्तु। ऋतवस्त्वा पचन्तु। संवथ्सरस्त्वा हन्त्वसौ॥६७॥

२६

खट् फट् जुहि। छिन्धी भिन्धी हुन्धी कट्। इति वार्चः क्रूराणि॥६८॥

**-**[२७]

विगा इंन्द्र विचरंन्थस्पाशयस्व। स्वपन्तंमिन्द्र पशुमन्तंमिच्छ। वर्ज्रेणामुं बोधय दुर्विदत्रम्। स्वपतौंऽस्य प्रहंर भोजंनेभ्यः। अग्ने अग्निना संवंदस्व। मृत्यो मृत्युना संवंदस्व। नमंस्ते अस्तु भगवः। स्कृत्ते अग्ने नमंः। द्विस्ते नमंः। त्रिस्ते नमंः। चतुस्ते नमंः। पश्चकृत्वंस्ते नमंः। दशकृत्वंस्ते नमंः। शृतकृत्वंस्ते नमंः। आस्हस्रकृत्वंस्ते नमंः। अपरिमितकृत्वंस्ते नमंः। नमंस्ते अस्तु मा मो हिश्सीः॥६९॥

| त्रिस्ते नर्मः सप्त चं॥   | <b></b> [२८]  |
|---|---------------|
| असृंन्मुखो रुधिरेणाव्यंक्तः। यमस्यं दूतः श्वपाति                                      | द्वेधांवसि।   |
| गृध्रंः सुप्णंः कुणपं निषेवसे। यमस्यं दूतः प्रहित                                     | गे भुवस्यं    |
| चो॒भयोः॥७०॥   |               |
|   | <u> </u>      |
| यदेतद्वृंकसो भूत्वा। वाग्देंव्यभिरायंसि।  | 1             |
| मेऽभिराय। तं मृत्यो मृत्यवे नय। स आर्त्यार्तिमार्च्छ                                  |               |
|   | <b>—</b> [३०] |
| यदींषितो यदिं वा स्वकामी। भ्येडंको वाचंमेताम्। तामिंन्द्राग्नी ब्रह्मणा संविदानौ। शिव | _             |
| कृणुतं गृहेषुं॥७२॥  | गन्सन्य       |
|   | <b>—</b> [३१] |
| दीर्घमुखि दुर्हणु। मा स्मं दक्षिणतो वंदः। यदिं  | दक्षिणतो      |
| वदाँद्विषन्तुं मेऽवं बाधासै॥७३॥   | -             |
|   | —[३२]         |
| इत्थादुर्लूक् आपंप्तत्। हिर्ण्याक्षो अयोमुखः। र                                       | क्षंसां दूत   |
| आगंतः। तिमृतो नांशयाग्ने॥७४॥  |               |
|   | <b>—</b> [३३] |
| यदेतद्भूतान्यंन्वाविश्यं। दैवीं वार्चं वृदसिं। दि                                     | रूषतो नः      |

परांवद। तान्मृत्यो मृत्यवे नय। त आर्त्याऽऽर्तिमार्च्छन्तु।

अग्निनाऽग्निः संवंदताम्॥७५॥

-[३४]

प्रसार्यं सुक्थ्यौ पर्तसि। सुव्यमक्षिं निपेपिं च। मेहकंस्य चनामंमत्॥७६॥

[३५]

अत्रिणा त्वा क्रिमे हन्मि। कण्वेन ज्मदेग्निना। विश्वावंसोर्ब्रह्मणा हृतः। क्रिमीणा् राजाः। अप्येषाः स्थपतिर्हृतः। अथो माताऽथो पिता। अथो स्थूरा अथो श्रुद्राः। अथो कृष्णा अथो श्रेताः। अथो आ्रातिका हृताः। श्रेताभिः सह सर्वे हृताः॥७७॥

-[३६]

आह्रावंद्य। शृतस्यं ह्विषो यथां। तथ्सत्यम्। यद्मुं यमस्य जम्भयोः। आदंधामि तथा हि तत्। खण्फण्म्रसिं॥७८॥

[३७]

ब्रह्मणा त्वा शपामि। ब्रह्मणस्त्वा शपथेन शपामि। घोरेणं त्वा भृगूणां चक्षुंषा प्रेक्षें। रौद्रेण त्वाङ्गिरसां मनसा ध्यायामि। अघस्यं त्वा धारया विद्धामि। अधरो मत्पंद्यस्वासौ॥७९॥

[३८]

उत्तंद शिमिजावरि। तल्पंजे तल्प उत्तंद। गिरी रनु

प्रवेशय। मरीचीरुप सन्नुंद। यावंदितः पुरस्तांदुदयांति सूर्यः। तावंदितोऽमुं नांशय। यौऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं वयं द्विष्मः॥८०॥

[३९]

भूर्भुवः सुवो भूर्भुवः सुवो भूर्भुवः सुवंः। भुवौँऽद्धायि भुवौँऽद्धायि भुवौँऽद्धायि। नृम्णायि नृम्णं नृम्णायि नृम्णं नृम्णायि नृम्णम्। निधाय्यो वायि निधाय्यो वायि निधाय्यो वायि। ए अस्मे अस्मे। सुवुर्न ज्योतीः॥८१॥

[०४]

पृथिवी समित्। ताम्गिः सिनन्धे। साऽग्निः सिनन्धे। ताम्हः सिनन्धे। सा मा सिनिद्धा। आयुषा तेजसा। वर्चसा श्रिया। यशसा ब्रह्मवर्चसेनं। अन्नाद्येन सिन्ताः स्वाहाँ। अन्तरिक्षः समित्॥८२॥

तां वायुः सिनिन्धे। सा वायु सिनिन्धे। ताम्ह सिनिन्धे। सा मा सिनिद्धा। आयुंषा तेजंसा। वर्चंसा श्रिया। यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं। अन्नाद्येन सिनिन्ता स्वाहाँ। द्यौः सिन्त। तामांदित्यः सिनिन्धे॥८३॥

साऽऽदित्य सिन्धे। तामह सिन्धे। सा मा सिन्दा। आयुंषा तेजंसा। वर्चंसा श्रिया। यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं। अन्नाद्यंन सिन्ता स्वाहाँ। प्राजापत्या मे सिन्दंसि सपत्रक्षयंणी। भ्रातृब्यहा मेऽसि स्वाहाँ। अग्नै

## व्रतपते व्रतं चेरिष्यामि॥८४॥

तच्छंकेयं तन्में राध्यताम्। वायों व्रतपत् आदित्य व्रतपते। व्रतानां व्रतपते व्रतं चेरिष्यामि। तच्छंकेयं तन्में राध्यताम्। द्यौः सुमित्। तामांदित्यः सिमन्धे। साऽऽदित्य सिमन्धे। तामह सिमन्धे। सा मा सिमद्धा। आयुंषा तेर्जसा॥८५॥

वर्चसा श्रिया। यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं। अन्नाद्यंन् सिनंन्ताः स्वाहाँ। अन्तरिक्षः सिनत्। तां वायुः सिनंन्धे। सा वायुः सिनंन्धे। सा वायुः सिनंन्धे। तामृहः सिनंन्धे। सा मा सिनंद्या। आयुंषा तेजसा। वर्चसा श्रिया॥८६॥

यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं। अन्नाद्यंन् सिमंन्ता इस्वाहाँ। पृथिवी सिमत्। ताम् ग्निः सिमंन्धे। साऽग्निः सिमंन्धे। ताम् हः सिमंन्धे। सा मा सिमंद्धा। आयुंषा तेजंसा। वर्चसा श्रिया। यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं॥८७॥

अन्नाद्येन सिमंन्ता स्वाहाँ। प्राजापत्या में सिमदंसि सपत्नक्षयंणी। भ्रातृ व्यहा में ऽसि स्वाहाँ। आदित्य व्रतपते ब्रतमंचारिषम्। तदंशकं तन्में ऽराधि। वायौं व्रतपते ऽग्नें व्रतपते। ब्रतानां व्रतपते ब्रतमंचारिषम्। तदंशकं तन्में ऽराधि॥८८॥

स्मिथ्सिमेंन्थे ब्रुतं चेरिष्याम्यायुंषा तेजंसा वर्चसा श्रिया यशंसा ब्रह्मवर्चसेनाष्टौ चं॥•[४१]

शं नो वार्तः पवतां मात्रिश्वा शं नंस्तपतु सूर्यः।

अहांनिशं भंवन्तु नः शक्ष्यात्रिः प्रतिधीयताम्। शमुषा नो व्यंच्छतु शमांदित्य उदेतु नः। शिवा नः शन्तंमा भव सुमृडीका सरंस्वति। मा ते व्यांम सुन्दिशं। इडांयै वास्त्वंसि वास्तुमद्वांस्तुमन्तों भूयास्म मा वास्तोंश्छिथ्स्मद्यवास्तुः स भूयाद्योंऽस्मान्द्वेष्टि यं चं व्यं द्विष्मः। प्रतिष्ठासिं प्रतिष्ठावंन्तो भूयास्म मा प्रंतिष्ठायांश्छिथ्स्मद्यप्रतिष्ठः स भूयाद्योंऽस्मान्द्वेष्टि यं चं व्यं द्विष्मः। आ वांत वाहि भेषजं वि वांत वाहि यद्रपंः। त्वक्ष् हि विश्वभेषजो देवानां दूत ईयंसे। द्वाविमौ वातौ वातु आ सिन्धोरा परावतः॥८९॥

दक्षं मे अन्य आवातु परान्यो वांतु यद्रपः। यद्दो वांतते गृहेंऽमृतंस्य निधिर्हितः। ततों नो देहि जीवसे ततों नो धेहि भेषजम्। ततों नो मह आवंह वात आवांतु भेषजम्। श्राम्भूर्मयोभूनों हृदे प्र ण आयूर्षेष तारिषत्। इन्द्रंस्य गृहोंऽसि तं त्वा प्रपंद्ये सगुः सार्श्वः। सह यन्मे अस्ति तेनं। भूः प्रपंद्ये भुवः प्रपंद्ये सुवः प्रपंद्ये भूभृंवः सुवः प्रपंद्ये वायुं प्रपद्येऽनांतां देवतां प्रपद्येऽश्मानमाखणं प्रपद्ये प्रजापंतेर्ब्रह्मकोशं ब्रह्म प्रपद्य ओं प्रपद्ये। अन्तरिक्षं म उर्वन्तरं बृहद्ग्रयः पर्वताश्च यया वातः स्वस्त्या स्वंस्तिमान्तयां स्वस्त्या स्वंस्तिमानंसानि। प्राणापानौ मृत्योमां पातं प्राणापानौ मा मां हासिष्टं मियं मेधां मियं

प्रजां मय्यग्निस्तेजों दधातु मियं मेधां मियं प्रजां मयीन्द्रं इन्द्रियं दंधातु मियं मेधां मियं प्रजां मिय् सूर्यो भ्राजों दधातु॥९०॥

द्युभिर्क्तिभः परिपातम्स्मानिरष्टिभिरिश्वना सौभंगेभिः। तन्नो मित्रो वरुणो मामहन्तामिदितिः सिन्धुः पृथिवी उत द्योः। कयां निश्चित्र आ भुंवदूती सदावृधः सखाँ। कया शिचेष्ठया वृता। कस्त्वां सत्यो मदानां मर्हिष्ठो मध्सदन्धंसः। दृढाचिदारुजे वसुं। अभी षुणः सखींनामिवता जरितृणाम्। शृतं भंवास्यूतिभिः। वयः सुपूर्णा उपसेदुरिन्द्रं प्रियमेधा ऋषयो नाधंमानाः। अपं ध्वान्तमूणुंहि पूर्धि चक्षुंर्मुगुध्यंस्मान्निधयेव बद्धान्॥९१॥

शं नों देवीर्भिष्टंय आपों भवन्तु पीतयें। शं योर्भिस्नंवन्तु नः। ईशांना वार्याणां क्षयंन्तीश्चर्षणीनाम्। अपो यांचामि भेषजम्। सुमित्रा न आप ओषंधयः सन्तु दुर्मित्रास्तस्में भूयासुर्यों ऽस्मान्द्वेष्टि यं चं वयं द्विष्मः। आपो हि ष्ठा मंयोभुवस्ता नं ऊर्जे दंधातन। महे रणांय चक्षंसे। यो वंः शिवतंमो रस्स्तस्यं भाजयतेह नंः। उश्तीरिंव मातरंः। तस्मा अरं गमाम वो यस्य क्षयांय जिन्वंथ॥९२॥

आपों जनयंथा च नः। पृथिवी शान्ता साऽग्निनां शान्ता सा में शान्ता शुचर शमयत्। अन्तरिक्षर

शान्तं तद्वायुनां शान्तं तन्में शान्तः शुच ५ शमयतु। द्योः शान्ता साऽऽदित्येनं शान्ता सा में शान्ता शुच ५ शमयतु। पृथिवी शान्तिंरन्तरिंक्ष शान्तिर्द्यौः शान्तिर्दिशः शान्तिरवान्तरदिशाः शान्तिरग्निः शान्तिर्वायुः शान्तिरादित्यः शान्तिश्चन्द्रमाः शान्तिर्नक्षेत्राणि शान्तिरापः शान्तिरोषेधयः शान्तिर्वनस्पतंयः शान्तिर्गौः शान्तिरजा शान्तिरश्वः शान्तिः पुरुषः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिं र्ब्राह्मणः शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः शान्तिर्मे अस्तु शान्तिः। तयाहर शान्त्या सर्वशान्त्या मह्यं द्विपदे चतुंष्पदे च शान्तिं करोमि शान्तिंमें अस्तु शान्तिः। एह श्रीश्च हीश्च धृतिश्च तपों मेधा प्रतिष्ठा श्रद्धा सत्यं धर्मश्चेतानि मोत्तिष्ठन्तुमनूत्तिष्ठन्तु मा मा्ड् श्रीश्च हीश्च धृतिश्च तपो मेधा प्रंतिष्ठा श्रद्धा सत्यं धर्मश्चेतानि मा मा हांसिषुः। उदायुंषा स्वायुषोदोषंधीना ५ रसेनोत्पर्जन्यंस्य शुष्मेणोदंस्थाममृता ५ अनु। तचक्षुंर्देविहेतं पुरस्तांच्छुऋमुचरत्। पश्येम श्रारदः शतं जीवेम शरदेः शतं नन्दाम शरदेः शतं मोदाम श्रदः शतं भवाम श्रदः श्रतः श्रुणवाम श्रदः श्रुतं प्रब्रंवाम श्ररदेः शतमजीताः स्याम शरदेः शतं ज्योक्र सूर्यं दृशे। य उदंगान्महतोऽर्णवाँद्विभ्राजंमानः सरि्रस्य मध्याथ्स मां वृषभो लोहिताक्षः सूर्यो विपश्चिन्मनंसा पुनातु। ब्रह्मंणश्चोतंन्यसि ब्रह्मंण आणी स्थो ब्रह्मंण आवपंनमसि धारितेयं पृंथिवी ब्रह्मणा मही धारितमेनेन महदन्तरिक्षं दिवं दाधार पृथिवी स्सदेवां यद्हं वेद् तद्हं धारयाणि मा मद्वेदोऽधिविस्नंसत्। मेधामनीषे माविशता स्मिची भूतस्य भव्यस्यावंरुध्ये सर्वमायुरयाणि सर्वमायुरयाणि। आभिर्गीर्भियदतों न ऊनमाप्यांयय हरिवो वर्धमानः। यदा स्तोतृभ्यो महिं गोत्रा रुजासिं भूयिष्ठभाजो अधं ते स्याम। ब्रह्म प्रावांदिष्म तन्नो मा हांसीत्। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः। १३॥

प्रावतो दधातु बृद्धां जिन्वंथ दृशे सप्त चं॥————[४२]

नमों वाचे या चोंदिता या चानुंदिता तस्यैं वाचे नमो नमों वाचे नमों वाचस्पतंये नम् ऋषिंभ्यो मञ्जकुद्धो मञ्जंपतिभ्यो मा मामृषंयो मञ्जकृतो मञ्जपतंयः परांदुर्माहमृषींन्मञ्जकृतो मञ्जपतीन्परांदां वैश्वदेवीं वाचंमुद्धास शिवामदंस्तां जुष्टां देवेभ्यः शर्म मे द्धौः शर्म पृथिवी शर्म विश्वमिदं जगत्। शर्म चन्द्रश्च सूर्यश्च शर्म ब्रह्मप्रजापती। भूतं वंदिष्ये भुवंनं विद्ये तेजो विद्ये यशों विद्ये तपों विद्ये ब्रह्मं विद्ये सत्यं वंदिष्ये तस्मा अहमिदमुंप्स्तरंण्मुपंस्तृण उपस्तरंणं मे प्रजाये पश्नां भूयादुप्स्तरंणमहं प्रजाये पश्नां भूयास् प्राणांपानौ मृत्योर्मा पातं प्राणांपानौ मा मां हासिष्टं मधुं मनिष्ये मधुं जनिष्ये मधुं वक्ष्यामि मधुं विद्यामि मधुंमतीं देवेभ्यो वाचंमुद्धास श्रुशूषेण्यां मनुष्येभ्यस्तं मां देवा अवन्तु

शोभायै पितरोऽनुंमदन्तु। ॐ शान्तिः शान्तिः॥

## ॥पञ्चमः प्रश्नः॥

ॐ शं नस्तन्नो मा हांसीत्॥ ॐ शान्तिः शान्तिः॥ देवा वै स्त्रमांसत। ऋद्धिंपरिमितं यशंस्कामाः। तेंंऽब्रुवन्। यन्नः प्रथमं यशं ऋच्छात्। सर्वेषां नस्तथ्सहासदिति। तेषां कुरुक्षेत्रं वेदिरासीत्। तस्यै खाण्ड्वो देक्षिणार्ध आंसीत्। तूर्प्रमृत्तरार्धः। पुरीणज्ञंघनार्धः। मुरवं उत्करः॥१॥

तेषां मुखं वैष्णुवं यशं आर्च्छत्। तन्त्र्यंकामयत। तेनापाकामत्। तं देवा अन्वायन्। यशोऽव्रुरुंश्यमानाः। तस्यान्वागंतस्य। सृव्याद्धनुरजायत। दक्षिणादिषंवः। तस्मादिषुधन्वं पुण्यंजन्म। युज्ञजन्मा हि॥२॥

तमेक् सन्तम्। बहवो नाभ्यंधृष्णुवन्। तस्मादेकंमिषुधन्वि-नम्। बहवोऽनिषुधन्वा नाभिधृंष्णुवन्ति। सोंऽस्मयत। एकं मा सन्तं बहवो नाभ्यंधर्षिषुरितिं। तस्यं सिष्मियाणस्य तेजोऽपांकामत्। तद्देवा ओषंधीषु न्यंमृजुः। ते श्यामाकां अभवन्। स्मुयाका वै नामैते॥३॥

तथ्सम्याकांना इस्मयाकृत्वम्। तस्मांद्वीक्षितेनांपिगृह्यं समेत्व्यम्। तेजंसो धृत्यैं। स धनुः प्रतिष्कभ्यातिष्ठत्। ता उपदीकां अब्रुवन्वरं वृणामहै। अर्थं व इम इस्याम। यत्र कं च खनांम। तद्पोंऽभितृंणदामेति। तस्मांद्पदीका यत्र कं च खनांना। तद्पोंऽभितृंन्दिन्ति॥४॥

वारेवृत् इं ह्यांसाम्। तस्य ज्यामप्यांदन्। तस्य धनुंर्विप्रवंमाण् शिर् उदंवर्तयत्। तद्यावांपृथिवी अनुप्रावंर्तत। यत्प्रावंर्तत। तत्प्रंवर्ग्यस्य प्रवर्ग्यत्वम्। यद्धाँ(४)इत्यपंतत्। तद्धमंस्यं धम्त्वम्। मृह्तो वीर्यमपप्तदितिं। तन्मंहावीरस्यं महावीर्त्वम्॥५॥

यदस्याः समर्भरन्। तथ्सम्राज्ञीः सम्राद्वम्। तः स्तृतं देवतास्त्रेधा व्यंगृह्णत्। अग्निः प्रांतः सवनम्। इन्द्रो माध्यं दिन् सर्वनम्। विश्वेदेवास्तृतीयसवनम्। तेनापंशीर्ष्णा यज्ञेन् यजमानाः। नाशिषोऽवार्रुन्थतः। न सुवर्गं लोकम्भ्यंजयन्। ते देवा अश्विनांवब्रुवन्॥६॥

भिषजौ वै स्थंः। इदं यज्ञस्य शिरः प्रतिधत्तमिति। तावंब्रूतां वरं वृणावहै। ग्रहं एव नावत्रापि गृह्यतामिति। ताभ्यामेतमांश्विनमंगृह्णन्। तावेतद्यज्ञस्य शिरः प्रत्यंधत्ताम्। यत्प्रंवर्ग्यः। तेन सशींष्णा यज्ञेन यजंमानाः। अवाशिषो- उर्रुन्थत। अभि सुंवर्गं लोकमंजयन्। यत्प्रंवर्ग्यं प्रवृणिति। यज्ञस्यैव तच्छिरः प्रतिदधाति। तेन सशींष्णा यज्ञेन यजंमानः। अवाशिषों रुन्थे। अभि सुंवर्गं लोकं जंयति। तस्मादेष आंश्विनप्रंवया इव। यत्प्रंवर्ग्यः॥७॥

उत्करो होते तृंन्दन्ति महावीर्त्वमंब्रुवन्नजयन्थ्सप्त चं॥———[१]

सावित्रं जुंहोति प्रसूँत्यै। चतुर्गृहीतेनं जुहोति। चतुंष्पादः

प्शवंः। प्शूनेवावंरुन्थे। चतंस्रो दिशंः। दिक्ष्वंव प्रतितिष्ठति। छन्दा रंसि देवेभ्योऽपाँकामन्। न वोऽभागानि ह्व्यं वंक्ष्याम् इतिं। तेभ्यं पृतचंतुर्गृहीतमंधारयन्। पुरोनुवाक्यांयै याज्यांयै॥८॥

देवतांयै वषद्गारायं। यचंतुर्गृहीतं जुहोतिं। छन्दा इंस्येव तत् प्रीणाति। तान्यंस्य प्रीतानि देवेभ्यों हृव्यं वहन्ति। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। होत्व्यंं दीक्षितस्यं गृहा(३)इ न होत्व्या(३)मितिं। हृविर्वे दीक्षितः। यज्जंहुयात्। हृविष्कृतं यजमानमुग्नौ प्रदेध्यात्। यन्न जुंहुयात्॥९॥

यज्ञपुरुरुन्तरियात्। यजुरेव वंदेत्। न ह्विष्कृतं यजमानमुग्नौ प्रदर्धाति। न यंज्ञपुरुरुन्तरेति। गायत्री छन्दा इस्यत्यंमन्यत। तस्यै वषद्वारौं उभ्यय्य शिरौं उच्छिनत्। तस्यै द्वेधा रसः परापतत्। पृथिवीमुर्धः प्राविंशत्। पृशूनुर्धः। यः पृथिवीं प्राविंशत्॥१०॥

स खंदिरोऽभवत्। यः पृशून्। सोऽजाम्। यत्खांदिर्यभ्रिर्भ-वंति। छन्दंसामेव रसेन यज्ञस्य शिरः सम्भरित। यदौदुंम्बरी। ऊर्ग्वा उंदुम्बरः। ऊर्जैव यज्ञस्य शिरः सम्भरित। यद्वैण्वी। तेजो वै वेणुं:॥११॥

तेजंसैव यज्ञस्य शिरः सम्भंरति। यद्वैकंङ्कती। भा एवावंरुन्थे। देवस्यं त्वा सवितुः प्रंसुव इत्यभ्रिमादंत्ते प्रसूँत्यै। अश्विनौंर्बाहुभ्यामित्यांह। अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्तौम्। पूष्णो हस्तौभ्यामित्यांहु यत्यै। वज्रं इव वा एषा। यदभ्रिः। अभ्रिरिस् नारिर्सीत्यांह शान्त्यै॥१२॥

अध्वर्कृद्देवेभ्य इत्यांह। युज्ञो वा अध्वरः। युज्ञकृद्देवेभ्य इति वावैतदांह। उत्तिष्ठ ब्रह्मणस्पत् इत्यांह। ब्रह्मणेव युज्ञस्य शिरोऽच्छैति। प्रेतु ब्रह्मणस्पतिरित्यांह। प्रेत्येव युज्ञस्य शिरोऽच्छैति। प्र देव्येतु सूनृतेत्यांह। युज्ञो वे सूनृतां। अच्छां वीरं नयं पङ्किराधसमित्यांह॥१३॥

पाङ्गो हि युज्ञः। देवा युज्ञं नंयन्तु न इत्यांह। देवानेव यंज्ञिनयः कुरुते। देवीं द्यावापृथिवी अनुं मे मश्साथामित्यांह। आभ्यामेवानुंमतो युज्ञस्य शिरः सम्भंरित। ऋद्यासंमुद्य मुखस्य शिर् इत्यांह। युज्ञो वै मुखः। ऋद्यासंमुद्य युज्ञस्य शिर् इति वावैतदांह। मुखायं त्वा मुखस्यं त्वा शीर्ष्णं इत्यांह। निर्दिश्यैवैनंद्धरित॥१४॥

त्रिर्हरित। त्रयं इमे लोकाः। एभ्य एव लोकेभ्यो यज्ञस्य शिरः सम्भरित। तूष्णीं चंतुर्थं हरित। अपिरिमितादेव यज्ञस्य शिरः सम्भरित। मृत्खनादग्रे हरित। तस्मान्मृत्खनः कंरुण्यंतरः। इयत्यग्रं आसीरित्यांह। अस्यामेवाछंम्बद्धारं यज्ञस्य शिरः सम्भरित। ऊर्जं वा एत रसं पृथिव्या उपदीका उद्दिहन्ति॥१५॥ यद्वल्मीकम्। यद्वल्मीकव्पा संम्भारो भवंति। ऊर्जमेव रसं पृथिव्या अवंरुन्धे। अथो श्रोत्रंमेव। श्रोत्र्र् होतत्पृथिव्याः। यद्वल्मीकः। अवंधिरो भवति। य एवं वेदं। इन्द्रों वृत्राय वज्रमुदंयच्छत्। स यत्रं यत्र प्राक्रमत॥१६॥

तन्नाद्धियत। स पूंतीकस्तम्बे पराँक्रमत। सौंऽद्धियत। सौंऽब्रवीत्। ऊतिं वै में धा इतिं। तदूतीकांनामूतीकृत्वम्। यदूतीका भवन्ति। यज्ञायैवोतिं देधति। अग्निजा असि प्रजापंते रेत इत्यांह। य एव रसंः पृशून्प्राविंशत्॥१७॥

तमेवावंरुन्थे। पश्चेते संम्भारा भेवन्ति। पाङ्को यज्ञः। यावांनेव यज्ञः। तस्य शिरः सम्भेरति। यद्ग्राम्याणां पश्नां चर्मणा सम्भरेत्। ग्राम्यान्पश्र्ञ्ख्वाऽपेयेत्। कृष्णाजिनेन सम्भेरति। आर्ण्यानेव पश्र्ञ्ख्वार्पयति। तस्मौथ्समावंत्पश्नां प्रजायंमानानाम्॥१८॥

आर्ण्याः पृशवः कनीया सः। शुचा ह्यृंताः। लोमतः सम्भंरति। अतो ह्यंस्य मेध्यम्। पृरिगृह्या यन्ति। रक्षंसामपंहत्ये। बहवों हरन्ति। अपंचितिमेवास्मिन्दधित। उद्धंते सिकंतोपोप्ते परिश्रिते निदंधित शान्त्यै। मदंन्तीभिरुपं सृजित॥१९॥

तेजं पुवास्मिन्दधाति। मधुं त्वा मधुला कंरोत्वित्यांह।

ब्रह्मंणैवास्मिन्तेजों दधाति। यद्ग्राम्याणां पात्रांणां कृपालैंः स॰सृजेत्। ग्राम्याणि पात्रांणि शुचाऽपंयेत्। अर्मकृपालैः स॰सृजिति। एतानि वा अनुपजीवनीयानि। तान्येव शुचापंयित। शर्कराभिः स॰सृंजिति धृत्यैं। अथों शन्त्वायं। अज्लोमेः स॰सृंजित। एषा वा अग्रेः प्रिया तृनः। यद्जा। प्रिययैवैनं तृनुवा स॰सृंजित। अथो तेजंसा। कृष्णाजिनस्य लोमंभिः स॰सृंजित। यज्ञो वै कृष्णाजिनम्। यज्ञेनैव यज्ञ॰ स॰सृंजित॥२०॥

परिश्रिते करोति। ब्रह्मवर्चसस्य परिगृहीत्यै। न कुर्वन्नभि प्राण्यात्। यत्कुर्वन्नभि प्राण्यात्। प्राणाञ्छुचार्पयेत्। अपहाय् प्राणिति। प्राणानां गोपीथायं। न प्रवग्रं चादित्यं चान्तरेयात्। यदंन्तरेयात्। दुश्चर्मां स्यात्॥२१॥

तस्मान्नान्तराय्यम्। आत्मनो गोपीथायं। वेणुंना करोति। तेजो वै वेणुंः। तेजंः प्रवर्ग्यः। तेजंसैव तेजः समर्धयति। मुखस्य शिरोऽसीत्यांह। युज्ञो वै मुखः। तस्यैतच्छिरंः। यत्प्रवर्ग्यः॥२२॥

तस्मांदेवमांह। यज्ञस्यं पुदे स्थु इत्यांह। यज्ञस्य ह्यंते पुदे। अथो प्रतिष्ठित्यै। गायुत्रेणं त्वा छन्दंसा करोमीत्यांह। छन्दोभिरेवैनं करोति। त्र्युंद्धिं करोति। त्रयं इमे लोकाः। एषां लोकानामार्स्ये। छन्दोभिः करोति॥२३॥

वीर्यं वे छन्दा रेसि। वीर्येणैवेनं करोति। यजुंषा बिलं करोति व्यावृंत्यै। इयं तं करोति। प्रजापंतिना यज्ञमुखेन् सम्मितम्। इयं तं करोति। युज्ञपुरुषा सम्मितम्। इयं तं करोति। एतावद्वै पुरुषे वीर्यम्। वीर्यसम्मितम्॥२४॥

अपंरिमितं करोति। अपंरिमित्स्यावंरुद्धै। पृरिग्रीवं कंरोति धृत्यैं। सूर्यंस्य हरंसा श्रायेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। अश्वशकेनं धूपयति। प्राजापत्यो वा अर्श्वः सयोनित्वायं। वृष्णो अश्वंस्य निष्पद्सीत्यांह। असौ वा आंदित्यो वृषाऽश्वंः। तस्य छन्दारंसि निष्पत्॥२५॥

छन्दोभिरेवैनं धूपयति। अर्चिषं त्वा शोचिषे त्वेत्यांह। तेजं प्वास्मिन्दधाति। वारुणोऽभीद्धंः। मैत्रियोपैति शान्त्यै। सिद्धौ त्वेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। देवस्त्वां सिव्ततोद्वंपत्वित्यांह। सिवितृप्रंसूत प्वैनं ब्रह्मंणा देवतांभिरुद्वंपति। अपंद्यमानः पृथिव्यामाशा दिश् आपृणेत्यांह॥२६॥

तस्मांद्गिः सर्वा दिशोऽनु विभांति। उत्तिष्ठ बृहन्भंवोर्ध्वस्तिष्ठ ध्रुवस्त्वमित्यांह् प्रतिष्ठित्यै। ईश्वरो वा एषौऽन्धो भवितोः। यः प्रवृग्यम्नवीक्षंते। सूर्यस्य त्वा चक्षुषाऽन्वीक्ष्व इत्यांह। चक्षुषो गोपीथायं। ऋजवै त्वा

साधवें त्वा सुक्षित्यै त्वा भूत्यै त्वेत्यांह। इयं वा ऋजुः। अन्तरिक्षः साधु। असौ सुक्षितिः॥२७॥

दिशो भूतिं। इमानेवास्मैं लोकान्कंल्पयित। अथो प्रतिष्ठित्ये। इदमहम्मुमांमुष्यायणं विशा पृशुभिंब्रह्मवर्चसेन् पर्यूह्मित्यांह। विशेवनं पृशुभिंब्रह्मवर्चसेन् पर्यूहित। विशेतिं राजन्यंस्य ब्रूयात्। विशेवनं पर्यूहित। पृशुभिरित् वैश्यंस्य। पृशुभिरेवनं पर्यूहित। असुर्यं पात्रमनांच्छृण्णम्॥२८॥

आर्च्छृणित्ति। देव्त्राकः। अज्ञक्षीरेणाऽऽर्च्छृणित्ति। प्रमं वा एतत्पयः। यदंजक्षीरम्। प्रमेणैवैनं पयसाऽऽर्च्छृणित्ति। यज्ञुषा व्यावृत्त्ये। छन्दोभिराच्छृणित्ति। छन्दोभिर्वा एष क्रियते। छन्दोभिरेव छन्दाङ्स्याच्छृणित्ति। छुन्धि वाच्मित्याह। वाचमेवावंरुन्धे। छुन्ध्यूर्ज्मित्याह। ऊर्जमेवावंरुन्धे। छुन्धि ह्विरित्यांह। ह्विरेवाकंः। देवं पुरश्चर सुघ्यासन्त्वेत्यांह। यथायुजुरेवैतत्॥२९॥

स्याद्यत्प्रंवर्ग्यश्छन्दोंभिः करोति वीर्यसम्मितं छन्दार्श्स निष्पत्पृणेत्यांह सुक्षितिरनाँच्छृण्णञ्छन्दार्श्स्या-

च्छृंणत्त्यृष्टो चं॥\_\_\_\_\_[3]

ब्रह्मन्प्रचेरिष्यामो होतेर्घर्मम्भिष्टुहीत्यांह। एष वा एतर्रह् बृह्स्पतिः। यद्वृह्मा। तस्मां एव प्रंतिप्रोच्य प्रचेरति। आत्मनोऽनात्यै। यमायं त्वा मुखाय त्वेत्यांह। एता वा एतस्यं देवताः। ताभिरेवैनुष् समर्धयति। मदन्तीभिः

## प्रोक्षंति। तेजं एवास्मिन्दधाति॥३०॥

अभिपूर्वं प्रोक्षंति। अभिपूर्वमेवास्मिन्तेजों दधाति। त्रिः प्रोक्षंति। त्र्यांवृद्धि युज्ञः। अथों मेध्यत्वायं। होताऽन्वांह। रक्षंसामपहत्यै। अनंवानम्। प्राणानाः सन्तंत्यै। त्रिष्टुभंः स्तीर्गायत्रीरिवान्वांह॥३१॥

गायत्रो हि प्राणः। प्राणमेव यर्जमाने दधाति। सन्तंतमन्वाह। प्राणानामन्नाद्यंस्य सन्तंत्यै। अथो रक्षंसामपंहत्यै। यत्परिमिता अनुब्रूयात्। परिमित्मवंरुन्धीत। अपरिमिता अन्वांह। अपरिमित्स्यावंरुद्धौ। शिरो वा पृतद्यज्ञस्यं॥३२॥

यत्प्रंवर्ग्यः। ऊर्ङ्गुञ्जाः। यन्मौञ्जो वेदो भवंति। ऊर्जैव यज्ञस्य शिरः समर्धयति। प्राणाहुतीर्जुहोति। प्राणानेव यजमाने दधाति। सप्त जुहोति। सप्त वै शीर्षण्याः प्राणाः। प्राणानेवास्मिन्दधाति। देवस्त्वां सिवता मध्याऽनिक्कित्यांह॥३३॥

तेजंसैवैनंमनिक्त। पृथिवीं तपंसस्रायस्वेति हिरंण्यमुपाँ-स्यित। अस्या अनंतिदाहाय। शिरो वा एतद्यज्ञस्यं। यत्प्रंवृग्यंः। अग्निः सर्वा देवताः। प्रल्वानादीप्योपाँस्यित। देवतांस्वेव यज्ञस्य शिरः प्रतिद्धाति। अप्रतिशीणांग्रं भवति। एतद्वंरिहुर्ह्यंषः॥३४॥

अर्चिरंसि शोचिर्सीत्यांह। तेजं एवास्मिन्ब्रह्मवर्चसं दंधाति। स॰सींदस्व महा॰ असीत्यांह। महान् ह्यंषः। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। एते वाव त ऋत्विजंः। ये दंरशपूर्णमासयौंः। अथं कथा होता यजंमानायाऽऽशिषो नाशांस्त इतिं। पुरस्तांदाशीः खलु वा अन्यो यज्ञः। उपरिष्टादाशीरन्यः॥३५॥

अनाधृष्या पुरस्तादिति यदेतानि यजू्र्ष्याहं। शीर्षत एव यज्ञस्य यजंमान आशिषोऽवंरुन्थे। आयुंः पुरस्तांदाह। प्रजां दक्षिणतः। प्राणं पृश्चात्। श्रोत्रंमुत्तर्तः। विधृतिमुपरिष्टात्। प्राणानेवास्में समीचों दधाति। ईश्वरो वा एष दिशोऽनून्मंदितोः। यं दिशोऽनुं व्यास्थापयंन्ति॥३६॥

मनोरश्वांसि भूरिंपुत्रेतीमाम्भिमृंशित। इयं वै मनोरश्वा भूरिंपुत्रा। अस्यामेव प्रतितिष्ठत्यनुंन्मादाय। सूप्सदां मे भूया मा मां हि सीरित्याहाहि स्सायै। चितः स्थ परिचित् इत्याह। अपंचितिमेवास्मिन्दधाति। शिरो वा पृतद्यज्ञस्यं। यत्प्रंवर्ग्यः। असौ खलु वा आंदित्यः प्रंवर्ग्यः। तस्यं मुरुतो रुश्मयः॥३७॥

स्वाहां मुरुद्धिः परिश्रयस्वेत्यांह। अमुमेवाऽऽदित्यश्रयस्मिभेः पर्यूहित। तस्मांदसावांदित्योंऽमुष्मिं श्लोके रिश्मिभेः पर्यूढः। तस्माद्राजां विशा पर्यूढः। तस्माद्रामणीः संजातैः पर्यूढः। अग्नेः सृष्टस्यं यतः। विकंङ्कतुं भा आंर्च्छत्।

यद्वैकंङ्कताः परि्धयो भवंन्ति। भा एवावंरुन्धे। द्वादंश भवन्ति॥३८॥

द्वार्वश मार्साः संवथ्सरः। संवथ्सरमेवावंरुन्धे। अस्ति त्रयोदशो मास् इत्यांहुः। यत्रयोदशः पंरिधिर्भवंति। तेनैव त्रयोदशं मास्मवंरुन्धे। अन्तरिक्षस्यान्तर्धिर्सीत्यांह् व्यावृत्त्यै। दिवं तपंसस्त्रायस्वेत्युपरिष्टाद्धिरंण्यमधि निदंधाति। अमुष्या अनंतिदाहाय। अथो आभ्यामेवनंमुभ्यतः परिगृह्णाति। अर्हन् विभर्षि सायंकानि धन्वेत्यांह॥३९॥

स्तौत्येवैनंमेतत्। गायत्रमंसि त्रेष्टुंभमसि जागंतम्सीतिं धवित्राण्यादंत्ते। छन्दोंभिरेवैनान्यादंत्ते। मधु मध्वितिं धूनोति। प्राणो वै मधुं। प्राणमेव यजमाने दधाति। त्रिः परियन्ति। त्रिवृद्धि प्राणः। त्रिः परियन्ति। त्र्यांवृद्धि युज्ञः॥४०॥

अथो रक्षंसामपंहत्यै। त्रिः पुनः परियन्ति। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतुष्वेव प्रतितिष्ठन्ति। यो वै घुर्मस्यं प्रियां तनुवंमाक्रामंति। दुश्चर्मा वै स भवति। एष ह् वा अस्य प्रियां तनुव्माक्रांमति। यित्रेः प्रीत्यं चतुर्थं पर्येति। एता ह वा अस्योग्रदेवो राजंनिराचंक्राम॥४१॥

ततो वै स दुश्चर्मां ऽभवत्। तस्मान्तिः प्रीत्य न चंतुर्थं परीयात्। आत्मनों गोपीथायं। प्राणा वै ध्वित्रांणि। अव्यंतिषङ्गं धून्वन्ति। प्राणानामव्यंतिषङ्गाय क्रृप्त्यैं। विनिषद्यं धून्वन्ति। दिक्ष्वेव प्रतितिष्ठन्ति। ऊर्ध्वं धूँन्वन्ति। सुवुर्गस्यं लोकस्य समेष्ठौ। सुर्वतो धून्वन्ति। तस्माद्य सुर्वतः पवते॥४२॥

द्धातीवान्वांह युज्ञस्यांहैष उपरिष्टादाशीर्न्यो व्यांस्थापयंन्ति रुश्मयों भवन्ति धन्वेत्यांह युज्ञश्चंकाम् समिष्ट्ये द्वे चं॥————[४]

अग्निश्च वसुंभिः पुरस्तांद्रोचयत् गायत्रेण् छन्द्सेत्यांह। अग्निरेवैनं वसुंभिः पुरस्तांद्रोचयति गायत्रेण् छन्दंसा। स मां रुचितो रांच्येत्यांह। आशिषंमेवैतामा शांस्ते। इन्द्रंस्त्वा रुद्रैदंक्षिण्तो रांचयत् त्रैष्टुंभेन् छन्द्सेत्यांह। इन्द्रं एवैन रं रुद्रैदंक्षिण्तो रांचयत् त्रैष्टुंभेन् छन्दंसा। स मां रुचितो रांच्येत्यांह। आशिषंमेवैतामा शांस्ते। वर्रुणस्त्वाऽऽदित्यैः पृश्चाद्रोचयत् जागंतेन् छन्दंसा॥४३॥

स मां रुचितो रोचयत्यांह। आशिषंमेवैतामा शांस्ते। द्युतानस्त्वां मारुतो मुरुद्धिरुत्तर्तो रोचयत्वानुष्टुभेन् छन्दसेत्यांह। द्युतान एवैनं मारुतो मुरुद्धिरुत्तर्तो रोचयत्यानुष्टुभेन् छन्दंसा। स मां रुचितो रोचयेत्यांह। आशिषंमेवैतामाशांस्ते। बृह्स्पितिंस्त्वा विश्वदिवेरुपिरंष्टा-द्रोचयतु पाङ्केन् छन्दसेत्यांह। बृह्स्पितेरेवैनं विश्वदिवे-रुपिरंष्टाद्रोचयति पाङ्केन् छन्दंसा। स मां रुचितो रोचयेत्यांह।

## आशिषंमेवैतामा शाँस्ते॥४४॥

रोचितस्त्वं देव घर्म देवेष्वसीत्यांह। रोचितो ह्येष देवेषुं।
रोचिषीयाहं मंनुष्येष्वित्यांह। रोचंत एवेष मंनुष्येषु। सम्राह्मर्म रुचितस्त्वं देवेष्वायुंष्मा इस्तेज्ञस्वी ब्रंह्मवर्चस्यंसीत्यांह। रुचितो ह्येष देवेष्वायुंष्मा इस्तेज्ञस्वी ब्रंह्मवर्चसी। रुचितों ऽहं मंनुष्येष्वायुंष्मा इस्तेज्ञस्वी ब्रंह्मवर्चसी। रुचितों ऽहं मंनुष्येष्वायुंष्मा इस्तेज्ञस्वी ब्रंह्मवर्चसी भ्रंयास्मित्यांह। रुचित एवेष मंनुष्येष्वायुंष्मा इस्तेज्ञस्वी ब्रंह्मवर्चसी भ्रंवित। रुगित एवेष मंनुष्येष्वायुंष्मा इस्तेज्ञस्वी ब्रंह्मवर्चसी भ्रंवित। रुगित एवेष मंनुष्येष्वायुंष्मा इस्तेज्ञस्वी ब्रंह्मवर्चसी भ्रंवित। र्गास्ते। तं यदेतैर्यजुंर्भिररोचियत्वा। रुचितो धर्म इति प्रब्रूयात्। अरोचुकोऽध्वर्युः स्यात्। अरोचुको यजंमानः। अथ यदेनमेतैर्यजुंर्भी रोचियत्वा। रुचितो धर्म इति प्राहं। रोचुकोऽध्वर्युर्भवंति। रोचुंको यजंमानः॥४५॥

पृश्चाद्रोचयित् जागंतेन् छन्दंसा पाङ्केन् छन्दंसा स मां रुचितो रांच्येत्यांहाशिषंमेवैतामाशाँस्ते शास्तेऽष्टौ चं॥———[५]

शिरो वा एतद्यज्ञस्यं। यत्प्रंवग्यंः। ग्रीवा उंप्सदंः। पुरस्तांदुपसदां प्रवृग्यं प्रवृंणिक्ति। ग्रीवास्वेव यज्ञस्य शिरः प्रतिंदधाति। त्रिः प्रवृंणिक्ति। त्रयं इमे लोकाः। एभ्य एव लोकेभ्यो यज्ञस्य शिरोऽवंरुन्थे। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः॥४६॥

ऋतुभ्यं एव यज्ञस्य शिरोऽवंरुन्धे। द्वादंशकृत्वः प्रवृंणिक्त। द्वादंश मासाः संवथ्सरः। संवथ्सरादेव यज्ञस्य शिरोऽवंरुन्धे। चतुंर्वि शतिः सम्पंद्यन्ते। चतुंर्वि शतिरर्धमासाः। अर्धमासेभ्यं एव यज्ञस्य शिरोऽवंरुन्धे। अथो खलुं। सकृदेव प्रवृज्यः। एक १ हि शिरंः॥४७॥

अग्निष्टोमे प्रवृंणिक्ति। एतावान् वै यज्ञः। यावानिग्निष्टोमः। यावानेव यज्ञः। तस्य शिरः प्रतिदधाति। नोक्थ्ये प्रवृंश्यात्। प्रजा वै प्शवं उक्थानि। यदुक्थ्ये प्रवृश्यात्। प्रजां प्शूनंस्य निर्दहेत्। विश्वजिति सर्वपृष्ठे प्रवृंणिक्ति॥४८॥

पृष्ठानि वा अच्युंतं च्यावयन्ति। पृष्ठेरेवास्मा अच्युंतं च्यावियत्वाऽवंरुन्थे। अपंश्यं गोपामित्यांह। प्राणो वै गोपाः। प्राणमेव प्रजासु वियातयित। अपंश्यं गोपामित्यांह। असौ वा आंदित्यो गोपाः। स हीमाः प्रजा गोपायितं। तमेव प्रजानां गोपारं कुरुते। अनिपद्यमान्मित्यांह॥४९॥

न ह्यंष निपद्यंते। आ च परां च पृथिभिश्चरंन्तमित्यांह। आ च ह्यंष परां च पृथिभिश्चरंति। स स्प्रीचीः स विषूचीर्वसान इत्यांह। स्प्रीचींश्च ह्यंष विषूचीश्च वसानः प्रजा अभि विपश्यंति। आवंरीवर्ति भुवंनेष्वन्तरित्यांह। आ ह्यंष वंरीवर्ति भुवंनेष्वन्तः। अत्रं प्रावीर्मधु माध्वींभ्यां मधु माधूंचीभ्यामित्यांह। वासंन्तिकावेवास्मां ऋतू कंत्पयति। समग्निरग्निनां गतेत्यांह॥५०॥

ग्रैष्मांवेवास्मां ऋतू कंल्पयति। समृग्निर्ग्निनां गृतेत्यांह।

अग्निर्ह्यवैषाँ ऽग्निनां सङ्गच्छंते। स्वाहा समग्निस्तपंसा गतेत्यांह। पूर्वमेवोदितम्। उत्तरेणाभिगृंणाति। धूर्ता दिवो विभांसि रजंसः पृथिव्या इत्यांह। शार्दावेवास्मां ऋतू कंत्पयति॥५१॥

दिवि देवेषु होत्रां यच्छेत्यांह। होत्रांभिरेवेमाँ ह्योकान्थ्यन्दं-धाति। विश्वासां भुवां पत् इत्यांह। हैमंन्तिकावेवास्मां ऋतू कंत्पयति। देवश्रस्त्वं देव धर्म देवान्पाहीत्यांह। शैशिरावेवास्मां ऋतू कंत्पयति। तृपोजां वार्चमस्मे नियंच्छ देवायुव्मित्यांह। या वै मेध्या वाक्। सा तंपोजाः। तामेवावंरुन्थे॥५२॥

गर्भो देवानामित्यांह। गर्भो ह्येष देवानांम्। पिता मंतीनामित्यांह। प्रजा वै मृतयः। तासांमेष एव पिता। यत्प्रवर्ग्यः। तस्मादेवमाह। पतिः प्रजानामित्यांह। पतिर्ह्योष प्रजानांम्। मितः कवीनामित्यांह॥५३॥

मित् हींष के बीनाम्। सं देवो देवेनं सिवृत्रा यंतिष्ट सक्ष्म्यणारुक्तेत्यां ह। अमुं चैवाऽऽदित्यं प्रवृग्यं च सक्षांस्ति। आयुर्दास्त्वम्समभ्यं घर्म वर्चोदा असीत्यांह। आशिषंमे वैतामा शांस्ते। पिता नो ऽसि पिता नो बोधेत्यांह। बोधयंत्ये वैनम्। न वै तेंऽवकाशा भवन्ति। पित्रिये दश्मः। नव वै पुरुषे प्राणाः॥५४॥

नाभिर्दश्मी। प्राणानेव यर्जमाने दधाति। अथो दशाँक्षरा विराट्। अत्रं विराट्। विराजैवान्नाद्यमवंरुन्धे। यज्ञस्य शिरौंऽच्छिद्यत। तद्देवा होत्रांभिः प्रत्यंदधः। ऋत्विजोऽवेंक्षन्ते। एता वै होत्राः। होत्रांभिरेव यज्ञस्य शिरः प्रतिंदधाति॥५५॥

रुचितमवें क्षन्ते। रुचिताद्वै प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। प्रजाना ए सृष्ट्रौं। रुचितमवें क्षन्ते। रुचिताद्वे पर्जन्यो वर्षित। वर्षुंकः पर्जन्यो भवति। सं प्रजा एंधन्ते। रुचितमवें क्षन्ते। रुचितं वै ब्रह्मवर्च्सम्। ब्रह्मवर्च्सिनो भवन्ति॥५६॥

अधीयन्तोऽवेंक्षन्ते। सर्वमायुंर्यन्ति। न पत्यवेंक्षेत। यत्पत्यवेक्षेत। प्रजांयेत। प्रजां त्वंस्यै निर्दहेत्। यन्नावेक्षेत। न प्रजांयेत। नास्यैं प्रजां निर्दहेत्। तिर्स्कृत्य यर्जुर्वाचयित। प्रजांयते। नास्यैं प्रजां निर्दहित। त्वष्टींमती ते सप्येत्यांह। सपाद्धि प्रजाः प्रजायंन्ते॥५७॥

ऋतवो हि शिर्ः सर्वपृष्ठे प्रवृंणुक्त्वानिपद्यमानुमित्यांह गृतेत्यांह शार्दावेवास्मां ऋतू केल्पयति रुन्धे कवीनामित्यांह प्राणाः प्रतिंदधाति भवन्ति वाचयति चुत्वारिं च॥————[६]

देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रंस्व इति रश्नामादंत्ते प्रसूँत्यै। अश्विनौर्बाहुभ्यामित्यांह। अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्तौम्। पूष्णो हस्तौभ्यामित्यांह यत्यै। आद्देऽदित्यै रास्नाऽसीत्यांह् यजुंष्कृत्यै। इड एह्यदित् एहि सर्रस्वत्येहीत्यांह। एतानि वा अंस्यै देवनामानि।

देवनामैरेवैनामाह्वंयति। असावेह्यसावेह्यसावेहीत्यांह। एतानि वा अंस्यै मनुष्यनामानि॥५८॥

मनुष्यनामेरेवेनामाह्वयित। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतुभिरेवेनामाह्वयिति। अदित्या उष्णीषंम्सीत्यांह। यथायजुरेवेतत्। वायुरंस्यैड इत्यांह। वायुदेवत्यों वे वथ्सः। पूषा त्वोपावंसृज्तित्यांह। पौष्णा वे देवतंया पृशवंः॥५९॥

स्वयैवैनं देवतंयोपावंसृजति। अश्विभ्यां प्रदांपयेत्यांह। अश्विनौ वै देवानां भिषजौं। ताभ्यांमेवास्में भेषजं कंरोति। यस्ते स्तनः शश्य इत्यांह। स्तौत्येवैनांम्। उस्रं घर्मः शिश्षोस्रं घर्मं पांहि घर्मायं शिश्षेत्यांह। यथां ब्रूयादमुष्में देहीतिं। ताद्दगेव तत्। बृहुस्पतिस्त्वोपं सीद्त्वित्याह॥६०॥

ब्रह्म वै देवानां बृह्स्पतिः। ब्रह्मणैवैनामुपंसीदति। दानवः स्थ पेरव इत्याह। मेध्यानेवैनांन्करोति। विष्वुग्वृतो लोहितेनेत्यांह व्यावृत्त्ये। अश्विभ्यां पिन्वस्व सरंस्वत्ये पिन्वस्व पूष्णे पिन्वस्व बृह्स्पतंये पिन्वस्वेत्यांह। पुताभ्यो ह्यंषा देवतांभ्यः पिन्वंते। इन्द्रांय पिन्वस्वेन्द्रांय पिन्वस्वेत्यांह। इन्द्रंमेव भाग्धेयेन समर्धयति। द्विरिन्द्रायेत्यांह॥६१॥

तस्मादिन्द्रों देवतांनां भूयिष्ठभाक्तंमः। गायत्रोंऽसि त्रैष्टुंभोऽसि जागंतम्सीतिं शफोपयमानादंत्ते। छन्दोंभि-रेवैनानादंत्ते। सहोर्जो भागेनोपमहीत्यांह। ऊर्ज एवैनं भागमंकः। अश्विनौ वा पृतद्यज्ञस्य शिरंः प्रतिदर्धतावब्रूताम्। आवाभ्यांमेव पूर्वांभ्यां वर्षद्भियाता इति। इन्द्रांश्विना मधुनः सार्घस्येत्यांह। अश्विभ्यांमेव पूर्वांभ्यां वर्षद्भरोति। अथों अश्विनांवेव भाग्धेयेन समर्धयति॥६२॥

घुमं पांत वसवो यजंता विहत्यांह। वसूनेव भांगधेयेंन् समर्धयित। यद्वेषद्भुर्यात्। यातयांमाऽस्य वषद्भारः स्यांत्। यन्न वंषद्भुर्यात्। रक्षा १सि यज्ञ १ हंन्युः। विहत्यांह। प्रोक्षंमेव वषद्भरोति। नास्यं यातयांमा वषद्भारो भवंति। न यज्ञ १ रक्षा १सि प्रन्ति॥६३॥

स्वाहाँ त्वा सूर्यस्य र्ष्णयं वृष्टिवनंये जुहोमीत्यांह। यो वा अंस्य पुण्यो र्ष्णिः। स वृष्टिवनिः। तस्मां एवैनं जुहोति। मधुं हुविर्सीत्यांह। स्वदयंत्येवैनम्ं। सूर्यस्य तपंस्तपेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। द्यावांपृथिवीभ्यां त्वा परिगृह्णामीत्यांह। द्यावांपृथिवीभ्यांमेवैनं परिगृह्णाति॥६४॥

अन्तरिक्षेण त्वोपंयच्छामीत्यांह। अन्तरिक्षेणैवैन्मुपंयच्छति।
न वा एतं मंनुष्यो भर्तुमर्हति। देवानां त्वा पितृणामनुंमतो
भर्तु शकेयमित्यांह। देवैरेवैनं पितृभिरनुंमत् आदंत्ते। वि
वा एनमेतदर्धयन्ति। यत्पश्चात्प्रवृज्यं पुरो जुह्वंति। तेजोऽसि
तेजोऽनु प्रेहीत्यांह। तेजं एवास्मिन्दधाति। दिविस्पृङ्गा
मां हिश्सीरन्तरिक्षस्पृङ्गा मां हिश्सीः पृथिविस्पृङ्गा मां
हिश्सीरित्याहाहिश्सायै॥६५॥

सुवंरिस सुवंर्मे यच्छु दिवं यच्छ दिवो मां पाहीत्यांह। आशिषंमेवैतामा शाँस्ते। शिरो वा पृतद्यज्ञस्यं। यत्प्रंवर्ग्यः। आत्मा वायुः। उद्यत्यं वातनामान्यांह। आत्मन्नेव यज्ञस्य शिरः प्रतिदधाति। अनंवानम्। प्राणाना सन्तंत्यै। पश्चांह॥६६॥

पाङ्को युज्ञः। यावानेव युज्ञः। तस्य शिरः प्रतिंदधाति। अग्नये त्वा वसुमते स्वाहेत्यांह। असौ वा आदित्योंऽग्निर्वसुं-मान्। तस्मां एवैनं जुहोति। सोमाय त्वा रुद्रवंते स्वाहेत्यांह। चन्द्रमा वै सोमो रुद्रवान्। तस्मां एवैनं जुहोति। वर्रुणाय त्वाऽऽदित्यवंते स्वाहेत्यांह॥६७॥

अपस् वै वर्रण आदित्यवान्। तस्मां पृवेनं जुहोति। बृह्स्पतंये त्वा विश्वदें व्यावते स्वाहेत्यांह। ब्रह्म वै देवानां बृह्स्पतिंः। ब्रह्मंणै्वेनं जुहोति। स्वित्रे त्वंर्भुमतें विभुमतें प्रभुमते वाजंवते स्वाहेत्यांह। संवथ्सरो वै संवितर्भुमान् विभुमान्प्रंभुमान् वाजंवान्। तस्मां पृवेनं जुहोति। यमाय त्वाऽङ्गिरस्वते पितृमते स्वाहेत्यांह। प्राणो वै यमोऽङ्गिरस्वान्यितृमान्॥६८॥

तस्मां एवैनंं जुहोति। एताभ्यं एवैनंं देवताभ्यो जुहोति। दश् सम्पंद्यन्ते। दशाँक्षरा विराट्। अन्नं विराट्। विराजैवान्नाद्यमवंरुन्थे। रौहिणाभ्यां वै देवाः सुंवर्गं लोकमांयन्। तद्रौहिणयों रौहिण्त्वम्। यद्रौहिणौ भवंतः।
रौहिणाभ्यांमेव तद्यजंमानः सुवर्गं लोकमेति। अहुर्ज्योतिः
केतुनां जुषता सुज्योतिर्ज्योतिषा स्वाह्या रात्रिर्ज्योतिः
केतुनां जुषता सुज्योतिर्ज्योतिषा स्वाह्या रात्रिर्ज्योतिः
केतुनां जुषता सुज्योतिर्ज्योतिषा स्वाहत्याह। आदित्यमेव तद्मुष्मिं लोकेऽह्यां प्रस्तौद्दाधार। रात्रिया अवस्तौत्।
तस्मादसावादित्योऽमुष्मिं लोकेऽहोरात्राभ्यां धृतः॥६९॥
मनुष्यन्यमानि प्रश्वः सीद्वित्याहेन्द्र्ययेत्यांहाध्यित प्रन्ति गृह्यात्यिहि स्वाये प्रश्नांऽहादित्यवंते
स्वाहेत्यांह पितृमानित च्लारि च॥
[७]

विश्वा आशां दक्षिण्सिदत्यांह। विश्वांनेव देवान्प्रीणाति। अथो दुरिष्ट्या एवैनं पाति। विश्वां देवानयाडिहेत्यांह। विश्वांनेव देवान्यांग्रधेयेन समर्धयति। स्वाहांकृतस्य घर्मस्य मधोः पिबतमिश्वनेत्यांह। अश्विनांवेव भाग्धेयेन समर्धयति। स्वाहाऽग्रये यिज्ञयांय शं यर्जुर्भिरित्यांह। अभ्येवैनं घारयति। अथो हिविरेवाकः॥७०॥

अश्विना घर्मं पांतर हार्दिवानमहंदिवाभिंक्तिभिरित्यांह। अश्विनांवेव भाग्धेयेन समर्धयित। अनुं वां द्यावांपृथिवी मर्सातामित्याहानुंमत्यै। स्वाहेन्द्रांय स्वाहेन्द्राविहत्यांह। इन्द्रांय हि पुरो हूयतें। आश्राव्यांह घर्मस्यं यजेतिं। वर्षट्टते जुहोति। रक्षसामपंहत्यै। अनुयजित स्वगाकृत्यै। धर्ममंपातमश्विनेत्यांह॥७१॥

पूर्वमेवोदितम्। उत्तरेणाभिगृंणाति। अनुं वां द्यावांपृथिवी अमश्सातामित्याहानुंमत्यै। तं प्राव्यं यथावण्णमों दिवे नर्मः पृथिव्या इत्याह। यथायजुरेवैतत्। दिविधां इमं यज्ञं यज्ञमिमं दिविधा इत्याह। सुवर्गमेवैनं लोकं गंमयति। दिवं गच्छान्तरिक्षं गच्छ पृथिवीं गच्छेत्याह। पृष्वेवैनं लोकेषु प्रतिष्ठापयति। पश्चं प्रदिशों गच्छेत्यांह॥७२॥

दिक्ष्वेवैनं प्रतिष्ठापयति। देवान्धंर्म्पानांच्छ पितॄन्धंर्म्-पान्गच्छेत्याह। उभयेंष्वेवैनं प्रतिष्ठापयति। यत्पिन्वंते। वर्षुकः पूर्जन्यों भवति। तस्मात्पिन्वंमानः पुण्यंः। यत्प्राङ्घिन्वंते। तद्देवानांम्। यद्दंक्षिणा। तत्पितृणाम्॥७३॥

यत्प्रत्यक्। तन्मंनुष्यांणाम्। यदुदङ्कं। तद्रुद्राणांम्। प्राश्चमुदेश्चं पिन्वयति। देवृत्राकंः। अथो खलुं। सर्वा अनु दिशंः पिन्वयति। सर्वा दिशः समेधन्ते। अन्तःप्रिधि पिन्वयति॥७४॥

तेज्सोऽस्कंन्दाय। इषे पींपिह्यूर्जे पींपिहीत्यांह। इषंमेवोर्जं यजंमाने दधाति। यजंमानाय पीपिहीत्यांह। यजंमानायैवैतामाशिषमाशाँस्ते। मह्यं ज्येष्ठ्यांय पीपिहीत्यांह। आत्मनं पृवैतामाशिषमाशाँस्ते। त्विष्यैं त्वा द्युम्नायं त्वेन्द्रियायं त्वा भूत्यै त्वेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। धर्मासि सुधर्मा में न्यसमे ब्रह्माणि धार्येत्यांह॥७५॥

ब्रह्मंत्रेवैनं प्रतिष्ठापयति। नेत्त्वा वार्तः स्कन्दयादिति यद्यंभिचरैत्। अमुष्यं त्वा प्राणे सादयाम्यमुनां सह निर्धं गच्छेतिं ब्र्याद्यं द्विष्यात्। यमेव द्वेष्टिं। तेनैन स् सह निर्धं गमयति। पूष्णे शरसे स्वाहेत्याह। या एव देवतां हुतभांगाः। ताभ्यं एवैनं जुहोति। ग्रावंभ्यः स्वाहेत्यांह। या एवान्तरिक्षे वार्चः॥७६॥

ताभ्यं पुवैनं जुहोति। प्रतिरेभ्यः स्वाहेत्यांह। प्राणा वै देवाः प्रतिराः। तेभ्यं पुवैनं जुहोति। द्यावांपृथिवीभ्याः स्वाहेत्यांह। द्यावांपृथिवीभ्यांमेवैनं जुहोति। पितृभ्यों धर्मपेभ्यः स्वाहेत्यांह। ये वै यज्वांनः। ते पितरों धर्मपाः। तेभ्यं पुवैनं जुहोति॥७७॥

रुद्रायं रुद्रहोंत्रे स्वाहेत्यांह। रुद्रमेव भांग्धेयेन समर्धयति। सुर्वतः समनिक्ति। सुर्वतं एव रुद्रं निरवंदयते। उद्रेश्चं निर्रस्यति। एषा वै रुद्रस्य दिक्। स्वायांमेव दिशि रुद्रं निरवंदयते। अप उपस्पृशित मेध्यत्वायं। नान्वीक्षेत। यदन्वीक्षेत॥७८॥

चक्षुंरस्य प्रमायुंक इस्यात्। तस्मान्नान्वीक्ष्यः। अपींपरो माऽह्यो रात्रिये मा पाह्येषा ते अग्ने समित्तया समिध्यस्वायुंमें दा वर्चसा माऽऽञ्जीरित्यांह। आयुंरेवास्मिन्वर्चो दधाति। अपींपरो मा रात्रिया अहों मा पाह्येषा ते अग्ने स्मित्तया समिध्यस्वाऽऽयंर्मे दा वर्चसा माऽऽञ्जीरित्यांह। आयंरेवास्मिन्वर्चो दधाति। अग्निर्ज्योतिर्ज्योतिरग्निः स्वाहा सूर्यो ज्योतिर्ज्योतिः सूर्यः स्वाहेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। ब्रह्मवादिनो वदन्ति। होत्व्यंमग्निहोत्रा(३)न्न होत्व्या(३)मिति॥७९॥

यद्यजुंषा जुहुयात्। अयंथापूर्वमाहुंती जुहुयात्। यन्न जुंहुयात्। अग्निः परांभवेत्। भूः स्वाहेत्येव होत्व्यम्। यथापूर्वमाहुंती जुहोतिं। नाग्निः परांभवति। हुतः ह्विर्मधुं ह्विरित्यांह। स्वदयंत्येवैनम्। इन्द्रंतमेऽग्नावित्यांह॥८०॥

प्राणो वा इन्द्रंतमोऽग्निः। प्राण एवैन्मिन्द्रंतमेऽग्नौ जुंहोति। पिता नोंऽसि मा मां हिश्सीरित्याहाहिश्सायै। अश्यामं ते देव घर्म् मध्रंमतो वाजंवतः पितुमत् इत्याह। आशिषंमेवैतामा शांस्ते। स्वधाविनोंऽशीमहिं त्वा मा मां हिश्सीरित्याहाहिश्सायै। तेजंसा वा एते व्यृध्यन्ते। ये प्रवृग्येण चरन्ति। प्राश्ञंन्ति। तेजं एवात्मन्दंधते॥८१॥

स्वथ्सरं न मार्समंश्जीयात्। न रामामुपंयात्। न मृन्मर्यन पिबेत्। नास्यं राम उच्छिष्टं पिबेत्। तेज एव तथ्स इश्यंति। देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते देवा विंज्यमुंपयन्तः। विभ्राजि सौर्ये ब्रह्मसन्त्रंदधत। यत्किं चं दिवाकी त्यंम्ं। तदेतेनैव व्रतेनांगोपायत्। तस्मांदेतद्वृतं चार्यम्। तेजंसो गोपीथायं। तस्मादेतानि यजूरंषि विभाजंः सौर्यस्येत्यांहुः। स्वाहाँ त्वा सूर्यस्य रिश्मिभ्य इति प्रातः सर्सादयति। स्वाहाँ त्वा नक्षंत्रेभ्य इति सायम्। एता वा एतस्यं देवताः। ताभिरेवेन् समर्थयति॥८२॥

अक्रुक्षिनेत्यांह प्रदिशों गुच्छेत्यांह पितृणामंन्तःपरिधि पिन्वयति धार्येत्यांह वाचों घर्मपास्तेभ्यं एवैनं जुहोत्यन्वीक्षेत होत्व्या(३)मित्युग्नावित्यांह दधतेऽगोपायथ्सप्त चं॥————[८]

घर्म् या ते दिवि शुगिति तिस्र आहुंतीर्जुहोति। छन्दोभिरेवास्यैभ्यो लोकेभ्यः शुचमव यजते। इयत्यग्रें जुहोति। अथेयत्यथेयंति। त्रयं इमे लोकाः। अनुं नोऽद्यानुं-मित्रित्याहानुंमत्यै। दिवस्त्वां पर्स्पाया इत्यांह। दिव एवेमाँ ह्योकान्दांधार। ब्रह्मणस्त्वा पर्स्पाया इत्यांह॥८३॥

पृष्वेव लोकेषुं प्रजा दांधार। प्राणस्यं त्वा पर्स्पाया इत्यांह। प्रजास्वेव प्राणान्दांधार। शिरो वा एतद्यज्ञस्यं। यत्प्रंवर्ग्यः। असौ खलु वा आंदित्यः प्रंवर्ग्यः। तं यद्दंक्षिणा प्रत्यश्चमुदंश्चमुद्वासर्यंत्। जि्ह्मं यज्ञस्य शिरों हरेत्। प्राश्चमुद्वांसयति। पुरस्तांदेव यज्ञस्य शिरः प्रतिंदधाति॥८४॥

प्राश्चमुद्वांसयित। तस्मांद्सावांदित्यः पुरस्तादुदेति। शफोपयमान्धवित्रांणि धृष्टी इत्यन्ववंहरन्ति। सात्मांनमेवैन् र सत्तेनुं करोति। सात्माऽमुष्मिं ह्लोके भविति। य एवं वेदे। औदुंम्बराणि भवन्ति। ऊर्ग्वा उंदुम्बरंः। ऊर्जमेवावंरुन्धे। वर्त्मना वा अन्वित्यं॥८५॥

युज्ञ रक्षा रेसि जिघा रसन्ति। साम्ना प्रस्तोताऽन्ववैति। साम् वै रक्षोहा। रक्षंसामपंहत्यै। त्रिर्निधन्मुपैति। त्रयं इमे लोकाः। एभ्य एव लोकेभ्यो रक्षा इस्यपंहन्ति। पुरुषः पुरुषो निधन्मुपैति। पुरुषः पुरुषो हि रक्षस्वी। रक्षंसामपंहत्यै॥८६॥

यत्पृंथिव्यामुंद्वासयेत्। पृथिवी शुचाऽपंयेत्। यद्पस्। अपः शुचाप्येत्। यदोषंधीषु। ओषंधीः शुचाऽप्येत्। यद्वनस्पतिषु। वनस्पतीं ञ्छुचाप्येत्। हिरंण्यं निधायोद्वांसयति। अमृतं वै हिरंण्यम्॥८७॥

अमृतं प्वैनं प्रतिष्ठापयति। वृल्गुरंसि शं युधाया इति त्रिः पंरिषिश्चन्पर्येति। त्रिवृद्धा अग्निः। यावांनेवाग्निः। तस्य शुचरं शमयति। त्रिः पुनः पर्येति। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतुभिरेवास्य शुचरं शमयति। चतुंः स्रक्तिर्नाभिर्ऋतस्येत्यांह॥८८॥

ड्यं वा ऋतम्। तस्यां एष एव नाभिः। यत्प्रंवर्ग्यः। तस्मांदेवमांह। सदो विश्वायुरित्यांह। सदो हीयम्। अप द्वेषो अप ह्वर् इत्यांह भ्रातृं व्यापनुत्त्यै। घर्मेतत्तेऽन्नं मेतत्पुरीं षृमिति द्र्या मंधुमिश्रेणं पूरयति। ऊर्ग्वा अन्नाद्यं दिधे। ऊर्जेवैनं मन्नाद्येन समंध्यति॥८९॥

अनंशनायुको भवति। य एवं वेदं। रन्तिर्नामांसि दिव्यो

गंन्धर्व इत्यांह। रूपमेवास्यैतन्मंहिमान् रित्तं बन्धतां व्याचंष्टे। समहमायुषा सं प्राणेनेत्यांह। आशिषंमेवैतामा शांस्ते। व्यंसौ योंऽस्मान्द्वेष्ट्रि यं चं वयं द्विष्म इत्यांह। अभिचार एवास्यैषः। अचिक्रदृदृषा हरिरित्यांह। वृषा ह्यंषः॥९०॥

वृषा हरिः। महान्मित्रो न देर्शत इत्यांह। स्तौत्येवैनंमेतत्। चिदंसि समुद्रयोनिरित्यांह। स्वामेवैनं योनिं गमयति। नमंस्ते अस्तु मा मां हि॰सीरित्याहाहि॰सायै। विश्वावंसु॰ सोम गन्ध्वंमित्यांह। यदेवास्यं क्रियमांण-स्यान्त्यंन्ति। तदेवास्यैतेना प्यांययति। विश्वावंसुर्भि तन्नों गृणात्वित्यांह॥९१॥

पूर्वमेवोदितम्। उत्तरेणाभि गृंणाति। धियों हिन्वानो धिय इन्नों अव्यादित्यांह। ऋतूनेवास्मैं कल्पयति। प्राऽऽसां गन्धर्वो अमृतांनि वोच्दित्यांह। प्राणा वा अमृताः। प्राणानेवास्मैं कल्पयति। पृतत्त्वं देव घर्म देवो देवानुपांगा इत्यांह। देवो ह्येष सं देवानुपैतिं। इदमहं मंनुष्यों मनुष्यांनित्यांह॥९२॥

म्नुष्यों हि। एष सन्मंनुष्यांनुपैतिं। ईश्वरो वै प्रवग्यंमुद्वासयन्। प्रजां पृशून्थ्सोमपीथमंनूद्वासः सोमं पीथानुमेहिं। सह प्रजयां सह रायस्पोषेणेत्याह। प्रजामेव पृश्न्थ्सोमपीथमात्मन्धत्ते। सुमित्रा न आप ओषंधयः सन्त्वत्यांह। आशिषंमेवैतामा शाँस्ते। दुर्मित्रास्तस्में भूयासुर्यों उस्मान्द्वेष्ट्रि यं चं व्यं द्विष्म इत्यांह। अभिचार एवास्येषः। प्र वा एषों उस्माल्लोकाच्यंवते। यः प्रंवर्ग्यमुद्वासयितं। उदुत्यं चित्रमितिं सौरीभ्यांमृग्भ्यां पुनरेत्य गार्हंपत्ये जुहोति। अयं व लोको गार्हंपत्यः। अस्मिन्नेव लोके प्रतिंतिष्ठति। असौ खलु वा आदित्यः सुंवर्गो लोकः। यथ्सौरी भवंतः। तेनैव सुंवर्गालोकान्नेतिं॥९३॥

प्रजापंतिं वै देवाः शुक्रं पयोंऽदुह्नन्। तदैंभ्यो न व्यंभवत्। तद्ग्निर्व्यंकरोत्। तानि शुक्तियाणि सामांन्यभवन्। तेषां यो रसोऽत्यक्षंरत्। तानि शुक्रयज्ञू इष्यंभवन्। शुक्तियाणां वा पुतानि शुक्तियाणि। सामप्यसं वा पुतयोंर्न्यत्। देवानांमन्यत्पर्यः। यद्गोः पर्यः॥९४॥

तथ्साम्नः पर्यः। यद्जायै पर्यः। तद्देवानां पर्यः। तस्माद्यत्रैतैर्यजुंर्भिश्चरंन्ति। तत्पर्यसा चरन्ति। प्रजापंतिमेव तत्पर्यसाऽन्नाद्येन समर्धयन्ति। एष ह त्वै साक्षात्प्रंवर्ग्यं भक्षयति। यस्यैवं विदुषंः प्रवर्ग्यः प्रवृज्यतें। उत्तर्वेद्यामुद्धांस-येत्तेजंस्कामस्य। तेजो वा उत्तरवेदिः॥९५॥

तेजंः प्रवर्ग्यः। तेजंसैव तेजः समंध्यति। उत्तर्वेद्यामुद्वांसये-दन्नंकामस्य। शिरो वा एतद्यज्ञस्यं। यत्प्रंवर्ग्यः। मुखंमुत्तरवेदिः। शीर्ष्णेव मुख्र सन्दंधात्यन्नाद्यांय। अन्नाद एव भंवति। यत्र खलु वा एतमुद्वांसितं वयार्श्स पूर्यासंते। परि वै तार समां प्रजा वयार्श्स्यासते॥९६॥

तस्मांदुत्तरवेद्यामेवोद्वांसयेत्। प्रजानां गोपीथायं। पुरो वां पृश्चाद्वोद्वांसयेत्। पुरस्ताद्वा एतज्ञ्योतिरुदेति। तत्पृश्चान्निम्नोचित। स्वामेवैनं योनिमनूद्वांसयित। अपां मध्य उद्वांसयेत्। अपां वा एतन्मध्याज्ञ्योतिंरजायत। ज्योतिः प्रवृग्यः। स्वयैवैनं योनौ प्रतिष्ठापयति॥९७॥

यं द्विष्यात्। यत्र् स स्यात्। तस्यां दिश्युद्वांसयेत्। एष वा अग्निवैश्वान्रः। यत्प्रंवर्ग्यः। अग्निनैवैनं वैश्वान्रेणाभि प्रवंतयित। औद्ंम्बर्याष्ट्र शाखायामुद्वांसयेत्। ऊर्ग्वा उंदुम्बरः। अन्नं प्राणः। शुग्धर्मः॥९८॥

इदमहम्मुष्यांमुष्यायणस्यं शुचा प्राणमपिं दहामीत्यांह। शुचैवास्यं प्राणमपिं दहित। ताजगार्तिमार्च्छति। यत्रं दर्भा उपदीकंसन्तताः स्यः। तदुद्वांसयेद्वृष्टिंकामस्य। एता वा अपामनूज्झावंर्यो नामं। यद्दर्भाः। असौ खलु वा आंदित्य इतो वृष्टिमुदींरयित। असावेवास्मां आदित्यो वृष्टिं नियंच्छिति। ता आपो नियंता धन्वंना यन्ति॥९९॥ गोः पर्यं उत्तरवेदिरांसते स्थापयति घुर्मो यंन्ति॥————[१०]

प्रजापंतिः सिम्भ्रियमाणः। सम्राट्थ्सम्भृतः। घर्मः प्रवृंक्तः। महावीर उद्वांसितः। असौ खलु वावेष आदित्यः। यत्प्रंवर्ग्यः। स एतानि नामान्यकुरुत। य एवं वेदं। विदुरेनं नाम्ना। ब्रह्मवादिनो वदन्ति॥१००॥

यो वै वसीया १ सं यथाना ममुंप्चरित। पुण्यां तिं वै स तस्मैं कामयते। पुण्यां तिंमस्मै कामयन्ते। य एवं वेदं। तस्मादेवं विद्वान्। घर्म इति दिवाऽऽचंक्षीत। सम्माडिति नक्तम्। एते वा एतस्यं प्रिये तनुवौं। एते अस्य प्रिये नामंनी। प्रिययैवैनं तनुवौं॥१०१॥

प्रियेण नाम्ना समर्थयति। कीर्तिरेस्य पूर्वागंच्छति जनतामायतः। गायत्री देवेभ्योऽपाकामत्। तां देवाः प्रवृग्येणेवानु व्यंभवन्। प्रवृग्येणाप्रुवन्। यचंतुर्वि शतिकृत्वंः प्रवृग्ये प्रवृणक्ति। गायत्रीमेव तदनु विभवति। गायत्रीमाप्नोति। पूर्वा उस्य जनं यतः कीर्तिर्गच्छति। वैश्वदेवः सश्संन्नः॥१०२॥

वसंवः प्रवृंक्तः। सोमोंऽभिकीयमाणः। आश्विनः पर्यस्यानीयमाने। मारुतः क्वथन्। पौष्ण उदंन्तः। सारुस्वतो विष्यन्दंमानः। मैत्रः शरों गृहीतः। तेज उद्यंतः। वायुर्ह्वियमाणः। प्रजापंतिरह्यमानो वाग्युतः॥१०३॥

असौ खलु वावैष आंदित्यः। यत्प्रंवर्ग्यः। स एतानि

नामाँन्यकुरुत। य एवं वेदं। विदुरंनं नाम्नाँ। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। यन्मृन्मयमाहंतिं नाश्जुतेऽथं। कस्मांदेषौंऽश्जुत इतिं। वागेष इतिं ब्रूयात्। वाच्येव वाचं दधाति॥१०४॥

तस्मादश्जुते। प्रजापंतिर्वा एष द्वांदश्धा विहिंतः। यत्प्रंवर्ग्यः। यत्प्रागंवकाशेभ्यः। तेनं प्रजा अंसृजत। अवकाशैर्देवासुरानंसृजत। यदूर्ध्वमंवकाशेभ्यः। तेनान्नंम-सृजत। अन्नं प्रजापंतिः। प्रजापंतिर्वावैषः॥१०५॥

वृदुन्ति तुनुवा स॰संन्नो हूयमानो वाग्धुतो दंधात्येषः॥————[११]

स्विता भूत्वा प्रंथमेऽह्नप्रवृंज्यते। तेन् कामा १ एति। यिद्वितीयेऽहंनप्रवृज्यतें। अग्निर्भूत्वा देवानेति। यत्तृतीयेऽहंनप्र-वृज्यतें। वायुर्भूत्वा प्राणानेति। यचंतुर्थेऽहंनप्रवृज्यतें। आदित्यो भूत्वा रश्मीनेति। यत्पंश्चमेऽहंनप्रवृज्यतें। चन्द्रमां भूत्वा नक्षंत्राण्येति॥१०६॥

यत्षष्ठेऽहंन्प्रवृज्यतें। ऋतुर्भूत्वा संवथ्मरमेति। यथ्मंप्तमेऽहंन्प्रवृज्यतें। धाता भूत्वा शक्वंरीमेति। यदंष्टमेऽहंन्प्रवृज्यतें। बृह्स्पतिंर्भूत्वा गांयत्रीमेति। यत्नंवमेऽहंन्प्रवृज्यतें। मित्रो भूत्वा त्रिवृतं इमाँ छोकानेति। यद्दंशमेऽहंन्प्रवृज्यतें। वर्रुणो भूत्वा विराजंमेति॥१०७॥

यदेकाद्शेऽहंन्प्रवृज्यतें। इन्द्रों भूत्वा त्रिष्टुभंमेति। यद्वांद्शेऽहंन्प्रवृज्यतें। सोमों भूत्वा सुत्यामेति। यत्पुरस्तांदुप्सदां प्रवृज्यतें। तस्मांदितः परांङ्मूँ छोका ॥ स्तपंत्रेति। यदुपरिष्टादुप्सदां प्रवृज्यतें। तस्मांदुमुतोऽर्वा-ङ्माँ छोका ॥ स्तपंत्रेति। य पुवं वेद। ऐव तंपति॥१०८॥

नक्षंत्राण्येति विराजंमेति तपति॥——[१२]

ॐ शं नुस्तन्नो मा हांसीत्॥ ॐ शान्तिः शान्तिः॥



#### ॥षष्ठः प्रश्नः॥

ॐ सन्त्वां सिश्चामि यजुषां प्रजामायुर्धनं च॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

प्रेयुवारसं प्रवती महीरन् बहुभ्यः पन्थांमनपस्पशानम्। वैवस्वतर सङ्गमंनं जनांनां यमर राजांनर हृविषां दुवस्यत। इदं त्वा वस्त्रं प्रथमन्वागृन्नपैतदूंह यदिहाबिभः पुरा। इष्टापूर्तमनु सम्पंश्य दक्षिणां यथां ते दत्तं बंहुधा विबंन्युष्। इमौ युंनज्मि ते वृह्णी असुंनीथाय वोढवें। याभ्यां यमस्य सादंनर सुकृतां चापि गच्छतात्। पूषा त्वेतश्च्यांवयत् प्रविद्वाननंष्टपशुर्भुवंनस्य गोपाः। स त्वैतेभ्यः परिददात्पृतृभ्योऽग्निर्देवभ्यः सुविदन्नेभ्यः। पूषमा आशा अनुवेद सर्वाः सो अस्मार अभयतमेन नेषत्। स्वस्तिदा अर्घृणिः सर्ववीरोऽप्रंयुच्छन्पुर एतु प्रविद्वान्॥१॥

आयुंर्विश्वायुः परिपासित त्वा पूषा त्वां पातु प्रपंथे पुरस्तांत्। यत्राऽऽसंते सुकृतो यत्र ते ययुस्तत्रं त्वा देवः संविता देधातु। भुवंनस्य पत इद॰ ह्विः। अग्नयं रियमते स्वाहां। पुरुंषस्य सयावर्यपेद्घानि मृज्महे। यथां नो अत्र नापंरः पुरा जरस् आयंति। पुरुंषस्य सयाविर वि ते प्राणमंसि स्रसम्। शरीरेण महीमिहि स्वधयेहि पितृनुपं प्रजयाऽस्मानिहावंह। मैवं मा्ड् स्ता प्रियेऽहं देवी सती

पिंतृलोकं यदैषिं। विश्ववारा नर्भसा संव्ययन्त्युभौ नो लोकौ पर्यसाऽभ्यावंवृथ्स्व॥२॥

ड्यं नारीं पतिलोकं वृंणाना निपंद्यत् उपं त्वा मर्त्य् प्रेतम्। विश्वं पुराणमन् पालयंन्ती तस्यै प्रजां द्रविणं चेह धेहि। उदींष्वं नार्यभि जींवलोकमितासुंमेतमुपंशेष एहिं। ह्स्तग्राभस्यं दिधिषोस्त्वमेतत्पत्युंर्जनित्वम्भि सम्बंभूव। सुवर्ण् हस्तांदाददांना मृतस्यं श्रिये ब्रह्मणे तेजंसे बलाय। अत्रैव त्वमिह वय स्थावा विश्वाः स्पृधों अभिमांतीर्जयम। धनुरहस्तांदाददांना मृतस्यं श्रिये क्षत्रायौजंसे बलाय। अत्रैव त्वमिह वय स्थावा विश्वाः स्पृधों अभिमांतीर्जयम। मणि हस्तांदाददांना मृतस्यं श्रिये विशे पृष्टमे बलाय। अत्रैव त्वमिह वय स्थावा विश्वाः स्पृधों अभिमांतीर्जयम॥३॥

ड्ममंग्ने चम्सं मा विजीहरः प्रियो देवानांमुत सोम्यानांम्। एष यश्चमसो देवपान्स्तस्मिन्देवा अमृतां मादयन्ताम्। अग्नेर्वर्म् परि गोभिर्व्ययस्व सं प्रोणुंष्व मेदंसा पीवंसा च। नेत्त्वां धृष्णुरहरंसा जरहंषाणो दधंद्विधक्ष्यन्पर्यङ्खयांते। मैनंमग्ने विदंहो माऽभिशोंचो माऽस्य त्वचं चिक्षिपो मा शरीरम्। यदा शृतं क्रवों जातवेदोऽथेंमेनं प्रहिंणुतात्पितृभ्यः। शृतं यदा क्रसिं जातवेदोऽथेंमेनं परिदत्तात्पितृभ्यः। यदा गच्छात्यसुंनीतिमेतामथां देवानां वश्नीर्भवाति। सूर्यं ते चक्षुंर्गच्छतु वातंमात्मा द्यां च् गच्छं पृथिवीं च धर्मणा। अपो वां गच्छु यदि तत्रं ते हितमोषंधीषु प्रतितिष्ठा शरीरैः। अजो भागस्तपंसा तं तंपस्व तं ते शोचिस्तंपतु तं ते अर्चिः। यास्ते शिवास्तनुवीं जातवेदस्ताभिर्वहेम स्कृतां यत्रं लोकाः। अयं वै त्वमस्मादिध त्वमेतद्यं वै तदंस्य योनिरसि। वैश्वानरः पुत्रः पित्रे लोककुञ्जातवेदो वहेम स्कृतां यत्रं लोकाः॥४॥

विद्वानुभ्यावंवृथ्स्वाभिमांतीर्जयेम् शरीरैश्चत्वारिं च॥————[१]

य एतस्यं पृथो गोप्तार्स्तभ्यः स्वाहा य एतस्यं पृथो रिक्षेतार्स्तभ्यः स्वाहा य एतस्यं पृथोभिऽरिक्षेतार्स्तभ्यः स्वाहांऽऽख्यात्रे स्वाहांऽपाख्यात्रे स्वाहांऽभिलालंपते स्वाहांऽपुलालंपते स्वाहाऽग्नयं कर्मकृते स्वाहा यमत्र नाधीमस्तस्मै स्वाहां। यस्तं इध्मं जुभरिक्षिष्वदानो मूर्धानं वात् तपंते त्वाया। दिवो विश्वंस्माथ्सीमघायत उरुष्यः। अस्मात्त्वमधि जातोऽसि त्वद्यं जांयतां पुनः। अग्नयं वैश्वान्रायं सुवर्गायं लोकाय स्वाहां॥५॥

य एतस्य त्वत्पश्चं॥———[२]

प्र केतुनां बृह्ता भाँत्यग्निराविर्विश्वांनि वृष्भो रोरवीति। दिवश्चिदन्तादुप मामुदानंडपामुपस्थे महिषो वंवर्ध। इदं त एकं पुर ऊत एकं तृतीयेन ज्योतिषा संविशस्व। संवेशंनस्तुनुवै चार्ररेधि प्रियो देवानां पर्मे स्थस्थें। नाकें सुप्णमुप् यत्पतंन्तः हृदा वेनंन्तो अभ्यचंक्षत त्वा। हिरंण्यपक्षं वर्रणस्य दूतं यमस्य योनौ शकुनं भुंरण्युम्। अतिंद्रव सारमेयौ श्वानौ चतुरक्षौ श्वलौ साधुनां पथा। अथां पितृन्थ्सुंविदत्राः अपीहि यमेन ये संधमादं मदन्ति। यौ ते श्वानौ यमरिक्षतारौ चतुरक्षौ पंथिरक्षीं नृचक्षंसा। ताभ्याः राजन्परि देह्येनः स्वस्ति चौस्मा अनमीवं चं धेहि॥६॥

उरुणसार्वसुतृपांवुलुम्बलौ यमस्यं दूतौ चरतो वशा क्ष्यां अनुं। ताव्समभ्यं दृशये सूर्याय पुनर्दत्ता वसुंमुद्येह भूद्रम्। सोम् एकेंभ्यः पवते घृतमेक उपांसते। येभ्यो मधुं प्रधावंति ता श्रिंदेवापिं गच्छतात्। ये युध्यंन्ते प्रधनेषु शूरांसो ये तंनुत्यजः। ये वां सहस्रंदक्षिणास्ता श्रिंदेवापिं गच्छतात्। तपसा ये अनाधृष्यास्तपंसा ये सुर्वर्गताः। तपो ये चिक्रिरे महत्ता श्रिंदेवापिं गच्छतात्। अश्मंन्वती रेवतीः सक्षंद्रमुत्तिष्ठत् प्रतंरता सखायः। अत्रां जहाम् ये अस्त्रशंवाः शिवान् व्यम्भि वाजानुत्तंरम॥७॥

यद्वै देवस्यं सिवतुः प्वित्र सहस्रंधारं वितंतम्नतिरक्षे। येनापुनादिन्द्रमनातिमार्त्ये तेनाहं मा सर्वतेनं पुनामि। या राष्ट्रात्पन्नादप् यन्ति शाखां अभिमृता नृपतिमिच्छमानाः। धातुस्ताः सर्वाः पर्वनेन पूताः प्रजयास्मान्नय्या वर्चसा स॰सृंजाथ। उद्घयं तमंसस्पिर् पश्यंन्तो ज्योति्रत्तंरम्। देवं देवत्रा सूर्यमगंन्म ज्योतिंरुत्तमम्। धाता पुंनातु सिवता पुंनातु। अग्नेस्तेजंसा सूर्यंस्य वर्चसा॥८॥

धेह्युत्तरिमाष्टौ चं॥———[3]

यन्ते अग्निममंन्थाम वृष्भायेव पक्तेव। इमन्तर शंमयामिस क्षीरेणं चोदकेनं च। यन्त्वमंग्ने स्मदंह्स्त्वमु निर्वापया पुनः। क्याम्बूरत्रं जायतां पाकदूर्वा व्यंत्कशा। शीतिके शीतिकावित ह्लादुंके ह्लादुंकावित। मण्डूक्यां सुसङ्गमयेम स्वंग्निर श्वमयं। शं ते धन्वन्या आपः शम्ं ते सन्त्वनूक्याः। शं ते समुद्रिया आपः शम्ं ते सन्त्व वर्ष्याः। शं ते स्वन्तीस्तुनुवे शम्ं ते सन्तु कूप्याः। शन्ते नीहारो वंर्षतु शम् पृष्वाऽवंशीयताम्॥९॥

अवं सृज पुनंरग्ने पितृभ्यो यस्त आहुंत्श्चरंति स्वधाभिः। आयुर्वसान् उपं यातु शेषु सङ्गंच्छतां तनुवां जातवेदः। सङ्गंच्छस्व पितृभिः सङ् स्वधाभिः सिमेष्टापूर्तेनं पर्मे व्योमन्। यत्र भूम्यै वृणसे तत्रं गच्छ तत्रं त्वा देवः संविता देधातु। यत्तं कृष्णः शंकुन आंतुतोदं पिपीलः सपं उत वा श्वापंदः। अग्निष्टद्विश्वांदनृणं कृणोतु सोमंश्च यो ब्रांह्मणमांविवेशं। उत्तिष्ठातंस्तनुव सम्भंरस्व मेह गात्रमवंहा मा शरीरम्। यत्र भूम्यै वृणसे तत्रं गच्छ तत्रं

त्वा देवः संविता दंधातु। इदं त एकं प्र ऊंत एकं तृतीयेन ज्योतिषा संविशस्व। संवेशनस्तुने चारुरेधि प्रियो देवानां पर्मे स्थस्थें। उत्तिष्ठ प्रेहि प्रद्रवौकः कृणुष्व पर्मे व्योमन्। युमेन त्वं युम्यां संविदानोत्तमं नाक्मिधं रोह्मम्। अश्मन्वती रेवतीर्यद्वे देवस्यं सिवतुः प्वित्रं या राष्ट्रात्पन्नादुद्वयं तमंस्स्पिरं धाता पुनातु। अस्मात्त्वमिधं जातौंऽस्ययं त्वदिधंजायताम्। अग्नयं वैश्वान्रायं सुवर्गायं लोकाय स्वाहां॥१०॥

आयांतु देवः सुमनांभिरूतिभिर्यमो हंवेह प्रयंताभिर्क्ता। आसींदता ए सुप्रयतेह ब्रहिष्यूर्जाय जात्यै ममं शत्रुहत्यै। यमे इंव यतमाने यदैतं प्रवाम्भरन्मानुषा देवयन्तः। आसींदत् स्वमुं लोकं विदाने स्वास्स्थे भंवतमिन्दंवे नः। यमाय सोम एसन्त यमायं जुहुता ह्विः। यम हं यज्ञो गंच्छत्यग्निद्तेतो अरंङ्कृतः। यमायं घृतवंद्धविर्जुहोत् प्र चं तिष्ठत। स नो देवेष्वायमदी्र्घमायुः प्र जीवसें। यमाय मध्मत्तम् राज्ञे ह्व्यं जुंहोतन। इदं नम् ऋषिभ्यः पूर्वजेभ्यः पूर्वेभ्यः पिथकृद्धः॥११॥

योऽस्य कौष्ठा जगंतुः पार्थिवस्यैकं इद्वशी। युमं भंज्ञाश्रवो गांय यो राजांनपुरोध्यः। युमङ्गायं भङ्गाश्रवो यो राजांनप्रोध्यः। येनापो नृद्यो धन्वांनि येन द्यौः पृथिवी दृढा। हिर्ण्यकक्ष्यान् सुधुरान् हिर्ण्याक्षानयः शफान्। अश्वांननश्यंतो दानं यमो राजािभ तिष्ठंति। यमो दांधार पृथिवीं यमो विश्वंमिदं जगंत्। यमाय सर्वमित्रंस्थे यत्प्राणद्वायुरिक्षेतम्। यथा पश्च यथा षड्यथा पश्चं दृशर्षयः। यमं यो विद्याथ्स ब्रूंयाद्यथैक ऋषिंविजान्ते॥१२॥

त्रिकंद्रकेभिः पतंति षडुर्वीरेक् मिद्धृहत्। गायत्री त्रिष्ठप्छन्दा एसि सर्वा ता यम आहिता। अहंरहुर्नयंमानो गामश्वं पुरुषं जगंत्। वैवंस्वतो न तृंप्यति पश्चंभिर्मानंवैर्यमः। वैवंस्वते विविंच्यन्ते यमे राजंनि ते जनाः। ये चेह सत्येनेच्छंन्ते य उ चानृंतवादिनः। ते राजित्रिह विविंच्यन्तेऽथा यन्ति त्वामुपं। देवा एश्च ये नमस्यन्ति ब्राह्मणा एश्चाप्वित्यंति। यस्मिन्वृक्षे सुंपलाशे देवैः सम्पिबंते यमः। अत्रां नो विश्पतिः पिता पुराणा अनुवेनित॥१३॥ पृथ्कृत्यो विजान्तेऽनं वेनित॥

वैश्वान्तरे ह्विरिदं जुंहोमि साह्स्रमुथ्स ई श्वतधारम्तम्। तस्मिन्नेष पितरं पिताम्हं प्रपितामहं बिभर्तिपन्वमाने। द्रफ्सश्चेस्कन्द पृथिवीमनु द्यामिमं च योनिमनु यश्च पूर्वः। तृतीयं योनिमनु स्श्चरेन्तं द्रफ्सं जुंहोम्यनु सप्त होत्राः। इम इम्हें श्वतधारमुथ्संब्यच्यमानुं भुवनस्य मध्ये। घृतं दुहानामदितिं जनायाग्रे मा हिईसीः पर्मे ब्योमन्। अपंत वीत वि चं सर्पतातो येऽत्र स्थ पुंराणा ये च् नूतंनाः। अहोभिरद्भिरक्तिभिर्व्यक्तं यमो दंदात्ववसानंमस्मै। स्वितेतानि शरीराणि पृथिव्ये मातुरुपस्थ आदंधे। तेभिर्युज्यन्तामघ्रियाः॥१४॥

शुनं वाहाः शुनं नाराः शुनं कृषतु लाङ्गंलम्। शुनं वेर्त्रा बध्यन्ता शुनमष्ट्रामुदिङ्गय शुनांसीरा शुनम्स्मास् धत्तम्। शुनांसीराविमां वाचं यद्दिवि चंक्रथः पर्यः। तेनेमामुपं सिश्चतम्। सीते वन्दांमहे त्वाऽर्वाचीं सुभगे भव। यथां नः सुभगा संसि यथां नः सुफला संसि। स्वितैतानि शरीराणि पृथिव्ये मातुरुपस्थ आदंधे। तेभिरदिते शं भंव। विमुंच्यध्वमिष्ट्रया देवयाना अतांरिष्म तमंसस्पारम्स्य। ज्योतिरापाम सुवंरगन्म॥१५॥

प्र वाता वान्ति प्तयंन्ति विद्युत् उदोषंधीर्जिहते पिन्वंते सुवंः। इरा विश्वंस्मै भुवंनाय जायते यत्पूर्जन्यः पृथिवी १ रेत्साऽवंति। यथां यमायं हार्म्यमवंपन्पश्चं मानवाः। एवं वंपामि हार्म्यं यथासाम जीवलोके भूरयः। चितः स्थ परिचितं ऊर्ध्वचितः श्रयध्वं पितरो देवता। प्रजापंतिर्वः सादयतु तयां देवत्या। आप्यांयस्व सन्ते॥१६॥

अ्ष्रिया अंगन्म सप्त चं॥\_\_\_\_\_[६]

उत्ते तभ्नोमि पृथिवीं त्वत्परीमं लोकं निदधन्मो अहर रिषम्। पुताइ स्थूणौं पितरों धारयन्तु तेऽत्रां युमः सार्वनात्ते मिनोतु। उपंसर्प मातर् भूमिमेतामुंरुव्यर्चसं पृथिवी स्पृशेवाम्। ऊर्णम्रदा युवतिर्दक्षिणावत्येषा त्वां पातु निर्ऋत्या उपस्थे। उष्ट्रंश्चस्व पृथिवि मा विबाधिथाः सूपायनास्में भव सूपवश्चना। माता पुत्रं यथांसिचाभ्येनं भूमि वृण्। उष्ट्रश्चमाना पृथिवी हि तिष्ठंसि सहस्रं मित उप हि श्रयंन्ताम्। ते गृहासो मधुश्चतो विश्वाहाँस्मै शर्णाः सन्त्वत्रं। एणींर्धाना हरिणी्रर्जुनीः सन्तु धेनवंः। तिलंबथ्सा ऊर्जमस्मै दुहांना विश्वाहां सन्त्वनपंस्फुरन्तीः॥१७॥

पुषा ते यमसादंने स्वधा निधीयते गृहे। अक्षितिर्नामं ते असौ। इदं पितृभ्यः प्रभेरेम ब्रहिर्देवेभ्यो जीवंन्त उत्तरं भरेम। तत्त्वंमारोहासो मेघ्यो भवं यमेन त्वं यम्यां संविदानः। मा त्वां वृक्षौ सम्बाधिष्टां मा माता पृंथिवि त्वम्। पितृन् हि यत्र गच्छास्येधांसं यमराज्यें। मा त्वां वृक्षौ सम्बाधिथां मा माता पृंथिवी मही। वैवस्वत हि गच्छांसि यमराज्ये विरांजिस। नळं प्रवमारोहैतं नळेनं पृथोऽन्विहि। स त्वं नळप्रंवो भूत्वा सन्तरं प्रतरोत्तर॥१८॥

स्वितैतानि शरीराणि पृथिव्यै मातुरुपस्थ आदंधे। तेभ्यंः पृथिवि शं भंव। षड्ढांता सूर्यं ते चक्षुंगंच्छतु वातंमात्मा द्यां च गच्छं पृथिवीं च धर्मणा। अपो वां गच्छ यदि तत्रं ते हितमोषंधीषु प्रतितिष्ठा शरीरैः। परं मृत्यो अनुपरेहि पन्थां

यस्ते स्व इतंरो देवयानांत्। चक्षुंष्मते शृण्वते तें ब्रवीमि मा नंः प्रजा र्रीरिषो मोत वीरान्। शं वातः शर् हि ते घृणिः शम् ते सन्त्वोषंधीः। कल्पंन्तां मे दिशः शृग्माः। पृथिव्यास्त्वां लोके सादयाम्यमुष्य शर्मासि पितरो देवतां। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु तयां देवतंया। अन्तरिक्षस्य त्वा दिवस्त्वां दिशां त्वा नाकंस्य त्वा पृष्ठे ब्रथ्नस्यं त्वा विष्टपं सादयाम्यमुष्य शर्मासि पितरो देवतां। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु तयां देवतंया॥१९॥

अपूपवाँन्धृतवा ईश्वरुरेह सींदतूत्तभुवन् द्यामुतोपरि। योनिकृतः पथिकृतः सपर्यत ये देवानां घृतमांगा इह स्थ। एषा ते यमसादेने स्वधा निधीयते गृहें उसौ। दशां क्षरा ता रंक्षस्व तां गोपायस्व तां ते परिंददामि तस्यां त्वा मा दंभन्यितरों देवतां। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु तयां देवतंया। अपूपवाँञ्छृतवाँन् क्षीरवान्दिधंवान्मधुंमाङ्श्वरुरेह सींदतूत्तभुवन् पृंथिवीं द्यामुतोपरि। योनिकृतंः पथिकृतंः सपर्यतं ये देवाना र शृतमांगाः क्षीरमांगा दिधमागा मधुमागा इह स्थ। पुषा ते यमसादेने स्वधा निधीयते गृहेंऽसौ। शुताक्षंरा सहस्रौक्षरायुतौक्षराऽच्युताक्षरा ता र रक्षस्व तां गोपायस्व तां ते परिंददामि तस्यां त्वा मा दंभन्पितरों देवता। प्रजापितिस्त्वा सादयतु तयां देवतंया॥२०॥

अनंपस्फुरन्तीरुत्तंर देवतंया द्वे चं॥-

प्तास्तें स्वधा अमृताः करोमि यास्ते धानाः परिकिराम्यत्रे। तास्ते यमः पितृभिः संविदानोऽत्रं धेन्ः कामदुधाः करोत्। त्वामर्जुनौषंधीनां पयों ब्रह्माण् इद्विदः। तासां त्वा मध्यादादंदे चरुभ्यो अपिधातवे। दूर्वाणाः स्तम्बमाहंरेतां प्रियतंमां ममं। इमां दिशं मनुष्यांणां भूयिष्ठानु वि रोहतु। काशांनाः स्तम्बमाहंर् रक्षंसामपहत्ये। य पुतस्यै दिशः प्राभंवन्नघायवो यथा तेनाभंवान्युनंः। दर्भाणाः स्तम्बमाहंर पितृणामोषंधीं प्रियाम्। अन्वस्यै मूलं जीवादनु काण्डमथो फलम्॥२१॥

लोकं पृंण ता अस्य सूर्देवहसः। शं वातः शक् हि ते घृणिः शम् ते सन्त्वोषंधीः। कल्पन्तां ते दिशः सर्वाः। इदमेव मेतोऽपंरामार्तिमाराम् काश्चन। तथा तदिश्वभ्यां कृतं मित्रेण वर्रुणेन च। वर्णो वार्यादिदं देवो वनस्पतिः। आर्त्ये निर्ऋत्ये द्वेषांच वनस्पतिः। विधृतिरिस् विधारयासमद्घा द्वेषां सि श्राम श्रमयासमद्घा द्वेषां सि यव यवयासमद्घा द्वेषां सि। पृथिवीं गच्छान्तिरक्षं गच्छ दिवं गच्छान्तिरक्षं गच्छ सुवंगच्छ सुवंगच्छ दिशों गच्छ दिवं गच्छान्तिरक्षं गच्छ पृथिवीं गच्छाऽऽपो वां गच्छ यदि तत्रं ते हितमोषंधीषु प्रतितिष्ठा शरीरेः। अश्मन्वती रेवतीर्यद्वै देवस्यं सिवतः प्वित्रं या राष्ट्रात्पन्नादुद्वयं तमंसस्परि धाता पुनातु॥२२॥

फर्लं पुनातु॥\_\_\_\_\_

आ रोह्ताऽऽयुंर्ज्रसं गृणाना अनुपूर्वं यतंमाना यितृष्ट। इह त्वष्टां सुजिनमा सुरत्नों दीर्घमायुंः करतु जीवसें वः। यथाऽहाँन्यनुपूर्वं भवंन्ति यथर्तवं ऋतुभिर्यन्तिं क्रुप्ताः। यथा न पूर्वमपंरो जहाँत्येवा धांत्रायू १षि कल्पयेषाम्। न हिं ते अग्ने तनुवैं कूरं चकार् मर्त्यः। कृपिर्बभिस्ति तेजेनं पुनर्ज्रायु गौरिव। अपं नः शोशंचद्घमग्ने शुशुध्या र्यिम्। अपं नः शोशंचद्घं मृत्यवे स्वाहाँ। अनुङ्गाहंमन्वारंभामहे स्वस्तयें। स न इन्द्रं इव देवेभ्यो विह्नेः सम्पारंणो भव॥२३॥

ड्मे जीवा वि मृतैरावंवर्तिन्नभूँद्भद्रा देवहूंतिं नो अद्य। प्राञ्जोगामानृतये हसाय द्राघीय आयुंः प्रत्रां दर्धानाः। मृत्योः पदं योपयंन्तो यदैम् द्राघीय आयुंः प्रत्रां दर्धानाः। आप्यायंमानाः प्रजया धनेन शुद्धाः पूता भवथ यज्ञियासः। इमं जीवेभ्यः परिधिं दंधामि मा नोऽनुंगादपंरो अर्धमृतम्। शतं जीवन्तु श्ररदः पुरूचीस्तिरो मृत्युं दंद्महे पर्वतेन। इमा नारीरविधवाः सुपत्नीराञ्जनेन सपिषा सम्मृंशन्ताम्। अनुश्रवो अनमीवाः सुशेवा आरोहन्तु जनयो योनिमग्रैं। यदाञ्जनं त्रैककुदं जात्र हिमवंतस्परि। तेनामृतंस्य मूलेनारातीर्जम्भयामिस। यथा त्वमुद्धिनथ्स्योषधे पृथिव्या अधि। पृविमम उद्धिन्दन्तु कीत्या यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं। अजौऽस्यजास्मद्घा द्वेषा सि यवोऽसि यवयास्मद्घा

#### द्वेषा ५सि॥२४॥

भुव जम्भयामसि त्रीणि च॥-----[९]

अपं नः शोशंचद्घमग्नं शुशुध्या र्यिम्। अपं नः शोशंचद्घम्। सुक्षेत्रिया संगात्या वंसूया चं यजामहे। अपं नः शोशंचद्घम्। प्रयद्भन्दिष्ठ एषां प्रास्माकांसश्च सूरयंः। अपं नः शोशंचद्घम्। प्रयद्गेः सहंस्वतो विश्वतो यन्तिं सूरयंः। अपं नः शोशंचद्घम्। प्रयत्ते अग्ने सूरयो जायेमहि प्रते वयम्। अपं नः शोशंचद्घम्॥२५॥

त्व हि विश्वतोमुख विश्वतः परिभूरसिं। अपं नः शोशंचद्घम्। द्विषो नो विश्वतोमुखाऽति नावेवं पारय। अपं नः शोशंचद्घम्। स नः सिन्धंमिव नावयाति पर्षा स्वस्तयें। अपं नः शोशंचद्घम्। आपं प्रवणादिव यतीरपास्मथ्स्यंन्दताम्घम्। अपं नः शोशंचद्घम्। अपं नः शोशंचद्घम्। उद्घनादुद्कानीवापास्मथ्स्यंन्दताम्घम्। अपं नः शोशंचद्घम्। अनुन्दायं प्रमोदाय पुनरागाङ् स्वान्गृहान्। अपं नः शोशंचद्घम्। आनुन्दायं प्रमोदाय पुनरागाङ् स्वान्गृहान्। अपं नः शोशंचद्घम्। न व तत्र प्रमीयते गौरश्वः पुरुषः प्रशः। यत्रेदं ब्रह्मं क्रियते परिधिर्जीवंनायकमपं नः शोशंचद्घम्॥२६॥

अ्घम्घं चुत्वारिं च॥———[१०]

अपंश्याम युवृतिमाचरंन्तीं मृतायं जीवां पंरिणीयमांनाम्। अन्धेन या तमसा प्रावृताऽसि प्राचीमवांचीमवयन्नरिष्टौ। मयैतां मा्ड्स्तां भ्रियमांणा देवी स्ती पिंतृलोकं यदैषिं। विश्ववांरा नर्भसा संव्यंयन्त्युमौ नों लोकौ पयसाऽऽवृंणीहि। रियष्ठामृश्निं मधुंमन्तमूर्मिणमूर्जः सन्तं त्वा पयसोप् सर्भदेम। सर् र्य्या समु वर्चसा सर्चस्वा नः स्वस्तयैं। ये जीवा ये चं मृता ये जाता ये च जन्त्यौः। तेभ्यों घृतस्यं धारियतुं मधुंधारा व्युन्दती। माता रुद्राणौं दृहिता वसूंना्ड् स्वसांऽऽदित्यानांमृमृतंस्य नाभिः। प्रणुवोचं चिकितुषे जनांय मागामनांगामिदंतिं विधष्ट। पिबंतूदकं तृणौंन्यत्तु। ओमुथ्मृजत॥२७॥

वृधिष्ट द्वे चं॥-----[११]

सन्त्वां सिश्चामि यजुषां प्रजामायुर्धनं च॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

सुमङ्गलीरियं वधूरिमा संमेत पश्यंत। सौभाँग्यम्स्यै द्त्त्वायाथास्तं वि परेतन। इमां त्विमिन्द्र मीद्वः सुपुत्रा स्मुभगाँ कुरु। दशाँस्यां पुत्राना धेहि पतिमेकाद्शं कृषि॥ आवहंन्ती वितन्वाना। कुर्वाणा चीरमात्मनंः। वासा सि मम् गावश्च। अन्नपाने चं सर्वदा। ततों मे श्रियमावह।

ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥



# ॥ सप्तमः प्रश्नः — शीक्षावल्ली॥

शं नो मित्रः शं वर्रणः। शं नो भवत्वर्यमा। शं न इन्द्रो बृह्स्पतिः। शं नो विष्णुंरुरुक्रमः। नमो ब्रह्मणे। नमंस्ते वायो। त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मांसि। त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मं विदिष्यामि। ऋतं विदिष्यामि। सत्यं विदिष्यामि। तन्मामंवतु। तहुक्तारंमवतु। अवंतु माम्। अवंतु वृक्तारम्। ॐ शान्तिः शान्तिः॥१॥ सत्यं विदिष्यामि पश्चं च॥——[१]

शीक्षां व्यांख्यास्यामः। वर्णः स्वरः। मात्रा बलम्। सामे सन्तानः। इत्युक्तः शीक्षाध्यायः॥२॥

शीक्षां पश्चं॥-----[२]

सह नौ यशः। सह नौ ब्रंह्मवर्चसम्। अथातः सर्शताया उपनिषदं व्याख्यास्यामः। पश्चस्वधिकंरणेषु। अधिलोकमधिज्यौतिषमधिविद्यमधिप्रजंमध्यात्मम्। ता महास्रहिता इंत्याच्क्षते। अर्थाधिलोकम्। पृथिवी पूर्वरूपम्। द्यौरुत्तंररूपम्। आकांशः सुन्धिः॥३॥

वार्यः सन्धानम्। इत्यंधिलोकम्। अथांधिज्यौतिषम्। अग्निः पूर्वरूपम्। आदित्य उत्तंररूपम्। आपः सन्धिः। वैद्युतंः सन्धानम्। इत्यंधिज्यौतिषम्। अथांधिविद्यम्। आचार्यः पूर्वरूपम्॥४॥

अन्तेवास्युत्तंररूपम्। विंद्या सुन्धिः। प्रवचनर् सन्धानम्। इत्यंधिविद्यम्। अथाधिप्रजम्। माता पूर्वरूपम्। पितोत्तंररूपम्। प्रंजा सुन्धिः। प्रजननर् सन्धानम्। इत्यधिप्रजम्॥५॥

अथाध्यात्मम्। अधराहनुः पूँर्वरूपम्। उत्तराहनुरुत्तंररूपम्। वाख्सन्धिः। जिह्वां सन्धानम्। इत्यध्यात्मम्। इतीमा मंहास्रहिताः। य एवमेता महास्रहिता व्याख्यांता वेद। सन्धीयते प्रजंया पृश्निः। ब्रह्मवर्चसेनान्नाद्येन सुवर्ग्येणं लोकेन॥६॥

सुन्धिराचार्यः पूर्विरूपमित्यधिप्रजं लोकेन॥—————[3]

यश्छन्दंसामृष्भो विश्वरूपः। छन्दोभ्योऽध्यमृतांध्सम्बभूवं। स मेन्द्रो मेधयां स्पृणोतु। अमृतंस्य देव धारंणो भूयासम्। शरीरं मे विचंर्षणम्। जिह्वा मे मधुंमत्तमा। कर्णांभ्यां भूरि विश्रुंवम्। ब्रह्मंणः कोशोऽिस मेधयाऽिपंहितः। श्रुतं में गोपाय। आवहंन्ती वितन्वाना॥७॥

कुर्वाणा चीरंमात्मनंः। वासारंसि मम् गावंश्च। अन्नपानं चं सर्वदा। ततों मे श्रियमावंह। लोम्शां प्शुभिः सह स्वाहाँ। आ मां यन्तु ब्रह्मचारिणः स्वाहाँ। वि मांऽऽयन्तु ब्रह्मचारिणः स्वाहाँ। प्र मांऽऽयन्तु ब्रह्मचारिणः स्वाहाँ। दमायन्तु ब्रह्मचारिणः स्वाहाँ। शमायन्तु ब्रह्मचारिणः स्वाहाँ॥८॥

यशो जर्नेऽसानि स्वाहाँ। श्रेयान् वस्यंसोऽसानि स्वाहाँ। तं त्वां भग् प्रविंशानि स्वाहाँ। स मां भग् प्रविंश स्वाहाँ। तस्मिन्थ्सहस्रंशाखे। निर्भगाहं त्वयि मृजे स्वाहाँ। यथाऽऽपः प्रवंता यन्ति। यथा मासां अहर्जुरम्। एवं मां ब्रह्मचारिणः। धात्रायन्तु सूर्वतः स्वाहाँ। प्रतिवेशोऽसि प्र मां भाहि प्र मां पद्यस्व॥९॥

[8]

भूर्भुवः सुवृरिति वा एतास्तिस्रो व्याह्नंतयः। तासांमुहस्मै तां चंतुर्थीम्। माहांचमस्यः प्रवंदयते। मह् इतिं। तद्भक्षां। स आत्मा। अङ्गांन्यन्या देवताः। भूरिति वा अयं लोकः। भुव इत्यन्तरिक्षम्। सुवृरित्यसौ लोकः॥१०॥

मह् इत्यांदित्यः। आदित्येन् वाव सर्वे लोका महीयन्ते। भूरिति वा अग्निः। भुव इति वायः। सुव्रित्यांदित्यः। मह् इति चन्द्रमाः। चन्द्रमंसा वाव सर्वाणि ज्योती १षि महीयन्ते। भूरिति वा ऋचः। भुव इति सामानि। सुव्रिति यज्र १षि॥११॥

मह् इति ब्रह्मं। ब्रह्मंणा वाव सर्वे वेदा महीयन्ते। भूरिति वै प्राणः। भुव इत्यंपानः। सुव्रितिं व्यानः। मह् इत्यन्नम्। अन्नेन वाव सर्वे प्राणा महीयन्ते। ता वा एताश्चंतस्रश्चतुर्धा। चतंस्रश्चतस्रो व्याहंतयः। ता यो वेदं। स वेंद् ब्रह्मं। सर्वेंऽस्मै देवा बुलिमावंहन्ति॥१२॥

असौ लोको यजू १पि वेद द्वे चं॥

स य एषों ऽन्तर्ह्हं दय आका्षाः। तस्मिन्नयं पुर्रुषो मनोमयः। अमृतो हिर्ण्मयः। अन्तरेण तालुंके। य एष स्तनं इवावलम्बंते। सेन्द्रयोनिः। यत्रासौ केशान्तो विवर्तते। व्यपोह्यं शीर्षकपाले। भूरित्युग्नौ प्रतितिष्ठति। भुव इतिं वायौ॥१३॥

सुव्रित्यांदित्ये। मह् इति ब्रह्मणि। आप्नोति स्वारांज्यम्। आप्नोति मनंस्स्पितम्। वाक्पंतिश्वक्षंष्पितिः। श्रोत्रंपतिर्वि-ज्ञानंपितः। एतत्ततों भवति। आकाशशंरीरं ब्रह्मं। स्त्यात्मंप्राणारांमं मनं आनन्दम्। शान्तिंसमृद्धम्मृतम्। इतिं प्राचीनयोग्योपांस्व॥१४॥

पृथिव्यंन्तिरंक्षं द्यौर्दिशोंऽवान्तरिद्धाः। अग्निर्वायुरांदित्य-श्चन्द्रमा नक्षंत्राणि। आप ओषंधयो वनस्पतंय आकाश आत्मा। इत्यंधिभूतम्। अथाध्यात्मम्। प्राणो व्यानोंऽपान उंदानः संमानः। चक्षुः श्रोत्रं मनो वाक्कक्। चर्म मार्स्स स्नावास्थि मुजा। पृतदंधि विधायर्षिरवोंचत्। पाङ्कं वा इदस् सर्वम्। पाङ्केनेव पाङ्कः स्पृणोतीति॥१५॥

ओमिति ब्रह्मं। ओमितीद सर्वम्ं। ओमित्येतदंनुकृति ह स्म वा अप्योश्रांवयेत्याश्रांवयन्ति। ओमिति सामानि गायन्ति। ओश्शोमितिं शस्त्राणिं शश्सन्ति। ओमित्यंध्वर्यः प्रंतिग्रं प्रतिंगृणाति। ओमिति ब्रह्मा प्रसौति। ओमित्यंग्निहोत्रमन्जानाति। ओमितिं ब्राह्मणः प्रवृक्ष्यन्नांह ब्रह्मोपाप्तवानीतिं। ब्रह्मैवोपाप्तोति॥१६॥

ओन्दर्श॥\_\_\_\_\_[८]

ऋतं च स्वाध्यायप्रवंचने च। सत्यं च स्वाध्यायप्रवंचने च। तपश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। दमश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। शमश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। अग्निहोत्रं च स्वाध्यायप्रवंचने च। अग्निहोत्रं च स्वाध्यायप्रवंचने च। अतिथयश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। मानुषं च स्वाध्यायप्रवंचने च। प्रजा च स्वाध्यायप्रवंचने च। प्रजा च स्वाध्यायप्रवंचने च। प्रजातिश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। प्रजातिश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। सत्यमिति सत्यवचां राथीतरः। तप इति तपोनित्यः पौरुशिष्टः। स्वाध्यायप्रवचने एवेति नाकों मौद्गल्यः। तिद्धि तपंस्तिद्धि तपः॥१७॥

प्रजा च स्वाध्यायप्रवंचने च षट्वं॥———[९]

अहं वृक्षस्य रेरिवा। कीर्तिः पृष्ठं गिरेरिव। ऊर्ध्वपंवित्रो वाजिनीव स्वमृतंमस्मि। द्रविण् सर्वर्चसम्। सुमेधा अमृतोक्षितः। इति त्रिशङ्कोर्वेदांनुवचनम्॥१८॥

अ॒हৼ षद्॥—————[१०]

वेदमनूच्याऽऽचार्योऽन्तेवासिनमंनुशास्ति। सत्यं वद। धर्मं चर। स्वाध्यायाँन्मा प्रमदः। आचार्याय प्रियं धनमाहृत्य प्रजातन्तुं मा व्यंवच्छेथ्सीः। सत्यान्न प्रमंदितव्यम्। धर्मान्न प्रमंदित्व्यम्। कुशलान्न प्रमंदित्व्यम्। भूत्यै न प्रमंदित्व्यम्। स्वाध्यायप्रवचनाभ्यां न प्रमंदितव्यम्॥१९॥

देविपतृकार्याभ्यां न प्रमंदित्व्यम्। मातृंदेवो भव। पितृंदेवो भव। आचार्यदेवो भव। अतिथिंदेवो भव। यान्यनवद्यानिं कर्माणि। तानि सेविंतव्यानि। नो इंतराणि। यान्यस्माकश् सुचंरितानि। तानि त्वयोपास्यानि॥२०॥

नो इंतराणि। ये के चास्मच्छ्रेया से ब्राह्मणाः। तेषां त्वयाऽऽसनेन प्रश्वंसित्व्यम्। श्रद्धंया देयम्। अश्रद्धंयाऽदेयम्। श्रिया देयम्। ह्रिया देयम्। भिया देयम्। संविंदा देयम्। अथ यदि ते कर्मविचिकिथ्सा वा वृत्तविचिकिथ्सा वा स्यात्॥२१॥

ये तत्र ब्राह्मणाः सम्मर्शिनः। युक्तां आयुक्ताः। अलूक्षां धर्मकामाः स्युः। यथा ते तत्रं वर्तेरन्। तथा तत्रं वर्तेथाः। अथाभ्यांख्यातेषु। ये तत्र ब्राह्मणाः सम्मर्शिनः। युक्तां आयुक्ताः। अलूक्षां धर्मकामाः स्युः। यथा ते तेषुं वर्तेरन्। तथा तेषुं वर्तेथाः। एषं आदेशः। एष उपदेशः। एषा वेदोपनिषत्। एतदंनुशासनम्। एवमुपांसित्व्यम्। एवमु चैतंदुपास्यम्॥२२॥

स्वाध्यायप्रवचनाभ्यान्न प्रमंदितृव्यं तानि त्वयोपास्यानि स्यात्तेषुं वर्तेरन्थ्सप्त चं॥——[११]

शं नो मित्रः शं वरुणः। शं नो भवत्वर्यमा। शं

न् इन्द्रो बृह्स्पतिः। शं नो विष्णुंरुरुक्रमः। नमो ब्रह्मणे। नमंस्ते वायो। त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मांसि। त्वामेव प्रत्यक्षं ब्रह्मांसि। त्वामेव प्रत्यक्षं ब्रह्मांति। त्वामेव प्रत्यक्षं ब्रह्मावांदिषम्। ऋतमंवादिषम्। सत्यमंवादिषम्। तन्मामांवीत्। तद्वक्तारंमावीत्। आवीन्माम्। आवींद्वक्तारम्। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥२३॥

सत्यमेवादिषं पश्चं च॥

**-**[१२]

# ॥ अष्टमः प्रश्नः — ब्रह्मानन्दवल्ली॥

ॐ सह नांववत्। सह नौं भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेज्ञस्वि नावधीतमस्तु मा विद्विषावहैं। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

ब्रह्मविदाँप्रोति परम्ँ। तदेषाभ्यंक्ता। सृत्यं ज्ञानमंनन्तं ब्रह्मं। यो वेद निहितं गुहांयां पर्मे व्योमन्। सौंऽश्जृते सर्वान्कामाँन्थ्सह। ब्रह्मंणा विपश्चितेतिं। तस्माद्वा एतस्मांदात्मनं आकाशः सम्भूतः। आकाशाद्वायः। वायोरग्निः। अग्नेरापंः। अन्धः पृथिवी। पृथिव्या ओषंधयः। ओषंधीभ्योऽन्नम्। अन्नात्पुरुंषः। स वा एष पुरुषोऽन्नंरसमयः। तस्येदंमेव शिरः। अयं दक्षिणः पृक्षः। अयमुत्तंरः पृक्षः। अयमात्मां। इदं पुच्छं प्रतिष्ठा। तदप्येष श्लोंको भ्वति॥१॥

अन्नाद्वै प्रजाः प्रजायंन्ते। याः काश्चं पृथिवीः श्रिताः। अथो अन्नेनैव जीवन्ति। अथैन्दिपं यन्त्यन्ततः। अन्नः

हि भूतानां ज्येष्ठम्। तस्मां ध्सर्वीष्धमुंच्यते। सर्वं वै तेऽन्नंमाप्नुवन्ति। येऽन्नं ब्रह्मोपासंते। अन्नः हि भूतानां ज्येष्ठम्। तस्माथ्सर्वोष्धमुंच्यते। अन्नाद्भूतानि जायंन्ते। जातान्यन्नेन वर्धन्ते। अद्यतेऽत्ति च भूतानि। तस्मादन्नं तदुच्यंत इति। तस्माद्वा एतस्मादन्नंरसमयात्। अन्योऽन्तर आत्मां प्राण्मयः। तेनैष पूर्णः। स वा एष पुरुषविध एव। तस्य पुरुषविधताम्। अन्वयं पुरुषविधः। तस्य प्राणं एव शिरः। व्यानो दक्षिणः पक्षः। अपान उत्तरः पक्षः। आकांश आत्मा। पृथिवी पुच्छं प्रतिष्ठा। तदप्येष श्लोंको भवति॥२॥ प्राणं देवा अनु प्राणंन्ति। मनुष्याः पृशवंश्च ये। प्राणो हि भूतानामार्युः। तस्माध्सर्वायुषमुंच्यते। सर्वमेव त् आयुर्यन्ति। ये प्राणं ब्रह्मोपासंते। प्राणो हि भूतानामायुः। तस्माथ्सर्वायुषमुच्यंत इति। तस्यैष एव शारीर आत्मा। यंः पूर्वस्य। तस्माद्वा एतस्मौत् प्राणमयात्। अन्योऽन्तर आत्मां मनोमयः। तेनैष पूर्णः। स वा एष पुरुषविध एव। तस्य पुरुषविधताम्। अन्वयं पुरुषविधः। तस्य यर्जुरेव शिरः। ऋग्दक्षिणः पृक्षः। सामोत्तरः पक्षः। आदेश आत्मा। अथर्वाङ्गिरसः पुच्छं प्रतिष्ठा। तदप्येष श्लोको भवति॥३॥

यतो वाचो निवंर्तन्ते। अप्रौप्य मनंसा सह। आनन्दं ब्रह्मणो विद्वान्। न बिभेति कदांचनेति। तस्यैष एव शारीर आत्मा। यंः पूर्वस्य। तस्माद्वा एतस्मौन्मनोमयात्। अन्योऽन्तर आत्मा विज्ञान्मयः। तेनैष पूर्णः। स वा एष पुरुषविध एव। तस्य पुरुषविधताम्। अन्वयं पुरुषविधः। तस्य श्रेष्ठैव शिरः। ऋतं दक्षिणः पृक्षः। सत्यमुत्तरः पृक्षः। योग आत्मा। महः पुच्छं प्रतिष्ठा। तदप्येष श्लोको भ्वति॥४॥

विज्ञानं युज्ञं तंनुते। कर्माणि तनुतेऽपिं च। विज्ञानं देवाः सर्वे। ब्रह्म ज्येष्ट्रमुपांसते। विज्ञानं ब्रह्म चेद्वेदं। तस्माचेन्न प्रमाद्यंति। शरीरं पाप्मंनो हित्वा। सर्वान्कामान्थ्समश्जेत इति। तस्येष एव शारीर आत्मा। यः पूर्वस्य। तस्माद्वा एतस्माद्विज्ञान्मयात्। अन्योऽन्तर आत्मांऽऽनन्द्मयः। तेनैष पूर्णः। स वा एष पुरुषविध एव। तस्य पुरुषविधताम्। अन्वयं पुरुषविधः। तस्य प्रियंमेव शिरः। मोदो दक्षिणः पृक्षः। प्रमोद उत्तरः पृक्षः। आनंन्द आत्मा। ब्रह्म पुच्छं प्रतिष्ठा। तदप्येष श्लोको भवति॥५॥

असंत्रेव सं भवति। अस्द्वह्मेति वेद चेत्। अस्ति ब्रह्मेतिं चेद्वेद। सन्तमेनं ततो विंदुरिति। तस्यैष एव शारींर आत्मा। यः पूर्वस्य। अथातोंऽनुप्रश्ञाः। उता विद्वान्मुं लोकं प्रेत्यं। कश्चन गंच्छ्ती(३)॥ आहों विद्वान्मुँ लोकं प्रेत्यं। कश्चिम्मंश्र्जुता(३) उ। सोंऽकामयत। बहु स्यां प्रजांयेयेतिं। स तपोंऽतप्यत। स तपंस्तस्वा। इद श

सर्वमसृजत। यदिदं किं चं। तथ्सृष्ट्वा। तदेवानु प्राविंशत्। तदेनुप्रविश्यं। सच्च त्यचांभवत्। निरुक्तं चानिंरुक्तं च। निलयनं चानिलयनं च। विज्ञानं चाविंज्ञानं च। सत्यं चानृतं च संत्यम्भवत्। यदिदं किं च। तथ्सत्यमित्याच्क्षते। तदप्येष श्लोंको भवति॥६॥

असृद्वा इदमग्रं आसीत्। ततो वे सदंजायत। तदात्मानः स्वयंमकुरुत। तस्मात्तथ्सुकृतमुच्यंत इति। यद्वें तथ्सुकृतम्। रंसो वे सः। रसः ह्येवायं लब्ध्वाऽऽनंन्दी भवति। को ह्येवान्यांत्कः प्राण्यात्। यदेष आकाश आनंन्दो न स्यात्। एष ह्येवानंन्दयाति। यदा ह्येवैष् एतस्मिन्नदृश्येऽनात्म्येऽनिरुक्तेऽनिलयनेऽभयं प्रतिष्ठां विन्दते। अथ सोऽभयं गंतो भवति। यदा ह्येवैष् एतस्मिन्नदृश्येऽनात्म्येऽनिरुक्तेऽनिलयनेऽभयं प्रतिष्ठां विन्दते। अथ सोऽभयं गंतो भवति। यदा ह्येवैष् एतस्मिन्नदृरमन्तंरं कुरुते। अथ तस्य भंयं भवति। तत्त्वेव भयं विदुषोऽमंन्वानस्य। तदप्येष श्लोंको भवति॥७॥

भीषाऽस्माद्वातंः पवते। भीषोदंति सूर्यः। भीषाऽस्मादिग्नं-श्चेन्द्रश्च। मृत्युर्धावित पश्चंम इति। सैषाऽऽनन्दस्य मीमा रंसा भवति। युवा स्याथ्साधु युवाऽध्यायकः। आशिष्ठो दिढेष्ठों बिलेष्ठः। तस्येयं पृथिवी सर्वा वित्तस्यं पूर्णा स्यात्। स एको मानुषं आनुन्दः। ते ये शतं मानुषां आनुन्दाः। स एको मनुष्यगन्धर्वाणांमानुन्दः। श्रोत्रियस्य चाकामंहत्स्य।

ते ये शतं मनुष्यगन्धर्वाणांमानन्दाः। स एको

देवगन्धर्वाणांमानुन्दः। श्रोत्रियस्य चाकामंहतुस्य।

ते ये शतं देवगन्धर्वाणांमान्नदाः। स एकः पितृणां चिरलोकलोकानांमानन्दः। श्रोत्रियस्य चाकामंहतस्य।

ते ये शतं पितृणां चिरलोकलोकार्नामानुन्दाः। स एक आजानजानां देवार्नामानुन्दः। श्रोत्रियस्य चाकार्महतुस्य।

ते ये शतमाजानजानां देवानांमानुन्दाः। स एकः कर्मदेवानां देवानांमानुन्दः। ये कर्मणा देवानंपियन्ति। श्रोत्रियस्य चाकामंहतस्य।

ते ये शतं कर्मदेवानां देवानांमानुन्दाः। स एको देवानांमानुन्दः। श्रोत्रियस्य चाकामंहतुस्य।

ते ये शतं देवानामान्नदाः। स एक इन्द्रंस्यान्नदः। श्रोत्रियस्य चाकामहतस्य।

ते ये शतमिन्द्रंस्याऽऽन्न्दाः। स एको बृहस्पतेंरान्न्दः। श्रोत्रियस्य चाकामंहतस्य।

ते ये शतं बृहस्पतेरान्न्दाः। स एकः प्रजापतेरान्न्दः। श्रोत्रियस्य चाकामहतस्य।

ते ये शतं प्रजापतेरानुन्दाः। स एको ब्रह्मणे आनुन्दः। श्रोत्रियस्य चाकामहतस्य।

स यश्चांयं पुरुषे। यश्चासांवादित्ये। स एकः। स यं एवंवित्। अस्माल्लोकात्प्रेत्य। एतमन्नमयमात्मानमुपंसङ्कामति। एतं प्राणमयमात्मानमुपंसङ्कामित। एतं मनोमयमात्मानमुपं-सङ्कामित। एतं विज्ञानमयमात्मानमुपंसङ्कामित। एतमानन्द-मयमात्मानमुपंसङ्कामित। तदप्येष श्लोको भ्वति॥८॥

यतो वाचो निवंतन्ते। अप्रांप्य मनंसा सह। आनन्दं ब्रह्मंणो विद्वान्। न बिभेति कुतंश्चनेति। एत ह वावं न तपति। किमह साधुं नाक् रवम्। किमहं पापमक रविमिति। स य एवं विद्वानेते आत्मांन इस्पृणुते। उभे ह्यें वैष् एते आत्मांन इस्पृणुते। य एवं वेदं। इत्युंपनिषंत्॥९॥

स्ह नांववतु। स्ह नौं भुनक्तु। स्ह वीर्यं करवावहै। तेज्ञस्वि नावधीतमस्तु मा विद्विषावहैं। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

# ॥ नवमः प्रश्नः — भृगुवल्ली॥

ॐ सह नांववत्। सह नौं भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेजस्व नावधीतमस्तु मा विद्विषावहैं। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

भृगुर्वे वांरुणिः। वर्रणं पितंरुमुपंससार। अधीहि भगवो ब्रह्मेतिं। तस्मां पुतत्प्रोंवाच। अन्नं प्राणं चक्षुः श्रोत्रं मनो वाचमितिं। त॰ होंवाच। यतो वा इमानि भूतांनि जायंन्ते। येन जातांनि जीवंन्ति। यत्प्रयंन्त्यभि संविंशन्ति। तद्विजिंज्ञासस्व। तद्वह्मेतिं। स तपोंऽतप्यत। स

#### तपंस्तम्बा॥१॥

अत्रं ब्रह्मेति व्यंजानात्। अन्नाद्धेव खिल्वमानि भूतांनि जायंन्ते। अन्नेन जातांनि जीवंन्ति। अन्नं प्रयंन्त्यभि संविशन्तीति। तिद्वज्ञायं। पुनर्वे वर्रणं पितर्मुपंससार। अधीहि भगवो ब्रह्मेति। त॰ होवाच। तपंसा ब्रह्मे विजिज्ञासस्व। तपो ब्रह्मेति। स तपोऽतप्यत। स तपंस्तस्वा॥२॥

प्राणो ब्रह्मेति व्यंजानात्। प्राणास्येव खिल्वमानि भूतांनि जायन्ते। प्राणेन जातांनि जीवन्ति। प्राणं प्रयंन्त्यभि संविशन्तीतिं। तिह्वज्ञायं। पुनंरेव वर्रणं पितंरमुपंससार। अधींहि भगवो ब्रह्मेतिं। त॰ होवाच। तपंसा ब्रह्म विजिंज्ञासस्व। तपो ब्रह्मेतिं। स तपोऽतप्यत। स तपंस्तस्वा॥३॥

मनो ब्रह्मेति व्यंजानात्। मनंसो ह्यंव खिल्वमानि भूतांनि जायंन्ते। मनंसा जातांनि जीवंन्ति। मनः प्रयंन्त्यभि संविशन्तीति। तद्विज्ञायं। पुनंरेव वरुणं पितर्मुपंससार। अधींहि भगवो ब्रह्मेति। त॰ होवाच। तपंसा ब्रह्म विजिज्ञासस्व। तपो ब्रह्मेति। स तपोऽतप्यत। स तपंस्तस्वा॥४॥

विज्ञानं ब्रह्मेति व्यंजानात्। विज्ञाना् छोव खिल्वमानि भूतांनि जायंन्ते। विज्ञानंन जातांनि जीवंन्ति। विज्ञानं प्रयंन्त्यभि संविंशन्तीतिं। तद्विज्ञायं। पुनेरेव वर्रणं पितरमुपंससार। अधीहि भगवो ब्रह्मेतिं। त॰ होवाच। तपंसा ब्रह्म विजिंज्ञासस्व। तपो ब्रह्मेतिं। स तपोऽतप्यत। स तपंस्तस्वा॥५॥

आन्नन्दो ब्रह्मेति व्यंजानात्। आनन्दाद्येव खिल्वमानि भूतांनि जायंन्ते। आन्नन्देन जातांनि जीवंन्ति। आन्नन्दं प्रयंन्त्यभि संविश्वन्तीति। सैषा भाग्वी वांरुणी विद्या। प्रमे व्योम्न् प्रतिष्ठिता। य एवं वेद प्रतितिष्ठति। अन्नंवानन्नादो भंवति। महान्भंवति प्रजयां प्शुभिर्ब्रह्मवर्चसेनं। महान्कीर्त्या॥६॥

अत्रं न निंन्द्यात्। तद्भृतम्। प्राणो वा अत्रम्ं। शरीरमत्रादम्। प्राणे शरीरं प्रतिष्ठितम्। शरीरे प्राणः प्रतिष्ठितः। तदेतदत्रमन्ने प्रतिष्ठितम्। स य एतदत्रमन्ने प्रतिष्ठितं वेद प्रतितिष्ठति। अत्रंवानन्नादो भंवति। महान्भविति प्रजयां पशुभिर्ब्रह्मवर्चसेनं। महान्कीर्त्या॥७॥

अत्रं न परिचक्षीत। तद्वृतम्। आपो वा अन्नम्। ज्योतिरन्नादम्। अपसु ज्योतिः प्रतिष्ठितम्। ज्योतिष्यापः प्रतिष्ठिताः। तदेतदन्नमन्ने प्रतिष्ठितम्। स य एतदन्नमन्ने प्रतिष्ठितं वेद प्रतितिष्ठति। अन्नवानन्नादो भवति। महान्भवित प्रजयां पशुभिर्ब्रह्मवर्चसेनं। महान्कीर्त्या॥८॥

अर्न्न बहु कुंवीत। तद्भृतम्। पृथिवी वा अन्नम्।

आकाशौँऽत्रादः। पृथिव्यामांकाशः प्रतिष्ठितः। आकाशे पृथिवी प्रतिष्ठिता। तदेतदन्नमन्ने प्रतिष्ठितम्। स य एतदन्नमन्ने प्रतिष्ठितं वेद प्रतितिष्ठति। अन्नंवानन्नादो भंवति। महान्भंवति प्रजयां पृशुभिर्ब्रह्मवर्चसनं। महान्कीर्त्या॥९॥

न कश्चन वसतौ प्रत्यांचक्षीत। तद्वृतम्। तस्माद्यया कया च विधया बह्वंत्रं प्राप्नुयात्। अराध्यस्मा अन्नमित्याचक्षते। एतद्वे मुखतौँ ऽन्न १ राद्धम्। मुखतो ऽस्मा अन्न १ राध्यते। एतद्वे मध्यतो उन्नर राद्धम्। मध्यतो उस्मा अन्नर राध्यते। एतद्वा अन्तर्तो ऽन्न र राद्धम्। अन्तर्तो ऽस्मा अन्न र राध्यते। य एवं वेद। क्षेम इति वाचि। योगक्षेम इति प्राणापानयोः। कर्मेति हस्तयोः। गतिरिति पादयोः। विमुक्तिरिति पायौ। इति मानुषीः समाज्ञाः। अथ दैवीः। तृप्तिरिति वृष्टौ। बलिमंति विद्युति। यश इंति पशुषु। ज्योतिरिति नेक्षत्रेषु। प्रजातिरमृतमानन्द इंत्युपस्थे। सर्वमिंत्याकाशे। तत्प्रतिष्ठेत्युंपासीत। प्रतिष्ठांवान्भवति। तन्मह इत्युंपासीत। मंहा-भवति। तन्मन इत्युंपासीत। मानंवा-भवति। तन्नम इत्युपासीत। नम्यन्ते उस्मै कामाः। तद्वह्मेत्युपासीत। ब्रह्मंवान्भवति। तद्भह्मणः परिमर इत्युंपासीत। पर्येणं म्रियन्ते द्विषन्तंः सपन्नाः। परि येंऽप्रियां भ्रातृव्याः। स यश्चायं पुरुषे। यश्चासांवादित्ये। स एकः। स य एवंवित्। अस्माल्लोकात्प्रेत्य। एतमन्नमयमात्मानमुपंसङ्कम्य।

प्राणमयमात्मानमुपंसङ्कम्य। एतं मनोमयमात्मानमुपं-सङ्कम्य। एतं विज्ञानमयमात्मानमुपंसङ्कम्य। एतमानन्दमय-मात्मानमुपंसङ्कम्य। इमाँ लोकान्कामान्नी कामरूप्यंनु-स्थरन्। एतथ्साम गांयत्रास्ते। हा(३) वु हा(३) वु हा(३) वुं। अहमन्नमहमन्नमहमन्नम्। अहमन्नादो(२)ऽहमन्नादो(२)-ऽहमन्नादः। अहङ् श्लोककृदहङ् श्लोककृदहङ् श्लोककृत्। अहमस्मि प्रथमजा ऋता(३) स्य। पूर्वं देवेभ्यो अमृतस्य ना(३) भाइ। यो मा ददाति स इदेव मा(३) वाः। अहमन्नमन्नमुदन्तमा(३) द्या। अहं विश्वं भुवंनुमभ्यंभुवाम्। सुवर्न ज्योतीः। य एवं वेदं। इत्यंपनिषंत्॥१०॥

सह नांववत्। सह नौ भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेजस्व नावधीतमस्तु मा विद्विषावहैं। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥



# ॥दशमः प्रश्नः — महानारायणोपनिषत्॥

ॐ सह नांववत्। सह नौं भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेज्ञस्वि नावधीतमस्तु मा विद्विषावहैं। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

## ॥अम्भस्य पारे॥

अम्भेस्य पारे भुवंनस्य मध्ये नाकंस्य पृष्ठे मंह्तो महीयान्। शुक्रेण ज्योती १षि समनुप्रविष्टः प्रजापंतिश्चरित् गर्भे अन्तः॥ यस्मिन्निद्दः सं च विचैति सर्वं यस्मिन्देवा अधि विश्वे निषेदुः। तदेव भूतं तदु भव्येमा इदं तद्क्षरे पर्मे व्योमन्॥ येनांऽऽवृतं खं च दिवं महीं च येनांऽऽदित्यस्तपंति तेजंसा भ्राजंसा च। यमन्तः समुद्रे क्वयो वयंन्ति यद्क्षरे पर्मे प्रजाः॥ यतः प्रसूता जगतः प्रसूती तोयेन जीवान् व्यसंसर्ज् भूम्याम्। यदोषंधीभिः पुरुषान्पशूङ्श्च विवेश भूतानि चराचराणि॥ अतः परं नान्यदणीयसः हि परात्परं यन्महंतो महान्तम्॥ यदेकम्व्यक्तमनंन्तरूपं विश्वं पुराणं तमंसः परंस्तात्॥१॥

तदेवर्तं तदुं स्त्यमांहुस्तदेव ब्रह्मं पर्मं केवीनाम्। इष्टापूर्तं बंहुधा जातं जायंमानं विश्वं बिंभर्ति भुवंनस्य नाभिः॥ तदेवाग्निस्तद्वायुस्तथ्सूर्यस्तदुं चन्द्रमाः। तदेव शुक्रम्मृतं तद्वह्म तदापः स प्रजापंतिः॥ सर्वे निमेषा ज्ञिरे विद्युतः पुरुषादिधे। कुला मुंहूर्ताः काष्ठांश्वाहोरात्राश्चे सर्वशः॥ अर्धमासा मासां ऋतवः संवथ्सरश्चं कल्पन्ताम्। स आपः प्रदुघे उभे इमे अन्तरिक्षमथो सुवः॥ नैनंमूर्धं न तिर्यश्चं न मध्ये परिजग्रभत्। न तस्येशे कश्चन तस्यं नाम महद्यशः॥२॥

न स्न्हशें तिष्ठित् रूपंमस्य न चक्षुंषा पश्यित् कश्चनैनम्ं। हृदा मंनीषा मनंसाऽभिकृष्तो य एंनं विदुरमृंतास्ते भवन्ति॥ अद्भः सम्भूंतो हिरण्यग्भं इत्यष्टौ॥ एष हि देवः प्रदिशोऽनु सर्वाः पूर्वो हि जातः स उ गर्भे अन्तः। स विजायंमानः स जिन्ष्यमाणः प्रत्यङ्गुः खाँस्तिष्ठति विश्वतोमुखः॥ विश्वतंश्वक्षुरुत विश्वतोमुखो विश्वतोहस्त उत विश्वतंस्पात्। सं बाहुभ्यां नर्मति सं पतंत्रैर्द्यावांपृथिवी जनयंन्देव एकः॥ वेनस्तत्पश्यन्विश्वा भुवनानि विद्वान् यत्र विश्वं भवत्येकंनीळम्। यस्मिन्निद सं च विचैक् स् स ओतः प्रोतंश्व विभुः प्रजासुं। प्र तद्वोचे अमृतं नु विद्वान्गंन्थ्वी नाम निहितं गुहांसु॥३॥

त्रीणि पदा निहिता गुहांसु यस्तद्वेदं सिवतुः पिताऽसंत्। स नो बन्धंर्जिनिता स विधाता धामांनि वेद भुवंनानि विश्वां। यत्रं देवा अमृतंमानशानास्तृतीये धामांन्यभ्यैरंयन्त। परि द्यावांपृथिवी यंन्ति सद्यः परि लोकान् परि दिशः परि सुवंः। ऋतस्य तन्तुं विततं विचृत्य तदंपश्यत्तदंभवत् प्रजासं। प्रीत्यं लोकान्प्रीत्यं भूतानिं प्रीत्य सर्वाः प्रदिशो दिशंश्च। प्रजापंतिः प्रथम्जा ऋतस्याऽऽत्मनाऽऽत्मानमभिसम्बंभूव। सदंसस्पितमद्भंतं प्रियमिन्द्रंस्य काम्यम्। सिनं मेधामंयासिषम्। उद्दींप्यस्व जातवेदोऽपघ्नित्रर्र्ऋतिं ममं॥४॥

पृश्र्श्च मह्यमावंह जीवंनं च दिशों दिश। मा नों हिश्सीज्ञातवेदो गामश्वं पुरुषं जगंत्। अविंभ्रदग्न आगंहि श्रिया मा परिपातय।

## ॥गायत्रीमन्त्राः॥

पुरुषस्य विद्य सहस्राक्षस्यं महादेवस्यं धीमहि। तन्नों रुद्रः प्रचोदयाँत्। तत्पुरुषाय विद्यहें महादेवायं धीमहि। तन्नों रुद्रः प्रचोदयाँत्। तत्पुरुषाय विद्यहें वक्रतुण्डायं धीमहि। तन्नों दिन्तः प्रचोदयाँत्। तत्पुरुषाय विद्यहें वक्रतुण्डायं धीमहि। तन्नों दिन्तः प्रचोदयाँत्। तत्पुरुषाय विद्यहें चक्रतुण्डायं धीमहि॥५॥

तन्नों नन्दिः प्रचोदयाँत्। तत्पुरुंषाय विद्यहें महासेनायं धीमिह। तन्नेः षण्मुखः प्रचोदयाँत्। तत्पुरुंषाय विद्यहें सुवर्णपृक्षायं धीमिह। तन्नों गरुडः प्रचोदयाँत्। वेदात्मनायं विद्यहें हिरण्यग्भीयं धीमिह। तन्नों ब्रह्मं प्रचोदयाँत्। नारायणायं विद्यहें वासुदेवायं धीमिह। तन्नों विष्णुः प्रचोदयाँत्। वृज्जनुखायं विद्यहें तीक्ष्णदुङ्ष्ट्रायं धीमिह॥६॥

तन्नों नारसि॰हः प्रचोदयाँत्। भास्करायं विद्महें महद्युतिकरायं धीमहि। तन्नों आदित्यः प्रचोदयाँत्। वैश्वानरायं विद्महें लालीलायं धीमहि। तन्नों अग्निः प्रचोदयाँत्। कात्यायनायं विद्महें कन्यकुमारिं धीमहि। तन्नों दुर्गिः प्रचोदयाँत्।

# ॥ दूर्वासूक्तम्॥

सहस्रपरंमा देवी शतमूंला शताङ्करा। सर्वर् हरतुं मे पापं दूर्वा दुःस्वप्ननाशंनी। काण्डांत्काण्डात् प्ररोहंन्ती परुषः परुषः परि॥७॥

पुवानों दूर्वे प्रतंनु सहस्रंण श्तेनं च। या श्तेनं प्रत्नोषिं सहस्रंण विरोहंसि। तस्यांस्ते देवीष्टके विधेमं ह्विषां व्यम्। अश्वंक्रान्ते रंथक्रान्ते विष्णुक्रांन्ते वसुन्धंरा। शिरसां धारियष्यामि रक्षस्व मां पदे पदे।

# ॥ मृत्तिकासूक्तम्॥

भूमिर्धेनुर्धरणी लोकधारिणी। उद्धृतांऽसि वंराहेण कृष्णेन शंतबाहुना। मृत्तिके हनं मे पापं यन्मया दुंष्कृतं कृतम्। मृत्तिके ब्रह्मदत्ताऽसि काश्यपेनाभिमत्रिता। मृत्तिके देहिं मे पुष्टिं त्विय संवं प्रतिष्ठितम्॥८॥

मृत्तिकै प्रतिष्ठिते सुर्वं तुन्मे निर्णुद् मृत्तिके। तयां हुतेने पापेन गुच्छामि पंरमां गतिम्।

### ॥ रात्रुजयमन्त्राः ॥

यतं इन्द्र भयांमहे ततों नो अभयं कृषि। मघंवन्छ्गि तव् तन्नं ऊतये विद्विषो विमृधों जिहि। स्वस्तिदा विशस्पतिर्वृत्रहा विमृधों वृशी। वृषेन्द्रंः पुर एंतु नः स्वस्तिदा अभयङ्करः। स्वस्ति न इन्द्रों वृद्धश्रंवाः स्वस्ति नंः पूषा विश्ववेदाः। स्वस्ति नस्ताक्ष्यों अरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृह्स्पतिर्दधातु। आपान्तमन्युस्तृपलेप्रभर्मा धुनिः शिमीवाञ्छ्ररुमा स्रजीषी। सोमो विश्वान्यत्सावनानि नार्वागिन्द्रं प्रतिमानानिदेभुः॥९॥

ब्रह्मंजज्ञानं प्रंथमं पुरस्ताद्विसीमृतः सुरुचो वेन आंवः। सबुध्नियां उपमा अस्य विष्ठाः सृतश्च योनिमसंतश्च विवंः। स्योना पृंथिवि भवांऽनृक्षरा निवेशंनी। यच्छांनः शर्मं सृप्रथाः। गृन्यद्वारां दुराधर्षां नित्यपृष्टां करीषिणीम्। ईश्वरी सर्वभूतानां तामिहोपंह्वये श्रियम्। श्रीमें भूजतु। अलक्ष्मीमें नृश्यतु। विष्णुमुखा वे देवाश्छन्दोभिरिमाँ होकानंनप-ज्य्यम्भ्यंजयन्। मृहा इन्द्रो वज्रबाहुः षोड्शी शर्म यच्छतु॥१०॥

स्वस्ति नों मुघवां करोतु हन्तुं पाप्मानं योंऽस्मान् द्वेष्टिं। सोमान् स्वरंणं कृणुहि ब्रह्मणस्पते। कुक्षीवन्तं य औशिजम्। शरीरं यज्ञशम्लं कुसीदं तस्मिन्थ्सीदतु योंऽस्मान् द्वेष्टिं। चरंणं पुवित्रं वितंतं पुराणं येनं पूतस्तरंति दुष्कृतानिं। तेनं प्वित्रेण शुद्धेनं पूता अतिं पाप्मान्मरांतिं तरेम। स्जोषां इन्द्र सगंणो म्रुद्धिः सोमंं पिब वृत्रहञ्छूर विद्वान्। ज्रिह शत्रूर् रप मृधों नुदस्वाथाभंयं कृणुहि विश्वतों नः। सुमित्रा न आप ओषंधयः सन्तु दुर्मित्रास्तस्में भूयासुर्यौऽस्मान् द्वेष्टि यं चं व्यं द्विष्मः। आपो हि ष्ठा मंयो भुवस्ता नं ऊर्जे दंधातन॥११॥

महेरणांय चक्षंसे। यो वंः शिवतंमो रसस्तस्यं भाजयतेह नंः। उशतीरिंव मातरंः। तस्मा अरं गमाम वो यस्य क्षयांय जिन्वंथ। आपों जनयंथा च नः।

## ॥ अघमर्षणसूक्तम्॥

हिरंण्यशृङ्गं वर्रणं प्रपंद्ये तीर्थं में देहि याचितः। यन्मयां भुक्तम्साधूनां पापेभ्यश्च प्रतिग्रहः। यन्मे मनसा वाचा कर्मणा वा दुष्कृतं कृतम्। तन्न इन्द्रो वर्रुणो बृह्स्पितः सिवता चं पुनन्तु पुनः पुनः। नमोऽग्नयः उपसुमते नम् इन्द्रांय नमो वर्रुणाय नमो वारुण्ये नमोऽज्ञ्यः॥१२॥

यद्पां ऋूरं यदंमेध्यं यदंशान्तं तदपंगच्छतात्। अत्याशनादंतीपानाद्यच उग्रात् प्रंतिग्रहाँत्। तन्नो वर्रुणो राजा पाणिनां ह्यवमर्शतु। सोऽहमपापो विरजो निर्मुक्तो मुक्तिक्विषः। नाकस्य पृष्ठमारुह्य गच्छेद्वह्यंसलोकताम्। यश्चापसु वरुणः स पुनात्वघमर्षणः। इमं में गङ्गे यमुने सरस्वति शुतुंद्रि स्तोम र् सचता परुष्णिया। असिक्रिया मंरुद्वृधे वितस्त्याऽऽर्जीकीये शृणुह्या सुषोमया। ऋतं चं सत्यं चाभी द्धात्तप्सोऽध्यंजायत। ततो रात्रिरजायत् ततः समुद्रो अर्णवः॥१३॥

स्मुद्रादंर्ण्वादिधं संवथ्सरो अंजायत। अहोरात्राणि विद्धिक्षंस्य मिष्तो वृशी। सूर्याचन्द्रमसौ धाता यंथापूर्वमंकत्पयत्। दिवं च पृथिवीं चान्तरिक्षमथो सुवंः। यत्पृथिव्याः रज्ञंः स्वमान्तरिक्षे विरोदंसी। इमाः स्तदापो वंरुणः पुनात्वंघमर्षणः। पुनन्तु वसंवः पुनातु वर्रुणः पुनात्वंघमर्षणः। पुनन्तु वसंवः पुनातु वर्रुणः पुनात्वंघमर्षणः। एष भूतस्यं मध्ये भुवंनस्य गोप्ता। एष पुण्यकृतां लोकानेष मृत्योर्हिर्ण्मयम्। द्यावांपृथिव्योर्हिर्ण्मयः सङ्श्रितः सुवंः॥१४॥

स नः सुवः सर्शिशाधि। आर्द्रं ज्वलंति ज्योतिंर्हमंस्मि। ज्योतिर्ज्वलंति ब्रह्माहमंस्मि। योऽहमंस्मि ब्रह्माहमंस्मि। अहमंस्मि ब्रह्महमंस्मि। अहमेवाहं मां जुंहोमि स्वाहाँ। अकार्यकार्यंवकीणीं स्तेनो भ्रूंणहा गुंरुतल्पगः। वर्रुणोऽपामघमर्षणस्तस्मात्पापात् प्रमुंच्यते। र्जो भूमिंस्त्वमा रोदंयस्व प्रवंदन्ति धीराः। आक्रान्थ्समुद्रः प्रथमे विधमा जनयंन्य्रजा भुवंनस्य राजाः। वृषां प्वित्रे अधि सानो अव्ये बृहथ्सोमो वावृधे सुवान इन्दुः॥१५॥

# ॥दुर्गासूक्तम्॥

जातवेदसे सुनवाम सोमंमरातीयतो निजंहाति वेदः। स नंः पर्षदितं दुर्गाणि विश्वां नावेव सिन्धुं दुरिताऽत्यग्निः। तामुग्निवंणां तपंसा ज्वलन्तीं वैरोचनीं केर्मफलेषु जुष्टांम्। दुर्गां देवी र शरणमहं प्रपद्ये सुतर्रिस तरसे नर्मः। अग्ने त्वं पारया नव्यो अस्मान्थ्स्वस्तिभिरति दुर्गाणि विश्वां। पूर्श्व पृथ्वी बहुला नं उर्वी भवां तोकाय तनयाय शं योः। विश्वानि नो दुर्गहां जातवेदः सिन्धुं न नावा दुरितातिं पर्षि। अग्ने अत्रिवन्मनंसा गृणानौं ऽस्माकं बोध्यविता तनूनांम्। पृतनाजित र सहंमानमग्निमुग्र र हुंवेम परमाथ्सधस्थांत्। स नंः पर्षदति दुर्गाणि विश्वा क्षामदेवो अति दुरिताऽत्यग्निः। प्रत्नोषिं कमीड्यों अध्वरेषुं सनाच होता नव्यंश्च सिथ्सं। स्वाश्चौग्ने तनुवं पिप्रयंस्वास्मर्भ्यं च सौभंगमायंजस्व। गोभिर्जुष्टंमयुजो निषिक्तं तवैन्द्र विष्णोरनुसश्चरेम। नाकस्य पृष्ठमभि संवसानो वैष्णवीं लोक इह मादयन्ताम्॥१६॥

[२]

## ॥ व्याहृतिहोमन्त्राः॥

भूरत्रंमग्रयं पृथिव्ये स्वाहा भुवोऽत्रं वायवेऽन्तरिक्षाय स्वाहा सुव्रत्नंमादित्यायं दिवे स्वाहा भूर्भुवः सुव्रत्नं चन्द्रमंसे दिग्भ्यः स्वाहा नमो देवेभ्यः स्वधा पितृभ्यो भूर्भुवः

# सुव्रन्नमोम्॥१७॥

[३]

भूरग्नये पृथिव्ये स्वाहा भुवो वायवेऽन्तरिक्षाय स्वाहा सुवंरादित्यायं दिवे स्वाहा भूर्भुवः सुवंश्चन्द्रमंसे दिग्भ्यः स्वाहा नमो देवेभ्यः स्वधा पितृभ्यो भूर्भुवः सुव्रग्न ओम्॥१८॥

भूरग्नयं च पृथिव्यै चं मह्ते च स्वाहा भुवां वायवं चान्तरिक्षाय च मह्ते च स्वाहा सुवंरादित्यायं च दिवे चं मह्ते च स्वाहा भूर्भुवः सुवंश्चन्द्रमंसे च नक्षंत्रेभ्यश्च दिग्भ्यश्चं मह्ते च स्वाहा नमों देवेभ्यः स्वधा पितृभ्यो भूर्भुवः सुवुर्महरोम्॥१९॥

**-**[५]

## ॥ ज्ञानप्राप्त्यर्थहोममन्त्राः॥

पाहि नो अग्न एनंसे स्वाहा। पाहि नो विश्ववेदंसे स्वाहा। यज्ञं पाहि विभावंसो स्वाहा। सर्वं पाहि शतर्ऋतो स्वाहा॥२०॥

**-**[६]

पाहि नों अग्न एकंया। पाह्युंत द्वितीयंया। पाह्युर्जं तृतीयंया। पाहि गीर्भिश्चं तुसृभिवंसो स्वाहाँ॥२१॥

**-**[り]

## ॥वेदविस्मरणाय जपमन्त्राः॥

यश्छन्दंसामृष्भो विश्वरूपश्छन्दौभ्यश्छन्दा ईस्याविवेशं। सता १ शिक्यः पुरोवाचोपिन्षिदिन्द्रौ ज्येष्ठ इन्द्रियाय ऋषिभ्यो नमो देवेभ्यः स्वधा पितृभ्यो भूर्भुवः सुवृश्छन्द ओम्॥२२॥

**—**[८]

नमो ब्रह्मणे धारणं मे अस्त्वनिराकरणं धारयिता भूयासं कर्णयोः श्रुतं मा च्यौंद्वं ममामुष्य ओम्॥२३॥

**-**[3]

#### ॥ तपः प्रशंसा॥

ऋतं तपंः सृत्यं तपंः श्रुतं तपंः शान्तं तपो दम्स्तपः शम्स्तपो दानं तपो यज्ञं तपो भूर्भुवः सुवुर्ब्रह्मैतदुपौस्यैतत्तपंः॥२४॥

**-**[80]

## ॥ विहिताचरणप्रशंसा निषिद्धाचरणनिन्दा च॥

यथां वृक्षस्यं सम्पुष्पितस्य दूराद्गन्धो वाँत्येवं पुण्यंस्य कर्मणों दूराद्गन्धो वांति यथांऽसिधारां कर्तेऽवंहितामवृक्तामे यद्युवे युवे ह वां विह्नयिंष्यामि कर्तं पंतिष्यामीत्येवमृनृतांदात्मानं जुगुफ्सेंत्॥२५॥

**-**[88]

## ॥ दहरविद्या ॥

अणोरणीयान्महृतो महीयानात्मा गुहायां निहितोऽस्य जन्तोः। तमंक्रतुं पश्यित वीतशोको धातुः प्रसादाँन्महिमानं-मीशम्। सप्त प्राणाः प्रभवंन्ति तस्माँथ्सप्तार्चिषः समिधः सप्त जिह्वाः। सप्त इमे लोका येषु चरेन्ति प्राणा गुहाशंयां निहिताः सप्त सप्त। अतः समुद्रा गिरयंश्च सर्वेऽस्माथ्स्यन्दंन्ते सिन्धंवः सर्वंरूपाः। अतंश्च विश्वा ओषंधयो रसाँच येनैष भूतस्तिष्ठत्यन्तरात्मा। ब्रह्मा देवानां पद्वीः केवीनामृषिविप्राणां महिषो मृगाणांम्। श्येनो गृप्राणाः स्वधितिर्वनांनाः सोमः प्वित्रमत्येति रेभन्। अजामेकां लोहितशुक्रकृष्णां बह्वीं प्रजां जनयंन्तीः सर्रूपाम्। अजो ह्येको जुषमांणोऽनुशेते जहाँत्येनां भृक्तभौगामजौंऽन्यः॥२६॥

ह् सः श्रुंचिषद्वसुं रन्तिरक्षसद्धोतां वेदिषदितिथिर्दुरोणसत्।
नृषद्वरसदेत्सद्धोमसद्जा गोजा ऋत्जा अद्रिजा ऋतं
बृहत्। घृतं मिंमिक्षिरे घृतमस्य योनिधृते श्रितो घृतम्वस्य
धामं। अनुष्वधमावंह मादयंस्व स्वाहांकृतं वृषभ
विक्षे ह्व्यम्। समुद्रादूर्मिर्मधुंमा उदांरदुपा श्रुना
समंमृत्त्वमांनट्। घृतस्य नाम् गृह्यं यदस्तिं जिह्वा
देवानांममृतंस्य नाभिः। वयं नाम् प्रब्रंवामा घृतेनास्मिन्
यज्ञे धारयामा नमोभिः। उपं ब्रह्मा शृंणवच्छंस्यमानं चतुंः

**-**[१२]

शृङ्गोऽवमीद्गौर पृतत्। चृत्वारि शृङ्गा त्रयों अस्य पादा द्वे शीर्षे सप्त हस्तांसो अस्य। त्रिधां बृद्धो वृष्भो रोरवीति महो देवो मर्त्याप् आविवेश॥२७॥

त्रिधां हितं पुणिभिंगृह्यमानं गविं देवासों घृतमन्वंविन्दन्। इन्द्र एक सूर्य एकं जजान वेनादेक स्वधया निष्टंतक्षुः। यो देवानां प्रथमं पुरस्ताद्विश्वाधियों रुद्रो महर्षिः। हिर्ण्यगर्भं पंश्यत जायमानः स नो देवः शुभया स्मृत्या संयुनक्तु। यस्मात्परं नापर्मस्त किञ्चिद्यस्मान्नाणीयो न ज्यायो ऽस्ति कश्चित्। वृक्ष इंव स्तब्धो दिवि तिष्ठत्येकस्तेनेदं पूर्णं पुरुषेण सर्वम्। न कर्मणा न प्रजया धर्नेन त्यागेनैके अमृतत्वमानशुः। परेण नाकं निहितं गुहांयां विभाजंते यद्यतंयो विशन्ति। वेदान्तविज्ञानसुनिश्चितार्थाः सन्त्यांसयोगाद्यतंयः शुद्धसत्त्वाः। ते ब्रह्मलोके तु परान्तकाले परामृतात्परिमुच्यन्ति सर्वै। दहं विपापं प्रमेषमभूतं यत्पुण्डरीकं पुरमध्यस् इस्थम्। तत्रापि दहं गगनं विशोकस्तस्मिन् यदन्तस्तदुपांसितव्यम्। यो वेदादौ स्वंरः प्रोक्तो वेदान्तं च प्रतिष्ठितः। तस्यं प्रकृतिंलीनस्य यः परंः स महेश्वंरः॥२८॥

#### ॥ नारायणसूक्तम्॥

सहस्रशीर्षं देवं विश्वाक्षं विश्वशंम्भुवम्। विश्वं नारायणं देवमक्षरं परमं पदम्। विश्वतः परमात्रित्यं विश्वं नारायणः हिरम्। विश्वमेवदं पुरुषस्तद्विश्वमुपंजीवति। पतिं विश्वंस्याऽऽत्मेश्वंर्र शाश्वंतः शिवमंच्युतम्। नारायणं मंहाज्ञेयं विश्वात्मांनं परायणम्। नारायणपंरो ज्योतिरात्मा नारायणः परः। नारायण परं ब्रह्म तत्त्वं नारायणः परः। नारायण परः। नारायणः परः। यर्चं किश्चित्रंगथ्मवं दृश्यते श्रूयतेऽपि वा॥ अन्तंर्ब्वहिश्चं तथ्मवं व्याप्य नारायणः स्थितः॥२९॥

अनंन्तमव्यंयं क्विश् संमुद्रेऽन्तं विश्वशंम्भुवम्। पद्मकोश प्रतीकाश्र्रे हृदयं चाप्यधोमुंखम्। अधो निष्ठा वितस्त्यान्ते नाभ्यामुंपिर् तिष्ठंति। ज्वालमालाकुंलं भाती विश्वस्यांऽऽयत्नं मंहत्। सन्तंतः शिलाभिंस्तु-लम्बत्याकोश्मन्निभम्। तस्यान्ते सृषिरः सृक्ष्मं तस्मिन्थ्यवं प्रतिष्ठितम्। तस्य मध्ये महानंग्निर्विश्वाचिविश्वतोमुखः। सोऽग्रंभुग्विभंजन्तिष्ठन्नाहारमज्रः कविः। तिर्यगूर्ध्वमंधः शायी रश्मयंस्तस्य सन्तंता। सन्तापयंति स्वं देहमापादतल्-मस्तंकः। तस्य मध्ये विहिंशिखा अणीयौध्वा व्यवस्थितः। नीलतोयदंमध्यस्थाद्विद्युष्ठंखेव भास्वरा। नीवार्शूकंवत्तन्वी पीता भास्वत्यणूपमा। तस्याः शिखाया मध्ये प्रमातमा

व्यवस्थितः। स ब्रह्म स शिवः स हिरः सेन्द्रः सोऽक्षंरः पर्मः स्वराट्॥३०॥

नारायुणः स्थितो व्यवस्थितश्चत्वारिं च॥————[१३]

### ॥ आदित्यमण्डले परब्रह्मोपासनम्॥

आदित्यो वा एष एतन्मण्डलं तपंति तत्र ता ऋचस्तद्दचा मण्डल् स ऋचां लोकोऽथ य एष एतस्मिन्मण्डलेऽर्चिर्दीप्यते तानि सामानि स साम्नां मण्डल् स साम्नां लोकोऽथ य एष एतस्मिन्मण्डलेऽर्चिषि पुरुषस्तानि यजूर्रेषि स यजुषा मण्डल् स यजुषां लोकः सेषा त्रय्येवं विद्या तपिति य एषोंऽन्तरांदित्ये हिर्ण्मयः पुरुषः॥३१॥

**-**[88]

## ॥ आदित्यपुरुषस्य सर्वात्मकत्वप्रदर्शनम्॥

आदित्यो वै तेज ओजो बलं यश्श्वक्षुः श्रोत्रंमात्मा मनों मन्युर्मनुंर्मृत्युः सत्यो मित्रो वायुरांकाशः प्राणो लोंकपालः कः किं कं तथ्सत्यमन्नंममृतों जीवो विश्वः कत्मः स्वयम्भु ब्रह्मैतदमृंत एष पुरुष एष भूतानामधिपितिर्ब्रह्मणः सायुंज्यश् सलोकतांमाप्रोत्येतासांमेव देवतांनाश् सायुंज्यश् सार्षिताश् समानलोकतांमाप्रोति य एवं वेदैंत्युपनिषत्॥३२॥

-[१५]

### ॥ शिवोपासनमन्त्राः॥

निधंनपतये नमः। निधंनपतान्तिकाय नमः। ऊर्ध्वायं नमः। ऊर्ध्वलिङ्गायं नमः। हिरण्यलिङ्गायं नमः। हिरण्यलिङ्गायं नमः। दिव्यायं नमः। दिव्यायं नमः। दिव्याव् नमः। दिव्याव् नमः। दिव्याव् नमः। प्रविलङ्गायं नमः। शर्वायं नमः। शर्वावं नमः। शर्वलिङ्गायं नमः। शर्वलिङ्गायं नमः। शर्वलिङ्गायं नमः। शर्वलिङ्गायं नमः। ज्वलायं नमः। ज्वललिङ्गायं नमः। आत्मायं नमः। आत्मायं नमः। अत्मायं नमः। परमलिङ्गायं नमः। एतथ्सोमस्यं सूर्यस्यं सर्वलिङ्गः स्थाप्यति पाणिमः प्रवित्रम्॥३३॥

-[१६]

### ॥ पश्चिमवऋ-प्रतिपाद्क-मन्त्रः॥

सुद्योजातं प्रंपद्यामि सुद्योजाताय वै नमो नर्मः। भवे भवे नाति भवे भवस्व माम्। भवोद्भवाय नर्मः॥३४॥

**-**[१७]

### ॥ उत्तरवऋ-प्रतिपादक-मन्त्रः॥

वामदेवाय नमों ज्येष्ठाय नमेः श्रेष्ठाय नमों रुद्राय नमः कालाय नमः कलंविकरणाय नमो बलंविकरणाय नमो बलाय नमो बलंप्रमथनाय नमः सर्वभूतदमनाय नमो मनोन्मनाय नमः॥३५॥ ———[१८] ॥ दक्षिणवऋ-प्रतिपादक-मन्त्रः॥

अघोरैंभ्योऽथ घोरैंभ्यो घोरघोरंतरेभ्यः। सर्वेंभ्यः सर्वशर्वेंभ्यो नमंस्ते अस्तु रुद्ररूपेभ्यः॥३६॥

**-**[१९]

### ॥ प्राग्वऋ-प्रतिपादक-मन्त्रः॥

तत्पुरुंषाय विदाहें महादेवायं धीमहि। तन्नों रुद्रः प्रचोदयाँत्॥३७॥

-[२०]

### ॥ ऊर्ध्ववऋ-प्रतिपादक-मन्त्रः॥

ईशानः सर्वविद्यानामीश्वरः सर्वभूतानां ब्रह्माधिपतिर्ब्रह्मणो-ऽधिपतिर्ब्रह्मां शिवो में अस्तु सदाशिवोम्॥३८॥

-[२१]

#### ॥ नमस्कारमन्त्राः॥

नमो हिरण्यबाहवे हिरण्यवर्णाय हिरण्यरूपाय हिरण्यपतयेऽम्बिकापतय उमापतये पशुपतये नमो नमः॥३९॥

**-**[२२]

ऋतः सत्यं परं ब्रह्म पुरुषं कृष्णपिङ्गंलम्। ऊर्ध्वरेतं विरूपाक्षं विश्वरूपाय वै नमो नमः॥४०॥

-[२३]

सर्वो वै रुद्रस्तस्मैं रुद्राय नमों अस्तु। पुरुषो वै रुद्रः सन्महो नमो नमः। विश्वं भूतं भुवंनं चित्रं बंहुधा जातं जायमानं च यत्। सर्वो ह्येष रुद्रस्तस्मैं रुद्राय नमों अस्तु॥४१॥

[२४]

कद्रुद्राय प्रचेतसे मी्दुष्टंमाय तव्यंसे। वो चेम् शन्तंम १ हृदे। सर्वो ह्येष रुद्रस्तस्मै रुद्राय नमो अस्तु॥४२॥

**–**[२५]

## ॥ अग्निहोत्रहवण्याः उपयुक्तस्य वृक्षविशेषस्याभिधानम्॥

यस्य वैकंङ्कत्यग्निहोत्रहवंणी भवति प्रत्येवास्याहुंतय-स्तिष्ठन्त्यथो प्रतिष्ठित्यै॥४३॥

[२६]

कृणुष्व पाज् इति पश्चं॥४४॥

**-**[२७]

## ॥ भूदेवताकमन्त्रः॥

अदितिर्देवा गंन्ध्रवा मंनुष्याः पितरोऽसुंरास्तेषा रे सर्वभूतानां माता मेदिनीं मह्ता मही सांवित्री गांयत्री जगंत्युर्वी पृथ्वी बंहुला विश्वां भूता कंत्मा का या सा स्त्येत्यमृतेतिं वसिष्ठः॥४५॥

**-**[२८]

## ॥ सर्वदेवता आपः॥

आपो वा इद सर्वं विश्वां भूतान्यापेः प्राणा वा आपेः पृशव आपोऽन्नमापोऽमृतमापेः सम्राडापो विराडापेः स्वराडापृश्छन्दा इस्यापो ज्योती इष्यापो यजू इष्यापेः सत्यमापः सर्वा देवता आपो भूर्भवः सुवराप ओम्॥४६॥

#### ॥ सन्ध्यावन्दनमन्त्राः॥

आपंः पुनन्तु पृथिवीं पृथिवी पूता पुनातु माम्। पुनन्तु ब्रह्मण्स्पति ब्रह्मपूता पुनातु माम्। यदुच्छिष्ट्रमभौज्यं यद्वी दुश्चरितं ममं। सर्वं पुनन्तु मामापोऽस्तां चे प्रतिग्रह्ड् स्वाहाँ॥४७॥

[३०]

अग्निश्च मा मन्युश्च मन्युपतयश्च मन्युंकृतेभ्यः। पापेभ्यों रक्षन्ताम्। यदह्रा पापंमकारिषम्। मनसा वाचां हस्ताभ्याम्। पद्मामुदरेण शि्षञा। अह्स्तदंवलुम्पतु। यत्किं चं दुरितं मियं। इदमहं माममृंतयोनौ। सत्ये ज्योतिषि जुहोंिम स्वाहा॥४८॥

[३१]

सूर्यश्च मा मन्युश्च मन्युपतयश्च मन्युंकृते्भ्यः। पापेभ्यों

रक्षन्ताम्। यद्रात्रिया पापंमकारिषम्। मनसा वाचां हस्ताभ्याम्। पद्मामुदरंण शिष्ठ्ञा। रात्रिस्तदंवलुम्पतु। यत्किं चं दुरितं मियं। इदमहं माममृतयोनौ। सूर्ये ज्योतिषि जुहोंमि स्वाहा॥४९॥

•[३२]

### ॥प्रणवस्य ऋष्यादिविवरणम्॥

ओमित्येकाक्षेरं ब्रह्म। अग्निर्देवता ब्रह्मं इत्यार्षम्। गायत्रं छन्दं परमात्मं सरूपम्। सायुज्यं विनियोगम्॥५०॥

[33]

#### ॥ गायत्र्यावाहनमन्त्राः ॥

आयांतु वरंदा देवी अक्षरं ब्रह्मसम्मितम्। गायत्रीं छन्दंसां मातेदं ब्रह्म जुषस्वं मे। यदह्रांत्कुरुते पापं तदह्रांत्प्रतिमुच्यंते। यद्रात्रियांत्कुरुते पापं तद्रात्रियांत्प्रतिमुच्यंते। सर्वं वर्णे महादेवि सन्ध्याविद्ये स्रस्वंति॥५१॥

[३४]

ओजोंऽसि सहोंऽसि बलंमसि भ्राजोंऽसि देवानां धाम् नामांसि विश्वंमसि विश्वायुः सर्वमिस सर्वायुरिभभूरों गायत्रीमावांहयामि सावित्रीमावांहयामि सरस्वतीमावांह-यामि छन्दऋषीनावांहयामि श्रियमावांहयामि गायत्रिया गायत्रीच्छन्दो विश्वामित्र ऋषिः सविता देवताऽग्निर्मुखं ब्रह्मा शिरो विष्णुर्हृदयः रुद्रः शिखा पृथिवी योनिः प्राणापानव्यानोदानसमाना सप्राणा श्वेतवर्णा साङ्क्यायनसगोत्रा गायत्री चतुर्विःशत्यक्षरा त्रिपदां षद्भुक्षिः पश्चशीर्षोपनयने विनियोग ओं भूः। ओं भुवः। ओः सुवः। ओं महः। ओं जनः। ओं तपः। ओः सृत्यम्। ओं तथ्संवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्यं धीमहि। धियो यो नंः प्रचोदयात्। ओमापो ज्योती्रसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवः सुवरोम्॥५२॥

**-**[३५]

#### ॥गायत्री उपस्थानमन्त्राः॥

उत्तमें शिखंरे जाते भूम्यां पंवतमूर्धनि। ब्राह्मणैभ्योऽभ्यंनु-ज्ञाता गुच्छ देवि यथासुंखम्। स्तुतो मया वरदा वेदमाता प्रचोदयन्ती पवने द्विजाता। आयुः पृथिव्यां द्रविणं ब्रह्मवर्चसं मह्यं दत्वा प्रजातुं ब्रह्मलोकम्॥५३॥

**-**[३६]

## ॥ आदित्यदेवतामन्त्रः॥

घृणिः सूर्यं आदित्यो न प्रभां वात्यक्षंरम्। मधुं क्षरन्ति तद्रंसम्। सत्यं वै तद्रसमापो ज्योतीरसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवः सुवरोम्॥५४॥

**-**[३७]

# ॥ त्रिसुपर्णमन्त्राः ॥

ब्रह्मंमेतु माम्। मधुंमेतु माम्। ब्रह्मंमेव मधुंमेतु माम्। यास्ते सोम प्रजावृथ्सोभि सो अहम्। दुःस्वंप्रहन्दुंरुष्यह। यास्ते सोम प्राणाः स्तां जुंहोमि। त्रिसुंपर्णमयांचितं ब्राह्मणायं दद्यात्। ब्रह्महृत्यां वा एते घ्रंन्ति। ये ब्राह्मणास्त्रिसुंपर्णं पठंन्ति। ते सोमं प्राप्रवन्ति। आस्हुस्रात्पङ्किः पुनंन्ति। ओम्॥५५॥

[३८]

ब्रह्मं मेधयाँ। मधुं मेधयाँ। ब्रह्मंमेव मधुं मेधयाँ। अद्या नों देव सवितः प्रजावंथ्सावीः सौभंगम्। परां दुःष्वप्नियः सुव। विश्वांनि देव सवितर्दुरितानि परां सुव। यद्भद्रं तन्म आ सुंव। मधु वातां ऋतायते मधुं क्षरन्ति सिन्धंवः। माध्वींर्नः सन्त्वोषंधीः। मधु नक्तंमुतोषसि मधुंमृत्पार्थिवः रजः। मधु द्यौरंस्तु नः पिता। मधुंमात्रो वनस्पित्मधुंमाः अस्तु सूर्यः। माध्वीर्गावो भवन्तु नः। य इमं त्रिसुंपर्णमयांचितं ब्राह्मणायं दद्यात्। भूणहृत्यां वा एते घ्रंन्ति। ये ब्राह्मणास्त्रिसुंपर्णं पठन्ति। ते सोमं प्राप्नुवन्ति। आस्हस्रात्पङ्किः पुनंन्ति। ओम्॥५६॥

[३९]

ब्रह्मं मेधवाँ। मधुं मेधवाँ। ब्रह्मंमेव मधुं मेधवाँ। ब्रह्मा देवानां पद्वीः केवीनामृषिर्विप्राणां महिषो मृगाणांम्। श्येनो गृध्राणाः स्वधितिर्वनानाः सोमः प्वित्रमत्येति रेभन्। ह्॰्सः श्रुंचिषद्वस्रंरन्तिरक्षसद्धोतां वेदिषदितिथिर्दुरोण्सत्।
नृषद्वंर्सहंत्सद्धोम्सद्बा गांजा ऋत्जा अद्रिजा ऋतं
बृहत्। ऋचे त्वां रुचे त्वा सिमथ्स्रंवन्ति स्रितो न
धेनाः। अन्तर्हृदा मनंसा पूयमानाः। घृतस्य धारां
अभिचांकशीमि। हिर्ण्ययो वेत्सो मध्यं आसाम्।
तिस्मन्ध्सुपणी मंधुकृत्कुंलायी भजंन्नास्ते मधुंदेवतांभ्यः।
तस्यांसते हर्रयः स्प्ततीरे स्वधां दुहांना अमृतंस्य धारांम्।
य इदं त्रिसुंपर्णमयांचितं ब्राह्मणायं दद्यात्। वीर्हृत्यां वा
पृते घ्रंन्ति। ये ब्राह्मणास्त्रिसुंपर्णं पठंन्ति। ते सोमं प्राप्नंवन्ति।
आस्तस्त्रात्पङ्किः पुनन्ति। ओम्॥५७॥

\_\_\_[४०]

## ॥ मेधासूक्तम्॥

मेधा देवी जुषमांणा न आगाँ द्विश्वाची भूद्रा सुमन्स्यमाना। त्वया जुष्टां जुषमांणा दुरुक्तां न्बृहद्वंदेम विदथें सुवीराः॥ त्वया जुष्टं ऋषिर्भवति देवि त्वया ब्रह्मां ऽऽगृतश्रीरुत त्वया। त्वया जुष्टंश्चित्रं विन्दते वसु सा नो जुषस्व द्रविणो न मेधे॥५८॥

[88]

मेथां म् इन्द्रों ददातु मेथां देवी सरस्वती। मेथां में अश्विनांवुभावार्धत्तां पुष्कंरस्रजा। अफ्सरासुं च या मेथा गंन्धर्वेषुं च यन्मनंः। दैवीं मेधा सरंस्वती सा मां मेधा सुरभिंजी्षता्र् स्वाहां॥५९॥

[४૨]

आ माँ मेधा सुरभिर्विश्वरूपा हिरंण्यवर्णा जगंती जगम्या। ऊर्जस्वती पर्यसा पिन्वंमाना सा माँ मेधा सुप्रतींका जुषन्ताम्॥६०॥

[४३]

मियं मेथां मियं प्रजां मय्यग्निस्तेजों दधातु मियं मेधां मियं प्रजां मयीन्द्रं इन्द्रियं दंधातु मियं मेधां मियं प्रजां मियं सूर्यो भ्राजों दधातु॥६१॥

[88]

## ॥ मृत्युनिवारणमन्त्राः॥

अपैतु मृत्युर्मृतंं न् आगंन्वैवस्वतो नो अभंयं कृणोतु। पूर्णं वनस्पतेरिवाभिनः शीयता र्याः स चं तान्नः शचीपतिः॥६२॥

४५

परं मृत्यो अनु परेहि पन्थां यस्ते स्व इतरो देवयानाँत्। चक्षुष्मते शृण्वते तें ब्रवीमि मा नः प्रजार रीरिषो मोत वीरान्॥६३॥

-[४६]

वार्तं प्राणं मनसाऽन्वा रंभामहे प्रजापंतिं यो भुवंनस्य गोपाः। स नों मृत्योस्रायतां पात्वश्हंसो ज्योग्जीवा ज्रामंशीमहि॥६४॥

[とる]·

अमुत्र भूयादध् यद्यमस्य बृहंस्पते अभिशंस्तेरम्ंश्चः। प्रत्यौहतामिश्वनां मृत्युमंस्माद्देवानांमग्ने भिषजा शचींभिः॥६५॥

**-**[४८]

हरि १ हरेन्तमनुंयन्ति देवा विश्वस्येशांनं वृष्भं मंतीनाम्। ब्रह्म सरूपमनुंमेदमागादयेनं मा विवंधीर्विक्रमस्व॥६६॥

[88]

शल्कैर्ग्निमिन्धान उभौ लोकौ संनेम्हम्। उभयौर्लोकयोर्-ऋध्वाऽति मृत्युं तराम्यहम्॥६७॥

·[ ५०]

मा छिंदो मृत्यो मा वंधीर्मा मे बलं विवृंहो मा प्रमोंषीः। प्रजां मा में रीरिष् आयुंरुग्र नुचक्षंसं त्वा ह्विषां विधेम॥६८॥

-[५१]

मा नों महान्तंमुत मा नों अर्भकं मा न उक्षंन्तमुत मा नं उक्षितम्। मा नोंऽवधीः पितरं मोत मातरं प्रिया मा नंस्तनुवों रुद्र रीरिषः॥६९॥

५२

मा नंस्तोके तनंये मा न आयंषि मा नो गोषु मा नो अश्वेष रीरिषः। वीरान्मा नो रुद्र भामितोऽवंधीर्ह्विष्मंन्तो नर्मसा विधेम ते॥७०॥

-[५३]

### ॥ प्रजापतिप्रार्थनामन्त्रः॥

प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वां जातानि परिता बंभूव। यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो अस्तु वयङ् स्याम् पर्तयो रयीणाम्॥७१॥

**-**[48]

## ॥ इन्द्रप्रार्थनामन्त्रः॥

स्वस्तिदा विशस्पतिंवृत्रहा विमृधों वशी। वृषेन्द्रंः पुर एंतु नः स्वस्तिदा अभयङ्करः॥७२॥

**-**[५५]

#### ॥ मृत्युञ्जयमन्त्राः ॥

त्र्यम्बकं यजामहे सुगुन्धिं पुष्टिवर्धनम्। उर्वारुकिमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय माऽमृतात्॥७३॥

-[५६]

ये ते सहस्रम्युतं पाशा मृत्यो मर्त्याय हन्तंवे। तान् यज्ञस्यं मायया सर्वानवं यजामहे॥७४॥

**-**[५७]

मृत्यवे स्वाहां मृत्यवे स्वाहां॥७५॥

**-**[५८]

#### ॥पापनिवारक-मन्त्राः॥

देवकृंतस्यैनंसोऽवयजनंमिस् स्वाहाँ। मृनुष्यंकृत्स्यैनंसो-ऽवयजनंमिस् स्वाहाँ। पितृकृंत्स्यैनंसोऽवयजनंमिस् स्वाहाँ। आत्मकृंत्स्यैनंसोऽवयजनंमिस् स्वाहाँ। अस्मत्कृंत्स्यैनंसो-अन्यकृंत्स्यैनंसोऽवयजनंमिस् स्वाहाँ। अस्मत्कृंत्स्यैनंसो-ऽवयजनमिस् स्वाहाँ। यिद्वा च नक्तं चैनंश्चकृम तस्यांवयजनमिस् स्वाहाँ। यथ्स्वपन्तंश्च जाग्नंतश्चेनंश्चकृम तस्यांवयजनमिस् स्वाहाँ। यथ्सुषुप्तंश्च जाग्नंतश्चेनंश्चकृम तस्यांवयजनमिस् स्वाहाँ। यिद्वद्वाः स्थाविद्वाः स्थिनंश्चकृम तस्यांवयजनमिस् स्वाहाँ। यिद्वद्वाः पनसोऽवयजनमिस् स्वाहा॥७६॥

-[५९]

# ॥ वसुप्रार्थनामन्त्रः ॥

यद्वो देवाश्चकृम जिह्नयां गुरुमनंसो वा प्रयुंती देव हेर्डनम्। अरांवा यो नो अभि दुंच्छुनायते तस्मिन्तदेनो वसवो निधेतन् स्वाहाँ॥७७॥

-[६०]

## ॥कामोऽकार्षीत्-मन्युरकार्षीत् मन्त्रः॥

कामोऽकार्षींत्रमो नमः। कामोऽकार्षीत्कामः करोति नाहं करोमि कामः कर्ता नाहं कर्ता कामः कार्यिता नाहं कार्यिता एष ते काम कामांय स्वाहा॥७८॥

**-**[ξξ]

मन्युरकार्षीं न्नमो नमः। मन्युरकार्षीन्मन्युः करोति नाहं करोमि मन्युः कर्ता नाहं कर्ता मन्युः कार्यिता नाहं कारियता एष ते मन्यो मन्यंवे स्वाहा॥७९॥

-[६२]

## ॥विराजहोममन्त्राः॥

तिलाञ्जहोमि सरसा सिपष्टान् गन्धार मम चित्ते रमंन्तु स्वाहा। गावो हिरण्यं धनमन्नपान सर्वेषा श्रिये स्वाहा। श्रियं च लक्ष्मीं च पृष्टिं च कीर्तिं चानृण्यताम्। ब्रह्मण्यं बंहुपुत्रताम्। श्रद्धामेधे प्रजाः सन्ददांतु स्वाहा॥८०॥

[٤3]

तिलाः कृष्णास्तिलाः श्वेतास्तिलाः सौम्या विशानुगाः। तिलाः पुनन्तुं मे पापं यत्किश्चिद्दुरितं मीये स्वाहा। चोर्स्यान्नं नेवश्राद्धं ब्रह्महा गुरुतल्पगः। गोस्तेयः सुरापानं भ्रूणहत्या तिला शान्ति । शमयंन्तु स्वाहा। श्रीश्च लक्ष्मीश्च पृष्टीश्च कीर्तिं चानृण्यताम्। ब्रह्मण्यं बंहुपुत्रताम्। श्रद्धामेधे प्रज्ञा तु जातवेदः सन्दर्दातु स्वाहा॥८१॥

६४]

प्राणापानव्यानोदानसमाना में शुद्धान्तां ज्योतिंर्हं विरज्ञां विपापमा भूयास् स्वाहाँ। वाङ्गनश्चक्षुःश्रोत्रजिह्वाघ्राणरेतो- बुद्धाकूतिःसङ्कल्पा में शुद्धान्तां ज्योतिंर्हं विरज्ञां विपापमा भूयास् स्वाहाँ। त्वक्रममा स्मरुधिरमेदोमञ्जास्रायवो- उस्थीनि में शुद्धान्तां ज्योतिंर्हं विरज्ञां विपापमा भूयास् स्वाहाँ। शिरःपाणिपादपार्श्वपृष्ठोरूदरजङ्गशिश्ञोपस्थपायवो में शुद्धान्तां ज्योतिंर्हं विरज्ञां विपापमा भूयास् स्वाहाँ। उत्तिष्ठ पुरुष हिरत पिङ्गल लोहिताक्षि देहि देहि ददापयिता में शुद्धान्तां ज्योतिंर्हं विरज्ञां विपापमा भूयास् स्वाहाँ। भूयास् स्वाहाँ॥८२॥

[६५]

पृथिव्यापस्तेजोवायुराकाशा में शुद्धान्तां ज्योतिंर्हं विरजां विपाप्मा भूयास् स्वाहाँ। शब्दस्पर्शरूपरसगन्धा में शुद्धान्तां ज्योतिंर्हं विरजां विपाप्मा भूयास् स्वाहाँ। मनोवाक्कायकर्माणि में शुद्धान्तां ज्योतिंर्हं विरजां विपाप्मा भूयास् स्वाहाँ। अव्यक्तभावैरंहङ्कारैज्योतिंर्हं विरजां विपाप्मा भूयास् स्वाहाँ। अव्यक्तभावैरंहङ्कारैज्योतिंर्हं विरजां विपाप्मा भूयास् स्वाहाँ। आत्मा में शुद्धान्तां ज्योतिंर्हं

विरजां विपाप्मा भूयास् स्वाहाँ। अन्तरात्मा में शुद्धान्तां ज्योतिरहं विरजां विपाप्मा भूयास् स्वाहाँ। परमात्मा में शुद्धान्तां ज्योतिरहं विरजां विपाप्मा भूयास् स्वाहाँ। क्षुतिपपासाय स्वाहाँ। विविद्ये स्वाहाँ। क्षुतिपपासाय स्वाहाँ। विविद्ये स्वाहाँ। ऋग्विधानाय स्वाहाँ। कृषोत्काय स्वाहाँ। क्षुतिपपासामेलं ज्येष्ठामुलक्ष्मीर्नाशयाम्यहम्। अभूतिमसंमृद्धिं च सर्वान्निर्णुद मे पाप्मान स्वाहा। अन्नमय-प्राणमय-मनोमय-विज्ञानमय-मानन्दमय-मात्मा में शुद्धान्तां ज्योतिरहं विरजां विपाप्मा भूयास् स्वाहा॥८३॥

-[६६]

### ॥ वैश्वदेवमन्त्राः ॥

अग्नये स्वाहाँ। विश्वेंभ्यो देवेभ्यः स्वाहाँ। ध्रुवायं भूमाय स्वाहाँ। ध्रुवक्षितंये स्वाहाँ। अच्युतक्षितंये स्वाहाँ। अग्नयें स्विष्टकृते स्वाहाँ॥ धर्माय स्वाहाँ। अधर्माय स्वाहाँ। अज्ञ्रः स्वाहाँ। ओषधिवनस्पतिभ्यः स्वाहाँ॥८४॥

रक्षोदेवजनेभ्यः स्वाहाँ। गृह्याँभ्यः स्वाहाँ। अवसानेँभ्यः स्वाहाँ। अवसानंपितिभ्यः स्वाहाँ। सर्वभूतेभ्यः स्वाहाँ। कामाय स्वाहाँ। अन्तिरक्षाय स्वाहाँ। यदेजीत जगिति यच चेष्टीत नाम्नो भागोऽयं नाम्ने स्वाहाँ। पृथिव्यै स्वाहाँ। अन्तिरक्षाय स्वाहाँ॥८५॥

दिवे स्वाहाँ। सूर्याय स्वाहाँ। चन्द्रमंसे स्वाहाँ। नक्षंत्रेभ्यः स्वाहाँ। इन्द्रांय स्वाहाँ। बृह्स्पतंये स्वाहाँ। प्रजापंतये स्वाहाँ। ब्रह्मणे स्वाहाँ। स्वधा पितृभ्यः स्वाहाँ। नमो रुद्रायं पशुपतंये स्वाहाँ॥८६॥

देवेभ्यः स्वाहाँ। पितृभ्यः स्वधाऽस्तुं। भूतेभ्यो नर्मः। मनुष्येभ्यो हन्ताँ। प्रजापंतये स्वाहाँ। प्रमेष्ठिने स्वाहाँ। यथा कूपः शतधारः सहस्रंधारो अक्षितः। एवा मे अस्तु धान्यश् सहस्रंधारमक्षितम्। धर्नधान्ये स्वाहाँ। ये भूताः प्रचरन्ति दिवानक्तं बिलिमिच्छन्तों वितुदंस्य प्रेष्याः। तेभ्यो बिलि पृष्टिकामो हरामि मयि पृष्टिं पृष्टिंपतिर्दधातु स्वाहाँ॥८७॥

[e/3]**-**

औं तद्घ्रह्म। ओं तद्घ्रायुः। ओं तद्गत्मा। ओं तथ्स्त्यम्। ओं तथ्सर्वम्। ओं तत्पुरोर्नमः॥ अन्तश्चरति भूतेषु गुहायां विश्वमूर्तिषु। त्वं यज्ञस्त्वं वषद्कारस्त्वमिन्द्रस्त्व रुद्धस्त्वं विष्णुस्त्वं ब्रह्म त्वं प्रजापतिः। त्वं तदाप् आपो ज्योती रसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवस्सुवरोम्॥८८॥

-[६८]

## ॥ प्राणाहुतिमन्त्राः॥

श्रुद्धायां प्राणे निविष्टोऽमृतं जुहोमि। श्रुद्धायांमपाने निविष्टोऽमृतं जुहोमि। श्रुद्धायां व्याने निविष्टोऽमृतं जुहोमि। श्रद्धायांमुद्दाने निर्विष्टोऽमृतं जुहोमि। श्रद्धायाः समाने निर्विष्टोऽमृतं जुहोमि। ब्रह्मणि म आत्माऽमृत्तत्वायं॥ अमृतोपस्तरंणमिस॥ श्रद्धायां प्राणे निर्विष्टोऽमृतं जुहोमि। शिवो मां विशाप्रंदाहाय। प्राणाय स्वाहां॥ श्रद्धायांमपाने निर्विष्टोऽमृतं जुहोमि। शिवो मां विशाप्रंदाहाय। अपानाय स्वाहां॥ श्रद्धायां व्याने निर्विष्टोऽमृतं जुहोमि। शिवो मां विशाप्रंदाहाय। श्रद्धायांमुद्दाने निर्विष्टोऽमृतं जुहोमि। शिवो मां विशाप्रंदाहाय। उदानाय स्वाहां॥ श्रद्धायांमुद्दाने निर्विष्टोऽमृतं जुहोमि। शिवो मां विशाप्रंदाहाय। उदानाय स्वाहां॥ श्रद्धायाः समाने निर्विष्टोऽमृतं जुहोमि। शिवो मां विशाप्रंदाहाय। समानाय स्वाहां॥ ब्रह्मणि म आत्माऽमृत्तत्वायं। अमृतापिधानमंसि॥८९॥

<u>—</u>[६९]

## ॥ भुक्तान्नाभिमन्त्रणमन्त्राः॥

श्रद्धायां प्राणे निविषयामृत हुतम्। प्राणमन्नेनाप्यायस्व। श्रद्धायां मपाने निविषयामृत हुतम्। अपानमन्नेनाप्यायस्व। श्रद्धायां व्याने निविषयामृत हुतम्। व्यानमन्नेनाप्यायस्व। श्रद्धायां मुदाने निविषयामृत हुतम। उदानमन्नेनाप्यायस्व। श्रद्धाया समाने निविषयामृत हुतम्। समानमन्नेनाप्या-यस्व॥९०॥

## ॥भोजनान्ते आत्मानुसन्धानमन्त्राः॥

अङ्गुष्ठमात्रः पुरुषोऽङ्गुष्ठं चे समाश्रितः। ईशः सर्वस्य जगतः प्रभुः प्रीणातिं विश्वभुक्॥॥९१॥

-[७१]

### ॥ अवयवस्वस्थता-प्रार्थनामन्त्रः॥

वाङ्कं आसन्। नृसोः प्राणः। अक्ष्योश्वक्षुंः। कर्णयोः श्रोत्रम्ं। बाहुवोर्बलम्ं। ऊरुवोरोजः। अरिष्टा विश्वान्यङ्गानि तृनूः। तुनुवां मे सुह नर्मस्ते अस्तु मा मा हि॰सीः॥९२॥

-[७२]

## ॥ इन्द्रसप्तर्षि-संवादमन्त्रः॥

वयः सुपूर्णा उपं सेदुरिन्द्रं प्रियमेधा ऋषयो नाधमानाः। अपं ध्वान्तमूर्णुहि पूर्धि चक्षुंर्मुमुग्ध्यंस्मान्निधयेऽव बुद्धान्।

[\$e]

### ॥ हृदयालम्भनमन्त्रः॥

प्राणानां ग्रन्थिरसि रुद्रो मां विशान्तकः। तेनान्नेनांप्या-यस्व॥९३॥

**-**[り8]

### ॥ देवताप्राणनिरूपणमन्त्रः॥

नमो रुद्राय विष्णवे मृत्युंर्मे पाहि॥९४॥

•[ ७५]

## ॥ अग्निस्तुतिमन्त्रः ॥

त्वमंग्रे द्युभिस्त्वमांशुशुक्षणिस्त्वमुद्धस्त्वमश्मंनुस्परि। त्वं वनेभ्यस्त्वमोषंधीभ्यस्त्वं नृणां नृपते जायसे शुचिः॥९५॥

[タ&]

## ॥ अभीष्टयाचनामन्त्राः॥

शिवने मे सन्तिष्ठस्व स्योनेनं मे सन्तिष्ठस्व सुभूतेनं मे सन्तिष्ठस्व ब्रह्मवर्चसेनं मे सन्तिष्ठस्व युज्ञस्यर्धिमनु सन्तिष्ठस्वोपं ते यज्ञ नम् उपं ते नम् उपं ते नमः॥९६॥

[00]

### ॥ परतत्त्व-निरूपणम्॥

सृत्यं परं परं सृत्यः सृत्येन न सृंवृगील्लोकाच्यंवन्ते कृदाचन सृताः हि सृत्यं तस्मांथ्यत्ये रंमन्ते । तप् इति तपो नानशंनात्परं यिद्धे परं तपस्तद्दर्धर्षं तद्दराधर्षं तस्मात्तपंसि रमन्ते । दम इति नियंतं ब्रह्मचारिणस्तस्माद्दमें रमन्ते । शम इत्यरंण्ये मुनयस्तस्माच्छमें रमन्ते । दानमिति सर्वाणि भूतानि प्रशः सन्ति दानान्नाति दुष्करं तस्माद्दाने रंमन्ते । धर्म इति धर्मेण सर्वमिदं परिगृहीतं धर्मान्नाति दुष्करं तस्माद्द्येष्ठाः प्रजांयन्ते तस्माद्द्विषठाः प्रजांयन्ते तस्माद्द्विषठाः प्रजांयन्ते तस्माद्द्विषठाः प्रजांने रमन्तेऽग्रय । इत्याह तस्माद्व्यय आधांतव्या अग्निहोत्रमित्यांह तस्मादिग्नहोत्रे

रंमन्ते ॰ यज्ञ इति यज्ञो हि देवास्तस्माँ द्युज्ञे रंमन्ते ॰ मानसमिति विद्वा श्स्मस्तस्माँ द्विद्वा श्सं एव मानसे रंमन्ते ॰ न्यास इति ब्रह्मा ब्रह्मा हि परः परो हि ब्रह्मा तानि वा एतान्यवंराणि परा शसि न्यास एवात्यंरेचयुद्य एवं वेदैंत्युपनिषत्॥९७॥

**-**[りと]

### ॥ ज्ञानसाधन-निरूपणम्॥

प्राजापत्यो हार्रुणिः सुपूर्णेयः प्रजापंतिं पितरमुपंससार किं भंगवन्तः पर्मं वंदन्तीति तस्मै प्रोवाच ॰ सत्येन वायुरावांति सत्येनांऽऽदित्यो रोंचते दिवि सत्यं वाचः प्रीतिष्ठा सत्ये सर्वं प्रतिष्ठितं तस्मां थ्सत्यं पेरमं वदन्ति 。 तपंसा देवा देवतामग्रं आयन्तपसर्षयः सुवरन्वंविन्दं तपंसा सपत्नान् प्रणुंदामारातीस्तपंसि सर्वं प्रतिष्ठितं तस्मात्तपंः परमं वर्दन्ति 。 दमेन दान्ताः किल्बिषंमवधून्वन्ति दमेन ब्रह्मचारिणः सुवंरगच्छन्दमो भूतानां दुराधर्षं दमें सर्वं प्रतिष्ठितं तस्माद्दमेः परमं वदंन्ति ॰ शमेन शान्ताः शिवमाचरन्ति शमेन नाकं मुनयोऽन्वविन्दुञ्छमो भूतानां दुराधर्षञ्छमे सर्वं प्रतिष्ठितं तस्माच्छमेः परमं वदन्ति ॰ दानं युज्ञानां वर्रूथं दक्षिणा लोके दातार ई सर्वभूतान्युंपजीवन्तिं दानेनारातीरपांनुदन्त दानेनं द्विषन्तो मित्रा भेवन्ति दाने सर्वं प्रतिष्ठितं तस्माँद्दानं पेरमं

वदंन्ति ॰ धुर्मो विश्वंस्य जगंतः प्रतिष्ठा लोके धर्मिष्ठं प्रजा उपसर्पन्ति धर्मेणं पापमंपनुदिति धर्मे सर्वं प्रतिष्ठितं तस्मौद्धर्मं पर्मं वदन्ति ॰ प्रजनेनं वै प्रतिष्ठा लोके साधु प्रजायाँस्तन्तुं तन्वानः पितृणामनृणो भवति तदेव तस्यानृणं तस्मौत् प्रजनेनं परमं वदेन्त्यग्रयो वै त्रयी विद्या देवयानः पन्थां गार्हपत्य ऋक्पृंथिवी रथन्तरमंन्वाहार्यपर्चनं यजुरन्तरिक्षं वामदेव्यमाहवनीयः सामं सुवर्गो लोको बृहत्तरमादग्रीन्पर्मं वदन्त्यग्निहोत्र सायं प्रातर्गृहाणां निष्कृतिः स्विष्टः सुहुतं यज्ञकतूनां प्रायणः सुवृर्गस्य लोकस्य ज्योतिस्तस्मादिग्निहोत्रं परमं वदन्ति । यज्ञ इति यज्ञेन हि देवा दिवंं गता यज्ञेनासुंरानपांनुदन्त यज्ञेनं द्विषन्तो मित्रा भंवन्ति यज्ञे सर्वं प्रतिष्ठितं तस्माँ द्यज्ञं पंरमं वदंन्ति ॰ मानसं वै प्रांजापत्यं पवित्रं मानसेन मनेसा साधु पंश्यति मानसा ऋषंयः प्रजा अंसृजन्त मानुसे सुर्वं प्रतिष्ठितं तस्मौन्मानुसं पेरुमं वदन्ति ॰ न्यास इत्याहंर्मनीषिणौ ब्रह्माणं ब्रह्मा विश्वः कतमः स्वंयम्भुः प्रजापंतिः संवथ्सर इति संवथ्सरोऽसावादित्यो य एष आंदित्ये पुरुषः स पंरमेष्ठी ब्रह्मात्मा ॰ याभिंरादित्यस्तपंति रश्मिभिस्ताभिः पर्जन्यों वर्षित पूर्जन्येनौषधिवनस्पृतयुः प्रजायन्त ओषधिवनस्पतिभिरन्नं भवत्यन्नेन प्राणाः प्राणैर्बलं बलेन तपस्तपंसा श्रद्धा श्रद्धयां मेधा मेधयां मनीषा

मंनीषया मनो मनंसा शान्तिः शान्त्यां चित्तं चित्तेन स्मृति इ स्मृत्या स्मार् स्मारेण विज्ञानं विज्ञानंनात्मानं वेदयति तस्मोदन्नं ददन्थ्सर्वाण्येतानि ददात्यन्नौत् प्राणा भेवन्ति ० भूतानां प्राणैर्मनो मनसश्च विज्ञानं विज्ञानांदानन्दो ब्रह्मयोनिः स वा एष पुरुषः पश्चधा पश्चात्मा येन सर्विमिदं प्रोतं पृथिवी चान्तरिक्षं च द्यौश्च दिशंश्चावान्तरिद्शाश्च स वै सर्विमिदं जगथ्म च भूत र स भव्यं जिज्ञासकृप्त ऋतजा रियंष्ठा अद्धा सत्यो महंस्वान्तपसो वरिष्ठाद्भात्वां तमेवं मनंसा हृदा च भूयों न मृत्युमुपंयाहि विद्वान्तस्मौन्यासमेषां तपंसामितिरिक्तमाहुंर्वसुरण्वों विभूरंसि प्राणे त्वमिसं सन्धाता 。 ब्रह्मन् त्वमिसं विश्वधृत्तें जोदास्त्वमंस्यग्निरंसि वर्चोदास्त्वमंसि सूर्यस्य द्युम्नोदास्त्वमंसि चन्द्रमंस उपयामगृहीतोऽसि ब्रह्मणें त्वा ॰ महस ओमित्यात्मानं यु औतेतद्वे महोपनिषंदं देवानां गृह्यं य एवं वेदं ब्रह्मणों महिमानंमाप्नोति तस्माँद्वह्मणों महिमानंमित्युपनिषत्॥ ९८॥

[98]

### ॥ ज्ञानयज्ञः ॥

तस्यैवं विदुषों यज्ञस्याऽऽत्मा यजंमानः श्रद्धा पत्नी शरीरमिध्ममुरो वेदिलीमानि बर्हिर्वेदः शिखा हृदयं यूपः काम आज्यं मृन्यः पृशुस्तपोऽग्निर्दर्मः

शमयिता दक्षिणा वाग्घोतां प्राण उद्गाता चक्षुंरध्वर्युर्मनो ब्रह्मा ॰ श्रोत्रंमग्नीद्यावद्धियंते सा दीक्षा यदश्ञांति तद्धविर्यत्पिबंति तदंस्य सोमपानं यद्रमंते तदुंपसदो यथ्सश्चरंत्युपविशंत्युत्तिष्ठंते च स प्रवृग्यों यन्मुखं तदाहवनीयो या व्याह्रंतिराहुतिर्यदंस्य विज्ञानं तज्जहोति यथ्सायं प्रातरंत्ति तथ्समिधं यत्प्रातर्मध्यं दिन सायं च तानि सर्वनानि ये अंहोरात्रे ते दंर्शपूर्णमासौ येंऽर्धमासाश्च मासाँश्च ते चांतुर्मास्यानि य ऋतवस्ते पंशुबन्धा ये संवथ्सराश्चं परिवथ्सराश्च तेऽहंर्गणाः संववेदसं वा 。 एतथ्सत्रं यन्मरेणं तदेवभृथं एतद्वे जरामर्यमग्निहोत्र । सत्रं य एवं विद्वानुंदगयंने प्रमीयंते देवानांमेव मंहिमानं गुत्वाऽऽदित्यस्य सायुंज्यं गच्छत्यथ् ॰ यो देक्षिणे प्रमीयंते पितृणामेव मंहिमानं गत्वा चन्द्रमंसः साय्ज्यः सलोकतामाप्रोत्येतौ वै सूर्याचन्द्रमसौर्मिहमानौ ब्राह्मणो विद्वानभिजंयति तस्माँद्वह्मणों महिमानंमाप्रोति तस्माँद्वह्मणों महिमानंमित्युपनिषत्॥९९॥

[00]

ॐ सह नांववत्। सह नौं भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेज्ञस्वि नावधीतमस्तु मा विद्विषावहैं। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥



# ॥ कृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीय-काठकम्॥

#### ॥प्रथमः प्रश्नः॥

स्ंज्ञानं विज्ञानं प्रज्ञानं जानदंभिजानत्। सङ्कल्पंमानं प्रकल्पंमानमुप्कल्पंमानमुपंक्कृतं क्रुप्तम्। श्रेयो वसीय आयथसम्भूतं भूतम्। चित्रः केतुः प्रभानाभान्थसम्भान्। ज्योतिष्माङ्क्तेजस्वानातपङ्क्तपंत्रभितपन्। रोचनो रोचंमानः शोभनः शोभमानः कल्याणः। दर्शां दृष्टा दंर्शता विश्वरूपा सुदर्शना। आप्यायंमाना प्यायंमाना प्यायं सूनृतेरां। आपूर्यमाणा पूर्यमाणा पूर्यन्ती पूर्णा पौर्णमासी। दाता प्रदाताऽऽनन्दो मोदः प्रमोदः॥१॥

आवेशयंत्रिवेशयंन्थ्संवर्शनः स॰शांन्तः शान्तः। आभवंन्प्रभवंन्थ्सम्भवन्थ्सम्भूतो भूतः। प्रस्तुंतं विष्टुंत्॰ सङ्स्तुंतं कृत्याणं विश्वरूपम्। शुक्रम्मृतं तेज्स्वि तेजः समिद्धम्। अरुणं भानुमन्मरीचिमदभितपृत्तपंस्वत्। स्विता प्रंसविता दीप्तो दीपयन्दीप्यंमानः। ज्वलंञ्चलिता तपंन्वितपंन्थ्सन्तपन्। रोचनो रोचमानः शुम्भूः शुम्भंमानो वामः। सुता सुन्वती प्रसुता सूयमानाऽभिषूयमाणा। पीतीं प्रपा सम्पा तृप्तिंस्तर्पयंन्ती॥२॥

कान्ता काम्या कामजाताऽऽयुंष्मती कामदुघाँ। अभिशास्ताऽनुंमन्ताऽऽनन्दो मोदः प्रमोदः। आसादयंत्रिषा- दयँन्थ्स् स्सादेनः सर्संत्रः स्त्रः। आभूर्विभूः प्रभूः शम्भूर्भृवंः। प्वित्रं पविष्यन्यूतो मेध्यः। यशो यशंस्वानायुर्मृतः। जीवो जीविष्यन्थ्स्वर्गो लोकः। सहंस्वान्थ्सहीयानोजंस्वान्थ्सहंमानः। जयंत्रभिजयंन्थ्सु-द्रविणो द्रविणोदाः। आर्द्रपंवित्रो हरिकेशो मोदः प्रमोदः॥३॥

अरुणोऽरुणरंजाः पुण्डरीको विश्वजिदंभिजित्। आर्द्रः पिन्वमानोऽन्नंवान्नसंवानिरांवान्। सर्वोषधः संम्भरो महंस्वान्। एजत्का जोंवत्काः। क्षुष्ठकाः शिपिविष्टकाः। सरिस्रराः सुशेरंवः। अजिरासो गमिष्णवंः। इदानीं तदानीमेतरहिं क्षिप्रमंजिरम्। आशुर्निमेषः फणो द्रवन्नतिद्रवन्। त्वर्ङ्स्त्वरंमाण आशुराशीयाञ्चवः। अग्निष्टोम उक्थ्योऽतिरात्रो द्विरात्रस्त्रिंरात्रश्चंतूरात्रः। अग्निर्ऋतुः सूर्यं ऋतुश्चन्द्रमां ऋतुः। प्रजापंतिः संवथ्सरो महान्कः॥४॥

[8]

भूरिग्नें चे पृथिवीं च मां चे। त्री इक्षे लोकान्थ्संवथ्सरं चे।
प्रजापितस्त्वा सादयत्। तयां देवत्याऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद।
भुवो वायुं चान्तरिक्षं च मां चे। त्री इक्षे लोकान्थ्संवथ्सरं चे।
प्रजापितस्त्वा सादयत्। तयां देवत्याऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद।
स्वरादित्यं च दिवं च मां चे। त्री इक्षे लोकान्थ्संवथ्सरं चे।
प्रजापितस्त्वा सादयत्। तयां देवत्याऽङ्गिर्स्वद्भुवा

सींद। भूर्भुवः स्वंश्चन्द्रमंसं च दिशंश्च मां चं। त्री श्चं लोकान्थ्संवथ्सरं चं। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥५॥

[२]

त्वमेव त्वां वैत्थ योऽसि सोऽसिं। त्वमेव त्वामंचैषीः। चितश्चासि सश्चितश्चास्यग्ने। पृतावाङ्श्चासि भूयाङ्श्चास्यग्ने। यत्ते अग्ने न्यूनं यद् तेऽतिरिक्तम्। आदित्यास्तदिङ्गिरस-श्चिन्वन्तु। विश्वे ते देवाश्चितिमापूरयन्तु। चितश्चासि सश्चितश्चास्यग्ने। पृतावाङ्श्चासि भूयाङ्श्चास्यग्ने। मा ते अग्ने च येन माऽति च येनाऽऽयुरावृंक्षि। सर्वेषां ज्योतिषां ज्योतिर्यद्वावुदेतिं। तपंसो जातमिनंभृष्टमोर्जः। तत्ते ज्योतिरिष्टके। तेनं मे तप। तेनं मे ज्वल। तेनं मे दीदिहि। यावंद्वाः। यावदसांति सूर्यः। यावंदुतापि ब्रह्मं॥६॥

[३]

संवथ्सरोऽसि परिवथ्सरोऽसि। इदाव्थ्सरोऽसीद्वथ्सरो-ऽसि। इद्वथ्सरोऽसि वथ्सरोऽसि। तस्यं ते वस्नन्तः शिरंः। ग्रीष्मो दक्षिणः पृक्षः। वर्षाः पुच्छम्। शुरदुत्तंरः पृक्षः। हेमन्तो मध्यम्। पूर्वपृक्षाश्चितंयः। अपुरपृक्षाः पुरीषम्॥७॥

अहोरात्राणीष्टंकाः। ऋषभोऽसि स्वर्गो लोकः। यस्यौं दिशि महीयंसे। ततों नो महु आवंह। वायुर्भूत्वा सर्वा दिश् आवांहि। सर्वा दिशोऽनुविवांहि। सर्वा दिशोऽनुसंवांहि। चित्त्या चितिमापृण। अचित्त्या चितिमापृण। चिदंसि समुद्रयोनिः॥८॥

इन्दुर्दक्षः श्येन ऋतावाँ। हिरंण्यपक्षः शकुनो भुंर्ण्युः।
महान्थ्स्थस्थे ध्रुव आनिषंत्तः। नमस्ते अस्तु मा मां हि सीः।
एति प्रेति वीति समित्युदितिं। दिवं मे यच्छ। अन्तरिक्षं मे
यच्छ। पृथिवीं में यच्छ। पृथिवीं में यच्छ। अन्तरिक्षं मे
यच्छ। दिवं मे यच्छ। अह्या प्रसारय। रात्र्या समेच। रात्र्या
प्रसारय। अह्य समेच। काम् प्रसारय। काम् समेच॥९॥

**-**[૪]

भूर्भुवः स्वंः। ओजो बलम्ं। ब्रह्मं क्ष्रत्रम्। यशो महत्। सत्यं तपो नामं। रूपममृतम्। चक्षुः श्रोत्रम्ं। मन् आयुंः। विश्वं यशो महः। समं तपो हरो भाः। जातवेदा यदि वा पावकोऽसिं। वैश्वानरो यदि वा वैद्युतोऽसिं। शं प्रजाभ्यो यजमानाय लोकम्। ऊर्जं पृष्टिं ददंदभ्यावंवृथ्स्व॥१०॥

**-**[५]

राज्ञीं विराज्ञीं। सम्माज्ञीं स्वराज्ञीं। अर्चिः शोचिः। तपो हरो भाः। अग्निरिन्द्रो बृह्स्पतिंः। विश्वें देवा भुवंनस्य गोपाः। ते मा सर्वे यशंसा स॰सृंजन्तु॥११॥ असंवे स्वाहा वसंवे स्वाहाँ। विभुंवे स्वाहा विवस्वते स्वाहाँ। अभिभुवे स्वाहाऽधिपतये स्वाहाँ। दिवां पतंये स्वाहाऽ रहस्पत्याय स्वाहाँ। चाक्षुष्मत्याय स्वाहाँ। उयोतिष्मत्याय स्वाहाँ। राज्ञे स्वाहां विराज्ञे स्वाहाँ। सम्माज्ञे स्वाहाँ स्वराज्ञे स्वाहाँ। शूषांय स्वाहां सूर्याय स्वाहां। चन्द्रमंसे स्वाहा ज्योतिषे स्वाहां। स्रस्पाय स्वाहां कल्याणांय स्वाहां। अर्जुनाय स्वाहां॥१२॥

[り]

विपश्चिते पर्वमानाय गायत। मृही न धाराऽत्यन्थीं अर्षित। अहिंर्ह जीणीमितिंसपीति त्वचम्। अत्यो न क्रीडंन्नसरद्वृषा हिरेः। उपयामगृंहीतोऽसि मृत्यवे त्वा जुष्टं गृह्णामि। एष ते योनिर्मृत्यवे त्वा। अपमृत्युमपृक्षुधम्। अपेतः शपर्थं जिह। अधां नो अग्र आवंह। रायस्पोष सहस्रिणम्॥१३॥

ये ते सहस्रंम्युतं पाशाः। मृत्यो मर्त्यायं हन्तेवे। तान् यज्ञस्यं माययाः। सर्वानवयजामहे। भृक्षौऽस्यमृतभृक्षः। तस्यं ते मृत्युपीतस्यामृतंवतः। स्वगाकृतस्य मधुंमतः। उपहूत्तस्योपहूतो भक्षयामि। मृन्द्राऽभिभूतिः केतुर्यज्ञानां वाक्। असावेहिं॥१४॥

अन्धो जागृंविः प्राण। असावेहिं। बधिर आंऋन्दयितरपान।

असावेहिं। अहुस्तोस्त्वा चक्षुंः। असावेहिं। अपादाशो मर्नः। असावेहिं। कवे विप्रचित्ते श्रोत्रं। असावेहिं॥१५॥

सुह्स्तः सुंवासाः। शूषो नामाँस्यमृतो मर्त्येषु। तं त्वाऽहं तथा वेदं। असावेहिं। अग्निर्मे वाचि श्रितः। वाग्धदंये। हृदंयं मियं। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। वायुर्में प्राणे श्रितः॥१६॥

प्राणो हृदये। हृदयं मिया अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। सूर्यो मे चक्षुंषि श्रितः। चक्षुर्हृदये। हृदयं मिया अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। चन्द्रमां मे मनसि श्रितः॥१७॥

मनो हदये। हदयं मियं। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। दिशों मे श्रोत्रें श्रिताः। श्रोत्र्र् हदये। हदयं मियं। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। आपों मे रेतिस श्रिताः॥१८॥

रेतो हृदये। हृदयं मियं। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। पृथिवी मे शरीरे श्रिता। शरीर्॰ हृदये। हृदयं मियं। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। ओष्धिवनस्पतयों मे लोमंसु श्रिताः॥१९॥

लोमांनि हृदये। हृदयं मिये। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। इन्द्रों मे बलें श्रितः। बल् १ हृदये। हृदयं मिये। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। पूर्जन्यों मे मूर्धि श्रितः॥२०॥

मूर्धा हदये। हदयं मिये। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। ईशांनो मे मृन्यौ श्रितः। मृन्युर्हदेये। हदयं मिये। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। आत्मा मे आत्मिनि श्रितः॥२१॥ आत्मा हदंये। हदंयं मियं। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। पुनर्म आत्मा पुनरायुरागांत्। पुनंः प्राणः पुनराकूत्मागांत्। वैश्वानरो रिषमिर्वावृधानः। अन्तस्तिष्ठत्वमृतंस्य गोपाः॥२२॥

[८]

प्रजापंतिर्देवानंसृजत। ते पाप्मना सन्दिता अजायन्त। तान्व्यंद्यत्। यद्यद्यत्। तस्माँद्विद्युत्। तमंवृश्चत्। यदवृंश्चत्। तस्माद्वृष्टिः। तस्माद्यत्रेते देवते अभिप्राप्नुंतः। वि चं हैवास्य तत्रं पाप्मानं द्यतः॥२३॥

वृश्चतंश्च। सैषा मींमा साऽग्निंहोत्र एव संम्पन्ना। अथों आहुः। सर्वेषु यज्ञकृतुष्वितिं। होष्यंत्रप उपंस्पृशेत्। विद्युंदिस् विद्यं मे पाप्मान्मितिं। अथं हुत्वोपंस्पृशेत्। वृष्टिंरिस् वृश्चं मे पाप्मान्मितिं। यक्ष्यमांणो वृष्ट्वा वां। वि चं हैवास्यैते देवतें पाप्मानं द्यतः॥२४॥

वृश्चतंश्च। अत्युर्हो हाऽऽर्रुणः। ब्रह्मचारिणे प्रश्नान्प्रोच्यु प्रजिघाय। परेहि। प्रक्षं दय्यौम्पातिं पृच्छ। वेत्थं सावित्रा(३)त्र वेत्था(३) इतिं। तमागत्यं पप्रच्छ। आचार्यो मा प्राहैषीत्। वेत्थं सावित्रा(३)त्र वेत्था(३) इतिं। सहोवाच् वेदेतिं॥२५॥

स कस्मिन्प्रतिष्ठित इति। पुरोरंजुसीति। कस्तद्यत्पुरोरंजा

इतिं। पुष वाव स पुरोरंजा इतिं होवाच। य पुष तपंति। पुषोंऽर्वाग्रंजा इतिं। स कस्मिन्त्वेष इतिं। सृत्य इतिं। किं तथ्सत्यमितिं। तप इतिं॥२६॥

कस्मिन्न तप् इति। बल् इति। किं तद्वल्मिति। प्राण इति। मा स्मं प्राणमितिपृच्छ् इति माऽऽचार्यौऽब्रवीदितिं होवाच ब्रह्मचारी। स होवाच प्रक्षो दय्याँम्पातिः। यद्वै ब्रह्मचारिन्प्राणमत्यंप्रक्ष्यः। मूर्धा ते व्यपंतिष्यत्। अहम्तंत आचार्याच्छ्रेयाँ-भविष्यामि। यो मां सावित्रे समवादिष्टेति॥२७॥

तस्माँथ्सावित्रे न संवंदेत। स यो ह वै सांवित्रं विदुषां सावित्रे संवदंते। सहाँस्मिञ्छ्यं दधाति। अनुं ह वा अस्मा असौ तप्ञ्छियं मन्यते। अन्वंस्मै श्रीस्तपों मन्यते। अन्वंस्मै तपो बर्ल मन्यते। अन्वंस्मै वर्ल प्राणं मन्यते। स यदाहं। संज्ञानं विज्ञानं दर्शां दृष्टेतिं। एष एव तत्॥२८॥

अथ यदाहै। प्रस्तुंतं विष्टुंत र सुता सुन्वतीति। एष एव तत्। एष ह्येव तान्यहानि। एष रात्रयः। अथ यदाहै। चित्रः केतुर्दाता प्रदाता संविता प्रसिवताऽभिशास्ताऽनुंमन्तेति। एष एव तत्। एष ह्येव तेऽह्नों मुहूर्ताः। एष रात्रैः॥२९॥

अथ् यदाहं। प्वित्रंं पवियष्यन्थ्सहंस्वान्थ्सहीयानरुणीं-ऽरुणरंजा इतिं। एष एव तत्। एष ह्येव तेंंऽर्धमासाः। एष मासाः। अथ् यदाहं। अग्निष्टोम उक्थ्यों ऽग्निर्ऋतुः प्रजापंतिः संवथ्सर इतिं। एष एव तत्। एष ह्येव ते यंज्ञऋतवंः। एष ऋतवंः॥३०॥

पुष संवथ्सरः। अथ् यदाहं। इदानीं तदानीमिति। एष एव तत्। एष ह्येव ते मुंहूर्तानां मुहूर्ताः। जनको ह् वैदेहः। अहोरात्रेः समाजंगाम। त॰ होचुः। यो वा अस्मान् वेदं। विजहंत्पाप्मानंमेति॥३१॥

सर्वमायुरिति। अभि स्वर्गं लोकं जयिति। नास्यामुष्मिं होके-ऽन्नं क्षीयत् इति। विजहिद्ध वै पाप्मानंमेति। सर्वमायुरिति। अभि स्वर्गं लोकं जयिति। नास्यामुष्मिं होकेऽन्नं क्षीयते। य एवं वेदं। अहीना हाऽऽश्वंथ्यः। सावित्रं विदां चंकार॥३२॥

स हं हुर्सो हिंरूण्मयों भूत्वा। स्वर्गं लोकिर्मियाय। आदित्यस्य सायंज्यम्। हुर्सो हु वै हिंरूण्मयों भूत्वा। स्वर्गं लोकमेति। आदित्यस्य सायंज्यम्। य एवं वेदं। देवभागो हं श्रौतर्षः। सावित्रं विदां चंकार। तर ह वागदृश्यमानाऽभ्यंवाच॥३३॥

सर्वं बत गौतमो वेदं। यः सांवित्रं वेदेतिं। स होवाच। कैषा वागुसीतिं। अयमहरू सांवित्रः। देवानांमुत्तमो लोकः। गृह्यं महो बिभ्रदितिं। एतावंति ह गौतमः। यज्ञोपवीतं कृत्वाऽधो निपंपात। नमो नम इतिं॥३४॥ स होवाच। मा भैषीर्गीतम। जितो वै ते लोक इति। तस्माद्ये के चे सावित्रं विदुः। सर्वे ते जितलोकाः। स यो हु वै सावित्रस्याष्टाक्षेरं पुदक्ष श्रियाऽभिषिक्तं वेदे। श्रिया हैवाभिषिच्यते। घृणिरिति द्वे अक्षरैं। सूर्य इति त्रीणि। आदित्य इति त्रीणि॥३५॥

पृतद्वे सांवित्रस्याष्टाक्षंरं पृदः श्रियाऽभिषिक्तम्। य पृवं वेदं। श्रिया हैवाभिषिच्यते। तदेतदृचाऽभ्यंक्तम्। ऋचो अक्षरें पर्मे व्योमन्। यस्मिन्देवा अधि विश्वं निषेदः। यस्तं न वेद् किमृचा कंरिष्यति। य इत्तद्विद्स्त इमे समांसत् इतिं। न ह वा पृतस्यूर्चा न यजुंषा न साम्राऽर्थोंऽस्ति। यः सांवित्रं वेदं॥३६॥

तदेतत्पंरि यद्देवच्क्रम्। आर्द्रं पिन्वंमानः स्वर्गे लोक एति। विजहिद्धश्वां भूतानिं सम्पश्यंत्। आर्द्रो ह वै पिन्वंमानः। स्वर्गे लोक एति। विजहिन्वश्वां भूतानिं सम्पश्यन्। य एवं वेदं। शूषो ह वै वार्ष्ण्यः। आदित्येनं समाजंगाम। तः होवाच। एहिं सावित्रं विद्धि। अयं वै स्वर्ग्योऽग्निः पारियेष्णुरमृताथ्सम्भूत इतिं। एष वाव स सांवित्रः। य एष तपंति। एहि मां विद्धि। इतिं हैवेनं तद्वाच॥३७॥

[8]

इयं वाव स्रघाँ। तस्यां अग्निरेव सार्घं मधुं। या एताः पूर्वपक्षापरपक्षयो रात्रयः। ता मधुकृतः। यान्यहांनि। ते मंधुवृषाः। स यो हु वा पुता मंधुकृतंश्च मधुवृषा ॥ वेदं। कुर्वन्तिं हास्यैता अग्नौ मधुं। नास्यैष्टापूर्तं धंयन्ति। अथु यो न वेदं॥ ३८॥

न हाँस्यैता अग्नौ मधुं कुर्वन्ति। धयंन्त्यस्येष्टापूर्तम्। यो ह् वा अंहोरात्राणां नामधेयांनि वेदं। नाहोरात्रेष्वार्तिमार्च्छंति। संज्ञानं विज्ञानं दर्शां दृष्टेतिं। एतावंनुवाकौ पूर्वपक्षस्यां-होरात्राणां नामधेयांनि। प्रस्तुंतं विष्टुंतर सुता सुन्वतीतिं। एतावंनुवाकावंपरपक्षस्यांहोरात्राणां नामधेयांनि। नाहोरात्रेष्वार्तिमार्च्छंति। य एवं वेदं॥३९॥

यो हु वै मुंहूर्तानां नामधेयांनि वदं। न मुंहूर्तेष्वार्तिमार्च्छंति।

चित्रः केतुर्दाता प्रंदाता संविता प्रंसिवताऽभिंशास्ताऽनुंमन्तेतिं। एतंऽनुवाका मुंहूर्तानां नामधेयांनि। न
मुहूर्तेष्वार्तिमार्च्छंति। य एवं वदं। यो हु वा
अर्धमासानां च मासानां च नामधेयांनि वदं।
नार्धमासेषु न मासेष्वार्तिमार्च्छंति। प्वित्रं पवियष्यन्थ्सहंस्वान्थ्सहीयान्रुणोंऽरुणरंजा इतिं। एतंऽनुवाका
अर्धमासानां च मासानां च नामधेयांनि॥४०॥

नार्धमासेषु न मासेष्वार्तिमार्च्छति। य एवं वेदं। यो हु वै यंज्ञऋतूनां चंतूनां चं संवथ्सरस्यं च नामुधेयांनि वेदं। न यंज्ञऋतुषु नर्तुषु न संवथ्सर आर्तिमार्च्छति। अग्निष्टोम उक्थ्यौऽग्निरऋतुः प्रजापंतिः संवथ्सर इति। एतेऽनुवाका यंज्ञऋतुनां चर्तूनां चं संवथ्सरस्यं च नाम्धेयांनि॥४१॥ न यंज्ञऋतुषु नर्तुषु न संवथ्सर आर्तिमार्च्छति। य एवं वेदं। यो ह वै मृंहूर्तानां मृहूर्तान् वेदं। न मृंहूर्तानां मृहूर्तेष्वार्तिमार्च्छति। इदानीं तदानीमिति। एते वै मृंहूर्तानां मृहूर्ताष्वार्तिमार्च्छति। इदानीं तदानीमिति। एते वै मृंहूर्तानां मृहूर्तां विश्वार्तिमार्च्छति। य एवं वेदं। अथो यथां क्षेत्रज्ञो भूत्वाऽनुप्रविश्यान्नमिति। एवमेवैतान्क्षेत्रज्ञो भूत्वाऽनुप्रविश्यान्नमिति। एवमेवैतान्क्षेत्रज्ञो भूत्वाऽनुप्रविश्यान्नमिति। एवमेवैतान्क्षेत्रज्ञो भूत्वाऽनुप्रविश्यान्नमिति। एवमेवैतान्क्षेत्रज्ञो भूत्वाऽनुप्रविश्यान्नमिति। स एतेषांमेव संलोकता स् सायुंज्यमश्रुते। अपं पुनर्मृत्युं जंयित। य एवं वेदं॥४२॥

[68]

कश्चिंद्ध वा अस्माल्लोकात्प्रेत्यं। आत्मानं वेद। अयमहमस्मीतिं। कश्चिथ्स्वं लोकं न प्रतिप्रजानाति। अग्निम्ंग्धो हैव धूमतांन्तः। स्वं लोकं न प्रतिप्रजानाति। अथ् यो हैवेतम्ग्नि॰ सांवित्रं वेदं। स प्वास्माल्लोकात्प्रेत्यं। आत्मानं वेद। अयमहमस्मीतिं॥४३॥

स स्वं लोकं प्रतिप्रजानाति। एष उं वेवैनं तथ्सांवित्रः। स्वर्गं लोकम्भिवंहति। अहोरात्रैर्वा इदः स्युग्भिः क्रियते। इतिरात्रायांदीक्षिषत। इतिरात्रायं व्रतमुपांगुरिति। तानिहानेवं विदुषंः। अमुष्मिं ल्लोके शेव्धिं धंयन्ति। धीतः हैव स शेंविधिमनु परैति। अथ यो हैवैत्मग्नि सांवित्रं वेदं॥४४॥

तस्यं हैवाहों रात्राणिं। अमुष्मिं छोके शेंवधिं न धंयन्ति। अधींत १ हैव स शेंवधिमनु परैति। भ्रद्धांजो ह त्रिभिरायुं भिं ब्रह्मचर्यमुवास। त १ हु जीणिं १ स्थविं र १ शयां नम्। इन्द्रं उपव्रज्यों वाच। भरंद्वाज। यत्ते चतुर्थमायुं द्वाम्। किमें नेन कुर्या इतिं। ब्रह्मचर्यमे वैनेन चरेयमितिं होवाच॥ ४५॥

त १ ह त्रीन्गिरिरूपानविंज्ञातानिव दर्श्यां चंकार। तेषा १ हैकैंकस्मान्मुष्टिनाऽऽदंदे। स होवाच। भरंद्वाजेत्यामच्च्री। वेदा वा एते। अनुन्ता वै वेदाः। एतद्वा एतै स्त्रिभिरायुं भिरन्वं-वोचथाः। अर्थत् इतंर्दनंनूक्तमेव। एहीमं विद्धि। अ्यं वै संविवद्येतिं॥४६॥

तस्मै हैतम्ग्निश्च सांवित्रमुंवाच। तश्स विदित्वा। अमृतों भूत्वा। स्वर्गं लोकिमियाय। आदित्यस्य सायुंज्यम्। अमृतों हैव भूत्वा। स्वर्गं लोकमेति। आदित्यस्य सायुंज्यम्। य एवं वेदं। एषो एव त्रयी विद्या॥४७॥

यार्वन्तः हु वै त्रय्या विद्ययां लोकं जयित। तार्वन्तं लोकं जयित। य एवं वेद्री अग्नेर्वा एतानि नामधेयांनि। अग्नेरेव सार्युज्यः सलोकतांमाप्नोति। य एवं वेद्री वायोर्वा एतानि नामुधेयांनि। वायोरेव सायुंज्य सलोकतांमाप्नोति। य एवं वेदं। इन्द्रस्य वा एतानिं नामुधेयांनि॥४८॥

इन्द्रंस्यैव सायुंज्य सलोकतांमाप्नोति। य एवं वेदं। बृह्स्पतेंवे एतानि नामधेयांनि। बृह्स्पतेंवे सायुंज्य सलोकतांमाप्नोति। य एवं वेदं। प्रजापंतेर्वा एतानि नामधेयांनि। प्रजापंतेरेव सायुंज्य सलोकतांमाप्नोति। य एवं वेदं। ब्रह्मणो वा एतानि नामधेयांनि। ब्रह्मण एव सायुंज्य सलोकतांमाप्नोति। य एवं वेदं। स वा एषोंऽग्निरंपक्षपुच्छो वायुरेव। तस्याग्निर्मुखम्ं। असावांदित्यः शिरंः। स यदेते देवते अन्तरेण। तथ्सर्व सीव्यति। तस्मांथ्सावित्रः॥४९॥

॥इति कृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयकाठके प्रथमः प्रश्नः समाप्तः॥१॥

### ॥द्वितीयः प्रश्नः॥

लोकोंऽसि स्वर्गोऽसि। अनुन्तौंऽस्यपारोंऽसि। अक्षिंतो-ऽस्यक्ष्य्योंऽसि। तपंसः प्रतिष्ठा। त्वयीदमन्तः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे कामदुघमक्षितम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतयांऽङ्गिर्स्वद्भवा सींद॥१॥ तपोंऽसि लोके श्रितम्। तेजंसः प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्सभूतम्। विश्वंस्य भूतृं विश्वंस्य जनयित्। तत्त्वोपंदधे काम्दुघमक्षितम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतयांऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥२॥

तेजोंऽसि तपंसि श्रितम्। समुद्रस्यं प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सभूतम्। विश्वंस्य भूतृं विश्वंस्य जनयित्। तत्त्वोपंदधे काम्दुघमिश्वंतम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥३॥

स्मुद्रोंऽस् तेजंसि श्रितः। अपां प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्मूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे काम्दुघमक्षितम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सींद॥४॥

आपंः स्थ समुद्रे श्रिताः। पृथिव्याः प्रतिष्ठा युष्मास्। इदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूत्यं विश्वंस्य जनिय्त्र्यः। ता व उपंदधे काम्दुघा अक्षिताः। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतयांऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥५॥

पृथिव्यंस्यपसु श्रिता। अग्नेः प्रंतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूत्री विश्वंस्य जनयित्री। तां त्वोपंदधे कामदुघामक्षिताम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सींद॥६॥

अग्निरंसि पृथिव्याः श्रितः। अन्तरिक्षस्य प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वः सुभूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे काम्दुघमिश्वंतम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥७॥

अन्तरिक्षमस्यग्नौ श्रितम्। वायोः प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्मूतम्। विश्वंस्य भूतृं विश्वंस्य जनियत्। तत्त्वोपंदधे कामृदुघमिश्वंतम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सींद॥८॥

वायुरंस्यन्तिरंक्षे श्रितः। दिवः प्रंतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनियता। तं त्वोपंदधे काम्दुघमिश्वंतम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सींद॥९॥

द्यौरंसि वायौ श्रिता। आदित्यस्यं प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्म्भूतम्। विश्वंस्य भूत्री विश्वंस्य जनियत्री। तां त्वोपंदधे काम्दुघामिश्वंताम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सींद॥१०॥

आदित्योऽसि दिवि श्रितः। चन्द्रमंसः प्रतिष्ठा। त्वयीदमन्तः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वरं सुभूतम्। विश्वंस्य भृता विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे कामृदुघ्मक्षितम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥११॥

चन्द्रमां अस्यादित्ये श्रितः। नक्षंत्राणां प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्मूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे काम्दुघमिश्वंतम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥१२॥

नक्षंत्राणि स्थ चन्द्रमंसि श्रितानिं। संवथ्सरस्यं प्रतिष्ठा युष्मासुं। इदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूर्तॄणि विश्वंस्य जनियतॄणिं। तानिं व उपंदधे काम्दुघान्यक्षितानि। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सींद॥१३॥

संवथ्सरोऽसि नक्षेत्रेषु श्रितः। ऋतूनां प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे कामृदुघमिश्वंतम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥१४॥

ऋतर्वः स्थ संवथ्सरे श्रिताः। मार्सानां प्रतिष्ठा युष्मासुं। इदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वर् सुभूतम्। विश्वंस्य भूतिरो विश्वंस्य जनयितारंः। तान् व उपंदधे कामृदुघानक्षितान्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिरुस्वद्भुवा सींद॥१५॥

मासाः स्थतंषुं श्रिताः। अर्धमासानां प्रतिष्ठा युष्मास्। इदमन्तः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वस्य भूतारो विश्वंस्य जनयितारंः। तान् व उपंदधे काम्दुघानक्षितान्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सीद॥१६॥

अर्धमासाः स्थं मासु श्रिताः। अहोरात्रयौः प्रतिष्ठा युष्मासुं। इदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वः स्भूतम्। विश्वंस्य भूतारो विश्वंस्य जनयितारः। तान् व उपंदधे काम्दुघानक्षितान्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सींद॥१७॥

अहोरात्रे स्थौंऽर्धमासेषुं श्रिते। भूतस्यं प्रतिष्ठे भव्यंस्य प्रतिष्ठे। युवयोरिदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वः स्भूतम्। विश्वंस्य भूत्रौं विश्वंस्य जनियत्रौं। ते वामुपंदधे काम्दुधे अक्षिते। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥१८॥

पौर्णमास्यष्टंकाऽमावास्यां। अन्नादाः स्थान्नदुघो युष्मास्। इदमन्तः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वरं सुभूतम्। विश्वंस्य भृर्त्यो विश्वंस्य जनियुत्र्यः। ता व उपंदधे कामृदुघा अक्षिताः। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सीद॥१९॥

रार्डसि बृह्ती श्रीर्सीन्द्रंपत्नी धर्मपत्नी। विश्वं भूतमनुप्रभूता। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वरं सुभूतम्। विश्वंस्य भूत्री विश्वंस्य जनयित्री। तां त्वोपंदधे काम्दुघामिश्वंताम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥२०॥

ओजोंऽसि सहोंऽसि। बलंमिस भ्राजोंऽसि। देवानां धामामृतम्। अमेर्त्यस्तपोजाः। त्वयीदमन्तः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वर्ं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे कामदुघमिक्षंतम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिरुस्बद्धवा सींद॥२१॥

[8]

त्वमंग्ने रुद्रो असुंरो महो दिवः। त्वः शर्धो मारुतं पृक्ष ईशिषे। त्वं वातैररुणैर्यासि शङ्ग्यः। त्वं पूषा विधतः पांसि नु त्मनां। देवां देवेषुं श्रयध्वम्। प्रथमा द्वितीयेषु श्रयध्वम्। द्वितीयास्तृतीयेषु श्रयध्वम्। तृतीयाश्चतुर्थेषुं श्रयध्वम्। चृतुर्थाः पश्चमेषुं श्रयध्वम्। पश्चमाः षष्ठेषुं श्रयध्वम्॥२२॥

षष्ठाः संप्तमेषुं श्रयध्वम्। सप्तमा अष्टमेषुं श्रयध्वम्। अष्टमा

नंवमेषुं श्रयध्वम्। न्वमा देशमेषुं श्रयध्वम्। दृश्मा एंकाद्शेषुं श्रयध्वम्। एकाद्शा द्वांद्शेषुं श्रयध्वम्। द्वाद्शास्त्रंयोद्शेषुं श्रयध्वम्। त्रयोद्शाश्चंतुर्दशेषुं श्रयध्वम्। चृतुर्दशाः पंश्रद्शेषुं श्रयध्वम्। पृश्चद्शाः षोंडुशेषुं श्रयध्वम्॥२३॥

षोड्शाः संप्तद्शेषुं श्रयध्वम्। स्प्तद्शा अष्टाद्शेषुं श्रयध्वम्। अष्टाद्शेषुं श्रयध्वम्। पृकान्नविर्शा विर्शेषुं श्रयध्वम्। पृकान्नविर्शा विर्शेषुं श्रयध्वम्। विर्शेषुं श्रयध्वम्। पृकविर्शोषुं श्रयध्वम्। पृकविर्शोषुं श्रयध्वम्। पृकविर्शोषुं श्रयध्वम्। द्वाविर्शोषुं श्रयध्वम्। नृतुर्विर्शाः पंश्वविर्शेषुं श्रयध्वम्। पृश्वविर्शाः पंश्वविर्शेषुं श्रयध्वम्॥२४॥

**—**[२]

अग्नांविष्णू स्जोषंसा। इमा वंर्धन्तु वां गिरंः। द्युम्नैर्वाजेंभिरागंतम्। राज्ञीं विराज्ञीं। सम्राज्ञीं स्वराज्ञीं। अर्चिः शोचिः। तपो हरो भाः। अग्निः सोमो बृह्स्पतिः। विश्वें देवा भुवंनस्य गोपाः। ते सर्वे सङ्गत्यं। इदं मे प्रावंता वर्चः। वयः स्याम् पत्यो रयीणाम्। भूर्भुवः स्वंः स्वाहां॥२६॥

[3]

अन्नप्तेऽन्नंस्य नो देहि। अनुमीवस्यं शुष्मिणः। प्र प्रंदातारं तारिषः। ऊर्जं नो धेहि द्विपदे चतुंष्पदे। अग्नें पृथिवीपते। सोमं वीरुधां पते। त्वष्टंः समिधां पते। विष्णंवाशानां पते। मित्रं सत्यानां पते। वर्रण धर्मणां पते॥२७॥

मुरुतो गणानां पतयः। रुद्रं पशूनां पते। इन्द्रौंजसां पते। बृहंस्पते ब्रह्मणस्पते। आ रुचा रोचेऽह स्वयम्। रुचा रुचे रोचंमानः। अतीत्यादः स्वराभरेह। तस्मिन् योनौं प्रजनौ प्रजायेय। वय स्थाम् पत्यो रयीणाम्। भूर्भुवः स्वः स्वाहां॥२८॥

[8]

सप्त ते अग्ने स्मिधंः स्पप्त जिह्वाः। स्प्तर्षयः स्प्त धामं प्रियाणि। सप्त होत्रां अनुविद्वान्। स्प्त योनीरापृंणस्वा घृतेनं। प्राची दिक्। अग्निर्देवतां। अग्निः स दिशां देवं देवतांनामृच्छत्। यो मैतस्यै दिशोऽिभदासंति। दक्षिणा दिक्। इन्द्रों देवतां॥२९॥

इन्द्र स दिशां देवं देवतानामृच्छत्। यो मैतस्यै

दिशों ऽभिदासंति। प्रतीची दिक्। सोमों देवतां। सोम् स दिशां देवं देवतांनामृच्छत्। यो मैतस्यें दिशों ऽभिदासंति। उदींची दिक्। मित्रावर्रुणौ देवतां। मित्रावर्रुणौ स दिशां देवौ देवतांनामृच्छत्। यो मैतस्यें दिशों ऽभिदासंति॥३०॥

ऊर्ध्वा दिक्। बृह्स्पतिंद्वतां। बृह्स्पति स दिशां देवं देवतांनामृच्छत्। यो मैतस्ये दिशोंऽभिदासंति। इयं दिक्। अदिंतिर्देवतां। अदिंति स दिशां देवीं देवतांनामृच्छत्। यो मैतस्ये दिशोंऽभिदासंति। पुरुषो दिक्। पुरुषो मे कामान्थ्समंध्यतु॥ ३१॥

अन्धो जागृंविः प्राण। असावेहिं। बिधिर आँक्रन्दयितरपान। असावेहिं। उषसंमुषसमशीय। अहमसो ज्योतिंरशीय। अहमसोऽपोऽशीय। वय स्यांम् पत्रंयो रयीणाम्। भूर्भवः स्वंः स्वाहाँ॥३२॥

**-**[५]

यत्तेऽचितं यदं चितं ते अग्ने। यत्तं ऊनं यद् तेऽतिरिक्तम्। आदित्यास्तदिङ्गंरसिश्चन्वन्तु। विश्वं ते देवाश्चितिमापूरयन्तु। चितश्चासि सिश्चंतश्चास्यग्ने। एतावाङ्श्चासि भूयांङ्श्चास्यग्ने। लोकं पृण च्छिद्रं पृण। अथों सीद शिवा त्वम्। इन्द्राग्नी त्वा बृहस्पतिः। अस्मिन् योनांवसीषदन्॥३३॥

तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद। ता अस्य सूदंदोहसः। सोमई श्रीणन्ति पृश्नंयः। जन्मं देवानां विशंः। त्रिष्वा रोचने दिवः। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद। अग्ने देवा॰ इहाऽऽवंह। जज्ञानो वृक्तबंर्हिषे। असि होतां न ईड्यः। अगन्म महा मनसा यविष्ठम्॥३४॥

यो दीदाय सिमंद्ध स्वे दुंरोणे। चित्रभांनू रोदंसी अन्तरुवीं। स्वांहुतं विश्वतः प्रत्यश्चम्। मेधाकारं विदर्थस्य प्रसाधंनम्। अग्निश् होतांरं परिभूतंमं मृतिम्। त्वामर्भस्य हुविषंः समानमित्। त्वां महो वृंणते नरो नान्यं त्वत्। मृनुष्वत्त्वा निधीमहि। मृनुष्वथ्समिधीमहि। अग्ने मनुष्वदंङ्गिरः॥३५॥

देवान्देवायते यंज। अग्निर्हि वाजिनं विशे। ददांति विश्वचंर्षणिः। अग्नी राये स्वाभुवम्। स प्रीतो यांति वार्यम्। इष स्तोत्भ्य आभंर। पृष्टो दिवि पृष्टो अग्निः पृथिव्याम्। पृष्टो विश्वा ओषंधीराविंवेश। वैश्वानरः सहंसा पृष्टो अग्निः। स नो दिवा स रिषः पांतु नक्तम्॥३६॥

[٤]

अयं वाव यः पवंते। सौंऽग्निर्नाचिकेतः। स यत्प्राङ् पवंते। तदंस्य शिरंः। अथ् यदंक्षिणा। स दक्षिणः पृक्षः। अथ् यत्प्रत्यक्। तत्पुच्छम्। यदुदङ्ङ्ं। स उत्तरः पृक्षः॥३७॥

अथ यथ्संवाति। तदंस्य समर्श्वनं च प्रसारंणं च। अथों सम्पदेवास्य सा। स॰ हु वा अस्मै स कार्मः पद्यते। यत्कांमो यजते। योंऽग्निं नांचिकेतं चिंनुते। य उं चैनमेवं वेदं। यो हु वा अ्ग्नेर्नाचिकेतस्याऽऽयतंनं प्रतिष्ठां वेदं। आयतंनवान्भवति। गच्छंति प्रतिष्ठाम्॥३८॥

हिरंण्यं वा अग्नेर्नाचिकेतस्याऽऽयतंनं प्रतिष्ठा। य एवं वेदं। आयतंनवान्भवति। गच्छंति प्रतिष्ठाम्। यो हृ वा अग्नेर्नाचिकेतस्य शरीरं वेदं। सशंरीर एव स्वर्गं लोकमेति। हिरंण्यं वा अग्नेर्नाचिकेतस्य शरीरम्। य एवं वेदं। सशंरीर एव स्वर्गं लोकमेति। अथो यथां रुका उत्तंप्तो भाय्यात्॥३९॥

पुवमेव स तेर्जसा यशंसा। अस्मिङ्श्चं लोकेंऽमुष्मिंङ्श्च भाति। उरवों हु वै नामैते लोकाः। येऽवरेणाऽऽदित्यम्। अर्थ हैते वरीया॰सो लोकाः। ये परेणाऽऽदित्यम्। अन्तंवन्त॰ हु वा एष क्ष्ययं लोकं जंयति। योऽवरेणाऽऽदित्यम्। अर्थ हैषोंऽनन्तमंपारमंक्षय्यं लोकं जंयति। यः परेणाऽऽदित्यम्॥४०॥

अनुन्त १ ह् वा अपारमेक्षय्यं लोकं जंयित। यौँऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदे। अथो यथा रथे तिष्ठन्पक्षंसी पर्यावर्तमाने प्रत्यपेक्षते। एवमहोरात्रे प्रत्यपेक्षते। नास्यांहोरात्रे लोकमांप्रुतः। यौँऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदे॥४१॥ उशन् हु वै वांजश्रव्सः संविवेद्सं देदो। तस्यं हु नचिंकेता नामं पुत्र आंस। त॰ हं कुमार॰ सन्तम्। दक्षिणासु नीयमांनासु श्रृद्धाऽऽविवेश। स होवाच। तत् कस्मै मां दांस्यसीति। द्वितीयं तृतीयम्। त॰ हु परीत उवाच। मृत्यवै त्वा ददामीति। त॰ हु स्मोत्थितं वागुभिवंदति॥४२॥

गौतंम कुमारमिति। स होवाच। परेहि मृत्योर्गृहान्। मृत्यवे वै त्वांऽदामिति। तं वै प्रवसंन्तं गुन्तासीतिं होवाच। तस्यं स्म तिस्रो रात्रीरनांश्वान्गृहे वंसतात्। स यदिं त्वा पृच्छेत्। कुमांर् कित रात्रीरवाथ्सीरितिं। तिस्र इति प्रतिंब्रूतात्। किं प्रंथमा रात्रिमाश्चा इतिं॥४३॥

प्रजां त इतिं। किं द्वितीयामितिं। पृश्र्स्त इतिं। किं तृतीयामितिं। साधुकृत्यां त इतिं। तं वै प्रवसन्तं जगाम। तस्यं ह तिस्रो रात्रीरनांश्वान्गृह उंवास। तमागत्यं पप्रच्छ। कुमांर कित रात्रीरवाथ्सीरिति। तिस्र इति प्रत्युंवाच॥४४॥

किं प्रथमा रात्रिमाश्रा इति। प्रजां त् इति। किं द्वितीयामिति। पृश्क्रस्त इति। किं तृतीयामिति। साधुकृत्यां त् इति। नमस्ते अस्तु भगव इति होवाच। वरं वृणीष्वेति। पितरमेव जीवन्नयानीति। द्वितीयं वृणीष्वेति॥४५॥

इष्टापूर्तयोर्मेऽक्षितिं ब्रूहीतिं होवाच। तस्मै हैतमृग्निं नांचिकेतमुंवाच। ततो वै तस्यैष्टापूर्ते ना क्षीयेते। नास्यें ष्टापूर्ते क्षीयते। यों ऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। तृतीयंं वृणीष्वेतिं। पुनुर्मृत्योर्मेऽपंचितिं ब्रूहीतिं होवाच। तस्मैं हैतमृग्निं नांचिकेतम्बाच। ततो वै सोऽपं पुनर्मृत्युमंजयत्॥४६॥

अपं पुनर्मृत्युं जंयित। योंऽग्निं नांचिकेतं चिन्ते। य उं चैनमेवं वेदं। प्रजापंतिर्वे प्रजाकांम्स्तपोंऽतप्यत। स हिरण्यमुदांस्यत्। तद्ग्नौ प्रास्यत्। तदंस्मै नाच्छंदयत्। तिद्वितीयं प्रास्यत्। तदंस्मै नैवाच्छंदयत्। तत्तृतीयं प्रास्यंत्॥४७॥

तदंस्मे नैवाच्छंदयत्। तदात्मन्नेव हंद्य्येंऽग्नौ वैश्वान्रे प्रास्यंत्। तदंस्मा अच्छदयत्। तस्माद्धिरंण्यं किनेष्ठं धनानाम्। भुञ्जत्प्रियतंमम्। हृद्युजः हि। स वै तमेव नाविंन्दत्। यस्मै तां दक्षिणामनेष्यत्। ताः स्वायैव हस्तांयु दक्षिणायानयत्। तां प्रत्यंगृह्णात्॥४८॥

दक्षांय त्वा दिक्षंणां प्रतिगृह्णामीति। सोंऽदक्षत् दिक्षंणां प्रतिगृह्णं। दक्षंते हु व दिक्षंणां प्रतिगृह्णं। य एवं वेदं। एतर्द्धं स्म व तिद्विद्वा १ सों वाजश्रवसा गोतंमाः। अप्यंनूदेश्यां दिक्षंणां प्रतिगृह्णंनित। उभयंन व्यं दिक्षेष्यामह एव दिक्षंणां प्रतिगृह्णंते। तेऽदक्षन्त दिक्षंणां प्रतिगृह्णं। दक्षंते हु व दिक्षंणां प्रतिगृह्णं। य एवं वेदं। प्र हान्यं क्षीनाति॥४९॥

त॰ हैतमेके पशुबन्ध एवोत्तंरवेद्यां चिन्वते। उत्तर्वेदिसंम्मित एषों ऽग्निरिति वदंन्तः। तन्न तथां कुर्यात्। एतमृग्निं कामेन व्यंध्येत्। स एनं कामेन व्यंद्धः। कामेन व्यंध्येत्। सौम्ये वावैनंमध्वरे चिन्वीत। यत्रं वा भूयिष्ठा आहुंतयो हूयेरन्। एतमृग्निं कामेन समर्धयित। स एनं कामेन समृद्धः॥५०॥

कामेन समर्धयित। अर्थ हैनं पुरर्षयः। उत्तर्वेद्यामेव सित्रियमिचिन्वत। ततो वै तेऽविन्दन्त प्रजाम्। अभि स्वर्गं लोकमंजयन्। विन्दतं एव प्रजाम्। अभि स्वर्गं लोकं जयित। योऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। अर्थ हैनं वायुरऋद्धिंकामः॥५१॥

यथान्युप्तमेवोपंदधे। ततो वै स एतामृद्धिंमार्भ्रोत्। यामिदं वायुर्ऋद्धः। एतामृद्धिंमृभ्रोति। यामिदं वायुर्ऋद्धः। योऽभ्रिं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। अर्थ हैनं गोब्लो वार्णः पृशुकांमः। पाङ्कंमेव चिंक्ये। पश्चं पुरस्तांत्॥५२॥

पश्चं दक्षिण्तः। पश्चं पृश्चात्। पश्चोंत्तर्तः। एकां मध्यें। ततो वै स सहस्रं पृश्चन्प्राप्नौत्। प्र सहस्रं पृश्चनाप्नोति। योंऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। अथं हैनं प्रजापंति ज्येष्ठमं कामो यशंस्कामः प्रजनंनकामः। त्रिवृतं मेव चिक्ये॥५३॥

स्प्त पुरस्तांत्। तिस्रो दंक्षिणतः। स्प्त पृश्चात्। तिस्र उत्तर्तः। एकां मध्यें। ततो वे स प्र यशो ज्यैष्ठांमाप्नोत्। एतां प्रजांतिं प्राजांयत। यामिदं प्रजाः प्रजायंन्ते। त्रिवृद्धे ज्यैष्ठाम्। माता पिता पुत्रः॥५४॥

त्रिवृत्यजनंनम्। उपस्थो योनिर्मध्यमा। प्र यशो ज्यैष्ठांमाप्नोति। एतां प्रजांतिं प्रजांयते। यामिदं प्रजाः प्रजायंन्ते। योंऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। अथं हैन्मिन्द्रो ज्यैष्ठांकामः। ऊर्ध्वा एवोपंदधे। ततो वै स ज्यैष्ठांमगच्छत्॥५५॥

ज्यैष्ठमं गच्छति। योंऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। अथं हैनम्सावांदित्यः स्वर्गकांमः। प्राचीरेवोपंदधे। ततो वै सोऽभि स्वर्गं लोकमंजयत्। अभि स्वर्गं लोकं जयति। योंऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। स यदीच्छेत्॥५६॥

तेज्स्वी यंशस्वी ब्रह्मवर्च्सी स्यामिति। प्राङाहोतुर्धिष्णया-दुथ्संपेत्। येयं प्रागाद्यशंस्वती। सा मा प्रोणींत्। तेजंसा यशंसा ब्रह्मवर्च्सेनेति। तेज्रस्येव यंशस्वी ब्रह्मवर्च्सी भंवति। अथ् यदीच्छेत्। भूयिष्ठं मे श्रद्दंधीरन्। भूयिष्ठा दक्षिणा नयेयुरिति। दक्षिणासु नीयमानासु प्राच्येहि प्राच्येहीति प्राची जुषाणा वेत्वाऽऽज्यंस्य स्वाहेति स्रुवेणोपहत्यांऽऽहवनीये जुहुयात्॥५७॥ भूयिष्ठमेवास्मै श्रद्धंयते। भूयिष्ठा दक्षिणा नयन्ति। पुरीषमुप्धायं। चितिक्कृप्तिभिरिभ्मृश्यं। अग्निं प्रणीयोप-समाधायं। चतंस्र एता आहुंतीर्जुहोति। त्वमंग्ने रुद्र इतिं शतरुद्रीयंस्य रूपम्। अग्नांविष्णू इतिं वसोर्धारांयाः। अन्नपत् इत्यंन्नहोमः। सप्त ते अग्ने स्मिधंः सप्त जिह्ना इतिं विश्वप्रीः॥५८॥

 $[\, eta \,]$ 

यां प्रथमामिष्टंकामुप्दधांति। इमं तयां लोकम्भिजंयति। अथो या अस्मिँ श्लोके देवताः। तासार् सायुंज्यर सलोकतांमाप्रोति। यां द्वितीयांमुप्दधांति। अन्तरिक्षलोकं तयाऽभिजंयति। अथो या अन्तरिक्षलोके देवताः। तासार् सायुंज्यर सलोकतांमाप्रोति। यां तृतीयांमुप्दधांति। अमुं तयां लोकम्भिजंयति॥५९॥

अथो या अमुष्मिं छोके देवताः। तासार् सायुंज्यर सलोकतांमाप्रोति। अथो या अमूरितंरा अष्टादंश। य एवामी उरवंश्च वरीयार सश्च लोकाः। तानेव ताभिर्भिजंयति॥ कामचारो ह् वा अस्योरुषुं च वरीयः सु च लोकेषुं भवति। योऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। संवथ्सरो वा अग्निर्नांचिकेतः। तस्यं वसन्तः शिरंः॥६०॥

ग्रीष्मो दक्षिणः पृक्षः। वर्षा उत्तरः। श्रारत्पुच्छम्। मासाः कर्मकाराः। अहोरात्रे श्रांतरुद्रीयम्। पुर्जन्यो वसोर्धाराः। यथा

वै पुर्जन्यः सुवृष्टं वृष्ट्वा। प्रजाभ्यः सर्वान्कामान्थ्सम्पूरयंति। एवमेव स तस्य सर्वान्कामान्थ्सम्पूरयति। योऽग्निं नाचिकेतं चिनुते॥६१॥

य उं चैनमेवं वेदं। संवथ्सरो वा अग्निर्नाचिकेतः। तस्यं वस्तः शिरंः। ग्रीष्मो दक्षिणः पृक्षः। वर्षाः पृच्छम्। श्ररदुत्तंरः पृक्षः। हेमन्तो मध्यम्। पूर्वपृक्षाश्चितयः। अपरपृक्षाः पृरीषम्। अहोरात्राणीष्टंकाः। एष वाव सौऽग्निरंग्निमयंः पुनर्णवः। अग्निमयो ह वै पुनर्णवो भूत्वा। स्वर्गं लोकमेति। आदित्यस्य सायुंज्यम्। यौऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं॥६२॥

**-**[१०]

॥इति कृष्णयजुर्वेदीयतैत्तितरीय काठके द्वितीयः प्रश्नः समाप्तः॥२॥

## ॥ तृतीयः प्रश्नः॥

तुभ्यं ता अंङ्गिरस्तमाऽश्याम् तं कामंमग्ने। आशांनां त्वा विश्वा आशाः। अनुं नोऽद्यानुंमित्रिरिन्वदंनुमते त्वम्। कामो भूतस्य कामस्तदग्रें। ब्रह्मं जज्ञानं पिता विराजांम्। यज्ञो रायोऽयं यज्ञः। आपो भूद्रा आदित्पंश्यामि। तुभ्यं भरन्ति यो देह्यः। पूर्वं देवा अपंरेण प्राणापानौ। ह्व्यवाह् इं स्विष्टम्॥१॥ देवेभ्यो वै स्वर्गो लोकस्तिरों ऽभवत्। ते प्रजापंतिमब्रुवन्। प्रजापते स्वर्गो वै नों लोकस्तिरों ऽभूत्। तमन्विच्छेतिं। तं यंज्ञऋतुभिरन्वैच्छत्। तं यंज्ञऋतुभिर्नान्वंविन्दत्। तिमष्टिंभिरन्वैच्छत्। तिमष्टिंभिरन्वंविन्दत्। तिदष्टींनामिष्टि-त्वम्। एष्टंयो हु वै नामं। ता इष्टंय इत्याचंक्षते प्रोक्षेण। प्रोक्षंप्रिया इव हि देवाः॥२॥

तमाशाँऽब्रवीत्। प्रजांपत आशया वै श्राँम्यसि। अहमु वा आशाँऽस्मि। मां नु यंजस्व। अथं ते सत्याऽऽशां भविष्यति। अनुं स्वृगं लोकं वेथ्स्यसीति। स एतम्ग्रये कामांय पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निरंवपत्। आशायै चुरुम्। अनुंमत्ये चुरुम्। ततो वे तस्यं सत्याऽऽशांऽभवत्। अनुं स्वृगं लोकमंविन्दत्। सत्या हु वा अस्याऽऽशां भवति। अनुं स्वृगं लोकं विन्दति। य एतेनं हृविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये कामांय स्वाहाऽऽशाये स्वाहां। अनुंमत्ये स्वाहां प्रजापंतये स्वाहां। स्वृगायं लोकाय स्वाहाऽग्नयें स्विष्टकृते स्वाहेति॥३॥

तं कामोंऽब्रवीत्। प्रजांपते कामेंन् वै श्रांम्यसि। अहमु वै कामोंऽस्मि। मां नु यंजस्व। अथं ते सत्यः कामों भविष्यति। अनुं स्वर्गं लोकं वेथ्स्यसीतिं। स एतम्ग्रये कामांय पुरोडाशंमुष्टाकंपालं निरंवपत्। कामांय चुरुम्। अनुंमत्यै चुरुम्। ततो वै तस्यं सत्यः कामोंऽभवत्। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। स्त्यो हु वा अस्य कामो भवति। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये कामाय स्वाहा कामाय स्वाहाँ। अनुंमत्ये स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वर्गाये लोकाय स्वाहाऽग्नयें स्विष्टकृते स्वाहेति॥४॥

तं ब्रह्माँऽब्रवीत्। प्रजांपते ब्रह्मंणा वै श्राँम्यसि। अहमु वै ब्रह्माँऽस्मि। मां नु यजंस्व। अथं ते ब्रह्मण्वान् यज्ञो भंविष्यति। अनुं स्वृगं लोकं वेथ्स्यसीति। स एतम्ग्रये कामांय पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निरंवपत्। ब्रह्मंणे चुरुम्। अनुंमत्ये चुरुम्। ततो वै तस्यं ब्रह्मण्वान् यज्ञोंऽभवत्। अनुं स्वृगं लोकमंविन्दत्। ब्रह्मण्वान् हु वा अस्य यज्ञो भंवति। अनुं स्वृगं लोकं विन्दति। य एतेनं हृविषा यज्ञते। य उ चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्रये कामांय स्वाह्मं ब्रह्मणे स्वाहाँ। अनुंमत्ये स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वृगीये लोकाय स्वाहाऽग्रयें स्विष्टकृते स्वाहेतिं॥५॥

तं युज्ञों ऽब्रवीत्। प्रजापते युज्ञेन वै श्राम्यिस। अहमु वै युज्ञों ऽस्मि। मां नु यंजस्व। अर्थ ते सत्यो युज्ञो भविष्यति। अर्नु स्वर्गं लोकं वेथ्स्यसीति। स एतम्ग्रये कामाय पुरोडाशंम्ष्टाकंपालं निरंवपत्। युज्ञायं चुरुम्। अनुमत्ये चुरुम्। ततो वै तस्यं सत्यो युज्ञों ऽभवत्। अर्नु स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सत्यो हु वा अस्य युज्ञो भंवति। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दित। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये कामांय स्वाहां यज्ञाय स्वाहां। अनुंमत्ये स्वाहां प्रजापंतये स्वाहां। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नयें स्विष्टकृते स्वाहेतिं॥६॥

तमापों ऽब्रुवन्। प्रजांपते ऽफ्सु वै सर्वे कामाः श्रिताः। वयमु वा आपः स्मः। अस्मान्नु यंजस्व। अथ् त्वियु सर्वे कामाः श्रियिष्यन्ते। अनुं स्वर्गं लोकं वेथस्यसीति। स एतम् ग्रये कामांय पुरोडाशं मृष्टाकंपालं निरंवपत्। अन्यश्रुरुम्। अनुंमत्ये चरुम्। ततो वै तस्मिन्थ्सर्वे कामां अश्रयन्त। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सर्वे हु वा अस्मिन्कामाः श्रयन्ते। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दित। य एतेनं हिविषा यज्ते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्रये कामांय स्वाहाऽग्र्यः स्वाहाँ। अनुंमत्ये स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्रये स्विष्टकृते स्वाहेतिं॥७॥

तम्ग्निर्बिल्मानंब्रवीत्। प्रजांपतेऽग्नये वै बंलिमते सर्वाणि भूतानि बलि॰ हंरन्ति। अहमु वा अग्निर्बिलमानंस्मि। मां नु यंजस्व। अर्थ ते सर्वाणि भूतानि बलि॰ हंरिष्यन्ति। अनुं स्वर्गं लोकं वेथ्स्यसीति। स एतम्ग्नये कामांय पुरोडाशंमृष्टाकंपालुं निरंवपत्। अग्नये बलिमते चुरुम्। अनुंमत्ये च्रुम्। ततो वे तस्मै सर्वाणि भूतानि बुलिमंहरन्। अनुं स्वृगं लोकमंविन्दत्। सर्वाणि हु वा अस्मै भूतानिं बुलि॰ हंरन्ति। अनुं स्वृगं लोकं विन्दति। य एतेनं हृविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये कामाय स्वाहाऽग्नये बलिमते स्वाहाँ। अनुंमत्ये स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वृगायं लोकाय स्वाहाऽग्नये स्विष्टकृते स्वाहेतिं॥८॥

तमनुंवित्तिरब्रवीत्। प्रजांपते स्वृगं वै लोकमनुंविविथ्सिस्।
अहमु वा अनुंवित्तिरस्मि। मां नु यंजस्व। अर्थ ते
सत्याऽनुंवित्तिर्भविष्यति। अनुं स्वृगं लोकं वेथ्स्यसीतिं। स
एतम् ग्रुये कामांय पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निरंवपत्। अनुंवित्त्यै
चरुम्। अनुंमत्यै चरुम्। ततो वै तस्यं सत्याऽनुंवित्तिरभवत्।
अनुं स्वृगं लोकमंविन्दत्। सत्या हु वा अस्यानुंवित्तिर्भवति।
अनुं स्वृगं लोकं विन्दति। य एतेनं हृविषा यजंते। य उं
चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये कामांय स्वाहाऽनुंवित्त्यै
स्वाहाँ। अनुंमत्यै स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वृगांयं
लोकाय स्वाहाऽग्नयें स्विष्टकृते स्वाहेति॥९॥

ता वा एताः सप्त स्वर्गस्यं लोकस्य द्वारंः। दिवःश्येनयोऽनुंवित्तयो नामं। आशाँ प्रथमाः रक्षति। कामौं द्वितीयाँम्। ब्रह्मं तृतीयाँम्। यज्ञश्चंतुर्थीम्। आपंः पश्चमीम्। अग्निर्बेलिमान्थ्वष्ठीम्। अनुंवित्तिः सप्तमीम्। अनुं ह् वै स्वर्गं लोकं विन्दित। कामचारौंऽस्य स्वर्गे लोके भवति। य एताभिरिष्टिंभिर्यजंते। य उं चैना एवं वेदे। तास्वन्विष्टि। पृष्ठौहीवरां देद्यात्कर्सं चे। स्नियै चाऽऽभारर समृद्धौ॥१०॥

[२]

तपंसा देवा देवतामग्रं आयन्। तप्सर्षयः स्वंरन्वंविन्दन्। तपंसा सपत्नान्प्रणुंदामारातीः। येनेदं विश्वं परिभूतं यदस्ति। प्रथमजं देव॰ ह्विषां विधेम। स्वयम्भु ब्रह्मं पर्मं तपो यत्। स एव पुत्रः स पिता स माता। तपो ह यक्षं प्रथम॰ सम्बंभूव। श्रद्धया देवो देवत्वमंश्रुते। श्रद्धा प्रंतिष्ठा लोकस्यं देवी॥११॥

सा नों जुषाणोपं यज्ञमागाँत्। कामंवथ्साऽमृतं दुहांना। श्रृद्धा देवी प्रथम्जा ऋतस्यं। विश्वस्य भूत्री जगंतः प्रतिष्ठा। ता श्रृद्धा श्रृह्वा सहिषां यजामहे। सा नों लोकम्मृतं दधातु। ईशांना देवी भुवंनस्याधिपत्नी। आगाँथ्मृत्य हिविरिदं जुषाणम्। यस्माँद्देवा जिजिरे भुवंनं च विश्वें। तस्मै विधेम हिविषां घृतेनं॥१२॥

यथां देवैः संधमादं मदेम। यस्यं प्रतिष्ठोर्वन्तिरिक्षम्। यस्माद्देवा जंजिरे भुवनं च सर्वे। तथ्मत्यमर्चदुपं यज्ञं न आगात्। ब्रह्माऽऽहुंतीरुपमोदंमानम्। मनसो वशे सर्विमिदं बंभूव। नान्यस्य मनो वश्मनिवंयाय। भीष्मो हि देवः सहंसः सहीयान्। स नो जुषाण उपं यज्ञमागाँत्। आकूतीनामधिपतिं चेतंसां च॥१३॥

सङ्कल्पर्जूतिं देवं विपश्चिम्। मनो राजानिम्ह वर्धयन्तः। उपहुवेंऽस्य सुमृतौ स्याम। चरणं प्वित्रं वितंतं पुराणम्। येनं पूतस्तरंति दुष्कृतानिं। तेनं प्वित्रंण शुद्धेनं पूताः। अति पाप्मान्मरातिं तरेम। लोकस्य द्वारंमिव्मत्पवित्रम्। ज्योतिष्मद्भाजनानं महंस्वत्। अमृतंस्य धारां बहुधा दोहंमानम्। चरणं नो लोके सुधितां दधातु। अग्निर्मूर्धा भुवंः। अनुं नोऽद्यानुंमित्रिरन्विदंनुमते त्वम्। हृव्यवाह्ड् स्विष्टम्॥१४॥

[3]

देवेभ्यो वै स्वर्गो लोकस्तिरोऽभवत्। ते प्रजापंतिमब्रुवन्। प्रजापते स्वर्गो वै नो लोकस्तिरोऽभूत्। तमन्विच्छेतिं। तं यंज्ञऋतुभिरन्वैच्छत्। तं यंज्ञऋतुभिर्नान्वंविन्दत्। तमिष्टिभि-रन्वैच्छत्। तमिष्टिभिरन्वंविन्दत्। तदिष्टीनामिष्टित्वम्। एष्टंयो ह् वै नामं। ता इष्टंय इत्याचंक्षते प्रोक्षेण। प्रोक्षंप्रिया इव् हि देवाः॥१५॥

तं तपौंऽब्रवीत्। प्रजांपते तपंसा वै श्रांम्यसि। अहमु वै तपौंऽस्मि। मां नु यंजस्व। अर्थ ते सत्यं तपों भविष्यति। अर्नु स्वर्गं लोकं वेथ्स्यसीतिं। स एतमाँग्नेयमृष्टाकंपालं निरंवपत्। तपंसे चुरुम्। अनुंमत्यै चुरुम्। ततो वै तस्यं सृत्यं तपोंऽभवत्। अनुं स्वृगं लोकमंविन्दत्। सृत्य ह वा अस्य तपों भवति। अनुं स्वृगं लोकं विन्दति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये स्वाहा तपंसे स्वाहां। अनुंमत्ये स्वाहां प्रजापंतये स्वाहां। स्वृगायं लोकाय स्वाहाऽग्नयें स्विष्टकृते स्वाहेतिं॥१६॥

तक्ष् श्रद्धाऽब्रंबीत्। प्रजांपते श्रद्धया वै श्रांम्यसि। अहमु वै श्रद्धाऽस्मि। मां नु यंजस्व। अर्थ ते सृत्या श्रद्धा भंविष्यति। अनुं स्वर्गं लोकं वेथ्स्यसीति। स एतमाग्नेयमृष्टाकंपालं निरंवपत्। श्रद्धायै चरुम्। अनुंमत्यै चरुम्। ततो वै तस्यं सृत्या श्रद्धाऽभंवत्। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सृत्या हृ वा अस्य श्रद्धा भंवति। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेनं हृविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये स्वाहाँ श्रद्धायै स्वाहाँ। अनुंमत्यै स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नये स्विष्टकृते स्वाहेति॥१७॥

तः स्त्यमंब्रवीत्। प्रजापते स्त्येन् वै श्राम्यसि। अहमु वै स्त्यमंस्मि। मां नु यंजस्व। अथं ते स्त्यः स्त्यं भविष्यति। अनुं स्वृगं लोकं वेथ्स्यसीति। स एतमांश्रेयमृष्टाकंपालं निरंवपत्। स्त्यायं च्रुम्। अनुंमत्ये च्रुम्। ततो वै तस्यं स्त्यः स्त्यमंभवत्। अनुं स्वृगं लोकमंविन्दत्। सत्यः ह वा अस्य सत्यं भवित। अनुं स्वृगं लोकमंविन्दत्। सत्यः ह वा अस्य सत्यं भवित। अनुं स्वृगं

लोकं विन्दिति। य एतेनं हिविषा यजेते। य उं चैनदेवं वेदे। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये स्वाहां सत्याय स्वाहां। अनुंमत्ये स्वाहां प्रजापंतये स्वाहां। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नये स्विष्टकृते स्वाहेतिं॥१८॥

तं मनौंऽब्रवीत्। प्रजांपते मनंसा वै श्रांम्यसि। अहमु वै मनौंऽस्मि। मां नु यंजस्व। अर्थं ते सत्यं मनों भविष्यति। अनुं स्वर्गं लोकं वेथ्स्यसीतिं। स एतमाँग्नेयमृष्टाकंपालं निरंवपत्। मनंसे चुरुम्। अनुंमत्ये चुरुम्। ततो वै तस्यं सत्यं मनोंऽभवत्। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सत्यः हु वा अस्य मनों भवति। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेनं हिविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्रये स्वाहा मनंसे स्वाहां। अनुंमत्ये स्वाहां प्रजापंतये स्वाहां। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्रयें स्विष्टकृते स्वाहेतिं॥१९॥

तं चरणमब्रवीत्। प्रजापते चरणेन वै श्राम्यिस। अहमु वै चरणमिस्मि। मां नु यंजस्व। अर्थ ते सृत्यं चरणं भिवष्यित। अनुं स्वर्णं लोकं वेथ्स्यसीति। स एतमाँग्नेयमृष्टाकंपालं निरंवपत्। चरणाय चरुम्। अनुंमत्ये चरुम्। ततो वै तस्यं सृत्यं चरणमभवत्। अनुं स्वर्णं लोकमिविन्दत्। सृत्य हृ वा अस्य चरणं भवति। अनुं स्वर्णं लोकं विन्दित। य एतेन हिविषा यजते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्रये स्वाहा चरणाय स्वाहाँ। अनुंमत्यै स्वाहाँ प्रजापंत्ये स्वाहाँ।

स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नयें स्विष्टकृते स्वाहेतिं॥२०॥

ता वा पृताः पश्चं स्वर्गस्यं लोकस्य द्वारंः। अपांघा अनुवित्तयो नामं। तपंः प्रथमाः रक्षिति। श्रद्धा द्वितीयाँम्। सत्यं तृतीयाँम्। मनश्चतुर्थीम्। चरंणं पश्चमीम्। अनुं हु वै स्वर्गं लोकं विन्दिति। कामचारौंऽस्य स्वर्गे लोके भविति। य पृताभिरिष्टिंभिर्यजंते। य उं चैना पृवं वेदं। तास्वन्विष्टि। पृष्ठौहीवरां दंद्यात्कुर्सं चं। स्त्रियें चाऽऽभारः समृद्धौ॥२१॥

[૪]

ब्रह्म वै चतुंर्होतारः। चतुंर्होतृभ्योऽधिंयुज्ञो निर्मितः। नैन १ श्वप्तम्। नाभिचंरित्मागंच्छति। य एवं वेदं। यो ह् वै चतुंर्होतृणां चतुर्होतृत्वं वेदं। अथो पश्चंहोतृत्वम्। सर्वा हास्मै दिशः कल्पन्ते। वाचस्पतिर्होता दशंहोतॄणाम्। पृथिवी होता चतुंर्होतॄणाम्॥२२॥

अग्निर्होता पश्चंहोतॄणाम्। वाग्घोता षड्ढोतॄणाम्। महाहंविर्होतां सप्तहोतॄणाम्। एतद्वे चतुंर्होतृणां चतुर्होतृत्वम्। अथो पश्चंहोतृत्वम्। सर्वां हास्मै दिशंः कल्पन्ते। य एवं वेदं। एषा वै संविवृद्या। एतद्भेषुजम्। एषा पङ्किः स्वर्गस्यं लोकस्यांश्वसाऽयंनिः स्रुतिः॥२३॥

पुतान् योऽध्यैत्यछंदिर्द्र्शे यावंत्तरसम्। स्वंरेति। अनुपृब्रवः सर्वमायुरिति। विन्दते प्रजाम्। रायस्पोषं गौपत्यम्। ब्रह्मवर्चसी भंवति। एतान् योऽध्यैतिं। स्पृणोत्यात्मानम्। प्रजां पितृन्। एतान् वा अंरुण औपवेशिर्विदां चंकार॥२४॥

पुतैरंधिवादमपांजयत्। अथो विश्वं पाप्मानम्। स्वंर्ययौ। पुतान्योऽध्यैतिं। अधिवादं जंयति। अथो विश्वं पाप्मानम्। स्वंरेति। पुतैर्ग्निं चिन्वीत स्वर्गकांमः। पुतैरायुंष्कामः। प्रजापृशुकांमो वा॥२५॥

पुरस्ताद्दशंहोतार्मुदंश्चमुपंदधाति यावत्पदम्। हृदंयं यजुंषी पत्न्यौ च। दक्षिणतः प्राश्चं चतुंर्होतारम्। पृश्चादुदंश्चं पश्चंहोतारम्। उत्तर्तः प्राश्चन् षङ्कांतारम्। उपरिष्टात्प्राश्चन्ं सप्तहोतारम्। हृदंयं यजून्ंषि पत्न्यंश्च। यथावकाशं ग्रहान्ं। यथावकाशं प्रतिग्रहाँ ह्यों कं पृणाश्चं। सर्वा हास्यैता देवताः प्रीता अभीष्टां भवन्ति॥२६॥

सदेवम्भिं चिनुते। रथसंम्मितश्चेत्वर्यः। वज्रो वै रथः। वज्रेणैव पाप्मानं भ्रातृंव्यः स्तृणुते। पृक्षः संम्मितश्चेत्व्यः। एतावान् वै रथः। यावंत्पृक्षः। रथसंम्मितमेव चिनुते। इममेव लोकं पंशुबन्धेनाभिजंयति। अथो अग्निष्टोमेनं॥२७॥

अन्तरिक्षमुक्थ्येन। स्वरितरात्रेणं। सर्वां ह्रोकानंहीनेनं। अथो स्त्रेणं। वरो दक्षिणा। वरेणैव वर स्पृणोति। आत्मा हि वर्रः। एकंविस्शतिर्दक्षिणा ददाति। एकविस्शो वा इतः स्वर्गो लोकः। प्र स्वर्गं लोकमाँप्रोति॥२८॥

असावांदित्य एंकविश्वाः। अमुमेवाऽऽदित्यमांप्रोति। शृतं ददांति। शृतायुः पुरुषः शृतेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिंतिष्ठति। सहस्रंं ददाति। सहस्रंसम्मितः स्वर्गो लोकः। स्वर्गस्यं लोकस्याभिजित्ये। अन्विष्ट्कं दक्षिणा ददाति। सर्वाणि वयार्शसा २९॥

सर्वस्याऽऽस्यै। सर्वस्यावंरुद्धै। यदि न विन्देतं। मन्थानेतावतो दंद्यादोदनान् वाँ। अश्रुते तं कामम्। यस्मै कामायाग्निश्चीयतें। पृष्ठौहीं त्वन्तर्वतीं दद्यात्। सा हि सर्वाणि वया रेसि। सर्वस्याऽऽस्यै। सर्वस्यावंरुद्धै॥३०॥

हिरंण्यं ददाति। हिरंण्यज्योतिरेव स्वर्गं लोकमेंति। वासों ददाति। तेनाऽऽयुः प्रतिरते। वेदितृतीये यंजेत। त्रिषंत्या हि देवाः। स संत्यम्भिं चिन्ते। तदेतत्पंशुबन्धे ब्राह्मंणं ब्रूयात्। नेतंरेषु य्ज्ञेषुं। यो ह वै चतुरहोतॄननुसव्नं तंपीयत्व्यान् वेदं॥३१॥

तृप्यंति प्रजयां प्शुभिः। उपैन सोमपीथो नंमति। पृते वै चतुंरहोतारोऽनुसव्नं तेपीयत्व्याः। ये ब्राह्मणा बंहुविदः। तेभ्यो यद्दक्षिणा न नयेत्। दुरिष्ट स्यात्। अग्निमंस्य वृश्चीरन्। तेभ्यो यथाश्रद्धं दंद्यात्। स्विष्टमेवैतित्र्रियते। नास्याग्निं वृंञ्जते॥३२॥

हिर्ण्येष्टको भंवति। यावंदुत्तममंङ्गुलिकाण्डं यंज्ञपुरुषा सिम्नितम्। तेजो हिर्ण्यम्। यदि हिर्ण्यं न विन्देत्। शर्करा अक्ता उपंदध्यात्। तेजो घृतम्। सर्तेजसमेवाग्निं चिनुते। अग्निं चित्वा सौत्रामण्या यंजेत मैत्रावरुण्या वाँ। वीर्येण वा एष व्यृध्यते। याँऽग्निं चिनुते॥३३॥ यावंदेव वीर्यम्। तदंस्मिन्दधाति। ब्रह्मणः सायुंज्य सलोकतांमाप्नोति। एतासांमेव देवतांना सायुंज्य स्सार्थिता समानलोकतांमाप्नोति। य एतम्ग्निं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। एतदेव सांवित्रे ब्राह्मणम्। अथो नाचिकेते॥३४॥

[५]

यचामृतं यच मर्त्यम्। यच प्राणिति यच न। सर्वास्ता इष्टंकाः कृत्वा। उपं कामृद्घां दधे। तेनर्षिणा तेन ब्रह्मंणा। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद। सर्वाः स्त्रियः सर्वांन्पुर्सः। सर्वं न स्त्रीपुमं च यत्। सर्वास्ताः। यावंन्तः पार्सवो भूमैः॥३५॥

सङ्ख्यांता देवमाययां। सर्वास्ताः। यावंन्त ऊषाः पशूनाम्। पृथिव्यां पृष्टिरिह्ताः। सर्वास्ताः। यावंतीः सिकंताः सर्वाः। अपस्वंन्तश्च याः श्रिताः। सर्वास्ताः। यावंतीः शर्करा धृत्यै। अस्यां पृथिव्यामधि॥३६॥

सर्वास्ताः। यावन्तोऽश्मांनोऽस्यां पृंथिव्याम्। प्रतिष्ठासु प्रतिष्ठिताः। सर्वास्ताः। यावंतीर्वीरुधः सर्वाः। विष्ठिंताः पृथिवीमन्। सर्वास्ताः। यावंतीरोषंधीः सर्वाः। विष्ठिंताः पृथिवीमन्। सर्वास्ताः॥३७॥

यावंन्तो वनस्पतंयः। अस्यां पृथिव्यामिषं। सर्वास्ताः। यावंन्तो ग्राम्याः पृशवः सर्वे। आरुण्याश्च ये। सर्वास्ताः। ये द्विपादश्चतुंष्पादः। अपादं उदरसपिणः। सर्वास्ताः। यावदाञ्जनमुच्यते॥३८॥

देवत्रा यर्च मानुषम्। सर्वास्ताः। यावंत्कृष्णायंस् सर्वम्ं। देवत्रा यर्च मानुषम्। सर्वास्ताः। यावंश्लोहायंस् सर्वम्ं। देवत्रा यर्च मानुषम्। सर्वास्ताः। सर्वर् सीस् सर्वं त्रपुं। देवत्रा यर्च मानुषम्॥३९॥

सर्वास्ताः। सर्वे १ हिरंण्य १ रज्तम्। देवत्रा यर्च मानुषम्। सर्वास्ताः। सर्वे १ सुर्वर्णे १ हिरंतम्। देवत्रा यर्च मानुषम्। सर्वास्ता इष्टंकाः कृत्वा। उपं कामदुघां दधे। तेनर्षिणा तेन ब्रह्मणा। तयां देवतयाऽङ्गिरस्बद्धवा सींद॥४०॥

[٤]

सर्वा दिशों दिक्षु। यचान्तर्भूतं प्रतिष्ठितम्। सर्वास्ता इष्टंकाः कृत्वा। उपं कामदुर्घा दधे। तेनर्षिणा तेन् ब्रह्मणा। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद। अन्तरिक्षं च केवंलम्। यचास्मिन्नंन्त्राहिंतम्। सर्वास्ताः। आन्त्रिक्ष्येश्च याः प्रजाः॥४१॥

गन्धर्वापस्रसंश्च ये। सर्वास्ताः। सर्वानुदारान्थ्सिललान्। अन्तरिक्षे प्रतिष्ठितान्। सर्वास्ताः। सर्वानुदारान्थ्सिल्लान्। स्थावराः प्रोष्याश्च ये। सर्वास्ताः। सर्वां धुनिष् सर्वान्ध्वष्टसान्। हिमो यर्च शीयतै॥४२॥

सर्वास्ताः। सर्वान्मरींचीन् वितंतान्। नीहारो यर्च शीयतें। सर्वास्ताः। सर्वा विद्युतः सर्वान्थ्स्तनियृत्त्न्। ह्रादुनीर्यर्चं शीयतें। सर्वास्ताः। सर्वाः स्रवंन्तीः स्रितंः। सर्वमपसुच्रं च् यत्। सर्वास्ताः॥४३॥

याश्च कूप्या याश्चं नाद्याः समुद्रियाः। याश्चं वैश्-तीरुत प्रांस्चीर्याः। सर्वास्ताः। ये चोत्तिष्ठंन्ति जीमूताः। याश्च वर्षन्ति वृष्टयः। सर्वास्ताः। तप्स्तेजं आकाशम्। यचांऽऽकाशे प्रतिष्ठितम्। सर्वास्ताः। वायुं वयार्रस् सर्वाणि॥४४॥

अन्तिरिक्ष्चरं च यत्। सर्वास्ताः। अग्निरं सूर्यं चन्द्रम्। मित्रं वरुणं भगम्। सर्वास्ताः। सृत्य श्रृद्धां तपो दमम्। नामं रूपं च भूतानाम्। सर्वास्ता इष्टंकाः कृत्वा। उपं कामृदुघां दधे। तेनर्षिणा तेन ब्रह्मणा। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥४५॥

·[0]

सर्वान्दिव् सर्वान्देवान्दिव। यचान्तर्भूतं प्रतिष्ठितम्। सर्वास्ता इष्टेकाः कृत्वा। उपं कामृदुघां दधे। तेनर्षिणा तेन् ब्रह्मणा। तयां देवतयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद। यावंतीस्तारंकाः सर्वाः। वितंता रोच्ने दिवि। सर्वास्ताः। ऋचो यजूर्षेषि सामानि॥४६॥

अथर्वाङ्गिरसंश्च ये। सर्वास्ताः। इतिहासपुराणं चे। सर्पदेवजनाश्च ये। सर्वास्ताः। ये चे लोका ये चालोकाः। अन्तर्भूतं प्रतिष्ठितम्। सर्वास्ताः। यच् ब्रह्म यचौब्रह्म। अन्तर्बृह्मन्प्रतिष्ठितम्॥४७॥

सर्वास्ताः। अहोरात्राणि सर्वाणि। अर्धमासाः श्च केवंलान्। सर्वास्ताः। सर्वानृतून्थ्सर्वान्मासान्। संवथ्सरं च केवंलम्। सर्वास्ताः। सर्वं भूत्रः सर्वं भव्यम्। यचातोऽधिभविष्यति। सर्वास्ता इष्टंकाः कृत्वा। उपं कामदुघां दधे। तेनर्षिणा तेन ब्रह्मणा। तयां देवतंयाऽङ्गिरस्वद्भुवा सीद॥४८॥

[८]

ऋचां प्राचीं मह्ती दिगुंच्यते। दक्षिंणामाहुर्यजुंषामपाराम्। अथविणामङ्गिरसां प्रतीचीं। साम्नामुदींची मह्ती दिगुंच्यते। ऋग्भिः पूर्विह्नि दिवि देव ईयते। युजुर्वेदे तिष्ठिति मध्ये अहं। साम्बेदेनांऽस्तम्ये महीयते। वेदैरशूंन्यस्त्रिभिरेति सूर्यः। ऋग्भ्यो जाता सर्व्षो मूर्तिमाहुः। सर्वा गतियांजुषी हैव शर्श्वत्॥४९॥

सर्वं तेजंः सामरूप्य हं शश्वत्। सर्व हं व्रह्मंणा हैव सृष्टम्। ऋग्भ्यो जातं वैश्यं वर्णमाहुः। युजुर्वेदं क्षंत्रियस्यांऽऽहुर्योनिम्। सामवेदो ब्राह्मणानां प्रसूतिः। पूर्वे पूर्वेभ्यो वर्च एतदूंचुः। आदुर्शमृग्निं चिन्वानाः। पूर्वे विश्वसृजोऽमृताः। शृतं वर्रषसहस्राणि। दीक्षिताः सत्रमांसत॥५०॥

तपं आसीद्गृहपंतिः। ब्रह्मं ब्रह्माऽभंवथस्वयम्। स्त्य ह होतैंषामासींत्। यिद्वंश्वसृज् आसंत। अमृतंमेभ्य उदंगायत्। सहस्रं परिवथ्सरान्। भूत हं प्रस्तोतैषामासींत्। भविष्यत्प्रतिं चाहरत्। प्राणो अध्वर्युरंभवत्। इद सर्व स् सिषांसताम्॥५१॥

अपानो विद्वानावृतंः। प्रतिप्रातिष्ठदध्वरे। आर्तवा उपगातारंः। सदस्यां ऋतवोऽभवन्। अर्धमासाश्च मासांश्च। चमसाध्वर्यवोऽभवन्। अश्रं सद्वह्मणस्तेजंः। अच्छावाकोऽभवद्यशंः। ऋतमेषां प्रशास्ताऽऽसींत्। यद्विश्वसृज आसंत॥५२॥

ऊर्ग्राजानमुदंवहत्। ध्रुवृगोपः सहोऽभवत्। ओजोऽभ्यंष्टौ-

द्राव्णणंः। यिद्वेश्वसृज् आसंत। अपंचितिः पोत्रीयांमयजत्। नेष्ट्रीयांमयज्तिविषिः। आग्नींद्धाद्विदुषीं सृत्यम्। श्रद्धा हैवायंजथ्स्वयम्। इरा पत्नीं विश्वसृजांम्। आकूंतिरिपन-डुविः॥५३॥

इध्म १ ह क्षुचैं भ्य उग्रे। तृष्णा चाऽऽवंहतामुभे। वागेषा १ सुब्रह्मण्याऽऽसींत्। छुन्दोयोगान् विजानती। कुल्पृतृत्राणिं तन्वानाऽहंः। स् १ स्थार्श्वं सर्वशः। अहोरात्रे पंशुपाल्यौ। मुहूर्ताः प्रेष्यां अभवन्। मृत्युस्तदंभवद्धाता। शृमितोग्रो विशां पतिः॥५४॥

विश्वसृजंः प्रथमाः स्त्रमांसत। सहस्रंसम् प्रस्ंतेन् यन्तंः। ततो ह जज्ञे भुवनस्य गोपाः। हिर्ण्मयः शकुनिर्ब्रह्म नामं। येन सूर्यस्तपंति तेजंसेद्धः। पिता पुत्रेणं पितृमान् योनियोनौ। नावेदविन्मनुते तं बृहन्तम्। सर्वानुभुमात्मान सम्पराये। एष नित्यो मंहिमा ब्राह्मणस्यं। न कर्मणा वर्धते नो कनीयान्॥५५॥

तस्यैवाऽऽत्मा पंद्वित्तं विदित्वा। न कर्मणा लिप्यते पापंकेन। पश्चंपश्चाशतिस्रृवृतः संवथ्सराः। पश्चंपश्चाशतः पश्चंपश्चाशतः पश्चंपश्चाशतः पश्चंपश्चाशतं एकविश्वाः। पश्चंपश्चाशतं सहस्रां सहस्रां पश्चंपश्चाशतं एकविश्वाः। विश्वसृजार् सहस्रं संवथ्सरम्। एतेन् वे विश्वसृजं इदं विश्वंमसृजन्त। यद्विश्वमसृजन्त। तस्माद्विश्वसृजंः। विश्वंमेनानन् प्रजांयते। ब्रह्मणः सायुंज्यश्

सलोकताँ यन्ति। एतासामेव देवतानाः सायुंज्यम्। सार्षिताः समानलोकतां यन्ति। य एतदुंप्यन्तिं। ये चैनुत्प्राहुः। येभ्यश्चेनुत्प्राहुः॥५६॥ ॐ॥

**-**[3]

॥इति कृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयकाठके तृतीयः प्रश्नः समाप्तः॥३॥ ॥इति कृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयकाठकं समाप्तम्॥ हरिः ॐ॥